ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

सार्वदेशिक



इस पर भी ध्यान रखना चाहिए। 'यथा राजा तथा प्रजा' जैसा राजा होता है वैसी ही उसकी प्रजा होती है इसलिए राजा और राजपुरुषों को अति उचित है कि कभी दुष्टाचार न करें किन्तु सब दिन धर्म्म न्याय से वर्त्तकर सबके सुधार का दृष्टान्त बनें।

—दयानन्द सरस्वती

वर्ष ३७
अङ्क १२

सम्पादकीय

वोट किसको दें ?

आगामी फरवरी मास मे भारतीय गणतन्त्र का तीसरा बडा चुनाव होगा । इलेक्शन (निर्वाचन) कमिश्नर के वक्तव्यानुसार इस चुनाव मे ?१ करोड मत दाता मत दान करेंगे । प्रत्येक मत-दाता दो मत प्रदान करने का अधिकारी होगा, एक राज्य की विधान सभा के लिए और दूसरा लोक सभा के लिए । मत दान पत्रो के मुद्रण मे ७०० टन से अधिक कागज प्रयुक्त हुआ है । लगभग २॥ (ढाई) लाख मत दान केन्द्र होगे जिन मे लगभग १० लाख कार्यकर्त्ता कार्य करेंगे । १८ और २५ फरवरी के मध्य वोट पडेंगे । चुनाव का परिणाम एक साथ उद्घोषित किया जायगा टुकडे-टुकडे करके नही जैसा कि पूर्व के चुनावो मे होता रहा है ।

हमारे देश मे प्रत्येक वयस्क को मताधिकार प्राप्त है। उसको यह अधिकार इसलिए प्राप्त है कि वह के हित के लिए उसका प्रयोग करे। वोट देने से उसे अपने वोट को तोलना चाहिए । वोट देने वाले के मन मे अपनी जाति बिरादरी और पार्टी के स्वार्थ से ऊपर देश का हित होना चाहिए । इसी मे उसके वोट का और प्रजातन्त्र-व्यवस्था का महत्त्व निहित होता है ।

हमारा चुनाव प्राय पार्टी प्रणाली के अन्तर्गत होता है । कौन पार्टी श्रेष्ठ है और कौन नही इसका निश्चय करने के लिए यह देखना होता है कि पार्टी परिणामो की अपेक्षा सिद्धान्तो को, विशेष मामलो की अपेक्षा सामान्य मामलो को और व्यक्तियो की अपेक्षा विचारो को महत्व देती है या नही । यदि वह महत्त्व देती है तो समझ लो वह पार्टी श्रेष्ठ है । कुछ व्यक्ति पार्टी प्रणाली के प्रशासन के विरोधी हैं । उनकी मान्यता मे वजन हो सकता है परन्तु अव्यवस्थित महान् लोक मत को व्यवस्थित रूप देने, पालियामेन्टरी प्रणाली को सुचारू रूप से सचालित करने और राष्ट्र की समष्टि गत इच्छा को जानने का इस समय अन्य कोई उपाय भी नही है । हो सकता है कि कालान्तर मे हमे निर्दलीय चुनाव-प्रणाली को अपनाना पडे । पार्टी उतनी बुरी नही, होती जितनी पार्टी की भावना बुरी होती है जो प्राय बुराई को छिपाती, उसका प्रचार करती और उसका ढोल पीटती है । यह भावना सफलता प्राप्ति के लिए गर्हित से गर्हित उपाय का सहारा लेने मे भी नही झिझकती ।

राष्ट्र-हित क्या है और क्या नही यह बात भी विचारणीय है । एक मत दाता की धारणा यह हो सकती है कि यदि देश की अर्थ-व्यवस्था का आयोजन साम्यवादी सिद्धान्तो पर किया जाय तो राष्ट्र का हित होगा किसी की धारणा यह हो सकती है कि स्वतन्त्र व्यापार और लाभ की भावना से अर्थ-व्यवस्था का आयोजन होने से अधिक से अधिक लाभ हो सकता है । किसी मत दाता की मान्यता यह हो सकती है कि किसी गुट मे न मिलने की नीति से राष्ट्र का हित होगा और किसी की

यह सम्मति हो सकती है कि किसी गुट से मिल जाने से लाभ होगा। जिस बात पर अधिकांश मत-दाताओ का मतैक्य होगा वह यह है कि शासन की बाग डोर ऐसे लोगो के हाथ मे सौंपी जाय जो देश-प्रेमी और चरित्रवान हो और जिनमे शासन करने की क्षमता हो, जो देश को राजनैतिक एव आर्थिक दृष्टि से ऊचा उठा सके और देश की उन विशिष्ट परम्पराओ और मर्यादाओ को अक्षुण्ण रख सके जिन पर देश अभिमान करता हो और जिनसे देश के बाहर के लोग प्रकाश ग्रहण करते हो। आर्य-मर्यादाओ, आदर्शों और प्रतिभाओ की अवहेलना पूर्वक शासनतन्त्र की गति उस नाव जैसी होगी जो अथाह जल मे बिना मल्लाह के इधर उधर डोलती हुई अन्त मे डूब जाती है। मत-दाताओ को स्थानीय, प्रान्तीय भाषायी, साम्प्रदायिक और वर्गीय भावनाओ और निष्ठाओ से ऊपर उठकर तथा समूचे देश के सामूहिक हित को लक्ष्य मे रखकर उन्ही उम्मीदवारो को विजयी बनाना चाहिए जो उपर्युक्त कसोटी पर खरे उतरे चाहे वे किसी पार्टी के टिकट पर खड़े हो वा स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप मे खड़े हों

प्रजातन्त्र उस सीमा तक दुर्बल हो जाता है जिस सीमा तक लोगो की देश-हित विषयक निष्ठा दुर्बल होती है। कई देशो मे प्रजातन्त्रीय व्यवस्था को इसलिए धक्का लगा कि मत दाताओ ने उन दलो को मत दिए जिनकी निष्ठा देश से बाहर थी, वा जिन्होने वर्गीय वा साम्प्रदायिक मत-भेद को प्रोत्साहित किया अथवा जिन्होंने सत्ता प्राप्ति को ही अपनीप्रगतियो एक मात्र ध्येय बनाया

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

अभिवादन

पजाब सरकार ने अपने कर्मचारियो को आदेश दिया है कि वे सरकारी अभिवादन के रूप मे 'जयहिन्द' का प्रयोग किया करे और अन्य किसी अभिवादन का प्रयोग न किया जाय। इस आदेश से एक विवाद खड़ा हो गया है। 'जयहिन्द' का अपना महत्त्व है और यह सास्कृतिक अभिवादन का रूप नही ले सकता। अभिवादन व्यक्ति की सास्कृतिक भावनाओ से सम्बन्ध रखता है। आश्चर्य है पजाब सरकार ने इस बात को अनुभव न करके उपर्युक्त प्रकार का आदेश दे दिया जो अपेक्षित रूप मे व्यवहृत न होकर बहुत सभवत कागजो मे ही धरा रह जायगा।

भारत का उपयुक्त सास्कृतिक अभिवादन 'नमस्ते' है जिसकी लोक प्रियता सर्वविदित है। कोई भी संस्था या सरकार इसके प्रयोग को निरुत्साहित करने की भूल करे तो वह अपने कार्य वा अभियान मे सफल नही हो सकती, पजाब सरकार को और उस जैसा मत रखने वालो को यह बात पल्ले मे बाँध लेनी चाहिए। देखिए सहयोगी हिन्दुस्तान तथा अन्य जन इस सम्बन्ध मे क्या कहते हैं।

नमस्ते ही क्यों

"आप इस बात से तो अनभिज्ञ न होगे कि 'नमस्ते' भारत की सीमाओ को लाघ कर रूस मे भी पहुँच गया है, यदि आप सोवियत सघ की यात्रा करे तो वहाँ 'नमस्ते' से आपका अभिवादन करने के लिए कई रूसी मिल सकते हैं। रूसी ही नही, अब तो कुछ अमरीकी भी 'गुड मार्निंग'

या 'गुड नाइट' के बदले 'नमस्ते' कहते हुए आपको मिल सकते हैं। यह एक उल्लेखनीय बात है कि भारतीय 'नमस्ते' को विश्व के दोनो गुटो के नेता-देशो ने आदर प्रदान किया है। लेकिन अत्युग्र उत्साही तमिल भाषा-भाषी 'नमस्ते' को भी वक्र दृष्टि से देखते जान पडते है। ऐसे लोगो का यह आरोप तो समय-समय पर तीर की तरह छूटतारहता है कि उत्तर भारत प्रसारवादी है और वह हिन्दी का निर्यात कर दक्षिण भारत को उससे भर देना चाहता है। लेकिन इधर सोवियत राष्ट्रपति श्री ब्रझनेव के साथ घटित एक घटना से ऐसा जान पडता है कि तमिल के ये अत्युग्र समर्थक 'नमस्ते' मे भी उत्तर भारत के 'प्रसारवाद' के कीटाणु देखने लगे है।

बात यह है कि मीनामबक्कम हवाई अड्डे पर जब जनता ने सोवियत राष्ट्रपति का स्वागत किया तो उन्होने दोनो हाथ जोड कर 'नमस्ते कहा। इस पर उन्हे कहा गया कि तमिल मे 'नमस्ते' के स्थान पर नमस्कारम्' होता है तो उन्होने 'नमस्कारम्' द्वारा जनता का अभिवादन किया। लेकिन इस पर भी जब कुछ को सन्तोष न हुआ और उन्होने कहा कि 'वणक्कम्' अधिक उपयुक्त शब्द है तो श्री ब्रेझनेव प्रयत्न करने पर भी उसका उच्चारण न कर सके और उन्होने हाथ हिला कर सन्तोष कर लिया।

यो तो 'नमस्कारम्' पर भी तमिलेतर भाषाभाषियो का पूरा अधिकार है। उत्तर भारत मे 'नमस्कार' करने वालो की सख्या काफी बडी है, बगाली बन्धु तो 'नमस्कार ही करते हैं। दक्षिण भारत अपनी प्रथानुसार इस सस्कृत शब्द के आगे 'म्' लगा देता है। हमारा तो 'नमस्कार' को दूर से नमस्कार करने का कोई इरादा नही लेकिन हमे विदेशी अतिथियो की सुविधा का भी तो पूरा ध्यान रखना चाहिए।

भारत जैसे विशाल देश मे जहाँ कितने ही धर्म, रीति-रिवाज, जाति-उपजाति, मत-मतान्तर आदि हैं, अभिवादन के कितने ही शब्द प्रचलित हैं। गावो मे कही 'जै रामजी की' कहा जाता है तो कही 'जै गोपाल की'। कहीं 'जय शकर' बोलते हैं। कोई 'नमो नारायण' कहता है तो कोई 'जय भवानी'। सिख भाई 'सत श्री अकाल' कहते हैं। मुसलमानो को 'आदाब अर्ज' प्रिय है और 'सलाम' करना है तो 'सलाम वालेकुम' तथा 'वालेकुम सलाम' से परिचित होना होगा। सुभाष बाबू की प्रेरणा पर 'जयहिन्द' प्रारम्भ मे और बाद मे नेहरूजी द्वारा प्रसारित हुआ था तो विनोबाजी ने 'जय जगत्' को प्रविष्ट किया है। कॉंग्रेसजनो मे ही आप बहुतो को 'जयहिन्द' कहते सुनेंगे तो सर्वोदय वालो को 'जय जगत्' द्वारा अभिवादन करते सुन सकते है।

अब आप ही सोचिए कि यदि अभिवादनो की इस प्रकार की सूची किसी विदेशी अतिथि के सामने रखी जाए तो इसे सीखने मे ही उसे बहुत समय लग जाएगा और फिर उसे यह कैसे मालूम होगा कि भारत के किस प्रदेश मे, किस धर्मावलम्बी या जाति के लोगो के लिए कौन अभिवादन उपयुक्त है।

लेकिन 'नमस्ते की अपनी विशेषता है। साढे तीन अक्षरो का यह शब्द निराला है। एक आग्ल भाषाविज्ञ ने इस शब्द की जो व्याख्या की है वह ऐसा चित्र उपस्थित करती है कि हृदय गद्गद् हो जाता है। अग्रेजी जाननेवाले' के लिए हम उसे ज्यो का त्यो उद्धृत करना उपयुक्त समझते है। वह इस प्रकार है—

"विद औल माइ इन्टेलेक्ट इन माइ ब्रेन, विद औल माइ पावर इन माइ आर्म्स एण्ड विद औल माइ लव इन माइ हार्ट, आइ वाउ अन टू दी।"

हिन्दी मे इसका शब्दार्थ है "अपने मस्तिष्क की समस्त बुद्धि, अपने बाहुओ की समस्त शक्ति, अपने हृदय के समस्त प्रेम के साथ मैं आपको नमन करता हूँ।"

कितना यथार्थचित्रण है। नमस्ते' कहने वाला सिर को झुकाता है, दोनो हाथो को हृदय के पास लाकर जोडता है और इस प्रकार वह अपनी समस्त आत्मिक, बौद्धिक तथा शारीरिक शक्ति के साथ प्रेमपूर्ण तथा विनम्र अभिवादन करता है।

क्या इसके बाद भी 'नमस्ते' का निराला मूल्य आप स्वीकार न करेगे ?

दैनिक 'हिन्दुस्तान"

bolts and other cele^tial portents, (iv) prognostication by interpreting dreams Gautam the reclu^e holds aloof from such low arts

Leaving aside tl e spiritual reli gious or ex wordly importance of the yagnas the mo t l armful result of these practices is that people begin to cea e to take inte est in those world ly pur uits which alore can lead to worldly progress and without which no religion can maintain itself

Even if you believe in the p opl e tic nature of such astronomica pl ero mena as the Ashtagraha even if you suppose that these phenom na f r told some future calamity ow can certain rites performed by certain pers ns avert these inevitablts ? If they are destine:l to happen th y will happen Who can check tl em ? How can we buy them off or bribe their se f made agents to appease them What ever the convictions of the individuals and Whatever tl e remedial efficacies of re igiou s rites priva ely performed when the nation as a whole or on a large scale is misled into a belief that national calamities can be so easily averted the consequences are very dangerous water is thrown on the zeal of the masses They depend more upon the goas than upon tl eir own hard work and their contribution to those institutions which are necessary for the making of a welfare state are slackened It is much safer to depend upon our army for detence, upon industry for prospe ity for hea lth upon the Health department than upon Jupiter or Saturn and our e ergy should not be diverted to doubtful channels

अर्थात् अष्टग्रहो से सम्बद्ध भविष्यवाणियो का जन साधारण पर असाधारण रूप से भयोत्पादक प्रभाव पडा दीख पडता है। ग्रहो की सन्तुष्टि के लिए दिल्ली मे और अन्यत्र बडे-बडे यज्ञएव अनुष्ठान किए जा रहे है जिन पर लाखो रुपया व्यय हो रहा है। यह दलदल और हलचल देश व्यापी होती जा रही है और मै समझता हू इसकी आशका ने प्रधान मत्री प० नेहरू जी को इसके विरुद्ध चेतावनी देने के लिए बाधित कर दिया ह। उन्होने कहा है कि जनता का ध्यान इस प्रकार की अध विश्वास पूण बातो पर नही लगने देना चाहिये और राष्ट्रोन्नति के लिए हम ग्रहो की अपेक्षा अपने कठिन परिश्रम पर निभर रहना चाहिए। मैं आयसमाज का सदस्य हूँ और महर्षि दयानन्द की शिक्षाओ से मेरी यह धारणा बन गई है कि वदिक सिद्धान्तानुसार ग्रहो की इच्छाओ पर निभर रहकर कम के युक्तियुक्त माग से भटक जाना बडा भयानक होता है।

अबसे लगभग २५०० वष पूव महात्मा बुद्ध ने यज्ञानुष्ठानो से दबे हुए लोगो को इसी प्रकार की शिक्षा दी थी। उनके उपदेशो मे हम पढते है (अ)श्रवण गौतम इस प्रकार के खेलो और मनोरजनो से पृथक रहते हैं (ब) कुछ सन्यासी और ब्राह्मण भक्तो के भोजन पर आश्रित रहते हुए भी अनुचित साधनो और निकृष्ट हथ कण्डो से जीविकोपाजन करते हैं —

(१) सामुद्रिक विद्या से दीर्घायु और धन-वैभव की भविष्यवाणियो से बच्चों के हाथो पैरो इत्यादि की रेखाओ और चिन्हो से विपरीत परिणामो की घोषणा करने से (२) शकुन बताने से (३) उल्कापात तथा

अन्य आकाशस्थ नक्षत्रो के शुभाशुभ फलो का विधान करने से (४) स्वप्नो पर आधारित शकुनो की व्याख्या रने से।

यज्ञो के आध्यात्मिक धार्मिक और पारलौकिक महत्त्व को एक ओर रख द तब भी इस प्रकार के अनुष्ठान करने का अत्यन्त हानि कर परिणाम यह होता है कि लोग उन सासारिक कार्यों से उपराम हो जाते है जिनसे लौकिक अभ्युत्थान हो सकता है और जिनके विना धम स्वय अपनी रक्षा नही कर सकता।

यदि ग्रहो के शुभाशुभ परिण मो मे मनुष्यो का विश्वास हो, यदि मनुष्य यह मानते हो कि आकाशस्थ नक्षत्रो के चमत्कारो से भावी अनिष्ट का ज्ञान हो जाता है तब यज्ञानुष्ठान से जो कुछ होने वाला है उसका निवारण क्योकर हो सकता है ? हम क्यो उनके शमन के लिए उनके स्वय भू एजेन्टो को रिश्वत दें ? लोगो की मान्यताए भले ही कुछ हो प्राइवेट रूप मे किये गए धार्मिक अनुष्ठानो तथा अन्य उपचारो की क्षमता भले ही कोई क्यो न हो परन्तु जब समष्टि रूप मे वा विशाल रूप मे राष्ट्रवासियो को यह मिथ्या विश्वास करा दिया जाय कि राष्ट्रिय आपत्तियो का इतनी सुगमता से पारहार हो सकता है तब परिणाम वडे भयावह होते है। जन-साधारण के उत्साह पर पानी पड जात है। वे कठोर परिश्रम की अपेक्षा देवी देवताओ पर अधिक निभर रहते हैं जिसके फलस्वरूप उन कार्यो मे उनका योग प्राय कम हो जाता है जो कल्याणकारी राज्य के निर्माणार्थ आवश्यक होते हैं। नक्षत्रो की अपेक्षा रक्षा के लिए अपनी सेनाओ पर समृद्धि के लिए अपनी परिश्रमशीलता पर और स्वास्थ्य के लिए अपने स्वास्थ्यविभाग पर निभर रहना श्रयस्कर है। हमारी शक्ति एव उत्साह का सदिग्ध स्रोतो की दिशा मे प्रवाहित न होने देना चाहिए।

इस प्रकार की भविष्यवाणिया फलित ज्योतिष से सम्बद्ध होती हैं और आर्य समाज का इनपर विश्वास नही है और वह सर्वदा इनका खण्डन करता है। यही स्थिति युक्ति युक्त है। पिछले दिनो इटली के कुछ पागल ज्योतिषियो ने घोषणा कर दी थी कि प्रलय होने वाली है। प्रलय तो न हुई परन्तु इसके दुष्परिणाम स्वरूप अनेको हृदयो मे और घरो मे आतक और बर्बादी का प्रलय जैसा दृश्य अवश्य उपस्थित हो गया था। इस प्रकार की भविष्य वाणियाँ करके प्रजा को आतकित करने वालो के विरुद्ध राजकीय कार्यवाही होकर उन्हे दण्डित अवश्य करना चाहिए। श्रीयुक्त प० जवाहरलाल जी नेहरू प्रधानमत्री ने अष्टग्रह विषयक भविष्यवाणी से उत्पन्न मिथ्या भ्रम एव आतक को दूर करने का यह कर यत्न किया है कि इनका **मुझ पर कोई असर न होगा। इनसे प्रजा को घबराना न चाहिए और उनपर विश्वास भी न करना चाहिए। ग्रह हमारे भाग्य को बनाने बिगाडने वाले नहीं हैं अपने भाग्य निर्माता तो हम स्वय ही हैं।** परन्तु इतना ही पर्याप्त नही है। भारत सरकार को इस प्रकार की सार्वजनिक भविष्य वाणियों को प्रतिबन्धित करने के लिए ठोस-पग उठाकर ससार के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए।

वसन्त

वसन्त ऋतु बडी सुहावनी होती है। इन दिनों न अधिक गर्मी होती है और न सर्दी। समस्त प्रकृति नया शृङ्गार करती है। जिधर देखो उधर ही नूतनता और सुदरता दिखाई देती है। मधुर वसन्त मधुर दिनो और गुलाब के पुष्पो से भरा होता है। वह उस वक्स के सदृश होता है जिसमे सुगन्ध युक्त मिष्ठान्न भरा हो। इस ऋतु मे ऐसा लगता है मानो हँसती हुई भूमि मे रग भरने के लिए वसन्त ने फूलो का पिटारा खोल दिया है। इन दिनो खेतो मे धन भरा होता है। शीतल मन्द और सुगन्ध पवन चलता है। कोयल आदि पक्षी मधुर स्वर मे गाते हैं। पवत बोलते और बन मुस्कराते हुए जान पडते हैं। शरीर के प्रत्येक अग मे और हृदय मे उल्लास और मादकता भरी होती है।

वसन्त को ऋतुराज कहते हैं क्योकि इसके अच्छा होने पर सब ऋतुएँ अच्छी और खराब होने पर खराब हो जाती है।

हमारे जीवन का भी वसन्त होता है जो हमें युवावस्था के रूप में प्राप्त होता है यदि हम इसे संयम और सत्कर्म से सुन्दर और सुगन्धमय न बनायेंगे तो हमारा शेष जीवन निकृष्ट हो जायगा हम जब जब अपने जीवन की पुस्तक खोलेंगे तब तब हमें वसन्त की बहार काटने को दौड़ेगी। अतः हमें संयम और ज्ञान प्राप्ति के द्वारा अपने जीवन के वसन्त को श्रेष्ठ बनाना चाहिए जिससे आगे के वसन्तों का आनन्द लेने की भूमि तैयार हो जाय।

वधू का सत्साहस

विवाह विधि में एक प्रगतिशील नववधू द्वारा क्रान्ति का एक बड़ा मनोरंजक समाचार लुधियाना से मिला है जिससे पुरोहित और पंडित सभी स्तब्ध रह गए।

कहा जाता है कि फेरों के समय यज्ञवेदी के चारों ओर वर के पीछे पीछे दो बार परिक्रमा करने के बाद वधू ने पुरोहितों और पंडितों से कहा कि दो फेरों में तो मैं वर के पीछे चला हूं अब शेष दो फेरों में मैं आगे रहूंगी और वर पीछे पंडित और पुरोहित अभी विस्मय के फेर में ही पड़े थे कि वधू ने मन्त्र करके स्वयं हेर फेर कर लिया और शेष दो फेरों में पति को अपने पीछे चलने का आदेश दे दिया। वर को वधू का अनुचर बनना ही पड़ा। इस प्रकार उन्होंने चार फेरे पूरे करके विवाह विधि को क्रान्तिकारी ढंग से पूरा किया।

वैदिक विवाह पद्धति के अनुसार जिसका स्वयं महर्षि दयानन्द ने प्रतिपादन किया है फेरों की परिक्रमा में आगे वधू और पीछे वर रहता है यह इसलिए कि वधू की रक्षा पति कर सके क्योंकि पति शब्द के अर्थ ही रक्षक के हैं।

आर्य-समाजस्थ जनों को इस बाला के व्यवहार से कोई विशेष आश्चर्य नहीं हो सकता। उनकी विवाह विधि में फेरों के समय वधू का वर के आगे चलने का सम्यक् विधान है।

स्तुति और परमात्मा

एक सज्जन ने प्रश्न उठाया है कि मनुष्य को अपनी अपूर्णता की स्पष्ट अनुभूति नहीं हो सकती क्योंकि उसे परमात्मा की पूर्णता का ज्ञान नहीं होता। उनके मतानुसार जब तक मनुष्य को परमात्मा की पूर्णता का पूर्ण ज्ञान नहीं होता तब तक अपने को पूर्ण करने के लिए प्रार्थना या स्तुति का उसके लिए कोई उपयोग न होगा।

यह मानना होगा कि स्तुति का उद्देश्य अपनी पूर्णता की दिशा में गति करने में मनुष्य को समर्थ बनाना होता है। यह कहना ठीक न होगा कि स्तुति का उद्देश्य मनुष्य को परमात्मा के समान पूर्ण बनाना होता है। यह बात मानव प्रकृति के बाहर की बात है। मनुष्य का कर्त्तव्य यह है कि वह अधिक से अधिक पूर्णता की स्थिति को प्राप्त हो। इसके लिए परमात्मा की पूर्णता का स्पष्ट ज्ञान कोई शर्त नहीं है परमात्मा तो पूर्ण है ही।

मनुष्य को परमात्मा की पूर्णता का पर्याप्त ज्ञान नहीं होता यह इस बात का सूचक है कि परमात्मा की तुलना में मनुष्य बड़ा अपूर्ण होता है। इसीलिए मनुष्य अपनी प्रार्थना में अधिकाधिक ज्ञान के प्रकाश की याचना करता है जिससे कि वह परमात्मा को अधिकाधिक जान सके

उपर्युक्त सज्जन की मान्यता है कि प्रार्थना और उपासना से मनुष्य को भला बनने में सहायता नहीं मिलती अपितु कर्म से सहायता मिलती है।

यह भी मति भ्रम है। स्तुति विचार और कर्म दोनों रूप लिए हो सकती है। वेद भगवान् की शिक्षा है कि मनुष्य अपने शुभ कर्मों को प्रार्थना उपासना के रूप में प्रभु के अर्पण रखे।

इसके अतिरिक्त स्तुति प्रार्थना बुराई से बचने और भलाई में निरत रहने के संकल्प के रूप में भी होती है। शुभ कर्म के प्रेरक के रूप में स्तुति और प्रार्थना का होना अनिवार्य है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

स्वर्ण जयन्ती नवम आर्य महा सम्मेलन दिल्ली

महात्मा आनन्दभिक्षु जी महाराज का प्रवचन

(१७-५-६१ प्रातः)

ओ३म् सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ। इलस्पदे समिध्यसे सनो वसून्या भर ।। (ऋग्)

पूज्य देवी गण, माननीय माताओ और मान्यवर सज्जनो,

अभी मैंने जो मन्त्र उच्चारण किया है, उसका उच्चारण साप्ताहिक सत्संग समाप्त करते समय अक्सर किया जाता है। परन्तु मैंने प्रारम्भ मे उच्चारण करा दिया। मेरी समझ मे ऐसा आता है कि किसी काम की सफलता के लिये हमारे साधन क्या होने चाहिएँ, यह सोचिये। वे साधन इन मन्त्रो के अन्दर बतलाये गये है। भक्त भगवान् से प्रार्थना करता है कि परमेश्वर, आप हमे ऐश्वर्य प्रदान करे। न तो हम माता-पिता से मागते हैं, न बडो से मागने की मर्यादा है। देव, हम सबको ऐश्वर्य से भर दो। बडी उत्तम कामना है। भगवान् कहते है –

तुम मागते तो हो, यह जो माग कर रहे हो यह मैं किन को देता हूँ? बच्चा माता से चाकू मागता है, माता कहती है कि तुम्हें चाकू का प्रयोग करने की तमीज भी है? बच्चे को पता होना चाहिए कि मैंने जो चीज मागी है, वह कैसे काम मे लायी जाती है। लेकिन वेद का भक्त अपने को ऐश्वर्य से भरने के लिये नही कहता है। वह तो सब के लिये कल्याण की कामना करता है। हे देव, सब को ऐश्वर्य से भर दो, कोई भूखा न रहे। कोई अशिष्ट न हो। सब सत्यवादी हो। भक्त को भगवान् कहते है –

प्यारे, मैं सब को ऐश्वर्य से किस प्रकार भरता हूँ? सगच्छध्वं, सवदध्वं , । मैं ऐश्वर्य से उनको भरता हूँ जो कि मिलकर चलते हैं, एक साथ चलते है।

परन्तु हम ने अभी तक एक-साथ चलना नही शुरू किया। आर्यो, ध्यान दीजिये कि हमने दुनिया को क्या पढाया अब तक? वेद को हम प्रमाण मानते है। वह दर्पण है। दर्पण से अपनी आकृति को देखा जाता है। यही दर्पण का काम है। वेद का दर्पण तो हमने दुनिया को दिखाया, ससार के मतमतान्तरवालो को यह वैदिक दर्पण दिखाया। लेकिन उस दर्पण का उल्टा भाग हमारी तरफ था। अब हमे चाहिए कि हम उस दर्पण को अपनी आकृति की तरफ घुमायें। यह आर्यसम्मेलन ही वह दर्पण है। सीधा भाग अपनी ओर करके देखो कि हमने आज तक क्या किया है? दुनिया के सामने जो कुछ रखा, उसका हमने अपने जीवन मे कहा तक आचरण किया है?

इसका नाम महा-सम्मेलन है। यह बडे सयोग की बात है। ९ का अक पूर्ण अक है। आप ९ को जितना भी गुना करते जाये, वह बढेगा नही, नौ ही रहेगा। भगवान् की तरह नौ का अक भी सदैव अपरिवर्तनशील है। यह नौवा महासम्मेलन हमे कहता है कि कुछ काम करो। लेकिन ९ तो बने रहो। तुम कही भी जाओ, अपना ९ कायम रखो। चाहे काग्रेस मे जाओ, चाहे जनसघ मे जाओ। तभी तुम्हें सफलता मिलेगी। आर्यो, तुम लोग जहा जाओ, अपनी सत्यता दिखलाओ, अपनी सरलता दिखलाओ, अपनी सहिष्णुता दिखाओ। अब तक दुनिया को अपनी वाणी द्वारा आपको कहना था, वह आपने कह दिया। परन्तु जो कुछ कहा, उसको आचरण में लाओ। भगवान् ने कहा – जो मिलकर चलते हैं और मिलकर बोलते हैं, उनको ऐश्वर्य से भर देता हूँ। लेकिन हम लोग तो यज्ञ में भी एक-स्वर से उच्चारण नही करते। अपने जीवन मे सगठन पैदा करने के लिए हमे तत्पर रहना है। सगठन के बिना कोई व्यक्ति, कोई

परिवार, कोई जाति कभी उन्नति क्या आज तक कर सकी है ? मुझे इस वेदी पर जाते हुए शर्म आती है। अपने दिल पर पत्थर रखकर जो कुछ कहना होता है वह कहता हू। मैं कहता हू–आनन्द भिक्षु, तुम क्या कह रहे हो ? जो कुछ तुम कह रहे हो, उसके विपरीत हो रहा है ? मुझे दिल उत्तर देता है –तुम्हे कहने का कोई अधिकार नही है। तुम जो कुछ पढाते रहे, उसके विपरीत तुम्हारा आचरण है। मैं आपके सामने दिल पर पत्थर रखकर क्यो आता हू ? क्योकि हमारे ऊपर कुछ काम दिया गया है। यह महा सम्मेलन इसलिए आया है कि हम अपने-अपने जीवन की पडताल करे। हमने दुनिया की पडताल खूब की, लेकिन जो कुछ तुम कहते रहे उसका आचरण किया ? मैं स्पष्ट कहूगा कि हमारे जीवन के अन्दर अभी तक वह चीज नही आयी है। कोई बात नही। कल के बजाय आज, आज के बजाय अब, अगर हम कोशिश कर तो कोई वजह नही कि हमारो जाति मे, देश मे, भारत वष मे जो कुछ त्रुटिया है, वे दूर न हो। उन त्रुटियो को दूर करने के लिए ही यह महासम्मेलन होता है। जिन जातियो के अन्दर यह भावना होती है कि हम अपने जीवन की पडताल करे, वे जातिया उन्नति करती हैं। जो जाति अपने जीवन की पडताल नही करती, उसकी कभी उन्नति नही हुई। इतिहास इसका साक्षी है।

प्रभु कहते हैं – हे मनुष्यो, तुम अपनी तरफ देखो। तुम पहले अपने को बनाने की कोशिश करो। तुम्हारी महिमा तो तुम्ही मे है। बाहर कहा ढूंढने जा रहे हो ? कस्तूरी मृग की तरह अपनी सुगन्ध को न पहचान बाहर क्यो भटक रहे हो ? यह अच्छी भावना है। अपनी कीर्ति अपने यश की भावना मनुष्य के अन्दर होनी चाहिए। हम प्रतिदिन भगवान् से प्रार्थना करते हैं – हम सब यशस्वी बनें। हम राम की कीर्ति करे और राम हमारी कीर्ति बढावें।

आर्यो, अगर तुम अपना कल्याण चाहते हो, तो अपने जीवन को बदलो। अपने घरों को स्वर्गतुल्य बनाओ।

आप प्रात न उठे माता प्रात न उठे तो बच्चा क्यो उठेगा और आपकी सन्तान क्यो बदलेगी ? बचो और अपनी सतान को भी बचाओ। पहले अपना कल्याण करो अपने परिवार का कल्याण करो, फिर समाज का और बाद मे ससार का कल्याण कर सकोगे।

आप लोग आज एक निश्चय करके जाइये कि हम सच्चे आर्य बनेगे। हमारे सामने भोजन परोसा हुआ है, लेकिन हममे उसका स्वाद करने की शक्ति नहीं है। उसका आस्वादन करने की हम मे योग्यता नही रही। अमृत का रसास्वाद करो। व्रत लेकर जाओ कि हम प्रतिदिन सध्या करेंगे। सध्या के बिना और भजन के बिना भोजन नही करेगे। प्रति दिन यज्ञ करो, जो व्यक्ति अपने साथ भलाई नही कर सकता वह दूसरे का क्या भला कर सकता है ? मैं खुद बीमार हूँ तो दूसरे की क्या चिकित्सा करूगा ? तुम्हारी महिमा तुम्हारे अन्दर छिपी है। मेरी महिमा मेरे अन्दर है। दुनिया कुछ भी कहे लेकिन मुझ आनन्द की ही प्राप्ति होती रहेगी, अगर मैंने अपने को पहचाना।

एक बार ऋषि दयानन्द शास्त्रार्थ करने बनारस मे गये थे ऋषि के अकाट्य तको के बावजूद वहाँ के सनातनियो ने धोखा देकर स्वामी दयानन्द की विजय को पराजय मे परिवर्तित कर दिया। उस शास्त्रार्थ के सभापति थे राजा साहब। बाद मे जब राजा साहब ऋषि दयानन्द के घर पहुँचे तो देखा कि दयानन्द के मुख पर पराजय का आभास तक नही था। तब स्वामीजी ने कहा—"मुझ इस पराजय से खिन्नता नही है क्योकि मेरी आत्मा तो मुझे शाबाशी दे रहा है। इसलिए मैं तो प्रसन्न हूँ।"

आर्यो, सभ्य बनो। जो भी व्यक्ति आपके द्वार पर आवे, पहले उस को नमस्कार करो, उस को जल पिलाओ, आसन दो। सत्यता, शिष्टता और निरभिमानता हमे अपने जीवन मे लानी होगी। तभी हम सच्चे आर्य बन सकेंगे।

हम दुनिया को धोखा दे रहे हैं। हम कहते हैं – नम्र बनें, लेकिन हम अपने पिता को, गुरु को नमस्ते नही करते। अपने जीवन के अन्दर आर्यो, नम्रता ला कर जाओ।

महाभारत मे लिखा है कि अगर तुम अपने अन्दर आर्य गुण लाओ तो तुम्हारा जीवन सरस बन जायगा। यह तभी होगा जब आप उन गुणो को धारण करेंगे। औषधि लेकर जमीन पर उडेल दूँ तो मेरा रोग कैसे दूर होगा ? भोजन सामने हो और हम न खाये, तो हम जैसा नासमझ और कौन हो सकता है? तुम अपने धन को सार्थक करना चाहते हो तो धर्म-कार्य मे दो।

धर्माधति व्यवहारो गर्याद्

आर्यो, अपने व्यवहार मे कटुता, अनुदारता, असत्यता अशिष्टता जब तक है, भला तुम दुनिया को क्या बतलाओगे ? दुनिया तो आचरण को देखती है।

आर्य समाज मे कोई डिसिप्लिन नही आयी । हम बहुत पिछड गये । तब फिर दुनिया को क्या आगे ले जाओगे ?

पचमहायज्ञ पर ऋषि दयानन्द ने सबसे पहले पुस्तक लिखी। भोजन के पहले मन्त्र पढा करो। वह मत्र अगर नही याद है तो काम को शुरू करने के पहले गायत्री मत्र तो पढो। मिल कर चलोगे, मिल कर बोलोगे तो तुम्हारा उद्धार होगा। सघठन का साधन क्या है? ईर्ष्यारहित होना । ऋषि दयानन्द ने कहा- प्रत्येक को अपनी उन्नति मे सन्तुष्ट नही रहना चाहिए, सब की उन्नति मे अपनी उन्नति समझनी चाहिए। ईर्ष्या को त्यागना, सत्य-निष्ठा, विरोध की वृत्ति ग्रहण न करना झूठे आरोप न लगाना ये सब सफलता की कुजी है।

सबसे बडी देन है सम्मान। सब को सम्मान देना सीखो। तब तुम देखोगे कि जीवन कितना सरल बन जाता है। शालीनता का गुण आप मे होना चाहिए। सहनशीलता आज आर्यो मे नही है। थोडी-सी बात पर भड़क उठते है। ऋषि के जीवन को देखो कि उनके जीवन के अन्दर कितनी सहनशीलता थी ।

एक बार पूना मे कुछ विरोधियो ने ऋषि दयानन्द के प्रति अपना विरोध प्रकट करने के लिए एक नकली दयानन्द की प्रतिमा बनाकर उसे गधे पर बिठाया और जुलूस निकाला गया। स्वामी दयानन्द के शिष्यो को बहुत बुरा लगा । लेकिन दयानन्द तो प्रसन्न मुद्रा ही मे थे। जब शिष्यो ने अपना असन्तोष व्यक्त किया तो ऋषि ने कहा—"गधे पर तो नकली दयानन्द बैठा हुआ है। असली दयानन्द तो तुम्हारे सामने मौजूद है। तुम क्यों चिन्ता करते हो ?

वेद क्या कहता है? एक दीपक १०० दीपको को जला सकता है । अग्नि से अग्नि प्रज्वलित होती है। लेकिन अग्नि का प्रयोग तुम किसी को जलाने के लिए नही करो, बल्कि उसका प्रयोग करो प्रकाश देने के लिए, अन्धकार मिटाने के लिए । अपने जीवन के अन्दर ऐसी अग्नि लाओ जो दूसरो का कल्याण करे, दूसरो की झोपडी जलाने के लिए उसका प्रयोग न करो।

किसी अध्यापक ने बोर्ड पर एक सीधी लकीर खीचकर शिष्यो से कहा—बगैर इस लकीर को छुए इसको छोटा करो । तो एक होनहार शिष्य ने उस लकीर के ऊपर एक लम्बी लकीर उससे बडी खीच दी, तो वह पहली लकीर अपने आप छोटी हो गयी । उसी प्रकार ऋषि दयानन्द ने दुनिया की लकीर को छोटा कर दिया अपनी लम्बी लकीर से।

भगवान हमे यही कहते है कि जब तुम अपने जीवन मे शिष्टता लाओगे, तब तुम्हे ऐश्वर्य से भर दूँगा । मै भगवान् स प्रार्थना करता हूँ कि हे भगवान् हमे वह सामर्थ्य दो कि हम वैदिक प्रचार करें, वाणी से नही बल्कि सदाचार से और अपने शुद्ध आचरण से।

—सम्पन्न होते हुए भी क्षमा करने वाला प्रभु और दरिद्र होते हुए दान देने वाला—ये दोनो पुरुष बहुत ऊँचे उठ जाते हैं।

—धनी होने पर दान न देने वाला और दरिद्र होने पर तपस्या न करने वाले इन दोनो को गले मे पत्थर बाँध कर समुद्र मे डुबो देना चाहिए।

वैदिक-वर्ण-व्यवस्था

[श्री डा० कालीचरण आर्य]

इस विषय पर सभा कार्यालय मे कुछ प्रश्न आये हैं जिनका उत्तर लिखते हुए इस विषय को जन-साधारण के समक्ष रख देना भी आवश्यक जान निम्न पंक्तियाँ उपस्थित कर रहा हूँ—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरूतदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत ॥
ऋ० १०।६०।१२

अर्थ —जो इस परमेश्वर की सृष्टि मे (शरीर मे मुख के समान मुख के सदृश सब मे सरदार और ऊँचा हो वह) ब्राह्मण। बल और शक्ति (शतपथ ब्राह्मण मे बाहू बल और शक्ति का नाम है) जिसमे अधिक हो वह क्षत्रिय, कमर के निचले हिस्से और जघाओ के ऊपर के हिस्से का नाम उरु है, जो समस्त वस्तुओ और समस्त देशो मे रानो की ताकत से आवे जावे—यात्रा करे वह वैश्य और जो पाँवो के अर्थात् निचले भाग की तरह समस्त शरीर के लिए सेवा करे वह शूद्र है अर्थात् जिस प्रकार शरीर मे मुख मुख्य है उसी प्रकार प्रभु की सृष्टि मे समस्त ससार को ज्ञान देने वाला सबसे उच्च है। ऐसे ही पूर्ण ज्ञान और उत्तम गुण-कर्म और स्वभाव के रखने के कारण मनुष्य मात्र मे सर्वोत्तम ब्राह्मण कहलाता है। इसी प्रकार प्रभु की सृष्टि मे, जिस प्रकार बाहु शरीर की रक्षा करने मे तत्पर रहते हैं, जो मनुष्य ससार के प्राणियो की रक्षा करता है वह क्षत्रिय और धन-उपार्जन कर जो मनुष्य अपने अतिरिक्त अन्य वर्ण वालो की भी रक्षा करता है, वह वैश्य कहलाता है। जो मनुष्य ससार में उपरोक्त ३ गुणो से शून्य है और तीनो वर्णों की सेवा करता है वह शूद्र। इस प्रकार वैदिक वर्ण-व्यवस्था गुण-कर्म और स्वभाव पर आधारित है।

प्रश्न यह है कि गुण-कर्म स्वभाव से क्या तात्पर्य है? क्या गुण से शिक्षा रूपी Qualification, कर्म से Occupation और स्वभाव से सत-रज-तम समझना चाहिए?

उत्तर—

यह भी ठीक है कि गुण से शिक्षा रूपी Qualification लिया जा सकता है। परन्तु यही ठीक नही है, शिक्षा के अतिरिक्त भी गुण माने गए हैं, जो किसी के वर्ण को निश्चित करने मे सहायक होते है। जिस प्रकार दया और न्याय, इच्छा और द्वेष आदि गुणो से मनुष्य के वर्ण को निश्चय करने मे सहायता मिलनी है, उसी प्रकार Occupation अर्थात् पेशा-कर्म के लिये प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु Occupation ही कर्म है ऐसा नही माना जाता, क्योकि मनुष्य जीवन मे मनुष्य धन-उपार्जन के लिए ही कार्य नही करता अपितु अनेक ऐसे कर्म करता है जिसमे धन-उपार्जन किंचित नही होता। स्वभाव से अभिप्राय सत-रज-तम भी हो सकता है। सत-रज-तम प्राकृतिक गुण हैं। प्रकृति का प्रत्येक प्राणी से अनिवार्य सम्बन्ध है तथा ससार का कोई भी प्राणी जिसका वर्णाश्रम से भी कोई सम्बन्ध नही, इन तीनो गुणों से वंचित नही रह सकता अत केवल स्वभाव में इन्हीं तीनो का उल्लेख पर्याप्त नही। स्वभाव का केवल इस जन्म के साथ ही सम्बन्ध नही पूर्व-जन्म का भी इससे घनिष्ठ सम्बन्ध है।

किन्ही-किन्ही का विचार है कि वर्ण श्रम Occupation अर्थात् पेशो से ही निश्चित किए जाते हैं। Occupation अर्थात् पेशे का अर्थ यही समझा जाता है कि मनुष्य जिसके द्वारा धन-उपार्जन करे वह

Occupation है। इन अर्थों को दृष्टि मे रखते हुए यह नही कहा जा सकता कि वर्ण Occupation पर आधारित है, क्योकि वैदिक मर्यादा के अनुसार धन-उपार्जन करने का कार्य केवल एक ही वर्ण के हाथ मे है। इसलिए धन-उपार्जन का कार्य केवल एक वर्ण को तो बतला देगा परन्तु अन्य वर्णों की व्यवस्था का सम्बन्ध Occupation से कुछ नही। यदि Occupation से अभिप्राय जीवन के मुख्य कार्य से है जिसका करना उसने अपना कर्त्तव्य बना लिया है वह Occupation नहीं कहलायेगा। Occupation केवल गृहस्थी ही करता है। गृहस्थी के अतिरिक्त ब्रह्मचारी वानप्रस्थी और सन्यासी का कोई Occupation नही है तो क्या ये वर्ण विहीन होगे। किन्ही-किन्ही का यह विचार भी है कि वर्णों का वर्गीकरण केवल गृहस्थियो पर ही लागू होता है। धनोपार्जन केवल गृहस्थ आश्रम मे ही किया जाता है अत धनोपार्जन का कार्य वर्णो के निश्चय करने मे पर्याप्त न होगा। अन्य आश्रम धन-उपार्जन के स्थान पर अन्य मुख्य काय करते है, जिनसे उनका वर्ण निश्चित किया जा सकता है। यदि किसी प्रकार से यह मान भी लिया जाय कि सन्यासी का कोई वर्ण नही। सन्यासी केवल ब्राह्मण ही हो सकता है तो भी सन्यासी होने से पहले सन्यासी होने वाले को तथा अन्य वानप्रस्थियो व ब्रह्मचारियो के लिए किसी वण का निश्चय करना आवश्यक होगा और यदि ब्राह्मण बन जाने पर ही सन्यास लिया जा सकता है तो यह निश्चित ही हो गया कि सन्यासी ब्राह्मण ही है।

वैदिक-वर्ण-व्यवस्था मे प्रथम और सर्वोच्च स्थान ज्ञान और सदाचार को ही दिया गया है। ज्ञान और सदाचार तीनों आश्रमो मे—अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य मे आवश्यक है। ज्ञान और सदाचार के साथ देश-कल्याण की भावनाओ से प्रेरित मनुष्य के कर्मों की विभिन्नता उनके वर्णों को निश्चित करने मे सहायक होती है। यही सबसे अधिक युक्ति-युक्त और स्वाभाविक है। देश को अविद्या रूपी अधकार से सबसे अधिक हानि उठानी पडती रही और पडती रहेगी। देश के अन्य शत्रुओ मे से अविद्या और अज्ञान सबसे बडे शत्रु हैं। इसलिए इस शत्रु से टक्कर लेना एक महान् और जटिल कार्य है। जो महानुभाव इस जटिल कार्य के करने मे अग्रसर होते हैं और ससार को अपनी सेवाएँ निस्वार्थ भाव से अर्पण करते हैं, जिनको ससार का कोई प्रलोभन भी उनको अपने शुभ कार्य को करने से नही रोक सकता जो सर्वदा पढना-पढाना, यज्ञ करना-यज्ञ कराना और दान देने में सर्वदा लगे रहते है, जिन के मन मे कभी किसी बुराई के करने की इच्छा उत्पन्न नही होती, जो अपने मन को अपने आधीन कर अधर्म की ओर नही जाने देते, जो अपनी समस्त इन्द्रियो पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर धर्म मे चलाते हुए, विद्या का प्रचार और प्रसार करते है वही ब्राह्मण हैं। इसी प्रकार ज्ञान और सदाचार के साथ ससार के दूसरे शत्रु 'अन्याय' का सामना करने के लिए अपनी समस्त इन्द्रियो पर अधिकार प्राप्त कर ससार को अन्याय से रक्षा करते हैं वह क्षत्रिय कहलाते हैं और जो व्यक्ति तीसरे शत्रु 'अभाव' को दूर करने के लिए देश मे नाना-प्रकार की वस्तुओ को उत्पन्न कर तीनो आश्रमो की हर प्रकार की वस्तु से रक्षा करते है, और स्वय सयमी जीवन बिताकर धर्म मे रत रहते है, वही वैश्य हैं।

प्रश्न है कि वर्ण देना आचार्य का कर्तव्य है तो गुरुकुलो के अतिरिक्त शिक्षणालयो की क्या व्यवस्था होगी ?

उत्तर मे निवेदन है कि ऋषि दयानन्द ने स्पष्ट बताया है कि राजा तीन प्रकार की सभाएँ बनाए— और उनके ही हाथ मे देश का सब प्रबन्ध रहे तो धर्मार्य सभा की जो व्यवस्था होगी धर्म और न्याय के अनुसार ठीक होगी और राजार्य सभा उनको व्यवस्था को कार्यरूप मे परिणत करा सकेगी। इसके अतिरिक्त बिना राज्य की सहायता के कोई व्यवस्था किसी अन्य सभा द्वारा किया जाना सम्भव नही।

जो महानुभाव यह चाहते हैं कि देश मे वर्ण-आश्रम को पुन स्थापना हो जाय, उन्हे विचारना चाहिए कि यह कार्य कितना कठिन है। यदि किसी शूद्र को वैश्य-क्षत्रिय या ब्राह्मण वर्ण दिया जाय तो कदाचित् वह

वेदों में अध्यात्म-विद्या की साक्षियाँ

[श्रीयुत प० विश्वनाथ जी भूतपूर्व वेदोपाध्याय गुरुकुल कांगड़ी]

कई विद्वानो का यह वाद है कि वेदो मे ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन नही है। ये विद्वान् ऋग्वेद मे तो ब्रह्मविद्या की सत्ता से सर्वथा ही इन्कार करते है। अन्य वेदो मे ब्रह्म विद्या की सत्ता को तो ये यथाकथेचित् मान भी लेते हैं। ये विद्वान् अथर्ववेद को भी जादू-टूनो से भरा हुआ मानते हैं, जबकि अथर्ववेद का एक अति प्रसिद्ध नाम है—ब्रह्म-वेद। ब्रह्मवेद नाम से स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि यह वह वेद है जिसमे ब्रह्म का मुख्य रूप से प्रतिपादन है। इस शब्द का यह अभिप्राय नही कि "ब्रह्मा नामक ऋत्विक्" का वेद। अथर्ववेद के पढते समय स्थान-स्थानमे ब्रह्म का अत्युत्कृष्ट वर्णन मिलता है। अथववेद मे तो कई सूक्तो पर शीर्षक दिया हुआ है कि "अध्यात्म"। अथर्ववेद के १३वे काण्ड मे ६ सूक्त है और कुल १८८ मन्त्र हैं। इन सब सूक्तो को पुरातन आचार्यों ने अध्यात्मपरक माना है। इसी प्रकार अध्यात्मपरक अन्य सूक्त भी अथववेद मे भरे पडे हैं। यहाँ विचारना यह है कि ऋग्वेद मे ब्रह्मविद्या का वर्णन है या नही। क्योकि पाश्चात्य आदि विद्वान् ऋग्वेद को प्राकृतिक घटनाओ का ही वर्णन करने वाला प्राय मान्ते हैं। ऋग्वेद मे ब्रह्मविद्या है—इस सम्बन्ध मे विचारार्थ कतिपय प्रमाण या साक्षियाँ उपस्थित की जाती हैं। कतिपय ऐसी साक्षियाँ भी उपस्थित की जायँगी जोकि चारो वेदो के सम्बन्ध मे सामान्य होगी।

१—स्वय ऋग्वेद मे निम्नलिखित मन्त्र मिलता है जो ऋग्वेद मे ब्रह्मविद्या की सत्ता मे आन्तरिक प्रमाण है। यथा—

(क) ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदु।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते॥ १। १६४। ३९॥

इस मन्त्र पर सायणाचार्य ने जो भाष्य किया है उसी

प्रसन्नता से स्वीकार कर लेगा परन्तु यदि किसी उच्च-वर्ण को जो अपने को उच्चवर्ण मे समझता हूँ उसके किसी निकृष्ट कर्म के कारण कोई सभा यह व्यवस्था दे कि इसको निचले वर्ण मे उतार दिया जाय तो उसे वह स्वीकार नही करेगा ऐसी अवस्था मे व्यवस्था देने वाले के पीछे जब तक कोई शक्ति न हो, चाहे बाह्य हो चाहे आन्तरिक, बाह्य से राजा की और आन्तरिक से अपनी आत्मा की, तब तक आधुनिक काल मे ही नही किसी भी काल मे वर्ण-आश्रम की मर्यादा को स्थिर रखने मे कठिनाई ही नही प्रतीत होती अपितु असम्भव सा प्रतीत होता है।

एक प्रश्न और है और वह यह किवर्ण परिवर्तन से जब माता और पिता से सम्बन्ध विच्छेद हो जायगा तो पितृ ऋण से उऋण होने का अवसर कहाँ और किस प्रकार यही शका तथा आपत्ति आश्रम व्यवस्था मे भी की जाती है। जब बालक गुरुकुल से लौटता है तो माता-पिता वानप्रस्थ को जाने की तैयारी करे तब कब किस प्रकार। माता-पिता की सेवा करे। उत्तर दोनो अवस्थाओ मे एक ही है कि वैदिक मर्यादा के अनुसार तो मनुष्य ससार को अपने परिवार के रूप मे देखे ऐसा आदेश हूँ तब बालक जिस समय जिन महानुभावो के सम्पर्क मे आता है उनको अपना पिता तथा माता समझ कर उनकी सेवा करे यही पितृ सेवा होगी और इस प्रकार सिद्धान्त की कोई हानि न होगी।

का सार यहाँ उद्धृत किया जाता है। सायणाचार्य का भाव है कि —

"मन्त्र मे ऋक् शब्द द्वारा चारो वेदो का ग्रहण है। ऋक् आदि वेदो द्वारा जिस अविनाशी, सर्वोत्कृष्ट, और आकाश की नाई निर्मल-निर्लेप तथा सर्वरक्षक ब्रह्म का प्रतिपादन हुआ है तथा जिस ब्रह्म मे सब अन्य देव आश्रित है, उस ब्रह्मतत्त्व को जो व्यक्ति नही जान पाता वह ऋचाओ से क्या प्रयोजन सिद्ध कर सकेगा।"

यह मन्त्र कितनी स्पष्ट वाणी से कह रहा है कि वेदो मे और विशेषतया ऋग्वेद मे सर्वत्र ब्रह्म का ही वर्णन है। तथा ऋग्वेद आदि मे जो ब्रह्म से भिन्न नाना देवो का वर्णन है वह भी परम्परया ब्रह्म का ही वर्णन है, क्योकि ये नानादेव ब्रह्म के आश्रय मे ही स्थित है। आश्रितो के वर्णन मे परम्परया आश्रय का ही वर्णन समझना चाहिये।

इस मन्त्र का रहस्य जिसने समझ लिया वह फिर इस भ्रम मे नही पड सकता कि "ऋग्वेद आदि मे ब्रह्म का वर्णन नही।" ऐसे रहस्यवेदी के लिये तो ऋग्वेद आदि का एक-एक अक्षर, एक-एक पद, एक-एक वाक्य और एक-एक मन्त्र तथा सूक्त परम्परया तथा कही-कही साक्षात् रूप मे ब्रह्म का ही वर्णन करता हुआ प्रतीत होगा। जैसे किसी ग्रन्थ कर्त्ता की पुस्तक का एक-एक पृष्ठ, एक-एक सन्दर्भ तथा एक-एक वाक्य उस कर्त्ता के विचारो और विद्या का वर्णन साथ-साथ कर रहा होता है वैसा ही तथ्य ऋग्वेद आदि के सम्बन्ध मे भी समझना चाहिये। वेद तो प्रभु का काव्य है। "देवस्य पश्य काव्य न ममार न जीर्यति," "कविर्मनीषी परिभू स्वयम्भू" इत्यादि प्रमाणो द्वारा ज्ञात होता है कि वेदकाव्य उस महाकवि की रचना है। काव्य द्वारा कवि की प्रतिभा, वर्णन शैली, कवि की विद्वत्ता आदि का जैसे अनुभव होता है वैसे ही वेदकाव्य द्वारा वेद के कवि का बोध भी साथ साथ ही होता रहता है। यहाँ तो पढने वाले की धारणा और मनोवृत्ति का प्रश्न है कि वेदो का स्वाध्यायी वेदो को किस धारणा और मनोवृत्ति से पढ़ रहा है।

ऋग्वेद के इसी सूक्त का निम्नलिखित मन्त्राश भी विचार के योग्य है। यथा—

(ख) "**यदा मागन् प्रथमजा ऋतस्याविदाचो मश्नुवे मागमस्या**॥ (मन्त्र ३७)

अनुभव करने वाला स्वाध्याय प्रेमी कहता है कि "जब मुझे सत्य का प्रथम प्रकाश करने वाला ब्रह्म प्राप्त हो जाता है तदनन्तर ही मैं इस वेदवाणी के असली भजनीय ब्रह्मतत्त्व को पा सकता हूँ।" इस साक्षी द्वारा भी यही प्रतीत होता है कि वेदो का एक ही भजनीय तत्त्व है और वह है ब्रह्म। जो ब्रह्म के स्वरूप को नही जानता वह वेदो मे किस विधि से ब्रह्म का वर्णन हुआ है—इस बात को भी नही समझ सकता।

(ग) ऋग्वेद मे कहा है कि —

"**ब्रह्मा य वाच परम व्योम**" (मन्त्र ३५)।

अर्थात् चारो वेदो का ज्ञाता "ब्रह्मा" नाम वाला यह ब्रह्म ऋग्वेदादि रूप मन्त्र वाणियो का परम आश्रय है, रक्षक है। इस द्वारा भी यह दर्शाया है कि वेद काव्य द्वारा उसी महाकवि का वर्णन हो रहा है।

(घ) एक और प्रमाण भी यहाँ विचार के योग्य है। यथा —

यस्तित्याज सचिविद सखाय न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।

यदी शृणोत्यलक शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्॥ (ऋ० १०, ७१, ६)।

इस का अभिप्राय यह है कि "जो वेद को पढता हुआ वेद के सखा का साथ-साथ ख्याल नही करता उस को पढी-लिखी वेद वाणी का सौभाग्य प्राप्त नही होता। वह वेदपाठी जो कुछ वेदवाणी मे सुनता है वह मिथ्या असत्य और अयथार्थ ही सुनता है, वह सुकर्म-प्रभु के मार्ग का 'ठीक पथिक नही बन पाता।' इस मन्त्र मे भी कितने स्पष्ट रूप मे कहा गया है कि वेद के स्वाध्याय का एक विशेष मार्ग है, इस वैदिक स्वाध्याय की एक विशेष दृष्टि है, इस खजाने की एक विशेष चाबी है, जिसके

बिना वेद के तत्त्व का, रहस्य का वास्तविक बोध नही हो सकता।

इस सम्बन्ध मे वेदो में नाना अन्त साक्षियाँ हैं जिनका अधिक वर्णन इस स्थान मे अधिक उपयुक्त नही जान पड़ता।

२—उपनिषदो मे भी स्थान-स्थान पर वर्णन आता है कि वेदार्थ मुख्य रूप मे ब्रह्म परक ही है। यथा कठ-उपनिषद् मे लिखा है कि —

> सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपासि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
> यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पद सग्रहेण ब्रवीम्यो-
> मित्येतत् ॥ (अ० १, बल्ली, २, ख० १५)

इस का अर्थ निम्नलिखित है। यथा —'सब वेद' जिस प्रापणीय ब्रह्म का बोध कराते हैं, और जिसकी प्राप्ति के लिए सब प्रकार की तपश्चर्याओ का वर्णन करते हैं, तथा जिसे प्राप्त करने की इच्छा से साधक ब्रह्मचर्य की साधना करते हैं, हे नचिकेता! उसके सम्बन्ध मे मैं यम तुझे सक्षेप से कहता हू कि वह —ओम् है।

उपनिषद्कार के अनुभव को देखिये। उपनिषद्-कार कह रहा है कि 'सब वेद' उस ब्रह्म का बोध कराते है जिसका कि नाम—ओम् है। क्या उपनिषद्-कार की अनुभूति अशुद्ध है जबकि वह कहता है कि 'सब वेद' अर्थात् चारो वेद ब्रह्म का ही वर्णन कर रहे हैं। तो हम कैसे कह सकते हैं कि वेदो मे ब्रह्मविद्या नही। वस्तुत वेदार्थ की वह दृष्टि हमे प्राप्त नही है जो कि अनुभूति सम्पन्न ऋषियो को प्राप्त हुई थी। इसीलिये ऋग्-वेद आदि मे हमे ब्रह्म का प्रतिपादन नही उपलब्ध होता। कई टीकाकारो ने लिखा है कि यहाँ 'वेद का अर्थ है उपनिषदे। भला यह कैसे? उपनिषदो मे भी जहाँ-जहाँ वेद-पद आया है वहाँ-वहाँ प्राय सर्वत्र वेद-पद द्वारा वेद सहिताओ का ही ग्रहण हुआ है, उपनिषद् आदि का नही। अत यह विचार भ्रमात्मक है।

२—इस सम्बन्ध मे निरुक्तकार यास्काचार्य की भी साक्षी अत्युपयुक्त है। निरुक्त मे लिखा है कि:—

> (क) न ह्येषु प्रत्यक्षमस्त्य नृषेरतपसो वा पारोवर्य-
> वित्सु त खलु वेदितृषु।
> भूयोविद्य प्रशस्यो भवत्युक्त पुरस्तात् ॥
> (अ० १३, ख० १२) ॥

'अर्थात् इन मन्त्रो मे प्रतिपादित वास्तविक तत्त्वो का प्रत्यक्ष उसे नही हो सकता जो कि स्वय ऋषि कोटि का नही, या जो स्वय तपस्वी नही। ऋषि और तपस्वी के न होते हुए भी वह व्यक्ति फिर भी वेदो के भावार्थ को समझने के लिए अधिक उपयुक्त हो सकता है जिसने कि वैदिक आचार्यों की परम्परा के अनुसार वेद पढा है, या जो पराविद्या और अपरावि-द्याओ के ज्ञानियो मे अधिक ज्ञानी हैं, भूयोविद्य है अर्थात् जो पराविद्या और अपराविद्याओ मे से बहुत सी विद्याओ को जानता है।"

वेदो के यथार्थ तत्त्वो के समझने मे वर्तमान काल के स्वाध्यायी क्यो असफल हुए हैं इसका कारण यह दर्शाया गया है कि वे स्वाध्यायी न तो ऋषिकोटि की दृष्टि रखते हैं, और न वे तपश्चर्या का जीवन व्यतीत करते हैं।

निरुक्तकार ने लिखा है कि 'ऋषिर्दर्शनात्' (अ० २, ख० ११)। अर्थात् 'ऋषि वह होता है जिसे कि वैदिक तत्त्वो का प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है।' इस पर दुर्गाचार्य लिखते हैं कि 'पश्यति ह्यसौ सूक्ष्मानप्यर्थान्', अर्थात् ऋषिकोटि का व्यक्ति वेद के सूक्ष्म अर्थों को भी देख पाता है। इस प्रकार के ऋषिकोटि के व्यक्ति वर्तमान में नहीं हैं, इसलिये वेद के स्वाध्यायकर्त्ता को वेदों मे छिपे यथार्थ तत्त्वो का प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हो पाता, वे वेदो को पढते हुए भी भटकते रहते हैं, वे वेदार्थ का असली मार्ग नहीं प्राप्त कर सकते।

तो भी यास्काचार्य ने वेदार्थ के ज्ञान का एक मार्ग खोल दिया है। वह है पराविद्या और अपराविद्याओ का अधिक ज्ञान होना। इन विद्याओ का आश्रय लेकर जो विद्वान् वेदो की खोज मे प्रवृत्त हुए है उन्हे वेदो के रहस्यमय ज्ञान का फल प्राप्त भी हुआ है। परन्तु वेदज्ञान का यह मूलतत्त्व सदा से रहा है कि वेदो मे

आधिभौतिक और आधिदैविक विद्याओं के वर्णनों मे साथ-साथ आध्यात्मिक विद्या भी गुम्फित हुई है, गुथी पडी है। इस तत्त्व का भी वैदिक स्वाध्याय मे साथ २ प्रत्यक्ष होते रहना चाहिए। वेदो मे स्थान-स्थान पर साक्षात् रूप से भी अध्यात्म विद्या का वर्णन हुआ ही है, इस मे तो कोई विवाद ही नही -

(ख) उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम् ॥
(ऋ० अष्ट० ८ अ०२ व० २३) ॥

अर्थात् 'जिस व्यक्ति का वेद के साथ सखिभाव हो जाता है, उस सखिभाव के हो जाने पर उस व्यक्ति के सम्बन्ध मे यह कहा गया है कि उसने स्थिररूप से वेदार्थ रस का पान कर लिया है। वेद वाणी के बडे बडे विज्ञो मे भी उसे कोईवेदार्थ की दृष्टि से परास्त नही कर सकता और वह व्यक्ति जिसका कि वेद के साथ सखिभाव उत्पन्न नही हुआ, जो वद के स्वाध्याय को अपना एक अनुषङ्गिक कार्य समझता है वह वदार्थ की दृष्टि से ऐसा ही है मानो कि वह एक काल्पनिक गौ के साथ विचरता है जो कि उसे दूध नही दे सकती। ऐसा व्यक्ति वद की वाणी को तो सुनता है, परन्तु वेद के असली पुष्पों और फलो से वञ्चित ही रहता है।'

ये पुष्प-और-फल क्या हैं—इस पर निरुक्तकार लिखते हैं कि —

"अर्थं वाच पुष्पफलमाह।' याज्ञदैवते पुष्पफले देवताध्यात्मे वा।"

अर्थात् वेदवाणी का अर्थ ही वेदवाणी के पुष्प-और-फल हैं। वे हैं याज्ञ-और-दैवत, तथा देवता-और-अध्यात्म। इस का अभिप्राय यह है कि निचली कोटि के अधिकारी के लिये, अर्थात् अभ्युदय या सासारिक भावनाओं से प्रेरित होकर वेद पढने वाले अधिकारी के लिये वेदवाणी का अर्थ याज्ञ-और-दैवतरूप में प्रकट होता है। "याज्ञ" का अर्थ है,—"यज्ञविषयक ज्ञान" और "दैवत" का अर्थ है,—"देवता-विषयक ज्ञान"। अभिप्राय यह कि ऐसा अधिकारी वेद मन्त्रों मे यज्ञों का वर्णन और उनमें देवताओं के नाम पर आहुतिया देना,—इन वर्णनों को ही वेदार्थ के रूप में समझता है।

परन्तु इसकी अपेक्षा उच्च कोटि के अधिकारी के लिये अर्थात् अध्यात्मभावनाओं से प्रेरित होकर वेद पढने वाले अधिकारी के लिये वेदवाणी का अर्थ है,—देवता-और-अध्यात्म। ऐसा उच्चकोटि का अधिकारी वेदमन्त्रो मे जो देवताओं के वर्णन हुए हैं उन देवताओ के वर्णनो में छिपे हुए अध्यात्म तत्त्व का भी वर्णन प्रत्यक्ष सा अनुभूत कर रहा होता है। ऐसे ऊँचे अधिकारी के लिये दैवत-ज्ञान तो वदार्थ के पुष्परूप हैं और अध्यात्मज्ञान फलरूप हैं। ऐसे व्यक्ति को वेदो के सब वर्णनों में अध्यात्मतत्त्व ही प्रतिफलित हुआ प्रतीत हो रहा होता है। जैसे मनुष्य को स्वच्छ जल में मछली ही दीखती है वैसे ही दैवतवर्णनों मे अध्यात्मद्रष्टा को आत्मतत्त्व ही प्रकट हो रहा होता है। निरुक्तकार का यह प्रमाण कितने स्पष्ट रूप मे दर्शा रहा है कि वेदो मे सर्वत्र अध्यात्मतत्त्व ओत-प्रोत है।

निरुक्तकार ने ७वें अध्याय के ख०४ में देवताविषयक एक प्रश्न उठाया है। यथा —

अपि ह्यदेवता देवतावत्स्तूयन्ते यथाश्वप्रभृतीन्योषधिपर्यन्तानि। अथाप्यष्टौ द्वन्द्वानि। स न मन्येत आगन्तूनिवार्थान् देवतानाम्, प्रत्यक्षदृश्यमेतद्भवति। माहाभाग्याद् देवताया एक आत्मा बहुधा स्तूयते ॥३॥ एकस्यात्मनोऽन्ये देवा प्रत्यङ्गानि भवन्ति ॥९॥ आत्मैवैषां रथो भवत्यात्माश्व आत्मायुधमात्मेषव आत्मा सर्वं देवस्य देवस्य ॥१५॥

यहाँ निरुक्तकार ने पूर्वपक्ष उठाया है वह यह कि वेदो मे अदेवताओं का भी वर्णन हुआ है, जैसे अश्व आदि का। इसी प्रकार वेदों में आठ द्वन्द्वो का भी वर्णन हुआ है जैसे उलूखल-मूसल आदि का। क्या इन वर्णनो में भी आध्यात्मिक वर्णन है जिनमे कि अश्व आदि का और द्वन्द्वो का वर्णन हुआ है ?

निरुक्त इस प्रश्न का उत्तर देता है कि ऐसे वर्णनों में भी उसी एक महान् आत्मा का वर्णन समझना चाहिये।

अश्व आदि के रथ में भी उसी एक महान् आत्मा का वर्णन हुआ है। यह उसका एक महान्-ऐश्वर्य है कि वह अश्व आदि का रचयिता है, अत इन सृष्ट पदार्थों में भी उस सृष्टिकर्ता का ही प्रतिफलितरूप समझना चाहिये। ये सब देवता और अदेवता उसी एक महान् आत्मा की शक्तिरूप है। वेदो मे अगर रथ का वर्णन हुआ है तो रथ मे भी सृष्टिकर्त्ता का वर्णन समझना चाहिये। इसी प्रकार अश्व, आयुध और इषुओ की सृष्टि मे भी उसी सृष्टिकर्त्ता का वर्णन समझना चाहिये। क्योकि अदेव और देव, प्रत्येक तत्त्व की प्रेरक आत्मा वही एक महान् आत्मा है। यह है वैदिक दृष्टि जिसको लेकर वेदो के स्वाध्याय मे प्रवृत्त होना चाहिये।

(घ) निरुक्तकार यास्काचार्य ने निरुक्त मे स्थान २ पर मन्त्रो के दो-दो भी अर्थ दर्शाए हैं, अधिदैवत और अध्यात्म। जैसे कि अ०१२, पा०४, ख०३७ मे

सप्त ऋषयः प्रतिहिता शरीरे
सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयु तत्र
जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ।।

इस मन्त्र की व्याख्या मे "सप्तऋषय" के अर्थ किये हैं (क) सप्तरश्मय, तथा (ख) षट् इन्द्रियाणि विद्या सप्तमी। इसी प्रकार "अस्वप्नजौ देवौ" के अर्थ किये है, (क) वाय्वादित्यौ, तथा (ख) प्राज्ञश्चात्माज तैजसश्च।

इसी प्रकार
तिर्यक् बिलश्चमस ऊर्ध्वबुध्नो
यस्मिन् यशो निहित विश्वरूपम्।
अत्रासत ऋषय सप्त साक ये,
स्य गोपा महतो बभूवु ॥ निरु २।४।३४

मे भी दो अर्थ दर्शाए हैं, एक हैं अधिदैवत तथा दूसरा अध्यात्म। इसी प्रकार निरुक्त मे अन्यत्र स्थानो मे भी अध्यात्म अर्थ दर्शाए गये हैं।

(३) निरुक्त का १३ वाँ और १४वा अध्याय भी इस सम्बन्ध में विचारणीय है। इन दो अध्यायो मे प्राय करके मन्त्रो के अध्यात्म अर्थ ही निरुक्तकार ने दिये हैं।

४—महर्षि दयानन्द सरस्वती वेदो के अध्यात्म अर्थों के सम्बन्ध में ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका मे निम्नलिखित विचार उपस्थित करते हैं। यथा —

"वेदेषु यत्र यत्रोपासना विधीयते तत्र तत्र देवतात्वेनेश्वरस्यैव ग्रहणात्॥ (वेदविषय विचार)॥

अर्थात् "वेदो मे जहाँ जहाँ उपासना का विधान है वहाँ २ देवता ईश्वर ही है"। इसी प्रकार महर्षि लिखते हैं कि —

"उपासना ज्ञान काण्डयोः कर्मकाण्डस्य निष्काममार्गेऽपि च परमेश्वर एवेष्टदेवोऽस्ति। कस्मात्। तत्र तस्यैव प्राप्ति प्रार्थ्यते। यश्चतस्य सकामो मार्गोस्ति तत्रेष्टविषय भोगप्राप्तये परमेश्वरः प्रार्थ्यते। परन्तु नैवेश्वरार्थत्याग क्वापि भवतीति वेदाभिप्रायोऽस्ति'॥

अर्थात् "केवल परमेश्वर ही कर्म, उपासना और ज्ञानकाण्ड मे सबका इष्टदेव है, तथा स्तुति, प्रार्थना, पूजा और उपासना करने के योग्य है। सर्वत्र कर्मकाण्ड मे भी इष्टभोग की प्राप्ति के लिये परमेश्वर से ही प्रार्थना की जाती है। यह निश्चित है कि किसी वैदिक मन्त्र मे भी ईश्वरार्थ का सर्वथा त्याग नही होता, — यही वेदो का अभिप्राय है।

५—वर्तमान शताब्दी के योगी श्री अरविन्द जी के जो विचार वैदिक देवताओ के सम्बन्ध मे है वे भी गम्भीर विचार के योग्य हैं। आपने अपनी योगानुभूतियो के आधार पर यह दर्शाया है कि देवता,—जो कि अग्नि, इन्द्र, वायु, आदित्य आदि हैं,—उनके वैदिक विशेषण तथा वर्णन उनके आध्यात्मिक स्वरूपो का ही यथार्थ रूप मे वर्णन करते हैं। योगी अरविन्द वेदो के याज्ञिक अर्थों को गौण और एकदेशी मानते हैं। इनके अनुभव के अनुसार समग्रवेद योग की आन्तरिक अनुभूतियो का वर्णन करते हैं।

गणपति

लेखक—प्रिन्सिपल श्री लक्ष्मीदत्त दीक्षित एम० ए०
आर्य कालिज पानीपत।

वैदिक काल मे राजा या राष्ट्रपति को गणपति के नाम से पुकारा जाता था (यजुर्वेद २३ १९)। आर्यों का प्रख्यात और प्रिय राज्य गणराज्य अथवा जनराज्य (यजु ९-४०) ही कहलाता था। यह राज्य सर्वमत या बहुमत से सचालित राज्य था— व्याचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये" (ऋग्वेद ५-६६-६)। गणराज्य के सर्वोच्च शासक को गणपति कहना सर्वथा उपयुक्त है।

प्राचीन काल मे राजा जिसे और भी अनेक नामो से पुकारा गया है, सदा एक निर्वाचित अधिकारी होता था और वह उन्ही शर्तों के अनुसार अपने अधिकार का प्रयोग करता था जिन्हे वह राज्यारोहण के समय स्वीकार करता था। उससे कुछ निश्चित कर्तव्यो के पालन की आशा की जाती थी और उसे कुछ विशिष्ट अधिकार प्राप्त होते थे। वह अपना पद राजकर्ताओ के हाथो ग्रहण करता था। वैदिक साहित्य मे जनता को विश कहा है और राजा को भी वेद मे अनेक स्थानो पर विशस्पति कहा गया है। जनता अपने से योग्यतम व्यक्ति को राजपद पर प्रतिष्ठित करती थी।

त्वां विशः वृणतां राज्याय—अथर्ववेद (२-४-२)
सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तु—,' (२-३-१)
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु—ऋग्वेद (१०-१७३-१)

इत्यादि अनेक मन्त्रो से स्पष्ट है कि राजा स्वयम्भू नही होता था बल्कि जनता की इच्छा और अनुमति से बनाया जाता था। ऐतरेय ब्राह्मण मे भी राजा के बनाये जाने (राजान करवामहे तथा राजानमकुर्व) का उल्लेख है। शतपथ ब्राह्मण मे तो और भी स्पष्ट शब्दो मे लिखा है—"सर्वमनुमन्यन्ते यस्मै वै राजा भवति न स यस्मै न।" जिसे सब स्वीकार करें वही राजा होता है, वह राजा नही होता जिसे राज्य की जनता का समर्थन प्राप्त नही होता। राज्यारोहण से पूर्व राजा को राष्ट्र के मुख्य अङ्गो तथा देश की सीमाओ के अन्दर बसने वाली सारी जनता की अनुमति प्राप्त करनी होती थी। इसकी भी एक विशेष प्रक्रिया थी। ब्राह्मण ग्रन्थो मे अत्यन्त विस्तार पूर्वक इसका उल्लेख मिलता है।

ऋग्वेद मे एक स्थल (५-४३-१२) पर सभासदस्यो, न्यायाधीशो तथा अन्य अधिकारी वर्ग के साथ-साथ राष्ट्रपति के शपथ ग्रहण करने का विधान है।

राजा को बनाने वाले अथवा राजा के निर्वाचन मे मत देने वाले 'राजकृत् (अथर्व ३ ५-७) कहलाते थे। अथर्ववेद ३ ३ ६ से मालूम होता है कि ससद् (राष्ट्रसभा जिसमे राष्ट्र के सभी वर्गों तथा प्रदेशो के प्रतिनिधि होते थे—अथर्व ३ ५ ६) के बहुमत से राजा का निर्वाचन होता था। इसीलिए वह ससद् का अश (ससदो मामिन्द्र भगिन कुरु) बन कर रहता था और सभा के ज्ञान से ज्ञानी तथा तेज से तेजस्वी (एषामह समासीनाना वर्चो विज्ञानमाददे—अथर्व ७-१२-३) होकर ही राज्य करता था। प्रजा ही राजा की शक्ति (विशौज इन्द्रोऽसि) थी। जनता से स्वतन्त्र होने पर उसका अस्तित्व ही नही रहता था। वह अपने को प्रभु का अश अथवा ईश्वर का प्रतिनिधि न मान कर प्रजा को ही अपना शरीर (विशो मेऽङ्गानि) मानता था। प्रजा की इच्छा के विरुद्ध वह राज्य नही कर सकता था। स्वेच्छाचारी बन कर वह एक दिन भी नही टिक सकता था। अपने को प्रभु का अश मानने की बजाय

वह राष्ट्रसभा तथा समिति (ससद् के दो भाग) को ही प्रभु का अश (प्रजापतेर्दुहितरौ) मानता था और सदा इस बात की कामना करता था कि ये उसकी रक्षा करें (सभा च मा समितिश्च मावताम्—अथर्व ७-१२-१)।

राज्य की सर्वोच्च सत्ता ससद् मे निहित होती थी। राजा की स्थिति (अथर्व ६-८८-३) और पदच्युति (अथर्व १५-५-१६) आदि सभी कुछ ससद् के अधीन था। शासन विषयक सभी प्रश्नो पर विचार करके निर्णय करना और राज्य की नीति निर्धारित करना ससद् का ही काम था। ससद् सर्वोच्च सत्तासम्पन्न (Sovereign) सस्था थी। वह 'नरिष्टा' (नावलङ्घनीया) कहलाती थी अर्थात् कोई भी उसकी बात को टालने मे समर्थ नही था। ससद् को राजा के कार्यों की टीका करने का पूर्ण अधिकार था और इस आलोचना को सहन करने के कारण वह सभासद कहलाता था। ससद् की अनुकूलता उसके लिए आवश्यक थी। ससद् मे सभी वर्गों के प्रतिनिधि होते थे अत सभी को सन्तुष्ट रखना उसके लिए अनिवार्य था। अथर्ववेद (१५-९-१) मे कहा है कि राजा सदा जनता के अनुकूल कार्य करे (स विशोऽनुव्यचलत्) क्योंकि—

सभायाश्च वै समितेश्च सेनायाश्च प्रिय धाम भवति।
य एव वेद त सभा समितिश्च सेना चानुव्यचलन्॥
(अथर्व १५-९-३)

जो जनता के अनुकूल चलता है वह सभा, समिति और सेना का प्रिय होता है और उसी के अनुकूल मे चलती हैं।

आर्य राजनीति के पण्डितो की दार्शनिक व्युत्पत्ति के अनुसार शासक को राजा कहते ही इसलिए हैं कि उसका कर्तव्य अच्छे शासन द्वारा प्रजा का रजन करना अथवा उसे प्रसन्न करना होता है। "राजा वै प्रकृति रञ्जनाद्" समस्त सस्कृत साहित्य मे यही दार्शनिक व्युत्पत्ति एक निश्चित सिद्धान्त के रूप मे मान ली गई है। पृथ्वी के प्रथम शासक पृथु के सम्बन्ध मे महाभारत मे लिखा है—"रञ्जिताश्च प्रजास्सर्वास्तेन राजेति शब्दते।" इस व्याख्या का आधार वेद मे बडे स्पष्ट और मिलते-जुलते शब्दो मे मिलता है—"सोऽरज्यत ततो राजन्योऽजायत।" स्पष्ट है कि राजा बनने वाले को राजा बनने से पहले जनता को सेवा द्वारा सन्तुष्ट करके उसका विश्वास भाजन बनना आवश्यक है। बहुगुण सम्पन्न जनसेवक ही इस पद को पा सकता है।

राज्यारोहण के समय राजा कुछ प्रतिज्ञाये करता था और उन्ही प्रतिज्ञाओ के अनुसार वह शासन का सचालन करता था। वह शपथ लेता था कि यदि मैं प्रजा से द्रोह करू तो अपने जीवन, अपने पुण्यफल, अपनी सन्तान आदि सबसे वञ्चित किया जाऊँ। राज्याभिषेक के समय पुरोहित राजा से कहता था—"यह राज्य तुम्हे रक्षा, कृषि, समृद्धि और पुष्टि के लिए दिया जाता है। तुम इसके नियामक, सचालक और धारणकर्ता हो" (शतपथ ५-२-१)। यह कह कर वह राजा की पीठ पर डण्डे से हल्की सी चोट करता था—यह बताने के लिए कि राजा भी दण्ड से ऊपर नही है। इस सबसे स्पष्ट है कि राज्य राजा का नही, प्रजा का समझा जाता था और राजा शासन व्यवस्था को ठीक रखने वाला मुख्य कर्मचारी था। ससद् द्वारा निर्मित नियमो का पालन करने के लिए वह बाध्य था।

राजा का निर्वाचन जीवन भर के लिए होता था। जो एक बार राजा चुना गया वह सदा के लिए राजा हो गया। जब तक वह धैर्यपूर्वक राज्य की व्यवस्था और प्रजा का पालन पोषण तथा सरक्षण करता रहे तब तक दूसरे को राजा बनाने की आवश्यकता ही क्यो होगी ? राजा का निर्वाचन उसके विशिष्ट गुणो को देखकर किया जाता था और उसे कुछ कर्तव्य सौंप दिये जाते थे। इसलिए जब तक उसमे उन गुणो का अभाव न हो जाये या वह अपने कर्तव्यो का ठीक-ठीक पालन करना बन्द न कर दे तब तक उसे राजकार्य से मुक्त करके एक नये व्यक्ति को उसके स्थान पर बिठाना न हितकर हो सकता है और न न्याय-संगत माना जा सकता है। त्रिकाल मे प्रजा का "योगक्षेम" (योगक्षेमो न कल्पताम्) ही राजा का ध्येय होता था। यही किसी राज्य की शासन-व्यवस्था की कसौटी थी। राज्यारोहण के समय वह इसी का व्रत लेता था। जब तक वह इसमे समर्थ रहता तब तक राज्य का अधिकारी रहता। इस प्रकार राजा के राज्यकाल की अवधि कालाश्रित न होकर प्रजा के योगक्षेम पर अवलम्बित थी। अथर्ववेद के अनुसार राजा को प्रजा का प्रिय तथा काम्य

होकर अपने जीवन के दसवें दशक तक (वसमीमुप्र सुमता क्सेह ३-४-७) शासन करने का अधिकार था। यहाँ सौ वर्षों से जीवन पर्यन्त ही अभिप्रेत है। आयु भर के लिए चुने जाने पर भी वह मनमानी नही कर सकता था। जो राजा राज्याभिषेक के समय की गई प्रतिज्ञाओ को पूरा नहीं करता था वह असत्य प्रतिज्ञ कहलाता था। उसका प्रतिज्ञा भग करना अधर्मसंयुक्त था गैरकानूनी समझा जाता था। राजा की नियुक्ति राजा और प्रजा के पारस्परिक समझौते के फल स्वरूप की जाती थी। समझौते की शर्तों के तोडने पर उसे सिंहासन पर आरूढ रहने का कोई अधिकार न रहता था और उसे पदच्युत कर दिया जाता था। अथर्ववेद (१५-५१-९ मे कहा है कि अत्याचार करने वाले राजा को प्रजा अस्वीकार कर देती है— "नास्मै समिति कल्पते। राजा और प्रजा के बीच अनबन होने पर राजा को ही पद त्याग करना पडता था।

वैदिक युग के परवर्ती काल मे भी राजा का निर्वाचन सिद्धान्त स्थिर रहा। जन्मना कोई राजा नही बनता था। यदि विशिष्ट गुणो के कारण किसी को उत्तराधिकार दिया भी जाता तो राष्ट्रसभा की स्वीकृति के बिना ऐसा नही हो सकता था। न ही राजा को कभी स्वतन्त्र माना गया—"परतन्त्र सदा राजा।'

रामायण मे दो स्थानो पर 'राजकर्तार' (राजा के बनाने वाले) पद आया है जो अथर्ववेद के 'राजकृत्' के समान ही प्रयुक्त हुआ है। जब राजा दशरथ वृद्ध हो गये और राम को राज्यभार सौंपने की आवश्यकता हुई तो उन्होने परिषद् का आयोजन किया और राजपद के लिए राम का नाम प्रस्तुत करके कहा कि "यदि मेरा यह प्रस्ताव आपको उचित जान पडता हो तो स्वीकार करे। यदि यह अहितकर हो तो कोई दूसरा उपाय बताये," राजा के ऐसा कहने पर परिषद् मे उपस्थित लोगो ने आपस मे परामर्श करके एकमत होकर कहा कि "हे राजन्! राम मे बहुत से कल्याणकारी गुण हैं। इसलिए उसी को राज्यकार्य सौंपा जाना चाहिए।" स्पष्ट है कि दशरथ के बाद राम की नियुक्ति इसलिए नही हुई कि वह राजा का पुत्र था। यदि ऐसा हो सकता तो दशरथ को परिषद् बुलाने की आवश्यकता न होती। राजा ने वहाँ भी अपनी ओर से एक प्रस्ताव मात्र रक्खा था। उसे स्वीकार करने का परिषद् को अधिकार था। अस्वीकार करने की दशा मे उसे किसी भी उपाय का अवलम्बन करने की स्वतन्त्रता थी। वाल्मीकि रामायण के इस समूचे प्रसग को देखने से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि यह सब कार्यवाही केवल रस्म पूरी करने के लिए की गई हो ऐसी बात भी नही थी। प्रस्ताव के सामने आते ही परिषद् ने राजा की हां मे हां नही मिला दी। उन्होने एक स्थान पर एकत्र होकर गम्भीरता से उस पर विचार किया और आपस में एकमत होकर अपने निर्णय से राजा को सूचित किया। उनके इस निर्णय का आधार भी राम के 'कल्याणकर गुण' थे न कि उसका राजपुत्र होना।

राम के वन चले जाने और दशरथ की मृत्यु हो जाने पर पुन राजा के निर्वाचन की आवश्यकता हुई। राजकर्ता सभा मे पहुँचे और महर्षि वशिष्ठ को अध्यक्ष की भाँति सम्बोधन करके बोले कि "बिना राजा के राष्ट्र का नाश हो जायेगा। इसलिए आप इक्ष्वाकु वश के किसी कुमार अथवा किसी दूसरे मनुष्य को राजा बना दे।" वशिष्ठ जी ने भरत का नाम प्रस्तुत किया और राजकर्ताओ ने इसे एकमत से स्वीकार किया। वशिष्ठ के अध्यक्ष की भाँति सम्बोधित किये जाने से जान पडता है कि उस समय अध्यक्ष का स्थान खाली था। इससे सिद्ध होता है कि राजा ही राष्ट्रसभा का अध्यक्ष होता था। वशिष्ठ उस समय के सबसे बडे महापुरुष थे। तत्कालीन असाधारण परिस्थिति मे शोक से विह्वल होने के कारण किंकर्तव्य विमूढ प्रजा के प्रतिनिधियो का तत्त्वदर्शी एव स्थितप्रज्ञ वशिष्ठ के पास पथ प्रदर्शन के निमित्त आना और राजा के निर्वाचन के विषय मे परामर्श करना स्वाभाविक था। यह सब होने पर भी वास्तविक शक्ति जनता मे ही निहित थी। अन्तिम निर्णय करने का अधिकार राजकर्ताओ को ही प्राप्त था। इसलिए वशिष्ठ के प्रस्ताव को भी नियमित रूप देने के लिए उनकी स्वीकृति की मुहर लगना आवश्यक था। वैसा ही हुआ भी। वशिष्ठ को यद्यपि किसी भी व्यक्ति को राजा बनाने का अधिकार दिया गया था फिर भी उन्होंने

इक्ष्वाकु वश के कुमार भरत को ही इस पद के उपयुक्त समझा। भरत से परिचित सभी जानते हैं कि उनका चुनाव कितना ठीक था।

महाभारत की जिन आख्यायिकाओ का हम राज्योत्पत्ति के प्रकरण मे उल्लेख पाते हैं उनमे भी प्रजा के द्वारा ही राजा की नियुक्ति की बात कही गई है। यह निर्विवाद है कि पृथु और वैवस्वत मनु को प्रजा ने ही राजा बनाया था। जिस कुरु राजा के नाम से आज भी कुरुक्षेत्र विख्यात और जो कुरुवश के पूर्व पुरुष थे उन्हे प्रजा ने ही राजा बनाया था। देवापि का पिता उसे राज्य देना चाहता था परन्तु प्रजा ने उसके हीनाग होने के कारण उसे स्वीकार नही किया और प्रजा की इच्छानुसार शान्तनु को राजा नियुक्त करना पडा। इसी प्रकार पुरु के भी प्रजा द्वारा निर्वाचित किये जाने का उल्लेख पाया जाता है।

कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र मे राज्योत्पत्ति के प्रकरण मे लिखा है कि मत्स्यन्याय से पीडित प्रजा ने ही राजा को बनाया। तब से यही परम्परा चलती रही।

राजा के निर्वाचित राज्याधिकारी होने का विचार रामायण महाभारत आदि तक ही सीमित नही। मध्यकालीन इतिहास मे भी इसके अनेक उदाहरण मिलते है। मलयालम भाषा के केरलोत्पत्ति नामक ग्रन्थ मे केरल के राजा केमपरुमाल के निर्वाचित किये जाने का विस्तृत वर्णन है। यह घटना २१६ ईसवी के लगभग की है। केमपरुमाल के बाद क भी सभी राजा प्रजा द्वारा निर्वाचित हुए। रुद्रदमन के एक शिलालेख मे उसक प्रजा के समस्त वर्गों द्वारा निर्वाचित होकर पश्चिम भारत के सिंहासन पर आरूढ होने का उल्लेख मिलता है।

कालान्तर मे राजा के अशत वशानुक्रमिक हो जाने पर भी कभी यह मूल तत्त्व विस्मृत नही किया गया कि राजपद निर्वाचन मूलक है। मेगेस्थनीज ने लिखा है कि जब कभी किसी राजवश मे कोई योग्य पुरुष नही रह जाता था तब भारतवासी व्यक्ति की योग्यता के आधार पर राजा का निर्वाचन किया करते थे। सन् ६०६ मे जब राज्यवर्धन मारा गया तो प्रधान मन्त्री ने परिषद् बुलाकर हर्षवर्धन को राजा चुनने के लिए कहा। बगाल के पालराजाओ की स्थापना भी निर्वाचन क आधार पर ही हुई थी। पालव वश की नीव रखने वाले गोपाल ने अपने शिलालेख मे कहा है कि मुझे निर्वाचन के सिद्धान्त के अनुसार अभिषिक्त होने का सौभाग्य प्राप्त है।

जातको मे भी राजाओ के निर्वाचन की कथाये मिलती हैं। उनमे तो यहा तक लिखा है कि पशु जगत् मे भी राजा का निर्वाचन हुआ करता था।

आधुनिक युग मे महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश मे राजधर्म का सविस्तार उल्लेख किया है। राजा के सम्बन्ध मे वह लिखते है—'जो इ। सब (राजसभासदो) मे सर्वोतम गुण कर्म स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राजसभा का पति मानो। हे प्रजाजनो ! तुम सम्मति करक सर्वत्र पक्षपात रहित, पूर्ण विद्या विनय युक्त सबके मित्र सभापति राजा को सर्वाधीश मानो।" इन पक्तियो मे महर्षि ने राजा के अप्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रतिपादन किया है। राजा की स्वेच्छाचारिता को रोकने के लिए ऋषि लिखते है—"राजा अपने मन से एक भी कार्य न करे जब तक सभासदो की अनुमति न हो सभापति राजा को उचित है कि सभासदो का पृथक्-पृथक् अपना विचार और अभिप्राय सुन कर बहुपक्षानुसार कार्य करे। प्रजा की साधारण सम्मति के विरुद्ध राजा कभी न चले। न्यून से न्यून दश विद्वानो अथवा बहुत न्यून हो तो तीन विद्वानो की सभा जैसी व्यवस्था करे उस धर्म अर्थात् व्यवस्था का उल्लघन कोई न करे'। यजुर्वेद भाष्य मे प्रजातन्त्र के सम्बन्ध मे अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होने लिखा—"प्रजा को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनके देश का शासन किसी सभा के अधीन हो न कि किसी एक व्यक्ति के।" ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका मे एकतन्त्र की आलोचना करते हुए महर्षि लिखते है—"राज्य क लिए एक को राजा कभी न मानना चाहिए। क्योकि जहा एक को राजा मानते हैं वहा सब प्रजा दुखी होती है।" तानाशाही से होने वाली हानियो की चर्चा करते हुए स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश मे लिखा—"अकेला राजा

चित्र और चरित्र

श्री पूर्णचन्द ऐडवोकेट

मनुष्यो के पथ-प्रदशन के लिए विद्वानो और आप्त पुरुषो के चरित्र पर चिन्तन करना बडा उपयोगी और लाभदायक है ।

माता पिता, गुरु और आचाय को अभिवादन करना और उनकी आज्ञा को पालन करना बालको और शिष्यो के लिए अनिवार्य बताया गया है । इससे अभिवादन करने वालो को आयु, बल और यश प्राप्त होता है । 'शतपथब्राह्मण' मे—'मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद' । इससे स्पष्ट है कि माता पिता और आचार्य की सेवा, पूजा और सत्कार बालको और शिष्यो के धर्म है । महर्षि दयानन्द ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'आर्य उद्देश्य रत्नमाला' मे रत्न सख्या ६४ मे इसी प्रकार लिखा है और जिसमे पचायतनपूजा की व्याख्या की है–'जीते माता, पिता, आचार्य, अतिथि और परमेश्वर का जो यथायोग्य सत्कार करके प्रसन्न करना है, उस को पचायतन पूजा कहते है ।' और रत्न सख्या ६५ मे पूजा की व्याख्या निम्न प्रकार की है–

जो ज्ञानादि गुणवाले का यथायोग्य सत्कार करना है, उसको पूजा कहते है ।

और रत्न सख्या ६६ मे अपूजा की व्याख्या निम्न प्रकार की है–

जो ज्ञानादि रहित जड पदार्थ और जो सत्कार के

स्वाधीन वा उन्मत्त होकर प्रजा का नाशक होता है । इसलिए किसी एक को स्वाधीन न करना चाहिए।' आदर्श प्रजातन्त्र का उल्लेख महर्षि ने इन शब्दो मे किया है—"राजाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन तथा प्रजा राजसभा के अधीन रहे ।' सर्वहितकारी नियम मे सभी एक दूसरे के अधीन रहे । न स्वेच्छाचारिता को प्रोत्साहन मिले और न अराजकता बढे ।

वेद, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, शुक्रनीति आदि सभी ग्रन्थो मे राजा के गुणो का प्राय एक जैसा परन्तु काव्यमय भाषा मे अत्यन्त चमत्कार पूर्ण वर्णन मिलता है । सक्षेप मे राजा इन्द्र के समान शीघ्र ऐश्वर्यकर्ता, वायु के समान सबके प्राणवत् प्रिय और हृदय की बात जानने वाला, यम के समान पक्षपात रहित न्यायाधीश की न्याई बतने वाला सूर्य के समान विद्या का प्रकाश करने और अविद्यान्धकार को दूर करने वाला, अग्नि के समान दुष्टो को भस्म करने वाला, वरुण के समान धूर्तों को बन्धन मे डालने वाला तथा चन्द्रमा के समान सबको प्रिय लगने वाला होना चाहिए ।

मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करने मे उसके पूर्व जन्म के सस्कार, पैतृक सस्कार, वातावरण तथा परिस्थितियाँ और निजी परिश्रम सभी का हाथ होता है । एक राजकुमार को राज्य कार्य के योग्य बनाने के लिए जैसा अनुकूल वातावरण स्वत प्राप्त होता है वैसा किसी अन्य के लिए सम्भव नही । इसी कारण व्यवहार मे प्राय राजा के बाद उसका पुत्र ही राजा बन जाया करता है । सिद्धान्तत राजपद पर नियुक्ति का आधार योग्यता ही है वशानुक्रम नही ।

—,०,—

योग्य नहीहैं उसका जो सत्कार करना है, वह अपूजा कहलाती है।"

सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ११ वें शताब्दी सस्करण के पृष्ठ सख्या ४५० पर इसी भाव को इस प्रकार प्रकट किया गया है–

प्रश्न—किसी प्रकार की मूर्तिपूजा करनी करानी नहीं और जो अपने आर्यावर्त मे पचदेवपूजा शब्द प्राचीन परम्परा से चला आता है उसका यही पचायतनपूजा जो कि शिव, विष्णु, अम्बिका, गणेश और सूर्य की मूर्त्ति बनाकर पूजते है वह पचायतनपूजा है वा नहीं ? (उत्तर) किसी प्रकार की मूर्ति पूजा न करना किन्तु 'मूर्तिमान्' जो नीचे कहेगे उनकी पूजा अर्थात् सत्कार करना चाहिए। वह पचदेव पूजा, पचायतनपूजा शब्द बहुत अच्छे अर्थ वाला है परन्तु विद्याहीन मूढो ने उसके उत्तम अर्थ को छोडकर निकृष्ट अर्थ पकड लिया। जो आजकल शिवादि पाँचों की मूर्तियाँ बनाकर पूजते हैं उनका खण्डन तो अभी कर चुके है। यह जो सच्ची वेदोक्त और वेदानुकूलोक्त देवपूजा और मूर्तिपूजा है, सुनो–

मा नो वधीः पितर मोत मातरम् ॥ १ ॥
(य० १६। म० १५)

आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते ॥ २ ॥
अथर्व० ॥ (का० ११। व० ५। म० १७)

अतिथिर्गृहानागच्छेत ॥ ३ अथर्व ॥
(का० १५। व० ११। मं२ ६)

अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत ॥ ४ ॥ ऋग्वेद ॥

त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्ष ब्रह्म वदिष्यामि ॥ तैत्तिरीयोपनि० ॥ ५ ॥ (वल्ली० १ अनु० १)

कतम् एको देव इति स ब्रह्म त्यदित्याचक्षते ॥ ६ ॥ शतपथ०। कां० १४ प्रपाठ० ६। ब्राह्म ७। कण्डिका १० ॥

मातृदेवो भव पितृदेवो भव आचार्यदेवो भव अतिथिदेवो भव ॥ ७ ॥ तैत्तिरीयो० ॥ (व०। अनु० ११)

पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा।
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभि ॥ ८ ॥
मनु० अ० ३। ५५ ॥ पूज्यो देववत्पतिः ॥ ९ ॥
मनुस्मृती ॥

प्रथम माता मूर्तिमती पूजनीय देवता, अर्थात् सन्तानों को तन-मन-धन से सेवा करके माता को प्रसन्न रखना हिंसा अर्थात् ताडना कभी न करना दूसरा पिता सत्कर्त्तव्य देव उसकी भी माता के समान सेवा करनी ॥ १ ॥ तीसरा आचार्य जो विद्या देने वाला है उसकी तन मन धन से सेवा करनी ॥ २ ॥ चौथा अतिथि जो विद्वान् धार्मिक निष्कपटी सब की उन्नति चाहने वाला जगत् में भ्रमण करता हुआ, सत्य उपदेश से सब को सुखी करता है उसकी सेवा करें ॥ ३ ॥ पाँचवाँ स्त्री के लिए पति और पुरुष के लिए पत्नी पूजनीय है ॥ ४ ॥ ये पाँच मूर्तिमान् देव जिनके सग से मनुष्यदेह की उत्पत्ति, पालन, सत्यशिक्षा, विद्या और सत्योपदेश की प्रतीति होती है ये ही परमेश्वर की प्राप्ति होने की सीढ़ियाँ हैं। इनकी सेवा न करके पाषाणादि मूर्ति पूजते है वे अतीव पामर नरकगामी हैं।"

इसी प्रसग में सत्यार्थ प्रकाश मे मतव्य और अमन्तव्य में मन्तव्य सख्या २१ उल्लेखनीय और विचारणीय है।

२१—उन्ही विद्वानो, माता, पिता, आचार्य, अतिथि न्यायकारी राजा और धर्मात्मा जन, पतिव्रता स्त्री और स्त्रीव्रत पति का सत्कार करना 'देवपूजा' कहाती है, इससे विपरीत अदेव पूजा, इनकी मूर्तियो को पूज्य और इतर पाषाणादि जड मूर्तियों को सर्वथा अपूज्य समझता हू

इस मन्तव्य में यह शब्द कि उनकी मूर्तियों को पूजनीय मानता हूँ विशेष रूप से विचारणीय है। इस स्थल पर निम्न लिखित विचार सम्मुख रखने आवश्यक प्रतीत होते हैं—

१—ईश्वर निराकार है, उसकी मूर्ति न बन सकती है न किसी प्रकार की साकार मूर्ति से निराकार ईश्वर की पूजा हो सकती और न ईश्वर के सम्बन्ध मे किसी प्रकार की मूर्ति ध्यान में सहायक हो सकती है और इसी उद्देश्य से महर्षि ने मूर्तिपूजा को ईश्वर के सम्बन्ध

में ध्यान करते समय सीढ़ी नहीं खाई बताया है। यह भी विचारणीय है कि 'जीव और ईश्वर में देश और काल की दूरी नही है केवल ध्यान की दूरी हो जाती है। और इसका कारण यह है शरीर धारी जीव मन और इन्द्रियो द्वारा ससार के बाहर के पदार्थों से जुड़ा रहता है और जब उसका ध्यान उन आकर्षक पदार्थों मे लगा रहता है और उन पदार्थों के रूपरसादि गुण उसके सम्मुख रहते हैं तो वह ईश्वर को भूल सा जाता है और इसके लिए यह आवश्यक है कि वह ध्यान करते समय बाहर के सब पदार्थो को भूलने का अभ्यास करें। और इस प्रकार के अभ्यास का नाम ही योगाभ्यास है।

एक विचार और भी इस प्रसग मे सम्मुख आता है। चित्र या चिह्न द्वारा याद करने की विधि इस बात की द्योतक है कि जिसकी याद करनी है वह अनुपस्थित है। चाहे देश की दृष्टि से हो चाहे काल की दृष्टि से हो। उपासना का अर्थ समीप होना और मानना है। दूर होने का विचार आना ही उपासना के विचार मे बाधक है इसलिए ईश्वर के ध्यान करने मे या उसकी पूजा करने में न कोई मूर्ति हो सकती है और न किसी प्रकार की मूर्ति भी लाभदायक हो सकती है।

साकार की मूर्ति का प्रयोग

जो साकार है और जिनकी मूर्ति या चित्र बन सकता है प्रश्न यह उठता है कि उस चित्र या मूर्ति का क्या प्रयोग है। यदि जो पूजनीय है उसके चरित्र से चरित्र निर्माण मे पथ-प्रदर्शन हो सकता है और इस प्रकार के पथ-प्रदर्शन से लाभ भी अवश्य हो सकता है। ससार मे और भारतवर्ष मे भी चित्र की उपयोगिता कई प्रकार से मानी जाती है। महर्षि दयानन्द स्वामी श्रद्धानन्द, प० लेखराम आर्य के चित्र आर्यसमाज मन्दिरो मे लगे हुए हैं। अभी लोक सभा में महर्षि दयानन्द के चित्र को विधान भवन में लगाने की स्वीकृति प्राप्त की गई इसी प्रकार दिल्ली के चादनी चौक में उस स्थान पर जहाँ स्वामी जी ने गोरों की सगीन का निर्भीकता से सामना किया था, उनकी मूर्ति लगवाये जाने या बनवाये जाने का प्रयास हो रहा है। यह मानते हुए भी कि इन चित्रो और मूर्तियों का प्रयोग केवल चरित्र चिन्तन मे सहायक होने के और कुछ नही है फिर भी उनका प्रयोग होना आवश्यक ही है। सत्यार्थ प्रकाश के शताब्दी सस्करण के पृष्ठ ४५२ पर मूर्तिपूजा पर विचार करते हुए एक प्रश्न और उसका उत्तर आया है जो निम्न प्रकार है —

प्रश्न—जैसे स्त्री आदि की पाषाणादि मूर्ति देखने से कामोत्पत्ति होती है वैसे वीतराग शान्त की मूर्ति देखने से वैराग्य और शान्ति की प्राप्ति क्यों नही होगी ? उत्तर—नही हो सकती, क्योकि वह मूर्ति के जडत्व धर्म आत्मा में आने से विचारशक्ति घट जाती है। विवेक के बिना न वैराग्य और वैराग्य के बिना विज्ञान, विज्ञान के बिना शान्ति नही होती।

इस उत्तर से जहाँ तक मैं समझा हूँ इसका अभिप्राय यह है कि ईश्वर के सम्बन्ध मे हर प्रकार की मूर्ति का प्रबल विरोध है। यदि इस उत्तर के शब्दो को सब चित्रों और सब प्रसगो में लगाया जाय तो सब प्रकार के चित्रो का निषेध एक प्रकार से हो जाता है और चित्रों का लगाना निष्प्रयोजन हो जाता है। मै यह आवश्यक समझता हूँ कि इस प्रसग को स्पष्ट करने के लिए आर्यसमाज मे निम्नलिखित प्रश्नो पर विचार हो —

१—मन्तव्य और अमन्तव्य सख्या २१ मे इन शब्दों से क्या अभिप्राय है। मै उनकी मूर्तियो को पूज्य मानता हूँ में मूर्ति शब्द का क्या अभिप्राय है ?

२—पृष्ठ सख्या ४५२ पर जो उत्तर है उसका वास्तविक अभिप्राय क्या है ?

३—इस उत्तर को लक्ष्य मे रखकर जो साकार और सत्कार के योग्य है उनके चित्र या मूर्ति का प्रयोग किस प्रकार किया जाना चाहिए।

४—यदि सत्कार योग्य व्यक्तियो के चित्र का प्रयोग हो तो सत्कार प्रयोजन के लिए कोई विशेष विधि आवश्यक है या केवल यह ही पर्याप्त है उसको देखकर उनके चरित्र का ध्यान कर लेना।

———

आर्यसमाज का भविष्य

ले०—श्री प० धर्मदेवजी वेदवाचस्पति गुरुकुल कांगड़ी

आर्य समाज की स्थापना हुए आज ८६ वर्ष पूर्ण होते हैं। अब तक आर्यसमाज के कार्य एव भविष्य केविषयमे हम इतने चिंतित न थे, जितना कि आज देश के विभाजन तथा असाम्प्रदायिक राष्ट्र की घोषणा ने आर्यसमाज की स्थिति को कुछ विचारणीय प्रश्न के रूप मे ला खडा किया है। आज आर्यसमाज अपने तीसरे युग मे प्रवेश कर रहा है। अपने अरुणोदय काल मे डा० एनड्रूज जेक्सन डेविड क शब्दो मे आर्य समाज एक आज्वल्यमान प्रेम व ज्ञान के अग्निपु ज के रूप मे ससार की सपूर्ण अपवित्रनाओ तथा दुर्बलताओ को भस्म कर देने वाली सस्था थी। इसी कारण श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा उनके सम्पर्क मे आये हुए सज्जनो के काल मे आयसमाज का आन्दोलन आँधी की तरह सर्वत्र फैल गया और देश मे एक धार्मिक व सामाजिक क्रांति लाने मे सफल हुआ।

परन्तु आर्यसमाज का दूसरा युग ससार के अन्य सभी आन्दोलनो को भाँति पहले जैसा क्रांतिकारी न रहकर कुछ कुछ साम्प्रदायिक बन गया। इस काल मे शरीर का विस्तार अधिक तथा आत्मा का प्रश्न कुछ मन्द पड गया। जहाँ पश्चिमी सभ्यता के तीव्र वेग ने उसकी विचारधारा को कुछ कुण्ठित किया वहाँ विदेशी शक्ति समय समय पर प्रच्छन्न-भाव से उसकी गति मे प्रतिबन्ध खडी करती रही जिससे आन्दोलन अभिमत दिशा की ओर अग्रसर होने का उचित मार्ग न पाकर सामान्य क्रियाकलाप तथा कुछ अ श तक सामाजिक सुधार ही कर सका।

स्वराज्य प्राप्ति के बाद आज आर्यसमाज तीसरे युग मे प्रवेश कर रहा हैं। आज की नई परिस्थितियो मे नये वातावरण मे उसे फिर से अपना मार्ग निर्धारित करना होगा। केवल पूर्व पुरुषो के नाम का ढिंढोरा पीटने से वह कायम नही रह सकता। यदि हमने अपनी गति का उचित मार्ग नही खोज निकाला तो हम पिछली ख्याति को भी गवा बैठेगे और आर्यसमाज का भविष्य भी खतरे मे पड जायगा। वस्तुत यह समय आर्यसमाज की कठोर तपस्या, कार्यशीलता तथा परीक्षा का है। यदि हमने ऋषि की भावना को, उनके बताये धर्म के तत्व को हृदयगम कर लिया है, यदि उसने हमारे हृदय की तन्त्री को झकृत कर दिया तो बीहड विपत्तियो व बाधाओ के बीच मे से भी आर्यसमाज अपना मार्ग निकाल लेगा। आज हमारे मार्ग मे विदेशी शक्ति का प्रतिबन्ध नही रहा। परन्तु स्वतन्त्र होने के बाद हमारा सघर्ष सीधा पश्चिमी शक्तियो के साथ होगा और वह सघर्ष राजनैतिक रूप प्राप्त करने से पूर्व सांस्कृतिक होगा। आज अधिकांश शिक्षित जनता पश्चिमी आदर्शवाद मे विश्वास करती है और उसी परिभाषा व सूत्रो मे देश की उन्नति करना सोचती हैं। वर्तमान राष्ट्रीय सरकार के सचालको के हृदय मे भी यह बात कार्य करती हुई दीख रही है। अतएव वह महात्मा गाँधी के नाम की दुहाई देते हुए भी उनके निर्दिष्ट रामराज्य को स्थापित करने मे तत्पर नही दिखाई देते। इसलिये मैं सरकार द्वारा भारत को असाम्प्रदायिक राष्ट्र बनाने की घोषणा को, आर्यसमाज या अन्य किमी भारतीय संस्कृति प्रेमी सस्था के लिए इतना बाधकनही समझता, जितना पश्चिमी सभ्यता की प्रबलधारा को। यह सरकार हम पर ऊपर से नही लादी गई। प्रजातत्र मे प्रजा की आवाज अवश्य बुलन्द होकर रहेगी। यदि जनता वस्तुत पश्चिमी जगत् के अन्धानुसरण को पसन्द नहीं करती वह हृदय से भारतवर्ष मे प्राचीन

संस्कृति का जीवन लाना चाहती है तो उसे कोई सरकार रोक नही सकती। राष्ट्र की इच्छा सरकार मे अवश्य प्रतिबिम्बित होकर ही रहेगी। परन्तु यदि हमारे देश की जनता ही उसी पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव मे बह गई तो फिर किसी भी सरकार से आर्यसमाज को अपने उद्देश्य मे सहायक होने की आशा नही करनी चाहिये। धर्म के विकृत रूप ने, चर्चवाद ने, पश्चिमी जगत् मे धर्म के प्रति अनास्था उत्पन्न करके विज्ञान की सहायता से भौतिक वाद को जन्म दिया है। भौतिक भोग की लालसा आज प्रत्येक नर नारी के हृदय मे जागरूक हो उठी हैं। आज मानव समाज का मस्तिष्क भी भोग का क्रीडास्थल तथा नरसहार करने वाला शुक्राचार्य बन गया है। निरीह तथा शान्त मनस्वी का आज समाज मे समादर नही। यह पश्चिमी सभ्यता सभी देशो मे पाव पसारती जा रही है। यह कुटिल हृदय मायावी दानव प्राणिमात्र को अपने शिकजे मे कस रहा है। इसका उपाय निवृत्तिमार्ग या अद्वैत-वाद का उपदेश देने से नही हो सकता। मनुष्य के भौतिक शरीर को भोग का अवकाश न देकर उसे सर्वथा पृथक् रखने का दैनिक सघर्ष परिणाम मे निष्फल सिद्ध होगा। उसका एकमात्र उपाय है प्राचीन भारतीय सभ्यता। जिस मे पूर्ण स्वतत्रता प्रत्येक नर नारी का अधिकार माना है, परन्तु कर्तव्य का अहकार छोड कर ब्रह्मार्पण भाव से पवित्र कर्म करना उसका कर्त्तव्य है। शरीर मन बुद्धि का विकास करते हुए सासारिक अभ्युदय प्राप्त करना उस का अधिकार है, परन्तु सेवावृत्ति परायण बनकर त्यागमय तप पूत जीवन व्यतीत करना उसका कर्त्तव्य है। इस प्रकार अधिकार व कर्त्तव्य सामञ्जस्य जीवन का निर्माण करना ही प्राचीन आर्य- सभ्यता है। यही सभ्यता वस्तुत पश्चिमी सभ्यता क शिकजे से हमे मुक्त करा सकती है। इसी सभ्यता के पुनरुद्धार के लिये ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। अतएव यदि इस कार्य में आर्य समाज सफल हो जाता है तो उसका भविष्य सदा उज्ज्वल है। अन्यथा स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ पश्चिमी सभ्यता की जो लहर अत्यन्त तीव्रता के साथ हमारे देश मे प्रवेश कर रही है वही आर्यसमाज के अस्तित्व को नष्ट करने वाली होगी, न कि वर्तमान सरकार की असाम्प्रदायिक राष्ट्र की घोषणा।

इसलिये आर्यसमाज को चाहिये कि वह सरकार का विरोध करने या अन्य सम्प्रदायो की भाति पृथक् सत्ता ब ाने के प्रलोभन मे न पडकर विद्या के साथ-साथ चरित्र के तथा सभ्यता के साथ साथ सस्कृति के महत्व को समझे और उसी के अनुसार अपने कार्य की दिशा निर्धारित करे। यदि सरकार का अधिकाश ध्यान देश मे विद्या तथा सभ्यता के विस्तार करने मे अर्थात् जनता को साक्षर बनाने तथा धन धान्य से सम्पन्न व सुखी बनाने मे है, तो आर्यसमा ा आदि भारतीयता प्रेमी सस्थाए चरित्र निर्माण तथा सस्कृति के विकास मे कार्य करके देश की महान् सेवा कर सकती है। इस तरह राजा व प्रजा जनता व सरकार एक दूसरे के कार्य के पूरक व सहयोगी हो सकते है। आर्यसमाज को अपने राष्ट्र को बनाने का प्रयत्न करते हुए राजा अश्वपति का ि म्न वचन सदा सम्मुख रखना चाहिए।

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यप नानाहिताग्नि नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुत ॥

यदि हम सच्चे अर्थ मे धार्मिक व नैतिक पुरुष बन जाएँ तथा इस समय हिन्दू जाति मे अपनी प्राचीन सभ्यता को मूर्तरूप देने की जो तीव्र लालसा जाग उठी है उस का लाभ उठाकर विविध सस्थाओ के साथ सहयोग करके राष्ट्र के चरित्र निर्माण मे लग जाये तभी हम भारतीय समाज को ऋषि के बनाए मार्ग पर ला सकते हैं, तभी पश्चिमी सभ्यता के प्रवाह को रोक सकते हैं और तभी आर्यसमाज का भविष्य उज्ज्वल हो सकता है। अन्यथा इस पश्चिमी सभ्यता के प्रवाह मे सभी कुछ बह जायगा, केवल आर्यसमाज ही क्या?

हम लेखक के विचारो से सर्वांशत सहमत नहीं हैं।

—'सम्पादक'

श्रद्धा और सत्यता को अपनाओ

(श्री प्यारेलाल जी आर्य हापुड़)

गीता मे कितनी जगह योगेश्वर कृष्ण ने श्रद्धा की चर्चा की है और लिखा है कि सब की श्रद्धा अपने स्वभाव का अनुसरण करती है। मनुष्य मे कुछ न कुछ तो श्रद्धा अवश्य ही होती है। जैसी जिसकी श्रद्धा होती है, वैसा ही वह व्यक्ति होता है। बिना श्रद्धा के जो कार्य होता है वह असत्य कहलाता है। वह न तो यहाँ के काम का होता है और नाही परलोक के काम का होता है। इस वास्ते यदि आर्यो मे श्रद्धा होगी तो उनको उपनियम सख्या ४ के अनुसार अपनी आय का शतांश चन्दा देने मे कुछ भी कष्ट नही होगा। क्योकि आर्य सभासद् बनने के वास्ते उनकी यह कसौटी अवश्य होनी चाहिए कि वह नम्रता पूर्वक सच्चाई और श्रद्धा के साथ अपनी आय का शतांश मासिक चन्दा देते हैं या नही। आर्यसमाज मे हर वर्ष आर्य सभासदो का चुनाव होता है। उसमे आर्य सभासद बनाते समय इस बात का ध्यान तो किया जाता है कि उस सभासद की हाजरी २५ फीसदी हुई है या नही। परन्तु इस बात का ध्यान नही रखा जाता कि उस सभासद ने अपनी आय का शताश चन्दा सच्चाई या नम्रता पूर्वक दिया है या नही। यदि सभासद की भावनाय इतना त्याग, सच्चाई और श्रद्धा नही है तो उसको आय सभासद न बनाकर केवल आर्य समाज का सहायक सभासद ही रखा जाय। उन लोभी और कँजूसो को आर्य सभासद कभी न बनाया जाय, जब तक वह उपनियम सख्या ४ का सच्चाई तथा त्याग से पालन न करे यदि इस नियम का कड़ाई से समाजो मे पालन कराया जाय तो समाज के आपस के झगड़े सब ही समाप्त हो जायेगे क्योकि आर्यसमाज पर आज अनार्य तत्त्व छा गये है। वह सब सहायको मे आ जायेंगे और सच्चे आर्यों के हाथ मे ही आर्यसमाज की भावी बागडोर आ जायगी। जो व्यक्ति प्रलोभन-वश मासिक अपनी आय का शताश चन्दा प्रदान करने मे सकोच करेंगे वह आर्य सिद्धान्तो के विपरीत होकर इस नियम का पालन नही करेंगे। जो अपनी आय का सौवाँ भाग भी दान नही कर सकते उनके अन्दर आर्यत्व की भावना का अभाव है। यदि भगवान् हमको १००) रु० महीना देता है तो क्या हम उस की वाणी के प्रचार मे १) महीना भी खर्च नही कर सकते ? बहुत से भाई कह देते हैं कि हम हिसाब नही रख सकते। वह गलत कहते हैं। क्योकि सबको अपनी आय का मासिक नही तो वार्षिक आय का ज्ञान अवश्य रहता है।

कुछ भाई कह दिया करते है कि हम तो शताश से भी अधिक दान कर देते है। उनको नियम सख्या ४ देखना चाहिए उसमे साफ लिखा है कि शताश अपनी आय का मासिक चन्दा होता है। इसके अतिरिक्त दान आर्य सस्थाओ को चाहे वे आर्यसमाज के अन्तर्गत हो या ना हो धन या दान देना शताश मे शामिल न होगा। सार्वदेशिक सभा की अन्तरङ्ग सभा ता० २९-१-६१ मे भी यही निश्चय हुआ है कि उपनियम सख्या ४ का पालन कड़ाई से किया जाय। उनकी भावना यही है कि सभी आर्य सभासद बनने वाले व्यक्ति अपनी आय का शताश श्रद्धा पूर्वक मासिक चन्दा दे। उत्तरप्रदेश के भूतपूर्व प्रधान प० हरिशकर जी शर्मा ने सन् १९५९ मे ७३वें वार्षिक वृत्तान्त मे अपने नम्र निवेदन मे लिखा है कि सभा की सेवा करते समय मैने अनुभव किया है कि हमारे अधिक भाई सत्ता और सपत्ति के लिए सँघर्ष द्वारा आर्यसमाज की शक्तियो को क्षीण करने मे ही व्यस्त रहते हैं। मेरी अपनी राय है कि यह अधिकाश भाई वे ही कजूस और लोभी हो सकते हैं जो अपनी आय का मासिक शताश चन्दा नही देते हैं। केवल १३ उपस्थिति पूरी कर लेने से कोई भी भाई आर्य नही बन सकता जब तक कि वह त्यागी, तपस्वी, सच्चा और श्रद्धालु न हो"। आर्य श्रेष्ठ को कहते हैं। श्रेष्ठ वह ही हो सकता है जिसमे उपरोक्त गुण हो। मैं पहले १) रु० मासिक चन्दा देता था जब मैंने यह नियम देखा

साहित्य-समीक्षा व प्राप्ति स्वीकार

विश्वज्योति मासिक पत्रिका का मालवीय अंक जनवरी १९६२

वार्षिक चन्दा (भारत मे) ८)

" " (विदेश) १६ शिलिंग

विशेषाक का मूल्य १)

विश्वेश्वरानन्द वैदिक सस्थान साधु आश्रम, होशियारपुर।

इस अक मे स्वनाम धन्य स्व० श्री प० मदन मोहन मालवीय जी के जीवन और कार्यों से सम्बद्ध प्रचुर उपयुक्त सामग्री उपलब्ध होती है।

'सुधारक मालवीय जी' शीर्षक लेख मे श्री अम्बिका प्रसाद जी वाजपेयी ने मालवीय जी और आय समाज के सम्बन्ध मे ठीक ही लिखा है—

"मालवीय जी आर्य समाजी नही थे पर आर्यसमाज के निन्दक भी नही थे। आय समाजियो मे भी उनका वैसा ही मान था जैसा अन्य लोगो मे।"

श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालकार जी का 'महामना मदन मोहन मालवीय' शीर्षक लेख अत्युत्तम है। वह एक स्थल पर लिखते है—

"महामना मालवीय जी का हृदय और उनकी बुद्धि जब कभी एक हुए तो भारतीय इतिहास मे एक नया युग आया किन्तु जब इनमे सघर्ष हुआ तब मालवीय जी के हाथ से प्रगति-घडी की सुई आगे नही, पीछे ही मोडी गई। काल के साथ चलना चाह कर भी वह उसके साथ कदम से कदम बढा कर भी न चल सके।"

इस बात के स्पष्टीकरण के लिए कई उदाहरण भी दिए गए है।

श्री आचार्य नरदेव जी ने मालवीय जी के साथ अपने सम्पर्क के सुखद सस्मरण देकर एक विशिष्ट बात का अपने लेख मे उल्लेख किया है जो इस प्रकार है—

"वी० वी० सी० विलायत की रेडियो की एक बड़ी कम्पनी है। उस कम्पनी ने (गोलमेज के समय १९३७ मे) भारत वर्षीय कई नेताओ के भाषण रिकार्ड कराए। आश्चर्य है कि अनेक नेता पालिटिक्स अर्थात् राजनीति पर ही बोले। जब महात्मा गाधी और महामना की बारी आई तब दोनो ने स्पष्ट शब्दो मे कम्पनी वालो से कहा—

"ससार की राजनीतियाँ कभी स्थिर नही रही। प्रतिदिन प्रतिक्षण बदलती ही रहती हैं। इसलिए प्रतिक्षण बदलती रहने वाली पालिटिक्स पर हम नही बोलेगे। इस प्रकार का भाषण तो कोई चिरस्थायी भाषण नही होगा।"

कम्पनी के डायरेक्टर ने कहा—'तो फिर आप किस विषय पर बोलेगे। हमारे देश मे तो पालिटिक्स ही चलता है। पालिटिक्स ही पुजता है। हमारे देश मे पोलीटिकल नेता का ही महत्त्व है।"

महात्मा जी ने मुस्करा कर कहा—'हम तो ईश्वर विषय पर बोलेगे जो सदा एक रस रहता है। न कभी बदलता है।"

इसको सुनकर महामना जी बोले—

"मै भी ईश्वर विषय पर ही बोलूँगा" इन दोनो का ईश्वर विषयक व्याख्यान रिकार्ड बन्द है।

इस प्रकार उन्होने विदेश मे भारतीय अस्तिकता का जीता-जागता उदाहरण उपस्थित किया।

वस्तुत मालवीय जी देश और समाज की बहुमूल्य निधि थे। उनकी पावन स्मृति मे इस अक का प्रकाशन उपयुक्त है।

तो स्वय ही ५) रु० मासिक चन्दा देना शुरू कर दिया। उसके बाद जब भगवान् की दया से मेरी आय बढी तो मैंने ८) रु० मासिक चन्दा कर दिया। अब मैं ८) रु० मासिक ही चन्दा देता हूँ। आर्यसमाज मे अच्छे आदमियो की थोडी सी गिनती लाभदायक होगी। अच्छे आदमियो से सगठन प्रभावशाली बनता है। अधिक भीड कजूस और लोभियो की करने से कोई फायदा नही। उनसे आर्यसमाज की सस्था बदनाम होती है।

मेरी आर्य नेताओ से प्रार्थना है कि वह आर्यसमाज के हित की दृष्टि से उन्ही लोगो को आर्य सभासद बनाये जो उपनियम सख्या ४ का सच्चाई तथा श्रद्धा पूर्वक पालन करते हो।

परिवार की पुकार

—श्री रामेश्वर दयाल बी०एस०सी०

वर्णाश्रम धर्म मे व्यक्तिगत जीवन को ४ आश्रमो मे बाँटा है। गृहस्थ आश्रम सब सामाजिक कार्यो तथा व्यवस्था का प्रश्रय है, अन्य आश्रम उसी पर आश्रित है। हमारी सस्कृति ने गृहस्थ आश्रम को परिवार से बाँध दिया है। हम इसी मे पैदा हुये पले तथा बढे हैं सो हमे इस प्रणाली की विशेषता य्यो ही नही दर्शती है, वरना यह है वह शाश्वत व्यवस्था जिसने गये गुजरे पराभव और पराधीनता तथा परवशता के युग मे हमारी सस्कृति हमारे सस्कार तथा हमारी सस्कृति के ताने बाने को चलाये रखा है। ऋग्वेद ने उद्घोष किया "प्रजाभिरग्ने अमृतत्त्वम-श्याम्" प्रजा के प्रजनन मे अमृत तत्त्व निहित है। 'आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरद शतम्। और पुत्र नरक से तारता है। लोक मे पुत्र नाम अमर रखता है। पुत्र ही विरासत का उत्तराधिकारी होता है। पुत्र मे मानो अपना हृदय पुन उत्पन्न होता है। "अगादङ्गात्सम्भवसि हृदयादभि-जायसे"। स्त्री और पुत्र के चारो ओर परिवार पूरा जाता हैं। चाचा, दादा, बुआ, फूफा, दादा, दादी, नाना, मातुल, साले, साढू, बहनोई, श्वसुर, सास, मौसा, आदि पारिभाषिक शब्द केवल सस्कृत मे ही पाये जाते है क्यो कि अपने इस रूप मे परिवार भारत वर्ष मे ही पनपता रहा है। पश्चिमी भाषाओ मे तो इन शब्दो के अनुवाद प्राप्त हैं ही नही। वहाँ Uncle Aunt Grand तथाIn–Law शब्दो मे सब रिश्ते आजाते है, नही इन रिश्तेदारो मे कोई आजीवन मधुरता वा आदान प्रदान चलता है। गीता के प्रथम अध्याय मे यह शब्द प्रयुक्त हुये है। मनुस्मृति अध्याय ८ मे श्लोक १८१ से १८६ तक एक रूपक इस प्रकार बाँधा गया है—

आचार्य ब्रह्मलोक का स्वामी है। पिता प्रजापति लोक का ऋत्विज देवलोक का, भगिनी व पुत्रवधू अप्सरा लोक, का मा व मामा भूलोक' के, बालक आकाश लोक के स्वामी है। भ्राता पिता तुल्य, भार्या व पुत्र स्वशरीर के तुल्य दास स्वर्गछाया के तुल्य तथा कन्या परम कृपा पात्र हैं। पुत्रवधू देववधू के तुल्य, बान्धव विश्वेदेवा के समान और साले कामसुखादायक तथा शान्ति दाता हैं। परिवार शान्ति का स्थान रहा है। मनुष्य को त्यागमय बनाने की प्रथम सोपान है जहाँ सब अपनी शक्ति के अनुसार कार्य करते है पर आवश्यकतानुसार फल सचित कमाई से पाते है। परिवार एक प्राकृतिक सहकारी सघ है। सामाजिक प्राणी होने के प्रथम पाठ व्यक्ति परिवार मे ही पढता है। परिवार भारतवर्ष की विशिष्ट वस्तु है। इस की प्रशसा मे वेदो मे प्रशस्तिया है। परिवारो के वैदिक आदर्श भी है।

अनुव्रत पितु पुत्रों, मात्रा भवतु समना।
जाया पत्ये मधुमती वाच वदतु शन्तिवाम्॥
मा भ्राता भ्रातर द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्च सव्रता भूत्वा वाच वदत भद्रय॥

पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशक	पृष्ठ	मूल्य
१ विचार मदाकिनी	श्री कृष्णदत्त "साहित्यरत्न	स्टूडेन्ट्स स्टोर्स कश्मीरीगेट, दिल्ली-६	१२८	१) ७५
२ आर्य विवाह-रीति निर्णय	प० फूलचन्द शर्मा "निडर" सि० शास्त्री, धर्मालकार	आर्य समाज-भिवानी	११२	१) ५०
३ वैदिक ज्ञान-प्रकाश	मास्टर 'शान्त'	आर्य युवक सघ १६५४, दरियागज, दिल्ली-६	१२०	०) ५०

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत् कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥
सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि श्रयेकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् ।
देव । इवामृतं रक्षमाणाः सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥

चाणक्य शतक के कुछ स्थल बडे लुभावने है —

यदि रामा यदि च रमा यदि तनयो विनयधीगुण
तनये तनयोत्पत्तिः सुरवर नगरे किमाधिक्य ?
आतिथ्ये शिवपूजन प्रतिदिन मिष्टान्न पान ।
साधो सगमुपासते सतत धन्यो गृहस्थाश्रम् ।

परिवार त्याग का शिक्षणालय है। यहा कम आयमे गुजारा होता है। बेकारी भुखमरी से त्राण है। मरने पर भी कृतज्ञ सन्तान सद्गुणो से तर्पण करती है। यूनानी हवि से तर्पण करते है। रोमन लोग १८ फरवरी को परिवार के गये हुओ की पूजा करते है। ईसाई लोग All souls Day के रूप मे और हिन्दू श्राद्ध तपण के रूप मे परिवारो द्वारा ही हाथ की खेती सम्भव रही है। बच्चो की शिक्षा और पारिवारिक उद्योग कला की शिक्षा परिवारो द्वारा सहज ही मे होती आई है। परिवार मे आनन्द है, मनोरजन है। परिवार मे धार्मिक कृत्य होते हैं। परिवार मरक्षक है क्योकि पुत्र के रूप मे बुढापे की रोटी निश्चित है। परिवार स्वर्ग है।

परन्तु हा हन्त! अब परिवार को समाप्त किया जा रहा है। समाप्त जान बूझ कर किया जा रहा है। बेवेल ने साम्यवाद की परिभाषा करते हुये लिखा है —

It is in reality an entire world philosophy, in reliegion it is altruism, in the state a Democratic Republic, in Industry a popular collectivism, in metaphysics materialism, in the home an almost loosening of family ties and the marriage bond.

एक ऐसे समाज का निर्माण किया जा रहा है जिसमे विवाह पवित्र बन्धन न होकर केवल रति-क्रिया-लाभ के अन्तर्गत किया जाने वाला क्षणिक contract ठेका मात्र है। एक ऐसे प्राणी का सृजन किया जा रहा है जो कह सके Born in Hospital, brought up in Nursury, educated in College, living in Hostel, how am I concerned with family ?

अस्पताल मे पैदा हुआ, नर्सरी मे धाय के दूध पर पला, पब्लिक स्कूल व कालिज मे पढा, होस्टल मे रहा व्यक्ति मैं परिवार को क्या जानूँ। हर्फ पढा टाइप का, पानी पिया पाइप का, दूध पिया डब्बा से काम क्या अब्बा से ? बेइन्तहाई तेजी की अर्थ—व्यवस्था उत्पन्न कर दी गई है जिसमे आतिथ्य सत्कार तथा पारिवारिक त्याग की आहुति दे दी गई। लाभ की कसौटी वाले युग मे यदि कृश गाय चारा बचाने के लिये काटी जाने का तर्क मान्य है तो वृद्ध व कृश अनुत्पादक माता पिता को बुढापे मे साहाय्य अपने ऐश मे कमी डालकर देना भी मूर्खता करार दी जाने लगी। व्यावसायिक क्रान्ति, नौकरियो का केन्द्रीकरण, शहरों की घनी बस्तियाँ और आँगन विहीन दो दो कमरे के छोटे-छोटे घर, पारिवारिक नियत्रण का विरोध, कैन्टीनो व होटलो का जाल जहाँ घर बिना गये ही सस्ता भोजन प्राप्त है, पके पकाये भोजन व बिस्कुट, स्त्रियो का आचरण और उनमे घर छोड नौकरी के लिये घर से बाहर आने की प्रवृत्ति का प्रोत्साहन, स्त्रियों के मताधिकार, अविवाहित रहने की प्रवृत्ति, परिवार नियोजन के नाम पर भ्रूण इत्यादि की कानूनी आज्ञा, वरण-स्वातन्त्र्य, परिवारो का छोटा होना, यौन नैतिकता के दोहरे मापदड की समाप्ति, घर के बाहर सस्ते मनोरजन की प्राप्ति, क्लब, सिनेमा, बाहरी स्त्रियो की सुलभ प्राप्ति मिताक्षरा परिवार की समाप्ति, उत्तराधिकार के नये कानून, गोद सम्बन्धी कानून, स्त्रीधन तथा अन्य सम्पत्ति की समानता, दायादि के अनधिकारित्व की बात, मृत्यु कर, योजनाये, रुपया लगाने की सुरक्षित निधियाँ, इनकम टैक्स के कानून, विवाह सम्बन्धी कानून, सिविल मैरिज,

चरित्र-निर्माण और स्थायी-भाव

शरच्चन्द्र पाठक
एम० ए० बी० टी०

अपने गन्तव्य स्थान तक पहुँचने वाला राही यात्रा प्रारम्भ करने से पहले जब यह देखता है कि कई मार्ग एक साथ उसे उसके लक्ष्य तक ले जा सकते हैं तो वह निश्चय ही सबसे छोटे किन्तु सरल मार्ग का चयन करेगा ताकि उस की यात्रा निर्विघ्न समाप्त हो। यही दशा जीवन पथ मे प्रवेश करने वाले बच्चे की है जो अपनी यात्रा सफलता पूर्वक पार करना चाहता है। इसके लिए उसे अनेक व्यक्तियो एव परिस्थितियो का मुँह ताकना पड़ता है। सफल जीवन के लिये अन्यान्य उपकरणो क साथ ही उसे आवश्यकता होती है सच्चरित्रता के दृढ आधार की।

अच्छे चरित्र का निर्माण जितना अधिक बच्चो के लिये वाछनीय है उतना ही कठिन भी। इसके लिए उत्कट इच्छा, तीक्ष्ण बुद्धि एव सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक सूझ की आवश्यकता है। इतना तो हम सभी जानते है कि बच्चा हो या बडा जब तक अमुक कार्य हमारी रुचि का प्रधान विषय नही बन जाता तब तक हमे उस कार्य मे विशेष सफलता नही मिल सकती। अत यह निश्चित है कि हम बच्चो से जिस कार्य की भी आशा करते हैं उसमे उनकी रुचि पहले जाग्रत करनी है। बस यही से हमे विशेष उत्तरदायित्व सम्हालना है।

बच्चो को चरित्र के अच्छे गुणो की ओर ले जाने मे स्थायी भाव बडे सहायक सिद्ध होते है स्थायी सर्वांश मे भाव जन्मजात अथवा स्वाभाविक नही होते। यह सवेग जनित एक मानसिक भाव है। वातावरण मे सघष के फलस्वरूप हमारी मानसिक वृत्तियो मे कुछ परिवर्तन आजाता है। बहुधा हम देखते हैं कि जब हम किसी वस्तु को प्रथम बार देखते हैं तो या तो उसके प्रति हमारे मन मे प्रेम के भाव उठते हैं या घृणा के। यदि ये पदार्थ हमारे सामने बार बार लाए जाय तो उन के प्रति हमारी प्रेम अथवा घृणा की धारणाएँ पुष्ट हो जायगी और उन वस्तुओ के प्रति एक स्थायी छाप हमारे मन मे जम जाती है। यही स्थायी भाव है। स्थायी भाव भी दो भागो मे बाँटे जा सकते है—

१—स्थूल वस्तुओ के प्रति २—अमूत भावनाओ अथवा गुणो के प्रति। शेर या भालू को जगल मे स्वतत्र विचरता देख कर हमे मूल प्रवृत्ति के आधार पर भय का अनुभव होता है। कई बार जब इसी क्रिया की आवृत्ति सोती है तो शेर अथवा भालू के प्रति हमारे मन मे भय का स्थायी भाव पुष्ट हो जाता है। ठीक इसी प्रकार बच्चा अपने खिलौने, घर, माँ, बाप, भाई, बहन, गली, बस्ती आदि के प्रति

लोगो का नौकरियो के लिये दूर दूर बसना, नौकरियो के तबादिले, विदेश गमन——सब के सब शस्त्र परिवार को समाप्त करने पर तुले हुये है। साम्यवादी देशो मे तो परिवार बनने ही नही दिये जाते। कौन किसकी स्त्री और कौन किसका पुत्र। किस पर जायदाद और किसकी विरासत, किसका श्राद्ध व किसका तर्पण ? "वसुधैव कुटुम्बकम्" का ही एक मनोमोहक नारा है। प्रश्न है कि हम सक्रमणकाल मे हैं, यदि हमे अपनी सस्थायें और सस्कृति और अपनत्व जिन्दा रखना है तो परिवार की इकाई को जिन्दा रखना पड़ेगा, अन्यथा महती विनष्टि है। सोचना पड़ेगा कि अनुदार कहलवा करके भी अपनत्व जिन्दा रक्खें या नये समाज का मृग मरीचिका मे पड कर अपनापन कुर्बान कर दे। झझावात मे पड कर और दुख उठा कर भी हम मे से प्रत्येक ने चाहे वह किसी अवस्था मे भी हो परिवार-प्रणाली को चालू रखना है।

प्रेम के स्थायी भाव बना लेता है। निरन्तर कई वर्ष तक एक ही विद्यालय मे पढने से हमे विद्यालय के भवन से एक विशेष प्रकार का लगाव हो जाता है । इस प्रकार यह स्थायी भावो का स्थूल पक्ष है। किन्तु इससे और एक पग आगे बढ कर स्थायी भाव अमूर्त गुणो की ओर भी उत्पन्न किए जा सकते है ।

सद्गुणो और सद्विचारो के प्रति बच्चो के स्थायी भावो का निर्माण करना उनके चरित्र विकास मे सहायक है। किन्तु रुचि को ध्यान मे रखते हुए नैतिक गुणो की ओर बच्चो को उन्मुख करना सरल काम नही है । छोटे बच्चे देशभक्ति, सभ्यता, अध्यवसाय तथा न्याय प्रियता आदि के सद्गुणो का अर्थ भी ठीक २ नही समझ सकते । किन्तु मनोवैज्ञानिक विधि से उन्हे इन गुणो का परिचय कराया जा सकता है। बालको को कुछ ऐसी क्रियाओ से परिचित कराना चाहिए जिनमे इन गुणो की छाप हो । इतिहास और साहित्य के विविध उदाहरणो द्वारा इस उद्दृश्य की पूर्ति की जा सकती है। बालको मे स्वच्छता की आदत डालने के लिए ऐसे बच्चो की सामूहिक रूप से प्रशसा की जाय तो दूसरे बच्चे भी अपना ध्यान उस ओर आकर्षित करेगे। इसी प्रकार इतिहास प्रसिद्ध महान् नेताओ के प्रति भी हम बच्चो के स्थायी भाव जागृत कर सकते है ।

बच्चो के चरित्र-विकास मे सहायक कुछ विशेष स्थायी भावो की चर्चा करना आवश्यक है ।

देश-भक्ति का स्थायी भाव—बच्चो मे राष्ट्रीय भावना अकुरित करने के लिए स्कूल मे उन्हे अपने देश के इतिहास से परिचित कराना आवश्यक है। भूगोल मे देश का क्षेत्रफल लम्बाई चौडाई, जलवायु की विविधता तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आदि का ज्ञान कराना भी आवश्यक है। यदि हम देश की प्रसिद्ध वस्तुओ,— ऐतिहासिक भवनो, फसलो, खनिज आदि का ज्ञान बच्चे को कराएँगे तो निश्चय ही देश के प्रति उसका अनुराग बढेगा । बडे २ साहित्यकार, इतिहास के प्रसिद्ध वीर-पुरुष, बडे २ समाज सुधारक धार्मिक नेताओ का ज्ञान जब बच्चे को दिया जायगा तब वह अपने देश और जाति पर गौरव का अनुभव करेगा ।

आत्म-गौरव का स्थायी भाव—समाज मे हर प्राणी का कुछ निश्चित क्षेत्र होता है। उस क्षत्र से सम्बन्धित वस्तुएँ उसके "स्व के क्ष त्र म आती है। उनमे उस का विशेष स्नेह होता है। इसी आत्म अथवा स्व के दायरे मे चल कर मनुष्य अपने सामने कुछ आदश निश्चित करता है । वह आदश उसके आत्म गौरव का स्थायी भाव है। वास्तव मे आत्मगौरव का स्थायी भाव हमारे समस्त जीवन कार्यो का आधार है । हमारा व्यवहार इसी स्थायी भाव के मानदण्ड से नापा जा सकता है। अमुक व्यक्ति अथवा वस्तु ग्रहणीय है अथवा अमुक त्याज्य, यह सब इसी स्थाई भाव पर [illegible]। अपने आप को ठीक ठीक समझना समाज मे अपनी [illegible] परिस्थिति विशेष का निर्माण करना सब इसी स्थाई भाव पर अवलबित है। कमी २ घर वाले या अध्यापक बच्चे को सदैव उसकी अयोग्यता के लिए फटकारते रहते है, यह बुरा है। ऐसा करने से बच्चा अपने आप को एक दम अयोग्य समझ कर कुछ भी कर सकने में अपने आप को असमर्थ पाता है। ठीक इसके विपरीत यदि हम बच्चे के सामने उसकी आवश्यकता से अधिक प्रशसा कर दे तो वह दम्भी एव निष्क्रिय भी हो सकता है। अत उसके उचित नियमन का भार गुरुजनो पर ही पडता है।

इसी प्रकार ईमानदारी, सत्यनिष्ठा कठोर परिश्रम, अनुशासन, नम्रता आदि और अनेक गुण ऐसे है जिनके प्रति हम बच्चो के स्थाई भाव जागृत करके उनके चरित्र की पक्की और सुहृढ नीव डाल सकते है। किन्तु प्रत्येक गुण के लिए ठोस उदाहरण, व्यावहारिक, अनुकरणीयता आदि सुलभ करना बडो का कार्य है। केवल उपदेश मात्र दे देने से काम नही चलता। हमे अधिक परिश्रम से इन चरित्र नियामक नैतिक किन्तु नीरस गुणो मे भी बच्चो की रुचि जागृत करनी पडती है, उन का मानसिक गठन उन परिस्थितियो के अनुकूल बनाना है तथा उनमे वे भाव स्वाभाविक रूप से उडेलने है तभी वह अपने भावी जीवन मे अपने देश और जाति का मस्तक गौरव से ऊचा कर सकेगे।

कांग्रेस शासन की १९६१ की सफलताएं और विफलताए

ले० सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री दुर्गादास जी

नेहरू जी का भारत सन् १९६२ में प्रविष्ट हो चुका है जिसकी साख राजनैतिक क्षेत्र मे उच्चतम और नैतिक क्षेत्र मे निम्नतम है।

गोआ की मुक्ति ने भारत की राजनैतिक स्वतन्त्रता के सिर पर मुकुट बाँध दिया है। इस अभियान की सफलता से काग्रसजनो को आगामी ५ वर्ष पर्यन्त अपने विशाल साम्राज्य पर निर्विघ्न शासन करते रहने की आशा हो गई है।

पश्चिम की दृष्टि मे—हमारे राजनैतिक परामर्शदाताओ की दृष्टि मे—गोआ की घटना से गाधी परम्परा का अतिक्रमण हो गया है। घरेलू क्षत्र मे चुनाव के लिए प्रत्याशियो के चयन मे गाधी जी के आदर्शो का अन्तिम रूप से परित्याग कर दिया गया है। चिन्ता केवल इस बात की है कि चुनाव मे येन केन सफलता प्राप्त की जाय साधन भले ही कोई क्यो न हो।

आदर्शो और व्यवहार मे विपर्यय एकमात्र काग्रेस दल तक ही सीमित नही है। हमारा प्रशासनिक यन्त्र विशालकाय है। कर्मचारियो का चुनाव योग्यता के आधार पर होता है और यह यन्त्र एशिया भर मे सर्व श्रेष्ठ समझा जाता है परन्तु इसकी प्रेरक भावना निस्वार्थभाव से कार्य करने की नही है। यह तो राजनीतिज्ञो की मनतरङ्गो के अनुसार अथवा निजी स्वार्थ की सिद्धि के लिए कार्य करता है।

हमारा व्यापारिक वर्ग धनोपार्जन की दिशा मे बडा निपुण है और इस दिशा मे वह ससार के उच्चतम एव प्रगतिशील वर्ग की समता करता है। देश की अर्थ व्यवस्था के सुनियोजन मे अपेक्षित चातुर्य और कौशल का परिचय देकर वह देश के राजनीतिक जीवन को ऊँचा कर सकता है परन्तु वह राजनीति से अलग थलग रह कर शासको को क्रय कर लेता है। यह वर्ग अपने व्यापार के हितार्थ राजनैतिक दलो और स्वतन्त्र प्रत्याशियो को चुनाव मे आर्थिक सहायता देने मे अग्रसर रहता है। खेद है कि राजनैतिक और प्रशासनिक क्षेत्रो को सबसे अधिक पतित करने वाली शक्ति के रूप मे यह वर्ग कार्य कर रहा है।

हमारा औद्योगिक और आर्थिक विकास एशिया मे सर्वोत्कृष्ट और हमारी योजनाएँ अत्यन्त बुद्धि सगत है। इस पर भी आय मे व्याप्त घोर विषमता और बेकारी इन दोनो मे वृद्धि होती जा रही है।

हमारा प्रेस बहुत उन्नत है फिर भी हृदयगत बात को साहस पूर्वक लिखने वाले पत्रकारो और सुरुचि पूर्ण समाचार पत्रो को पढने वालो की सख्या कम होती जा रही है।

हमारे विधायको की सख्या लगभग ५००० है जो निष्पक्ष और स्वतन्त्र मत-दान-प्रणाली के द्वारा निर्वाचित होते हैं परन्तु इन चुने हुए प्रतिनिधियो की बौद्धिक एव आचारिक विशेषताओ का ह्रास हो रहा है।

श्रीयुत नेहरू और कांग्रेस के अन्य कतिपय नेता अनुभवी और बुद्धिमान् है परन्तु अधिकाश मत्री अपने दायित्व के निर्वाह योग्य अपेक्षित योग्यता से शून्य होते हैं। यत विरोधी दल अच्छा चित्र प्रस्तुत नही करता अत जनता इस विचार मे सन्तोष अनुभव कर लेती है कि श्री नेहरू काग्रस मे सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हैं और काग्रेस समस्त राजनैतिक दलो मे उत्कृष्ट है।

एशिया महाद्वीप मे काग्रेस प्रशासन के अन्तर्गत भारत दृढतम प्रजातन्त्र है। इसके विकल्प के रूप मे भारत का कोई भी नागरिक सैनिक तानाशाही को जिससे पाकिस्तान मे वा एशिया मे अन्यत्र कही भी समस्या का समाधान नही हुआ है अथवा कम्युनिस्ट प्रशासन को पसन्द न करेगा जो वैयक्तिक स्वतन्त्रता को कुचल देता है और जिससे चीन के रोगो का शमन न हो पाया है।

भारतीय प्रजा जनतन्त्रीय शासन-व्यवस्था को पसन्द करती है। भारत के लोग 'रामराज्य' चाहते हैं, जिसका अभिप्राय है न्यायपूर्ण कल्याणकारी शासन। जनतन्त्रीय प्रशासन से समाज का हित होता है और जनता के प्रति उत्तरदाता होने के कारण वह अन्याय का आश्रय नही ले सकता। परन्तु इसकी वरिष्ठता इसके कणधारो राजकर्मचारियो और व्यापारियो की बौद्धिक एव नैतिक श्रेष्ठता पर अवलम्बित होती है।

देश वासियो के बौद्धिक और आचारिक स्तर को ऊँचा करने के लिए कुछ न कुछ होना ही चाहिए। इसका अर्थ है उत्तम शिक्षा और स्वस्थ वातावरण। आज के विद्यार्थियो के हृदयो मे अपने अध्यापको और राजनीतिज्ञो के प्रति सम्मान की भावना बहुत कम पाई जाती है। अध्यापक लोग सत्ता प्राप्ति के लिए जोड-तोड मे निरत रहते और इस कार्य मे विद्यार्थियो का प्रयोग करते है। जब राजनैतिक नेता विद्यार्थियो की सभाओ मे भाषण देते है तब सामान्यत उनका बौद्धिक एव नैतिक निम्नस्तर विद्यार्थियो पर प्रतिलक्षित हो जाता और उन पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है।

विधायको, राजकर्मचारियो और व्यापारियो के समक्ष राज्य के मन्त्रियो को भी त्याग के उदाहरण प्रस्तुत करने होते हैं। श्रीयुत प० नेहरू अपनी इस आयु और इस प्रकार की उत्तरदायिता से बचे रहने की अपनी सहज प्रवृत्ति के कारण इन बुराइयो के विरुद्ध अभियान आरभ करेंगे यह सन्दिग्ध है। ऐसा करने की उनमे क्षमता है परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि वह अपने पद का परित्याग करके इस कार्य मे जुट जाय। काग्रेस प्रशासको द्वारा गाँधी जी के आदर्शों के क्रियान्वित न होने के कारण जो त्रुटियाँ व्याप्त हुई है उनके निराकरण के लिए या तो उन्हे इस बात पर विचार करना होगा कि 'मेरे बाद स्थिति क्या होगी ?' या फिर उन्हे गाधी-मार्ग को अपनाना होगा।

स्थिति जिस प्रकार की है उसे देखते हुए ऐसा लगता है कि पडित नेहरू अशक्य है। उनके नव वर्ष के सन्देश मे राष्ट्रीय एकता का व्रत ग्रहण करने के लिए आह्वान था परन्तु जात-पात और भाषायी पक्षपात की भावनाओं से परिपूर्ण वातावरण मे उल्लेख योग्य सुधार हुआ नही देख पडता। मास्टर तारासिंह का अनशन, मुस्लिम कन्वेशन, नागालैंड और आसाम की पहाडियो तथा अन्यत्र ईसाई पादरियो की अराष्ट्रिय प्रगतियाँ, मध्य प्रदेश एव उत्तर प्रदेश के साम्प्रदायिक तथा आसाम के भाषायी उपद्रव इन सबमे पारस्परिक फूट और वैमनस्य का घिनौना चित्र समुपस्थित हुआ है।

साधारणत नेहरू प्रशासन देश मे तथा विदेश मे उल्लेखनीय उपलब्धियो का दावा कर सकता है जिनमे गोआ की मुक्ति विशिष्टतम है और जिसका महत्व काश्मीर और हैदराबाद की उपलब्धियो जैसा ही है। सरदार पटेल ने हैदराबाद की पुलीस कार्यवाही का आयोजन किया था और पडित नेहरू बडी अनिच्छा से इससे सहमत हुए थे। रफी अहमद किदवई ने श्री नगर मे अब्दुल्ला के षड्यन्त्र के विरुद्ध कार्यवाही करने की योजना बनाई थी जिसकी ओर से नेहरू जी आँखे बद किए हुए थे। श्रीकृष्णमेनन ने गोआ कार्यवाही का निश्चय किया और नेहरू जी ने निरुपाय हो जाने पर यह कार्यवाही हो जाने दी। एक ही झटके ने अमेरिका और इग्लैड को गलत और रूस को ठीक स्थिति मे प्रस्तुत कर दिया। पाकिस्तान को छोडकर

मेरी रूस तथा युरोप यात्रा

श्री डा० मन्नलाल बजाज

इस यात्रा का सौभाग्य मुझे Indian medical association द्वारा आयोजित Study tour III मे प्राप्त हुआ । भारतवर्ष के भिन्न भिन्न भागो से अन्य ५६ डाक्टर भी सम्मिलित थे । २२-८-६० को होटल जनपथ मे सब डाक्टरो को सायकाल का भोजन दिया गया। वहाँ पर हम सब को विदेशी खाने के बारे मे जानकारी दी गई क्योकि हम सब मे से बहुत से लोगो का विदेश जाने का पहला ही अवसर था और २३-८ ६० को हम १२ बजे (दोपहर) पालम हवाई अड्डे से बोइंग हवाई जहाज द्वारा मास्को को चल पडे । प्रस्थान से पूर्व Trade wing company की ओर से सब डाक्टरो की फोटो खीची गई । Trade wings के दो आदमी भी हमारे साथ गये।

आकाश बादलो से आच्छादित था पर थोडे ही क्षणो मे जहाज बादलो से ऊपर चला गया नीचे बादलो के रूपद पहाड दीख रहे थे और ऊपर सूर्य देवता चमक रहे थे । यद्यपि जहाज बहुत तेजी से उड रहा था पर ऐसा मालूम होता था कि जहाज २-३ मील प्रति घण्टा रफ्तार से ही उड रहा हो । लाहौर जम्मू काशमीर काबुल होते हुए तथा हिन्दूकुश पहाड को लाघते हुए ताशकन्द पहुँचे जहा पर काफी गर्मी थी पर देहली से बहुत कम । ताशकन्द मे फर्श लकडी के हैं और जगह-जगह सुन्दर पत्थर लगे हुए है । यह पहले मुसलमानो के पास था पर अब रुसियो के पास है। यहाँ पर हमारे जहाज का इजिन कुछ बिगड गया अत हमे यहाँ २-३ घण्टे रुकना पडा और हम मास्को देर से पहुँचे, । मास्को का Aerodrome बडा विशाल है और मास्को शहर लगभग १५-२० मील दूर है। हवाई अड्डे से हम बसो से UKrane होटल मे पहुँचे । मास्को मे सर्दी उतनी थी जितनी देहली मे दिसम्बर मास के अन्त मे होती है ।

मास्को का दृश्य अति उत्तम है । यह शहर मास्को नदी पर स्थित है। इमारते अधिकतर ७-८ मजिली हैं। बस व ट्राम का प्रबन्ध बहुत अच्छा है । लोगो का काम प्रात ८ बजे से पहले आरम्भ नही होता अत इससे पहले सडक पर कोई नही दीखता । २४-८ ६० को हमने U S S R. की medical association के कार्य करने के ढग पर एक भाषण सुना Ukrane हाटल की बिल्डिग बडी विशाल तथा सुन्दर है और अन्य जितने होटलो मे हमे रहने का मौका मिला [यूरोप मे] उन सब मे यह अनुपम था । इसी होटल मे हमे एक कागो निवासी को अपनी वेशभूषा मे देखने का अवसर मिला । रूस का सिक्का रुबल कहलाता है इसका मूल्य लगभग ७ आने है । मास्को की सडके देहली की बडी से बडी सडको से ३-४ गुणा हैं। कहते हैं कि पिछली लडाई मे शहर का अधिकतर भाग नष्ट हो गया था और बहुत गन्दा था पर लडाई के बाद इसका नक्शा ही बदल गया है ।

अब बडी चौडी सडके तथा ८, १० मजिले मकान बन रहे हैं कई-कई तो इतने हैं कि ४०० के करीब परिवार रह रहे हैं इनको apartment houses कहते हैं । सबसे निचले मन्जिल पर दुकानें या स्टोर्स हैं वहाँ

अफ्रीका और एशिया के देशो की सहानुभूति भारत के प्रति केन्द्रित हुई । काशमीर मे पाकिस्तान की सैनिक कार्यवाही की निरन्तर बढती हुई धमकी की विद्यमानता मे गोआ अभियान से हमारी सशस्त्र सेनाओ के उत्साह मे वृद्धि हुई है।

प० नेहरू ने अभी हाल की एक प्रेस कान्फ्रेंस मे विनाश मे से कुछ बचा लेने का यत्न किया । उन्होने गोआ कार्यवाही के औचित्य का सुन्दर ढग से प्रतिपादन करके अमेरिका को अच्छे रूप मे प्रस्तुत किया । निस्सन्देह भारत की गोआ कार्यवाही ने नए तत्त्वो को क्रिया-रत कर दिया है जिनसे या तो पाश्चात्य उपनिवेशवाद का अन्त पूर्ण हो जायगा, या वे राष्ट्रसघ के विघटन का कारण बन जावेंगे या ससार नस्ल या रग के आधार पर विभाजित हो जायगा ।   —(ट्रिब्यून)

सब प्रकार के खाद्य-पदार्थ तथा अन्य वस्तुएँ मिलती हैं जो सब लोग दाम देकर खरीद सकते है महँगाई बहुत है, जैसे एक झाड़ू वहा १-४ रु० की है जो यहाँ ४-५ आने मे मिलती है।

मास्को की आबादी लगभग ६० लाख है। मास्को नदी शहर के मध्य मे से गुजरती है। शहर मे कई पुराने नमूने की कई इमारत विद्यमान है जो देहली के मध्यम श्रेणी के भवनो की तरह हैं। रूस मे हर व्यक्ति के लिए रहने के लिए मकान है मजदूर की कदर अधिक है। मोटर ड्राइवर को १५०० रुबल, द्विभाषिये को १३०० तथा डाक्टर को १००० रुबल प्रति मास वेतन के रूप मे मिलते है। यूनीवर्सिटी वाचनालय का भवन विशाल है। जार बादशाह के महल भी देखे जिन्हे अब सरकारी कार्यों के लिये बर्ता जा रहा है। कुछ भाग को अजायबघर मे बदल दिया है। रैड स्क्वेयर मास्को म एक विस्तृत मैदान है जिसके चारा ओर विशाल बिल्डिंग है। यहा ही लेनिन तथा स्टालिन के शव रखे हुए है। हर वर्ष के नवम्बर मास की सात तारीख को यहाँ भारी पैरेड होती है।

धूम्रपान पर प्रतिबंध नही। आप एक १३ वर्ष के लडके तक को सिग्रट पीता देखगे। यहा पर योरुप तथा ससार के कई अन्य देशो की तरह बाल अपराधी नही है न ही Night clubs हैं। इधर पहाडो मे लोग बहुत चिर जीवी है और १०० से १५० वष तक आयु भोगते है।

रूस मे धर्म और मजहब पर कोई प्रतिबन्ध नही है तो भी न जाने लाग ईश्वर की सत्ता मानने से इन्कार करते है। यद्यपि गिरजाघर बहुत हैं पर केवल १९ मे प्रार्थनाएँ होती है। उपस्थिति बहुत कम होती है। हमने कई अपने द्विभाषियो से पूछा तो उन्होने कहा कि वह ईश्वर मे विश्वास नही करते कोई ईश्वर नही है। अधिकतर गिरजाघर स्कूल, वाचनालय व दफतरो इत्यादि मे परिणत हो चुके हैं। यहाँ के लोग स्वच्छ वस्त्र पहनते है जो योरुप के लोगो की तरह अधिक कीमती नही होते यद्यपि उनके अन्दर ऐसा करने की इच्छा को मैंने तब अनुभव किया जब लैनिनग्राड मे मुझे एक नवयुवक ने अपनी नाइ लौन की कीमती कमीज तथा बढिया बूट बेचने को कहा। यहाँ लडका लडकी १८ वर्ष से कम आयु मे विवाह नही कर सकता। यहा योरुप के अन्य भागो की अपेक्षा अविवाहित माताओ की सख्या खूब अधिक है। भिखारी कोई नही और न ही कोई खाने की वस्तु आपको नगी पडी मिलेगी—यह तो सारे योरुप मे ही है। हमारे द्विभाषिये को १३०० रुबल मिलते है तथा उसके पति का वेतन भी लगभग इतना ही है पर उनके पास कोई मोटर कार नही है न ही कोई रहने का बढिया मकान जिनकी कल्पना हम भारतवासी कभी २ स्वप्न मे किया करते हैं। बडे २ लोगो के रहने के लिए नई देहली की तरह विशाल कोठिया व बगले यहा आपको देखने मे नही मिलेगे। औरतो की सख्या यहा भी लगभग सारे योरुप की तरह अधिक है और यह सब कार्य बडी कुशलता से करती है। खेती बाडी, बोझ उठाना, मशीने बनाने के कारखानो मे व अधिक परिश्रम का कार्य तो यहा मनुष्य करते है पर बाकी सब काम औरत भली भाति करती देखी गई है। लोगो का स्वास्थ्य अच्छा है पर पहला नम्बर तो जमनी वालो का ही मैने देखा है। यहा सहायतार्थ आप एक औरत को तो नौकर घर मे रख सकते हैं पर किसी पुरुष को नही। जैसे भारतीय दूतावास के क्लर्क के घर पर भी रूसी देवी सेवक का कार्य करती है पर उसका वेतन भारत की सरकार दती है। मास्को मे व इसके इर्द गिर्द भी प्राकृतिक दृश्य हमने भारत देश से अधिक सुन्दर नही देखे।

सडको पर छिलके, पान की थूक कागजो के टुकडे नही थे छोटे छोटे Dust Bins जगह २ पर थे जिनमे लोग सिगरेट आदि के टुकडे डालते थे। यह DustBins सब जगह भारतवर्ष मे बनाने नितात आवश्यक हैं ताकि लोग सफाई के महत्त्व को अपनी जिम्मेदारी से निभायें। कई कई सडके इतनी चौडी थी कि ८-९ कारे एक साथ चल सकती थी कोई बैलगाडी, Motor rickshaw साइकिल, रिक्शा, गधे, घोडे टोगा आदि नही दीखते थे। हाँ रूस के गाँव मे गधे, घोडे व खच्चर आदि होते हैं वा प्रयोग किये जाते है। अब यहा लोगो के अपने मकान भी हैं और लोग अपना रुपया बैंक आदि मे जमा भी कराते हैं। कोई भिखारी व भूखा नगा सडक पर गृहहीन नही देखा

गया हा हरेक के पास कार नही है और न सब बराबर।

हमारे देश की तरह यहा मेले भी लगते हैं जहा कई निजी और कई सरकारी दुकाने होती है। यहाँ के हस्पताल हमारे यहाँ के चिकित्सालयो से कोई विशेष अच्छे नही है। मास्को के आस-पास के कई गाँव हटाये गये है तथा बडे २ Slums साफ किये गये है ताकि मास्को शहर को अधिक विशाल बनाया जा सके।

यहाँ की Underground railways रेले व स्टेशन भी बहुत सुन्दर व अद्भुत है। सुरगे सगमरमर की हैं। यहाँ मास्को Friends society मे डाक्टरी के lecture हुए। भारतीय डाक्टरो को यहाँ सीखने के लिये कुछ खास सामग्री नही है। यहाँ पर मृतको का खून निकालकर अन्य रोगियो के प्रयोग मे लाया जाता है। यह खून ४-६ सप्ताह के लिये उपयोगी रह सकता है। मास्को के होटलो मे अच्छा खाना मिलता है। चावल आलू टमाटर, मक्खन डबलरोटी आदि अच्छे मिलते है। कृषि प्रदर्शनी यहाँ पर बहुत ही आर्कषक थी और इसका प्रवेश-द्वार India gate से कोई चार गुना बडा था। प्रदर्शनी मे कजाकस्तान की दो औरते देखी जो मैले कपडो मे थी और सिर पर रूमाल बाँधे थी। यहाँ पर दाई ओर चलने की प्रथा है। यहाँ हमे एक रूसी विद्यार्थी मिला जो हिन्दी जानता था। हममे से एक भारतीय डाक्टर ने जब ज्यादा शब्द का प्रयोग किया तो उसने तुरन्त टोक दिया और कहा कि इसकी जगह आप का 'अधिक' हिन्दी शब्द है न कि ज्यादा। खाद्य पदार्थों मे मिलावट बिल्कुल नही है आटा यहाँ अप्राप्य सा है दूतावास वाले भारतीय भी London से आटा लाते हैं। सर्दियो मे आलू, प्याज व गाजर के सिवाय कोई सब्जी नही मिलती।

२६-८-६० को हम लेनिनग्राड रेल गाडी द्वारा पहुँचे। डिब्बे भारत के 1st class के डिब्बो से भी अच्छे थे। गाडी मे सब के लिये बिस्तर लगे हुए थे। लैनिनग्राड मास्को से बहुत छोटा है पर हर प्रकार से शानदार शहर है। लैनिनग्राड स्टेशन पर लेनिन का एक बहुत बडा बुत है। लैनिनग्राड मास्को से ४०० मील दूर है। सडके यहाँ पर भी साफ सुथरी है पर इमारते ५-६ मजिल ही हैं। यहाँ के जिस होटल मे हम ठहरे उस की केवल १० मजिले थी नाकि ३०, जैसे कि Ukrane Hotel of Moscow मे थी। लेनिन ग्राड का पहला नाम सेट पीटर्स वर्ग था। यह भी एक नदी के किनारे स्थित है इस शहर मे चार दरिया और कई नदियाँ छोटी २ बहती है जिन सब पर ३६० पुल हैं और इस प्रकार शहर कई द्वीपो मे विभाजित है। लडाई से पहले की बनी हुई कई Buildings भी विशाल है यहाँ पर एक सग्रहालय museum of History of religions of different countries है जो कि बहुत विशाल है। यहाँ पर १६ गिरजाघर भी है। U S S R मे अनेक बसे वा कारे देखी पर कोई होर्न बजाता नही देखा यहाँ पर भी apartment houses जनसाधारण के लिये बने हुए है और उनमे बहुत समानता व Symmetry है।

पिछली लडाई मे इस शहर के ४ लाख लोग भूखे मर गये थे क्योकि जर्मन वालो ने इन्हे घेर रखा था। जार की एक Building मे १५०० कमरे थे जो आज-कल अजायब घर के लिये प्रयोग किया जा रहा है। जार के समय के भवन बहुत विशाल और सुन्दर है परन्तु ४ मजिल तक ही थे। यहाँ स्कूल के विद्यार्थियो ने हमसे भारतीय सिक्के लेने के लिये उत्सुकता दिखाई। यहाँ पर एक मस्जिद भी है जो १६१२ मे बनी थी लेकिन हमारा साथी एक मुसलमान डाक्टर जब वहाँ गया तो उसने उसे बाहर से ताला पडा हुआ पाया। आबादी बहुत नही है। यहाँ पर कोई मन्दिर नजर नही आया। Motor Cycle और Scooter बहुत ही थोडे चलते है क्योकि बसे बहुत है और किराया सस्ता है। यह शहर बालटिक समुद्र के तट पर है। इसके पास के भाग को Gulf of finland कहते है। इसके किनारे पर एक Stadium है जिसमे एक लाख आदमियो के बैठने की जगह है। यहाँ पर जार के शरद ऋतु के महल हैं। बहुत विशाल तथा विस्तृत। इसकी पहली छत पर बाग लगा है जो बहुत ही आकर्षक है। मँहगाई यहाँ

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का ५३ वां वार्षिक वृत्तान्त

(गताङ्क से आगे)

भी काम मे जुट गए। दयानन्द मठ रोहतक मे आर्य समाज का प्रमुख सहायता केन्द्र खोला गया। आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब ने १०००) इस काम के लिए दिया और अपनी अपील पर जो रुपया प्राप्त हुआ वह भी सार्वदेशिक सभा को भेजा। आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पजाब ने भी सहयोग दिया। कार्य को विशाल पैमाने पर करने के लिए हरयाणा प्रान्त के मुख्य २ नेताओ और विधान सभाओ के सदस्यो की एक समिति बनी जिस के ध्यक्ष श्री प्रो० शेरसिंह जी एम० एल० ए० तथा मत्री श्री भरतसिंह जी नियुक्त हुए।

सितम्बर के प्रथम सप्ताह मे ही लगभग ९० कार्यकर्ता जिनमे कई वैद्य और डाक्टर थे सेवा के लिए केन्द्र मे पहुँच गए। लगभग ३००० पीडित नरनारियो ने रोहतक केन्द्र मे शरण ली और यह सख्या दिन पर दिन बढती गई। उनके आवास, भोजन और चिकित्सा का प्रबन्ध किया गया। कुछ पीडित भाई दिल्ली आए और स्थानीय आर्य समाजो के सहयोग से उनकी उचित व्यवस्था की गई।

ग्रामो मे केन्द्रो की आवश्यकता नगरो से अधिक थी अत ११ केन्द्र खोलकर कार्य किया गया। दवाइयाँ वस्त्र और अन्न के अतिरिक्त मकानो की मरम्मत वा निर्माण तथा चारा आदि के लिए भी सामान दिया गया।

भी भारत से ५ गुणा अधिक है। यहाँ एक भी cycle नही दीखी।

इधर लोग सडको, पटरियो, चौराहो व दुकानो के सामने खडे होकर बाते नही करते व Traffic को नही रोकते। यदि किसी को बात करनी हो तो वे पार्को मे जो इन देशो मे काफी है बैठ कर करते है। सडको पर कोई फेरीवाला शोर करता हुआ वा सामान बेचता नही देखा गया और न ही सिनेमा के आगे खडे होकर खाने की वस्तुओ का विक्रेता ही मिला। इधर गाव के घर छोटे साफ और सुथरे है। कई २ घरो मे Television भी है। लोगो का भारत के प्रति आदर बहुत है। विवाह अधिकतर Love marriages ही है। स्त्रियो को सत्कार की दृष्टि से देखा जाता है और इनकी तरफ घूर २ कर नही देखते। सैंटपीटर्स वर्ग का गर्मियो का निवास स्थान यहाँ से ३० मील दूर Baltic sea के किनारे है। इस स्थान पर बहुत सुन्दर फव्वारे है और कई प्रकार के बुत बने हुए है जिन पर सुनहरी चित्रकारी Painting हुई है। कई बुतो पर सोने की पतली परतलगी हुई है। यह सब दूसरो लडाई के बाद ठीक बन गये है। क्योकि उन दिनो मे यह सब महल तबाह कर दिये गए थे। आज यहा मेला था अत दूर २ से लोग आये हुए थे। युक्रेन के इलाके की बहुत सुन्दर बालो वाली युवतियाँ विचित्र ढग के वस्त्र पहने आई हुई थी जिन्हे देख हम सब हिन्दुस्तानी लोग ता बहुत ही प्रसन्न तथा विस्मित हो रहे थे। यहाँ के फव्वारो का क्या कहना ? एक बहुत ऊचे फव्वारे से चारो ओर इस प्रकार पानी की धाराएँ निकल रही थी जैसे सूर्य से चारो ओर सूर्य रश्मिया—यह घूमता भी था। दूसरा Tricky stone fountain इस मे भूमि पर एक जगह छोटे २ पत्थर पडे थे पर जब हम इन पर चल रहे थे तो किसी २ विशेष पत्थर पर पाव पड जाने से सहसा पानी के चशमे बहने लगते थे और हमारे कपडे गीले हो जाते थे, जिस से बचने के लिये हमे भागना पडता था। इसी प्रकार एक जगह एक दो बैंच पडे थे जिन पर बैठने के तुरन्त ही पश्चात् आप के ऊपर वर्षा की तरह पानी फुव्वारे से गिरने लगेगा। लैनिनग्राड से हम वापिस होकर रेलगाडीसे मास्को पँहुचे। रास्ते मे ठण्ड बहुत थी और हमारे बिस्तरो मे कम्बल एक २ ही था हम सब सर्दी से ठिठुरने लगे तब गार्ड को जा कर कहा और उसने गाडी को गर्म कर दिया (Aircon lition) और हम आराम से Moscow पँहुच गए। बैलो की जगह घोडे खेत जोतने के काम आते है। मास्को मे Armoury chamber भी देखने योग्य है। यहाँ पर कई जार बादशाहो के ताज व सिंहासन हीरे मोती से जडे रखे हैं और बहुत ही सुन्दर और चमकीले है। घोडो की Saddles और घोडे व और कई प्रकार की चार घोडो वाली बग्घियाँ रखी हुई हैं। इसी प्रकार जार बादशाहो व उन की पत्नियो के कीमती कपडे आभूषण आदि रखे पडे हैं।

क्रमश

श्री दानवीर सेठ जुगलकिशोर जी बिडला ने इस कार्य मे महत्वपूर्ण सहयोग दिया। उन्होने प्रचुर मात्रा मे वस्त्र औषध, सिरकी, बाँस तथा पशुओ के लिए औषधियाँ प्रदान की। श्री प० ठाकुरदत्त जी अमृतधारा ने औषधियो सहित एक योग्य वैद्य को अपने व्यय पर केन्द्र मे बिठाया जिन्होने नि शुल्क चिकित्सा की और औषधियाँ वितरित की। गुरुकुल कागडी फार्मेसी विभाग ने भी पर्याप्त मात्रा मे फ्री औषधिया दी। कलकत्ता के सेठ रूलियाराम जी ने १०००) रजाइयो के लिए प्रदान किया जिससे १०० रजाइयाँ बनवाकर केन्द्रो मे वितरित हुयी। पशुओ के चारे तथा औषधियो का भी प्रबन्ध किया।

इस सभा मे अपील पर १३०४०)११ प्राप्त हुआ तथा १०००) सभा ने जनरल पीडित सहायता निधि से दिया जिसमे स ८६३६)७१ रोहतक तथा झज्झर केन्द्रो को दिया गया और ४७३)५० सभा कार्यालय द्वारा व्यय किये गये। इस काय को सुगम बनाने के लिए मुख्यतया आर्य जनता तथा सर्वसाधारण हिन्दू जनता ने धन, वस्त्र और अन्नादि से सहयोग दिया उसके लिए सभा उनकी हृदय से आभारी है। पजाब सभा के मत्री श्रीयुत जगदेव सिंह सिद्धान्ती श्री आचार्य भगवान्देव जी, श्री प्रो० शेरसिंह जी तथा म० भरतसिंह जी आदि सज्जनो ने मनोयोग पूर्वक कार्य किया और अपने प्रभाव का प्रयोग करके कार्य की प्रगति के वेगवती बनने की स्थिति उत्पन्न की। श्री दानवीर सेठ जुगल किशोर जी बिडला, श्री प० ठाकुरदत्त शर्मा, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब और गुरुकुल कागडी फार्मेसी का योग भुलाया न जा सकेगा। सभा इन सब को हृदय से धन्यवाद देती है।

कार्य का विवरण जो केन्द्रो से वर्ष के अन्त तक प्राप्त हुआ वह इस प्रकार है।

९-९-६० से ३०-९-६० तक प्राप्त धन व सामान

१ लगभग २० मन आटा प्राप्त

२ २० धोतियाँ कोरी तथा २१ गज कपडा

३ १३८ पुराने कपडे, ४ कपडे की बोरी पुरानी

४ औषधियाँ १० पेटियाँ, गुरुकुल कागडी फार्मेसी २२२॥) की औषधियाँ।

गुरुकुल झज्झर

२ पौंड कपूर रस

भारत सेवक समाज दिल्ली से

८५० छोटी शीशियाँ, चावल २० सेर, दाल १० सेर तथा तोन सेर चीनी नकद राशि दान ३२७७)

श्री बिड़ला जी से

३४ बडल सिरकियाँ

४ बोरी आटा

४० कोडी बास

श्रीयुत प० ठाकुरदत्त जी अमृतधारा ने एक वैद्य को औषधियो सहित दयानन्द मठ मे भेज दिया। उन्होने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

कार्य

९-९-६० से ३०-९-६० तक

दयानन्द मठ से सिरकियाँ ३१० परिवारो को ९०० बाँस, कपडा १७६५ व ३५३ परिवारो को आटा २५ मन १६४ परिवारो मे २ मन खाड २५ सेर गोला जच्चाओ को, तथा २७ सेर दूध जच्चाओ को।

(क) औषधियो का वितरण दयानन्द मठ से ५४२ रोगियो को

(ख) खोखराकोट शोरा कोठी से ५०० रोगियो को

(ग) सैनी हाई स्कूल रोहतक से १२३ रोगियो को

(घ) गौड हाई स्कूल सोनीवास से ५० रोगियो को

नगर तथा ग्रामो मे औषधिया बाँटने के लिये ४५ केन्द्र खोले गये।

गुरुकुल झज्झर से वितरण—

(१) सिरकियाँ ९० परिवारो मे

(२) बाँस २०० परिवारो मे

(३) आटा ५ बोरी

(४) २५ केन्द्र औषधियाँ वितरण के लिये गुरुकुल द्वारा खोले गये।

अब तक ७० केन्द्र औषधि वितरण के लिये खोले जा चुके हैं।

१-१०-६० से १२-११-६० तक विवरण

नकद आय मास भर की ३९४)६६

कार्य—१-१०-६० से ६-१०-६० तक

दयानन्द मठ, खोखरा कोट, सैनी हाई स्कूल आदि २ से १६१ रोगियो को दवाई दी गई, निम्नलिखित सामान भिन्न-भिन्न सस्थाओ द्वारा भिन्न-भिन्न तिथियो मे केन्द्र मे प्राप्त हुआ और भिन्न-भिन्न केन्द्रो मे वितरण के लिए भेजा गया —

३-१०-६० —आर्यसमाज मलोट (फिरोजपुर) द्वारा डा० अमरनाथ प्रधान द्वारा प्राप्त —

(१) ३ बोरी आटा (२) १ बोरी गेहूँ, कपडे, १ कट्टा दाल

७-१०-६०—द्वारा हैडमास्टर एस एन आर्य हाई स्कूल, टप्पा जि० सगरूर (पेप्सू)

४ कट्टे आटा गेहूँ

७-१०-६०—द्वारा आर्य समाज दाल बाजार, लुधियाना

१ गाठ पुराने तथा नए कपडे और स्वेटर

७-१०-६०—श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज दयानन्द मठ फार्मेसी दीनानगर द्वारा प्राप्त —

१८ प्रकार की भिन्न-भिन्न औषधिया

१०-१०-६० से १२-११-६० तक

३८ नई छोटी वडी कमीजे आर्य स्त्री समाज राजपुर द्वारा बनी हुई प्राप्त हुई ।

१२-१०-६० आर्य समाज पटियाला से प्राप्त

औषधियाँ, १ गिलास तथा ५०) नकद श्री कृष्णचन्द जी प्रधान द्वारा ६२ पुराने कपडे, ७६ बर्तन (गिलास, थाल आदि)

१३-१०-६०—३६ नये कपडे आर्य समाज कालका के मन्त्री श्री केशव दास जी द्वारा भेजे हुए

२०-१०-६०—आर्य समाज राजपुरा टाउनशिप

११ लिहाफ ७ पौड ऊन

२२-१०-६०—आर्य स्त्री समाज तथा आर्य समाज शाहाबाद द्वारा श्री केशोराम जी

६ बोरी गेहू २२ मन ।

२४-१०-६०—आर्य समाज फाजिलका द्वारा श्री गौरीशकर २ बोरी पुराने कपड नग ४३३ ।

७-११-६०—श्रीयुत सेठ जुगलकिशोर जी बिडला आर्य (हिन्दू) धर्म सेवा सघ दिल्ली से प्राप्त श्री प० रामचन्द्र जी पुरोहित द्वारा आर्य समाज बिरला लाइन्स दिल्ली ।

५० जनानी धोतियाँ, १० मर्दानी, ४० चादरे रगीन, ११२ गज के ४ थान कोरा लट्ठा, ४५ रजाईया, १० रुई की बडिया, १० खेस ।

इनमे से श्री पुरोहित जी द्वारा जहाजगढ मे वितरित सामान—

१० रजाइया, ५ चादरे, ३५ धोतिया, ४१ रुई की बडिया, १० खेस ।

सार्वदेशिक सभा द्वारा भेजा निम्नलिखित सामान प्राप्त—

२ पेटिया औषधियो की (गुरुकुल कागडी) २१ प्रकार की ।

१ सेर घी (वेजीटेबिल) ।

२० सेर दाल, चना ।

५ रजाईया

१॥ मन आटा गेहूँ (पौन बोरी)

८ कच्छे नए ४८ छोटी-बडी कमीजे १०२ पुराने कपडे ।

१०-१०-६० से १२-११-६० तक ३४७ रोगियो को दवाई दी गई केन्द्र दयानन्द मठ रोहतक से ।

सार्वदेशिक सभा से प्राप्त—

१०० रजाईया श्री दानवीर सेठ रुलियाराम जी (कलकत्ता) मूलनिवासी खरक कला (रोहतक) द्वारा प्रदत्त १०००) के दान से बनवा कर केन्द्रो मे भेजी गई ।

सार्वदेशिक सभा की सम्पत्ति

सार्वदेशिक भवन—

यह सभा का तिमजला अपना भवन है जो परेड के मैदान के सामने एसप्लेनेड रोड पर स्थित है। इस भवन को श्रीमती जानकी देवी ने अपने स्व० पति श्रीयुत

ज्योति प्रसाद जी खिलौने वाले की पुण्य स्मृति मे १६१५ ई० मे सभा को दान दिया था। यह भवन १७०) मासिक पर किराये पर चढा हुआ है। इस भवन की रजिस्ट्री १६-२-१६१५ को हुई।

श्रद्धानन्द बलिदान भवन—

इस भवन के नीचे की २ दुकाने ६७) ७४ मासिक किराये पर तथा दूसरी मजिल का १ कमरा (बलिदान वाले कमरे को छोडकर) तथा १ भाग कौलोनेड २५०) मासिक किराये पर रहा। इस वर्ष इस पर टैक्स व मरम्मत आदि पर २५८६) ५६ व्यय हुआ। इस भवन के सम्यक प्रयोग का विषय सभा के विचाराधीन है।

दयानन्द भवन—

यह भवन सभा ने ४५१२८३) ५० नया पैसा मे क्रय किया। ४३६०००) भवन का क्रय मूल्य था और १५२८३) ५० नये पैसे भवन की रजिस्ट्री आदि पर व्यय हुआ। रजिस्ट्री ६-६ ५८ को हुई। यह भवन रामलीला मैदान मे आसफअली रोड पर स्थित है। इस समय सभा का कार्यालय इसी भवन की सबसे ऊपर की मजिल पर स्थित है। शेष भाग इस प्रकार किराये पर चढा हुआ है —

१—बसमैंट (तहखाना) डनलप रबड कम्पनी ८७५) मासिक
२—आधा भाग [ग्राउण्ड फ्लोर] अमेरिकन एम्बेसी का एक कार्यालय १२५०) „
३—बी० धर्मसिह एण्ड कम्पनी १४००) „
४—फर्स्ट फ्लोर लिपटन कम्पनी [पहला मजिल] १२५०) ,
४७७५)

मकान का म्युनिसिपल नम्बर ५।३ है।
कार्पोरेशन के टैक्स इत्यादि मे ६४०६)६१ हुआ।

श्रद्धानन्द नगरी

श्रद्धानन्द नगरी [पहाडगज] दिल्ली मे इस सभा के अधीन श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित दो भवन हैं। इन दोनो की लागत ६६६३) है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश

इस आश्रम की भूमि तथा उन पर बने हुए मकानो का मूल्य लगभग १५ हजार रुपया है और यह सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबध के लिये वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है जिसकी ओर से श्री स्वामी देवानन्द जी सन्यासी प्रबन्ध करते हैं। इस आश्रम के मकानो मे विशेष नियमो के अनुसार यात्रियो को ठहरने की सुविधा दी जाती है। आश्रम की ओर से यात्रियो को १ तख्त वा चारपाई, पानी की बाल्टी, भोजन बनाने के बर्तन और २—३ दिन के लिये कम्बल दे दिया जाता है।

आश्रम मे प्रति सप्ताह रविवार को प्रात ८ बजे से १० बजे तक साप्ताहिक सत्सग लगता है।

इस वर्ष १ विवाह हुआ ३ यज्ञ [गगा घाट पर] हुए। अवतार वाद और अद्वैतवाद ट्रैक्ट छपवाकर वितरित किए गए।

१६० यात्रियो ने आश्रम मे विश्राम किया।

आय ८५) जौर व्यय १०५) हुआ। आश्रम के कोष मे ५००) जमा है।

ला० बाबूराम शाहदरा निवासी स्मारक निधि

देहली शाहदरा के प्रसिद्ध और वयोवृद्ध आर्य स्व० ला० बाबूराम जी ने सभा को एक वसीयत के द्वारा अपनी सम्पत्ति का जो दान दिया था उसमे से सभा को ४५ सहस्र नकद, १ मकान लगभग ४०००) का तथा १ प्लाट २०० गज का प्राप्त होगा। न्यायालय से प्रोवेट प्राप्त करके ट्रस्टियो को दे दिया गया है। सभा के भाग की प्राप्ति का यत्न किया जा रहा है।

श्रीयुत मूलचन्द बजरगलाल डिडवाणी पीलवा [राजस्थान] निवासी ने ५०००) की राशि सभा को दान की। यह राशि मूलचन्द बजरगलाल स्थिर निधि के रूप

मे जमा है और इसके ब्याज से आर्य साहित्य प्रकाशित हुआ करेगा।

श्रीयुत घरियालाल जी जानकी गज लश्कर निवासी ने वेद प्रचारार्थ ५०००) की राशि २९-१-६० को दान मे दी।

श्रीयुत ला० जगन्नाथ जी का दान

श्रीयुत ला० जगन्नाथ जी दिल्ली निवासी ने अपनी ५०००) की जीवन बीमा पालिसी इस सभा के नाम मे दान दी हुई है। इस राशि मे से दानी की इच्छानुसार २०००) श्री स्वामी सर्वदानन्द साधु आश्रम अलीगढ को दिए जावेगे।

चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक स्थिर निधि

यह निधि श्री चन्द्रभानु जी रईस तीतरो [सहारनपुर] निवासी की पुण्य स्मृति मे उनके सुपुत्र श्रीयुत म० वेद-मित्र जी जिज्ञासु द्वारा प्रदत्त ५०००) के दान से मथुरा शताब्दी के अवसर पर स्थापित हुई थी। दानी की इच्छानुसार इस राशि के ब्याज से आर्य साहित्य प्रकाशित किया जाता है। अब तक इस निधि से १६ पुस्तके छप चुकी है।

दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार सीरीज

२०-८-५० की अन्तरग सभा के निश्चयानुसार यह निधि श्रीयुत प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय के १३३५~) के दान मे स्थापित हुई थी जिसके इस वष के अन्त मे ७६४)६४ शेष है। यह धन उन्हे दक्षिण अफ्रीका से वहा के आर्य भाइयो की ओर से निजी व्यय के लिए भेट रूप मे मिला था। इस निधि के धन से अब तक 'सनातन धर्म और आर्य-समाज' लाइफ आफटर डैथ तथा 'एली-मेटरी टीचिंग्स आव हिन्दू ईज्म' पुस्तके छपी है।

दयानन्द आश्रम निधि

इस निधि के २२५०) के ब्याज से शुद्ध हुए भाइयो की सहायता की जाती है मुख्यतया विद्यार्थियो को छात्र वृत्तियाँ दी जाती है।

श्रीमती चन्दोदेवी का दान

श्रीमती चन्दोदेवी ने अपना जगपुरा नई दिल्ली स्थित मकान जिसका मूल्य लगभग ८०००) है जिसमे २६७ वर्ग गज भूमि ६० फुट लम्बी ४० फुट चौडी है, अपने पति स्व० श्री कल्लू सैनी की स्मृति मे दान किया था। सभा के नाम १२-५-५५ को रजिस्ट्री हुई। यह सभा के नाम मे परिवर्तित हो चुका है। इस मकान पर श्रीमती चन्दोदेवी के रिश्तेदारो ने अनधिकृत कब्जा कर रखा है। नियमित कब्जा प्राप्त करने के लिए कानूनी कार्यवाही हो रही है।

श्रीयुत अर्जुनलाल जी आचार्य का दान

श्रीयुत अर्जुनलाल जी आचार्य रिटायर्ड गार्ड ने अपना मकान जो सदर बाजार नीमच छावनी मे स्थित है जिसका नम्बर १०३९ तथा मूल्य लगभग १० हजार है, आर्य समाज नीमच छावनी के उपयोग के लिए सार्व-देशिक सभा को दान दिया था।

एक वसीयत

एक सज्जन ने १०००) की अपनी जीवन बीमा पोलिसी इस सभा को दान मे दी हुई है। इसके ब्याज से रघुमल आर्य गर्ल्स हायर सैकेण्डरी स्कूल नई दिल्ली की ९-१० और ११ श्रेणियो की उन छात्राओ को छात्रवृत्ति दी जाया करेगी जो धर्म शिक्षा आदि विषयो मे सर्व प्रथम रहा करेगी।

गंगाप्रसाद गढवाल प्रचार ट्रस्ट

इस सभा के भूतपूर्व प्रधान श्रीयुत प० गगाप्रसाद जी रि० चीफ जज ने २०००) के दान से एक स्थिर निधि स्थापित की हुई है जिसका ब्याज आर्य समाज टिहरी के कार्यो मे व्यय होता है।

उपसंहार

सर्व श्री स्वामी आत्मानन्द जी, स्वामी सत्यानन्द जी, प० इन्द्र विद्यावाचस्पति, रामगोपाल जी विद्यालकार, प० अवध बिहारीलाल, सेठ दीपचन्द जी पोद्दार, प० जयदेव जी मीमासा तीर्थ, बलीराम जी तनेजा, प० विष्णु मित्र, प० मूलचन्द बजरगलाल, म० मामराजसिंह, बा० पीतमलाल, माता लक्ष्मीदेवी जी के निधन से आर्यसमाज की महती क्षति हुई है।

सम्पादक के नाम पत्र

श्री गोविंद राम नाग देव मत्री आर्य समाज वारशिया कोलोनी बडौदा स लिखते है —

'बडोदा नगर मे ता ४ १२ १९६१ सोमवार को राधास्वामी पथ ब्यास (पजाब) के महन्त श्री चरण सिह चद्र जी ने भी श्री मेघराज जी द्वारा सत जी के पास भेजा। पत्रो को देखकर महाराज चरणसिंह का रग फीका हो गया।, और शीघ्र निश्चित समय से पूव ही सत्सग समाप्त कर तीनो पत्र साथ लेकर चले गये, पत्रो का उत्तर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा का निश्चय

सावदशिक आय प्रतिनिधि सभा के कार्यालय ने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के निर्वाचन के सम्बन्ध मे अन्तरग सभा की १४ १ ६२ की बैठक का निश्चय अविकल रूप म प्रकाशित करना आवश्यक समझा है ताकि स ी सभा ना न रह । निश्चय इस प्रकार है —

आय प्रति निधि सभा पजाब के वतमान चुनाव के दोनो पक्षो के प्रतिनिधियो के वक्तव्य सुनने और विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार विमर्श करने के पश्चात् अन्तरग सभा यह अनुभव करती है कि दोनो पक्षो के अधिकारियो और अन्तरग सदस्यो के निर्वाचन से सभा सन्तुष्ट नही है अत यह सभा इन निर्वाचनो की वैधता या अवैधता के सम्बन्ध मे—कोई निर्णय किए बिना यह सुझाव देना उचित समझती है कि दोनो पक्षो के वरिष्ठ प्रतिनिधियो का बुलाकर यह सुझाव रखा जाय कि वे शोघ्र से शीघ्र आपस मे समझौता कर ले और इस बीच म आय प्रतिनिधि सभा पजाब की अन्तरग जिस के अध्यक्ष श्री प० बुद्धदेव जी हैं काम करती रहे।

यदि दोनो पक्ष समझौता न कर सके, तो सावदेशिक सभा के प्रधान जी जब उचित समझ नया चुनाव करा देव।

जी का सत्सग न्याय मन्दिर हाल मे हुआ।

हमने दो पत्र उनके ग्रन्थो स पते देकर शका समाधान केलिए श्रीसुजान सिह जी आर्यद्वारा भेजे जो उनके पास रख कर अपने स्थान पर बैठ गये और एक पत्र श्री पडित प्रताप कुछ भी नही दिया और धीमे से मन्च पर बैठे हुए अपने साथी (ग्रन्थ साहिब का पाठ करने वाले) पाठी से कहा कि आर्यसमाजी आ गये हैं प्रबधको को बडा क्रोध आया और आपस मे आर्यसमाजियो की निन्दा करने लगे, उधर

श्रोताओ मे हलचल मच गई और पूछताछ होने लगी कि आखिर इन पत्रो मे क्या लिखा था जो महाराज उत्तर न दे कर शीघ्र सत्सग समाप्त कर चले गये और आयसमाजियो को लोगो ने घर लिया और धम चर्चा सुन्दर हुई। उपस्थित आयसमाजी यह महानुभाव थे १ प्रो हसराज जी २ प प्रताप चद्र जी ३ रामचद्र जी स्नातक ४ गणपतराय जी ५ सुजान सिंह जी ६ मघ राज जी ७ ज्ञानचद जी ८ किशनचद तथा इनके अतिरिक्त वारशीया आयसमाज के सदस्य अच्छी सख्या म हाजिर थ

सत्सग समाप्ति के बाद उस स्थल पर द्वार के बाहर सडक पर हमने राधा स्वामी मत दपण (लेखक ब्रह्मचारी जगन्नाशचद्र विद्यार्थी) पुस्तक श्री मेघराज जी को बिक्री के लिए दी। राधा स्वामी मत दपण पुस्तक की ८ प्रतिया बिकी और बिक रही थी पर इतने म कुछ राध स्वामी अनुयायी आय और श्री मघराज जी का धमकाया और कहा कि हमने तीन चार बार इस पुस्तक क लखक को दिल्ली म पीटा है और अब तुम्हारा नबर है पर श्री मेघ राज जी के दो आय वार रक्षक थ उन्होने उनकी रक्षा का और वे क्रोधित होकर १ प्रति राधास्वामी मत खरीद कर फाड कर चले गये

अब जो हमने उनसे प्रश्न किए थे वह पत्र मे लिख रहे है और हमारा निवेदन आय जगत से है कि वह हर जगह जहा भी इस मत के मत जाय इसी प्रकार आयबन्धु जाकर इन वेद के निदको से प्रश्न कर जिससे साधारण जनता इन से बच आप इस काय को उत्तम रीति से कर सकते है सो आप से भी हमारी प्रायना है कि कोई सुदर सफल योजना बनाकर आय जगत के आगे रख जिस से असत्य वादी मतो का नाश हो। सावदेशिक पत्र नवम्बर १९६१ की सम्पादकीय टिप्पणी मे सफेद झूठ पाठको ने पढ़ी होगा विचारे कि एस पाखण्डी मतो से ससार का अहित देखकर आयसमाज चुप रहे ? यदि हा तो फिर आयसमाज के छठ नियम का क्या अथ यदि नही तो फिर साव देशिक अवदिक मत नाशक योजना बनाव।

प्रश्न

(१) खुदा और परमेश्वर दोनो पैदा करने वाले सत है और इनकी गति का वेद दानो नही जान सकत (सार वचन हिदायत नामा पृ ४०१)

(२) ज्ञान ध्यान और जोग वराग तुच्छ समझ मेने इनको यागा (सार वचन २ १ ११)

(३) वद शास्त्र स्मृत पुराना पढ़ा इनका विरथा जाना (सार बचन ८ १७ १२)

(४) षट शास्त्र और सिमित पुराना लीक पीटे छोड़े नही मन को (सार वचन ११ ६ ६)

( ) षट शास्त्र और चारो बद यह सतन के लिय निषध [सा २४ १ ६५]

(६) सतजग त्रता द्वापर बीता काहु न जाना शब्द की रीता कलजगमे स्वामी परगट करके शब्द पुकारी (सार छन्द ७ १ ४ ५)

(७) जग बिच्छु तिरिया नागन इन सग रहत मिलीत (सा ३१ ६ १५)

इनका अथ बताकर व्याख्या कीजिए

विविध समाचार

ग्राम मुबारिकपुर (मेरठ) मे ५५ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री बनारमी लाल आर्य ने ३१-१२-६१ को ग्राम मुबारिकपुर जिला मेरठ मे एक शुद्धि सम्मेलन का आयोजन किया जिसमे देहली से श्री रामजीदास कलघारा प्रधान दलित वर्ग सघ मेरठ, श्री हरिप्रसाद वानप्रस्थी, श्री दीपचन्द व मेहरसिह भजनोपदेशक तथा श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा ने जाकर भाग लिया। शुद्धि सस्कार श्री हरिप्रसाद वानप्रस्थी ने कराया जिसमे ५५ ईसाइयो ने वैदिक धर्म की दीक्षा ले कर अपनी पुरातन हरिजन बाल्मीकि बिरादरी मे प्रविष्ट हुए। अनती आर्य-समाज के मन्त्री श्री मागेराम जी की प्रधानता मे एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमे अनेक विद्वानो के भाषण हुए। ग्राम के प० तुलसीराम भगत व चौ० कुडेसिह व भीमसिह आदि ने सम्मेलन मे विशेष सहयोग दिया। श्री हरिदत्त शर्मा ने भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की ओर से सब का धन्यवाद तथा शुद्ध हुए भाइयो का स्वागत किया। तत्पश्चात् सहभोज हुआ जिसमे सभी बिरादरियो के आदमियो ने भोजन किया।

२८-१२-६१ को कस्बा खेकड़ा जिला मेरठ मे १०३ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की ओर से श्री म० डालचन्द जी आर्य उपदेशक शुद्धि सभा ने कस्बा खेकडा (मेरठ) मे एक शुद्धि सम्मेलन का आयोजन किया जिसमे १०३ हरिजन ईसाइयो ने वैदिक धर्म की दीक्षा लेकर अपनी पुरातन चमार जाति मे प्रवेश किया। शुद्धि सस्कार श्री प० निरजन देव जिला उप प्रतिनिधि सभा मेरठ ने कराया। देहली से श्री प० दीपचन्द शर्मा ने भाग लिया। अन्य महानुभाव जो सम्मेलन मे उपस्थित थे उनमे श्री भगवद्दत्त जी गोयल मेरठ तथा श्री ला० प्यारेलाल जी हापुड व श्री बलवीर सिंह जी बेधडक तथा आर्य समाज खेकडा के प्रधान बाबू श्री ताराचन्द जी व प्रहलादसिंह जी आदि के नाम उल्लेखनीय है] शुद्धि के पश्चात् सभा हुई जिसमे उक्त महानुभावो के भ षण हुए।

नारायणदास कपूर
प्रधान मन्त्री

श्री प० जियालाल जी के निधन पर शोक सभा

अजमेर के प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता तथा आर्य समाज के प्रमुख नेता श्री प० जियालाल जी के निधन पर यहा के प्राय सब सामाजिक धार्मिक एव राजनैतिक और शिक्षण सस्थाओ और प्रमुख नागरिको की ओर से एक शोक सभा श्री डाक्टर अम्बालाल जी शर्मा की अध्यक्षता मे ता० २१ दिसम्बर को की गई जिसमे श्री सरदार बहादुर भगवान सिंह जी, वॉर एट ला सैयद अब्दुल रज्जाक भूत पूर्व असिस्टेन्ट कमिश्नर, रेडक्रास के सैक्रेटरी सैगानी जी एडवोकेट आदि महानुभावो ने स्वर्गीय श्री पडित जी की महान सार्वजनिक सेवाओ तथा साहस पूर्णकार्यों के प्रति नगर निवासियो की कृतज्ञता प्रकट की और ऐसे कर्मठ कार्य कर्ता के निधन पर शोक सवेदना प्रकट करते हुये उन का उचित स्मारक बनाने के अनेक सुझाव दिये। तदनुसार ता०२४ दिसम्बर को आर्य समाज शिक्षा सोसायटी, दयानन्द अनाथालय तथा आर्य समाज अजमेर की कार्य कारिणी सभाओ की एक सम्मिलित बैठक की गई जिसमे सर्व सम्मति से निश्चय

आर्य पत्रों के संचालकों एवं सम्पादकों के समक्ष प्रस्ताव

आज के युग मे आर्यसमाज की विचार-धारा तथा वैदिक तथ्यो के प्रचार तथा प्रसार की एक बडी भारी आवश्यकता है। व्यर्थ तथा काल्पनिक अडग बडग विचारो के आधार पर कोई मत जीवित नही रह सकता अतएव इस विज्ञान के युग मे वैदिक सत्य ही जीवन के पथ-प्रदर्शक बन सकते है।

ऊपर की वास्तविकता के अनुसार आयसमाज को शक्तिशाली बनाना होगा तथा इसके लिए सवप्रिय समाचार पत्रो को सुसघटित करके उनको आर्थिक कष्टो मे मुक्त करना होगा। इस बात मे कुछ अश तक सत्यता है कि कुछ समाचार पत्र कभी भूल से अवैदिक विचार धारा भी दे देते हैं। पर फिर भी आर्य समाज के कायकर्त्ताओ तथा लेखको और समाचार पत्र पत्रिकाओ द्वारा बहुत प्रभावशाली तथा सुन्दर भाव दिये जाते है तथा आयसमाज के पत्र पत्रिकाएँ मराठी, गुजराती, हिंदी, उर्दू तथा अ ग्रेजी के द्वारा अच्छा प्रभाव डाल रहे है। पर जिनका परिचय सबको नही, आर्य समाजो मे भी यह सब पत्र पत्रिकाएँ नही मगवाई जाती। मैं इस न्यूनता को दूर करने के लिए निम्न मत प्रस्तावित करता हूँ।

(क) सब आर्य समाजे तथा आर्य सस्थाएँ सब आर्यसमाजी पत्रपत्रिकाएँ मगवावे। (ख) प्रत्येक पत्रपत्रिका आर्यसमाज स्थापना दिवस अङ्क निकाले तथा उसकी तैयारी अभी से प्रारम्भ कर दी जावे। प्रत्येक पत्रपत्रिका की परिचय सूची प्रत्येक पत्रिका स्थापना दिवस अङ्क मे छापे। इसके लिये चाहें तो आप मुझे अपनी पत्रिका का पूर्ण परिचय भेज दे तथा मै जितनी पत्रिकाओ से परिचित हूँ सबको लिख दू गा कि आपकी पत्रिका का परिचय छाप दे अथवा आप स्वय सबको लिख दे। (घ) आप प्रयत्न करे कि लेख वैदिक सस्कृति तथा आर्यसमाज की विचार-धारा पर ही हो तथा उनके अन्दर नवीनता हो। (ड) मेरी आपसे यह अपील है कि अपनी पत्रिका को आयसमाजियो के व्यक्तिगत वैर विरोध

हुआ कि एक '**प० जियालाल स्मारक निधि**' की स्थापना की गई जिसमे उसी समय ५००० रुपये एकत्रित हो गये, जिसमे २००० रुपये श्री आचार्य दत्तान्त्रेय वाब्ले, ९००० रुपये डा० सूर्यदेव शर्मा तथा अन्य कई महानुभावो ने धन देने का वचन दिया। स्मारक निधि के अध्यक्ष आचार्य दत्तात्रेय जी वाब्ले तथा सयोजक डा० सूर्यदेव जी शर्मा तथा श्री प० वृजनन्दन जी शर्मा एम०ए० नियुक्त किये गये। इस निधि मे वे सब महानुभाव कृपया कुछ न कुछ धन श्रद्धा पूर्वक निम्न पत्ते पर शीघ्र भेजने की कृपा करे जो कभी भी श्री जियालाल जी के सम्पर्क मे रहे अथवा उन से प्रेम रखते थे।

इस स्मारक निधि मे जो धन एकत्रित होगा उनसे श्री प० जियालाल जी की अतिम इच्छानुसार एक उत्तम "**आर्य उपदेशक विद्यालय**" अजमेर मे स्थापित किया जायगा तथा पडित जी की एक प्रस्तर मूर्ति(statue) दयानन्द कालेज अजमेर मे लगाई जावेगी तथा उन का एक जीवन चरित्र प्रकाशित किया जायगा। अत जिन सज्जनो को श्री प० जियालाल जी के सम्बन्ध मे कोई भी बात ज्ञात हो वह अपने सस्मरण निम्न पत्ते पर लिख भेजने की कृपा करे ताकि उनके जीवन मे सम्मिलित किया जा सके।

डा० सूर्य देव शर्मा एम०ए०
मत्री
आर्य समाज अजमेर

का अखाड़ा न बनने दे तथा नही अनाय विचार छपने द । सिद्धान्तो का प्रसार करना ही ध्येय हो । निराशावादी विचार जसे कि आयसमाज की शिथिलता आदि के भी नहा छपने च हिय । ध यवाद ।

भगवान्दास
प्रिंसिपल
दयानन्द कालेज
शोलापुर

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की

पुस्तकों का सूची-पत्र

निम्न प्रकाशन नेट मूल्य पर दिये जायगे

१	ऋग्वेद संहिता सजिल्द	६)
२	अथर्ववेद संहिता सजिल्द	८)
३	यजुर्वेद संहिता सजिल्द	४)
४	सामवेद संहिता सजिल्द	३)५०
५	सत्यार्थ प्रकाश	२।)
६	ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका	२॥)
७	संस्कार विधि	१।)
८	आर्याभिविनय	।॥)
९	पचमहायज्ञविधि	)७
१०	कन्नड सत्यार्थप्रकाश	२।)
११	मराठी सत्यार्थप्रकाश	१।-
१२	कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द	॥=)
१३	पचमहायज्ञविधि भाष्यम्	५)

निम्न पुस्तको पर निम्न प्रकार कमीशन दिया जायगा।

१०) से २५) रु० तक १०% प्रतिशत

२५) से ऊपर २५०) तक २० प्रतिशत

२५०) से ऊपर १०००) तक २५ प्रतिशत

१०००) से ऊपर २०००) तक ३० प्रतिशत

२०००) से ऊपर ३३½ प्रतिशत

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि कृत

१	यम पितृ परिचय	२)
२	वैदिक ज्योतिष शास्त्र	१॥)
३	वैदिक राष्ट्रीयता	।)
४	अभ्यास और वैराग्य	१)६२
५	बाल संस्कृति सुधा	)५०
६	वैदिक ईशवन्दना	।-)॥
७	वैदिक योगामृत	॥=)
८	दयानन्द दिग्दर्शन	।॥)
९	वेदो मे दो बडी वैज्ञानिक शक्तियां	।॥)
१०	निज जीवनवृत्त वनिका अजिल्द	)७०
	,, सजिल्द	)७५
११	बृहत् विमान शास्त्र सजिल्द	१०)
१२	बाल जीवन सोपान ,,	१।=)
१३	छान्दोग्य उपनिषद् कथा	३)
१४	दार्शनिक अध्यात्म तत्व	१॥)
१५	वेदान्त दर्शनम् (संस्कृत मे)	३)
१६	वैदिक वन्दन	५)

ओ३म् ध्वज

ओ३म् ध्वज के लिए आर्यजनता की मांग की पूर्त्यर्थ सभा ने ओ३म् ध्वज का निर्माण का कार्य अपने हाथ में ले लिया है और उसने शुद्ध खादी के निम्न डिजाइनो के ओ३म् ध्वज निर्माण करा लिए है। उनको लागत मूल्य पर आर्यजनता को पहुँचाने का सभा ने निश्चय किया है। अतः आर्य जनता को उन्हे तत्काल मंगाकर अपने समाज मन्दिर और आर्य संस्थाओ पर लगाने चाहिए।

ओ३म् ध्वज २७ इंच × ४०॥ इंच मूल्य ३)

ओ३म् ध्वज ३६ इंच × ५४ इंच मूल्य ६)

ओ३म् ध्वज ४५ इंच × ६७॥ इंच मूल्य ८)

मंगाने की दशा मे १) अगाऊ भेज देवे।

आर्यसमाजो को अविलम्ब आर्डर भेज कर प्रतियां सुरक्षित करा लेनी चाहिए जिससे बाद में उन्हे पुस्तक न मिलने की शिकायत का अवसर न रहे।

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट कृत

१७	कर्मव्यवस्था	४)
१८	मन मन्दिर	१)
१९	दयानन्द दीक्षा शताब्दी का सन्देश	।-)
२०	चरित्र निर्माण	१=)॥
२१	ईश्वर उपासना और चरित्र निर्माण	।=)॥
२२	वैदिक विधान और चरित्र निर्माण	=)॥
२३	दौलत की मार	।)
२४	अनुशासन का विधान	।)
२५	धर्म और धन	।)
२६	सत्यार्थप्रकाश (उर्दू) मूल्य	३)५०
२७	उत्तराखण्ड के वन पर्वतो मे ऋषि दयानन्द अजिल्द	)६२
	सजिल्द	)७५
२८	आर्यसमाज प्रवेश पत्र मूल्य	१) सैकडा

श्री महात्मा नारायण स्वामी कृत

२९	योग रहस्य	१।)
३०	मृत्यु और परलोक	१)
३१	विद्यार्थी जीवन रहस्य	॥=)
३२	प्राणायाम विधि	।=)
३३	उपनिषद	

ईश ।=) केन ॥) कठ ॥) प्रश्न ।=)

मुण्डक ।=) माण्डूक्य ।) एतरेय ।)

तैत्तिरीय १)

रजिस्टर्ड नं० डी ५१

३४ बृहदारण्यकोपनिषद् ३)

श्री प० गगा प्रसाद उपाध्याय कृत

३५ आर्योदय काव्यम् पूर्वार्द्ध १॥)
३६ उत्तरार्द्ध १॥)
३७ वैदिक सस्कृति १।)
३८ मुक्ति से पुनरावृत्ति ।)
३९ आर्यसमाज और सनातनधर्म ।)
४० आर्यसमाज की नीति ।)

श्री प० इन्द्रजी द्वारा लिखित

४१ मेरे पिता ४)
४२ सरला की भाभी २)
४३ सरला की भाभी [दूसरा भाग] २)५०
४४ आत्मबलिदान २)
४५ जमीदार २)
४६ महर्षि दयानन्द जी की जीवनी १) ५
४७ सम्राट रघु २)
४८ आधुनिक भारत मे वक्तृत्व कला की प्रगति १) ५
४९ स्वराज्य और चरित्र निर्माण १)२५
५० स्वतन्त्र भारत की रूपरेखा १)५०
५१ जीवन की झाकिया (प्रथम खण्ड))५०
५२ (द्वितीय खण्ड))५०
५३ नौकरशाही जेल के अनुभव १)
५४ आर्यसमाज का इतिहास म० (प्रथम भाग) ६)
५५ (द्वितीय भाग))
५६ आर्यवीर दल बौद्धिक शिक्षण ≡)

श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक कृत

५७ आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ॥)
५८ कथा माला ॥)
५९ सतति निग्रह १।)
६० नया ससार)
६१ आदर्श गुरु शिष्य ।≡)

श्री प० धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड कृत

६२ स्त्रियो का वेदाध्ययन अधिकार १।)
६३ भक्ति कुसुमाञ्जली ॥)
६४ हमारी राष्ट्र भाषा व लिपि ।≡)

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द कृत

६५ आर्यसमाज के महाधन २॥)
६६ वेद की इयत्ता १॥)

श्री लाला ज्ञानचन्द

६७ धर्म और उसकी आवश्यकता १)
६८ वर्णव्यवस्था का वैदिक रूप १॥)
६९ इजहारे हकीकत (उर्दू मे) ॥।≡)
७० सत्य निर्णय १॥)

विविध

७१ अरब मे मेरे सात साल (प० रुचिरामजी) १)
७२ विरजानन्द प्रकाश (भीमसेन शास्त्री) २)
७३ वेद रहस्य (ले० महात्मा नारायण स्वामी) २)५०

प० मदनमोहन विद्यासागर कृत

७४ जन कल्याण का मूल मन्त्र ॥)
७५ सस्कार महत्त्व ॥।)
७६ वेदो की अन्त साक्षी का महत्त्व ॥)
७७ आर्य घोष (परिवर्द्धित सस्करण))६० न० प०
७८ आर्य स्तोत्र ॥)

अन्य विद्वानो कृत

७९ स्वाध्याय सन्दोह (स्वा० वेदानन्द तीर्थ) ४)
८० स्वराज्य दर्शन (प० लक्ष्मीदत्त दीक्षित १)
८१ राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
८२ भूमिका प्रकाश (सस्कृत मे)
(प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री) १॥)
८३ एशिया का वनिस (स्वा० सदानन्द) ॥।)
८४ दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १॥)
(श्री कृष्णचन्द्र विरमानी)
८५ भजन भास्कर
सग्रहकर्त्ता प० हरिशकर शर्मा कविरत्न) १॥।)
८६ सनातन शुद्धिशास्त्र (गोविन्दप्रकाश शास्त्री) २)
८७ आर्य डायरेक्टरी (पुरानी १।)
८८ सार्वदेशिक सभा का २७ वर्षीय कार्य
विवरण अजिल्द २)
८९ आर्य पर्व पद्धति (प० भवानीप्रसाद कृत) १।)
९० आदर्श चरित्र)७५

प० राजेन्द्र (अतरौली कृत)

९१ गीता विमर्श ॥।)

ईसाई प्रचार निरोध साहित्य

९२ ईसाई षडयन्त्र ।)
९३ ईसाई पादरी उत्तर दे दर २) सकडा
९४ ईसाई पादरियो के कुचक्र से देश को बचाओ
दर २) सकडा

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार दयानन्द भवन, नई दिल्ली १

सम्राट प्रेस पहाडी धीरज दिल्ली मे मुद्रित व रघुनाथ प्रसाद जी पाठक मुद्रक और प्रकाशक के लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन नई दिल्ली—१ से प्रकाशित।

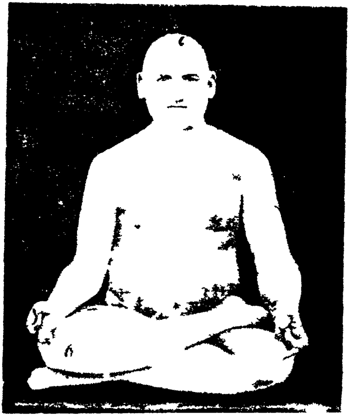
* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

ऋ — षि



बोधा — ङ्क

जो न हटा मुख फेर बढ़ा जीवन भर आगे,
जिसका साहस हेर, विघ्न, भय संकट भागे।
सबल सत्य की हार, अनृत की जीत न होगी,
ऐसे प्रबल विचार, सहित विचरा जो योगी।
उस दयानन्द ऋषिराज का प्रकृत पाठ जनता पढ़े।
प्रभु 'शंकर' आर्य समाज का, वैदिक बल गौरव बढ़े॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

॥ ओ३म् ॥
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

वार्षिक मूल्य ६) विदेश से वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ३८ सृष्टि संवत् १९७२९४९०६० १९६२ मार्च फाल्गुन २०१८ अंक १।

विषय-सूची

* सम्पादक
काली चरण आर्य सभा मन्त्री

* सहायक सम्पादक
रघुनाथप्रसाद पाठक

* प्रकाशक व मुद्रक
रघुनाथप्रसाद पाठक

* कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द भवन, नई दिल्ली
फोन २२४७७१

* मुद्रक
सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली।
फोन. २२२५६३

सार्वदेशिक

सम्पादकीय

दयानन्द महान् क्यों थे ?

महर्षि दयानन्द सरस्वती वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक और ईश्वरीय ज्ञान मानते थे। वेद की निष्ठा और एकमात्र ईश्वर की उपासना में वह अडिग रहे। कोई शक्ति वा कोई प्रलोभन उन्हे विचलित न कर सके। वेद में ही उन्हे सत्ज्ञान और सन्मार्ग के शुभ्र दर्शन हुए। इसीलिए उन्होने अजेय दृढता के साथ उनका अवलम्बन किया। वेद और एक ईश्वर की उपासना के विषय मे वह किसी से किसी भी प्रकार से किसी भी समय समझौता करने के लिए उद्यत न हुए। उनकी इस दृढ़ता के कारण अनेक बड़े-बड़े व्यक्ति और बड़े-बड़े सगठन जिनके साथ उनका घनिष्ठ सम्पर्क रहा उनसे अप्रसन्न हुए और उन्होंने उनकी अप्रसन्नता एवं उनसे सम्बन्ध विच्छेद तक की चिन्ता न की। सत्पथ पर यह दृढ़ता उनकी महत्ता का प्रथम लक्षण था।

अनेक महन्तों ने उन्हें अपनी विपुल सम्पत्ति के प्रलोभनों में आकृष्ट करके उन्हें अपना चेला बनाने का यत्न किया। उदयपुर के महाराणा ने लाखों रुपये वार्षिक की आय की एक लिंग मन्दिर की सम्पत्ति उनके अर्पण करनी चाही; इस शर्त के साथ कि वह मूर्ति पूजा का खडन छोड दें। महर्षि दयानन्द जैसे रूपवान्, कान्तिमान्, बलवान् और प्रतिभावान् सन्यासी के लिए हर प्रकार का भौतिक एव ऐन्द्रिय सुख समुपस्थित रहा वा रह सकता था। परन्तु वह प्रत्येक प्रकार के लुभावने और प्रबलतम प्रलोभनों से लोहा लेते रहे और ब्रह्मचर्य, तपस्या और श्रेयमार्ग की भट्टी में अपने शरीर और आत्मा को कुन्दन बनाते रहे। भीतर और बाहर के प्रबलतम प्रलोभनों की आँधी में निश्चल खड़े रहना यह था महर्षि की महत्ता का दूसरा लक्षण।

महर्षि दयानन्द को रचनात्मक कार्य के लिए केवल ८, ९ वर्ष का समय मिला। इस थोड़े से समय में उन्होंने सत्यार्थप्रकाशादि अनेक ग्रन्थ लिखे, वेद भाष्य किया, अनेक सफल शास्त्रार्थ किये, सस्थाए स्थापित की, देश के कोने-कोने में घूम कर व्याख्यान दिए, समाज कल्याण की योजनाएँ बनाईं, उन्हें क्रियान्वित किया। जब इस थोड़े से समय के उनके महान् कार्य पर दृष्टि जाती है, तब अनायास ही 'चमत्कार' शब्द मुँह से निकल जाता है। इस महती व्यस्तता मे कभी भी उनके चेहरे पर शिकन न देखी गई। यह था उनकी महत्ता का तीसरा लक्षण।

महर्षि दयानन्द ने मत-मतान्तरों के जालों को छिन्न-भिन्न और उनके दुष्प्रभावों को दूर करके स्वस्थ; धार्मिक एव सामाजिक वातावरण के निर्माण और वैदिक धर्म एव आर्य सस्कृति को उसके वास्तविक स्वरूप में प्रतिष्ठित करने का जो स्तुत्य कार्य किया उसके कारण विरोध का होना स्वाभाविक था। विरोध और अपवाद

की आँधी उठी। उन्हे नास्तिक कहा गया, ईसाइयो का एजेन्ट बताया गया, उनके ऊपर गालियो और पत्थरो की वर्षा की गई और न जाने उन्हे क्या-क्या कहा गया परन्तु वह बडे शान्त और धीर बने रहे यहाँ तक कि अपने विषदाताओ के प्रति भी प्रतिशोध और रोष की भावना को मन मे स्थान न दिया और कोमल एव दयालु बने रहे। इस कोमलता के साथ-साथ उनकी निर्भीकता भी देखते ही बनती थी। जब राजा कर्ण सिंह का उन्मत्त प्रणाम सीमा से बाहर चला गया और तलवार की धार पर पहुँच कर प्रहार करने पर उतारू हो गया तो उन्होने सहस्रो लोगो के समक्ष उस तलवार को आक्रामी क हाथ से छीनकर उसके टुकडे-टुकडे कर दिए। उन्होने कभी धमकियो और वक्र भ्रुकुटियों के समक्ष आत्म-सात न किया। भारी से भारी बोझ को खुशी-खुशी वहन करना, भय और प्रलोभन के मध्य निडर बने रहना यह था महर्षि दयानन्द की महत्ता का चौथा लक्षण।

महर्षि का जीवन और कार्य सत्य पर अवलम्बित रहा। वह मन, वचन और कर्म से सत्यमय बने रहे और असत्य के साथ एक क्षण के लिए भी समझौता करने को उद्यत न हुए। उनका समस्त जीवन सत्य की खोज और उसके प्रसार पर अर्पित रहा। सत्य की रक्षा के लिए उन्हें कोई भी कष्ट वा त्याग बडा न देख पडा क्योकि उनका इष्ट देव ईश्वर वा सत्य ही तो था। यह था स्वामी जी की महत्ता का पाँचवा लक्षण।

दयानन्द ने अब से ५०-६० वर्ष पूर्व देश और जाति के कल्याणार्थ जो प्रोग्राम इगित किया था वह एक-एक करके अपना लिया गया है वा अपनाया जा रहा है। उनकी दिव्य दृष्टि ने देखा कि जबतक धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक दृष्टि से लोग उच्च, धर्म की दृष्टि से बुद्धि-वादी न होंगे, अन्धविश्वास और धार्मिक माया जालो से मुक्त न होगे, जात-पात आदि की कुरीतियाँ दूर न होगी जब तक सामाजिक दृढता न आयगी और राजनैतिक दासता दूर होकर स्वराज्य सुराज्य मे परिणत न होगा तब तक देश और जाति का कल्याण सम्भव नही है। अपने समय से आगे बढा होने के कारण ससार के महान्-तम व्यक्तियो मे उनका स्थान सुरक्षित हुआ। अपने समय से आगे बढा हुआ होना स्वामी जी का महत्ता का छटा लक्षण था।

स्वामी जी का समस्त कार्य ईश्वरार्पण था। लोकोपकार और वैदिक सत्य का प्रकाश ही उनके लिए प्रभु की सेवा थी। —ईश्वर मे अटूट विश्वास और अपने दिव्यगुण और अभय युक्त जीवन एव कार्य को उस पर न्योछावर रखना उनकी महत्ता का सातवाँ लक्षण था।

ऐसे महान् ऋषि के चरणो मे हम अपनी विनीत श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

रघुनाथ प्रसाद पाठक

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

दूसरे विवाह के लिए धर्म-परिवर्तन

नवभारत टाइम्स उपर्युक्त शीर्षक से लिखता है —

एक पत्नी के जीवित होते हुए दूसरे विवाह के लिए धर्म-परिवर्तन की जो अनैतिक एवं अस्वास्थ्यजनक प्रवृत्ति हिंदुओ में पनप रही है उसे अनुत्साहित करने सम्बन्धी विधेयक को स्थगित करने के निश्चय मे भारत-सरकार ने अपना कुछ भी लाभ देखा हो, परन्तु जन-साधारण पर उसके इस निश्चय का कुछ अनुकूल प्रभाव नहीं पडेगा। वह इससे इसी परिणाम पर पहुँचेगी कि राजनीतिक क्षत्र मे क्या सरकार और क्या विरोधी दल सभी अवसरवादी होते हैं। उसके लिए किसी एक को दोषी नही कहा जा सकता।

जो चीज मूलत बुरी है वह हर परिस्थिति में बुरी है। उससे अपने किसी तात्कालिक लाभ के लिए किन्ही विशिष्ट परिस्थितियो मे समझौता करना अनैतिक हैं। जब सरकार दूसरे विवाह के लिए धर्म परिवर्तन की प्रवृत्ति को अनुचित समझती है तो उसको रोकने सम्बन्धी विधेयक को कुछ या अधिक काल तक के लिए स्थगित करने का क्या मतलब ? क्या यह इस बात का सूचक नही कि इस स्थगन के निश्चय के पीछे सरकार का कुछ ऐसा स्वार्थ है जिसे वह बुराई के उन्मूलन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण समझती है। जिस सरकार का घोषित उद्देश्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना है उसके इस दृष्टिकोण की प्रशसा कौन करेगा ? वह तो वस्तुत उसके घोषित उद्देश्य के एकदम विपरीत है।

जब तक हिन्दू कोड बिल स्वीकृत नही हुआ था एक-दो राज्यों को छोड कर शेष राज्यो मे हिन्दुओ को एक पत्नी के रहते हुए दूसरा विवाह करने की छूट थी। अब ऐसी स्थिति नही है। यदि कोई हिन्दू अब ऐसा कार्य करता है तो वह कानून की दृष्टि मे अपराधी है। इसलिए दूसरा विवाह करने पर भी अपराधमुक्त रहने के लिए हिन्दुओ मे यह प्रवृत्ति बढ रही है कि वे मुसलमान बन जाय। मुसलमानो मे शरियत के अनुसार चार विवाह तक करने की छूट है। एक पत्नी के रहते हुए दूसरा विवाह करने के लिए दरवाजा खुला है उसका लाभ उठाने की प्रवृत्ति हिन्दुओ मे होना स्वाभाविक है, किन्तु यह प्रवृत्ति अत्यन्त निन्दनीय है और उसकी पूर्ति के लिए जो दरवाजा खुला है वह अविलम्ब बन्द होना चाहिए। यदि भारत-सरकार ने केवल हिन्दुओ के लिए ही नही अपितु समस्त देशवासियो के लिए कोड बिल बनाया होता तो इस प्रकार की कोई समस्या ही उत्पन्न न होती।

धर्म-परिवर्तन तो विश्वास का विषय है। यदि वह किसी भौतिक स्वार्थ की सिद्धि के लिए किया जाता है तो धर्म की इससे अधिक अवहेलना क्या हो सकती है ? भूतकाल मे ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिसमे हजारो हिन्दुओ ने भय अथवा आर्थिक सुख-सुविधाओं के लोभ से धर्म-परिवर्तन कर लिया। दूसरे विवाह के लिए धर्म-परिवर्तन की प्रवृत्ति भी इसी श्रेणी मे आती है। यद्यपि हमारी सरकार धर्मनिरपेक्ष है और भारत के प्रत्येक नागरिक को धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है, किन्तु इस स्वतन्त्रता की आड मे धर्म का जो घोर उपहास तथा एक स्वस्थ सामाजिक नियम की अवहेलना हो रही है उसके प्रतिकार मे सरकार को कोई ढिलाई नही करनी चाहिए। जब वह यह मानती है कि धर्म-परिवर्तन की यह स्वार्थ-प्रेरित प्रवृत्ति बुरी है तो उसके उन्मूलन मे देर क्यो ?

दूसरे विवाह के लिए धर्म-परिवर्तन को अनुत्साहित करने सम्बन्धी विधेयक को सरकार ने आम

चुनाव होने तक स्थगित करने का निश्चय किया। सन्देह नहीं कि मुसलमान इससे खुश हुए होंगे और उन्हें कम से कम तब तक के लिए स्वधर्मावलम्बियों की संख्या बढ़ने का विश्वास रहेगा, किन्तु इससे यह बात छिपी नहीं रह जाती कि सरकार ने यह निश्चयमात्र अल्पसंख्यकों के वोट जीतने के लिए किया है। यदि आम चुनाव से पूर्व उक्त विधेयक स्वीकृत हो जाता तो कांग्रेस के लिए चुनाव परिणाम पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़े बिना न रहता, पर क्या केवल इस बात के लिए उसका स्थगित किया जाना उचित कहा जा सकता है ?

सरकार ने धर्म, जाति और भाषा आदि साम्प्रदायिक आधारों पर चुनाव लड़ना गैर-कानूनी घोषित कर दिया है। राष्ट्रीय एकता तथा एक स्वस्थ चुनाव के लिए यह आवश्यक भी है, परन्तु चुनाव जीतने के लिए शासक दल की जो गतिविधियां है वे इसके अनुकूल नहीं हैं। वह अप्रत्यक्ष तरीको से उक्त आधारों का दोहन करने में ज़रा भी संकोच नहीं करती। धर्म-परिवर्तन रोकने सम्बन्धी विधेयक के स्थगन का निश्चय उसका एक उदाहरण है। इस बात पर कौन विश्वास करेगा कि इस निश्चय का एकमात्र उद्देश्य एक वर्ग विशेष के वोटों को जीतने से कुछ भिन्न है।

यह बुराई किस प्रकार दूर हों ?

सड़कों व गलियो में स्त्रियों के साथ छेड़-छाड़ करना या उन्हे तंग करना हमारी नैतिक भावना के दिवालियापन का द्योतक होता है। इन घटनाओं का अनुपात नगरों में अपेक्षाकृत अधिक होता है। अधेड़ आयु की स्त्रियों की तुलना में स्कूलों और कालेजों को जाने वाली लड़कियाँ गुंडों की मनमानियों का अधिक लक्ष्य बनती हैं।

इस बुराई ने व्यापक और भयंकर रूप धारण किया हुआ है जिसके निराकरण के अनेक उपाय प्रकाश में आते रहते हैं। जब कभी पुलिस गुंडों को पकड़ने में समर्थ हो जाती है तो कुछ अधिकारी उनको समुचित पाठ पढ़ाने में नहीं झिझकते। मुंह काला किया जाकर बाजारों और गलियों में उनका घुमाया जाना भी लोगो को देखने को मिल जाता है। परन्तु जनता का अपराध के प्रति आवेश और लड़कियों के प्रति सहानुभूति की भावनाएँ इस ढंग से उतनी जाग्रत नहीं होती जितनी पीड़ित देवियों और लड़कियों के द्वारा गुंडों की चप्पलों और जूतों से मरम्मत करने पर होती हैं। अपराधियों को सार्वजनिक स्थानों पर मारने पीटने और उनका मुंह काला करके भरी बाजार मे घुमाना कम कठोर दंड नहीं है। हो सकता है कि वह गुंडे पुनः इस प्रकार का अपराध न करें परन्तु सभी गुंडे न तो पुलिस द्वारा पकड़े जाते हैं और नाही पीड़ित देवियों के द्वारा दंडित ही हो पाते हैं इसलिए इन घटनाओं की पुनरावृत्ति होती रहती है। यह भी आवश्यक नहीं है कि दंडित हुये गुंडे पुनः इस कुकर्म में प्रवृत्त न हों।

इस प्रकार के अपराधों के निराकरण के लिये हमें उन सामाजिक तत्त्वों को भी लक्ष्य में रखना होगा जो इनके मूल मे क्रियाशील होते हैं। स्त्री पुरुषो का आपस में अधिक मिलना-जुलना, कुत्सित साहित्य पढ़ना, सिनेमा के अश्लील चित्र देखना और अभिभावको द्वारा अपने बच्चो में अच्छी आदतें डालने की उपेक्षा का किया जाना आदि २ ऐसे तत्त्व है जिनके दुष्प्रभाव के कारण नवयुवकों में स्त्रियो के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न नहीं होती और जिनमे यह भावना होती है उनकी यह भावना भी नष्ट हो जाती है। इस बुराई के लिए देवियाँ और लड़कियाँ भी आंशिक रूप मे उत्तरदाता होती हैं। सार्वजनिक स्थानो पर पुरुष वर्ग का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने की कुछ देवियो और लड़कियो की इच्छा और उसके फलस्वरूप आकर्षण उत्पन्न करने वाली वेश-भूषा, हाव-भाव एवं शब्दावली भी इस बुराई को प्रोत्साहन प्रदान करती हैं।

इन दूषित तत्त्वों का निराकरण आवश्यक है परन्तु यह एक दो दिन का कार्य नहीं है। इसके निराकरण के लिए भगीरथ यत्न करना होगा और घर तथा स्कूल से यह कार्य आरम्भ करना होगा। इस बीच में बाह्य-उपचार की आवश्यकता बनी ही रहेगी। पंजाब में पुलिस स्तर पर ठोस कार्यवाही किए जाने का निश्चय हुआ है। पिछले दिनों चंडीगढ़ में आयोजित एक पुलिस सम्मेलन में

पंजाब के इन्सपेक्टर जनरल पुलिस ने इस निश्चय की घोषणा की कि इन गुंडो को सार्वजनिक स्थानो पर पीटने की योजना बनाई गई है। शिक्षा संस्थाओ के निकट पुलिस के कर्मचारी सादी वर्दी मे नियुक्त रहेंगे और लडकियो के साथ छेड छाड करने वालो को पकड कर उनकी मरम्मत किया करगे। पुलिस को इस योजना को क्रियान्वित करते हुये यह अवश्य ध्यान मे रखना अनिवार्य होगा कि इस कार्य पर उत्तरदायी व्यक्ति ही लगाये जायें अन्यथा लडकियो की कठिनाइयां घटने के स्थान पर बढ जाने का भय रहेगा।

भारत में मासाहार

वर्ल्ड फोरम अक्टूबर ६१ के अक में भारतवर्ष में मासाहार की वृद्धि पर खेद प्रकट करते हुए लिखता है कि राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के उपदेश और उदाहरण के होते हुए भी भारत मे मासाहार को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। भारत के मानवतावादियो को गाँधी जी के इस आदर्श की अवहेलना पर दुख और आश्चय का होना स्वाभाविक है। उष्ण जलवायु होने के कारण भारत मे मासाहार वैसे भी अत्यधिक हानिकारक है। अग्रजो ने अपने शासन-मे कृष्ण बुद्ध महावीर आदि २ महापुरुषो के उपदेशों से बहुत कुछ सीखा है अत भारत जैसे प्रमुखधर्म-प्रधान देश को अपने अमूल्य आदर्शभूत उत्तराधिकार को स्मरण कराना [illegible]ओ का विशेष दायित्व है। यह अकाट्य सत्य है कि भारत मे मासाहार की वृद्धि का मुख्य कारण अग्रेजी शासन और पाश्चात्य स्वभाव का प्रभाव रहा है, अग्रेजी शासन तो उठ गया परन्तु पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव अब भी बना हुआ है और इस सभ्यता से प्रभावित और विमोहित जन जिनमे हमारे कई प्रमुख शासक भी सम्मिलित हैं मासाहार की प्रवृत्ति को बढाने का कारण बन रहे हैं।

आदर्शों की गड़बड़

एक सज्जन लिखते हैं कि उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने पिछले महीने हेम में यह कहा कि प्राचीन आदर्शों को पुनर्जीवित किया जाय। श्रीयुत नेहरू ने प्रस्थ-[illegible] अणुयुद्ध सम्मेलन का उद्घाटन करते समय इस बात पर बल दिया कि प्राचीन आदर्शों को नए आदर्शों के लिए स्थान रिक्त कर देना चाहिए। आचार्य विनोबाभावे भी नवीन आदर्शों के पक्ष पोषक हैं परन्तु उनका स्वरूप नितान्त भिन्न है जिसके लिए उन्होंने इन्दौर में [illegible] आश्रम खोला है।

ये तीनों विद्वान नेता महान देश-भक्त हैं और देश के प्रति तीनो की ही सेवाएं मूल्यवान रही हैं। भावी भारत के निर्माण मे तीनों जो योग दे रहे हैं उसके लिए तीनों के हृदयों में पारस्परिक सम्मान की भावना विद्यमान है। परन्तु भारत के सर्व सामान्य लोगों को यह स्पष्ट ज्ञात नहीं हो रहा कि इन तीनों मे से किसका अनुसरण किया जाय क्योंकि जीवन के आदर्श के सम्बन्ध मे तीनों की भावनाओं और अभिव्यक्ति मे एकरूपता नहीं है। प्रत्येक नेता जीवन के भिन्न २ आदर्शों का प्रतिनिधित्व करता है। सच तो यह है कि इन तीनो महान नेताओं में यद्यपि बाह्य मतभेद तो दृष्टिगोचर नहीं होता तथापि इस देश में आदर्शों की जिस भीषण परिस्थिति का देशवासी सामना कर रहे हैं ये तीनों नेता उसके सच्चे प्रतिनिधि हैं। यदि इस स्थिति का नियत्रण अभीष्ट हों तो [illegible] इन तीनों को आपस में मिलकर अपेक्षित सुधार कर लेना चाहिए।

इस समय देश चौराहे पर खडा है। ठीक नेतृ[illegible] की मांग है। परन्तु वर्तमान नेतृत्व लडखडा रहा है। [illegible] इन तीनों महानुभावों को परस्पर विचार करके उस समाज का ढांचा तैयार करना चाहिए जो उन्हें भावी भारत के लिए अभीष्ट है। तभी उस खतरे का [illegible] सम्भव हो सकेगा जो भारत की एकता को नष्ट करने के लिए मुँह बाए खडा है। इधर-उधर की ऊपरी बातों से उद्देश्य की सिद्धि न हो सकेगी।

आदर्श की इस विभिन्नता का कारण जीवन के दृष्टिकोण की विभिन्नता ही है। सही दृष्टिकोण वह है जो मानव के सर्वाङ्गीण विकास को लक्ष्य मे रखता हो। ऐसा विकास न तो जीवन के एक मात्र आध्यात्मिक पहलू पर बल देने सेसभव हो सकता है और न एकमात्र भौतिक पहलू पर दृष्टि रखने से ही सुरक्षित रह सकता है।

श्री पं० जियालाल जी का निधन

श्री प० जियालाल जी के निधन का समाचार पाकर मुझे अत्यन्त दु:ख हुआ। वह बहुत दिनो से रोग शय्या पर पडे थे। मृत्यु से पूर्व मे अजमेर जाकर उन से मिला था। उस समय भी उन्हे आर्य समाज की हित-चिन्ता मे निमग्न पाया। जिसका जीवन निरन्तर आर्य समाज की सक्रिय सेवा मे लगा रहा रोग शय्या पर पडे हुए उस कर्मवीर से इस के अतिरिक्त और आशा ही क्या की जा सकती थी ?

आर्य समाज की सेवा के प्रसंग में वह अनेक अवसरो पर मेरे साथ रहे और उन का सहयोग बडा मूल्यवान् सिद्ध हुआ। हैदराबाद के आर्य सत्याग्रह के अवसर पर जब मै चतुर्थ सर्वाधिकारी के रूप मे एक बहुत् जत्थे के साथ शोलापुर जाने लगा तो उन्होने स्पेशल ट्रेन की व्यवस्था का भार अपने ऊपर लेकर उसकी सुन्दर व्यवस्था की। सार्वदेशिक सभा मे वो कभी साधारण सदस्य के रूप मे और कभी अन्तरग सदस्य के रूप मे उनका सहयोग प्राप्त रहा। मेरे प्रति उनका आदर और प्रेम भाव मृत्यु पर्यन्त बना रहा। उन के निधन से मेरी वैयक्तिक क्षति हुई है यदि यह कह दिया जाय तो इस में अत्युक्ति न होगी

श्री जियालाल जी का राजस्थान मुख्यतया अजमेर के सार्वजनिक जीवन मे उल्लेखनीय स्थान था। आर्य समाज की सेवा के प्रसग मे अनेक कष्ट सहन कर लेना सुगम था किन्तु आर्य समाज के हित को भुलाना असम्भव था। वह आर्य समाज के कार्यकर्त्ता थे। साहसिक कार्यों मे जुट जाने की उनकी प्रवृति थी। अजमेर की विविध संस्थाओ तथा आर्य अनाथालय, डी० ए० वी० हाईस्कूल आदि के तो वे प्राण थे। दयानन्द कालेज अजमेर को जन्म देकर उसकी उन्नति मे उन्होने अपने को विलीन किया हुआ था। मुझे इस बात का सन्तोष है कि यह कालेज उनके सुयोग्य उत्तराधिकारी प्रिन्सिपल श्री दत्तात्रेय वाब्ले, एम० ए० एल०एल० बी० तथा अन्य सत्यागृ परखे हुए सहकर्मियों के सुदृढ हाथों मे सुरक्षित है।

यद्यपि श्री जियालाल जी का उपयुक्त स्मारक अजमेर और राजस्थान मे किया हुआ उनका प्रशसनीय कार्य है जिस की स्मृति मिट न सकेगी तथापि आर्य समाज आर्य अनाथालय और आर्य विद्या सभा अजमेर ने उनके स्थूल स्मारक की स्थापना का जो आयोजन किया है वह भी अभिनन्दनीय है। इस कार्य के लिए एक उपसमिति बनाई गई है जिस के अध्यक्ष श्री दत्तात्रय वाब्ले और मन्त्री श्री सूर्यदेव शर्मा एम० ए० एल० टी० नियुक्त हुए हैं। इस समिति के समक्ष निम्नलिखित ३ सुझाव है —

(१) प० जियालाल जी का जीवन चरित लिखना। (२) एक उपदेश विद्यालय खोलना। (३) दयानन्द कालेज मे उनकी प्रस्तरमूर्ति स्थापित करना।

इन कार्यों के लिए जियालाल स्मारक निधि खोल दी गई है जिसमे २०००) श्रीदत्तात्रय वाब्ले १०००) श्री सूर्यदेव जी ने और लगभग २०००) दयानन्द कालेज के प्रोफेसरो और डी० ए० वी० की हाईस्कूल के अध्यापकों ने देने का वचन दिया है।

मेरी दृष्टि मे ये तीनो कार्य महत्वपूर्ण है। श्री जियालाल जी ने अपने पीछे अपने मित्रो प्रेमियो और प्रशंसको की बहुसंख्या छोडी है, जिनके हृदयो मे उनकी लोक सेवाओ के लिए आदर और सम्मान का भाव है। उनका कर्त्तव्य है कि वे स्वय इन कार्यों को पूर्ण तथा सफल बनाने मे अपना सक्रिय योग दें और दूसरो से भी दिलाएं।

परम पिता प्रभु दिवगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें यही कामना और अभ्यर्थना है।

ध्रुवानन्द सरस्वती

समृद्धि से अपराध नहीं रुकते

न्यूयार्क का ३० जनवरी का समाचार है कि वहाँ १९६१ मे ११३३४० अपराध अंकित हुए और यह संख्या १९६० की अपेक्षा ५००० बढी है। हत्याओ मे आश्चर्य-जनक वृद्धि हुई है, जिसका औसत प्रति सप्ताह ९ रहा है। १९६१ मे ४८३ हत्याएँ हुई और १९६० मे ३९० हुई थी। अमेरिका जैसे समृद्ध देश मे अपराधो मे वृद्धि इस मान्यता का स्पष्ट खडन है कि भौतिक दृष्टि से मनुष्यो और राष्ट्रो की उन्नति के साथ-साथ उनकी मानसिक उन्नति भी होती रहती है। कहा जाता है कि जिस व्यक्ति के पास अपनी कार होगी, रेडियो सैट होगा, टेलीविजन यन्त्र होगा आदि २ उसकी इन तथा इस प्रकार की वस्तुओ को चुराने की प्रवृत्ति न होगी। जिसे प्राय सब प्रकार की भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध होगी वह उनके बलात् अपहरण वा उपभोग की इच्छा वा चेष्टा क्योकर करेगा? बात यह नही है। भोगो को भोगने से तृष्णा शान्त नही होती अपितु बढती है। इसीलिए अपराधो मे भी वृद्धि होती है। भोगो के प्रभाव और प्रलोभन का सम्बन्ध मन की अवस्था पर निर्भर होता है। मन की अवस्था विकृत होगी तो इनके प्रभाव और प्रलोभनो से मनुष्य ऊपर न उठ सकेगा। यदि मन स्वस्थ होगा तो मनुष्य ऊपर उठ जायगा। मन की स्वस्थता जीवन के त्यागपूर्ण दृष्टिकोण से उत्पन्न होती है। जीवन का त्यागपूर्ण दृष्टिकोण अपने को समाज की शोभा बनाने की भावना से बनता है। यह भावना मन को बुद्धि के बुद्धि को आत्मा के और आत्मा को परमात्मा के अधीन करने से बनती है जो मनुष्य को यह सिखाती है कि बुराइयो मे फँसने से न मनुष्य अपना भला कर सकता है और न ईश्वर को प्रसन्न कर सकता है, जिसके हम सब बच्चे हैं, जो चाहता है कि किसी का भी किसी से अहित न हो।

भ्रम निवारण

पिछले दिनो श्रीमती इन्दिरा गाधी के हैदराबाद मे दिए गए एक भाषण से आर्यजगत् मे रोष और क्षोभ व्याप्त हो गया था। समाचार पत्रो में उनके भाषण की जो रिपोर्ट छपी थी उसमे बताया गया था कि उन्होने इत्तहादुल मुसलमीन जैसी साम्प्रदायिक सस्था के साथ आर्य-समाज की तुलना करके आर्यसमाज को साम्प्रदायिक सस्था प्रकट किया था। आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण ने श्रीमती इन्दिरा गाधी से स्पष्टीकरण मागा था जो उनके निजी सचिव के हस्ताक्षरो से युक्त उसे प्राप्त हो गया है उक्त सभा के मन्त्री श्रीयुत प० नरेन्द्र जी ने इन्दिरा जी के पत्र को जिसमे वह स्पष्टीकरण किया गया है पत्रो में प्रकाशित कर दिया है। असल पत्र अग्रजी मे है जो इस प्रकार है —

I do not think I could have compared the Arya Samaj with the It had-ul-musalmin (In my speeches during the Andhra Pradesh Tour) I did speak against communalism whether practised by muslims or Hindus I also said that militant attitude taken by certain Hindu organizations provoke the other section and this creates disharmony

The Arya Samaj has done good work and I hope no body will exploit it for political religious purposes

मैं नही समझती हूँ कि मैं आर्यसमाज की तुलना इत्तिहादुल मुसलमीन के साथ कर सकती थी। (आन्ध्रप्रदेश के दौरे के अपने भाषणो मे) वहाँ मैंने साम्प्रदायिकता के विरुद्ध अवश्य भाषण दिए थे उसका व्यवहार चाहे हिन्दुओ के द्वारा हो वा मुसलमानो के। मैंने यह भी कहा था कि कुछ हिन्दू सघटनो की लड़ाकू प्रवृत्ति के कारण दूसरे वर्गों मे उत्तेजना व्याप्त होती है और इससे वैमनस्य उत्पन्न होता है।

आर्य समाज ने अच्छा कार्य किया है और मुझे आशा है कि कोई भी व्यक्ति राजनैतिक और धार्मिक उद्देश्यो के लिए इसका दोहन न करेगा।

इस पत्र से स्पष्ट है कि श्रीमती इन्दिरा जी के भाषण की समाचार पत्रो मे छपी हुई रिपोर्ट अशुद्ध एव भ्रम पूर्ण थी।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

सार्वदेशिक पत्र के स्वामित्व आदि के विषय में विवरण

फार्म ४

नियम ८

(प्रेस एंड रजिस्ट्रेशन आफ बुक ऐक्ट)

प्रकाशन का स्थान	—	दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली
प्रकाशन का समय	—	प्रत्येक मास की १ तारीख
प्रिन्टर का नाम	—	रघुनाथ प्रसाद पाठक
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता	—	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली
प्रकाशक का नाम	—	रघुनाथप्रसाद पाठक
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता	—	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली
सम्पादक का नाम	—	१ मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा —डा० कालीचरण आर्य २ सहायक —रघुनाथ प्रसाद पाठक
राष्ट्रियता	—	भारतीय
पता	—	सार्वदेशिक आ। प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली १
जो व्यक्ति पत्र के स्वामी हैं। भागीदार या हिस्सेदार हैं जो सम्पूर्ण पूंजी के १ प्रतिशत से अधिक हिस्से रखते हैं। उनके नाम व पते	—	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली १ (पत्र की स्वामिनी)

मैं रघुनाथप्रसाद पाठक इस लेख पत्र द्वारा घोषणा करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण जहाँ तक मेरा ज्ञान एवं विश्वास है सही है।

प्रकाशक के हस्ताक्षर—
रघुनाथप्रसाद पाठक

दिनांक — १६-२-१९६२

"जगद्गुरु दयानन्द"

श्री स्वा० गगागिरि जी महाराज आचार्य गुरुकुल रायकोट (लुधियाना)

श्री स्वामी जी महाराज प्रथम महापुरुष थे, जो पश्चिमी देशो के मनुष्यो के गुरु कहलाए, जिनको अनेक पश्चिमी मनुष्य गुरु आचार्य और धर्म पिता मानते थे। जिस युग मे स्वामी जी हुए और उससे पहले और आज तक ऐसा एक ही पुरुष हुआ जो विदेशी भाषा नही जानता था, जिसने स्वदेश से बाहर पैर भी नही रखा था जो स्वदेश के ही अन्न जल मे पला था, जो विचारो मे स्वदेशी भाषा और वेश मे भी स्वदेशी था परन्तु वीतराग और परम विद्वान् होने के कारण सब का भक्ति भाजन बना हुआ था, जिसका देशी-विदेशी सभी मान करते थे। ऊँचे-ऊँचे विदेशी पदाधिकारी और स्वदेशी राजे महाराजे जिसका अति सम्मान करते थे। वह महापुरुष स्वामी दयानन्द ही था।

महर्षि को छोडकर इस युग मे एक भी ऐसा पुरुष नही हुआ जिसने विदेशी भाषा न सीखी हो अथवा विदेश यात्रा न की हो और फिर स्वदेश मे सम्मानित हुआ हो। शिक्षक दल के नेता आज तक जितने हुए है, उन सब पर विशेष रूप से विदेशी भाषा और विदेश गमन का ठप्पा लगा हुआ था। उसी के प्रभाव से देश और विदेश के बाजारो मे उनका नाम बिका है। परन्तु स्वामी दयानन्दजी महाराज पाँव से सिर तक, अदर से बाहिर तक पवित्र स्वदेशी थे। महाराज किसी के कधे पर बैठ कर ऊँचे नही हुए थे। जितना मान देशियो और विदेशियो ने उनका किया है आज तक किसी भी भारतवासी का नही हुआ है।

महाराज निरपेक्ष भाव से सब मतो की समालोचना किया करते थे। सब मतो पर टीका टिप्पणी चढाते थे। परन्तु इतना होने पर भी उनमे कोई अलौकिक शक्ति थी और ऐसे गुण थे जिनके कारण वे तत्कालीन बुद्धिमानो के सम्मान पात्र बने हुए थे। मुसलमान दल के सर्वोपरि नेता नीतिमान् सर सैयद अहमद खा महाशय अतरात्मा से स्वामीजी के अनुगामी थे। पादरी स्काट जैसे सज्जन उनको अति आदर देते थे। स्थान-स्थान पर ईसाई मदिरो मे उनको प्रचारार्थ आमन्त्रित किया जाता था। लाहौर मे तो प्रतिष्ठित मुसलमानो ने अपने मकान देकर महाराज का आतिथ्य किया था। श्रीयुत् केशवचद्र सेन उनसे अपार प्रेम करते थे। महात्मा देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने उनको श्रद्धा पूर्वक सम्मान दिया था। महामति गोविन्द रानाडे उनकी भक्तमाला के शोभायमान मोती थे। सभी प्रान्तो मे गण्यमान्य महाजन उनके चारुचरणो मे बैठने मे गौरव मानते थे। तीव्र समालोचक होने पर भी इतनी विस्तृत प्रियता क्वचित् किसी दूसरे महात्मा को प्राप्त हुई हो। महाराज के उच्चतम जीवन की घटनाओ पर दृष्टिपात करने पर तो ऐसा प्रतीत होता है मानो आज तक जितने महापुरुष हुए हैं उन सबके समुज्ज्वल अश ऋषि दयानद मे थे। वह गुण गुणहीन होगा जो उनके सर्वगुणसपन्न स्वरूप मे न विकसित हुआ हो।

महाराज का हिमालय की सर्वोच्च चोटियो पर चक्कर लगाना, विन्ध्याचल की यात्रा करना, नर्मदा के तट पर घूमना, स्थान-स्थान पर साधु सतो के शुभ दर्शन और सत्सग प्राप्त करना मगलमय अयोध्यापति राम का स्मरण क राता है। कर्णवास मे कर्णसिंह के चमकते हुए खड्ग को देखकर भी महाराज नही कापे, तलवार की तीक्ष्ण धार का अपनी ओर अवलोकन करके भी निर्भय बने रहे और साथ मे गभीर भाव से कहते हैं कि—"आत्मा अमर व अविनाशी है। इसे कोई हनन नही कर सकता।" यह घटना तथा इसी के समकक्ष और अनेक घटनाएँ श्री कृष्ण जी को हमारे मानसिक नेत्रो के सामने मूर्तिमान् प्रकट कर देती हैं, जो [illegible] के अथाह सागर थे। ऐसा प्रतीत होता है मानो [illegible] [illegible] श्री कृष्ण जी महाराज स्वय बोल रहे हैं।

स्वामी दयानन्द के चरित्र की विशेषताएँ

श्री प्रि० दीवानचन्द्र
एम० ए० कानपुर

यह बात निर्विवाद है कि भारत के पुनरुज्जीवन का आन्दोलन सर्व-प्रथम स्वामी दयानन्द ने आरम्भ किया था। जैसा कि उन्होने अपने एक प्रवचन मे कहा था, वह अपने समय से लगभग ५० वर्ष आगे बढे हुए थे अर्थात् ५० वर्ष बाद होने वाली बाते उन्होने कह दी थी। उन सब प्रौढ विचारो का श्रेय जिनसे इस देश मे एक प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न हुई है, महर्षि को प्राप्त है। १९ वी शती के उत्तरार्द्ध मे उन्होने स्वदेशी, अस्पृश्यता निवारण, राष्ट्र-भाषा हिन्दी, स्त्रियो की मुक्ति और स्वराज्य के लिए कार्य किया। दुर्भाग्य से उन्हे कार्य करने का बहुत थोडा समय मिला। यह समय १८७५ ई० मे आर्य समाज की स्थापना से प्रारम्भ हुआ समझा जाता है जिसका १८८३ मे अचानक अन्त हो गया। भारतवर्ष जैसे विशाल देश मे जो अज्ञान और अन्ध विश्वासो की दल-दल मे धँसा हुआ है प्रचार कार्य के ८-१० वर्षो का अर्थ क्या है? इस पर भी इन वर्षों मे भारतीय चरित्र और दृष्टिकोण की काया पलट करने मे दयानन्द जिस प्रकार समर्थ हुए वह वस्तुत विस्मयकारी था। आर्यसमाज द्वारा उनका कार्य होता रहा है। यद्यपि इसकी प्रगति धीमी तथापि ठोस और सुदृढ रही है और आज सम्भवत आर्य-समाज जैसा सुसगठित और शक्तिशाली अन्य कोई समाज नही है। स्वामी दयानन्द के व्यक्तित्व ने आर्यसमाज पर अपनी गहरी छाप छोडी है जो आर्य-समाज के सदस्य के दृष्टिकोण के निरूपण मे महत्वपूर्ण तत्त्व के रूप मे कार्य करती है। स्वामी जी का निधन हुए लगभग ७८ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं परन्तु उनका प्रभाव उस समय की अपेक्षा जबकि वह जीवित थे आज अधिक है। 'वैसे तो वह आज भी जीवित है और जब तक उनका प्रभाव कायम रहेगा वह जीवित ही रहेंगे। उनके जीवन और काय का अध्ययन बडा उच्च है इसके साथ ही उस भावना का अध्ययन भी उच्च है जो उनके कार्य-कलाप मे ओत-प्रोत थी। क्या हम उनकी महान् भावना की आन्तरिक प्रक्रिया का दिग्दर्शन कर सकते है? आओ चेष्टा करे।

स्वामी जी के चरित्र की सबसे बडी विशेषता उनकी सत्य निष्ठा थी। वह जीवन पर्यन्त सत्य के अन्वेषक बने रहे। जबकि वह छोटे बच्चे थे तभी दिन प्रतिदिन की एक साधारण घटना ने उनमे सत्य का प्रकाश कर दिया था। जिसमे $\frac{1}{10}$ भाग दिव्य प्रेरणा और $\frac{9}{10}$ भाग उद्योग हो वह प्रतिभा कही जाती है। इन दो तत्त्वो मे से कौन तत्त्व कम था और कौन अधिक इस की ऊहापोह किए बिना हमे यह मानना होगा कि ईश्वरीय प्रेरणा प्रतिभा का अनिवार्य अंग होता है। उन तथ्यो के महत्व को देखना जिनसे सामान्य जनो मे कौतूहल जाग्रत न होता हो, दैवीय ज्योति होती है। न्यूटन से पूर्व असख्य व्यक्तियो ने

सेब को वृक्ष से गिरते हुए देखा होगा परन्तु किसी को गुरुत्वाकर्षण के नियम को सोचने की बात न सूझी । सेब के गिरने पर नियम को जान लेने के लिए न्यूटन की प्रतिभा की आवश्यकता थी । इसी प्रकार असख्य व्यक्तियो ने चूहो को तथाकथित देवी-देवताओ की मूर्तियो पर चढते और मनमानी करते हु' देखा होगा, परन्तु उन पर कोई प्रभाव न पडा होगा। स्वामी दयानन्द के विषय मे यह बात न हुई। उन्होने इस दृश्य को देखा और उनके हृदय मे जिज्ञासा जागृत हो गई। क्या यह मूर्ति जो चूहे से अपनी रक्षा नही कर सकती हमारी पूजा उपासना की अधिकारिणी हो सकती है ? क्या इससे हमारा हित हो सकता है ? इस जिज्ञासा ने उन्ह अधीर बना दिया । उन्होने कहा 'मुझे इसका समाधान प्राप्त करना होगा ।

महान् गुरु विरजानन्द ने इस जिज्ञासा का समाधान प्राप्त करने मे दयानन्द का मार्ग प्रदर्शन किया। स्वामी दयानन्द इस परिणाम पर पहुँचे कि मनुष्य को एक मात्र परमात्मा की उपासना करनी चाहिए । आत्मा प्रकृति से उच्च और महान् है । स्वामी विरजानन्द पक्के एकेश्वर वादी और वेदो को मानने वाल थे। वह इस सत्य का प्रचार करना चाहते थे परन्तु चक्षुविहीन होने से असमर्थ थे । स्वामी दयानन्द के रूप मे उन्ह मनचाहा शिष्य मिल गया। अध्ययन काल की समाप्ति पर गुरु विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द को वैदिक धर्म का प्रचार करने का आदेश दिया । दयानन्द ने गुरुदेव के आदेश को शिरोधार्य करके अपने को उस कार्य पर अर्पण करने का निश्चय किया । वह पहले से ही सत्य के जिज्ञासु थे गुरुदेव ने अब उन्हे प्रचारक बना दिया ।

स्वामी दयानन्द निर्भीक प्रचारक थे। वह बडे स्पष्ट वक्ता थे, बात को तोड मरोड कर कहना न जानते थे । बुराई और मिथ्या विश्वास का बडी निर्ममता से खडन करते थे। परन्तु उनका हृदय दया से परिपूर्ण था। जन्म की अपेक्षा गुण कर्म और स्वभाव पर आश्रित योग्यता पर बल देकर उन्होने सामाजिक व्यवस्था को सच्चा प्रजातन्त्रीय स्वरूप प्रदान किया ।

स्वामी दयानन्द मे असीम शक्ति और उत्साह था। परमात्मा मे अनन्य निष्ठा ही उनकी शक्ति का स्रोत थी। वह समझते थे कि मै जो कुछ कर रहा हूँ वह परमात्मा का ही काय है और मैं उसका निमित्त मात्र हूँ। जब अन्त समय आया तब उन्होने बडी शान्ति के साथ अपने को परमात्मा के अर्पण कर दिया । मृत्यु शैया पर पडे हुए उन्होने कहा "प्रभु तेरी लीला विचित्र है ! तेरी इच्छा पूर्ण हो"।।

दयानन्द बडे आदर्शवादी थे, उनकी तर्क शक्ति बडी सूक्ष्म थी। उनकी सस्कृत की योग्यता अगाध थी और उनका ज्ञान-भाडार बडा विशाल था । इन सबसे बढ कर तथ्य पर पहुँच जाने की उनकी क्षमता बडी विलक्षण थी। वह महान् आत्मा थे, प्रकाड विद्वान् थे सन्त थे और वीर थे। ये सब विशेषताएँ एकही व्यक्ति मे सन्निहित थी । वह भारत के महान् सपूत थे । उन्होने मातृभूमि की विशद सेवा की। हम मे से प्रत्येक को उनके भव्य-जीवन और भव्य चरित्र पर मनन करते हुए उनसे प्रकाश ग्रहण करने की चेष्टा करनी चाहिये ।

दयानन्द का जीवन-सूत्र

श्री वासुदेव अंगिरस

यो विद्यात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः ।
सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्याद् ब्राह्मणं महत् ॥
(अथर्व० १०।८।३७)

जो व्यक्ति फैले हुए सूत्र को जानता है जो विविध प्राणियो मे ओत प्रोत है। जो व्यक्ति इस सूत्र के सूत्र को जानता है वह निश्चय ही महान् ब्रह्म को जानता है।

दयानन्द महान् ब्राह्मण थे और थे प्राचीन आर्य ऋषियो के पूर्ण प्रतिनिधि। उन्होने प्राचीन ब्रह्मसस्कृति के सम्यक् दर्शन किए थे और विविध उपायो से ब्रह्म सस्कृति का पुनरुद्धार करना उनके जीवन का एक विस्तृत सूत्र था। दयानन्द के जीवन की सम्यक अनुभूति करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुभूति करने वाले मनुष्य मे प्राचीन आर्यसमाज की महिमा का मूल्यांकन करने की योग्यता है। जिस सीमा तक हम ब्रह्म को उस उच्च स्थान पर पुन प्रतिष्ठित करने मे सफलता पूर्वक यत्नशील होगे जिससे आत्मा के अस्तित्व को न मानने वाली हमारी फिलासफी ने उसे च्युत कर दिया है उस सीमा तक हम इस महान् ऋषि के सन्देश को चरितार्थ करते होगे।

वेदो का केन्द्रीय विषय ब्रह्म है। दयानन्द ब्रह्म और उसके दिव्य ज्ञान को एक समान मानते थे अर्थात् वह वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे। उन्होने इस विषय पर कभी किसी से समझौता न किया और सदैव वेद के स्वाध्याय पर विशेष बल दिया। वे उनके जीवन मे ओत-प्रोत थे और वे ही उनकी शक्ति का कारण थे। वेद ने ही उन्हे सब कुछ बनाया और यद्यपि छिन्न भिन्न विचारो के कुछ व्यक्तियो ने उनकी वेद-निष्ठा को कम करने का प्रयत्न किया तथापि इस विषय मे वह चट्टान की भाँति अडिग रहे। जो व्यक्ति दयानन्द के जीवन के प्रेरणा-स्रोत का दिग्दर्शन करना चाहता हो उसे निम्नांकित सूत्रो पर मनन करना चाहिए जिन्होने उनके जीवन का निर्माण किया था —

(१) तप (२) सत्य (३) ब्रह्म (४) दीक्षा (५) यज्ञ।

वैदिक ऋषि और स्वामी दयानन्द के जीवन की समस्त उच्चता और विशिष्टता का कारण ये ही सूत्र थे। ५ प्राण एक साथ मिलकर मानव शरीर को सर्वतोमुखी क्रिया के योग्य बना देते है। इसी प्रकार उपर्युक्त पाँचो सूत्र उनके महान् जीवन मे आधारभूत परमाणुओ के रूप मे समाविष्ट थे। उनका ब्रह्मचर्य उनके तप की, उनकी वेद-निष्ठा ईश्वर-निष्ठा की, उनका बुद्धिवाद सत्य की समाज और देश की आजन्म निश्छल सेवा उनकी दीक्षा की और आत्मा के हितार्थ आर्थिक लाभ का पूर्ण परित्याग उनकी यज्ञ भावना की अभिव्यक्ति थी। परन्तु इन पाँचो तत्त्वो को एक साथ ही समाविष्ट हुआ देखना चाहिए पृथक्-पृथक् तत्त्व के रूप मे नही ये पाचो एक ही सांस्कृतिक चेतना के केन्द्र मे घनीभूत थे जो उनके जीवन में मूर्त रूप लिए हुए थी। यह थी वैदिक सस्कृति जिसका उल्लेख इस लेख के आरम्भ मे किया गया है। वेद-ज्ञान वैदिक जीवन मे ही प्रतिलक्षित होना चाहिए। यही कारण है कि दयानन्द आर्यसमाज को वैदिक सिद्धान्तों पर चलाने के लिए अनवरत गति से प्रयत्नशील रहे। यही फिलासफी उनके जीवन और उनके कार्य का अपरिहार्य अग थी। दयानन्द को प्रेम करना वेद को प्रेम करना है। दयानन्द ने वेद को प्रत्येक प्रकार की स्वतन्त्रता का साधन पाया। उनकी सहायता से लोगो के युगयुगान्तर के अज्ञान को मिटाने के लिए दयानन्द ने उनकी बुद्धि को पैना बनाया। आज हमे यह अनुभूति हो रही है कि वह अज्ञान हमारे दुर्बल हाथो मे हथकडी नही रहा है।

हमे इस सत्य को हृदयङ्गम करना चाहिए कि वेद हमारी दुर्बलता नही अपितु शक्ति है। आर्यसमाज का यह दायित्व है कि वह समस्त साधनो को प्रयुक्त करके वैदिक सस्कृति को पुन प्रतिष्ठित करे।

दिवाःसूनुः दयानन्द

स्व० प० चमूपति एम० ए०

स्वामी दयानन्द एक महान् आत्मा थे। उनके मन्तव्यानुसार परमात्मा कर्मों का शुभाशुभ फल देने म पूर्ण न्याय से काम लेता है। परन्तु उसकी दया का प्रकाश और प्रसार प्राणीमात्र के लिए होता है। सूय, पृथ्वी तारे, वायु, जल तथा उसके अन्य प्रसादो का सभी प्राणी समान रूप से उपभोग करते है। यदि कोई व्यक्ति इनसे विशेष रूप से लाभान्वित होता है तो इसका कारण उसके पूर्व वा वर्तमान कर्म होते है। ये सब सम्मिलित प्रसाद परमात्मा की दया तथा निष्पक्षता के द्योतक होते ह।

महर्षि दयानन्द ने परमात्मा की न्याय-व्यवस्था पर बडा बल दिया है। एक के बाद दूसरे सन्त ने भाग्य पर भरोसा रखने की शिक्षा दी। इस प्रकार की शिक्षाओ ने जहाँ एक ओर मनुष्य को कमण्यता और उद्योग से विमुख किया वहाँ दूसरी ओर दुष्कर्मियो की दुष्ट प्रवृत्तियो को भी प्रोत्साहित किया। बताया गया कि परमात्मा जिसे चाहे दड दे सकता है और जिसे चाहे पुरस्कृत कर सकता है। वह चाहे तो पुण्य कर्मो के लिए दडित और बुरे कर्मो के लिए पुरस्कृत कर सकता है। क्या इस प्रकार की धार्मिक शिक्षाओ मे भलाई की कोई भावना निहित हो सकती है? परमात्मा के न्याय मे निष्ठा रखने से मनुष्य कर्मण्य एव भला बनता है और परमात्मा द्वारा मनमानी किए जाने की भावना से मनुष्य मे समस्त प्रकार की बुराइयो के साथ परवशता की भावना का उदय होता है।

वेद मे परमात्मा को पितृणा पितृतम पिताओ का पिता, अम्बितमा माताओ की माता कहा है। पिता अपने पुत्रो मे भी दया की तराजू को पकडे रहता है। उनकी उद्दण्डता के लिए उन्हे दण्ड देता है। उनकी बुराइयो को दूर करने का यत्न करता है। अच्छे पुत्र के लिए वह प्रेम और न्याय की मूर्ति होता है। पिता का प्रेम असीम होता है। असीम पिता की दयालुता और प्रेम भी असीम ही होगा। इनकी वास्तविक अनुभूति उसके उन बच्चो को ही हो सकती है जिनके हृदयो मे उसकी असीमता घर किए होगी। मनुष्यो अथवा परमात्मा के ऐसे बच्चो को वेद मे 'अमृतस्य पुत्रा कहा गया है। इन बच्चो ने बुराई को पीछे छोडा होता है। वे कर्मठता और उत्साह की सजीव मूर्ति होते है। उनका जीवन कर्त्तव्य परायणता का जीवन होता है। परमात्मा की प्रसन्नता ही उनके कार्य का पारितोषिक होता है। उनका प्रभु प्रेम स्वत प्रवाहित रहता है। वे निष्काम भाव से परोपकार-रत रहते हैं। यदि परमात्मा के हाथो कष्ट मिलते है तो वे भी दया का रूप लिए होते है। उनका अभिप्राय आत्मा का सुधार ही होता है। दुनियादार व्यक्ति पारितोषिक की आशा मे किसी गुण को धारण करेगा तो परमात्मविश्वासी पुत्र जिसे वेद मे 'दिवा सूनु कहा गया है सत्कर्म को परमात्मा के प्रति भट रूप मे अर्पण रखेगा।

महर्षि दयानन्द इसी प्रकार का **दिवा सूनु'** अर्थात् दिव्य पुत्र था जिसने अपना समस्त जीवन भेंट रूप मे परमात्मा को अर्पण कर रखा था।

दयानन्द सच्चे अर्थ मे सन्त थे। वह परम तपस्वी और त्यागी थे। वह परमात्मा के प्यारे थे। उनके हृदय मे सदैव दिव्य धारा प्रवाहित रहती थी। उस धारा मे उनके ऐहिक कष्टो और कठिनाइयो की गरज शान्त हो जाया करती थी। अपने जीवन को खतरे मे डालकर भी वह जिन उच्च नैतिक आदर्शों पर आरूढ रहते थे वे उस उच्चधार्मिक और नैतिक व्यवस्था के अलौकिक ढाँचे के अविच्छिन्न अग थे जिस पर विश्व का नियमन किया गया है और जिसे वह सदैव अपनी आन्तरिक आँखो से देखा करते थे। उन्हे वास्तविकता का भान हो जाया करता था। यास्क की परिभाषानुसार ऋषि वह होता है जो धर्म को देखता है। आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द शब्द के ठीक-ठीक भाव मे ऋषि थे।

पुरुष दयानन्द

[डा०—सूर्यकान्त एम० ए०, डी० लिट०, (पंजाब) डी० फिल०, (आक्सन)
अध्यक्ष, संस्कृत व पाली विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी]

ऋषि दयानन्द की विशेषताए अनेक थी। उन सभी पर मनीषियो ने समय-समय पर प्रकाश डाला है। ऋषि दयानन्द ने जो कुछ भी अपने छोटे से जीवन मे किया उसका मङ्गलमय परिणाम हमारे सामने है। इस देश मे जो कुछ भी प्रचार या स्वतत्रता आज आपको दीख पडती है, वह सब यथार्थ मे उसी ऋषि की देन है क्योकि उसी ने हमें सोते से जगाया था और उसी ने हमे ऋषियता की झाकी दिखाई थी।

किन्तु आज हमें दयानन्द द्वारा प्रवर्तित सुधारो के विषय मे कुछ नही कहना। उन पर पर्याप्त कहा जा चुका है। आज हमे उनकी उस विशेषता की और आर्य जनता का ध्यान आकृष्ट करना है जो कि आज तक हम सबसे छिपी रही है।

हमने एक अभिप्राय विशेष से ऋषि दयानन्द को पुरुष कहा है। वे सच्चे अर्थ मे पुरुष थे क्योकि भारत क सनातन इतिहास म सहस्रो वष पश्चात् पुरुष शब्द क सच्चे अर्थ को उन्होने पहचाना था और अपने आपको पुरुष बनाने का प्रयत्न किया।

ऋग्वेद का पुरुषसूक्त (१०-६०) भावगरिमा की दृष्टि से अभूतपूर्व प्रसिद्ध है क्योकि इसमे पुरुष का रूपक खडा किया गया है और उसी के होम से शिव में यज्ञ एव पदार्थ ज्ञान की रचना बताई गई है। पुरुषसूक्त क प्रथम मन्त्र में पुरुष को सहस्र सिरो वाला, सहस्र आंखो वाला, सहस्र चरणों वाला बताते हुये कहा गया है कि उसने इस अशेष धरती अंबर को ढक रक्खा है और वह इसे ढक कर भी दस अगुल इससे ऊपर उठा हुआ है। दूसरे मन्त्र में बताया गया है कि भूत, भविष्यत् एव वर्तमान सभी कुछ पुरुष है और मृत्यो और अमरो पर उसी पुरुष का अखण्ड अधिकार है। तीसरे मन्त्र मे सकेत है कि उस पुरुष की महिमा इतनी महान् है, नही वह इससे भी कही अधिक महान् हैं अशेष भूत उसके एक चरण है। उसके तीन चरण तो द्यु लोक मे अमर रूप से विराजमान है। आगे मन्त्रो मे इस अवाल पुरुष से इस विश्वजगत की उत्पत्ति का मनोरम रूपक उभारा गया है, जिसे पढकर पाठक व्यापक महत्ता क ऐसे तुग पर जा पहुँचता है जहा खडे होकर उसे इस अशेष धरती अबर पर उसी एक पुरुष का पसारा व्यापा दीख पडता है। पुरुष के इसी रूप का नाम विराट् है। भगवद्गीता में पुरुष के इसी विराट् रूप का अर्जुन को प्रत्यन्दन कराया गया है और पुराणो मे मार्कण्डेय द्वारा देखे गये विराट् विष्णु रूप का यथार्थ आधार ऋग्वेद का पुरुषसूक्त ही है।

वेद मे पुरुष शब्द का प्रयोग अत्यन्त व्यापक अर्थ मे हुआ है। ऋग्वेद के दशम मण्डल के इक्यावनव सूक्त के अष्टम मे —

'पुरुषम् ओषधीनाम्''

पुरुष का प्रयोग ओषधियो मे व्याप्त हुए रस के अर्थ मे हुआ है।

यजुर्वेद के इक्तीसव अध्याय मे इसी पुरुषसूक्त को दुहराया गया है! किन्तु इसमे कुछ और मत्र भी जोड दिये गये है। अठारहवां मन्त्र अत्यन्त मार्मिक है—

वेदाहमेत पुरुष महान्तम्,
आदित्यवर्णं तमस परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति,
नान्य पन्था विद्यतेऽयनाय॥

मन्त्र ने पुरुष को चार चांद लगा दिये है और उसे इतना अधिक व्यापक एव मनोहारी रूप दिया है जिसकी कल्पना भी हमारे लिए मनोऽतीत है।" वह पुरुष है, वह महान् है, वह सूर्यवर्ण है, वह अन्धकार से परे है। उसे देखे बिना मृत्यु को पार करना असम्भव है, उसके सिवाय मोक्ष का मार्ग दूसरा नहीं है। इस मन्त्र मे पुरुष

के यथार्थ महत्त्व को स्पष्ट कर दिया है। आगे के तीन मन्त्रों में पुरुष को पुजापति एव ब्रह्मा वृत कह कर स्तुति की गई है।

मुण्डकोपनिषद् (२ १) मे आता है —पुरुष एवेद विश्व कर्म तपो ब्रह्म परामृतम्। अर्थात् यह सब कुछ कर्म, तप, पुरुष ही का पसारा है। वह ब्रह्म (महान्) है, वह पर है, वह अमर है। मन्त्र के पूर्वार्ध मे पुरुष के व्यापक रूप की मार्मिक उत्थानिका की गई है। मन्त्र का परार्ध इस प्रकार है —

एतद्यो वेद निहित गुहायां
सोऽविद्याग्रन्थि विकिरतीह सोम्य।

अर्थात् इस पुरुष ब्रह्म को जो मनुष्य गुहा मे स्थापित हुआ देख लेता है उसकी अविद्या की गुत्थिया सुलझ जाती है। सुन्दर बात कही है और सुन्दर ढग से कही है क्योकि हमारा हृदय एक लैंस है, वह एक प्रकार का बल्ब है जिसमे केन्द्री भूत होकर आन्तरिक प्रकाश शतधा खिल उठता है। वह एक बिम्ब है, जिसमे पुरुष का महत्व अत्यन्त घनीभूत होकर हमारे सामने आता है। इसी मे केन्द्रीय होकर पुरुष की विशालता के फव्वारे सद्सुधा फूटा करते है।

पुरुष के इस व्यापक अर्थ को यास्क ने अपने निरुक्त में (२,३) इस प्रकार व्यक्त किया है —

'पूरयतेर्वा। पूरयत्यन्तर पुरुष मभिप्रेत्य' अर्थात् जिससे यह विश्व भरा हुआ है वही पुरुष है। हमारा आत्मा भी पुरुष है, क्योकि उससे हमारा शरीर, अर्थात् क्षेत्र परिपूर्ण है। पुरुष शब्द का प्रयोग इस अर्थ मे भी वेद में हुआ है और यह बात पुरुष शब्द की महत्ता को प्रकट रूप से स्थापित करती है।

मुण्डकोपनिषत के द्वितीय मुण्ड के प्रथम खण्ड में 'दिव्यो ह्यमूर्त पुरुष' से प्रारभ करके 'पुरुष एवेद' तक के मत्रों से पुरुष के इसी विराट रूप का व्याख्यान है, और निश्चय ही वैदिक काल में पुरुष शब्द से यही अर्थ लिया भी जाता था। किन्तु पुरुष शब्द के अर्थान्तरण का प्रारभ भी मुण्डकोपनिषत के 'पुरुष एवेद' आदि मन्त्र के पदार्थ से प्रारभ होकर श्वेताश्वतरोपनिषद (२,३,) के —

अगुष्ठमात्र पुरुषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये सनिविष्ट।

इस मन्त्र में पूरा हो जाता है। मन्त्र का आशय है कि पुरुष अगुष्ठमात्र है, वह मानव के अगुष्ठमात्र हृदय में बैठा हुआ है। उक्ति साफ है किन्तु उसके यथार्थ आशय को भुलाकर उसके शब्दार्थ मात्र पर बल देकर वेदोत्तर कालीन आर्य पुरुष के मौलिक महत्व को भूल बैठा और अब उसका पुरुष सचमुच अगूठे के बराबर बन गया और धीरे-धीरे वह स्वय भी तिनके के बराबर बन बैठा।

निश्चय ही वैदिक आर्य का पूजा मन्दिर विश्व का यह विशाल प्रागण था जिस पर वरुण का अमर आतपत्र छाया हुआ था। पुरुष की उसी व्यापक यज्ञशाला में बैठकर वैदिक ब्रह्मचारी होम किया करता था, जो कि स्वभावत अत्यन्त विशाल एव व्यापक था। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त ने हमारे सम्मुख उसी होम की उत्थानिका प्रस्तुत की है। धीरे धीरे हम लोग पुरुष शब्द के व्यापक अर्थ को भूलते गये और समय आया जबकि हम पुरुष का अर्थ इस पुर अर्थात् शरीर मे सोने वाला करने लगे।

निरुक्तकार यास्क के समय मे ही यह प्रवृत्ति चालू हो गई थी, तभी तो वे लिखते हैं —

पुरुष पुरिषाद। पुरिशेते इति॥

अब पुरुष शब्द परमात्मा को छोड मनुष्य में रूढ हो गया। किन्तु यदि इतने ही पर बस हो जाती तो कोई बात न थी। यदि हम पुरुष की यथार्थ व्युत्पत्ति अर्थात् 'पूरयति' को भी याद रखते। किन्तु ऐसा न हुआ और हम उसकी व्युत्पत्ति भी "पुरि शेते" यह करने लगे और इसी एक बात मे भारत के नैतिक एव भौतिक पतन के बीज सनिहित हैं। क्योंकि उस पुरुष को, जिसका कि स्वाभाविक धर्म ही विश्व में व्याप कर उसे सतत चालू रखता है, और साथ मे उस आत्म रूप पुरुष को, जो कि हमारे शरीर रूप क्षेत्र में व्यापकर इसे नियमित करता

है, अब हम 'सोने वाला' कहने लगे, माया रूप बताने लगे, उस सर्वोत्कृष्ट क्रिया धन पुरुष को हम दिन मे भी सोने वाला समझने लगे। हमारी इस प्रवृत्ति में ही हमारे पतन के बीज सनिहित रहते आये हैं।

निश्चय ही वैदिक युग का मानव पुरुष ही उसके महान् रूप की पूजा करता था—क्योंकि उसकी पूजा का लक्ष्य वह शक्ति थी जो जगत् के अणु-अणु मे व्यापी हुई है और जिसके स्नेहपात्र मे बधा हुआ यह गोल जाल अनवरत किसी अज्ञात चक्र मे, किसी निर्लक्ष्य भ्रामिज्ञ मे प्रतिक्षण घूम रहा है। तभी तो हमें वेद के हर सूक्त मे कुछ ऐसे सकेत मिल जाते हैं जो इस यथार्थ पुरुष की ओर हमें बलात् खीच लेते है और कुछ काल के लिए हमे भी असीम एव अबाल पुरुष में बदल देते हैं।

वेदो की सबसे बडी विशेषता उनकी यह व्यापक महत्व की भावना एव आकाक्षा है। आप इन्द्र सूक्तो को पढिये। प्रतीत होगा कि आपके भौतिक बधन टूट रहे है और आप मनोविज्ञान पर सवार हो धरती-अबर की खुली सैर कर रहे है। तब आपके लिए सीमा नही रह जाती। तब आप काल की गति एव गणना से पार चले जाते हैं और आपके सम्मुख ओज, बल, तेजस् एव ऐश्वर्य का ऐसा ज्वार उभरता दीख पडता है, जिसके सम्मुख ये मूर्त सागर थोथे पड जाते है। हमारे वैदिक इन्द्र की सबसे बडी विशेषता यही है।

और जब आप वैदिक वरुण की ओर बढ़ते है तब आप एक ऐसे धर्म वितान के नीचे आ जाते हैं जिसका कोई ओर नही छोर नही, जहा पाप धुल चुका है और जहा पुण्य की छलछलाती जाह्नवी के तटो पर कुछ इस प्रकार के युगल घूम रहे है जो न मानव हैं, न अमर हैं जिनका शरीर कुछ कुन्दन सा, कुछ किरणों की चलती लाट जैसा दीख पडता है। उस जगत् की सीमा नही, इसका कोई आदि नही, कोई अन्त नही क्योकि वह वरुण का है, वह सच्चे अबाल पुरुष का अपना जगत् है।

वेदों के किसी भी देवता को ले लीजिये वह पुरुष के किसी न किसी रूप का प्रतिबिम्ब है, सभी देवताओं के सम्मिलित रूप को वेद ने पुरुष कहकर पुकारा है—क्योकि वह उन सब देवो मे व्याप रहा है उन सब में वह एक ही भरा हुआ है। उस असीम की पूजा हम सब लोग विश्व के असीम यज्ञ कुड में किया करते थे क्योंकि हम हर जगह उसी को देखते थे, पत्ते-पत्ते और इगित-इगित में हमें उसी की थिरकन दीख पडती थी। शनै-शनै हमारा पुरुष महान् न रहकर अगुष्ठ मात्र रह गया और अब हम उसे अंगुष्ठमात्र की पत्थर मूर्ति मे देखने लगे, मदिर के एक अधियारे कोने में हमने उस मूर्ति को रख दिया और वहाँ हम उसे अपने मानवीय श्रृगारो से सजाने, रिझाने और सहलाने लगे। क्या मजाक है यह उस अबाल पुरुष को, जो चाँद-सूरज में हस रहा है, जो तारो मे टिमटिमा रहा है, जो आकाश मे साँस ले रहा है, जो हर जगह है, जो सब कुछ है—पर कुछ भी नही। अगुष्ठमात्र पुरुष के सिवाय और कौन उस भगवान् अलख निरजन को इस प्रकार चिढा सकता है ?

पुरुष दयानन्द ने वैदिक युग के हजारो वर्षपश्चात् पुरुष की यथार्थ व्यापकता को पहचाना और स्वय उस जैसा महान् बनने का प्रयत्न किया। पुरुष के यथार्थ आशय को हृदयगम करके पुरुष दयानन्द ने मानव कृत सारे ही तुच्छ बन्धनो को तोड गिराया। दयानन्द को पुरुष हमने इसी मतलब से कहा है।

भारत के पाखडियो ने मानव को जात-पाँत की छोटी-छोटी भौंडी क्यारियों मे जकड कर बिठा दिया था। उन्होने स्त्री-शूद्रो को सदा दास बनाये रखने के लिए उनका एक मात्र धर्म ही सेवा और चरण दबाना बताया था।

उन्होने मानव के भावना-भरित पावन उपवन में गदगी के ढ़ेर लगाकर उसे गदा बना दिया था। पुरुष दयानन्द ने जात पाँत की क्यारियो को तोड फेंका, गन्दगी के ढ़ेरो को दूर कर उसने मानव के उपवन को फिर से चमन बना दिया। क्या यह काम उसका त्रिकाल में भी भुलाया जा सकता है ?

जब हम स्वय अगुष्ठमात्र बन बैठे तब परदेशी भी हमें ठोकरों से सताने लगे। हम आपस में फट चुके थे, अपने

अपने चौके मे चावल पकाने लगे थे । हमारी तूती घर मे ऊची थी, अपनो पर हमे आग बरसाते थे, परायो के सम्मुख हमारी दाल न गलती थी। पुरुष दयानन्द ने यथार्थ पुरुष बनकर हमारे इन सभी बन्धनो को तोडकर हमे स्वतत्र बनाया हमे पुरुष बनाया क्या उसका यह काम कुछ मामूली था ?

उसकी एक आँख सूरज है तो दूसरी चाँद —इन ज्योतिर्मय आँखो के सम्मुख भी हम पाप मे रमे रहते हैं हमारी इसी प्रकृति को पुरुष दयानन्द तोड गया है ।

भला होता यदि आजाद हो जाने पर हम पुरुष के सच्चे अर्थ को समझकर पुरुष बनने का प्रयत्न करने

महर्षि दयानन्द के प्रति श्रद्धांजलि

श्री जी० ऐस० खापर्डे

महान् स्वामी के जीवन-काल मे बम्बई मे मुझे उनको देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैंने उनके व्याख्यान सुने थे और निजू वार्तालाप मे उनके सम्बन्ध मे विचार विनिमय भी किया था । उनके फोटो और चित्र जो स्थान-स्थान पर मुझे दिखाई पडते है वे स्वाभाविक से ही हैं परन्तु वे उनके नेत्रो की भव्य चमक उत्पन्न नही कर सकते और न ही उनसे उनकी वाणी की सुन्दरता और उनके व्यक्तित्व का प्रभाव ही व्यक्त हो सकता है जो उनकी गतिविधि मे व्याप्त रहते और उनके सम्पर्क मे आने वालो को मोहित कर लेते थे। वह सार्वजनिक भाषण देते समय कुर्सी या ऊँची चौकी पर और निजू वार्त्तालाप के समय अपनी प्रिय चटाई पर बैठा करते थे ।

स्वामी जी सस्कृत के प्रकांड विद्वान् और व्याकरण के विशेषज्ञ थे । उनका मस्तिष्क विविध ज्ञान-विज्ञान का भडार था । उनके उदाहरण बडे प्रभावशाली होते थे जिनका प्रयोग वह बडी बुद्धिमत्ता से करते थे और जिनसे उनके अपार ज्ञान-भडार का परिचय मिला करता था। उनकी वाग्मिता प्राचीन आचार्य शैली की थी परन्तु भाषण शैली इतनी आकर्षक होती थी कि सहस्रो श्रोता मत्र मुग्ध रहते और उनके सिद्धान्तो की ओर सहज ही आकृष्ट हो जाते थे ।

उनके वेद-भाष्य के सम्बन्ध मे जिसे वह ठीक मानते थे विवाद उठा और वह अभी तक समाप्त नही हुआ है। उन्होने आर्यसमाज की स्थापना की ।

मैं बडे भक्तिभाव से उनके अज्ञात चरणो मे अपनी विनीत श्रद्धांजलि अर्पण करता हूँ ।

पुरुष उस शक्ति का नाम है जो इस विश्व को चला रहा है जो इसमें व्याप रही है । वह सब मे परिपूर्ण हो रही है—वह सब जगह है सब कुछ है, सीमा उसकी है नही, बन्धन उसे सताते नही, उसकी एक बौछार मे विश्व के गँ स धुल जाते हैं, उसके प्रकाश की एक झलकी के फटते ही अबर मे अगणित तारे आँख खोल देते हैं, सगते किन्तु हम तो अनजाने फिर से उसी गर्त की ओर चल पडे हैं जिससे कि पुरुष दयानन्द ने हमे बचाया था। यदि आर्य समाज की कभी आवश्यकता थी तो वह आज है । हमे अभी बहुत कुछ करना है । आदि पुरुष दयानन्द के सम्मुख प्रतिज्ञा करे कि हम उसके पदचिह्नो पर चलते हुए इस विश्व को सच्चा आर्य बनायेंगे ।

वैदिक धर्म क्या सिखाता है ?

राष्ट्र में तेज और ओज कैसे आवे

आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ कुलपति महाविद्यालय ज्वालापुर-हरिद्वार

"न राज्य, नैव राजाऽऽसीत्"

वह कैसा सुन्दर समय होगा जब कि न राजा था और न राज्य सस्था थी।

फिर क्या था, काम कैसे चलता था ?

"धर्मेणैव प्रजा सर्वा
रक्षयन्ति परस्परम्"

धर्म से ही प्रजा परस्पर अपनी रक्षा करती थी।

भगवान् मनु ने भी

इस प्रकार के राज्य की कल्पना की थी।

धर्म शास्ति प्रजा सर्वा

प्रारम्भ मे जब मनुष्य सृष्टि हुई तब राजा नाममात्र का रहता था। असली राज्य सचालन तो धर्म ही करता रहता था।

फिर क्या हुआ

जब राज्यसस्था नही थी और न राजा ही था तब यह अवस्था कब तक रहती अथवा यह व्यवस्था कब तक चलती। ऐसी व्यवस्था तो जहाँ थोडी प्रजा होती है वही रह सकती है। ऐसी व्यवस्था वही रह सकती है जहाँ सात्विक बुद्धि के ही लोग रहते हो। पर ये लोग भी सात्विक बुद्धि के कब तक रहते।

क्योंकि

मनुष्य प्रकृति का पुतला है। प्रकृति के तीनो गुणो सत्व—रज—तम इसमे अवश्य रहेगे। कभी कोई गुण उभरेगा, कभी कोई गुण उभरेगा। कभी सत्व गुण ही रज और तम को दबा देगा, कभी तम ही सत्व और रज को दबा देगा। कभी दो-दो मिलकर एक-एक को दबाते रहेगे।

जब सत्व गुण का प्राधान्य रहा होगा, थोडी-सी प्रजा होगी तब भले ही धर्म शासन करता होगा और सब परस्पर धर्मपूर्वक बरतते होगे, परस्पर धर्मपूर्वक रक्षा करते होगे।

ऐसी अवस्था तभी होगी

जब सब ब्राह्मण ही ब्राह्मण होगे और विशुद्ध सात्विक वातावरण रहा होगा। फिर समय पाकर रजोगुण उभरा और उन्होने क्षात्रधर्म ग्रहण किया। महाभारत लिखता है

'ते द्विजा क्षात्रता गता"

जिन ब्राह्मणो मे रजोगुण उभरा उन्ही मे से क्षत्रिय बने—उन्होने रक्षा का भार लिया।

"ते द्विजा वैश्यता गता"

उन्ही मे से जिनकी वैश्यवृत्ति उभरी उन्होने कृषि उद्योग आदि सभाला।

"ते द्विजा शूद्रता गता"

जिन्होने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की सेवा का काम सभाला वे ब्राह्मण शूद्र हुए।

इस प्रकार काम सभाला जाता रहा। पर इस प्रकार भी कब तक सभालते। कालान्तर मे प्रजा बढती ही बढती गई—इतनी बढी कि अव्यवस्था होने लगी, अव्यवस्था रहने लगी। उपद्रव मचने लगे, कोई किसी की नही सुनता था—उच्छृङ्खलता बढ चली। प्रजा भी दु खी हुई, दु खी रहने लगी। तब प्रजा मनु के पास गई, अपना दु ख सुनाया। कहा कि आप तपस्या मे लग रहे हैं, हमारा क्या होगा ? तब मनु ने अपने पुत्र को राजा बनने का आदेश दिया। मनु की ७—७ पीढ़ियाँ

चली। इस पीढी मे कोई अच्छा भी राजा हुआ, कोई अत्याचारी भी हुआ। तब प्रजा इसी पीढी के पृथु राजा के पास गई और कहा कि आप ही हमारे राजा हूजिए। आप को हम राजसिहासन पर बैठायेंगे, आपकी आज्ञा का पालन करेंगे। आपको जितना चाहे धन देंगे। आपको राज्य सचालन के लिए कर (टैक्स देंगे) फिर राज्य सस्था पृथु से चली और चलते-चलते अब तक चलती रही—अब वह राज परम्परा टूट गयी—अब हमारे भारत मे पाश्चात्य प्रजातन्त्र आ गया है और चल रहा है। १५ वर्ष हो गये। अब राजा नामक प्राणी कही-कही दिखलाई पड रहा है ससार मे। वह भी नाममात्र का राजा।

अब हमारे यहाँ

राज-परम्परा थी तब राजा धर्म भाव से ही प्रजा का शासन करते-रहते थे। अधिकतर राज परम्परा धार्मिक की रही आनुवशिक ही रही बीच-बीच मे कोई अत्याचारी, अनाचारी, अधार्मिक प्रवृत्ति के राजे हुए तो ऋषि मुनियो ने। उनको सिंहासनसे उतारा तो दूसरे किसी धार्मिक राजा को सिंहासन पर बैठा दिया—पर राज परम्परा सहस्रो वर्षों तक चली और राजसस्था भी चली। इस प्रकार राजसस्था चिरकाल तक चली पर राजपरम्परा टूट गई। प्रजा अपनी मर्जी का राजा चुनने लगी और राजतन्त्र जाकर प्रजातन्त्र चल पडा। हमारे यहाँ राजा नही रहा तो ऋषि–मुनि–ब्राह्मण राजा को चुन लेते थे। अब ठेठ प्रजा चुनती है राजा को और 'राजा शब्द जाकर 'प्रेसिडेण्ट' 'अध्यक्ष' आदि नाम आ गए है या हो गए। पर हमारे देश मे वर्तमान चुनाव प्रणाली की-सी चुनाव-प्रणाली कभी न थी न कभी ऐसी प्रणाली का कभी भारतवासियो को स्वप्न ही आया। जो चुनाव-प्रणाली रलगड चुनाव-प्रणाली है जिसमे मतदान का अधिकार समस्त वयस्को (बालिगो) को है और साधारण व्यक्ति को भी मत देने के अधिकार है चाहे वह कितना ही मूर्ख क्यो न हो। इस तरह अज्ञ (मूर्ख –नासमझ) विज्ञ (समझदार–शिक्षित) प्राज्ञ (बुद्धिमान्, पण्डित) इन तीनो के रलगड मतो से प्रतिनिधि चुने जाते है। प्रतिनिधि जाकर विधान सभाएँ, विधान परिषदें बनाते है। लोक सभा बनती है, राज्यपरिषद् बनती है और प्रतिनिधि ही राष्ट्रपति को चुनते हैं, प्रतिनिधि ही महामन्त्री आदि राज्याधिकारी चुनते हैं। इस चुनाव-पद्धति मे स्त्रियो को भी मत देने और प्रतिनिधि बनने के अधिकार हैं।

प्राचीन समय मे भी

गणराज्य होते थे, स्त्री राज्य भी होते थे। कभी-कभी दस्यु राज्य भी रहते थे पर सबसे लम्बी परम्परा राजा महाराजाओ की ही रही जो वैदिक प्रथानुसार राज्यसचालन करते रहे।

एक बात यह रही

हमारे भारत मे एक समय ऐसा आया जब यह राज-परम्परा ईश्वरीय अश राजपरम्परा मानी जाने लगी थी और मानने लगे थे कि—

"ना विष्णु पृथिवीपति"

राजा विष्णु का ही अश होता है। जो विष्णु का अश नही वह राजा नही हो सकता और न माना जा सकता है।

इनके भी दिन पूरे हुए

और ये विष्णु के अश मिटते जा रहे हैं, नाममात्र के रह गये है जिनकी कुछ महत्ता भले ही हो पर सत्ता कुछ भी नही।

अब

प्रजातन्त्र भी सत्ता के केन्द्र बनते जा रहे है।

इतने कि

इस प्रकार के सवसत्तात्मक प्रजातन्त्र पद्धति से प्रजा ऊबने लगी है।

क्योंकि

यह प्रजातन्त्र राज्य अर्थ प्रधान राज्य बनते जा रहे हैं—इसमे धम को स्थान नही है। सब धर्म निरपेक्ष होते जा रहे हैं। धर्म का स्थान वर्तमान विज्ञान ने ले लिया

है और धर्म और विज्ञान का कोई साथ नहीं रहा है। विज्ञान अध्यात्म शून्य कोरे भौतिकवाद का समर्थन कर रहा है और राज्य सस्था को अर्थ और काम के पीछे अन्धाधुन्ध दौडा रहा है, ससार भी उसी के पीछे आँखें मूँदकर चल पडा है।

वैदिक राज्य पद्धति

धर्म प्रधान रही। हमारी सत्ता धर्म प्रधान रही, हमारी आर्थिक सत्ता धर्म प्रधान रही। हमारी कामना पूर्ति के साधन धार्मिक रहे।

हमारा धर्म

चार पुरुषार्थ मानता है।

१	२	३	४
धर्म	अर्थ	काम	मोक्ष

हमारा धर्म अर्थ धर्म को छोडकर नहीं चलता है। हमारे धर्म मे इच्छा और इच्छा पूर्ति के साधन धार्मिक हैं और धर्म को छोडकर नही चलते हैं

अर्थात्

अर्थ और काम ये दोनो पुरुषार्थ धर्म के साथ बन्धे हुए हैं। ससार मे अर्थ के पीछे कितना दौडेगे, कामनाओ के पीछे कब तक भागते रहेगे। आखिर इनकी भी कोई मर्यादा है—इनकी मर्यादा को ठीक रखने के लिए ही धर्म का अंकुश लगा रखा है हमारे धर्म मे।

स०ार दुखी क्यों है ?

इतना धन, इतनी सपत्ति, इतना वैभव, इतनी सत्ता, इतना बल, इतना सैन्य, इतने अस्त्र-शस्त्र होते हुए भी ससार के राष्ट्र क्यो अशान्त हैं ? जब इनके अपने देश मे अपने-अपने स्वतन्त्र राज्य हैं तब ये क्यो परस्पर ईर्ष्या-द्वेष मत्सर मे पडे हुए हैं ? क्यो परस्पर दबाना चाहते हैं, क्यो गुट बना रहे हैं, क्यो छोटे मोटे राष्ट्र को नहीं जीने दे रहे हैं। मानवता को तिलाञ्जलि देकर क्यों वर्ण-भेद—(रगभेद—काले गोरे भेद पर अकड रहे हैं—

इसीलिए कि

सत्ता ने—राज्यसस्था धर्म का साथ छोड दिया। सत्ता मे आध्यात्मिकता नही रही। पडी है सत्ता कोरे भौतिकवाद के पीछे-और अर्थ काम के पीछे और वर्तमान अध्यात्म-शून्य विज्ञान भौतिकवाद को अनन्तशक्ति प्रदान करके सासारिक सुख साधनो को बढाने मे योग दे रहा है।

मनु ने ठीक लिखा था

अर्थकामेष्वसक्तानां
धर्मज्ञानं विधीयते"

जो कोरे अर्थ और काम मे लगे हुए है डूबे हुए हैं उनके लिए हमारा यह धर्मशास्त्र नही है और अर्थ-काम लोलुप जन धर्म-तत्व को समझ भी नही सकता।

इसीलिए

भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है कि

"धर्माविरुद्धो भूतेषु।
कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥'

हे अर्जुन, मैं प्राणियो में जो कामनाएँ हैं उनमे धर्म से अविरुद्ध काम हूँ। अर्थात् अर्थ वह श्रेष्ठ है जो धर्म विरोधी न हो। कामना वह श्रेष्ठ जो धर्म विरोधी न हो।

हमारे जीवन के उद्देश्य

पवित्र हो, हमारे ध्येय पवित्र हो और उनकी प्राप्ति के साधन भी पवित्र हो।

हमें अर्थ चाहिए

कमाओ जितना चाहिए पर धर्मपूर्वक कमाओ—

हमारी कामनाएँ पूरी हों

करो पूरी कौन मना करता है पर उन कामनाओ की पूर्ति धर्मानुसार हो।

वे कामनाएँ कब पूर्ण होंगी

जब कामपूर्ति के लिए अर्थ भी धर्मानुसारी होगा। धर्म-शून्य अर्थ और धर्म-शून्य काम नाश का कारण बनेगा।

यह वर्तमान विज्ञान तो

धर्म की परवाह नही करता । करो जिस प्रकार से चाहें—अर्थ से अनर्थ से अर्थ । करो कामनाओ की पूर्ति यथेच्छ चाहे अर्थ से अनर्थ से ।

यदि यह विज्ञान

धर्मानुसारी हो तो किस को नही चाहिए । यदि विज्ञान धर्म को जो आध्यात्मिकता पर खडा है, खड़ा रहता रहा है—लेकर चले तो ।

फिर

ससार सुख-शान्ति का आगार न बनेगा क्या । यदि विज्ञान धर्म का पल्ला पकड कर चले तो ससार की ऋद्धि-सिद्धि समृद्धि नही बढेगी क्या ?

पर कौन सुनता हैं ?

महाभारत तक तो धर्म की गाडी ठीक चलती आयी हा पूर्व युगो मे

देवासुरसग्राम

चलते थे और खूब चलते थे

देवासुर सग्राम क्या थे ?

ये ही अध्यात्मवादी (देव) कोरे भौतिकवादी (असुर) इनके सग्राम ।

पहिले पहिले

असुर जीतते थे—ये छली कपटी, दम्भी अहङ्कारी रहते थे

अन्त मे

देवो की विजय होती थी ।

अब भी देवों की ही विजय होगी

वर्तमान विज्ञानवादी, भौतिकवादी थोडे समय के लिए जितना चाहे,

"नाचे कूदे, तोडे तान"

चाहे ससार थोडे समय के लिए धर्म अथवा अध्यात्म को भले ही ठुकराता रहे ।

पर अन्त मे

"यतो धर्मस्ततो जय '

जिधर धर्म होगा, धर्म रहेगा, वही जीतेगा ।

महाभारत के समय मे

आर्य जाति का रजोगुण पराकाष्ठा को पहुँच गया था । यहाँ तक कि राज्य-सत्ता-लोलुप धृतराष्ट्र और दुर्योधन पाण्डवो को निर्वाह के लिए पाँच ग्राम भी देने को तैयार न हुए

परिणाम

महाभारत का घोर विनाशी सग्राम हुआ

पर

महाभारत का युद्ध ससार पर यह परिणाम छोड गया, यह उच्च नैतिक तत्त्व सिखा गया कि

"यतोधर्मस्ततोजय '

जिधर धर्म उधर ही जय—

महाभारत के ज्योति ऋषि

कह गये—

हे ससारी लोगो क्यो इस तरह धर्म को छोडकर भटकते फिरते हो अर्थ और काम तुम्हे धर्म से भी मिलेंगे जिस धर्म की आधार शिला अध्यात्मवाद है । हाय ! क्या करूँ कोई नहीं सुनता मेरी । चिल्लाकर कहता हूँ, हाथ उठा उठाकर कहता हूँ—

"उर्द्धवबाहुर्विरौम्येष ।
न च कश्चित् शृणोति मे ।
धर्मादर्थश्च, कामश्च
स किमर्थं न सेव्यते '

धर्म क्या है ?

अभ्युदय और निश्रेयस दोनो मिलकर धर्म होता है । परम पुरुषार्थ नही करते, धर्मतत्व को नही समझते और भागते फिरते हैं कोरे भौतिकवाद की ओर कोरा अर्थ और काम उग्र सन्तान है अभ्युदयवाद—

वर्तमान प्रजातन्त्र

भारतवर्ष की धर्मभूमि के लिए उपयुक्त नही । यह पेड किसी समय बडा होगा तो भी धर्म के आश्रय के बिना सूखकर आ गिरेगा ।

स्वामी दयानन्द

उन्ही वेदोपवर्णित अध्यात्मवाद के परम उपासक थे। उसी आध्यात्मवाद पर आधारित धर्म का पुनरुद्धार करने आये थे और पुनरुद्धार कर गए—

जाते जाते

उसी वैदिक धर्म के उद्धारार्थ, परम्परा की रक्षार्थ

आर्यसमाज

की स्थापना कर गए

जिसको

दयानन्द जैसा पवित्र तपस्वी नेता मिला और जिस

आर्य समाज ने

अपने पिछले ८० वर्ष के इतिहास मे

ससार का पुरोहित

बनकर इतनी लोक जागृति की और वेद के शब्दो मे नाद किया, और कहा कि,

"राष्ट्रे वय जागृयाम
पुरोहिता स्वाहा–'

"हम ससार के पुरोहित है, राष्ट्र मे जाग रहे हैं" चिन्ता मत करो

वही आर्यसमाज

आज पिछडासा, थकासा प्रतीत होता है यह चिन्ता का विषय है।

प्राचीन समय में

जब राजा ठीक प्रकार से प्रजा का पालन अनुरञ्जन नहीं करता था, धर्ममर्यादा टूट जाती थी, ससार मे अत्याचार, अनाचार चल पडता था, ससार मे

मात्स्यन्याय

चल पडता था अर्थात् जैसे एक बडी मछली अपने से छोटी मछली को निगल जाती है और उन दोनो मछलियो को उन दोनो से बडी मछल निगल जाती है ऐसा ही व्यवहार प्रजा मे चल पडता था तब ऋषि लोग उद्धार का कोई उपाय ढूंढने के लिए अरण्य (जगल) का मार्ग लेते थे, वह त्याग-तपस्या ध्यानपूर्वक प्रजा के पतन का कारण ढूंढते थे और पतन को दूर करने, प्रजा को मर्यादा मे चलाने के उपाय सोचकर फिर प्रजा को कल्याणमार्ग बतलाते थे। क्योकि बिगडी हुई प्रजा मे धर्म-प्रवेश त्याग-तपस्या के विना नही हो सकता। ससार का असाध्य से असाध्य कार्य तप से ही सिद्ध हो सकता है—

जब धार्मिक राजा न रहे

तब ससार का उद्धार कौन करता, प्रजा को धर्म-मर्यादा मे कौन चलाता। वे ही ऋषि-मुनि-महात्मा! और कौन चलता!

वेद मन्त्र विपत्ति मे
यही तप का मार्ग बतलाता

'भद्रमिच्छन्त ऋषय —

ससार का कल्याण चाहने वाले ऋषि

'तपोदीक्षामुपनिषेदुरग्र

ऐसी विपिन्न दशा मे तप की ही दीक्षा लेते है

'ततो राष्ट्र बलमोजश्च जातम्

फिर उन्ही ऋषि मुनियो तपोरूपी सयम से राष्ट्र मे बल का सचार होता है, राष्ट्र मे ओज आता है

तदस्मै देवा उपसनन्तु

इसलिए उसी तपोमार्ग का अनुसरण करो

दयानन्द ने

इसी तपोमार्ग को अपनाया और भारत और भारतोद्धार द्वारा ससार के कल्याण का मार्ग बतलाया गया,

इसलिए आर्यो

यदि ससार का पुरोहित बनना है तो तपोमार्ग का अनुसरण करो नही तो ससार के पुरोहित बनने की बने रहने की डींग हांकने की बात मत करो।

वेदों और साइंस का सादृश्य

(श्री पं० गंगा प्रसाद एम० ए० रि० चीफ जज)

स्वामी दयानन्द सरस्वती

विचार-धारा

स्वामी दयानन्द की यह स्थापना थी कि वेदो म समस्त ज्ञान बीज-रूप मे विद्यमान है और उनकी शिक्षाएँ पूर्णत विज्ञानमूलक है। पश्चिम के लोगो को और पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त अन्य अनेको को यह स्थापना अयुक्तियुक्त और अतिशयोक्ति पूर्ण जान पडे तो इसमे आश्चर्य की कोई बात नही है क्योकि विज्ञान और धर्म का पारस्परिक सघर्ष कई शताब्दियो पयन्त यूरोप के इतिहास की एक मुख्य घटना रही है।

पश्चिमी यूरोप म विज्ञान का सर्वप्रथम सूत्रपात अरब के निवासियो के द्वारा हुआ जिन्होने बहुत से यूनानी ग्रन्थो का अनुवाद किया, कालेज स्थापित किए और गणित, बीजगणित और त्रिकोणमिति का विकास किया और खगोल शास्त्र, रसायन शास्त्र एव भौतिक शास्त्र की नीव डाली। परन्तु शीघ्र ही विज्ञान वेत्ताओ की ईसाई चर्च के साथ अनवन हो गई क्योकि विज्ञान की ऊहापोह म उन्हे अपनी धार्मिक मान्यताओ के लिए गम्भीर चेतावनी देख पडने लगी। नास्तिको पर अभियोग चलाने और उन्हे दडित करने के लिए रोमन चर्च द्वारा १३ वी शती मे निरन्तर धार्मिक न्यायालय स्थापित किए जाते रहे। १५ वी शती मे तो ये न्यायालय बडे निर्मम और क्रूर बन गए थे। तारक्वेन्दा (Tarquenda) ने जो १८ वर्ष तक धार्मिक न्यायालयो का प्रमुख अधिकारी रहा था तख्तो से बाँध कर १०२२० व्यक्तियो को जिन्दा जलाया, ६८६० के पुतले जलाए और ९७३२१ व्यक्तियो को अन्य प्रकार से दडित किया। चर्च के क्रोध का शिकार बनने वाले प्रसिद्ध विज्ञान वेत्ताओ मे गैलीलियो और ब्रूनो के नाम विशेष उल्लेखनीय है। गैलीलियो पर इस आरोप के आधार पर अभियोग चलाया गया कि उसका विश्वास कोपरनिकन (Copernican) सिद्धान्त मे था अर्थात् पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है न कि सूर्य पृथ्वी की। क्रूर यातनाओ के भय से उसने यह मान लिया कि सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है परन्तु बाद मे पुन उसने अपनी इस मान्यता का खण्डन कर दिया जिसके परिणाम स्वरूप वह जेलखाने मे डाल दिया गया। अनेक ब्रह्माण्डो की शिक्षा देने के आरोप पर ब्रूनो ीवित जला दिया गया। रिफर्मेशन (सुधार) युग का आरम्भ होने पर विज्ञान और वैज्ञानिको को दडित किया जाना प्राय बन्द हो गया था।

इस्लाम मत भी ज्ञान-विज्ञान के प्रसार के प्रति बहुत सहिष्णु न था। खलीफा उमर अथवा उसके प्रधान सेनापति अमरू की जिसके आदेश से ७ वी शती मे सिकन्दरिया का विशाल पुस्तकालय नष्ट किया गया था यह उक्ति प्रसिद्ध है कि **"यदि कोई ग्रन्थ वही शिक्षा देता है जो कुरान मे उल्लिखित है तब वह ग्रन्थ व्यर्थ है और यदि वह कुरान के ज्ञान के विरुद्ध शिक्षा देता है तब वह नास्तिक ग्रन्थ है और नष्ट कर दिया जाना चाहिए।"**

वैदिक धर्म के इतिहास मे विज्ञान और विज्ञान वेत्ताओ के दमन का एक भी उदाहरण नही मिल सकता। इसका कारण जानने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नही है। 'वेद' शब्द का अर्थ है 'ज्ञान' जो विद् धातु से बना है जिसका अर्थ है 'जानना'। अग्रेजी का शब्द 'विद्' (ज्ञान) भी इससे मिलता-जुलता है। इस प्रकार 'विद्' शब्द का वही महत्त्व है जो 'साइस' शब्द का है जो लैटिन शब्द 'सिओ Scio' से बना है जिसका अर्थ है 'जानना'। प्राचीन भारत मे समस्त ज्ञान-विज्ञान का स्रोत और

प्रकार वेद माने जाते थे। वैदिक साहित्य के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अग इस प्रकार थे —

(१) (अ) चार उपवेद—आयुर्वेद, अर्थवेद, गन्धर्ववेद धनुर्वेद।

(२) छ वेदाङ्ग—शिक्षा, कल्प धर्म सूत्र, श्रौत सूत्र सुल्व सूत्र) व्याकरण, निघण्टु, ज्योतिष।

(३) छ उपाङ्ग—दर्शन तर्क शास्त्र, अध्यात्म शास्त्र, मनोविज्ञान, आचार-शास्त्र, भौतिक शास्त्र)

वेदो मे समस्त ज्ञान बीज रूप मे विद्यमान है यह मान्यता सस्कृत साहित्य से परिपुष्ट है। शतपथ ब्राह्मण मे हम पढते हैं—

स ऐक्षत प्रजापति त्रय्यां वाव विद्यायां सर्वाणि भूतानि हन्त
त्रयीमेव विद्या मात्मानमभि सस्करवै इति-शत १०।४।२।२१-२२

समस्त प्राणियो के स्वामी ने अपने विश्व का यह कहते हुए परिवेक्षण किया "समस्त प्राणी तीन विद्याओ मे ग्रथित हैं अर्थात् वेद मे। आत्मा के सुधार वा सस्कार के लिए मुझे एकमात्र इस त्रयी विद्या का प्रयोग करना है।

तैत्तिरीय ब्राह्मण मे भी इसी बात की पुनरावृत्ति देख पडती है —

"अथ सर्वाणि भूतानि पर्यैक्षत। स त्रय्यामेव विद्यायां सर्वाणि भूतान्यपश्यत।
अत्र हि सर्वेषां छन्दसा मात्मा सर्वेषां स्तोमानां सर्वेषां प्राणानां सर्वेषां देवानाम्।
एत द्वै अस्ति एतद्ध्यमृतम्। यद् ह्यमृत तद् ह्यस्ति एतद् तद् यन्मर्त्यम्।

तब परमात्मा ने समस्त भूतो का परिवेक्षण किया। उसने समस्त भूतो को त्रयी विद्या मे निहित देखा। यही समस्त छन्दों की, स्तोमाओ की समस्त जीवन और ज्ञान की आत्मा है। यही अमरत्व है और नाशवान् प्राणियो के लिए जो चाहिये वह यही है।

वेदो को त्रयी विद्या इसलिए कहते हैं कि इनमे (१) ज्ञान (२) कर्म और (३) भक्ति (उपासना, प्रार्थना) का वर्णन है अर्थात् ये मानवमस्तिष्क की तीन प्रक्रियाओं—ज्ञान, इच्छा और अनुभूति—की द्योतक है। इस बात की वेदो के ४ विभागो अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद से भी असगति नही है जिनमे ज्ञान के सामान्य और विशेष ये दो उपविभाग हैं। ऋग्वेद (ऋचाओ का वेद) मे सामान्य ज्ञान का, यजुर्वेद (यज्ञो का वेद) मे यज्ञो वा कार्यों का, सामवेद मे भक्ति और उपासना का और अथर्ववेद मे विशेष ज्ञान का वर्णन है।

स्वामी दयानन्द को वेद भाष्य की एकमात्र प्रचलित परिपाटी को अङ्गीकार करने मे सन्तोष न हुआ। उन्होने अपनी ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका मे अनेकउद्धरण देकर यह सिद्ध किया कि वेद की शिक्षाएँ सर्वथा विज्ञानमूलक है और अनेक वैज्ञानिक सत्यो का वेदो मे उल्लेख वा सकेत हैं जिनका एक या दो शताब्दियो पूर्व यूरोप को पता भी न था। उदाहरणार्थ वेद के सृष्टि उत्पत्ति के सिद्धान्त को ले लीजिए जो अभाव से भाव की उत्पत्ति नही मानता। इस्लाम, ईसाइयत और यहूदीमत ये तीनो अभाव से सृष्टि की उत्पत्ति मानते है जो सर्वथा अवैज्ञानिक है। वेद बताते हैं कि सृष्टि की उत्पत्ति अनादि प्रकृति से होती है। महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका मे ऋग्वेद का नास दीय (ऋग० म० ८, ७, १० और यजुर्वेद (अ० ३१) का पुरुष सूत्र उद्धृत किया है तैत्तिरीय उपनिषद् के निम्नलिखित मत्र मे सृष्टि उत्पत्ति का बडा विस्तृत और बुद्धि सगत प्रकार वर्णित है—

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाश सम्भूत आकाशाद्वायु वायोरग्नि अग्नेराप।
अद्भ्य पृथिवी, पृथिव्या ओषधय ओषधिभ्योऽन्नम् अन्नाद्रेतोरेतस पुरुषः॥

निश्चय ही उस परमात्मा से आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी, पृथिवी से औषधि, औषधि से अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से पुरुष उत्पन्न हुआ।

यह नही मान लेना चाहिए कि एकमात्र स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही वेदो का बुद्धि सगत और विज्ञान-मूलक भाष्य किया है। ब्राह्मण ग्रन्थो और यास्क के निरुक्त मे जो अत्यन्त प्राचीन भाष्य सन्निहित हैं उन्ही के

आर्यसमाज के लिए एक खतरा

श्री विनायक ऐन महता

आर्य समाज की सुधार की लहर अपनी पूरी ऊँचाई तक उठी थी परन्तु उसकी शक्ति क्षीण हुई और वह पीछे की ओर हट गई। अब एक नई लहर उठ रही है। प्रश्न यह है कि क्या यह लहर सिद्धान्त शैथिल्य मे घुल मिल जायगी अथवा क्या यह उन सीमा चिह्नो को बहाकर जो पौराणिक हिन्दू धर्म को डंडे के बल पर प्रजातन्त्र के ढाँचे मे फिट होने से रोकते हैं चोटी पर पहुँचने मे समर्थ हो जायगी अथवा यह कायाकल्प हुए हिन्दू धर्म के रूप मे प्रकट होगी जिस पर एकेश्वरवाद वा एक मात्र ईश्वर की पूजा उपासना का चिन्ह होगा, जिस पर कर्म सिद्धान्त और वैयक्तिक प्रयत्न के द्वारा मुक्ति की प्रबल निष्ठा अंकित होगी जो पञ्चमहायज्ञो के सम्यक् अनुष्ठान की जीवन-ज्योति लिए होगी ? प्रोफेसर व्हाइट हैड ने धर्म की परिभाषा करते हुए लिखा है कि 'धर्म वह है जो मनुष्य अपनी एकान्त अवस्था मे करता है।' आर्य समाज ने जन-साधारण मे समीर उत्पन्न किया है (अर्थात् जागृति फैलाई है)। एकान्तावस्था मे आर्य के मस्तिष्क मे जो विचार घर करते है उन्हे आय समाज ने एक नई सुन्दर दिशा प्रदान की है। यही विचारधारा उस साँचे को दृढ करेगी जिसमे हिन्दू ढाला जा रहा है। राजनैतिक स्तर पर लौकिक उन्नति के साथ इसका कोई सम्बन्ध नही है, इसका सम्बन्ध चरित्र निर्माण से है। आर्य समाज की वर्तमान पीढी का यह दायित्व है कि यह चरित्र-निर्माण के कार्य को ऊँची से ऊँची चोटी पर पहुँचाएँ और आर्य धर्म को एक बार पुन जीवित शक्ति का रूप दे जिससे जब कोई व्यक्ति पथ-भ्रष्ट हो तब कोई भी व्यक्ति न्याय पूवक उन शब्दो का उच्चारण कर सके जो कृष्ण ने अर्जुन को कहे थे—यह अनार्यजुष्टम स्वर्ग्यम् अनार्यत्व है इसका परित्याग करो। उस दशा मे आर्य समाज की बहु देवतावाद की निन्दा और मानवीय प्रतिष्ठा की स्थापना का कार्य भूल न समझी जायगी। इसने अभी आर्य समाज के लिए उन्नति का तत्त्व छोडे रखा है। फिर भी एक खतरा बना हुआ है। राजनीति की मृग-मरीचिका इसे मार्ग-च्युत कर सकती है। राजनैतिक आकाक्षाएँ आत्मा का निर्माण करने वाली शक्तियो का स्वाभाविक विकास कुण्ठित कर रही है। लूथर राजनीति के वशीभूत हो गया था जिसका फल यह हुआ कि धर्म एकता के स्थान मे वैमनस्य का कारण बन गया और ३० वर्ष पर्यन्त गृह युद्ध होता रहा। क्या धर्मप्रचार की अग्नि के प्रज्वलित रखे जाने की आशा की जाय अथवा उदारता की मोहिनी ध्वनि को सुनकर विशुद्ध राजनैतिक उद्देश्यो के लिए समझौते की नीति अपनाकर सुधारक आर्य समाज के कार्यक्रम के समाप्त हो जाने की आशा की जाय ? उस अवस्था मे पौराणिक हिन्दू धर्म के उद्धार के लिए और हिन्दू नवयुवको और नवयुवतियो के रक्षण के लिए जो अपने परम्परागत जीवन-सूत्रो को छोडकर धर्म विहीनता की चट्टानो पर टकराकर नष्ट-भ्रष्ट होने वाले होगे दूसरे दयानन्द के प्रादुर्भाव की आवश्यकता होगी। आर्यसमाज के वर्तमान सूत्रधार ही यह बता सकते हैं कि दूसरा दृश्य क्या होगा जिस पर पर्दा उठेगा। क्या यह आत्मा को ऊँचा उठाने वाला सिद्धान्तो पर अटूट एव सबको आपस मे मिलाने वाला आर्य समाज होगा अथवा यह आरामतलब आत्म-सन्तुष्ट लोगो के वर्ग से बना हुआ अलग-थलग पडा हुआ समाज होगा।

अनुरूप स्वामी जी का वेदभाष्य है। सांख्य दर्शन मे कहा गया है—"बुद्धिपूर्वा वाक्य कृतिर्वेदे" "वेद मे वर्णित विषय बुद्धि पूर्वक है।" सायण महीधर आदि मध्यकालीन भाष्यकारो ने अपने युग अर्थात् पौराणिक काल की गर्हित ब्रह्म विद्या का अनुसरण करते हुए वेदो के माथे अंधविश्वास-पूर्ण क्रियाकलाप और अवैज्ञानिक मान्यताएँ थोप दी है। स्वामी दयानन्द वह महानुभाव थे जिन्होने अपने विशुद्ध भाष्य से वैदिक धर्म को प्राचीन पवित्र रूप प्रदान किया और दिखा दिया कि वेद की शिक्षाएं नितान्त विज्ञान-मूलक हैं। ऐसी स्थिति मे सच्चे धर्म और सच्ची साइंस मे विरोध क्योकर हो सकता है ? क्योकि दोनो का स्रोत परमात्मा है और दोनो ही दिव्य गुण बुद्धि पर अवलम्बित हैं जिसके द्वारा मनुष्य परमात्मा की वाणी (वेद) और उसके कार्य (प्रकृति) को समझने मे समर्थ होता है।

———

आर्यसमाज का रचनात्मक कार्यक्रम

[श्री प० भीमसेन विद्यालंकार]

ऋषि दयानन्द की सञ्जीवनी विचारधारा

किसी व्यक्ति व व्यक्तिसमुदाय की विशेष विचार धारा ही, उस व्यक्ति व समुदाय के रचनात्मक कार्यक्रमो मे प्रकट होती है। परन्तु यह रचनात्मक कार्यक्रम समय समय पर परिस्थितियो की भिन्नता के कारण बदलते रहते हैं। परन्तु समय समय पर परिवर्तित होने वाले कार्यक्रमो की प्रेरक भावना या आधारभूत मूल भावना, उपरिनिर्दिष्ट विशेष विचार धारा ही होनी चाहिए। ऋषि दयानन्द द्वारा पुन प्रसारित सजीवनी-जीवन देने वाली विचार धारा को यदि हम सक्षेप मे प्रकट करना चाहे तो यह कह सकते हैं कि वह ब्रह्मचर्य पर आश्रित-वेद विद्या या वैदिक स्वाध्याय को अपने सब कार्यक्रमों का मूल तत्व मानते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही उन्होने अपनी विद्वता योग साधना तथा लोक सग्रह शक्ति को अर्पित किया। इसी दृष्टि से उन्होने वैदिक यत्रालय परोपकारिणी सभा तथा साहित्य निर्माण का कार्य किया। आर्य समाजो का भी मुख्य उद्देश्य तथा कार्य यही था कि उनके द्वारा ब्रह्मचर्य वेद विद्या का प्रचार तथा प्रसार हो। अपने समय के राजा महाराजाओ धनियो तथा विदेशी सरकार मे लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तियो द्वारा यथासम्भव सहयोग लेकर वह ब्रह्मचर्य पर आश्रित वेद विद्या व वैदिक साहित्य का प्रचार करने के लिए यत्नशील रहते थे। उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह के साथ हुए पत्र व्यवहार मे भी वही उद्देश्य स्थान स्थान पर प्रकट होता है।

अग्रेजो के विदेशी शासनकाल मे—यथा सम्भव साधनो से वह इसी उद्देश्य की पूर्ति मे सलग्न थे। उनके निर्वाण के बाद उनके उत्तराधिकारी-शिष्यो स्वर्गीय प० गुरुदत्त जी तथा प० लेखराम जी भी इसी भावना से काम करते रहे। स्वर्गीय हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी और स्वर्गीय महात्मा हसराज जी ने भी इसी भावना से गुरुकुल कांगडी की स्थापना सचालन तथा डी० ए० वी० कालेजो क्रमश (दयानन्द एग्लोवैदिक स्कूल-कालेज) के आन्दोलन चलाए। १९४७ ई० विभाजन से पहले—देश विभाजन के पूर्वकाल मे यह दोनो सस्थाए—आन्दोलन के रूप मे चलती रही और दोनो सस्थाओ के सचालक ब्रह्मचर्य केन्द्रित वेद विद्या को मुख्यता देने की कोशिश करते रहे। वेद प्रचार—आर्य समाजो के उत्सव तथा आर्य समाज तथा आर्य समाज के विद्वानो द्वारा निर्मित साहित्य भी इसी दृष्टि से प्रकाशित होता रहा। परन्तु पार्टीशन के बाद—अग्रजो के चले जाने के बाद—आर्य समाज तथा उसकी सस्थाओ के कार्यक्रम बदलने स्वाभाविक थे। स्वराज्य मिलने के बाद उनके लिए यह सोचना स्वाभाविक था कि अब अपना राज्य होने पर, भारतीय आर्य वाङ्मय के प्रसार तथा ब्रह्मचर्य पर आश्रित सामाजिक सुधार सम्बन्धी आन्दोलनो को विशेष बल मिलेगा—परन्तु भारतीय राष्ट्रीय सरकार की Secular लौकिकराष्ट्र धर्म निरपेक्ष राष्ट्र होने की घोषणा ने इन सस्थाओ के सचालको को सरकारी सहायता व मान्यता प्राप्त कर, आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिये प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट विचार धारा को मदगति या क्षीण रेखा का रूप दिया है। साथ ही अनेक आर्य समाजी नेता आर्य समाज के रचनात्मक कार्यक्रम मे आवश्यक परिवर्तन करने के स्थान पर आर्य समाज को सामूहिक रूप से या आशिक राजनैतिक पार्टी का रूप देने के आन्दोलन मे लग गये है। उनका कहना है कि वर्तमान राष्ट्र की धर्मनिरपेक्ष नीति ईसाई धर्म प्रचार—तथा रशियन—युरोपियन और अमरीकन सभ्यताओ की विचारधारा को—अपना रही है। उसका विरोध करने के लिये हम राज शक्ति प्राप्त करने के लिये विधान सभाओ तथा भारतीय संसद मे—सगठित रूप मे आना चाहते हैं। केवल आना ही नही चाहते—भारतीय लोक समिति तथा हरियाणा लोक समिति आदि सगठन इसी उद्देश्य से बनाए गये है। अधिकाश आर्य समाजी

क्रियाशील कार्यकर्ताओं तथा नेताओं का ध्यान इस तरफ केन्द्रित हो रहा है। आज हमे आर्य समाज तथा ऋषि दयानन्द की विचार धारा को अक्षुण्य रखने के लिये विशेष प्रोग्राम बनाना चाहिए।

हमारी सम्मति मे यदि आर्यसमाजी व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से अपनी शक्ति का प्रयोग निम्नलिखित दिशा में करें तो अच्छा हो —

१ ऋषि दयानन्द निर्मित ग्रन्थो का विशेष रूप से प्रचार करें। प्रचार करने से पहले स्वय पढें अपने परिवार को पढ़ाए आर्यसमाजो तथा आर्यसमाजी शिक्षणालयो मे इनके पढाने की विशेष व्यवस्था की जाय।

सार्वदेशिक आर्य विद्या सभा ने इस दिशा मे सिद्धात भूषण आदि परीक्षाएं जारी की है—उनका विशेष रूप मे प्रचार किया जाय। गुरुकुलो तथा डी० ए० वी० स्कूलो कालेजो तथा आर्य शिक्षणालयो में ऋषि दयानन्द के ग्रथो के पढाने की व्यवस्था हो। यह पढ़ाने का काम संस्थाओं के मुख्य अधिकारियो मुख्याध्यापको तथा प्रिंसिपलो को स्वर्गीय महात्मा हसराज जी, आचार्य रामदेव जी आदि की भाँति अपने हाथ मे लेना चाहिए। सस्थाओ की साधारण स्थिति मे हिन्दी सस्कृत अध्यापकों को इन विषयो का सौंपना इनकी महत्ता को कम कर देता है। मुख्याध्यापक तथा प्रिंसिपल जिस विषय को पढाएंगे उसका महत्त्व विद्यार्थियों तथा अध्यापको की दृष्टि मे बढ़ना स्वाभाविक ही है।

२ सार्वदेशिक सभा तथा प्रान्तीय सभाओ को ऋषि दयानन्द कृत वेद भाष्य के हिन्दी तथा सस्कृत भावार्थो को पुस्तक के रूप मे छपवा कर प्रामाणिक वेद मन्त्र व्याख्या के रूप मे भारत की १४ भाषाओ और अग्रेजी भाषा मे अनूदित कराना चाहिए। आजकल जनता मे वैदिक साहित्य पढ़ने की रुचि बढ़ रही है परन्तु उन्हे आर्यसमाज तथा ऋषि दयानन्द की दृष्टि से प्रामाणिक मन्त्र भाष्य नहीं मि ।ए उनकी विचारधारा विकसित भारतीय स्वतन्त्र जनता के सामने नही आ रही। स्वर्गीय प० इन्द्र जी ने अपने प्रधानत्व काल में सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान मे यह काम शुरू कराया था परन्तु उनके प्रधान पद से हटते ही यह कार्य रुक गया इसे फिर से शुरू करना चाहिए। ऋषि दयानन्द की विचार धारा को प्रचारित करने के लिए यह रचनात्मक कार्य-क्रम इस समय की प्रबल आवश्यकता है।

दूसरी बात ब्रह्मचर्य आश्रमो की पुन स्थापना की है। ऋषि दयानन्द के सब आन्दोलनों का मूल ब्रह्मचर्य आश्रम का पुनरुद्धार था। इसी कारण वह बालविवाह बहुविवाह अनमेल विवाहो की रोक-थाम करना चाहते थे। गुरुकुल शिक्षणालयो ने इस दिशा में पर्याप्त सफलता प्राप्त की। डी० ए० वी० स्कूलो तथा आर्य शिक्षणालयो के विद्यार्थी आश्रम भी इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए बनाए गये गए थे—परन्तु १९४७ के बाद स्वतन्त्र भारत में तथाकथित कलचरल प्रोग्रामो ने—इस विषय में क्रियात्मक बाधा उपस्थित कर दी है। आर्यसमाजो तथा प्रतिनिधि सभाओ और सार्वदेशिक सभाओ को चाहिए कि वह सगठित रूप में—इन भोगवाद नृत्यगान-अश्लीलता को बढाने वाले सरकार द्वारा समर्थित कलचरल प्रोग्रामों का विरोध करें। यह भी एक रचनात्मक कार्य-क्रम है इससे भी ऋषि दयानन्द की विचार धारा को बल मिलेगा।

शिवरात्रि के शुभ अवसर पर हम यदि यह सकल्प करेंगे तो अपने अपने परिवार समाज तथा देश को कल्याण मार्ग की ओर अग्रसर होने मे क्रियात्मक सहयोग दे सकेंगे। आशा है आर्य-भाई—इन उपरिलिखित विचारो पर मनन करेंगे।

एक बंगला बने न्यारा

(श्री प्रिंसिपल भगवान दास, दयानन्द कालेज, सोलापुर)

एक अग्रेज विचारक ने सासारिक सुख के साधन चार लिखे है। वह कहते हैं कि (क) सुन्दर मकान रहने को जिसमे जीवन की सब आवश्यकताएँ हो (ख) सुयोग्य पत्नी जो मीठा मीठा बोले पर कभी-कभी प्रेम भाव मे आकर थोडा वहुत लड झगड भी ले (ग) आज्ञाकारी सतान जो बहुत न हो पर बहुत कम भी न हो (घ) मिल बर्तने वाले पडौसी जो दगा न करे बल्कि विश्वास-पात्र हो।

यह अग्रज के विचार हैं पर जीवन के साधारण विचार स्तर मे रहने वाले मनुष्यो की उडान भी इसी प्रकार की हुआ करती है तथा वह इन चार चीजो के गोरख धधे मे फँसे रहते हैं। बहुत बेचारे तो 'बगला बने न्यारा इसी फेर मे रहते है तथा जीवन मे कटुता पैदा कर लते हैं। कुछ ऐसे है जो पत्नी के मोह मे क्या नही कर देते। सतान तथा पत्नी के सुख के लिए रिश्वत तथा चोर बाजारी चालू है। जिसको देखो यही कहता है कि औलाद के लिए करना पडता है। भारत की यह नारियाँ जो अपने पतियो को गिरावट से ऊचाई की तरफ लाती थी आज स्वय गिरावट की ओर जा रही हैं तथा उनको अपनी सतान का पालन पोषण भी कठिन लगता है। घर के कार्य धधे का प्रश्न तो गौण हो गया है।

सतान की रक्षा ही क्या घर के कार्य धधे का प्रश्न तो गौण हो गया है। सतान की बात ही क्या कहनी उनका तो न घर मे तथा न बाहिर कोई मार्ग-दर्शक नही रहा है। इसलिए आज्ञाकारी का शब्द तो स्वप्न मे भी नही आ सकता। सतान बहुत भी न हो तथा बहुत कमी भी न हो यह बात भी एक राष्ट्रीय उलझन बन गई। चौथी बात कि पडौसी विश्वास-पात्र हो इस मे तो सत्य यह है कि हम भला किस से विश्वास-घात नही करते जो लोग हम से प्रेम करें। पहली तीन चीजो के लिए हम पडोसी को ही तो कुर्बानी का बकरा बना देते है। फिर पडोसी बेचारा भी तो उसी मिट्टी का बना हुआ है।

ऊपर के चार सूत्रो को मानने वाले भौतिक जगत् मे तो सुखी है हम कहाँ से चले थे तो कहा पहुँच गये। 'सर्वे भवन्तु सुखिन' का नाद लगाने वाले आप ही आज स्वार्थ-वाद के फदे मे फँस गये। किसलिए सधाये जा रहे घोडे की तरह एक खूँटे के इर्द-गिर्द चक्कर लगा रहे हैं तथा कुछ बन नही पाता। हमारे बगले बनने पर भी धन का सुख न हुआ। स्वार्थ मे सुख कहाँ ?

दयानन्द (जो उस समय मूल शकर थे) को यह चारो सुख प्राप्त करने मे कोई बाधा न थी। यह सात्विक जीवन व्यतीत करते हुए भी सासारिक सुख बहुत आसानी से प्राप्त कर सकते थे। उनके माता-पिता तो धनी थे। उनकी धर्म-निष्ठता पर भी किसी को कोई सदेह न हो सकता था। उनकी सज्जनता भी महान् थी। पर दयानन्द को तो इन सुन्दर साधनो के अन्दर भी सच्चे सुख की झलक न दीख पडी उनके मन के अन्दर एक सकल्प जड पकड गया कि जीवन का आनन्द कही और है। उस समय के प्रचलित रूढिवाद को भी उन्होने भ्रममूलक समझा तथा वह सच्चे आनन्द की तलाश मे निकल पडे। महाशिवरात्रि ने उनकी मानसिक रात्रि मे जिज्ञासा की ज्वाला को तेज कर दिया। सच्चा ईश्वर कहा मिलेगा ? वह प्रश्न उनको सताने लगा,

जब मन मे शुभ सकल्प जम जाता है तो रास्त

सविता

[श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, एम० ए० पी० एच० डी०]
[पुरातत्व विभाग काशी विश्वविद्यालय]

विश्व की प्रेरक शक्ति की सज्ञा सविता है। प्राण या क्रियाशक्ति ही देवचिति है। सब देवो की जो मूल प्रेरक शक्ति है वही सविता है। कहा है—

सविता वै देवाना प्रसविता।

यह विश्व क्रियाशक्ति का अनन्त भण्डार है। प्रत्येक परमाणु क्रियाशील है। क्रियाशीलता ही प्राण तत्त्व है जहाँ प्राण है वहा क्रिया है। प्राण तैजस तत्त्व है। जहाँ तेज है वहा गति तत्त्व ही देवत्व है। प्रकाश भी गति का ही दूसरा नाम है। अतएव देवता प्रकाशमय होते हैं।

हमारे विश्व के लिए सूय सबसे महान् शक्ति स्रोत हैं। सूर्य की रश्मि अहनिश शक्ति का वितरण कर रही हैं। रश्मियो के सहस्र सहस्र वितान से विश्व मे प्रकाश की ओर गति की अजस्र धारा उत्पन्न हो रही है। मेघो का उठना, वृष्टि का होना, जलो का प्रवाहित होना, वायु का वेग से स्थानान्तरित होना वृक्ष— वनस्पतियो का रस से पुष्ट होकर बढना और जीर्ण होना, मानव शरीरो का जन्म से मृत्यु पर्यंत विकसित होना इत्यादि सब सूर्य का ही फल है।

सूर्य की शक्ति का नाम ही सवत्सर है। जितनी शक्ति सूर्य केन्द्र से उतनी अवधि मे निकलती है जितनी अवधि मे पृथिवी अपने क्रान्तिवृत्त पर एक बिन्दु से चलकर पुन उसी बिन्दु पर आ जाती है उतनी सचित शक्ति की घनीभूत सज्ञा सवत्सर है। उसी मापदण्ड की अनुकृति पर पृथिवी के अपने अक्ष परिभ्रमण काल की सूर्य शक्ति की सज्ञा अहोरात्र है। अहोरात्र, पक्ष मास, अयन, सवत्सर सब सूर्य शक्ति की मात्राये है। इन मात्राओ का जन्म गतितत्व से ही हो रहा है गति ही ब्रह्माण्ड का अमृतरूप है विश्व की भौतिक वस्तुओ का निजी स्वभाव भारीपन मूर्छा तन्द्रा या मृत्यु का ही रूप है, मिट्टी के एक ढेले को हाथ से फेककर गति दीजिए। वह कुछ दूर जा कर गिर जाता है ठहरने की प्रवृत्ति उसका स्वभाव है 'ऐसे ही किसी गेंद को यन्त्र के बल से दूर फेंका जा सकता है पर वह भी उसी बल की समाप्ति पर स्थित भाव मे आ जाती है। बल का यही स्वभाव है। वह क्षीण हो जाती है, देश और काल मे बल की सीमा है। जितने बल हैं सब को गति कहा जा सकता है। गति ही बल है। विश्व मे पृथिवी आदि ग्रहो का परिभ्रमण नक्षत्रो की गति भी बल का रूप है। ये सब बल आदि भी शान्त होने चाहिये। इन को सदा गतिशील रखने के लिए किसी किसी ऐसी प्रेरकशक्ति की आवश्यकता है जो स्वय अक्षय हो, नित्य हो और असीम हो। वही प्ररणा शक्ति विश्व के अन्य सब बलो को सतत प्रेरणा दे सकती है। ऐसी शक्ति की दूसरी विशेषता यह होनी चाहिये कि वह स्वतन्त्र हो, उस का अपना केन्द्र हो। वैदिक भाषा मे केन्द्र को उक्थ

ईश्वर दिखा देता है। जिज्ञासा को लिए हुए चेले को स्वामी विरजानन्द जैसे गुरु प्राप्त हो गए। जिज्ञासा की अग्नि को सब सामग्री मिली। सच्चा ईश्वर कहाँ है 'जनता के कष्ट निवारण मे है।' अहा! वाहरे दयानन्द तू जिया पर ससार के लिए। तेरे निजी सुख गौण हो गये। एक ही विचार मन मे रहा कि दूसरे दुखी न हो। जहर पिया, कष्ट सहा पर सत्य कहा।

जो बगला ऋषि ने बनाया वह सचमुच न्यारा था। युग-युगो मे ऋषि के बगले मे करोडो प्राणियो का भला होता है। सासारिक सुख माना हमारा अधिकार है पर अधिकार के इस कीचड से बचने के लिए तो ऋषि दयानन्द के न्यारे बगले की शरण मे आना ही होगा। यही आज के भारत नही-नही ससार की माग है।

कहते है। उस उक्थ को बाहर से बल की आवश्यकता नही होती है। जिसमें बल स्वय उपस्थित होता है वही उक्थ कहलाता है—

उत्तिष्ठन्ति अस्मादिति उक्थम्।

उक्थ केन्द्र की सज्ञा सविता है जहां उक्थ केन्द्र का जन्म हो जाता है वहा ऐसी स्वय उद्भूत शक्ति का स्रोत प्रवाहित हो जाता है जो उस तन्त्र के अन्तर्गत अन्य सब बलो को प्रेरणा देता रहता है। इस विश्व के लिए ऐसे उक्थ केन्द्र की आवश्यकता थी। उसी की सज्ञा सविता है हमारे सूर्य को भी सविता कहा जाता है, क्योकि यह प्रेरणा देता है। इसकी प्रेरणा का विस्तार समझना चाहे तो विश्व का दर्शन करे और विज्ञान की आँख से उसके क्रियाकलापों को समझने का प्रयत्न करें। सविता की शक्ति की सज्ञा सावित्री है। जहां सविता या उक्थ केन्द्र होगा वहा सावित्री का होना आवश्यक है। सूर्य की जो शक्ति रश्मियो के रूप मे पृथिवी की ओर आ रही है वह उसकी सावित्री है। जब वही सूर्य शक्ति या सावित्री पृथिवी से लौट कर पुन सूर्य की ओर जाती है उसे गायत्री कहते हैं।

सावित्री पृथिवी तक आती है। गायत्री सूर्य तक जाती है। सावित्री गायत्री दोनो का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक ही गतिचक्र के वे दो अङ्ग है। इसी को विज्ञान की भाषा मे 'एति च प्रेति च' आती है जाती है कहते हैं। एति-प्रेति से गतिचक्र की पूर्णता होती है। विद्युत् शक्ति अपने धन केन्द्र से चल कर ऋण केन्द्र की ओर जाती है, और बार बार उसकी ओर लौटती रहती है। यही एति प्रेति रूप शरीर मे प्राषत अयानत कहलाता है। सावित्री पृथिवी तक पहुचते पहुचते गायत्री बन जाती है और सूय तक पहुचते पहुचते पुन सावित्री मे परिणत हो जाती है। यह प्रति क्रिया प्रतिक्षण हो रही है। इसी चक्र की सम्पूर्ण गति से और शक्ति का पृथिवी के साथ सयोग हो रहा है। इसी 'प्राणदयानत' चक्र के पूरा घूमने से शरीर की विद्युत् शक्ति उत्पन्न हो रही है।

व्यापक दृष्टि से सविता और सावित्री पर विचार करे तो सविता और सावित्री का द्वन्द ही अणु और महान् दोनों के जीवन का आधार है। जहा सविता से सावित्री का जन्म हो रहा है वही जीवन की अभिव्यक्ति है। बीज से जो सविता प्राण है वह क्रियाशील बनकर सावित्री रूप में प्रकट होता है, इसी का नाम जीवन है, ससार में हमें जितनी शक्तियो का परिचय है उनमें जीवन की शक्ति सब से अधिक रहस्यमय है। यान्त्रिक शक्ति उस सावित्री शक्ति की तुलना मे अति निम्नकोटि की है बीज में सचित सविता क्रियाशील बनकर अकुरित हो जाता है और फिर उससे ही महान विटप का जन्म होता है। सविता और सावित्री का सयोग ही धन विद्युत् और ऋण विद्युत का सयोग है। इन्हें ही पोषा वृषा प्राण कहते है।

सविता को सदा सावित्री सापेक्ष समझना चाहिये इस दृष्टि से उष्ण और शीत का द्वन्द सविता सावित्री का ही द्वन्द है। सविता एक योनि है, सावित्री दूसरी योनि है दोनों के मिथुन भाव से शक्ति का जन्म होता है। इसी व्यापक विज्ञान दृष्टि पर लक्ष्य करते हुए गोपथ ब्राह्मण की सावित्री विद्या मे उदाहरण के लिए सविता-सावित्री के बारह मियुन या जोडो का परिगणन किया गया है। मन वाक्, अग्नि, पृथिवी, वायु—अन्तरिक्ष, आदित्य द्यौ, चन्द्रमा नक्षत्र, नाद रात्रि, उष्ण— शीत, अभ्रवर्षा, विद्युत् स्तनमिलु, प्राण अन्न, वेद द्वन्द, यज्ञ-दक्षिणा, ये बारहमिथुन हैं जिनमे सविता—सावित्री के क्रियाशील गतित्व या यज्ञ, या रचनाचक्र को हम देख-समझ सकते हैं।

प्राण सविता है। उस मे अशनाया उत्पन्न होती है। वह अन्न रूप अपने मिथुन भाव से मिल कर शरीर के अन्न भाग का निर्माण कर रहा है। प्रत्येक तैजस केन्द्र में प्राण का चेतन व्यापार हो रहा है मिट्टी, पत्थर आदि असज्ञ वस्तुओ मे केवल भूतमात्रा है। उनमें प्राणमात्रा का व्यापार नही है। लता, वृक्ष वनस्पति मे भूत मात्रा के अतिरिक्त प्राणमात्रा भी है। वे अन्त सज्ञ प्राणी है। प्राण को ही तैजस कहते हैं। जहा विकास हो वही तैजस है इससे ऊपर कीट, पतग, पक्षी, पशु आदि ससज्ञ प्राणियों मे भूतमात्रा, प्राणमात्रा के साथ-साथ प्रज्ञा मात्रा भी है। मानव में प्रज्ञा मात्रा का विकास सब से अधिक है। मानव सविता प्राण का सब से उत्कृष्ट और विलक्षणउदाहरण है।

अतएव मानव को विश्व निर्माण प्रजापति का निजी या निकटतम रूप कहा गया है। प्रजापति ने जब यह

चाहा कि जैसा मैं हूँ वैसा ही हू बहू मैं किसी को बना डालू तब उसने मानव का निर्माण किया। मानव को देख कर प्रजापति को सन्तोष प्राप्त हुआ कि अब मेरी ठीक ठीक प्रतिमा बन गई। जैसे प्रजापति सहस्र या अनन्त वैसे ही उसकी प्रतिमा या मानव भी अनन्त है। मानव सवित शक्ति का अक्षय स्रोत है। मानवीय मन ही सविता कापूण रूप है। उस की प्रेरक शक्ति का अन्त नही हैं। मन की यह क्षण-क्षण में नई होने वाली प्रेरणा-शक्ति ही मानव का वह अक्ष॰ स्वर्ण हैं जिससे जीवन पर्यंत उसकी महिमा अक्षुण्य बनी रहती हैं मानव कभी भी इतना गया बीता नही होता कि उसके लिए आशा छोड दी जाय। सविता मानव का अमृत भाग है। प्रतिक्षण मानव पर मृत्यु का आक्रमण हो रहा है, वह शान्त सीमित बनकर जड भाव को प्राप्त हो रहा है, पर फिर उसी के उक्थ केन्द्र से शक्ति का अभिनव प्रवाह किसी अज्ञात कोटर से निकलता चला आ रहा है।

यदि मानव अपने लिए यह सोचने बैठे कि उसे क्या चाहिए तो इस प्रश्न का उत्तर दिया जा सकता है? सोना, चाँदी, भूमि, यश, आयुष्य, स्वास्थ्य आदि सब मानव के लिए प्राप्य और आवश्यक है पर इनका मूल्य सीमित है। मानव के लिए सबसे महत्वपूर्ण यही है कि मानव अपनी प्रेरणाशक्ति के अनन्त स्रोत के निकट पहुँच जाय। वह उसे पहचान ले और उस पर अधिकार कर ले। यही मानव का नवीन जन्म है। इसी प्रश्न का उत्तर गायत्री मन्त्र है जो केवल यही सिखाता है कि इस त्रिगुणात्मक जगत में जहाँ सब कुछ अनमोल रत्न भरे हैं हम मे से प्रत्येक मानव अपने सविता के सच्चे तेज को प्राप्त कर ले।

सविता की उपासना गायत्री मन्त्र है और विश्व मे अनन्तकाल के लिए मानवमात्र का यही सबसे बडा मन्त्र हो सकता है। बुद्धि में जो प्रेरणा शक्ति का या कर्मकाड का बडा भण्डार हैं उसे वश मे कर लें, बुद्धि जाग पडे तो फिर और सब स्वय पूरा हो जाएगा। सविता में ही यह शक्ति है कि उन झाड झखाडो को हटा दे जो बुद्धि को जकड कर व्यर्थ बना देती है। ऐसे कुंठित भावों को दुरित कहते हैं। सविता ही दुरितों को हटाता है। सविता देव है। उसमे गति और प्रकाश है। जैसे ही वह अपना कार्य आरम्भ करता है, शरीर प्राण और मन की जडता दूर होने लगती है।

प्रत्येक यज्ञ कर्म के आरम्भ मे सविता का प्रसव या जन्म चाहिए। सविता अपनी सावित्री शक्ति का प्रसव करने लगे तो तुरन्त प्राणमय जीवन आ जाता है और जितने देव या शक्तियाँ है वे तो स्वत उसके साथ आ जाती है। सविता ही देवो का जन्म देने वाला है। सविता न होगा तो कोई देव किसी यज्ञ मे भाग लेने के लिए आ नहीं सकता।

सविता प्राण है। उसे अन्न चाहिए। गोपथ ब्राह्मण के अनुसार भर्ग अन्न है, छन्द वरेण्य है, कर्म भी है। सविता का वरेण्य भर्ग हमे कर्म द्वारा प्राप्त हो सकता है। छन्द उस पात्र को कहते है जिसमे वस्तु का सग्रह किया जाय। छन्द एक भावपन या जीवन की लययुक्त गति है। उसी में भर्ग या छन्द सचय किया जा सकता है। यदि जीवन का छन्द नही बना तो उसमे कुछ भी सचित नही किया जा सकता। छन्द से छन्दित होकर ही अन्न का भाग हमारी पकड मे आता है। ज्ञानमात्रा कर्म की मात्रा और भूतमात्रा को वैदिक भाषा मे अन्न कहते है। भूत मात्रा मे पाँच भूत आते है, ज्ञान, कर्म को मिलाकर सात अन्न होते है। मन, प्राण, वाक् की समष्टि का नाम आत्मा है। तीनों को तीन प्रकार का अन्न मिलना चाहिये। मन को ज्ञान, प्राण को कर्म और वाक् या भौतिक शरीर को पचभूत या अर्थ या भौतिक पदार्थ रूपी अन्न चाहिये।

भूतमात्रा की वैदिक सज्ञा वाक् है क्योकि पचभूतों मे सूक्ष्मतम आकाश का गुण होने से वाक् या शब्द पाँचो का प्रतीक मान लिया गया है। सविता के साथ जीवन का छन्द और उस छन्द से छन्दित होने वाले जीवन रस का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन पर विचार करना ही जीवन का स्रोत, लक्ष्य और सगठन को धीर भाव से सोच समझ लेना है। यही सविता का सग्रहणीय मार्ग है। पर यह प्राप्त कैसे हो सकेगा? इसकी कुंजी जब तक न मिले

श्री महर्षि दयानन्द का देवत्व

(श्री प० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड (देव मुनि वानप्रस्थ)

ऋग्वेद ७ ६६ १३ मे एक मन्त्र आता है जिस मे देवो का लक्षण इन महत्त्वपूर्ण शब्दो मे बताया गया है —

ऋतावान ऋतजाता ऋतवृधो घोरासो अनृत-द्विष। अर्थात् देव (ऋतावान्) सत्य का व्रत धारण करने वाले (ऋतजाता) सत्य के कारण प्रसिद्ध (ऋतावृध) सत्य को सदा बढाने वाले—सत्य के समर्थक और (घोरास अनृतद्विष) असत्य या झूठ के घोर द्वषी-विरोधी असत्य का प्रबल खडन करने वाल होते हैं। ब्राह्मण ग्रन्थो मे सत्यमया उदेवा (कौषीतकी ब्रा० २।८) 'सत्य सहिता वै देवा' (ऐत० १०६) विद्वासो हि देवा। (शतपथ ३,७,३,१०) इत्यादि वचन पाये जाते हैं, जिनमे सत्य निष्ठ विद्वानो को देव के नाम से पुकारा गया है किन्तु वेदो मे सत्य के समर्थन के साथ असत्य का घोर खण्डन भी विद्वानो का कर्त्तव्य बताया गया है। महर्षि दयानन्द पर वेदो के देवो का यह लक्षण पूर्णतया चरितार्थ होता है।

इसी देवत्व से प्रेरित होकर महर्षि ने (सत्यार्थ प्रकाश) लिखा, जिसकी प्रारम्भिक भूमिका मे उन्होने स्पष्ट कहा कि मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। इसलिए विद्वान् आप्तो का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यो के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वय अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द मे रहे।' इत्यादि।

महर्षि दयानन्द के अनुयायी आर्यों के अन्दर यह सत्य के मण्डन और असत्य के खण्डन की भावना पहले जितनी प्रबल थी अब उतनी प्रबल नही प्रतीत होती। पुराने आर्य सत्य सिद्धान्तो को जानने के लिए स्वाध्याय

तब तक जीवन की योजना पूरी नही हो सकती। यही उपाय है 'धी की प्राप्ति का। गायत्री उपनिषद् के अनुसार कर्माणि धिय अर्थात् कर्म की सज्ञा धी है।

ओ३म् भूर्भुव स्व तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो न प्रचोदयात्।

ओकार की अ-उ-म् मात्राएँ त्रिगुणात्मक जगत् का अव्यक्त प्रतीक हैं। भू भुव स्व रूपी व्याहृतियाँ उसी का व्यक्त सकेत है। इस विश्व से हमे पाला पडा है। इस महतो महीयान् क्षत्र पर हमे अधिकार करना है। यह हमारा जन्म सिद्ध दायाद है। इसमे सब कुछ है। विश्व-कर्मा की इस हवि मे सारे भोग्य पदार्थ हैं। वे हमे कैसे मिलें? उस दायाद मे हमारा भाग कितना है? इन प्रश्नो का उत्तर सीधा है। हम अपने जीवन के लिए जैसा छन्द बना सकें वही और उतना ही हमारा है। चुनना हमे है और हम चुनने मे स्वच्छन्द हैं। चुनाव करने के बाद प्राप्ति तभी होगी जब धी या कर्म शक्ति पर हमारा अधिकार होगा। उस कर्म को कौन चलाएगा? वही सविता या उक्थ केन्द्र जो हमारा अपना केन्द्र है। कही बाहर से वह प्रेरणा शक्ति नही आयेगी। बाहर से जितनी मात्रा उधार ली जाती है वह कुछ देर तक साथ देती है फिर समाप्त हो जाती है। जब वह हमारा उक्थ बन जाती है तब वह हमारे प्राण और मन को स्वय सचालित करने लगती है।

ज्ञान का प्रकाश और कर्म की शक्ति हम बाहर से ले सकते हैं पर अन्ततोगत्वा अपने सविता का तेज बुझता नही, वह परिपक्व तेज या भर्ग होता है। उसकी ज्योति या आभा निज केन्द्र मे बनी रहती है। सूर्य इस विश्व का सविता है। उदय होने से पूर्व प्राक्सूर्य का सूर्य सविता कहलाता है क्योंकि उसमे प्रेरणात्मक प्राण की मात्रा सबसे अधिक रहती है। गायत्री और सन्ध्योपासना द्वारा उसी सविता प्राण या उद्बोधनात्मक आकस्तत्व का आवाहन किया जाता है।

—,०—

किया करते थे और असत्य के निराकरणार्थ मौखिक व लिखित शास्त्रार्थ आदि साधनो का आश्रय लेते थे जिससे पाखण्ड की अधिक वृद्धि न होने पाती थी और ऐसा करने मे लोगो को भी भय वा सकोच होता था किन्तु अब एक तो आर्यो म स्वाध्याय की प्रवृत्ति कम हो गयी है जिससे बहुत से लोगो को वैदिक सिद्धान्तो का ज्ञान ही नही है, जिनको है उनमे से बहुतक्रम के अन्दर यह योग्यता और लगन है कि वे असत्य और पाखण्ड का युक्तियुक्त खण्डन निर्भयता से कर सकें। इसका परिणाम यह हो रहा है कि देश विदेश मे असत्य और पाखण्ड की वृद्धि होती जा रही है क्योकि अब लोगो को आर्यसमाज जैसी सस्था का भय नही रहा जो निर्भयता से असत्य का खण्डन करेगी और आवश्यकतानुसार शास्त्रार्थ के लिए ललकारने मे भी सकोच न करेगी। कितनी ही पाठ्य तथा अन्य पुस्तको तथा पत्रिकाओ मे वेद, वैदिक धर्म, वैदिक-सस्कृति तथा प्राचीन शास्त्र विषयक अशुद्ध बाते लिखी जाती हैं और आर्य विद्वानो द्वारा उन पुस्तको और लेखो की प्राय उपेक्षा के कारण पाठको और युवक वर्ग मे भ्रम फैलता है। यह उचित ही है कि कि मतभेद होने पर भी कटु, कठोर और चुभने वाले अनुचित शब्दो का प्रयोग न किया जाए किन्तु युक्तियुक्त उचित प्रभावजनक शब्दो मे सप्रमाण असत्य और पाखण्ड का निवारण भी आवश्यक कर्त्तव्य है चाहे वह कुछ अप्रिय भी लगे। अत मैं सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के सर्व-सम्मति से गत ८ अक्टूबर को नई देहली मे निर्वाचित प्रधान के रूप मे समस्त आर्य विद्वानो का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि वे युक्तियुक्त सप्रमाण, यथासभव कोमल किन्तु स्वय प्रभावजनक शब्दो द्वारा असत्य और पाखण्ड के खण्डन करने मे सकोच न करें। असत्य का निराकरण भी देवत्व का एक आवश्यक अङ्ग है।

श्रद्धांजलियाँ

सरसैय्यद अहमदखाँ

स्वामी दयानन्द सरस्वती न कवल विद्वान् ही थे अपितु वह बहुत सज्जन थे। उनमे सच्चे योगी और तपस्वी के गुण थे। उन्होने एक ईश्वर की पूजा सिखाई जो विशुद्ध एव निराकार है। हमारी स्वामी जी क साथ घनिष्ठता थी और हम सदैव उनका बहुत आदर करते थे। वह इतने विद्वान् और भले महापुरुष थे कि उन्होने अपने को अन्य सब मतावलम्बियो क लिए श्रद्धा का पात्र बना रखा था। उन जैसा महान् व्यक्ति इस समय भारत भर मे देखने को न मिलेगा।

श्री फ्रेडरिक फैनथोम

उन जैसा दार्शनिक सभवत भारत मे फिर कभी उत्पन्न न होगा।

प्रो मैक्स मूलर

उन्होने पौराणिक हिन्दू धर्म के महान् सुधार का कार्य प्रारम्भ किया और यह उदार विचारो के महानुभाव जान पडते है। उन्होने वेदो के भाष्य छपवाए जिनसे उनके सस्कृत के महान् पांडित्य और विद्वत्ता का परिचय मिलता है। उन्होने विधवाओ क पुनर्विवाह की अनुमति दी और लडको लडकियों के विवाह की आयु बढाने के आन्दोलन का समर्थन किया और खान पान एव जात-पात की रूढियो को तोडा। उन्होने मूर्तिपूजा और अनेक देवी देवताओं की पूजा उपासना का खण्डन किया। वह शास्त्रार्थ महारथी थे और उनका प्रभाव दिन पर दिन बढता चला गया। उनका आर्य समाज अब भी बडा महत्वपूर्ण और उन्नतसमाज है।

राष्ट्र-निर्माता दयानन्द

—श्री दुर्गादास जी

स्वामी दयानन्द उन महापुरुषो मे थे जिनका भारत अतीव ऋणी है। ससार का समझदार शिक्षित वर्ग उनका अनुयायी प्रशसक वा समर्थक है। शुद्धिआन्दोलन के द्वारा उन्होने हिन्दुओ के धर्म-परिवर्तन के विरुद्ध पक्का बाँध बना दिया था। अपने अगाध पाडित्य से अपने उच्च नैतिक चरित्र से और सत्य पर आरूढ रहने की अपनी दृढता से उन्होने हिन्दू-समाज की विचार-धारा को अच्छे रूप मे बदल दिया था।

धर्म सशोधक के रूप मे उन्होने मूर्तिपूजा गुरूडम अन्धविश्वास और प्रत्येक प्रकार के धार्मिक कपटप्रपच से डटकर युद्ध किया। समाज से शोधक के रूप मे उन्होने ब्रह्मचर्य और विवाहित जीवन की पवित्रता एव सयम का प्रचार किया। उन्होने बालविवाह के विरुद्ध अपनी वाणी और लेखनी से काम लिया और इस दुष्प्रथा तथा इससे होने वाले शारीरिक और चारित्रिक अनिष्ट के विरुद्ध समझदार हिन्दुओ मे विद्रोह की भावना भर देने मे वह सफल हुए। उन्होंने बालविधवाओ की दयनीय अवस्था की ओर हिन्दूसमाज का ध्यान आकृष्ट किया था। उनके पुनर्विवाहो को प्रोत्साहित किया। हिन्दू अनाथ बच्चो और देवियो की विधर्मियो से रक्षा के लिए उन्होने अनाथालयो और आश्रमो की स्थापना को भी प्रोत्साहन दिया। निस्सदेह उन्होने अपने महान व्यक्तित्व से और निरन्तर प्रचार से हिन्दुओ मे जागृति उत्पन्न की और उनकी युगो की उदासीनता एव अकर्मण्यता को दूर भगाया।

स्वामी जी स्वदेशी थे और भारतीयो की आर्थिक दासता को भली भाँति अनुभव करते थे। उन्होने अपने उदाहरण से अपने लेखो से और अपने व्याख्यानो से भारत मे बनी वस्तुओ के व्यापक प्रयोग की शिक्षा एव प्रेरणा दी।

स्वामी जी देशभक्त थे और जो व्यक्ति उनके सम्पर्क मे आए उनमे देश प्रेम की भावना भरने मे सफल हुए। उन्होने राजनीति के साथ सीधा सम्पर्क नही रखा। दूरदर्शी और कुशल माली की तरह उन्होने भूमि को साफ करने और अच्छा बीज बोने पर ध्यान रखा। अपने को ऊपर से पृथक रखकर एक ऋषि की भाति वह ऋषि थे। वह मूल को ठीक करने मे व्यस्त रहे। उन्होने देखा कि देशवासियो की सचरित्रता क अभाव के कारण ही समस्त राजनैतिक अनिष्ट व्याप्त हो रहे हैं। उनकी यह मान्यता ठीक थी कि यदि भारतीय प्रजा शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ, धार्मिक दृष्टि से शुद्ध और सामाजिक दृष्टि से परिष्कृत हो जाय तो उसका राजनैतिक योगक्ष म सुनिश्चित है। इस दृढ विश्वास के साथ वह जाति के धार्मिक एव सामाजिक सुधार मे सर्वात्मना सलग्न रहे। सामाजिक बुराइयो और धार्मिक मिथ्या विश्वासा के विरुद्ध भयकर युद्ध करते हुए उन्होने अपना जीवन व्यतीत किया और हिन्दू समाज से उन्हे सफलता पूर्वक बहिष्कृत करके उन्होने राष्ट्रीयता की सुदृढ नीव डाल दी।

यह सत्य है कि आयसमाज राजनैतिक सघटन नही है और इसीलिए उसने चालू राजनीति मे भाग नही लिया। विधर्मियो से हिन्दुओ की रक्षा करने मे भ्रष्टाचार और सरकारी अत्याचार का निराकरण करने मे और देश के हित के कार्य मे सदैव अग्रसर रहने आदि आदि से आर्यजन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे चमकते रहते है। विशुद्ध धम का परिपालन करने, वाद विवाद मे निपुण होने और दुर्बलो असहायो और पीडितो का रक्षक होने से आर्य समाज का सदस्य जहाँ कही होता है वह वहाँ अपना स्थान बना लेता है। स्वामी दयानन्द का अनुयायी धार्मिक उत्साह, सच्ची समाज सेवा और देश प्रेम के लिए प्रसिद्ध रहता है।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द न केवल अद्भुत धर्म्म के पुनरुद्धारक एव समाज-सुधारक ही थे अपितु वह अपने समय के सर्वोच्चराष्ट्र-निर्माता भी थे।

पंजाब के हिन्दू सिक्ख विरोध का मूल कारण

प्रो० पृथ्वीपाल तारा एम० ए० (इतिहास विभाग के अध्यक्ष)
डी० ए० वी० कालेज जालंधर

"डा० गण्डासिंह का उपर्युक्त शीर्षक एक लेख केरल विश्वविद्यालय त्रिवेन्द्रम की पत्रिका के अप्रैल १ के अंक में छपा था जिसकी ओर श्री प्रिंसिपल भगवानदास जी (दयानन्द कालेज शोलापुर) ने सार्वदेशिक सभा का ध्यान आकृष्ट किया। सभा ने श्री प्रिंसिपल सूर्यभानु जी डी० ए० वी० कालेज जालन्धर से इसका उत्तर लिखने की प्रार्थना की। उनकी प्रेरणा पर श्री प्रो० पृथ्वीपाल जी ने यह लेख लिखने की कृपा की है जिसके लिये सभा उनकी और प्रिंसिपल द्वय की आभारी है। इस लेख का हिन्दी अनुवाद यहाँ दिया जा रहा है।

—सम्पादक—

एक मित्र ने केरल विश्वविद्यालय की पत्रिका मे प्रकाशित लेख की एक प्रति भेजी है जिसका शीर्षक है पंजाब मे हिन्दू सिख विरोध का मूल कारण" और जिसके लेखक है श्री डा० गण्डासिंह। डा० सिंह के ऐसे निबन्ध का केरल मे प्रकाशन जिसका एक मात्र सम्बन्ध पंजाब के साथ है रहस्य पूर्ण प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यान मे रखने योग्य है कि अन्य विश्वविद्यालयो की पत्रिकाए साहित्यिक, वैज्ञानिक वा सामाजिक समस्याओ से सम्बद्ध सामग्री के प्रकाशन तक अपने को सीमित रखती है परन्तु केरल विश्वविद्यालय की पत्रिका ने न केवल ऐसे विषय पर लिखे हुए लेख को स्वीकार करना और प्रकाशित करना ही, अपितु उसे अच्छा स्थान प्रदान करना उपयुक्त समझा, जिसमे केरल के लोगो की बहुत कम रुचि होने की कल्पना की जा सकती है। ऐसे विषय से जिसे डा० गण्डासिंह ने चुना है भले ही वह विशाल अध्ययन का हो वा अल्प अध्ययन का, अनुसंधान और अध्ययन की विशेष प्रेरणा मिल सकती है यदि इसके पीछे उद्देश्य शुद्ध हो। परन्तु इस विषय मे उद्देश्य शुद्ध नही है और यह बात लेख के प्रकाशन से सम्बद्ध परिस्थितियो से जिनका ऊपर विश्लेषण किया गया है सुस्पष्ट है। इसके अतिरिक्त डा० सिंह ने सिख इतिहास के क्षेत्र मे जो अनुसंधान कार्य किया है वह न तो निष्पक्ष है, न योजनाबद्ध है और न न्याय-संगत ही है। सिख इतिहास के अन्वेषक के रूप मे उनका यह पक्षपात सर्वविदित है कि परमात्मा की विशिष्ट सन्तान के रूप मे एक मात्र सिखो मे ही विशेषताएँ थी चाहे वे राजनैतिक थी वा धार्मिक और सिखेतर जन तभी गुण युक्त बने थे जबकि वे पन्थ मे दीक्षित कर लिए गये थे। यह पक्षपात उनके कार्य मे पग पग पर दृष्टिगोचर होता है। उनके एक ग्रन्थ मे बन्दा बहादुर को बंदासिंह मे परिवर्तित करने का चतुरतापूर्ण यत्न किया गया है। उनकी पक्षपात पूर्ण मनोवृत्ति का यह एक ज्वलन्त उदाहरण है। आनन्द यह है कि उनके इस प्रयत्न की सिख इतिहास के सभी प्रगतिशील लेखको ने उपेक्षा की है। प्रस्तुत विषय मे उनकी पक्षपात पूर्ण मनोवृत्ति का प्रमाण उनके इस दोषारोपण मे प्रतिलक्षित हो रहा है कि वे हिन्दू डोगरे और पुरबिए ही थे जो प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप से सिख साम्राज्य के पतन के लिए मुख्य रूप से उत्तर दाता थे जो गुप्त रूप से शत्रु से जा मिले वा जिन्होंने प्रकाश्य रूप मे विश्वासघात किया था।" स्कूल का बच्चा तक यह जानता है कि सिख साम्राज्य के पतन के कारण सिख सरदारो, मुख्यत सरदार तेजासिंह, लालसिंह और सन्धन वालियों की स्वार्थपरता, धूर्त्तता, गुप्त निष्ठा और खुला विश्वासघात था। परन्तु यत सिख राज्य के आन्तरिक इतिहास से केरल के लोग अधिक परिचित नही हैं अत डा० सिंह जानते है कि उन्हे सुदूर दक्षिण मे प्रकाशित लेख की तथ्य हीन बातो से सहज ही छुटकारा मिल सकता है।

डा० सिंह का मुख्यतम प्रतिपाद्य विषय यह है कि "ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दू-सिख विरोध और वैमनस्य

इस लेख का अंग्रेजी मूल लेख आगे छपा है।

का कारण वह अशिष्ट भाषा है जिसका आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश में गुरु नानक और उनके अनुयायियो के सम्बन्ध में प्रयोग किया है। यह ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) १८७५ मे छपा था और इसी वर्ष बम्बई मे सर्व प्रथम आर्य समाज की स्थापना हुई थी।

इससे पूव सिख राज्य के पतन के सम्बन्ध मे डा० सिंह के जिस कथन का उल्लेख किया गया है उसकी ऊहा पोह का परिणाम श्रीयुत् आर० ऐल० स्टीवन्स के शब्दो मे—'इ जीनियर अपने बनाए बम से ही उड गया' के समान होगा क्योकि उन्होने यह स्वीकार किया है भले ही दब शब्दो मे कि १८७५ से बहुत पूव ही यह वैमनस्य विद्यमान था। वह कहते है—हिन्दू डोगरों और पुरबियो आदि के विरुद्ध सिखो की भावनाओ से लाभ उठाने के लिए अग्रजो के लिए गदर के अतिरिक्त अन्य कोई अवसर उपयुक्त न हो सकता था" (रेखाकित शब्द लेखक के अपने है) इससे स्पष्ट है कि गदर के समय हिन्दुओ और सिखो मे वैमनस्य था और वह वैमनस्य १८४९ से अर्थात् सिख राज्य के पतन के काल से ही विद्यमान था और अग्रज लोग सफलता पूवक उससे लाभ उठा सकते थे। इस पर भी डा० गडासिह की स्थापना यह है कि हिन्दू सिख वैमनस्य का मूल कारण स्वामी दयानन्द के कुछ शब्द हैं जिनका उन्होने १८७५ मे प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश मे प्रयोग किया था। इस प्रकार इस परिणाम पर सहज ही पहुचा जा सकता है कि 'सत्यार्थप्रकाश के उदय से २५ वष से अधिक समय पूर्व ही हिन्दुओ के कुछ वर्गों के विरुद्ध' सिख-भावना' पाई जाती थी जिसका डा० सिंह के मतानुसार अग्रेज लोग लाभ उठा सकते थे। ऐसी अवस्था मे डा० सिंह यह कहने का क्योकर साहस कर सकते हैं कि सत्यार्थ प्रकाश के उदय और प्रथम आय समाज के संस्थापन के समय से ही पजाब मे हिन्दू सिख विरोध का प्रादुर्भाव हुआ ?

प्रिंसिपल सूर्यभानु जी के इस वक्तव्य का खडन करते हुए कि अग्रजो ने अपने साम्राज्य के हित मे जान बूझ कर सिखो को हिन्दुओ के विरुद्ध भडकाया था डा० सिंह ने कूका लोगो की बात उठाई है जिन्होने—'अपने असीम उत्साह और मतान्धता जनित आक्रोश से प्रेरित होकर अनेक हिन्दुओ की समाधियो को धराशायी कर दिया था। डा० सिंह की मान्यता है कि इस कार्य के लिए अग्रेजो ने उन्हे नही उकसाया था। डा० सिंह जैसे इतिहास के विद्वान को यह पता होना चाहिए कि ये कूका लोग पक्के राष्ट्रवादी भी थे और उस सम्प्रदाय की ओर से अग्रजी शासन के लिए जो खतरा उपस्थित हुआ था उसके निराकरण का अग्रज लोग यत्न कर रहे थे। उन के इस यत्न मे उस सम्प्रदाय को किसी प्रकार के प्रोत्साहन का दिया जाना अचिन्त्य है। अग्रज विरोधी इस तात्कालिक विस्फोट वा विद्रोह को प्रोत्साहित करने का अभिप्राय होता विद्रोह को और अधिक भडकाना।

इसके आगे विद्वान् डा० महोदय यह कहते हैं कि "सिख शासन-काल में गत शती के मध्य तक हिन्दू सिख वैमनस्य जैसी बात को कोई जानता भी न था। "यदि महाराजा रणजीतसिंह के शासन-काल मे यह बात थी तो इसका श्रेय स्वय महाराजा को वैयक्तिक रूप मे प्राप्त है जिन्होने वी० ए० स्मिथ के कथनानुसार— 'व्यक्तियों और जातियों के मध्य बडी चतुराई से उचित सामजस्य उत्पन्न किया हुआ था। उन्होंने मुसलमानो, डोगरों, ब्राह्मणो और यूरोपियनो को अपने सिख विरोधियों को दूर रखने के निमित्त प्रयुक्त किया था (रेखांकित शब्द लेखक के अपने हैं) जिनम से सौंधन वालिया सरदारो के सदृश बहुत से सिख ब्राह्मणो और डोगरो की पदोन्नतियो पर आग बबूला हो गये थे। उनके काल में ऊपर के वग मे सदैव झगडा-बखेडा रहता था परन्तु महाराजा रणजीतसिंह का छाया हुआ व्यक्तित्व विविध तत्वो को दृढता से नियन्त्रण में रखता था। उनके निधन के पश्चात् बाढ को रोकने वाले द्वार खुल गये थे।

सिख-शासन से पूर्व के काल के विषय मे जब पजाब में खालसा-दल का प्रभुत्व था डा० सिंह से प्रश्न किया जाय

तो वह क्या उत्तर देगे ? उस समय कितना सौहार्द विद्यमान था ? इर्विंग ने इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया है—

'भंगियो, चमारो और इसी प्रकार के लोगो ने जिनकी सिखो मे भरमार थी, प्रत्येक प्रकार के अत्याचार किये सभी परगनो में जिन पर सिखो का आधिपत्य था पुराने रीति-रिवाजो को बिल्कुल बदल दिया गया था। किसी भी व्यक्ति को आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस न होता था और मनुष्य इतने त्रस्त और भयभीत थे कि वे प्रतिवाद भी करते डरते थे। **जो हिन्दू पन्थ मे सम्मिलित न हुए थे वे भी इन अत्याचारो से मुक्त न थे।**

खालसा दल के उस काल मे जो 'रखी' काल के नाम से पुकारा जाता है सरदार लोग समस्त ग्रामो को मुख्यतया उनको जिनमे हिन्दुओ की प्रधानता होती थी, घेर लेते थे और इन ग्रामो के मुखियाओ के समक्ष दो विकल्प रखे जाते थे। एक तो यह कि वे अपने गावो को 'रखी' के लिए सरदारो के अर्पण कर दे या सशस्त्र सिखो द्वारा गाँवो को लुटवाने देवे। 'रखी' का अर्थ था बलात् धन अदा करना। श्री डा० सिंह बताएँ कि उन परिस्थितियो मे विविध दलो मे कितना सौहाद रहा होगा ?

डा० सिंह ने सिख मत सम्बन्धी ऋषि दयानन्द के कुछ शब्दो से जिनका प्रयोग उन्होने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश मे किया है, लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। ऋषि पक्के धर्म्म-सुशोधक थे। निस्सन्देह मार्टिन लूथर के समान उन्होने उन धार्मिक मान्यताओ और अनुष्ठानो की आलोचन मे जो उन्हे अनर्गल प्रतीत हुई किसी का लिहाज नही किया। इस कार्य मे उन्होंने किसी धार्मिक नेता, मत वा सम्प्रदाय को नही छोड़ा और न उन्होने किसी धार्मिक वर्ग या नेता को ही अपनी आलोचना का मुख्य लक्ष्य बनाया। उन्होने उन सब बातो को जो उन्हें लचर देख पडी मिथ्या और जाल बताया और साधारणत उन सब धार्मिक नेताओ को जिन्होंने उनकी दृष्टि मे जान मे वा अनजान मे जनता का सही मार्ग-प्रदर्शन नही किया 'धूर्त' कहा जिससे उनका आशय स्वय-भू नेताओ से था जिन्होने वास्तव मे लोगो को पथ-भ्रष्ट किया। डा० सिंह ने स्वामी दयानन्द पर दोषारोपण किया है—क्योकि वेट कृत हिन्दी कोष मे इस शब्द का एक दूसरा अशोभन अर्थ दिया हुआ है। ऋषि दयानन्द अग्रेजी न जानते थे और डा० सिंह को यह निश्चय रखना चाहिए कि इस शब्द का प्रयोग करने से पूर्व उन्होने वेट कृत हिन्दी कोष के इस शब्द के अर्थ को नही देखा था अत उन्हे ऋषि दयानन्द की नीयत पर सन्देह न करना चाहिये। जब स्वामी दयानन्द पजाब मे आये और उन्होने लाहौर आर्य समाज की स्थापना की तो वह सदैव सिख गुरुओ की प्रशसा किया करते थे। डा० सिंह ने यह बात स्वीकार की है कि जब अजमेर के सरदार भगतसिंह ने स्वामीजी का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया कि सत्यार्थ प्रकाश मे प्रयुक्त उनके कुछ शब्दो पर कुछ सिखो को आपत्ति है तो स्वामी जी ने स्पष्ट रूप मे यह वचन दिया कि सत्यार्थ प्रकाश के परिष्कृत सस्करण मे ये शब्द निकाल दिये जायेंगे। इन दोनो बातो की विद्यमानता मे क्या स्वामी जी के मन्तव्यो और भावना की विशुद्धता के विषय मे कोई सन्देह रह जाता है ? दुर्भाग्य से स्वामी जी का अप्रत्याशित रूप से देहावसान हो गया और उनके जीवन-काल मे सत्यार्थ प्रकाश का परिष्कृत संस्करण न निकल सका इसीलिए जब उनके देहावसान के पश्चात् सत्यार्थ प्रकाश का नवीन सस्करण छपा तो वह उनके विचारो के सशोधन के बिना ही छपा। इस बात से डा० गण्डासिंह को बौखलाने की आवश्यकता नही है। उन्हें अनुभव करना चाहिए कि एक मात्र ऋषि दयानन्द ही अपने लेख मे परिवर्तन करने का अधिकार रखते थे और क्योंकि वह जीवित न रहे थे इसलिये सत्यार्थ प्रकाश की भाषा मे कोई परिवर्तन न किया जा सकता था। कोई डा० सिंह से पूछे कि क्या कोई सिख चाहे वह कितना ही बडा और सम्मानित क्यो न हो, 'गुरुबानी मे जरा सा भी परिवर्तन करने की हिम्मत कर सकता है ? 'आसा दी वार' नामक पद्य मे राम राय ने केवल

एक शब्द बदल कर 'मुसलमान दी मिट्टी' के स्थान मे 'बेईमान दी मिट्टी' पाठ कर दिया था। इसका दड उन्हे यह मिला कि वह गद्दी से वचित कर दिये गए यद्यपि वह गुरुजी के बेटे थे ।

यदि कोई व्यक्ति इन चीजो पर उत्तेजित हो जाय तो उसे सिख इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना को पढ लेना चाहिये जिसका इन्दु भूषण बनर्जी ने अपनी 'खालसा का विकास' नामक पुस्तक मे उल्लेख किया है। गोइवाल मे दिये गये गुरु अमरदास के प्रवचनो के स्वरूप और सामग्री पर हिन्दुओ ने आपत्ति की और वहाँ के कुछ कट्टर ब्राह्मणो और क्षत्रियो ने अकबर को प्रतिवेदन भेज कर लिखा कि गुरु अमरदास की शिक्षाएँ और उपदेश हिन्दू धर्म की निन्दा से परिपूर्ण होते हैं। अत उनके विरुद्ध कायवाही की जाय। अकबर ने गुरु अमरदास से उत्तर मागा और उन्होने भाई जेठा को इस उद्देश्य के लिये मुगल दरबार मे भेजा। गुरु अमरदास के प्रवचनो से वस्तुत उत्तेजना फैली थी यह इस बात से स्पष्ट है कि अकबर ने गुरु अमरदास को परामर्श दिया था कि हिन्दुओ की भावनाओ को शान्त करने के लिये वह हरिद्वार, कुरुक्षेत्र और हिन्दुओ के अन्य तीर्थ स्थलो की यात्रा करे और गुरु जी ने ऐसा किया भी था। यह बात भी उल्लेखनीय है कि गुरु अमरदास के समय मे ही **एक हिन्दू और सिख के मध्य मतभेद इतना बढ़ गया था कि सिखो ने धीरे-धीरे कट्टर पन्थी हिन्दू समाज का परित्याग करना आरम्भ कर दिया था।''** (इन्दु भूषण बनर्जी)

नवम्बर सन् १८८८ ई० मे आर्य समाज लाहौर के ११ वें वार्षिकोत्सव पर हुये कुछ भाषणो और गुज्जर खाँ निवासी लाला अमोलक राम के तत्कालीन समाचार पत्रो मे प्रकाशित एक पत्र का डा० गडासिह ने बडा ढोल पीटा है। डा० सिंह ने उन भाषणो के तो उद्धरण दिए नही, परन्तु उस पत्र को पूर्णतया उद्धृत कर दिया है। वह पत्र बडा विनम्र और सौहार्द पूर्ण था। उससे अगले रविवार अर्थात् २५ नवम्बर को एक बडी सभा हुई जिस मे हिन्दुओ ने जिनमे आर्य जन भी सम्मिलित थे, बहुत बडी सख्या मे भाग लिया और थोडे से व्यक्तियो के कार्य की निन्दा की गई और इस बात को डा० सिंह सत्य मानते हैं। तब यह मामला वही समाप्त समझ लिया जाना चाहिये था परन्तु अपने लेख को युक्तियुक्त बनाने के लिए डा० सिंह को तो अतिशयोक्ति से काम लेना था। लाहौर के अर्द्ध-सरकारी और ब्रिटिश पक्षपाती 'सिविल एन्ड मिलिटरी' गजट नामक पत्र ने अपने ८ दिसम्बर के अक मे इस सभा की रिपोर्ट को अतिरजित रूप मे छापा और आर्य समाज के नेताओ द्वारा उत्पन्न अशोभनीय स्थिति की चर्चा की जिसके कारण शहर मे उत्तेजना व्याप्त हो गई थी। इस पत्र के रवैए से यह बात सिद्ध हो गई थी कि 'सिखो की हिन्दुओ के प्रति दुर्भावना है जो अग्रेजो ने उत्पन्न की थी और जो लडाओ और शासन करो' की अपनी नीति के प्रति निष्ठावान रहकर हिन्दुओ और सिखो मे वैमनस्य उत्पन्न करने के लिये यत्नशील थे। मुख्यत लाहौर के डी० ए० वी० कालज के प्रभाव के निराकरणार्थ अग्रेजो की प्ररणा और उनके सीधे मार्ग प्रदर्शन मे जिस ढग से अमृतसर मे खालसा कालज की स्थापना हुई थी, पजाब मे विशुद्ध सिख रेजीमेन्ट के प्रति जो सहानुभूति पूर्ण व्यवहार किया जाता था और मेकालिफ कृत 'हिस्ट्री आफ सिख रिलीजन' नामक इतिहास की आधारभूत शैली जिसकी रचना के लिये सरकारी प्ररणा और आर्थिक सहायता मिला थी, ये सब इस नीति के ज्वलन्त प्रमाण हैं।

परन्तु यत मास्टर तारासिंह कुछ काल से आर्यसमाज और हिन्दुओ की निन्दा करने मे लगे हुए हैं जो 'पजाबी सूबा' के सुविधाजनक आवरण मे छुदे उनके पृथक् सिख राज्य के सुख-स्वप्न की पूर्ति मे बाधक बन रहे हैं, अत ऐसा लगता है कि किसी आदेश के परिपालनार्थ डा० गडासिंह ऋषि दयानन्द और आर्य समाज की कडी आलोचना प्रस्तुत करने के लिये मैदान मे उतर पडे हैं। निस्सन्देह समस्त विचारशील और बुद्धिमान् व्यक्ति इस प्रकार के गर्हित प्रचार की जो गर्हित उद्देश्य की पूर्त्यर्थ गर्हित ढग से किया जा रहा है भर्त्सना करेंगे।

राजनैतिक घटना चक्र

श्री दुर्गादास

काश्मीर—

श्रीयुत चैस्टर बावेल्स भारत मे आने वाले हैं (ये आकर चले गए हैं)। इनके प्रस्तावित आगमन का वास्तविक उद्देश्य क्या है इस विषय मे अनुमान लगाए जा रहे हैं। यह निश्चित है कि उनका आगमन काशमीर विषयक गुप्त मन्त्रणाओ से सम्बद्ध नही है। पाकिस्तान उन्हे निष्पक्ष परिवेक्षक नही मानेगा और भारत काशमीर के मामले मे मध्यस्थता का विरोधी है।

नई दिल्ली मे सामान्यतया धारणा यह पाई जाती है कि सुरक्षा कौन्सिल मे जब काशमीर पर विवाद आरम्भ होगा तो उसमे यह विषय आगे के लिए टाल दिया जायगा। सम्भवत कौन्सिल दोनो पक्षो से अपील करेगी कि आपस मे मिलकर शान्ति पूर्ण उपायो से इसका समाधान करले। अत इस प्रकार शीघ्र ही नेहरू अयूब भेट की सम्भावना है।

नेपाल—

वस्तुत बावेल्स महोदय का आगमन उस चिन्ता मे सम्बद्ध है जो नेपाल की घटनाओ से वाशिंगटन मे व्याप्त हो रही है। पश्चिम मे यह विश्वास घर कर गया है कि चीन को भारत के समान महत्त्व देने के यत्न मे महाराजा महेन्द्र विवेक की सीमाओ से बाहर चले गए हैं और बहुत समवत नेपाल को बफर राज्य बनाने का उनका प्रयास उन्हे परेशानियो मे डाल देगा विशेषत इसलिए कि उन्हे अभी तक अपनी प्रजा के समर्थन का निश्चय नही है। राज्य की आन्तरिक अशान्ति और सम्पाओ का सीमा पर एकत्रीकरण उनकी तात्कालिक समस्याएँ हैं। इस समय काठमाडू मे डिप्लोमेट (कूटनीतिज्ञ) एकत्र हैं और वे इस पर्वतीय राज्य मे स्थिति का परिवेक्षण करने के यत्न मे सलग्न हैं।

भारत सरकार ने भारत-नेपाल सीमा पर कडा पहरा बिठा दिया है जिससे कि राजा-विरोधी दल को भारत से किसी प्रकार की सहायता न पहुँच सके। निस्सन्देह यह आरोप निराधार है कि विद्रोह का सचालन भारत से हो रहा है।

नेपाल नरेश राज्य की स्थिरता का प्रतिनिधित्व करते हैं और इसे नष्ट करने का भारत का अविवेक पूर्ण काय होगा। भारत एक मात्र यह चाहता है कि नेपाल नरेश यह स्मरण रक्खे कि भारत की सुरक्षा नेपाल के साथ ग्रथित है और उसे इस को खतरे मे न डालना चाहिए।

यह बात बडी निराशाजनक है कि वह देश जिस पर भारत की मित्रता का बहुत बडा ऋण है भारत को तग करने मे व्यस्त है। यह बात अब गुप्त नही रही है कि भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर अन्तिम राणा मोहन शमशेर भारत मे आए थे और उन्होने नेपाल को भारत के रक्षक राज्य का रूप देने का प्रस्ताव किया था क्योकि उन दिनो नेपाल अग्रजो के अधीन था।

प० नेहरू और सरदार पटेल ने नेपाल को एक स्वतन्त्र राज्य बनाने का निश्चय किया और राष्ट्र सघ मे उसकी सदस्यता का प्रस्ताव किया। श्री नेहरू ने ही राणा शाही के विरुद्ध राजा का समर्थन किया और राजघराने को अपने स्वत्व की प्राप्ति में सहायता दी, जो लगभग १०० वर्ष तक राणाओ के अधीन रहा था।

भारत के साथ शत्रुता या विरोध रखने से नैपाल का कोई लाभ न होगा। हो सकता है कि विविध कूटनीतिज्ञ अपने अपने देशो की ओर से नपाल नरेश को जो परामश दे रहे है उसके परिणाम स्वरूप भारत के प्रति भय की उनकी भावना जाती रह और वह पुन भारत के साथ मत्री करल। इस बात की बहुत बडी सम्भावना है कि लगभग १ मास के बाद नैपाल नरेश भारत आए जिससे कि भ्रमो का निराकरण हो जाय भारत और नैपाल सन्धि के अनुसार उत्तरी सीमाओ पर एकत्र खम्पाओ जैसी वतमान समस्याओ के होने पर दोनो देशो को एक दूसरे की सहायता करनी होगी।

नैपाल का मामला चीनियो के सदुदेश्यो के परीक्षण की कसौटी भी ह। पश्चिम ने और रूस ने यह स्थिति स्वीकार करली है कि नैपाल की स्वतन्त्रता और सुरक्षा मे भारत की विशेष दिलचस्पी है। जब पाश्चात्य देशो ने काठमाडू मे अपने दूतावास बनाए थे तो उन्होने भारत की सहमति से ही ऐसा किया था। इसके पश्चात् रूस और चीन ने भी अपने दूतावास स्थापित कर दिये थे।

यदि चीन खम्पाओ को नि शस्त्र करने और भगा देने के लिए अपनी सेनाय भेजने के लिए नैपाल को विवश करेगा तो नैपाल का यह कार्य उन सीमाओ का उल्लघन समझा जायगा जिनके साथ भारत की सुरक्षा जुडी हुई है यह काय मित्रता पूण न होगा।

इस बात के प्रमाण है कि नैपाल नरेश अपने देश की सुरक्षा और आन्तरिक व्यवस्था को गौण समझ रहे हैं।

शिखर सम्मेलन

श्री युत वावेल्स की भारत यात्रा का दूसरा उद्देश्य सम्भवत नि शस्त्रीकरण के विषय मे भारत की स्थिति जानना है। अमेरिका और रूस को भय है कि दोनों के पास आणविक अस्त्रशस्त्रो का सग्रह इतना अधिक हो गया है कि जिसके स्वरूप अचानक युद्ध हो सकता है। अमेरिका चाहता है कि जिनेवा मे होने वाले वार्तालाप मे भारत उसका साथ दे। भारत की स्थिति मित्रतापूण मध्यस्थता की है। उसे अपने कोई प्रस्ताव नही रखने हैं। दोनो विरोधी गुट अपनी जो योजनाएँ प्रस्तुत करेंगे उनके सम्बन्ध मे भारत अपनी प्रतिक्रिया से अवगत करादेगा।

रूस की योजना है कि समस्त अस्त्रशस्त्र विनष्ट कर दिए जाय। यह योजना प्रचारात्मक समझी जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि इस बात की रोक-थाम की जाय कि कोई भी पक्ष आणविक आक्रमण न कर सके। यह माना जाता है कि औपचारिक अस्त्र शस्त्रो के विषय मे नि शस्त्रीकरण प्रारम्भ किया जा सकता है। इस विषय मे भारत सच्ची मध्यस्थता का काय कर सकता है।

गोआ

नई दिल्ली के अधिकारी गोआ स्थित पुतगाली बन्दियो के सम्बन्ध मे लिस्बन के रुख से परेशान है। भारत सरकार ने उन सब बन्दियो को बिना किसी शत के बम्बई मे मुक्त कर देने का प्रस्ताव किया था परन्तु लिस्बन की प्रतिक्रिया इस विचित्र सुझाव मे व्यक्त हुई है कि मौजम्बकौस्थित २० हजार भारतीयो के प्रत्यागमन की भारत को व्यवस्था करनी चाहिए।

निस्सन्देह भारत सरकार इस प्रस्ताव को रद्दकर देगी। ये दोनो बात एक साथ नही रखी जा सकती। मौजाम्बिको के भारतीय कई शताब्दियो से वह बसे हुए हैं। पाश्चात्य देशो की नैतिक भावना के परीक्षण का यह एक और अवसर उपस्थित हुआ है। मानव-अधिकारो का एक चार्टर है। क्या पश्चिमी देश इसकी धज्जिया उड जाने देगे।

नागालैंड

नागा स्थिति का पुन परिवेक्षण किया गया है। अनुभव यह किया जा रहा है कि राजनैतिक समाधान पूर्व ही आजमाया जा चुका है। यह समाधान नागालैण्ड के समझदार व्यक्तियो को यह अनुभूति कराने मे सफल हुआ है कि आन्तरिक स्वतन्त्रता और पृथक नागा राज्य के रूप मे उन्हे यह सब कुछ प्राप्त हो गया है जो उनके लक्ष्य में था। परन्तु जो राजनैतिक सौदेबाजी मे विश्वास

रखते हैं उन्होने शत्रुता का परित्याग नही किया है और वे उच्च पदाधिकारियों को समाप्त कर देने के यत्न मे है। दुर्भाग्य से सत्तारूढ लोग सरकारी टाइप के है जिनका प्रभाव सीमित है।

यह स्पष्ट है कि मलाया और दक्षिण वियतनाम में जो सैनिक समाधान आजमाया गया है न्यूनाधिक रूप मे वैसा ही समाधान आजमाना होगा। यह आशा की जाती है कि नई योजना ब्रह्मदेश के राज्याधिकारियो के प्रतिज्ञाप सहयोग से विरोधी तत्व को नष्ट करने मे सहायक होगी और इस प्रकार नागाओ को उस शक्ति को आत्म विकास के लिए प्रयुक्त करने का अवसर प्रदान करेगी जो उन्ह अभी हाल मे प्राप्त हुई है।

अष्टग्रह

पिछले दिनो समस्त ससार मे समाचार पत्रो के हैडिगो और रेडियो ब्राडकास्ट मे भारत की बडी चर्चा रही और भारत को श्रद्धालुग्रो परन्तु अन्धविश्वासियो का देश प्रकट किया गया है। साधारण व्यक्ति नही अपितु पढ लिखे लोग भी इस अन्धविश्वास से प्रभावित रह।

राजधानी की वैस्ट पटेल नगर की कौलोनी मे शत प्रतिशत लोग पढ लिखे और उच्च वग क है। किमी ने ३ बजे प्रात यह खबर उडा दी कि बी बी सी क एक ब्राडकास्ट मे लोगो को चेतावनी दी गई है कि भूकम्प आने वाला है उससे सावधान रहे। समस्त लोगो मे हलचल मच गई और प्रत्येक व्यक्ति खुली जगह मे दौडने लगा। एक समझदार व्यापारी ने समाचार की सत्यता जानने के लिए आल इण्डिया रेडियो क कार्यालय को फोन किया। आल इण्डिया रेडियो ने बताया कि इस प्रकार का कोई समाचार प्रसारित नही किया गया और बी बी सी ससार को यह बता रहा है कि लोगो ने काम काज बन्द कर दिया है और लोग राष्ट्रव्यापी यज्ञ हवन मे व्यस्त है। इस आश्वासन का भी लोगो पर प्रभाव न पडा और उन्होने घरो क भीतर आने से इन्कार कर दिया।

अष्टग्रहो क मिलने क काल मे बिहार क लोग घर क बाहर कैम्प डाले पडे रहे। १९३४ क भूकम्प की कटु स्मृतियाँ उनक मस्तिष्को मे विद्यमान थी उन्हे ज्योतिषियो की इस भविष्य वाणी पर विश्वास करने का बहाना मिल गया था कि अष्टग्रहो का सबसे घातक प्रभाव विहार पर पडेगा।

नई दिल्ली के कूटनीतिज्ञो को अष्टग्रहो पर प्रदर्शित मूखता पर भारत का हास्य करने का अवसर मिला। उनमे से कुछ की धारणा बनी कि भारत अपनी नैतिक और आध्यात्मिक उच्चता से बहुत नीचे पर है।

श्रद्धांजलि

मैडम ब्लावाटस्की (थियो सोफीकल सोसाइटी की सस्थापिका)

मूर्तिपूजा बाल विवाह और मिथ्या विश्वासो क विरुद्ध गजन करते हुए स्वामी दयानन्द ने भारत क कोने-कोने का परिभ्रमण किया। भारत क पतन और उसकी राजनैतिक दासता क लिए वह ब्राह्मणो को उत्तरदायी ठहराते थे। उनकी दृष्टि मे भारत क दुगु णो का मुख्य कारण वेदो का अशुद्ध भाष्य है। स्वामी जी का सस्कृत का ज्ञान अगाध था जिसक बल पर वह वेदो की एकश्वरवाद विषयक शकाग्रो का निबारण करक न कवल जन सामान्य का ही अपितु विद्वानो का भी हित करते थे। यह निश्चित है कि **शकराचार्य के पश्चात दयानन्द से अधिक सस्कृतज्ञ गम्भीर अध्यात्म वेत्ता, आत्मवचनक वक्ता और बुराई का निर्भीक प्रहारक भारत को प्राप्त नहीं हुआ।**

स्वामी जी जहा जाते जन-समूह उनके चरणो की धूल मे लोटने को उद्यत रहता है परन्तु वह उन्हे किसी नए धर्म का उपदेश नही देते और न नए नए मिथ्या विश्वासो की ही सृजना करते है। वह उन्हे विस्मृत सस्कृत अध्ययन को अपनाने और अपने पूर्व पुरुषो के सिद्धान्तो की पौराणिक पण्डितो के द्वारा प्रसारित मिथ्या विश्वासो के साथ तुलना करके प्राचीन ऋषियो द्वारा प्रतिपादित एकेश्वरवाद की ओर आने की प्रेरणा किया करते थे।

अष्टग्रही योग और वर्तमान विज्ञान

(श्री मंगलदेव शास्त्री)

प्राक् कथन

अष्ट ग्रही योग की घोषणा जब से भारतीय ज्योतिषियो ने की, और भारतीय पत्र-पत्रिकाओ मे उनका प्रचार किया गया तब से समस्त भारत मे अनिष्ट होने की सभावना से भारतीय प्रजा आतकित और-भीत हो गई।

२

भविष्य-वाणियों की विभिन्नता

प्रत्येक ज्योतिषी ने पृथक्-पृथक् भविष्य वाणियाँ की और भिन्न-भिन्न विचार व्यक्त किये जिन मे परस्पर मतैक्य न था। किसी ने कुछ और किसी ने कुछ कल्पनाएँ की। इसलिए विद्वानो ने समझ लिया कि जब ज्योतिषियो के विचार एक दूसरे से नही मिलते है तो इनकी भविष्य वाणियां नि सदेह मिथ्या और कपोल कल्पित है क्योकि "सत्य" मे विभिन्नताये सम्भव नही।

३

विज्ञान और कल्पनायें

विज्ञान् और कल्पनाओ मे जो अन्तर होता है वह यह कि विज्ञान की घोषणाएँ सर्वत्र अभिन्न और एक होती हैं किन्तु कल्पनाएँ भिन्न-भिन्न और अनेक होती हैं। अष्टग्रही योग की घोषणा मिथ्या सिद्ध हुई। अष्टग्रही योग ३ फरवरी सन् १९६२ ई० को होना बतलाया गया था, और कहा गया था कि उक्त योग ३ फरवरी की शाम को ५ बजकर ३५ मिनट पर होगा, उस समय चन्द्रमा "मकरराशि" मे प्रवेश करेगा और यह योग ५ फरवरी की शाम को ५ बजकर ४७ मिनट पर समाप्त होगा जब चन्द्रमा मकर राशि से निकल कर बाहर हो जायेगा अस्तु॥

३ फरवरी को प्रारम्भ होकर ५ फरवरी को अष्टग्रही योग समाप्त हो गया किन्तु ज्योतिषियो की यह घोषणा कि उक्त योग से ससार का अनिष्ट होगा नितान्त मिथ्या सिद्ध हुई। उपरोक्त योग आरम्भ होकर २ दिन मे समाप्त हो गया किन्तु विश्व भर मे किसी भी स्थान से अनिष्ट होने की कोई भी सूचना नही मिली और मिलती भी क्यो कर? जब ज्योतिषियो की कपोल कल्पनाएँ मूलत मिथ्या थी।

४

फलित-ज्योतिष

प्राचीन ज्योतिष के विद्वानो ने आकाशीय तारो को २८ नक्षत्रो मे विभाजित किया था और यूनान के ज्योतिषीयो ने उन्हे (१२)राशियो मे विभक्त किया और फलित-ज्योतिष की बुनियाद डाली उसी फलित-ज्योतिष को भारतीय-ज्योतिषियो ने अपनाया और उसका प्रचार किया, जो आज तक प्रचलित है और जिस पर भारतीय-प्रजा के पठित सज्जन भी विश्वास करते हैं।

५

वर्तमान—विज्ञान का प्रथम नियम

वर्तमान विज्ञान के परीक्षित प्रयोग और अनुसधान ने यह सिद्ध कर दिया है कि कोई वस्तु जो विराम-स्थिति मे है विराम स्थिति मे ही रहेगी और जो वस्तु गतिशील है वह सीधी रेखा मे सवेग के साथ गतिशील ही रहेगी। यदि बाहर की कोई शक्ति उसे आकर्षित न करे।

दूसरा नियम

किसी पिंड के आवेग मे परिवर्तन की दर उसी पिंड पर लगाये गये बल के अनुपात मे होती है और उसी दिशा मे होती है जिसमे वह बल (शक्ति) कार्य करता है।

तीसरा नियम

प्रत्येक क्रिया के साथ उसी के तुल्य विरोधी प्रति क्रिया उत्पन्न हो जाती है।

(१)

प्रथम नियम :— प्रथम नियम हमे यह बतलाता है कि

सभी (ग्रहो) पिंडो मे, जैसे वे हैं, वैसे ही बने रहने की प्रवृत्ति होती हैं। चाहे वे स्थिर हो चाहे सीधी रेखा मे समगति कर रहे हो। पदार्थ की यह सार्वभौमिकता है (यह गुण है) और इसे जडत्व कहते है। इसी जडत्व के कारण लाखो वर्षों से ग्रह सूय की चारो ओर परिभ्रमण करने की अवस्था मे बने हुवे है। इसी कारण से पृथिवी अपनी धुरी पर निरन्तर घूम रही है।

ग्रह की गति और मार्ग

१–ग्रह वृत्त मे नही चलते, वे दीघ-वृत्त मे चलते हैं।

२–सूर्य दीर्घ-वृत्त के केन्द्र पर रहने के बदले केन्द्र की एक नाभि पर रहता है और उसी स्थान पर घूमता है।

३–उपग्रह

उपग्रह भी ग्रहो की प्रदक्षिणा दीर्घ वृत्त मे चल कर करते हैं और ग्रह नाभिस्थान पर रहता है।

उपग्रह कितने है ?

१–मगल के उपग्रह २ है ?

२–बृहस्पति के उपग्रह ९ है जिन मे २ उल्टी दिशा मे चलते हैं।

३–शनि के भी उपग्रह ९ हैं जिन मे सब से दूर वाला उल्टी दिशा मे चलता है।

४–यूरेनस के ४ उपग्रह हैं।

५–लपेटो का उपग्रह अभी तक ज्ञात नही हुवे हैं

६–नेपच्यून का भी एक (१) ही उपग्रह है।

७–और हमारी पृथिवी का भी एक ही उपग्रह है जिसे चन्द्रमा कहते हैं।

ग्रहो का रग और चमक

(क) शुक्र ग्रहो मे सब से अधिक चमकीला है।

(ख) बृहस्पति रग मे शुक्र के समान ही है किन्तु चमक कम है।

(ग) मगल अगारे के समान लाल दिखाई पडता है।

(घ) बुध सदा सूर्य के पास रहता है।

(ङ) शनि की चमक क्षितिज की किसी भी ऊंचाई से देख सकते हैं।

क्या राहु और केतु ग्रह हैं ?

राहु और केतु कोई आकाशीय पिंड नही है ?

नवीन–ग्रह

यूरेनस नेपच्यून और प्लेटो ये नवीन ग्रह हैं। नेपच्यून सन् १८४६ मे और प्लेटो सन् १९३० ई० मे अमिरिका के ज्योतिषियो ने देखे है॥

पृथ्वी से ग्रहो की दूरी

१—पृथ्वी से चन्द्रमा की दूरी २ लाख ११ हजार ६१० मील है।

२—शुक्र ? करोड ३७ लाख १० हजार मील है।

३—मगल ३ करोड ३९ लाख १६ हजार मील दूर हैं।

४—बुध ४ करोड ८० लाख २० हजार मील दूर है।

५—सूर्य ९ करोड १४ लाख ६० हजार मील दूर है।

६—बृहस्पति ३६ करोड ५८ लाख १६ हजार मील दूर है।

७—शनि ७४ करोड २६ लाख ४६ हजार मील दूर है।

८—यूरेनस (वारुणी) १ अरब ६० करोड ६१ लाख ८३ हजार मील दूर है।

९—नेपच्यून (वरुण) २ अरब ६७ करोड ४३ लाख ५७ हजार मील दूर है।

१०—प्लेटो की दूरी ज्ञात नहीं हुई है।

यदि हम ३०० मील घण्टा की गति वाले वायुयान द्वारा चले तो ग्रहो तक पहुँचने मे कितना समय लगेगा ?

१—पृथ्वी से चन्द्रमा तक १० दिन

२—मगल तक १२ वर्ष

६—बुध तक १८ वर्ष

४—शुक्र तक ९ वर्ष

५—सूर्य तक ३५ वर्ष

६—शनि तक २८६ वर्ष

THE ORIGIN OF THE HINDU-SIKH TENSION IN THE PUNJAB

Prof Prithvi Pal Tara M A Head of the History Department D A V College, Jullundur

A friend has sent me a copy of an article by Dr Ganda Singh entitled The Origin of the Hindu-Sikh tension in the Punjab' published in the journal of the Kerala University The publication of a thesis by Dr Singh in Kerala on a problem pertaining exclusively to the Punjab is not without its deeper significance It is significant also that while the journals of other Universities confine themselves to the publication of articles on literary, scientific or social problems only the Kerala University journal has thought fit not only to accept and publish but also to give prominence to an article on a subject in which it may be presumed the people of Kerala would be the least interested

A work of research otherwise, be the subject of study vast or diminitive like the one chosen by Dr Ganda Singh would arouse at least genuine academic interest, **provided the motive behind is honest** That in this case the motive is not above reproach is clear from the attending circumstances of its publication as detailed above, and also from the fact that Dr Singh's researches in the realms of Sikh History have neither been detached nor balanced nor judicious Aa a research scholar of Sikh history he has a pronounced bias to the effect that the Sikhs alone, as the chosen ones of God have any virtue political or religious and that non-Sikhs become virtuous only when they have been brought into the Panth, and that bias has vitiated much of his work His ingenious attempt to convert Banda Bahadur into Banda Singh in one of his works is an instance in point—an attempt which has been ignored by all prog-

---

७—नेपच्यून तक १०७१ वर्ष
८—प्लेटो तक १२५७ वर्ष
९—यूरेनस तक ६११ वर्ष
१०—निकटतम नक्षत्र तक १० हजार वर्ष
११—बृहस्पति तक १३९ वर्ष

नोट—सूर्य पृथ्वी से १३ लाख ५० हजार गुना बड़ा है।

ग्रहों को सूर्य की प्रदक्षिणा करने में कितना समय लगता है ?

१—सूर्य के चारो ओर एक बार घूमने मे पृथ्वी को १ वर्ष
२—बुध को ३ मास या ८८ दिन
३—शुक्र को ७ मास या २२५ दिन
४—मगल को २ बर्ष या ६८७ दिन
५—बृहस्पति को १२ वर्ष या ४ हजार ३ सौ ३९ दिन
६—शनि को २९॥ वर्ष या १० हजार ७ सौ ५९ दिन
७—यूरेनस को ८४ वर्ष या ३० हजार ६ सौ ८७ दिन
८—नेपच्यून को १६५ वर्ष ६० हजार १ सौ २७ दिन
९—प्लेटो को २४९ वर्ष लगते हैं।

ressive writers on Sikh History His prejudicial approach to the present subject is indicated by his broad insinuation to the effect that it was the "Hindu Dogras and Poorbias who were mainly responsible both directly and indirectly by secret alliances and open betrayals for the downfall of the Sikh kingdom" Even a school-boy knows to-day that the fall of the Sikh kingdom was due only to the selfishness, treachery, "secret alliances and open betrayals" of the Sikh Sardars themselves, in particular to Sardar Teja Singh, Lal Singh and the Sandhanwalias But since not much of the inner story of the Sikh kingdom is known in Kerala Dr Singh knows that he can safely get away with any conceivable mis-statement in an article published so far away in the South

The main thesis put forward by him is "Historically speaking the (Hindu-Sikh) tension had its origin in the unhappy language used for Guru Nanak and his followers by Shri Swami Dayanand the founder of the Arya Samaj in his book the Satyartha Prakash published in 1875 the year in which the first Arya Samaj was established in Bomay"

A critical examination of Dr Singh's own statement made above in connection with the downfall of the Sikh kingdom would result in the engineer being "hoisted with his own petard" as R L Stevenson would put it, because he has admitted there, though unwittingly that the tension did exist long before 1875 He says "There could have been no better opportunity for the Britishers than the mutiny days **to exploit the Sikh sentiment against the Hindu Dogras and Poorbias etc** (Italics mine) This clearly means that the Hindu Sikh tension existed at the time of the Mutiny, and it had been there since the fall of the Sikh kingdom in 1849, and that the same could have been successfully exploited by the British And yet his thesis is that the Hindu-Sikh tension had its origin in certain remarks made by Rishi Dayanand in his book Satyarth Prakash whichwas published in 1875! Thus by simple calculation **more than a quarter of a century before the Satyartha Prakash saw the light of the day** the "Sikh sentiment" against certain sections of the Hindus, which according to Ganda Singh could have been profitably exploited by the British, did exist Then how does he make the bold and unwarranted assertion that the Hindu Sikh tension in the Punjab appeared only when the Satyartha Prakash was published and the first Arya Samaj was founded.

Contradicting Principal Suraj Bhan's statement to the effect that the unfilial sentiments of the Sikhs towards Hinduism were deliberately encouraged by the British for their own imperial ends he refers to the case of the Kookas in the Punjab who inspite of the fact that they "in their overflowing zeal and fanatical frenzy pulled down a number of Hindu tombs" were not exploited by the British A scholar of history like Dr Singh should know that these Kookas were extreme nationalists too, and far from thinking of encouraging or exploiting the sect the British were busy trying to eliminate the threat to their own rule emnating from that quarter Any encouragement to them would have meant putting a premium on this sudden upsurge of anti-British activtiy on their part also

The learned Dr further asserts that Hindu-Sikh tension was "a thing unknown during the Sikh rule upto the middle of the last century" If that was so during the reign Maharaja Ranjit Singh the credit goes to the Maharaja personally, who according to V. A, Smith 'balanced individuals and communities against each other with uncanny skill Muslims, Dogras, Brahmins and Europeans were **used to set off hjs Sikhs,**" (Italics mine) many of whom like the Sandhanwali Sardars were infuriated at the promotion of the Dogras and the Brahmins There was always tension at the top, but Ranjit Singh's towering personality kept the various elements firmly in check After his death the flood-gates burst

And what has Dr Singh to say about the Pre-Sikh Rule period during which the Khalsa Dal operated in the Punjab ? How much cordiality existed then ? The question is answered by Irving thus —

"The scavengers and leather-dressers and such-like persons who were very numerous among the Sikhs committed excesses of every descript-ion . In all the Pargonas occupied by the sikhs the reversal of previous customs was striking and complete Not a soul dared to disobey an order and men became so cowed that they were afraid even to remonstrate **Hindus who had not joined the sect were not exempt from these oppressions** " (Italics mine)

Again, in what is known as the 'Rákhi' period of the Dal khalsa entire villages mainly occupied by the Hindus were encircled by Sardars and the only alternatives before the headmen of these villages were either to hand over their villagers to the Dal for Rakhi, *for which enforced payments had to be made, or suffer loot and plun*

der at the hands of the sikh armed bands It is for Dr singh to say how much cordiality could have existed between the parties under those conditions

Dr Ganda Singh has tried to make capital out of certain remarks made by Rishi Dayanand in the Stayartha Prakash about the Sikh religion The Rishi was a stern religious reformer and there is no doubt that like Martin Luther he was unsparing in his criticism of religious beliefs and practices which appeared to him to be unsound In this he did not make any exceptions in favour of any religious leader, creed or sect, nor did he assail any religious gro up or leader in particular All which appeared to him to be unsound he called 'Mithya' (i e untrue) and 'jal' (i e a snare) and in general all religious leaders who he thought did not give a correct lead to the people whether knowingly or unknowingly he called 'Dhurtas', by which he simply meant self-appointed leaders who really misled people Dr Singh falls foul of Swami Dayanand because Bates' Dictionary of the Hindi language gives other and more sinister meanings for this word Rishi Dayanand did not know English, and Dr. Singh may be sure that he did not consult Bates' Hindi Dictionary before he used that word, and he need not therefore question his motives The very fact that when Swami Dayanand came to the Panjab and founded the Arya Samaj at Lahore "he always praised the work of the Sikh Gurus, and the further fact admitted by Dr Singh that when Swamiji's attention was drawn by S Bhagat Singh of Ajmer to the fact that some sikhs objected to certain remarks made by him In the Satyartha Prakash he frankly promised to expunge them in the revised edition of the book ought to establish the honesty of Swamiji's motives The unfortunate fact that Swami Dayanand died unexpectedly before a revised edition of Satyartha Prakash could appear and therefore the new edition of the book was published after his death" without any modification of his views' need not upset Dr Ganda Singh He should realise that it was surely Swami Dayanand alone who was competent to make any alteration in his own views and since he was no more, no alteration could be made in the text of Satyartha Prakash One would like to ask Dr Singh If any sikh, however exalted he might be would dare make any change what so ever in Gur-Bani Ram Rai changed only one word "Mussalman" Di Mitti into "Baiman" Di Mitti in a

verse of Asa the Var and he lost his Gaddi, even though he was the Guru's own son !

If one were to get hysterical over these things one might refer to a significant episode in sikh history referred to by Indubhushan Banner jee in his book "The Evolution of the Khalsa" Objection was taken by Hindus to the nature and contents of the sermons delivered by Guru Amar Das at Goindwal and certain orthodox "Brahmins and Khattris" of the place made a representation to Akbar that his teachings and preachings were prejudicial to the religion of the Hindus, and therefore action might be taken against him Guru Amar Das was asked by Akbar to explain and he sent Bhai Jetha to the Moghal court for the purpose That the sermons of Guru Amar Das had actually created tension is indicated by the fact that Akber solemnly suggested that in order to assuage the feelings of the Hindus whom he had estranged Guru Amar Das should undertake a pilgrimage to Hardwar, Kurukshetra and orher holy places of the Hindus, which the Guru actually did It has to be noted that it was during Guru Amar Das's time that *"the difference between a Hindu and Sikh became more pronaunced and the sikhs began gradually to drift away from the orthodox Hindu Society."* (I. B Bannerjee)

Dr Ganda Singh has also made much of certain speeches alleged to have been delivered at the 11th Annual Session of the Arya Samaj at Lahore in Noven ber, 1888, and of a letter Published by Lala Amolak Ram of Gujjar khan in certain newspapers of the day Dr Singh has not quoted from the speeches but the letter has been quoted by him in extenso This letter, if anything is very apologetic and conciliatary in tone When the action of a few is condemned by many, as Dr Singh says it was, in a meeting held on Sunday next to 25th November which was attended by a large number of Hindus also, including Arya Samajis, the matter ought to have been considered as closed, but in order to justify his thesis Dr Singh must exaggerate and magnify the fact that the semi-official and pro-British Lahore newspaper "Civil and Military Gazette" of December 8 published a highly coloured report of this meeting referring to a great resentment in the city of Lahore at the ugly and unpleasant situation created by the leaders of the Arya Samaj" rather proves the contention that the "unfilial sentiments of the sikhs towards Hinduism were the creation of the British who true to the policy of 'divide and rule' tried to

DAYANAND SARASWATI

(Romain Rolland)

Indian religious thought raised a purely Indian Samaj against Keshab's Brahmo Samaj and against all attempts at Westernization, even during his lifetime, and at its head was a personality of the highest o der, Dayanand Saraswati (1824-1883).

This man with the nature of a lion is one of those, whom Europe is too apt to forget when she judges India, but whom she will probably be forced to remember to her cost, for he was that rare combination, a thinker a man of action with a genius for leadership.

For fifteen years this son of a rich Brahmin, despoiled of everything and subsisting on alms, wandered as a *Sadhu* clad in the saffron robe along the roads of India At length about 1860 he found at Matura an old Guru even more implacable than himself in his condemnation of all weakness and his hatred of superstition, a *Sannyasi* blind from infancy and from the age of eleven quite alone in the world, a learned man, a terrible man, Swami Virjanand Saraswati Dayanand put himself under his "discipline", which in its old literal seventeenth century sense scarred his flesh as well as his spirit Dayanand served this untamable and indomitable man for two and a half years as his pupil It is therefore mere justice to remember that his subsequent course of action was simply the fulfilment of the will of the stern blind man When

---

create bad blood between the Hindus and the Sikhs' The way in which the Khalsa College was started at Amritsar under the inspiration and direct guidance of the British mainly to counterbalance the influence of the D A V College at Lahore, the preferential treatment of the exclusive Sikh Regiments in the Punjab, the basic trends of the officially inspired and financed Macauliffs 'History of the Sikh Religion' are further proofs -if any were needed-of this policy.

But since Master Tara Singh has of late been castigating the Arya Samaj and the Hindus who stand in the way of realisation of his pet dream of a separate Sikh State, under the convenient guise of 'Punjabi Suba' Dr. Ganda Singh has come out to produce to order, as it were, his diatribe against Rishi Dayanand and the Arya Samaj All right-thinking persons will no doubt condemn such sinister propaganda carriedon for a sinister purpose in a sinister way.

they separated Virjanand extracted from him the promise that he would consecrate his life to the annihilation of the heresies that had crept into the Pauranic (old) faith to re-establish the ancient religious methods of the age before Buddha, and to disseminate the truth.

Dayanand immediately began to preach in Northern India, but unlike the benign men of God who open all heaven before the eyes of their hearers he was a hero of the *Iliad* or of the *Gita* with the athletic strength of a Hercules, who thundered against all forms of thought other than his own, the only true one He was so successful that in five years Northern India was completely changed. During these five years his life was attempted four or five times—sometimes by poison. Once a fanatic threw a cobra at his face in the name of Shiva, but he caught it and crushed it. It was impossible to get the better of him; for he possessed an unrivalled knowledge of Sanskrit and the Vedas, while the burning vehemence of his words brought his adversaries to naught. They likened him to a flood Never since Sankara had such a prophet of Vedism appeared. The orthodox Brahmins, completely overwhelmed, appealed from him to Benares, their Rome, Dayanand went there fearlessly, and undertook in November, 1869, a Homeric contest. Before millions of assailants, all eager to bring him to his knees, he argued for hours together alone against three hundred pandits—the whole front line and the reserve of Hindu orthodoxy He proved that the Vedant as practised was diametrically opposed to the primitive Vedas. He claimed that he was going back to the true Word, the pure Law of two thousand years earlier They had not the patience to hear him out He was hooted down and excommunicated A void was created round him, but the echo of such a combat in the style of the *Mahabharata* spread throughout the country, so that his name became famous over the whole of India Dayanand was not a man to Come to an understanding with religious philosophers imbued with Western ideas His national Indian theism, its steel faith forged from the pure metal of the Vedas alone, had nothing in common with theirs, tinged as it was with modern doubt, which denied the infallibility of the Vedas and the doctrine of transmigration Its (Arys Samaj's) spontaneous and impassioned success in contrast to the slight reverberation of Keshab's Brahmo Samaj, shows the degree to which Dayanand's stern teachings corres-

ponded to the thought of his country and to the first stirrings of Indian nationalism to which he contributed

The enthusiastic reception accorded to the thunderous champion of the Vedas, a Vedist belonging to a great race and penetrated with the sacred writings of ancient India and with her heroic spirit, is then easily explained He alone hurled the defiance of India against her invaders. Dayanand declared war on Christianity and his heavy massive sword cleft it asunder with scant reference to the scope or exactitude of his blows.

Dayanand had no greater regard for the Koran and the Puranas, and trampled under-foot the body of Brahmin orthodoxy. He had no pity for any of his fellow countrymen, p st or present, who had contributed in any way to the thousand-year decadence of India, at one time the mistress of the world. He was a ruthless critic of all who, according to him, had falsified or profaned the true Vedic religion. He was a Luther fighting against his own misled and misguided Church of Rome, and his first care was to throw open the wells of the holy book, so that for the first time his people could come to them and drink for themselves. He wrote commentaries on the Vedas in the vernacular—it was in truth an epoch-making date for India when a Brahmin not only acknowledged that all human beings have the right to know the Vedas whose study had been previously prohibited by orthodox Brahmins but insisted that their study and propaganda was the duty of every Arya

Dayanand transfused into the languid body of India his own formidable energy, his certainty, his lion's blood His words rang with heroic power He reminded the secular passivity of a people, too prone to bow to fate, that the soul is free and that action is the generator of destiny He set the example of a complete clearance of all the encumbering growth of privilege and prejudice by a series of hatchet blows with regard to questions of fact he went further than the Brahmo Samaj, and even further than the Ramkrishna Mission ventures to day

His creation, the Arya Samaj, postulates in principle equal justice for all men and all nations, together with equality of the sexes It requdiates a hereditary caste system, and only recognises professions or guilds, suitable to the complementary aptitudes of men in society ; religion was to have no part in these divisions, but only the service of the state, which assesses the tasks to be per-

formed The State alone, if it considers it for the good of the community, can raise or degrade a man from one caste to another by way of reward or punishment Dayanand wished every man to have the opportunity to acquire as much knowledge as would enable him to raise himself in the social scale as high as he was able. Above all he would not tolerate the abominable injustice of the existence of untouchables, and nobody has been a more ardent champion of their outraged rights They were admitted to the Arya Samaj on a basis of equality, for the Aryas are not a caste. "The Aryas are all men of superior principles, and the Dasyus are they who lead a life of wickedness aad sin"

Dayanand was no less generous and no less bold in his crusade to improve the condition of women, a deplorable one in India He revolted against the abuses from which they suffered, recalling that in the heroic age they occupied in the home and in society a position at least eqaul to men They ought to have equal education, according to him, and supreme control in marriage over household matters including the finances. Dayanand in fact claimed equal right in marriage for men and women and though he regarded marriage as indissoluble, he admitted the marriage of widows.

I have said enough about this *Sannyasi* with the soul of a leader, to show how great an uplifter of the peoples he was—in fact the most vigorous force of the immediate and present action in India at the moment of the rebirth and reawakening of the national consciousness He was one of the most ardent prophets of reconstruction and of national organization I feel that it was he who kept the vigil.[1]

1 *The Life of* Remakrishna

श्रद्धांजलि

श्री ए ओ ह्यूम, इंडियन नेशनल कांग्रेस के जन्मदाता

समस्त मनुष्यों को यह स्वीकार करना होगा कि वह महान और दिव्य पुरुष थे। वह देश की प्रतिष्ठा थे जिसके लिए उनके हृदय में असीम प्रेम था।

यज्ञ पद्धति प्रकाश

जिस यज्ञ की पद्धति की आर्य जनता चिरकाल से प्रतीक्षा कर रही थी वह छपकर तैयार हो गई। सब आर्यसमाजों का कर्तव्य है कि उसके अनुसार साप्ताहिक अधिवेशनों तथा यज्ञ आदि को करे जिससे देश देशान्तर में एक रूपता धार्मिक कर्म काण्डो मे रहे।

इस ग्रन्थ मे पाँच पद्धतियाँ हैं

१—साप्ताहिक अधिवेशन आदि के समय वृहद् यज्ञ की पद्धति।

२—नित्य यज्ञ करने वालो के लिए नित्य यज्ञपद्धति।

३—आहिताग्नियों के लिये आहिताग्नि नित्य यज्ञ पद्धति।

४—ब्रह्मपारायण यज्ञ पद्धति।

५—साप्ताहिक अधिवेशन सर्वत्र किस प्रकार हों इसके लिये साप्ताहिक अधिवेशन पद्धति।

इन पाँचो पद्धतियो के अतिरिक्त साप्ताहिक अधिवेशन के समय विभाग का एक पृथक् चार्ट छापा गया है जो समाज मन्दिरो मे लगना चाहिए इसका मूल्य १० न पैं मात्र है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का यात्रा चित्र

मूल्य ।।) मात्र

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का यात्रा चित्र तीन रगो मे बहुत सुन्दर सार्वदेशिक सभा ने प्रकाशित किया है। यह एक बडा चित्र नक्शे के समान है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति बडी आसानी से एक दृष्टि डालते ही जान सकता है कि महर्षि अपने जीवन में कहा कहा गये और कहाँ नही। जिस किसी नगर या जगल मे स्वामीजी अनेक बार गये वहाँ सख्या दी हुई है। ऋषि के दो चित्र भी उसमे है एक खडाऊ पहने और दूसरा पूर्ण वस्त्रो मे कि टकारा से चलकर परमर्षि योगाभ्यास के लिए गगोत्री आदि से भी ऊपर पर्वत के किस शिखर तक पहुँचे वहाँ एक कुटिया दिखाई गई है। विद्याध्ययन के चित्र और प्रचार के लिये किन किन स्थान को पवित्र किया वे सब स्थान दिखाए गए है।

यह चित्र के रूप मे महर्षि का सारा जीवन एक पृष्ठ पर है सार्वदेशिक सभा ने बडे परिश्रम से इसको तैयार कराकर तीन रगों में छापा केवल इसलिए कि प्रत्येक के पास पहुँच जावे नाम मात्र मूल्य ।।) रखा है।

सार्वदेशिक सभा ने स्वर्ण जयन्ती और नवम् आर्य महासम्मेलन के अवसर पर निम्नलिखित पुस्तके प्रकाशित करके बहुत बडी आवश्यकता और प्रबल माग की पूर्ति की है।

१—सार्वदेशिक सभा का सक्षिप्त इतिहास—

इस इतिहास मे सभा के स्थापना काल से अब तक की प्रमुख २ प्रगतियो का वर्णन अकित है जो आर्यसमाज के इतिहास का आधार बनाने वाली है। मूल्य)७५ नए पैसे।

२—सार्वदेशिक सभा के निर्णय—

सभा ने स्थापना काल से लेकर अब तक जो नीति सम्बन्धी आवश्यक निर्णय किए है वे सब आर्य जगत् के मार्ग-प्रदर्शन के लिये इस पुस्तक मे सग्रहीत कर दिए गए है। मूल्य)४५ नए पैसे

३—आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव—

इस समय तक आर्य महासम्मेलन के नौ अधिवेशन हो चुके है। इस पुस्तक मे प्रारम्भ से लेकर आठवें महासम्मेलन तक के निश्चय अकित है। सम्मेलन के स्थान तिथि तथा प्रधान आदि के उल्लेख के साथ २ प्रत्येक सम्मेलन के होने के कारण पर भी प्रकाश डाला गया है। मूल्य ६० नए पैसे

४—आर्य महासम्मेलनों के अध्यक्षीय भाषण

इस सग्रह मे समस्त महासम्मेलनो के अध्यक्षों के भाषण दिये गए हैं। प्रत्येक अध्यक्ष का चित्र तथा जीवन परिचय भी दिया गया है। पुस्तक मे लगभग २०० पृष्ठ है। मूल्य १ रुपया

५—आर्यसमाज का परिचय—

इस पुस्तक में आर्यसमाज तथा उससे सम्बद्ध आवश्यक सामग्री के साथ २ अनेक अलभ्य चित्र भी दिए गए हैं। इस पुस्तक को पढने पर आर्यसमाज विषयक कोई जानकारी शेष नहीं रह जाती। यह भेंट करने योग्य अलभ्य प्रकाशन है। समस्त पुस्तक आर्ट पेपर पर छपी है। मूल्य १) रुपया

६—पाथ आफ परफेक्शन (अंग्रेजी)—

यह पुस्तक चरित्र निर्माण में परम सहायक हो सकती है। इसके लेखक हैं सभा के भूतपूर्व प्रधान श्री बा० पूर्णचन्द जी एडवोकेट। मूल्य ४० नए पैसे। इन सब प्रकाशनों की छपाई, सफाई गेटअप बडे भव्य और चिताकर्षक हैं।

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन नई दिल्ली-१

प्रचार करने योग्य ट्रैक्ट

	मूल्य		प्रति सैंकडा
१ मद्य निषेध की आवश्यकता (ट्रैक्ट)	)०८		
२ वेद और गोमेध (ट्रैक्ट)	)१२		
३ आर्यसमाज के मन्तव्य	१२)	,,	१०)
४ शकासमाधान	)०३	,	२)५०
५ पूजा किसकी	)०३	,,	२)५०
६ आर्यसमाज	)०३	,,	२)५०
७ ऋग्वेद मे तेवृकामा या देवकामा	)०६	,,	५)
८ गोकरुणानिधि	)०६	,,	४)
९ गोहत्या क्यो ?	)१२	,,	१०)
१० ममझे के लिए गोवध	)४८	,,	१५)
११ मॉमाहार घोर पाप	)१५	,,	१२)
१२ दशनियम व्याख्या	)०९	,,	७)५०
१३ तीर्थ और मोक्ष	)०९	,,	७)५०
१४ ग्रहण ओर दान	)०९	,,	७)५०
१५ भारतवर्ष मे जाति भेद	)०९	,,	७)५०
१६ वैदिक राष्ट्र धर्म	)२०	,,	१५)
१७ प्रजापालन	)०५	,,	४)
१८ नारायण स्वामी जी की मक्षिप्त जीवनी	)०६	,,	५)
१९ मत्याथ प्रकाश की रक्षा मे	)०६	,,	५)
२० मुर्दों को क्यो जलाना चाहिए	)०६	,,	५)
२१ आर्यममाज के नियमोपनियम	)०९	,,	७)५०
२२ आदर्श गुरु शिष्य	)२५	,,	२०)
२३ भारत का एक ऋषि	)१२	,,	१०)

EFGLISH PUBLICATIONS

1 Introduction to the Commentary on Vedas 2/8/-
2 Kenopanishst (Transation by Pt Ganga Prasad ji M A) -/4/-
3 Kathopanishat Pt Ganga Prasadt M A Rtd Chief Judge) 1/4/-
3 The Universality of the SATYARTH PARKASH 0/06
5 PUNISHMENT PRESCRIBED
The unbelievers [illegible] Quran 0-19
6 Vedic Trinity 0-12
7. Aryasamaj & International Aryan League (Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A -/1/-
8 Truth Bed Rocks of Aryan Culture (Rai Sahib Thakur Datt Dhawan) -/1/-
9 A Case of Satyarth Prkaash in Sind S Chandra) 1//-8
10 In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A) -/2/-
11 Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharma Deva ji Vidyavachaspati)-/8/-
12 Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati -/8/-
13 Elementary Teachings of Hinduism -/8/-
(Ganga Prasad Upadhyayaya M A)
14 Life after Death ,, 1/4/-
15 Philosophy of Dayanand ,, 10/-
16 Agnihotra (Dr Satya Prakash 2/8
17 Daily Prayer of an Arya -/8/- (Sh i Narain Swami)
18 The Consitution of Arya Samaj 20 n P
19 Crucifixion R 1/-
20 Buadha-An Arya Refomer B 1/8/

नोट —(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अगाऊ रूप मे भेजे ।
(२) अपना पूरा पता डाकखाने तथा स्टेशन के नाम सहित साफ-साफ लिखे ।
(३) विदेश से यथासम्भव धन पोस्टल आर्डर द्वारा आना चाहिए ।

व्यवस्थापक—**सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार, दयानन्द भवन नई दिल्ली—१**

सम्राट् प्रेस, पहाडी धीरज, दिल्ली मे मुद्रित व रघुनाथ प्रसाद जी पाठक मुद्रक और प्रकाशक के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, नई दिल्ली-१ से प्रकाशित ।

॥ ओ३म् ॥

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



दयानन्द भवन नई दिल्ली

(वार्षिक विवरणाङ्क)

१९६२

वार्षिक मूल्य ६) सृष्टि सम्वत दयानन्दाब्द विदेश से, वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ३८ १९७२९४९०६३ १३८ जुलाई १९६२ (आसाढ़ २०१९) अंक ५

विषय-सूची

❀ सम्पादक

कालीचरण आर्य सभा मन्त्री

● सहायक सम्पादक

रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ प्रकाशक व मुद्रक

रघुनाथप्रसाद पाठक

● कार्यालय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दयानन्द भवन, नई दिल्ली

फोन २२४७७१

❀ मुद्रक

सार्वदेशिक प्रेस, दरियागंज दिल्ली।

वैदिक प्रार्थना

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आव ।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥
य० १३ । ३ ॥

व्याख्यान—हे महीय परमेश्वर ! आप बड़ों से भी बड़े हो । आपसे बड़ा वा आपके तुल्य कोई नहीं है । 'जज्ञानम्'' सब जगत् में व्यापक (प्रादुर्भूत) हो । सब जगत् के प्रथम (आदिकारण) आप ही हो । सूर्यादि लोक "सीमत" सीमा से युक्त (मर्यादासहित) 'सुरुच" आपसे प्रकाशित हैं । "पुरस्तात्" इनको पूर्व रचके आप ही धारण कर रहे हो । 'वेन" आपके आनन्दस्वरूप होने से ऐसा कोई जन संसार में नहीं है जो आपकी कामना न करे किन्तु सब ही आपको मिला चाहते हैं तथा आप अनन्त विद्यायुक्त हो । सब रीति से रक्षक आप ही हो । सो ही परमात्मा बुध्न्या" अन्तरिक्षान्तर्गत दिशादि पदार्थों को "विव" विवृत (विभक्त) करता है । वे अन्तरिक्षादि उपमा सब व्यवहारों में उपयुक्त होते हैं और वे इस विविध जगत् के निवासस्थान हैं । "सत्" विद्यमान स्थूल जगत् 'असत्'' अविद्या चक्षुरादि इन्द्रियों से अगोचर इस विविध जगत् की योनि आदिकारण आपको ही वेदशास्त्र और विद्वान् लोग कहते हैं । इससे इस जगत् के माता पिता आप ही हैं, हम लोगो के भजनीय इष्ट देव हैं ॥

सम्पादकीय—

आर्यसमाज के लिए विशेष कार्य

श्रीयुत डा० ताराचन्द जी ने 'मोतीलाल जन्म शताब्दी स्मारक ग्रन्थ' में प्रकाशित अपने एक लेख में एक बात बड़ी महत्त्व पूर्ण कही है। उन्होने लिखा है कि सन् १८७७ के आस पास भारत में अंग्रेजी शासन की देन स्वरूप शिक्षा का प्रसार हुआ और पाश्चात्य संस्कृति के उपकरण स्वरूप कानून और व्यवस्था, विज्ञान और उद्योग धन्धो की समुचित व्यवस्था की गई। कुछ भारतीयो ने पाश्चात्य वेष भूषा और रंग ढंग अपनाए और पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान में उन्नति की। अंग्रेजी शासन की यह देन निराशाजनक थी। भारत ने पाश्चात्यो की जीवन की मौलिक भावना को स्वीकार नही किया। समाज में व्याप्त रूढ़ियो और त्रुटियो के खंडन और सामाजिक एवं धार्मिक सुधारो से भारत के आत्म-सम्मान की रक्षा हुई। इस स्तुत्य कार्य में महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का जो योग रहा उसे डाक्टर महोदय ने अंगीकार करके उसकी प्रशंसा की है।

भारतीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात् भारतीय जीवन को जिस सांचे में ढालने का हमारे राजनैतिक कर्णधार यत्न कर रहे हैं वह एक दम भयावह और निराशाजनक है। इसके विस्तार में यहां जाने की आवश्यकता नहीं है। आर्य समाज को भारतीय जीवन की मौलिक भावना की रक्षा का बहुत बड़ा कार्य करना है। इसका एक सुपरिणाम यह भी होगा कि जिस प्रकार भारतीय जीवन के प्राय प्रत्येक अंग पर आर्य समाज का प्रभाव अंकित है और उसकी अनुभूति हुए बिना नही रहती इसी प्रकार इस महान कार्य के सपादन से उसके प्रभाव की अनुभूति होनी चाहिए। इसके लिए अपने संगठन को दृढ करने आर्य जीवन के प्रभाव को विस्तृत करने उच्चतम कोटि के विद्वान, लेखक और प्रचारकों की संख्या में वृद्धि करने और कार्य के ढर्रे में आमूल चूल परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

— रघुनाथ प्रसाद पाठक

❀

सम्पादकीय टिप्पणियां—

रेडियो की भाषा नीति में परिवर्तन

भारत सरकार को यह सह्य प्रतीत नहीं होता कि आल इंडियो रेडियो की भाषा संस्कृत निष्ठ हो जैसी कि वह उचित रीति से आजकल प्रचलित है। इस भाषा को बोल चाल की भाषा के आवरण में उर्दू निष्ठ बनाने अथवा हिन्दुस्तानी का रूप दिए जाने का यत्न किया जा रहा प्रतीत होता है। संस्कृत निष्ठ हिन्दी को अधिकांश प्रदेशों के लोग समझने में समर्थ हैं क्योंकि उनकी भाषाएं संस्कृत के अधिक सन्निकट हैं। इसे उर्दू का रूप देने का अभिप्राय यही हो सकता है कि यह भाषा उर्दू निष्ठ कतिपय लोगो को पसन्द नहीं है। कुछ लोगो की मनतरङ्ग पर अथवा थोड़े से लोगो के हित के नाम पर अधिकांश लोगो के हित की बलि देना अनुचित एवं अन्याय पूर्ण है। इस प्रकार का यत्न राजनीतिज्ञता से रहित भी देख पड़ता है। इस प्रकार के विवादो से देश का वातावरण निकृष्ट बनने देना राजनीतिज्ञता का कार्य नहीं कहा जा सकता। जबकि देश मे संस्कृत निष्ठ हिन्दी का प्रचार और प्रसार सुनिश्चित है तब इस प्रकार के विवादो की उलझनो में राज्यभाषा हिन्दी का ग्रसित किया जाना उसकी और देशवासियो की प्रगति के लिए अहितकर है।

श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी की श्री नेहरू जी के साथ भेंट

इस भेंट का वर्णन हिन्दुस्तान टाइम्स के संवाददाता ने ११ जून के संवाद में इस प्रकार किया है —

श्री स्वामी जी ने अपनी २५ मिनिट की भेंट

है लोक सभा में हिन्दी को उपयुक्त स्थान देने की आवश्यकता के सम्बन्ध में प्रधान मंत्री महोदय को प्रभावित किया। स्वामी जी ने श्रीयुत नेहरूजी को कहा कि सदन में हिन्दी में पूछे जाने वाले प्रश्नों का उत्तर हिन्दी में न मिलना बड़ा विचित्र है।

श्री नेहरू जी इस बात से सहमत थे कि स्वामी जी ने जो स्थिति ग्रहण की है वह सही है। फिर भी उन्होंने बताया कि कुछ मंत्री गण हिन्दी में उत्तर देने में असमर्थ रहते हैं इसलिए वे अंग्रेजी में उत्तर देने के लिए विवश हो जाते हैं।

स्वामी जी ने सुझाव दिया कि यदि कोई मन्त्री हिन्दी में उत्तर देने में असमर्थ हो तो उन्हें राष्ट्र-भाषा हिन्दी में निष्णात डिपुटी मिनिस्टर (उपमंत्री) मिलना चाहिए।

पंजाब की चर्चा करते हुए स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने कहा कि वहां लोग पंजाबी पढ़ने के लिए विवश किए जा रहे हैं।

हिन्दी आंदोलन

श्रीयुत नेहरू जी ने स्वामी जी को 'हिन्दी आन्दोलन का स्मरण कराया और कहा कि इसने हिन्दी का बड़ा अहित किया है।

स्वामी जी ने उत्तर देते हुए कहा कि पंजाब में भाषा की समस्या नहीं है अपितु लिपि की समस्या है जिससे लोगों में रोष व्याप्त है। लोगों को गुरुमुखी और देवनागरी में से कोई लिपि चुनने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। स्कूलों में बालकों को या तो दोनों भाषाएं सिखाई जानी चाहिए या दोनों में से किसी एक को चुनने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

इससे पूर्व आज स्वामी जी ने लोक सभा में भी यह बात उठाई थी। अध्यक्ष महोदयने उन्हें विश्वास दिलाया कि वह हिन्दी में जो प्रश्न करेंगे उनका उत्तर हिन्दी में ही दिलाया जायगा।

स्वामी रामेश्वरानन्द जी ही सम्भवतः अकेले सदस्य हैं जिन्होंने राज्य से न तो रहने के लिए स्थान की मांग की है और न टेलीफून की। आज सायंकाल उन्होंने मुझे बताया कि मैं ब्रह्मचारी हूँ अतः मैं सरकारी निवास स्थान लेकर बर्बाद नहीं करना चाहता। वह प्रतिदिन अपने गुरुकुल घरौंडा (करनाल) से रेल द्वारा लोक सभा में भाग लेने आते और गुरुकुल लौट जाते हैं।"

तामिल की बाध्यता

१५ मई के नव भारत टाइम्स दिल्ली में एक सम्पादकीय टिप्पणी प्रकाशित हुई थी जिसमें मदरास गवनमेंट के इस आदेश पर विचार किया गया था कि राज्य के समस्त मंदिरों में पूजा पाठ और अन्य अनुष्ठान संस्कृत के स्थान में तामिल भाषा में किए जाया करें। यह आदेश संस्कृत प्रेमियों के लिए दुःख जनक और विचारणीय था। हमने इस विषय में वास्तविकता जानने का यत्न किया। मदरास के हमारे एक विश्वस्त सज्जन ने मदरास राज्य के हिन्दू रिलीजस ऐंड चेरिटेबिल एनडाउमेन्ट (ऐडमिनिस्ट्रेशन) विभाग से सम्पर्क स्थापित किया। उन्हें विदित हुआ कि इस विभाग ने एक परिपत्र जारी किया है जिसमें निर्देश दिया गया है कि यदि भक्तजन चाहें तो प्रार्थना की तामिल भाषा में पुनरावृत्ति कर सकते हैं इसमें बाध्यता नहीं है। प्रार्थना सर्व प्रथम संस्कृत में की जायगी और भक्त जन चाहेंगे तो तामिल में भी उसकी पुनरावृत्ति हो सकेगी। इस परिपत्र का लक्ष्य तामिल भाषा को प्रोत्साहन करना तो है परन्तु वह संस्कृत के बलिदान पर किया गया है यह अभी स्वीकार नहीं किया जा सकता।

बधाई का पात्र

जम्मू का १५ जून का समाचार है कि डोगरा जाति के एक नवयुवक ने अपने विवाह में दहेज लेने से इन्कार कर वहां सनसनी पैदा कर दी है।

परम्पराओं से बंधे हुए डोगरा ब्राह्मणों में

उसके इस निषेध को अति निंदनीय ठहराया परन्तु वह नवयुवक अपनी बात पर डटा रहा। उसका कहना था कि वह दहेज द्वारा अमीर बनने वालों के सामने एक उदाहरण रखना चाहता है।

बताया जाता है कि जम्मू में शायद यह पहला डोगरा नवयुवक है जिसने दहेज लेने से इन्कार किया है।

निस्सन्देह यह नवयुवक बधाई का पात्र है और उसका उदाहरण अनुकरणीय है।

प्रशंसनीय कार्य्य

यह समाचार बड़ा उत्साह वर्द्धक है कि सार्व-देशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और अखिल भारतीय श्रद्धानन्द ट्रस्ट द्वारा संयुक्त रूप में निर्मित 'अरा-ष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध समिति' का कार्य्य बड़ी सफलता पूर्वक हो रहा है और कार्य्य का क्षेत्र और उसका दायित्व दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। इस समय छोटा नागपुर उड़ीसा, बासवाड़ा (राज-स्थान) तथा राजस्थान के अन्य कुछ भागों में उसका कार्य्य हो रहा है। उड़ीसा में मुख्यतया श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती की देखरेख में प्रशंसनीय कार्य्य हो रहा है। उनके प्रयत्न के फल-स्वरूप १९-२-६२ को ३५३ ईसाइयों की सामूहिक शुद्धि हुई थी। शुद्धि संस्कार गडगड बहाल जिला सम्बलपुर में सम्पन्न हुआ था। स्वामी जी के प्रयत्न और प्रचार के फल स्वरूप कई कट्टर ईसाई प्रचारक शुद्ध होकर आर्य्य ग्रन्थों के स्वाध्याय और प्रचार कार्य्य में संलग्न हो चुके हैं। २५-१-६२ को श्री विचित्र पाणिग्राही नामक एक ईसाई प्रचारक सपरिवार शुद्ध होकर आर्य्य ग्रन्थों का स्वाध्याय कर रहे हैं और वह शीघ्र ही प्रचार का दायित्व अपने ऊपर लेने वाले हैं। यह बलांगीर जिला के उलना गांव के निवासी हैं। गत १० फरवरी को श्रीमती सुमित्रा जो बलांगीर जिले में प्रधान ईसाई अध्या-पिका थी वैदिक धर्म में दीक्षित हुई हैं। श्री स्वामी जी गत कई मास से रक्तचाप की बीमारी में ग्रस्त हैं। उनकी चिकित्सा हो रही है। इस पर भी वह प्रचार योजनाओं की पूर्ति में संलग्न हैं। श्री स्वामी जी ने आज तक जो कार्य्य किया है वा कर रहे हैं उस पर आर्य समाज उचित रीति से गर्व कर सकता है। परमात्मा उन्हें शीघ्र पूर्ण आरोग्य प्रदान करे जिससे उनके द्वारा जो उपयोगी कार्य्य हो रहा है वह होता रहे और उसमें व्यवधान उपस्थित न हो।

श्री स्वामी देवानन्द जी

सार्वदेशिक सभा के ऋषिकेश स्थित वैदिक आश्रम के सर्वेसर्वा श्री स्वामी देवानन्दजी के निधन का समाचार देते हुए बड़ा दुःख होता है। श्री स्वामी जी वर्षों से इस आश्रम के इन्चार्ज थे। वह बड़ी तन्मयता से प्रबन्ध कार्य में संलग्न थे। इस आश्रम के द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार का जो कार्य होता था उसके एक प्रकार से प्राण श्री स्वामी जी ही थे। स्वामी जी कई वर्ष से अस्वस्थ थे फिर भी अपने दायित्व की सम्यक पूर्ति में उन्होंने व्यवधान उपस्थित न होने दिया। श्री स्वामी जी जैसे व्यक्ति से वंचित हो जाना एक बड़ी क्षति है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे यही अभ्यर्थना है।

वज्रपात

जाट वैदिक डिग्री कालेज बड़ौत जिला मेरठ के प्रिंसिपल श्रीयुत महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री पर ज्येष्ठ पुत्र श्री रविप्रताप एम० ए० के वियोग का जो वज्रपात हुआ है उसका आघात वस्तुतः मर्मान्तिक है। प्रिय जन की मृत्यु सामान्यतः दुःखदायी होती है परन्तु रविप्रताप जैसे होनहार सुयोग्य पुत्र का असामयिक वियोग अत्यधिक दुःखदायी सिद्ध होगा। वह अपने पीछे एक मात्र विधवा पत्नी छोड़ गए हैं। रविप्रताप लखनऊ विश्व विद्यालय में एम० ए० में प्रथम रहे थे और वहीं पर प्रोफेसर नियुक्त हो गये थे। वह कई वर्ष तक रोग ग्रस्त

रहे। श्री शास्त्री जी ने उनके उपचार में कोई कमी न रखी। हजारों रुपया व्यय किया परन्तु विधि के विधान के समक्ष राजा रंक, धनी-निधन, बाल-वृद्ध, शिक्षित, अशिक्षित सभी नत मस्तक रहते हैं। जो भगवान के प्यारे होते हैं वे हमसे शीघ्र ही छीन लिए जाते हैं। पतझड़ का समय निश्चित होता है। फूल समय पर मुर्झाते और सितारे छिप जाते हैं परन्तु मृत्यु का मौसम सदैव रहता है। मृत्यु एक अवश्यक, स्वाभाविक और व्यापक तथ्य है परमात्मा ने इसे मानव-समाज के लिए एक बुराई के रूप में निश्चित किया है यह कल्पना करना निरर्थक है। अवश्य ही यह तो भले व्यक्ति के लिए बहिर्गमन का छोटा सा द्वार होता है जिसमें से मनुष्य अपने छोटे से घर में से निकल कर उस घर में प्रविष्ट हो जाता है जो विशाल और सुन्दर होता है और जो दिव्य प्रकाश से आलोकित रहता है। श्री शास्त्रीजी और उनके सतप्त परिवार को यह सोचकर धैर्य धारण करना चाहिए। रविप्रताप का निधन आर्य समाज की तो क्षति है ही हमारे लिए तो निजी असह्य क्षति है। परमात्मा दिवगत आत्मा को सद्गति और शोक सतप्त परिजनों को इस महान् दुःख को सहन करने की क्षमता प्रदान करे।

अमेठी के स्व० महाराज

सार्वदेशिक सभा के आजीवन सदस्य और आर्य समाज के ख्यातनामा राजकुमार रणञ्जयसिंह संसद सदस्य के मान्य पिता अमेठी नरेश श्री राजा भगवान बख्शसिंह के० आई० ऐच का ५ ६ ६२ को १०० वर्ष की आयु मे निधन हो गया। राजा महोदय राजा लाल माधवसिंह के उत्तराधिकारी थे और १८६१ में राजगद्दी पर बैठे थे। १९४१ में इनके राज्याभिषेक की स्वर्ण जयन्ती तथा १९५१ में हीरक जयन्ती बडे समारोह के साथ मनाई गई थी।

महाराजा महोदय ने अपने शासन काल में कई महत्त्वपूर्ण कार्य किए थे। सुलतानपुर का महिला चिकित्सालय, अनेक शिक्षण संस्थान, वाटिकाएं तथा फार्म आदि स्थापित एवं बनवाकर प्रजापालन, दान, यज्ञ स्वाध्याय तथा भगवद् भजन मे तल्लीन रहे। जमीन्दारी उन्मूलन के उपरान्त भी उनका मान पूर्ववत बना रहा। वह दया की प्रतिमूर्ति थे। बडे सहृदय उदार स्वाध्याय परायण और दानशील धार्मिक नरेश थे। महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। सत्यार्थप्रकाश और वाल्मीकि रामायण उन्हें बहुत प्रिय थी। उनका निरंतर स्वाध्याय किया करते थे। राज दरबार में में भी इन दो सद्ग्रन्थो का प्राय पठन-पाठन हुआ करता था।

अपने राजकुमारों की शिक्षा घर पर गुरुकुल प्रणाली के अनुसार सुयोग्य विद्वानो द्वारा दिलाई जिसके फल स्वरूप उनके द्वितीय पुत्र स्व० रणवीर सिंह तथा तृतीय पुत्र श्री राजकुमार रणञ्जयसिंह जी आर्य समाज को एक मूल्यवान विरासत के रूप में प्राप्त हुए। स्व० महाराजा प० मोतीलाल नेहरू तथा महामना प० मदन मोहन जी मालवीय के घनिष्ठ मित्र थे। राजकुमारो की अंग्रेजी शिक्षा के लिए श्री स्व० प० मोतीलाल जी नेहरू ने विशेष रूप से एक बहुत सुयोग्य तथा अनुभवी विद्वान को नियुक्त कराया था।

जमीन्दारी उन्मूलन के पश्चात राजकुमार रणञ्जयसिंह जी ने डिग्री कालेज की स्थापना की थी जो स्व० महाराज के कई लाख रुपए के दान का प्रतीक है।

स्व० राजकुमार रणवीरसिंह जी बडे विद्या व्यसनी थे। उनके लेख और कविताए 'आर्यमित्र' में प्राय पढ़नेको मिलते थे। श्री राजकुमार रणञ्जय सिंह जी तो आर्य समाज मे घुले मिले हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तरप्रदेश और सार्वदेशिक सभा के प्रति उनकी सेवाएं उल्लेखनीय रही हैं। राजकुमार महोदय उत्तर प्रदेश की विधान सभा के वर्षों

पर्यन्त सदस्य रह चुके हैं। अब वह केन्द्रीय विधान (लोक) सभा में निर्वाचित होकर आए हैं इससे पूर्व अंग्रेजी शासनकाल में कई वर्ष पर्यन्त केन्द्रीय विधान सभा के सदस्य रहे थे। उन दिनों दिल्ली की आर्य समाज की प्रगतियों और सार्वदेशिक सभा के कार्यों में उनका योग प्राप्त रहता था।

श्री महाराज भगवानबख्शसिंह को महर्षि दयानन्द के भक्त आर्य नरेशों में ऊंचा स्थान प्राप्त रहा। आर्य जगत जिन राज-परिवारों के प्रति ममत्व और अपनत्व की भावना रखने में गौरव अनुभव करता है उनमे अमेठी का राज घराना विशिष्ट स्थान रखता है। विश्वास है इस राज घराने में आर्य परम्पराएं कायम रहेंगी और स्व० महाराज के उत्तराधिकारी उनमे निरन्तर गौरवपूर्ण वृद्धि करते रहेंगे। इन शब्दों के साथ हम अपनी तथा सार्वदेशिक परिवार की ओर से स्व० महाराज को श्रद्धांजलि प्रस्तुत करते हुए दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं।

हरिजन महिला की सराहनीय ईमानदारी

फरीदकोट के निकट स्थित ढिलवां गांव की सुरजीत कौर नामक एक ४० वर्षीय हरिजन महिला ने ईमानदारी की एक शानदार मिसाल कायम की है।

राजस्थान नहर के दो ठेकेदार मोटर साइकिल पर फरीदकोट की ओर जा रहे थे। ढिलवां में मोटर साइकिल नहर के पुल से टकरा गई और दोनों सवार मोटर साइकिल सहित नहर में गिर गए।

सुरजीत कौर ने, जो पास ही अपनी भैंस को नहला रही थी, ठेकेदारों को पानी से बाहर निकाला। वे बेहोश हो गए थे।

५० गज के अन्तर पर सुरजीत कौर ने एक थैला तैरते हुए देखा। उसने थले को बाहर निकाल कर देखा तो इसमें १७,००० रुपए के नोट थे।

आधे घण्टे के बाद ठेकेदार होश में आए तो उन्होने अपने थैले और मोटर साइकिल के बारे में पूछा -सुरजीतकौर ने, जो भीड़ में खड़ी थी, आगे बढ़ कर थैला उनके हवाले कर दिया। उन्होंने सुरजीत कौर को १००) रु० इनाम के तौर पर देने चाहे लेकिन उसने इनाम लेने से इन्कार कर दिया।

गुरुकुल कांगड़ी को विश्व विद्यालय के रूप में मान्यता

केन्द्रीय शिक्षा सचिवालय द्वारा प्रकाशित २० जून की एक विज्ञप्ति के अनुसार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की राय पर केन्द्रीय सरकार ने दिल्ली की जामिया मिलिया इस्लामिया और हरिद्वार के गुरुकुल कांगड़ी को विश्व विद्यालय मानने की घोषणा की है। इसकी अधिकृत सूचना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कानून (१९५६) की धारा ३ के अनुसार की गई है।

सम्प्रति यह मान्यता ३ वर्ष के लिए है और जामिया में बी० ए० और बी० एड तथा गुरुकुल कांगड़ी की बी० ए० बी०एम०सी० और एम० ए० डिग्रियों की समस्त कक्षाओं के लिए होगी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इनकी प्रगति देखेगा और इसके बाद मान्यता को आगे जारी रखने पर विचार करेगा।

जामिया की स्थापना १९२० में अलीगढ़ में महात्मा गांधी, मौ० अबुल कलाम आजाद आदि द्वारा हुए थी। १९२५ में यह दिल्ली लाई गई। गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना १९०२ में श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ने की थी।

ये संस्थाएं शिक्षा के क्षेत्र में मौलिक कार्य कर रही हैं और इस मान्यता से इनकी और उन्नति होगी।

भूल सुधार

जून ६२ के 'सार्वदेशिक' के मुख पृष्ठ पर 'आर्य समाज मन्दिर तथा अनाथालय पारामारिबो

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन १० जून १९६२ को श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज के प्रधानत्व में आर्य समाज दीवानहाल दिल्ली में हुआ। पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल आसाम, राजस्थान, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, बम्बई, पूर्वीय अफ्रीका, मौरिशस, मदरास आदि २ प्रान्तों के प्रतिनिधि तथा प्रतिष्ठित एवं आजीवन सदस्यों ने १४४ की संख्या में भाग लिया जिनमें आर्य समाज के प्रतिष्ठित एवं प्रसिद्ध सन्यासी विद्वान् भी सम्मिलित थे। यह उपस्थिति सभा के अब तक के इतिहास में सबसे अधिक थी।

आगामी वर्ष के लिए पदाधिकारियों का निर्वाचन इस प्रकार हुआ —

१—प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज
२—उप प्रधान श्री डा० दुखनराम जी
३—उप प्रधान श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री
४—उप प्रधान श्री देशराज जी चौधरी
५—मन्त्री कालीचरण जी आर्य
६—उप मन्त्री श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री
७—उप मन्त्री ,, माधवेन्द्र जी शास्त्री (बम्बई प्रान्त)
८—कोषाध्यक्ष श्री ओ३म्प्रकाशजी कपडे वाले
९—पुस्तकाध्यक्ष श्री आचार्य विश्वश्रवा जी

अन्तरंग सदस्य

१ श्री मिहिरचन्द्र जी धीमान (बंगाल)
२— ,, प्रो० शेरसिंह जी (पंजाब)
३ — ,, डा० हरिप्रकाश जी (पंजाब)
४— , बा० जगनन्दनलाल जी एडवोकेट (उत्तर प्रदेश)
५— ,, प्रेमचन्द जी शर्मा (उत्तर प्रदेश)
६— ,, घनश्यामसिंह जी गुप्त मध्य प्रदेश)
७— ,, डा० महावीरसिंह जी (मध्य भारत)
८— ,, पं० भगवान स्वरूप जी, न्यायभूषण (राजस्थान)
९— ,, वेणी भाई आर्य (बम्बई प्रान्त)
१०— , पं० नरेन्द्र जी (हैदराबाद)
११— ,, विष्णुदेव जी मेघराज (मोरीशस)
१२— ,, डी० डी० पुरी जी (पूर्वीय अफ्रीका)
१३— ,, ला० भगवानदासजी पुरी (आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब)
१४— ,, म० बनवारीलाल जी (आजीवन सदस्यों के प्रतिनिधि)
१५— ,, पं० वासुदेव जी शर्मा (बिहार प्रान्त)
१६— ,, प्रो० रामसिंह जी एम० ए० जनरल)
१७— ,, बालमुकन्द जी आहूजा ,,
१८— , श्री आचार्य बृहस्पति जी ,,

इसके अतिरिक्त आगामी वर्ष के लिए श्री नारायणदासजी कपूर आडीटर निर्वाचित हुए।

विविध कार्यों के सचालनार्थ कई उप समितियां नियुक्त हुई।

आगामी वर्ष के लिए सभा ने १६२९८३) का व्यय का बजट पास किया।

कालीचरण आर्य
मन्त्री

(सुरीनाम) डच गायना के विवरण से एक ब्लाक छपा है। भूल से उक्त ब्लाक के स्थान में हैदराबाद (दक्षिण) के एक सिख गुरुद्वारे का ब्लाक छप गया है जो हैदराबाद सत्याग्रह के काल में सभा कार्यालय में प्राप्त हुआ था। इस भूल का खेद है। प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद(आंध्र प्रदेश) के मन्त्री श्री पं० नरेन्द्र जी तथा पत्र के एक ग्राहक श्रीयुत ऋषिराम जी उपाध्याय फारेस्टरेंजर गोंडा ने हमारा ध्यान आकृष्ट किया जिनके हम आभारी हैं। उक्त आर्य समाज का ब्लाक हम किसी अन्य अंक में देंगे। —रघुनाथ प्रसाद पाठक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी का वक्तव्य

आकाशवाणी (आल इण्डिया रेडियो) दिल्ली से जो समाचार आदि हिन्दी में प्रसारित होते हैं, उनकी भाषा में परिवर्तन किया जा रहा है, यह जानकर उन लोगो को खेद और आश्चर्य होना स्वाभाविक है, जो इन्हे हिन्दी में सुनते आये हैं।

आकाशवाणी के प्रसारण मे हिन्दी और उर्दू दो भिन्न भाषाए मानी गई हैं और इसी मान्यता के आधार पर उन दोनो भाषाओं मे भिन्न भिन्न रूप से प्रसारण होता है। इन दोनो की मिश्रित बोली हिन्दुस्तानी को मान कर उसमे प्रसारण नही किया जाता। इसके लिए कारण भी है। मिश्रित हिन्दुस्तानी बोली का क्षेत्र बहुत सकुचित है जब कि हिन्दी का क्षेत्र अति विस्तृत है। हिन्दी प्रदेशो की भाषा होने के अतिरिक्त आकाशवाणी दिल्ली द्वारा हिन्दी का प्रसारण सुनने वाले व्यक्ति अन्य प्रदेशों मे भी हजारो की सख्या मे विद्यमान हैं। यह भी स्पष्ट है कि ऐसे लोगो के लिए, अरबी और फारसी के शब्दों की अपेक्षा सस्कृत के शब्द अधिक सुगम हैं। अत सुगम करने के नाम से अरबी फारसी जन्य उर्दू शब्दो को लाकर इसकी भाषा में परिवतन करना अनुचित और अवाछनीय है। विशेषत जब कि उर्दू भाषा के प्रसारण में कोई परिवर्तन नही किया जा रहा है।

सम्पूर्ण देश के चुने हुए प्रतिनिधियो द्वारा हिन्दी का रूप सविधान में निर्धारित हो चुका है और उसे देश ने हृदयगम भी कर लिया है, तब इसमे हेर-फेर करने का यत्न करना न्याय सगत नही कहा जा सकता। इससे देश में एक निरर्थक भाषायी विवाद खड़ा होने की भी सम्भावना है। इससे राष्ट्रीय एकीकरण की ओर जो प्रयत्न किये जा रहे हैं उन पर आघात हुए बिना नही रहेगा वह अवश्यम्भावी है।

राष्ट्र की भावनाओं का सम्मान रखते हुए हिन्दी में आकाशवाणी प्रसारण में कोई परिवर्तन न करके यथापूर्व स्थिति रहने दी जाय। आर्य समाज का हिन्दी तथा सस्कृत के प्रति विशेष कर्तव्य और उत्तरदायित्व है, इसी दृष्टि से मैंने यह अपना वक्तव्य देना उचित समझा।

अमरावती के सुप्रसिद्ध दानी





ओ३म्

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

का

५४ वां वार्षिक वृत्तान्त

(१-३-१९६१ से २८-२-१९६२ तक)

निर्माण व्यवस्था

इस वर्ष इस सभा मे देश और विदेश की १७ प्रतिनिधि सभाएं सम्मिलित रही। वर्ष के अन्त मे यह सभा निम्न प्रकार १८२ सदस्यो का समुदाय थी —

१—प्रान्तीय सभाओ के प्रतिनिधि	१४८
२—भूतपूर्व प्रधान	३
३—प्रतिष्ठित	५
४—आजीवन सदस्य	२६
	१८२

सम्बद्ध प्रान्तीय सभाएं

सभा	सदस्य संख्या
१—आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश नारायण स्वामी भवन, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ	३०
२—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब गुरुदत्त भवन, होशियारपुर रोड, जालन्धर	४२
३—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब निकट कचहरी, जालन्धर	११
४—आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार मुनीश्वरानन्द भवन, बांकीपुर पटना ४	१०
५—आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल ४२ शंकर घोष लेन कलकत्ता	१४
६—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत नया बाजार लशकर ग्वालियर)	३
७—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश सदर मंगलवारी पेठ, नागपुर	२
८—आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान केसरगंज अजमेर	७
९—आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण सुलतान बजार हैदराबाद, (आन्ध्र प्रदेश)	५
१०—आर्य प्रतिनिधि सभा सिंध उल्लासनगर-२ जिला थाणा (महाराष्ट्र)	—
११—आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई कारेली बाग, बडौदा	१५
१२—आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वी अफ्रीका पो० बा० २४३ नैरोबी	१
१३—आर्य प्रतिनिधि सभा दक्षिण अफ्रीका पो० बा० १७७० डर्बन	—
१४—आर्य प्रतिनिधि सभा फिजी पो० बा० १२८ सामाबूला	—
१५—आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम, डचगायना पो० बा० २५० पारामीरिबो	१

१६—आर्य सभा मौरिशस पोर्ट लुइस	१
१७—गुजरात प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा कारेली बाग बड़ौदा	६
	१४८

इस वर्ष प्रान्तीय सभाओ के सदस्यो में निम्न प्रकार ३२ की वृद्धि हुई —

१—आर्य प्रतिनिधि सभा गुजरात (२९-१-६१ को प्रविष्ट हुई)				६
२—आर्य प्रादेशिक सभा प्रतिनिधि सभा पजाब (२५-६-६० को प्रविष्ट हुई)				११
३—,	,,	,,	उत्तर प्रदेश	३
४—,,	,,	,,	बगाल	१
५—	,,	,,	बम्बई	६
६—,	,,	,,	पूर्वीय अफ्रीका	१
७—,,	,,	,,	मौरीशस	१
				३२

श्रीयुत स्वामी अभेदानन्द जी महाराज की मृत्यु से जो १६–७–६१ को मौरीशस मे हुई, भूत पूर्व प्रधानो मे १ स्थान रिक्त हुआ।

२५–६–६१ के सभा के वार्षिक अधिवेशन में १९६१–६२ के लिए निम्न प्रकार पदाधिकारी और अन्तरग सदस्य निर्वाचित हुए —

अधिकारी

श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज	प्रधान
,, सेठ प्रताप सिह जी शूर जी वल्लभ दास (कच्छ केसिल अपेरा हाउस के सामने बम्बई)	उपप्रधान
, डा० डी० राम० जी (व्रज किशोर पथ पटना)	,,
,, मिहिरचन्द्र जी धीमान (११५ तुलसी निवास सलकिया हावड़ा)	,,
,, बा० कालीचरण जी आर्य (लालकुर्ती मेरठ)	मन्त्री
,, प० क्षितीशकुमार जी, २०५ गली किनारी वाली, नया बास, दिल्ली	उपमन्त्री
श्रीमती शकुन्तला जी गोयल खेरनगर बाजार, मेरठ शहर	,,
श्रीयुत प्रो० रामसिह जी एम० ए० २३ बीडनपुरा, करौल बाग, दिल्ली	कोषाध्यक्ष
,, रघुवीरसिंह जी शास्त्री, सम्राट प्रेस, पहाड़ी धीरज, दिल्ली	पुस्तकाध्यक्ष

अन्तरंग सदस्य

(१) श्री वटकृष्ण वर्म्मन (बगाल) कलकत्ता
(२) ,, डी० डी० पुरी (पूर्वीय अफ्रीका) दिल्ली
(३) ,, प्रतापचन्द पडित (गुजरात) बड़ौदा
(४) ,, देशराज जी चौधरी (पजाब) दिल्ली
(५) ,, रामनाथ भल्ला (पजाब) दिल्ली
(६) , शिवचरणलाल गुप्त (राजस्थान) अजमेर
(७) ,, कान्तिलाल मोहनलाल शर्मा जे० पी० (बम्बई) बम्बई
(८) ,, डा० महावीर सिह जी (मध्य भारत) लश्कर
(९) , महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती (आर्य प्रादेशिक सभा)
(१०) ,, प्रेमचन्द्र शर्मा (उत्तर प्रदेश) हाथरस
(११) , बा० जगनन्दनलाल ऐडवोकेट (उत्तरप्रदेश) इलाहाबाद
(१२) ,, प० नरेन्द्र जी (मध्य दक्षिण) हैदराबाद
(१३) ,, घनश्याम सिंह जी गुप्त (मध्य प्रदेश) दुर्ग
(१४) ,, प्रकाशवीर जी शास्त्री (आजीवन सदस्य) दिल्ली
(१५) ,, प० वासुदेव जी शर्मा (बिहार) पटना
(१६) ,, विष्णुदेव मेघराज जी (मौरीशस) साधु आश्रम, अलीगढ़

२५–६–६२ की साधारण सभा के निश्चयानुसार श्री नारायणदत्त जी कपूर आडीटर नियुक्त हुए।

स्वर्ण जयन्ती तथा नवम आर्य महासम्मेलन

अन्तरंग सभा दिनाक २१-१-६१ के निश्चयानुसार १६ से २१ मई १९६१ तक दिल्ली में रामलीला मैदान में सभा का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव और नवम आर्य महासम्मेलन बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में सारे देश के आर्य बन्धु पधारे थे। विदेशों के प्रतिनिधि भी उपस्थित थे। सम्मेलन के अध्यक्ष आर्य जगत् के ख्याति प्राप्त महान् नेता कर्मठ आर्य सन्यासी पूज्य श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज थे। स्वागताध्यक्ष श्री पूज्य आनन्द स्वामी जी महाराज थे।

महोत्सव तथा सम्मेलन की कार्य्यवाही सक्षिप्त रूप में इस प्रकार है —

१६ मई

१६ मई को प्रात एक वृहद् यज्ञ हुआ। यज्ञ का यह कार्यक्रम २१ मई तक श्रीयुत आचार्य्य विश्वश्रवा जी की अध्यक्षता में चला जिसमें सहस्रो नर नारियो ने श्रद्धा पूर्वक भाग लेकर लाभ उठाया।

१६ मई को प्रात बृहद् यज्ञ के उपरान्त पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी सरस्वती ने ध्वजारोहण किया।

इसके उपरान्त श्रीयुत जग जीवन राम जी केन्द्रीय रेल मन्त्री ने आर्य प्रदर्शिनी का उद्घाटन किया। यह प्रदर्शिनी दर्शकों का विशेष आकर्षण स्थान रहा। इसमें महर्षि दयानन्द जी महाराज तथा आर्य नेताओं के विविध आकर्षक एव अलभ्य चित्रों के साथ २ आर्य समाज के कार्य एव उसकी प्रगतियों का दिग्दर्शन कराने वाले तथा अन्यान्य अनेक उत्तम चित्र प्रदर्शित किए गए थे। प्रदर्शिनी के संयोजक श्री दयाराम जी शास्त्री थे।

दोपहर को श्री आचार्य प० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति के सभापतित्व में आर्य विद्वत्सम्मेलन की प्रथम बैठक हुई। इसका उद्घाटन श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालकार ने किया।

सायकाल को विद्वत्सम्मेलन की दूसरी बैठक श्री प० द्विजेन्द्रनाथ जी शास्त्री के सभापतित्व में हुई।

रात्रि को गोकृष्यादि रक्षा सम्मेलन श्री आचार्य भगवान देव जी के सभापतित्व में हुआ।

१७ मई

१७ मई को प्रात यज्ञ के पश्चात् महात्मा आनन्द भिक्षु जी का प्रवचन हुआ। ८ से ११ बजे तक श्री नरदेव जी स्नातक एम० पी० के सभापतित्व में आर्य कुमार सम्मेलन हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन श्री प० आनन्द प्रिय जी बड़ौदा ने किया। पुन ८ से १० बजे तक विद्वत्सम्मेलन की तीसरी बैठक श्री डा० हरिदत्त जी शास्त्री एकादश तीर्थ की अध्यक्षता में हुई। इसका उद्घाटन श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री ने किया। इसके पश्चात् विद्वत्सम्मेलन की चतुर्थ बैठक श्री प० ईश्वरचन्द्र जी दर्शनाचार्य के सभापतित्व में हुई। विद्वत्सम्मेलन के आयोजन का कार्य श्रीयुत प० उदयवीर जी शास्त्री के सुपुर्द था।

प्रमुख आर्यों का सम्मेलन

१७ मई के अपराह्न में प्रमुख आर्यों का सम्मेलन श्री घनश्यामसिह जी गुप्त के सभापतित्व मे हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन सार्वदेशिक सभा के तत्कालीन प्रधान श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट ने किया।

इस सम्मेलन के सयोजक सार्वदेशिक सभा के तत्कालीन मन्त्री श्री रघुवीर सिह जी शास्त्री थे। १८ मई के प्रात इस सम्मेलन की दूसरी बैठक हुई। सम्मेलन के विचारार्थ सार्वदेशिक सभा की अन्तरग द्वारा सपुष्ट निम्नलिखित १३ विषय थे जिनको सम्मति के लिए पूर्व से ही समाजो, प्रान्तीय सभाओं और आर्य जनता मे प्रचारित कर दिया गया था :—

विचारणीय विषय

१—आर्यसमाज में नवयुवकों को किस प्रकार आकर्षित किया जाय ?

२—आर्य समाज के लिए जन सम्पर्क बढ़ाने केलिए कौन कौन से उपाय आवश्यक हैं ?

३—प्रचलित सहशिक्षा की कुप्रथा का किस प्रकार निराकरण किया जा सकता है ?

४—विद्यार्थियों मे अनुशासन की भावना लाने के लिए कौन से उपाय हितकर हैं ?

५—आर्य समाज मे प्रवेश की विधि में किस प्रकार परिवतन हो जिससे उसका प्रजातन्त्रात्मक रूप सुरक्षित रहते हुए महर्षि के इस आदेश की पूर्ति हो सके कि १०० मूर्खों की नही माननी चाहिए १० विद्वानो की माननी चाहिये। मतदान के अधिकार पर क्या शर्तें होनी चाहिये ताकि सम्मति का अधिकार केवल सदाचारी को ही मिले। क्या सदाचार की परिभाषा (जो आर्य समाज के उपनियम सं० ४ क मे दी हुई है) मे कुछ परिवर्तन या परिवर्द्धन करने की आवश्यकता है ?

६—आर्य समाज के प्रचार की विधि मे कौन-कौन से परिवर्तन आवश्यक हैं ?

७—आर्य समाज के कार्य को अधिक व्यापक तथा उन्नत बनाने के लिये कौन कौन से उपाय आवश्यक हैं ?

८—बौद्ध धर्म के भारत में बढने हुए प्रवेश और प्रभाव को कैसे रोका जा सकता है ?

९—ईसाई प्रचार निरोध के लिए कौन कौन से उपाय उपयोगी सिद्ध होंगे ?

१०-प्रचलित प्रकृतिवाद व नास्तिकवाद का किस प्रकार निराकरण किया जाय ?

११ आर्यसमाज के आन्तरिक सगठन में अनुशासन की भावना लाने के लिये क्या उपाय अपनाये जाये ?

१२-आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं, स्कूलों, कालेजों तथा गुरुकुलों को एक सूत्र में लाने के लिये क्या उपाय किये जायें ?

१३-आर्य समाज के स्कूलों और कालेजों को वैदिक धर्म के प्रचार का साधन बनाने के लिये क्या उपाय किये जाये ?

सम्मेलन की २ बैठकों में पर्याप्त विचार व विवाद के उपरान्त निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ —

'इस सम्मेलन ने १३ अत्यन्त आवश्यक विषयों पर गम्भीर विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि इन विचारों की पृष्ठ भूमि मे इन प्रश्नों का किस प्रकार और किस सीमा तक हल किया जा सकता है और वह कहा तक क्रियान्वित किया जा सकता है इसको नियमित रूप से करने के लिये एक छोटी सी समिति बनाई जाय जो सारी बातो को समस्त पहलुओ से देखकर अपना प्रतिवेदन सभा को प्रस्तुत करे।"

यह प्रस्ताव श्रीयुत नवनीतलाल जी ऐडवोकेट ने प्रस्तुत किया जिसका समर्थन श्रीयुत मिहिरचन्द जी धीमान श्री प० भगवान स्वरूप जी न्याय-भूषण श्री कविराज हरनामदास जी, आचार्य प्रियव्रत जी, श्रीयुत उग्रसेन जी लेखी और श्री जगीलाल जी (कलकत्ता) ने किया।

इस समिति की नियुक्ति का अधिकार श्रीयुत घनश्याम सिंह जी गुप्त को दिया गया तथा निश्चय हुआ कि ३ मास के भीतर-भीतर यह समिति अपना प्रतिवेदन सार्वदेशिक सभा को भेज दे।

इस निश्चय के अनुसार श्री गुप्त जी ने निम्नलिखित समिति नियुक्त कर दी —

[१] श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री
[२] ,, प्रो० शेरसिंह जी एम०ए०
[३] ,, प्रि सूर्यभानु जी
[४] ,, ला० बजलाल जी

[५], प० प्रकाशवीर जी शास्त्री
[६], प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित

सभा द्वारा निर्मित विधान उपसमिति इस सम्मेलन में दिए गए सुझावों को क्रियान्वित करने के उपायों पर विचार कर रही है जिसकी रिपोर्ट अन्तरंग सभा के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत की जायगी।

१७ मई की रात्रि को खुले पडाल में व्याख्यान हुए। पहला व्याख्यान श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार गुरुकुल कांगडी का हुआ। विषय था वैदिक समाज व्यवस्था'। दूसरा व्याख्यान श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री का हुआ विषय—'वैदिक कर्म का वैज्ञानिक स्वरूप'। तीसरा व्याख्यान श्री प० बुद्धदेव जी विद्यालंकार का 'समस्त ज्ञान का मूल स्रोत वेद' पर हुआ।

१८ मई

प्रातः यज्ञ के पश्चात् श्री स्वामी सत्यमुनि जी महाराज का प्रवचन हुआ।

८ से ११ बजे तक पण्डाल मे श्री डा० गोवर्धनलाल दत्त उपकुलपति विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के सभापतित्व मे शिक्षा सम्मेलन' हुआ। इस महत्वपूर्ण सम्मेलन का उद्घाटन केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री श्री कालूलाल जी श्रीमाली के द्वारा हुआ। अपराह्न में श्रीमती सुशीला पंडित बडोदा की अध्यक्षता में 'आर्य महिला सम्मेलन' हुआ जिसमें श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने भाषण देते हुए महर्षि दयानन्द और आर्य समाज की प्रशंसा की। रात्रि में पण्डाल में श्री आचार्य सत्यानन्द जी, श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी के व्याख्यान हुए। शिक्षा सम्मेलन के संयोजक श्री प० धर्मवीर जी वेदालंकार थे।

१९ मई

प्रातः यज्ञ के पश्चात् श्रीयुत स्वामी ब्रह्मानन्द जी एटा वालों का प्रवचन हुआ। ८ से १२ तक विषय निर्धारिणी समिति की बैठक हुई। सायंकाल ५ से रात के ९॥ बजे तक शोभा यात्रा (जलूस) निकली।

शोभा यात्रा

लगभग २ मील लम्बी सम्मेलन के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी की शोभा यात्रा निकाली गई जो सम्मेलन स्थल से प्रारम्भ होकर लगभग ५ मील लम्बे मार्ग से होती हुई पुनः सम्मेलन स्थल पर पहुंची। इसमें सबसे आगे ओ३म् का ध्वज लिए नवयुवक और बाद में समस्त भारत के आर्य समाजो के दल चल रहे थे। राजस्थान के आर्य समाज के महिला एवं पुरुष दल के सदस्य केसरिया बाना पहने हुए थे। इसके पीछे प्रधान का सुसज्जित रथ था जिस पर उनके अतिरिक्त अनेक आर्य नेता विराजमान थे। कुछ नेता टुकड़ियों में चल रहे थे। 'हिन्दी भाषा अमर रहे', 'स्वामी दयानन्द की जय', 'भारत माता की जय' आदि नारे लगाये जा रहे थे। चारो ओर केसरिया ध्वज दिखाई दे रहे थे। सारा मार्ग आर्य नेताओ, शहीदो और आर्य समाज के महापुरुषो के नाम पर बने द्वारों तथा तोरणों से सजाया गया था। अजमेरी द्वार के पास जलूस को काफी देर के लिए रुक जाना पडा। दिल्ली के इतिहास मे यह जलूस अभूतपूर्व था जिसकी विशालता और सुव्यवस्था की प्रायः सभी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए पाये गये। इस शोभा यात्रा की व्यवस्था श्री चिरंजीत लाल जी साहनी के अधीन थी।

२० मई की रात्रि को नवम आर्य महासम्मेलन की प्रथम बैठक हुई। समस्त प्रान्तों के आर्यनेताओं ने अपने २ प्रान्त की ओर से सम्मेलन के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी का अभिनन्दन किया। सन्देश पढ़ेगये। तदुपरान्त स्वागताध्यक्ष तथा प्रधान महोदय ने अपने २ भाषण पढ़े।

२१ के प्रातःकाल और रात्रि को अधिवेशन होकर सम्मेलन समाप्त हुआ। सम्मेलन में पारित प्रस्ताव नीचे दिये गये हैं।

आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव

देश विदेश के सम्पूर्ण आर्य जगत की सर्वोच्च संस्था सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के अवसर पर सभा के तत्वावधान में आयोजित नवम आर्य महासम्मेलन आर्य समाज के विचार, नीति एवं कार्यक्रम कुछ आवश्यक विषयों के सम्बन्ध में घोषित करना उचित समझता है —

विश्व शान्ति

संसार के विभिन्न राष्ट्रों में आतंक और अशांति का जो वातावरण देखा जा रहा है, और मानव समाज के संहार करने वाले विविध अस्त्र-शस्त्रों का जो निर्माण और संचय किया जा रहा है, उसका मूल कारण इस सम्मेलन की राय में यह है कि मानव समाज का जो संघटन विविध देशों में है, उसका आधार प्रायश अधिभौतिक (मैटीरियलि-स्टिक) है। मनुष्य समाज का दृष्टिकोण केवल ऐहिक सुखों की प्राप्ति की ओर ही केन्द्रित रहता है और प्राय सभी देशों के शासनाधिकारी अपने अपने देश के आर्थिक विकास एवं प्रसार के निमित्त दूसरे देशों के हितों की उपेक्षा और अवहेलना करने वाली राष्ट्रिय स्पर्धा की भावनाओं से प्रेरित होते हुए अपनी नीति को निर्धारित करते है, जिसका अनिवार्य परिणाम विश्वकलह और विश्व अशान्ति का बीजारोपण है।

मानव समाज ने अपने को ऋग्वेद के शब्दों में जिन 'कृत्रिमाणि भीक्षा' अर्थात् स्वोत्पादितभय (सेल्फ क्रियेटिड फीयर्स) का शिकार बना लिया है उनसे बचने और विश्व शान्ति की स्थापना के लिए इस सम्मेलन की सम्मति में दो उपाय हैं —

एक तो ऋग्वेद में प्रतिपादित विश्व मानुषता वर्ल्ड सिटीजनशिप)के आधार पर सार्वभौम चक्र-वर्ती राज्य वर्ल्ड गवर्नमैन्ट)की स्थापना और दूसरा वह मार्ग है जिसे ऋषि मुनियो ने अपनी दिव्य दृष्टि एवं वैदिक ज्ञान से ढूंढ निकाला था, अर्थात् मानव समाज का संघटन अधिभौतिक आधार पर न रहकर उसकी आधार शिला आध्यात्मिक हो, जो मनुष्य के केवल स्थूल शरीर और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति पर ही दृष्टि न रखता हो, अपितु मनुष्य के आत्मा और उसके विकास पर भी दृष्टि रखता हो।

भारत शासन की इस इच्छा तथा यत्न की कि विश्व में शान्ति रहे, यह सम्मेलन सराहना करता है, यद्यपि उनकी कई काय प्रणालियों का समर्थन नहीं किया जा सकता।

पारित २०-५-६१

प्रस्तावक—प्रि० महेन्द्र प्रताप शास्त्री
अनुमोदक—सेठ प्रताप सिंह जी शूरजी
सेठ कृष्ण लाल पोद्दार

भारतीय सीमाओं पर अतिक्रमण

भारत की निर्विवाद सीमाओ पर जो अतिक्रमण हुए हैं और हो रहे हैं उन के प्रतिकार के लिये अभी तक कोई ऐसा पग नही उठाया गया है जो सफल दृष्टि गोचर हो। करोड़ों भारतीय जनता की भावना है कि इसके प्रतिकार के लिये भारत शासन कोई सुदृढ पग उठाये। कहने की आवश्यकता नहीं कि भारत की सीमा को अक्षुण्ण रखने के लिये उस प्रकार का पग जब कभी भी और जहा भी भारत शासन उठावे तो प्रत्येक आर्य नर नारी आबाल वृद्ध हर प्रकार के बलिदान के लिये सन्नद्ध रहेगा।

पारित २०-५-६१

प्रस्तावक—श्री मेहर चन्द धीमान
अनुमोदक—स्वामी सत्यमुनि जी

अखण्ड शक्ति सम्पन्न केन्द्रीय शासन

भारत की परतन्त्रता को समाप्त करने और स्वराज्य लाने के लिये वातावरण पैदा करने में और उन कमजोरियों और कुरीतियों को जिनके कारण परतन्त्रता आयी, दूर करने में ऋषि दयानन्द

और आर्य समाज का बड़ा हाथ रहा और आर्य पुरुषों ने उसके लिये जो बलिदान दिये, वह भी बहुत सराहनीय थे। अत ऐसे राज्य शासन की पद्धति होना, जैसे कि प्रान्तों को राज्यों का रूप देना, जिससे जनता में विच्छेदक मनोवृति (फिसी फरेस टेंडेसी) को प्रोत्साहन मिले और देश एव राज्य के मध्य विभक्त निष्ठा(डिवाइडिड लायलटी) हो, यह देखकर इस सम्मेलन को खेद होना स्वाभाविक है।

इस सम्मेलन की निश्चित सम्मति है कि भारत के भावी विभाजन की सम्भावना को भाषावाद और प्रदेशवाद तथा प्रदेशो के सीमा सम्बन्धी आदि अनेक अत्यन्त कटु विवादो को सदा के लिये दूर करने का एक ही उपाय है और वह यह है कि भारत की राज्य पद्धति अखण्ड शक्ति सम्पन्न केन्द्रीय शासन ही हो।

प्रस्तावक—श्री घनश्याम सिह गुप्त
अनुमोदक - श्री नरदेव स्नातक

जातिवाद और सम्प्रदायवाद

आर्य समाज जन्ममूलक जातिवाद और सम्प्रदायवाद का सदा से विरोधी रहा है। वास्तव में यथोचित और क्रियात्मक रूप से इन पर किसी ने कुठार चलाया तो वह आर्य समाज है। परन्तु खेद है कि अब इन कुरीतियो को कुछ नये ढग से प्रोत्साहन मिलने लगा है। प्राय देखा जाता है कि राजनैतिक दलों तथा अन्य सगठनो द्वारा भी इनको किसी न किसी प्रकार से बढ़ावा मिलता है ताकि चुनाव में विजय प्राप्त की जा सके। यह सम्मेलन सभी राजनैतिक दलो तथा अन्य सगठनो मे आग्रह करता है कि वे राष्ट्रहित में ऐसी सकीर्ण भावनाओ से दूर रहें।

प्रस्तावक—प० वासुदेव शर्मा
अनुमोदक—बटकृष्ण वर्म्मन

शिक्षा सम्बन्धी

शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज की धारणा है कि—

१—उच्च से उच्च शिक्षा पाने का सभी नर-नारी को अपनी योग्यता, क्षमता और विशेषताओ की परिधि के भीतर, समान अधिकार और अवसर मिलना चाहिये।

२—छात्र छात्राओ का सह शिक्षण अवाछनीय है।

३—यह सम्मेलन आर्यशिक्षणालयो के सचालकों से निवेदन करता है कि वह अपने शिक्षाक्रम में शिल्प तथा गोकृष्यादि के शिक्षण की विशेष व्यवस्था करे।

४—भारत के भावी नागरिको का नैतिक स्तर गिरने न पावे इसके लिए यह आवश्यक है कि बालक और बालिकाओ को उनके शिक्षाकाल मे धार्मिक शिक्षा दी जाए। शासकीय और अर्ध शासकीय विद्यालयो में धार्मिक शिक्षा असाम्प्रदायिक हो यह भारत की वर्तमान शासन पद्धति की माग है।

इस सम्मेलन की राय मे असाम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा वेदो के आधार पर ही हो सकती है। वेदो के निर्माणकाल के बारे मे आर्यसमाज और विशाल हिन्दू समाज की राय को छोड भी दिया जाय तो इसमे ससार के सभी विद्वान् सहमत है कि मनुष्य समाज का सबसे प्रथम ग्रन्थ ऋग्वेद है जिसने मनुष्य को प्रथम मानव बनाया और जबकि मनुष्य समाज सम्प्रदायो मे विभक्त नही हुआ था।

देश मे आर्य समाज की जो अनेक शिक्षण सस्थाए हैं इस सम्मेलन की यह भी इच्छा है कि उनका आपस में सम्बन्ध स्थापित किया जावे। इसके लिए यह आवश्यक प्रतीत होता है, कि एक विशिष्ट विश्वविद्यालय की स्थापना हो। इस निमित्त सार्वदेशिक सभा की विद्यार्य सभा ने जो एक प्रारूप बनाया है उसकी चर्चा आर्य जगत में की जाये और आर्य विद्वानो द्वारा उसके अध्ययन के पश्चात उचित और आवश्यक संशोधन के साथ इसे अधिनियमित

करने का यत्न किया जाय।

प्रस्तावक—प्रि० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित

अनुमोदक—प्रिंसिपल ईश्वर दास जी

समाज सुधार

आर्य समाज ने समाज सुधार के क्षेत्र में जो कार्य किए हैं वे जगत् विख्यात हैं। उनकी विस्तार से तो चर्चा करना आवश्यक नहीं। इतना कह देना पर्याप्त है कि जहा आर्य समाज ने विद्याध्ययन, मन्दिर प्रवेश तथा वैदिक धर्म का अनुयायी होने के लिए मनुष्यमात्र के समान अधिकार का प्रतिपादन किया है, वहा उसने निरर्थक छुआछूत, स्त्री जाति को पर्दे के भीतर बन्द रखना दहेज प्रथा आदि अनेक सामाजिक कुरीतियो के विरुद्ध भी सफल सघर्ष किया है।

परन्तु इस सम्मेलन को इस बात का खेद है कि जहा पुरानी कुरीतियां प्राय दम तोड रही हैं वहा नई कुरीतिया आ रही हैं और समाज को दूषित कर रही हैं। उदाहरणार्थ 'स्त्रियों के पहनावे में अमर्यादित बेपर्दगी का आना, विवाहादि सामाजिक समारोहो में होनेवाली फिजूल खर्ची, अश्लील चल चित्र तथा विज्ञापन सहशिक्षा, सास्कृतिक कार्यक्रमों के नाम पर भद्दे ढग के नृत्य आदि इस प्रकार की नई कुरीतिया हैं जिनका हटाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। आर्य समाज को और विशाल हिन्दू समाज को इस ओर ध्यान देना होगा।

प्रस्तावक—श्रीमती अक्षय कुमारी

अनुमोदक—श्रीमती किरणमयी देवी

भाषा सम्बन्धी विचार

भारत के सविधान में भाषा सम्बन्धी जो प्रावधान (अनुच्छेद ३४३ से ३५२ तक) है उनकी यह सम्मेलन सराहना करता है विशेषकर जहा हिन्दी को केन्द्र की राज्य भाषा घोषित किया गया है।

इस सम्मेलन की राय में हिन्दी और भारत की अन्य प्रादेशिक भाषाओं के बीच किसी भी प्रकार की प्रतिद्वन्दिता किंवा संघर्ष के लिए कोई उचित कारण नही है। वास्तव में इनका हिन्दी के साथ अनन्य सम्बन्ध है, एक के विकास में दूसरे का विकास निहित है। भारत की प्रादेशिक भाषाओ का विकास इष्ट और वाञ्छनीय है।

हिन्दी की प्रतिद्वन्दिता यदि किसी से है तो वह अग्रेजी भाषा से है जो कि अग्रेजों के शासनकाल में राज्यसत्ता के बल पर लादी गई थी और जिसने भारत की सभी भाषाओ को कई आवश्यक क्षेत्रों में कुठित कर दिया है। उस में भी अग्रेजी भाषा के बहिष्कार की भावना कदापि नही है। देश के प्रबन्ध, शासन, विधान, शिक्षा आदि क्षेत्रों में अग्रेजी के स्थान पर हिन्दी और यथास्थान प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग किया जावे। विज्ञान आदि विषयो के (पोस्ट ग्रेजुएट)स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए अथवा वाह्य जगत के उसी प्रकार के संसर्ग के लिए अग्रेजी भाषा के अध्ययन या प्रयोग पर किसी प्रकार का विरोध नहीं हो सकता है। शिक्षा का माध्यम अग्रेजी भाषा बनी रहे यह असह्य है, और विद्या के प्रसार में बाधक है। बालको की प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा उनकी मातृभाषा में हो, और मातृभाषा का निर्धारण वे स्वय अथवा उनके सरक्षक करे यही उचित और स्वाभाविक है। यह अनुभव जन्य तथ्य है कि किसी भी भाषा को बलात् ठूसना उस भाषा के प्रति घृणा उत्पन्न करना है।

लिपि और वर्णमाला के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक प्रतीत होता है। भारत के प्राय सभी प्रादेशिक भाषाओ के अक्षरो की वर्णमाला एक ही समान है और यह ब्राह्मी वर्णमाला अत्यन्त युक्ति युक्त और वैज्ञानिक है। इस वर्णमाला का संसार की सर्वाधिक जनसख्या की वर्णमाला होने का सौभाग्य प्राप्त है। यह बात लिपि के बारे में नहीं कही जा सकती। भारत में प्रादेशिक भाषा भेद के साथ लिपि भेद भी है। हिन्दी और मराठी की

लिपि में जो पहिले भेद था वह अब नही रहा, दोनो की लिपि एक ही हो गई है। देवनागरी, बगाली, गुजराती, गुरमुखी, उडिया आदि ये लिपिया प्राय एक समान है और अनुकूल वातावरण में इनका समन्वय होना कठिन नही हैं।

राष्ट्रपति जी द्वारा नियोजित खेर कमेटी के उस प्रतिवेदन से यह सम्मेलन सहमत है कि भारत की सभी भाषाओ के लिए देवनागरी लिपि एच्छिक कर दी जाये। साथ ही सरकार से यह भी अनुरोध करता है कि रोमन अको के स्थान में देवनागरी अको का ही प्रचलन स्वीकार किया जाय।

प्रस्तावक —श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री
अनुमोदक प्रो० शेर सिह जी

वैदिक धर्म मनुष्यमात्र के लिए

आर्य समाज सदा इस बात का पोषक रहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक भावना से प्रेरित होकर धर्म मत परिवर्तन की स्वतत्रता चाहिये और इसी सिद्धान्त के अनुसार उसने पवित्र वैदिक धर्म का द्वार मनुष्य मात्र के लिये खोला यद्यपि इसके लिये उसे अपने ही लोगो के साथ भी सघर्ष करना पडा। हर्ष का विषय है कि इसे अब वैदिक धर्मावलम्बी भाई (अन्य हिन्दू भाई भी मानने लगे हैं। आशा है इस कार्य के लिए वेद के मानने वाले सभी भाई अधिक ध्यान देगे और अधिक उत्साह से काम करेगे।

प्रस्तावक —मिहर चन्द धीमान्
अनुमोदक —आचार्य प्रियव्रत

विदेशी ईसाई मिशनरियों का अनुचित व्यवहार

मध्य प्रदेश शासन द्वारा नियुक्त नियोगी समिति और मध्य भारत द्वारा नियुक्त रेगे समिति के प्रतिवेदनो से यह स्पष्ट सिद्ध हो गया है कि ईसाई मिशनरियो द्वारा विशेष कर विदेशी मिशनरियो द्वारा पहाड़ी और जगली इलाको मे विदेश से आये हुए करोडो रुपये के व्यय से जो धर्म परिवर्तन का कार्य किया जा रहा है इसके पीछे केवल सच्ची धार्मिक भावना नही है अपितु इनकी ये गति विधिया राजनैतिक हेतु से ईसाइयो की सख्या-वृद्धि के लिए हैं और इनमें ऐसे तरीको का अवलम्बन किया गया है जिन्हें किसी भी अश में राष्ट्रीय दृष्टि से उचित नही कहा जा सकता। इससे भारत की सुरक्षा पर जो भयावह प्रभाव पड रहा है उसकी भी चेतावनी उन प्रतिवेदनो में विद्यमान है।

आर्य समाज को तो इस प्रकार अनुचित कार्यवाहियो का पहिले से ज्ञान था और वह साधारण जनता को और यदाकदा शासको को भी सचेत करता रहा।

जो सज्जन यह कहते है कि ससार की प्रगति मे वह समय आ गया है जब कि किसी राष्ट्र की सुरक्षा पर वहा के निवासियो की धार्मिक भावना का कोई प्रभाव नही पडता उनसे यह सम्मेलन सहमत नही है। अब भी ससार के अनेक राज्यो का निर्माण और स्थिति धार्मिक भावना के आधार पर है।

यह सम्मेलन आशा करता है कि इन सब बातो की ओर भारत शासन और भारतीय जनता समुचित ध्यान देगे। यह सम्मेलन जहा इस दिशा में कार्य करने वाले सब सगठनो से अनुरोध करता है कि वे अपना सारा पुरुषार्थ सयुक्त करे वहा विशाल हिन्दू समाज से राष्ट्र रक्षा के इस पवित्र कार्य में पूरी शक्ति से जुट जाने की अपील करता है।

सरकार को भी ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि विदेशी ईसाई मिशनरियो को विदेश से मिलने वाला धन सरकार द्वारा प्राप्त हो और उसी के नियन्त्रण में खर्च हो।

प्रस्तावक —घनश्यामसिह गुप्त
अनुमोदक —सेठ जुगलकिशोर बिडला

पंजाब की भाषा समस्या

जो सज्जन यह कहते हैं कि सारा पजाब एक भाषी राज्य है और सारे पजाब की एक भाषा है अर्थात् पजाबी हैं, उनकी इस बात को यह सम्मेलन सर्वथा तथ्य के प्रतिकूल समझता है।

हरयाणा और पहाडी क्षेत्र की भाषा पूर्णरूप से हिन्दी है और जालन्धर आदि की हिन्दी और पजाबी दोनो ही भाषायें हैं। इस प्रकार लगभग ७० प्रतिशत की भाषा होने के कारण हिन्दी ही पजाब की मुख्य भाषा है।

आर्यसमाज ने अपना सत्याग्रह शासन के उच्चाधिकारियो द्वारा घोषित सद्भावना के उत्तर में पूर्ण सद्भावना का प्रदर्शन करके स्थगित किया था। हमारे पक्ष के औचित्य को मान कर ही शासन ने दो शिक्षा शास्त्रियो की सद्भावना समिति नियुक्त की जिसके प्रतिवेदन पर विचार करने तथा भाषा समस्या के समाधान के लिए गाडगिल समिति की कुछ बैठकें भी हुई परन्तु खेद है कि इस समिति का कार्य भी प्राय समाप्त ही हुआ दीखता है।

पजाबी क्षेत्र में हिन्दी को उसका उचित स्थान नही दिया जा रहा है। सरकार ने पजाबी भाषा को गुरुमुखी लिपि के साथ बाध दिया है इसलिए यह सम्मेलन जिला स्तर तक शासन की भाषा के सम्बन्ध में पजाब सरकार द्वारा पास किये गए विधेयक का विरोध करता है। जहा तक कि उसका सम्बन्ध पजाबी क्षेत्र से है यह सम्मेलन उसी सदर्भ में हाई कोर्ट के आदेश जिसके अनुसार पजाबी क्षेत्र में सब काम पजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि में होगा उसका भी प्रबल विरोध करता है। अत पजाबी के साथ शासन का काम पजाबी क्षेत्र में हिन्दी में भी होना चाहिये। पजाबी भाषा के प्रयोग के लिए शिक्षा तथा शासन में गुरुमुखी और देवनागरी प्रत्येक स्तर पर ऐच्छिक विषय कर दी जाय।

हिन्दी क्षेत्र की क्षेत्रीय समिति ने दिनाक ४ मई १९६० को सर्वसम्मति से यह निश्चय किया कि उस क्षेत्र में पजाबी के पठन पाठन की अनिवार्यता हटा दी जाये। इस पर भी कोई आचरण नही किया गया यद्यपि इसके लिए न केवल पजाब शासन अपितु राज्यपाल का भी नियम के अनुसार विशेष उत्तरदायित्व है। यह क्षेत्रीय योजना की पक्षपात पूर्ण अवहेलना है जो शासन की बार बार घोषित नीति के विरुद्ध है।

तीन वर्ष से अधिक की अवधि में भी यह कार्य पूर्णरूप से सफल नही हुआ इसका मुख्य कारण यह है कि यहप्रश्न सास्कृतिक और शैक्षणिक स्तर पर व्यवहृत नही किया जा रहा है बल्कि राजनैतिक स्तर पर निबटाया जा रहा है। आर्य समाज तो विशुद्ध सास्कृतिक और धार्मिक सस्था होने के कारण अपना कार्यक्रम उसी परिधि के भीतर ही बना सकता है और वह स्थिति सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की भी है। सरकार के रवैये से यह स्पष्ट है कि पजाब की भाषा समस्या का समाधान अब राजनैतिक स्तर पर ही हो सकेगा।

राजनैतिक क्षेत्र में तो शक्ति का स्रोत वोट है और वही शक्ति हिन्दी प्रेमियो को काम में लानी होगी। अत प्रत्येक हिन्दी प्रेमी यह ध्यान रखे कि आगामी चुनाव में यह अपना वोट उसी व्यक्ति को दे जिससे यह आशा हो कि वह पजाब मे भाषा स्वातन्त्र्य की प्राप्ति तथा हिन्दी को उसका उचित स्थान दिलाने के लिए प्रयत्नशील होगा।

प्रस्तावक —प्रो० शेरसिंह
अनुमोदक ज्ञानी पिंडी दास
लाला रामगोपाल

साहित्य प्रकाशन

महर्षि दयानन्द के स्वीकार पत्र में अंकित आदेश के अनुसार साहित्य प्रकाशित करना प्रचार का एक प्रमुख साधन है। नवम आर्य महासम्मेलन की

सम्मति में यह अत्यन्त आवश्यक है कि वैदिक धर्म और आर्य समाज के प्रचार के लिये देश और विदेश की सब भाषाओं में सस्ता और उपयोगी साहित्य प्रकाशित कराने की योजना बनाई जाय और साहित्य प्रकाशन द्वारा महर्षि के सन्देश को सारे भारत में और अन्य देशों में भी पहुचाने का यत्न किया जाये। यह सम्मेलन यह आवश्यक समझता है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा एक पृथक् साहित्य प्रकाशन विभाग की स्थापना करे और उसके लिये एक लाख रुपया एकत्रित करने का यत्न किया जाये और कार्य आरम्भ किया जाये।

(क) आर्य समाज के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में जो खण्डनात्मक साहित्य प्रकाशित हुआ है उनको एकत्र किया जाये और उन पुस्तकों के उत्तर विद्वानों द्वारा लिखा कर प्रकाशित कराये जायें।

(ख) ऐसी पुस्तकें जिन से वेदों की मान्यता और प्राचीन सांस्कृतिक और धार्मिक भावनाओं पर आघात पहुंचता है जैसे वेद अपौरुषेय नहीं है और केवल कुछ हजार वर्षों के बने हुए हैं उनका भी उत्तर लिखा कर प्रकाशित कराया जाये।

(च) प्रचलित पश्चिमी विज्ञान और तत्वज्ञान में जो आध्यात्मिक विचार-धारा पर आघात किया गया है और जिससे भौतिकवाद और नास्तिकवाद की वृद्धि होती है उनके निराकरण केलिये भी उपयोगी और अच्छा साहित्य प्रकाशित कराया जाये।

प्रस्तावक—यश, उप शिक्षा मन्त्री,
पंजाब राज्य

अनुमोदक —आचार्य विश्वश्रवा
लाला रामगोपाल

चरित्र-निर्माण

प्रचलित भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता को दृष्टि में रखते हुए यह सम्मेलन आर्यों और आर्य समाजों से अनुरोध करता है कि वह चरित्र निर्माण के सम्बन्ध में क्रियात्मक कार्यक्रम बनाकर कार्य प्रारम्भ करे। चरित्र निर्माण सम्बन्धी प्रतिज्ञा पत्रों पर हस्ताक्षर करें और करायें और जनता की मनोवृत्ति को सुधारने का प्रयत्न करें। उससे स्वराज्य प्राप्ति के साथ साथ हमारा जनता के साथ अधिक घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित हो सकेगा और सुराज्य की ओर सम्भावना भी हो सकेगी।

जिस प्रकार आर्य समाज ज्ञान और मान की रक्षा के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है उसी प्रकार नैतिक उत्थान के लिए प्रयत्नशील होना आवश्यक है। उपरिलिखित प्रस्ताव में निर्दिष्ट विचारधारा को क्रियात्मक रूप देने के लिए यह सम्मेलन भारतीय सरकार के रेडियो विभाग, सिनेमा कम्पनियों समाचार कम्पनियों और समाचार पत्रों विशेषत आर्य समाजियों द्वारा सचालित समाचार पत्रों के सचालकों से निवेदन करता है कि वह नैतिक पतन को उत्तेजना देने वाले अश्लील चित्रों आदि का प्रकाशन न किया करे।

प्रचलित भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता को दृष्टि में रखते हुए यह नवम आर्य महासम्मेलन व्यवसाय में लगे हुये नागरिकों से अनुरोध करता है कि वे खाने पीने की चीजों और औषधियों में मिलावट की कुप्रथा, कम मापने, कम तोलने की कुटेव और खोटे सिक्के के उपयोग की दूषित मनोवृत्ति को परित्याग करके ईमानदारी से अपने व्यवसाय को और व्यवसाय द्वारा राष्ट्रहित की नीति को लक्ष्य में रखें केवल स्वार्थसिद्धि को नहीं।

न्यायालयों में जो नागरिक भाग लेते है या जिनको वहां जाने की आवश्यकता होती है उन्हें रिश्वत देने व लेने के अपराध से बचे रहने का पूरा प्रयत्न करते रहना चाहिए और शपथ की महत्ता को लक्ष्य में रख कर ईश्वर को न्यायकारी और व्यापक मानकर पाप से बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

भारत में जो नागरिक सरकारी या अन्य नौकरियों में हैं उनको निम्नलिखित सेवा सूत्र (पचशील) पर ध्यान रखना चाहिए—

सेवा—सूत्र
[पंचशील]

सद्भावना (ईमानदारी)

१ उत्कोच (घूस रिश्वत) त्याग
२ पक्षपात-निर्मूलन
३ कर्तव्य पालन
४ प्रवचकता एव असत्य भाषण त्याग
५ आदेश पालन और अनुशासन

व्यवहार कुशलना (कार्यक्षमता)

१ आशु कार्यकारिता
२ विशुद्धता
३ याथा तथ्य (ज्यो का त्यो)
४ विनयशीलता
५ समय निष्ठा

१—राजनीतिक जगत में वोट के महत्त्व को लक्ष्य में रखकर ईमानदारी से वोट का प्रयोग होना चाहिए और यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि वोट राष्ट्र की सम्पत्ति है इसका दुरुपयोग आपत्ति है। महर्षि दयानन्द की इस भावना का कि सम्मनि का अधिकार केवल सदाचारी को ही देना चाहिए बलपूर्वक प्रचार किया जाय।

"महाजनो येन गता सपन्था" के सिद्धान्तानुसार यह सम्मेलन इस स्थिति में निश्चित करता है कि नेतृवर्ग नैतिकता इत्यादि को अगीकार कर भारत के कोने कोने मे स्थित आर्य समाजो को चरित्र और नैतिकता की शिक्षा में प्रोत्साहित करेगे।

प्रस्तावक पूर्णचन्द्र
अनुमोदक —महात्मा आनन्द स्वामी

व्यायाम शालाएं

नवम आर्य महासम्मेलन का निश्चित मतहै कि आर्य समाज के छठे नियम की पूर्ति के लिये प्रत्येक आर्य समाज कम से कम एक व्यायामशाला अवश्य खोले तथा शारीरिक उन्नति के अर्थ अपने सदस्यो एव सम्बन्धित नवयुवको को सदाचारपूर्वक व्यायाम करने की प्रेरणा करे।

प्रस्तावक—रणञ्जय सिंह
अनुमोदक—आनन्द प्रिय
बड़ोदा

चिकित्सा

यह सम्मेलन भारत सरकार से आग्रहपूर्वक प्रार्थना करता है कि वह आयुर्वेदीय चिकित्सा को ही राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप मे स्वीकार करे और उसे सब प्रकार से प्रोत्साहित करे।

प्रस्तावक—आचार्य भगवान देव
अनुमोदक—कविराज हरनामदास बी० ए०
समर्थक —वैद्य मूलचन्द

इन प्रस्तावों पर कार्यवाही निर्धारित किए जाने का विषय सभा की ८-१०-६१ की अन्तरग बैठक के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत होने पर अन्तरग सभा ने प्रस्तावो पर विचार करके कार्यवाही के निर्धारण का अधिकार निम्नलिखित महानुभावो की एक उपसमिति को दे दिया —

(१) श्रीयुत डा० डी० राम
(२) „ घनश्यामसिंह जी गुप्त
(३) „ बा० कालीचरण जी आर्य सभा मन्त्री (सयोजक)
(४) „ रघुवीरसिंह जी शास्त्री
(५) „ प्रकाशवीर जी शास्त्री

यह भी निश्चय किया गया कि सम्मेलन के प्रस्तावों पर प्रान्तीय सभा और सार्वदेशिक सभा के अन्तरग सदस्य अपनी अपनी सम्मति उपसमिति को भेज सकते हैं जिनपर उपसमिति विचार करगी। इस उपसमिति का निर्णय अन्तरग का निर्णय समझा जायगा और सभा प्रधान की अनुमति से सभा कार्यालय उपसमिति द्वारा निर्धारित कार्यवाही को क्रियान्वित करेगा।

इस उपसमिति की बैठक १-१२-६१ को दयानन्द भवन में हुई और कार्यवाही का निर्धारण हो जाने पर सभा कार्यालय द्वारा उचित कार्यवाही कर दी गई।

विविध कार्य

आर्य महासम्मेलन के अवसर पर सभा की ओर से निम्नलिखित पुस्तकें तैयार करके प्रकाशित की गई —

१—सभा का प्रारम्भ से लेकर अब तक का संक्षिप्त इतिहास (१६०८ से १९६० तक)
२—सभा के अब तक के महत्वपूर्ण निर्णय,
३—आर्य महासम्मेलनों के प्रस्ताव,
४—आर्य समाज का परिचय,
५—आर्य महासम्मेलनों के अध्यक्षीय भाषण

सभा के ये प्रकाशन अत्यन्त सामयिक और उपादेय समझे गए हैं और इनका सर्वत्र आदर हो रहा है।

इसके अतिरिक्त १६०८ से १९६० तक का सभा का परिचय कार्यालय द्वारा तैयार किया गया और देश के मुख्य मुख्य दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों में प्रकाशित कराया गया।

परिस्थितिवश सभा को महोत्सव एवं सम्मेलन की तैयारी के लिए केवल ३ मास का समय मिला। अन्तरंग सभा ने अपनी २६-१-६१ की बैठक में १६ से २१ मई तक की सम्मेलन की तिथियां नियत की थीं। दिल्ली की प्रचण्ड गर्मी को लक्ष्य में रखते हुए इन तिथियों में सम्मेलन की सफलता में भारी सन्देह था। फिर भी अन्तरंग सदस्य श्री देशराज चौधरी इन तिथियों में सम्मेलन की सफलता के सम्बन्ध में आश्वस्त थे। फलतः अन्तरंग सभा ने यह दायित्व उन्हीं के हाथों में सौंप दिया और उन्हें प्रबन्ध के लिए नियुक्त की गई समिति का अध्यक्ष नियत कर दिया। उन्होंने समिति के मन्त्री श्री लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित तथा अनेक परखे हुए सहकर्मियों के साथ सम्मेलन की सफलता के लिए दिन रात एक किया। उनके व्यक्तित्व और प्रभाव ने भी इस कार्य में उनका बहुत साथ दिया। उपर्युक्त तिथियों में ही सम्मेलन हुआ और अभूतपूर्व सफलता के साथ हुआ। इस सफलता का श्रेय जहां प्रबन्धकों को और दिल्ली की आर्य जनता को प्राप्त है वहां आर्य जनता को भी प्राप्त है जो देश के कोने २ से दिल्ली में आकर एकत्र हुई और जिसने आर्य समाज के संगठन की वरिष्ठता एवं सार्वदेशिक सभा के प्रति अपनी निष्ठा का एक और भव्य उदाहरण प्रस्तुत कर दिया। सम्मेलन के प्रधान के रूप में श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज के निर्वाचन ने भी सम्मेलन की सफलता में बहुत मूल्यवान योग दिया। सम्मेलन को सफल बनाने के लिए यह सभा समस्त आर्य जगत् को धन्यवाद देती है।

इस सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी २४-६-६१ की बैठक में संयोजकों के प्रति धन्यवाद का निम्नांकित प्रस्ताव पारित किया —

"यह सभा स्वर्ण जयन्ती तथा नवम आर्य महासम्मेलन समिति को इन दोनों समारोहों की शानदार सफलता पर हार्दिक बधाई देती है विशेष रूप से समिति के प्रधान श्री देशराज जी चौधरी तथा मन्त्री श्री लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित का प्रयत्न अत्यन्त प्रशंसनीय रहा है।

पांच लाख की अपील

सभा ने निम्नलिखित प्रयोजनों के लिए ५ लाख रुपया एकत्र करने की योजना बना कर मुख्यतया नोटों द्वारा धन संग्रह का यत्न किया —

१ ईसाई प्रचार निरोध
२—साहित्य निर्माण
३—विदेश प्रचार
४—दक्षिण भारत आदि में प्रचार
५—भाषा समस्या

इस अपील पर २८-७-६२ तक ८५७२८)२४ प्राप्त हुआ।

स्वर्ण जयन्ती व सम्मेलन के आय व्यय का विवरण

आय

स्वर्ण जयन्ती निधि (नोटो से तथा दान से)	८५७२८)२४
स्वागत समिति की सदस्यता शुल्क	८३३०)
प्रतिनिधि शुल्क	४६५१)
आय भोजन मद्दे	७११५)८०
आय प्रदर्शिनी से	३८२३)६४
दान यज्ञ के लिए	२१५८)७५
सार्वदेशिक साप्ताहिक	४७९)३०
योग	१,१२,२८६)७३

व्यय

वेतन कर्मचारी		५९५९)१६
डाक व्यय	५३१४-४६	
स्टेशनरी	१४८-३५	
टेलीफोन	८७९-६९	
विविध	२२८२-९९	६४२६)४९
मार्गव्यय		३८०२)३५
आवास		९९१)७३
पंडाल		१२४४१ ६२
बिजली		१००७५)६०
प्रचार	३५०७)३१	
छपाई	६१३५)२७	
सार्वदेशिक साप्ताहिक	२८०३)९०	१२४४६)५२
भोजन व्यय	१४८९३)०७	
लगर पानी व्यय	७०६)२२	१५५९९)२९
यज्ञ		३७९४)३१
शोभायात्रा		२८७१)९०
प्रदर्शिनी		७०६२)२७
आर्य वीर दल		१३०३)७१
पुस्तके		३३५८,७३
विविध सम्मेलन		
आर्य विद्वत सम्मेलन	१२४२)५७	
आर्य महिला सम्मेलन	१५०)००	
शिक्षा	७४,८३	१५६७ ४०
		९०६०१)१६
अधिक आय		२१६८५)५७
योग		११२२८६)७३

विशेष

इस आर्य महासम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन के लिए निर्धारित नियमों के स्पष्टीकरण और सशोधन की आवश्यकता अनुभव हुई। तदनुसार २३-४-६१ की अन्तरग सभा में निम्न प्रकार संशोधन स्वीकृत हुए —

प्रतिनिधि विषयक नियम (स्पष्टीकरण)

[१] जिन समाजों के ९ आर्य सभासद् होंगे वह १ प्रतिनिधि जिनके २५ आर्य सभासद होंगे वह २ प्रतिनिधि भेज सकेंगे। इसके आगे २५ की पूर्ण सख्या होनेपर १ के हिसाब से भेजसकेंगे।

विषय निर्धारिणी समिति (धारा ३)

इस धारा में प्रदेशीय सभाओं के सदस्यों के स्थान में अन्तरग सदस्य कर दिया जाय। जिन प्रदेशों में प्रतिनिधि सभाएं नही हैं उन प्रदेशों के १५ प्रतिनिधियों के स्थान में १० प्रतिनिधि किये जायें और इनकी नियुक्ति का अधिकार सम्मेलन के प्रधान को दिया जाय। सम्मेलन के सभापति को अधिकार होगा कि

वह निजाधिकार से १० तक सदस्य नियुक्त कर दे।

स्वर्ण जयन्ती आर्य महासम्मेलन के अवसर पर प्रचार कार्य के निमित्त 'सार्वदेशिक' का साप्ताहिक संस्करण भी निकाला गया जिसने प्रचार का बहुत अच्छा कार्य किया। यत यह संस्करण अस्थाई रूप से निकाला गया था अत ३० जुलाई के अंक के बाद बन्द कर दिया गया।

उपसमितियां

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष के लिए २५-६-६१ की अन्तरग सभा ने निम्न प्रकार उपसमितिया नियुक्त की थी —

आर्य नगर गाजियाबाद

१ —श्रीयुत बा० कालीचरण जी आर्य सभा मन्त्री (सयोजक)
२—,, रघुवीर सिंह जी शास्त्री
३—,, ला० बनवारीलाल जी आर्य गाजियाबाद
४—,, बा० रघुनन्दन स्वरूप जी ऐडवोकेट मेरठ
५—,, प्रो० रामसिंह जी एम ए
६—,, देशराज जी चौधरी दिल्ली
७—,, ला० हरसरन दास जी गाजियाबाद
८—,, प्रो० रत्नसिंह जी गाजियाबाद

इस उपसमिति की ३ बैठकें १२-८-६१,५-९-६१ और १८-९-६१ के लिए बुलाई गई। पहली बैठक कौरम न होने से न हो सकी। अन्य दोनों बैठकें हुई और उनकी निम्न लिखित रिपोर्ट ८-१०-६१ की अन्तरग बैठक द्वारा स्वीकृत हुई —

"प्रस्तावित मास्टर प्लेन के प्राप्त होने पर यह अनिवार्य हो गया है कि अपने पूर्व निर्मित प्लेन को पुन बनाया जाय क्योंकि सरकारी प्लेन के अनुसार जितनी चौडी सडकें होनी चाहिए उतनी चौड़ी सड़कें हमारे प्लेन में नहीं दिखाई गई हैं। प्लाट भी २०० वर्ग गज से कम एलाट नहीं हो सकता। सभा ने २०० वर्ग गज से कम के प्लाट एलाट किए हुए हैं। ४० प्रतिशतक समस्त भूमि की जगह खाली छोडनी आवश्यक है अत समिति ने निश्चय किया है —

(१) जिन प्लाटोंके १००) या उससे कम रुपए बयानेके प्राप्त हुएहैं उनका रुपया वापस किया जाय।

(२) जिन प्लाट होल्डरों का पूरा रुपया आ गया है परन्तु रजिस्ट्री नही हुई है उनका भी रुपया वापस किया जाय। उन प्लाटों की रजिस्ट्री न कराई जाय।

(३) जिनका रुपया प्राप्त होकर रजिस्ट्री हो चुकी है अगर उनके प्लाट २०० वर्ग गज से कम हैं उन्हें लिखा जाय कि वे अपना रुपया वापस ले सकते हैं अथवा अपने प्लाट की २०० वर्गगज की पूर्ति करदे। रेट्स अन्तरग सभा तय करदे।

(४) जो प्लाट शेष रहते हैं उनका नकशा सरकार से प्राप्त एतराजो को दृष्टि में रखते हुए बना दिया जाय।

(५) रफ नकशा बना दिया गया है और वह आर्कीटैक्ट से ठीक बनवाया जायगा इसके लिए ५००) तक के व्यय की स्वीकृति दी जाय।

निश्चय हुआ कि नक्शे के निर्माण के लिए ५००) तक के व्यय की स्वीकृति दी जाती है। २०० वर्गगज की पूर्ति के लिए भूमि का रेट क्या रहे इसका निर्णय उपसमिति कर दे।

नया प्लेनसरकार को भेजा जा चुकाहै अभी स्वीकृत नहींहुआ है। स्वीकृत करानेका प्रयत्न जारीहै। नए मास्टरप्लेनमें यह भूमि लाइटइन्डस्ट्रीज के क्षेत्र में रखी गई थी। इसे इस क्षेत्र से हटाकर रिहायशी क्षेत्र में रखाने का पूरा २ यत्न किया गया। सभा की ओर से प्रतिवेदन दिए गए और सभा के अधिकारी सम्बद्ध राज्याधिकारियों से डेपुटेशन के रूप में मिले। प्रसन्नता है कि वह भूमि लाइट

इन्डस्ट्रीज क्षेत्र के बन्धन से मुक्त हो गई है और रिहायशी भूमि के रूप में रहने दी गई है। सभा के भूतपूर्व मन्त्री श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री जब गत वर्ष सम्बद्ध राज्याधिकारियों से मिले थे तो उन्होंने सभा की ओर से यह आश्वासन चाहा था कि सरकारी प्लैन के अनुसार सडकें बनवाई जायेंगी और नगर का विकास किया जायगा। इसके लिए उन्होंने १० हजार रुपए की सिक्यूरिटी मागी थी। सभा मन्त्री ने यह आश्वासन दे दिया था। २४ ६-६१ को अन्तरग सभा ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित करके १० हजार की सिक्यूरिटी जमा करने की अनुमति दे दी थी जो जमा करादी गई थी --

"विशेष रूप से सभा प्रधान की अनुमति से आर्य नगर गाजियाबाद के विकास के लिए १०००० रुपया सिक्यूरिटी के रूप में टाउन प्लेनर के पास जमा करने का विषय प्रस्तुत होकर कार्यकारिणी दिनाक २३ ६-६१ की बैठक का निम्न लिखित निश्चय पढा गया -

"श्री मन्त्री जी ने सब स्थिति बताई। निश्चय हुआ कि श्री मन्त्री जी की रिपोर्ट के आधार पर सम्बद्ध कागजात तथा कानूनी सम्मति सहित यह विषय आगामी अन्तरग बैठक में पेश हो।"

पर्याप्त विचार और विवाद के उपरान्त निश्चय हुआ कि श्री मन्त्री जी की रिपोर्ट प्राप्त की जाय और १० हजार रुपए की पजाब नेशनल बैंक अजमेरी गेट दिल्ली से एफ डी लेकर समय के भीतर २ सिक्यूरिटी के रूप में जमा कराई जाय तथा इस कार्य के लिए कार्य विभाजन करते समय एक उपसमिति बनायी जाय। यह भी निश्चय हुआ कि इस फिक्सड् डिपाजिट पर आपरेट करने का अधिकार सभा मन्त्री तथा सभा कोषाध्यक्ष को रहे।

विधान समिति

१—श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त
२—,, रामनाथ जी भल्ला
३—,, बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट
४—,, ,, जगनदनलाल जी ,,
५—,, प्रो० रामसिंह जी एम ए
६—,, रघुवीर सिंह जी शास्त्री
७— , प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित
८—,, बा० चन्द्रनारायण जी ऐडवोकेट
९—,, डा० महावीरसिंह जी
१०—,, बा० काली चरण जी (सयोजक)
११—,, रतनलाल जी रि डिस्ट्रिक्ट एन्ड सेशन जज
१२—,, नरदेव जी स्नातक

इस समिति के आधीन निम्न लिखित कार्य किए हुए हैं -

(१) प्रान्तीय सभाओं के नियमो को देखकर सब प्रान्तीय सभाओ के नियमों में एक रूपता लाने विषयक सुझाव देना।

(२) अनुशासन सम्बन्धी नियमों का प्रारूप तय्यार करना।

(३) न्याय सभा के नियमों में सशोधन का सुझाव देना।

(४,सभा के नियमो मे सशोधन का सुझावदेना।

इस समिति की एक बैठक ८-१० ६१ को हुई और १२ तथा १३ जनवरी को दो बैठकें हुई। इन बैठकों मे प्रान्तीय सभाओं के नियमों में एक रूपता लाने विषयक कार्यालय द्वारा प्रस्तुत प्रारूप पर विचार हुआ जो समस्त प्रान्तीय सभाओ के नियमों के आधार पर बनाया गया था। विचार के समय कई मौलिक प्रश्न सामने आए जिन का प्रभाव आर्य समाज के उपनियमों और सार्वदेशिक सभा के नियमों पर भी पडता था अत समिति ऐसा प्रारूप बनाने में सलग्न है जिसमें इस प्रकार के प्रश्नो का सम्यक समाधान हो जाय।

विदेश प्रचार

१—श्री स्वामी ध्रुवानद जी सरस्वती
२—,, डी० डी० पुरी जी (सयोजक)

३—,, प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय
४—,, मिहिरचन्द्र जी धीमान
५—,, डा॰ डी॰ राम जी
६—, सेठ प्रतापसिंह जी शूरजी बल्लभ दास

इस समिति को अपने मे ३ सदस्य तक बढ़ाने का अधिकार दिया हुआ है।

इसकी एक बैठक १४-१-६२ के लिए बुलाई गई थी परन्तु कोरम के अभाव मे न हो सकी।

यह समिति प्रारम्भिक पग के रूप मे ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन पर विचार कर रही है जो विदेश प्रचार की आवश्यकता को पूरा करे इसके लिए चाहे नया ग्रन्थ तैयार कराया जाय वा किसी पुराने ग्रन्थ को चुना जाय। समिति के सयोजक श्री डी॰ डी॰ पुरी ईस्ट अफ्रीका गये हुए हैं। यहा से वह कई अग्रेजी ग्रन्थ अपने साथ ले गए हैं जहा विदेश के आर्य जनो के साथ वह इस विषय पर विचार विमर्श करेगे।

ईसाई प्रचार निरोध समिति

१—श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
२—,, बा॰ कालीचरण जी मन्त्री ,, ,,
३—, प्रधान अखिल भारतीय श्रद्धानन्द स्मारक ट्रस्ट दिल्ली
४—,, मन्त्री , ,, ,,
५—प॰ जनार्दन भट्ट सयुक्त मन्त्री अखिल भारतीय आर्य हिन्दू धर्म सेवा संघ दिल्ली
६—,, प्रधान अखिल भारतीय हिन्दु शुद्धि सभा दिल्ली
७—,, मन्त्री , ,, ,,
८—,, बटकृष्ण वर्मन (बगाल)
९—,, राजबहादुर जी (राजस्थान)
१०—, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री (बिहार)
११—,, ,, राजेन्द्र नाथ जी ,, (दिल्ली)
१२—,, ला॰ हसराज जी गुप्त (दिल्ली)
१३—,, प्रो॰ रामसिंह जी एम॰ ए॰ ,,
१४—,, डा॰ महावीरसिंह जी (मध्य भारत)
१५—,, स्वामी दिव्यानन्द जी (मध्य प्रदेश)
१६—,, नरदेव जी स्नातक (दिल्ली)
१७—,, बा॰ जगनदनलाल जी ऐडवोकेट (उत्तर प्रदेश)
१८—,, प॰ प्रकाशवीर जी शास्त्री
१९—,, मिहिरचन्द्र जी धीमान (बगाल)

इस समिति की नियुक्ति इस बात को लक्ष्य में रखकर की गई थी कि शुद्धि का काय सयुक्त रूप से हो जिससे साधनो और शक्ति का अपव्यय न हो। इस दिशा मे इस वर्ष ठोस प्रगति हुई। सार्वदेशिक सभा और श्रद्धानन्द ट्रस्ट ने इस कार्य्य के लिए एक सयुक्त समिति बनादी है जो आधा आधा व्यय देते हैं। इस समिति का नाम अराष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति है और श्री प॰ ज्ञान चन्द जी इसके मन्त्री हैं। प्रधान श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त तथा कोषाध्यक्ष सभा मन्त्री श्री बा॰ कालीचरण जी आर्य हैं। इस समिति का कार्यालय दीवानहाल में है।

संयुक्त समिति

१—श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त (प्रधान)
२—,, सेठ रामनारायण भिरमामी जी
३—,, प॰ ज्ञानचन्द जी बी॰ ए॰ (श्रद्धानन्द ट्रस्ट के प्रतिनिधि)
४—,, ला॰ हसराज जी गुप्त
५—,, बा॰ काली चरण जी आर्य (सार्वदेशिक सभा के ,,

यह परिवर्तन ८ १० ६१ की अन्तरग सभा के निश्चय स २२ के (ख) भाग के अनुसार हुआ है जो इस प्रकार है —

(ख विज्ञापन का विषय स ६—छोटा नागपुर में ईसाई प्रचार निरोध विषयक कार्य श्रद्धानन्द ट्रस्ट और सार्वदेशिक सभा मिलकर करें। इस विषय मे प्राप्त

हुए ट्रस्ट के प्रधान श्री म० कृष्ण जी के १८-८-६१ के पत्र पर विचार का विषय प्रस्तुत होकर श्री महाशय ज का पत्र पढ़ा गया। निश्चय हुआ —

"यतः यह आवश्यक है कि छोटा नागपुर के अराष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध के सम्बन्ध में कार्य करने वाली सस्थाओ के कार्य का एकीकरण किया जाय और उसे एक ही प्रशासन के आधीन लाया जाय।

एतदथ यह सभा निश्चय करती है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और स्वामी श्रद्धानन्द अ० भ० स्मारक ट्रस्ट के छोटा नागपुर तथा अन्य क्षेत्रो में अराष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध के कार्यों के एकीकरण के लिए एक सयुक्त समिति बनाई जाये जो सब क्षेत्रो में काय का सचालन करे। इस समिति में सभा और ट्रस्ट के २-२ प्रतिनिधि होगे। इस समिति का प्रधान बारी २ से सार्वदेशिक सभा और ट्रस्ट का होगा। इस कार्य पर जितना व्यय होगा उसका आधा सभा और आधा भाग ट्रस्ट देगा।

इस सयुक्त सचालन समिति को कार्य सचालन और व्ययादि के पूर्ण अधिकार होगे।

छोटा नागपुर आदि के प्रचार क्षेत्र में सम्पत्ति आदि क्रय करना आवश्यक होगी तो उसे सार्वदेशिक सभा अपने व्यय से क्रय करेगी। यदि सभा ऐसा न करना चाहेगी तब ट्रस्ट उसे अपने व्यय से क्रय करेगा। यदि कोई सम्पत्ति दान में प्राप्त होगी उसे सभा तथा ट्रस्ट के प्रधानों की सम्मति से दोनों मे से किसी एक के नाम में रजिस्ट्री कराया जायगा।

सयुक्त समिति के कार्य को चलाने में अन्य निर्णय योग्य बातो का निर्णय दोनों सस्थाओं के प्रधानों की सहमति से हुआ करेगा।

यदि कोई अन्य सस्था इस सयुक्त समिति में सम्मिलित होना चाहेगी तो वह भी उपयुक्त रीतिसे समान अधिकारों और कर्तव्यों के साथ सम्मिलित हो सकेगी।"

इस निश्चय के अनुसार सभा प्रधान ने सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधियो के रूप मे श्रीयुत बा० कालीचरण जी आर्य और श्री ला० हसराज जी गुप्त को नियुक्त करदिया था जिनकी सपुष्टि१४ १ ६२ की अन्तरग द्वारा कराईगई। इसी बैठकमे प्रधानके रूप में उभय पक्ष की ओर से श्रीयुत घनश्यामसिंह जी की नियुक्ति की सम्पुष्टि की गई।

१३ १२-६१ को इस सयुक्त समिति की प्रथम बैठक दयानन्द भवन में हुई जिसके निश्चय नुसार दोनों सस्थाओं द्वारा होने वाले अराष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध विषयक कार्य के सचालन का दायित्व उक्त समिति ने अपने जिम्मे लिया और कार्यलय आदि की अपनी व्यवस्था निश्चित की।

आय व्यय के सम्बन्ध मे समितिने निश्चय किया कि जो धन समिति के नाम में आयगा वह समिति में जमा होगा और जो धन इस कार्य के निमित्त सार्वदेशिक सभा और श्रद्धानन्द ट्रस्ट मे आएगा वह उक्त दोनों सस्थाओं में जमा होगा। सयुक्त समिति के फड में सभा व ट्रस्ट प्रथम १०००)१०००) रुपया जमा करेगे और जो व्यय होगा उसको समय २ पर आधा आधा भाग देकर दोनो सस्थाओ द्वारा पूर्ति होती रहेगी।

अराष्ट्रिय ईसाई प्रचार निरोध कार्य का विवरण अन्यत्र दिया गया है।

मठगुलनी (बिहार) अभियोग विषयक १३५०)३२ आर्य प्रति निधि सभा बिहार की विशेष प्रेरणा पर २३-४-६१ की अन्तरग के निश्चयानुसार उन समाजों और व्यक्तियों को देने के लिए बिहार सभा को दिया गया जिन्होंने उस समय यह धन अपने पास से व्यय कर दियाथा।

सार्वदेशिक आर्यवीरदल समिति

१—श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती प्रधान सा० दे० आ० प्र० सभा (पदेन)

२—,, डा० काली चरण जी आर्य मन्त्री ,, ,, ,, (पदेन)
३ —,, प्रो० रामसिंह जी एम० ए० कोषाध्यक्ष ,, ,, (पदेन)
४ —,, देशराज जी चौधरी (रक्षा सचिव)
५ —,, मिहिर चन्द्र जी धीमान (प्रधान सचालक)
६—,, प वासुदेव जी शर्मा (सदस्य)
७—,, रामनाथ जी भल्ला ,,
८—,, डा० महावीरसिंह जी ,,
९—,, प ० प्रकाशवीर जी शास्त्री ,,
१०—,, प्रताप चन्द्र जी प डित

श्री सुखदेव जी शास्त्री सहायक प्रधान सचालक के रूप में आर्य वीर दल सगठन का कार्य्य करते रहे और १-११-६१ से त्याग पत्र देकर सभा की सेवा से मुक्त हो गए।

सार्वदेशिक आर्य वीर दल के समानान्तर अन्तर्राष्ट्रीय आर्य वीरदल सक्रिय हुआ जिसका सार्वदेशिक सभाके साथ कोई सम्बन्ध न था। विशेष पत्रो और परिपत्रों के द्वारा आर्य जगत पर सभा कार्यालय द्वारा यह स्थिति कई बार स्पष्ट की गई। सभा प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी ने इस अवाछनीय स्थिति का अन्त करने और आर्य वीरदल के कार्य की प्रगति का मार्ग प्रशस्त रखने का यत्न किया। उनके सत्प्रयत्न के फल स्वरूप मार्ग प्रशस्त हुआ और ८-१०-६१ की अन्तर ग बैठक में एक प्रस्ताव के द्वारा सार्वदेशिक और अन्तर्राष्ट्रीय आर्य वीर दल का विलीनीकरण अंकित किया गया अर्थात् अन्तर्राष्ट्रीय वीरदल समाप्त हो गया। १४-१-६२को अन्तर ग बैठक में आर्य वीरदल के नियमों में आवश्यक संशोधन का विषय प्रस्तुत होने पर निश्चय हुआ कि सभा प्रधान विधान में आवश्यक सशोधन करदे और सशोधित विधान स्वीकृति के लिए प्रधान जी के नोट के साथ अन्तर ग में प्रस्तुत किया जाय। यह कार्य जारीहै।

आर्य वीरदल के स्वय सेवको ने श्री सुखदेव जी शास्त्री की अध्यक्षता में स्वर्ण जयन्ती और नवम आर्य महासम्मेलन दिल्ली में प्रबन्ध के कार्य में उचित सहयोग दिया। शोभा यात्रा में बहुसख्यक आर्य वीरों ने भाग लेकर व्यवस्था के कार्य को सुगम बनाया। जिस कार्य पर वह लगाए गए उसे उन्होंने अनुशासन में रह कर उत्तमता से सम्पन्न किया।

श्रीयुत सुखदेव जी शास्त्री ने अगस्त और सितम्बर के महीनों में मुख्यतया उत्तर प्रदेश पजाब और हिमाचल प्रदेश का दौरा करके आर्यवीरदलो का निरीक्षण और सगठन कार्य किया।

४ सितम्बर से १० सितम्बर तक आर्य वीरदल स्थापना सप्ताह मनाया गया जिसका विस्तृत कार्यक्रम समाचार पत्रों तथा परिपत्रों द्वारा प्रसारित कर दिया गया था।

धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा पाठविधि निर्मातृ समिति

१—श्री आचार्य विश्वश्रवा जी
२— ,, प्रि० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित
३— ,, प्रि० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री
४— ,, रघुवीर सिंह जी शास्त्री
५— ,, घनश्यामसिंह जी गुप्त
६— ,, प० धर्मवीर जी वेदालकार (सयोजक)
७— ,, ,, धर्मदेव जी विद्या मार्तण्ड
८— ,, भारत भूषण जी त्यागी
९— ,, आचार्य वीरेन्द्र जी शास्त्री
१०— ,, आचार्य बृहस्पति जी शास्त्री
११— ,, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री
१२— , प० बुद्धदेव जी विद्या लकार
१३— ,, डा० कालीचरण जी आर्य
१४—श्रीमती शकुन्तला जी गोयल

श्री श्रीप्रकाश जी राज्यपाल बम्बई की अध्यक्षता में नियुक्त सरकारी समिति के प्रतिवेदन तथा इस सभा की अन्तर ग के निश्चय को लक्ष्य में रख

कर पाठ-विधि के निर्माण का विषय बड़ा जटिल है। इसके लिये पर्याप्त सामग्री का संकलन और अध्ययन आवश्यक है। समिति के संयोजक सामग्री के एकत्रीकरण की व्यवस्था कर रहे हैं।

धन विनियोग समिति

१—श्री प्रो० रामसिंह जी सभा कोषाध्यक्ष (संयोजक)

२— ,, ला० हंसराज जी गुप्त

३ — ,, डी० डी० पुरी जी

४— ,, देशराज जी चौधरी

५— , बा० कालीचरण जी सभा मन्त्री

६— ,, रघुवीरसिंह जी शास्त्री

७ — ,, प्रकाशवीर जी शास्त्री

८— ,, रामनाथ जी भल्ला

न्याय सभा

गत वर्ष न्याय सभा का संगठन पूर्ण हो गया था। न्याय सभा के सदस्य निम्नलिखित महानुभाव हैं —

(१) श्री रतनलाल जी रि० डिस्ट्रिक्ट ऐण्ड सेशन जज

(२) ठा० नन्दलाल सिंह जी ,, ,

(३) ,, बाबूराम जी ऐडवोकेट इटावा

(४) , जस्टिस रंगीलाल जी लुधियाना

(५) ,, गुंडेराव जी हैदराबाद रि० डिस्ट्रिक्ट ऐण्ड सेशन जज

(६) ,, रामगोपाल जी ऐडवोकेट पानीपत

(७) ,, रघुवरदयाल जी मित्तल मेरठ

२६-६-६० की साधारण सभा द्वारा दिए गए अधिकार के अनुसार अन्तरंग सभा ने अपनी २३-४-६१ की बैठक में श्रीयुत रतनलाल जी को न्याय सभा का प्रधान मनोनीत किया। प्रान्तीय सभाओं के अन्तर्गत न्याय सभाओं के निर्माण का उपक्रम किया जा रहा है। प्रधान महोदय ने न्याय सभा के वर्तमान नियमों में संशोधन का प्रारूप बनाया जो अन्तरंग सभा के विचाराधीन है।

विद्यार्य सभा

कार्य विवरणान्तर्गत वर्ष में इस सभा के अधिकारी इस प्रकार रहे :—

प्रधान—सार्वदेशिक सभा के प्रधान (पदेन)

कार्यकर्ता—श्री प० भीमसेन जी विद्यालंकार

मन्त्री— ,, आचार्य वीरेन्द्र जी शास्त्री एम० ए०

उपमन्त्री— ,, प० धर्मवीर जी वेदालंकार दिल्ली

इस सभा का कार्य विवरण नीचे अंकित किया जाता है —

(१) यह सभा १९१६ से कार्य कर रही है। इस सभा के वर्षान्तर्गत कुल ७३ सदस्य तथा अधिकारी और कार्यकारिणी के सदस्य गत वर्ष की भांति रहे। जून १९६१ से श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी स्वपदेन प्रमुख प्रधान हुए।

(२) कार्यालय, मन्त्री के पास रायबरेली में रहा। एक पार्ट टाइम लेखक ने कार्य किया। वर्ष भर में ३८१५ पत्र बाहर भेजे गये। कार्यकारिणी की २ बैठकें हुई, प्रथम २३-४-६१ को और द्वितीय ८-१०-६१ को। परीक्षा पटल की भी २ बैठकें हुई। गुरुकुलीय शिक्षा परिषद् उपसमिति की एक बैठक ८-१०-६१ को हुई।

(३) आर्य सिद्धान्त विषयक परीक्षायें श्रावणी तथा वसन्त पंचमी पर सम्पन्न हुईं। संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—

परीक्षा श्रावणी २०१८

परीक्षार्थी रत्न	१६
,, भूषण	६६
,, विशारद	१३४
,, योग	२४६
परीक्षा शुल्क प्राप्त	३७४) •

परीक्षा वसन्त पंचमी २०१८

परीक्षार्थी रत्न	२४

" भूषण	२७३
" विशारद	५३८
" योग	८३५
परीक्षा शुल्क प्राप्त	११३२)००

दोनों परीक्षाओं का योग

रत्न	४०
भूषण	३६९
विशारद	६७२
योग	१०८१
परीक्षा शुल्क प्राप्त	१५०६)००

गत वर्ष का विवरण (तुलना की दृष्टि से)

	श्रावणी	वसन्त पचमी २०१७
परीक्षार्थी रत्न	२	१७
" भूषण	६३	१०२
" विशारद	२९३	३५१
" योग	३५८	४७०
परीक्षा शुल्क प्राप्त	४२५)०७	५५८)२४
पिछला		१७)५०

योग

परीक्षार्थी रत्न	१९
" भूषण	१६५
" विशारद	६४४
" योग	८२८
परीक्षा शुल्क प्राप्त	१०००)८१

सर्व परीक्षाओं में प्रतिवर्ष सर्व प्रथम आने वाले परीक्षार्थियों को पुरस्कार दिये गये।

४—आर्य शिक्षा गोष्ठी—२६ मार्च १९६१ को देहली में आर्य शिक्षा गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसके सयोजक श्री धर्मवीर वेदालकार थे। गोष्ठी का उद्घाटन प० भीमसेन विद्यालकार तथा प्रधानत्व श्री बा० पूर्णचन्द्र जी ऐडवोकेट ने किया। इसमें स्थानीय आर्य शिक्षा सस्थाओं के प्रतिनिधि रूप में प्रधानाचार्य प्रबन्धक तथा धर्म शिक्षाध्यापक सम्मिलित हुए तथा शिक्षा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण निश्चय किये गये।

(५) आर्य शिक्षा सम्मेलन मई १९६१ को दिल्ली में किया गया जिसके प्रस्ताव आदि का विवरण 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित हो चुका है।

(६) गुरुकुलीय शिक्षा परिषद् उपसमिति द्वारा प्रस्तुत गुरुकुल की परिभाषा, परिषद् के उद्देश्य और परिषद् के सगठन नियम स्वीकृत किये गये। यह भी स्वीकृत किया गया कि गुरुकुलों की पाठ विधि एक समान बनाई जाय।

(७) आर्ष पाठविधि की परीक्षाओं का सचालन श्री आचार्य राजेन्द्रनाथ जी शास्त्री द्वारा किया गया। सक्षिप्त विवरण निम्न है—

परीक्षार्थी सख्या	५३
आय शुल्क से	१०६)
व्यय	२४२)

श्री स्वामी व्रतानन्द जी आचार्य गुरुकुल चितौड़ ने आर्ष पाठ विधि परीक्षा के प्रचारार्थ १००) दान दिये। सभा उनकी कृतज्ञ है।

(८) रायबरेली कार्यालय द्वारा सम्पन्न वर्ष भर का आय व्यय का विवरण—

आय

परीक्षा शुल्क से	१४७९)३६
सदस्यता शुल्क से	३४)
सम्बद्धता शुल्क से	१०)
सभा से अनुदान (अग्रिम)	२६२)४९
मौरीशस से पुस्तकों के लिये	५००)
योग	२२८५)८४
शेष १-३-६१ को	४१)०७
महायोग	२३२६)९१

व्यय

डाक व्यय	४११)४०

छपाई स्टेशनरी	२०६)०५
लेखक वेतन	५४०)
मार्ग व्यय	४८)५२
केन्द्र व्यय	११६)५६
परीक्षक पारिश्रमिक	३६६)२०
पुरस्कार	३०)६०
मारीशस के लिए पुस्तकें	२३०)७८
विविध	१५)५५
योग	२०२६)६६
शेष	२६६।६२

दिल्ली कार्यालय द्वारा तथा श्री धर्मवीर वेदालङ्कार और श्री राजेन्द्रनाथ शास्त्री द्वारा किया गया आय व्यय उपरिलिखित से अलग है।

श्री राजेन्द्रनाथ जी द्वारा

आय

परीक्षा शुल्क	१०६)
दान	१००)
अनुदान	१३६)२०
योग	३४२)२०

व्यय

डाक व्यय, स्टेशनरी, परीक्षक पारिश्रम पाठ विधि लेख आदि पर	२४२)२०

सभा की १४-१-६२ की अन्तरंग के निश्चयानुसार आर्ष पाठ विधि परीक्षाओं का सचालन स्थगित किया गया। सभा चाहती है कि हमारा पुरुषार्थ आर्य सिद्धान्त परीक्षाओं को ही अधिकाधिक लोक प्रिय बनाने की दिशा में प्रेरित रहना चाहिये।

धर्म्मार्य सभा

इस वर्ष ८-१०-६१ को तीन वर्ष के लिए इस सभा का निर्वाचन हुआ जिसमें उत्तर प्रदेश, पजाब राजस्थान, मध्यप्रदेश मध्यभारत, बंगाल, बिहार, और गुजरात आदि के ३० प्रतिष्ठित विद्वानों ने प्रतिनिधि रूप में भाग लिया।

अधिकारी

१—प्रधान—श्रीयुत पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड देव मुनी जी ज्वालापुर
२—उपप्रधान—,, आचार्य बृहस्पति जी शास्त्री देहरादून
३—मन्त्री—,, आचार्य विश्वश्रवा जी
४—उप ,,—,, आचार्य राजेन्द्र नाथ जी शास्त्री दिल्ली

अन्तरंग सदस्य

५—श्रीयुत आचार्य वेद्यनाथ जी शास्त्री नासिक
६—,, पं० उदय वीर जी शास्त्री गाजियाबाद
७—,, डा० हरिदत्त जी शास्त्री एम० ए० पी० एच० डी० कानपुर
८—,, पं० भीमसेन जी शास्त्री एम ए देहली
९—,, आचार्य वीरेन्द्र जी शास्त्री एम ए रायबरेली
१०—,, पं० जगदेव जी सिद्धान्ती शास्त्री दिल्ली
११—,, स्वामी सत्य मुनि जी
१२—,, मती प्रभावती जी गुरुकुल कागड़ी
१३—,, पं० अमरसिंह जी कलकत्ता
१४—,, ,, ओ३म् प्रकाश जी शास्त्री खतौली
१५—,, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री बिहार

इस वर्ष स्वर्ण जयन्ती नवम आर्य महासम्मेलन के अवसर पर इस सभा द्वारा निर्मित एव चिर प्रतीक्षित निम्नांकित दो महत्वपूर्ण प्रकाशन हुए—

१—यज्ञ पद्धति प्रकाश

२—साप्ताहिक सत्सगों के कार्य क्रम का चार्ट

यज्ञ पद्धति प्रकाश में निम्न ५ पद्धतियां हैं—

१—साप्ताहिक अधिवेशन आदि के समय बृहद् यज्ञ की पद्धति।

२—नित्य यज्ञ करने वालों के लिए नित्य यज्ञ पद्धति

३—अग्निहोत्रियों के लिए आहिताग्नि नित्य यज्ञ पद्धति।

४—ब्रह्म पारायण यज्ञ पद्धति

५—साप्ताहिक अधिवेशन पद्धति।

इस पुस्तक को आर्य जनता आशानुरूप अपना रही है। इसका मूल्य ५० नया पैसा है। इसके सम्बन्ध मे कुछ शंकाए भी समाधानार्थ प्राप्त हुई हैं जो विचाराधीन हैं। साप्ताहिक अधिवेशन के समय विभाग के चाट का मूल्य ५ नया पैसा रखा गया है।

श्रीयुत प० भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर ने सभा को सुझाव दिया कि पाश्चात्य तर्कों के उत्तर देने का आर्यसमाज क्या क्रम अपनाए? इस पर सभा को गंभीरता पूर्वक विचार करके निर्णय करना चाहिए। सभा की ८-१०-६१ की अन्तरंग मे इस पर विचार होकर यह विषय विचारार्थ धर्म्मार्य सभा के सुपुर्द हुआ।

साहित्य प्रकाशन

गाजियाबाद निवासी रामचन्द्र 'यक्ता' के नाम से छपी हुई दयानन्द रहस्य नामक एक पुस्तक की ओर आर्य समाज अमरोहा (मुरादाबाद) ने सार्वदेशिक सभा का ध्यान आकृष्ट किया जिसमें महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व, उनके सिद्धान्तों उनकी विद्वत्ता और आर्य समाज पर अशोभनीय और अनर्गल आक्षेप किए गए हैं और जिसका पौराणिक वर्ग में बहुत प्रचार किया जा रहा है। पौराणिकों को अपनी इस पुस्तक पर बडा गर्व है। सभा ने अन्तरंग सभा ८-१०-६१ की बैठक के निश्चयानुसार इस पुस्तक का उत्तर लिखकर प्रकाशित करने का निश्चय किया जिससे जनता पथ-भ्रष्ट होने से बचे। सभा के अनुरोध पर आर्य समाज के उच्च कोटि के विद्वान् श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री ने इसका उत्तर लिखना स्वीकार किया और उत्तर लिखकर सभा को दे दिया। यह पुस्तक छप रही है। सभा श्री आचार्य वैद्यनाथ जी को इस महत्व पूर्ण सेवा के लिए धन्यवाद देती है।

आर्य समाज अमरोहा ने उक्त पौराणिक उपदेशक रामचन्द्र यक्ता को शास्त्रार्थ का भी चैलेन्ज दिया जब कि वह गत वर्ष अमरोहा गए थे और सनातन धर्म सभा के जलसों में महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के विरुद्ध उन्होंने अनर्गल प्रलाप किया था। उक्त महाशय शास्त्रार्थ के लिए उद्यत न हुए और गाजियाबाद लौट गए। आर्य समाज अमरोहा ने उन्हें रजिस्टर्ड पत्र द्वारा शास्त्रार्थ का पुन आह्वान किया। स्मरण पत्र भेजे परन्तु वह शास्त्रार्थ के लिए उद्यत नहीं हुए। अवश्य अमरोहा की सनातन धर्म सभा के अधिकारियोंने यक्ता के आक्षेपो की अनर्गलता को अनुभव करके आर्य समाज अमरोहा को पत्र लिखकर उनपर खेद प्रकट किया था।

सभा का उत्तर २०×३० साइज की पुस्तक के लगभग २५० पृष्ठों में आयगा। इसका नाम 'दयानन्द सिद्धान्त प्रकाश' प्रस्तावित किया गया है।

सभा का कार्यालय उस साहित्यका सकलन करने के प्रयत्न में है जो आर्य समाज और महर्षि दयानन्द के विरुद्ध लिखा गया है वा लिखा जा रहा है।

स्वर्ण जयन्ती नवम आर्य महासम्मेलन प्रकाशन

स्वर्ण जयन्ती नवम आर्य महासम्मेलन के अवसर पर सभा कार्यालय ने निम्नलिखित पुस्तकें तय्यार करके उनके छपवाने की व्यवस्था की थी—

(१) सभा का प्रारम्भ से लेकर १९६० तक का सक्षिप्त इतिहास

(२) सभा के आवश्यक निर्णय

(३) आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव

(४) सम्मेलनो के अध्यक्षों के भाषण

२३-४-६१ की अन्तरग सभा ने इस व्यवस्था को स्वीकार कर इनके प्रकाशन की अनुमति प्रदान की। साथ ही श्रीयुत डा० डी० राम जी के

प्रस्ताव पर इस अवसर पर आर्य समाज के परिचय के रूप में एक उत्कृष्ट सचित्र पुस्तक भी छापने का निश्चय किया गया। इस पुस्तक के तय्यार करने की श्री प्रि॰ महेन्द्रप्रताप जी शास्त्री से प्रार्थना की गई। उन्होने सहर्ष इस पुस्तक की तय्यारी का दायित्व अपने ऊपर लेकर पुस्तक तय्यार कर दी जो 'आर्य समाज का परिचय' के नाम से छपी। सभा श्री शास्त्री जी की कृतज्ञ है और हार्दिक धन्यवाद देती है।

उपर्युक्त चारों पुस्तकें भी इस अवसर पर छप गई। इन प्रकाशनो का विवरण इस प्रकार है —

१—सक्षिप्त इतिहास—इस पुस्तक में सभा के जन्मकाल (१९०८) से लेकर १९६० तक की मुख्य मुख्य प्रगतियों का तथ्यपूर्ण सक्षिप्त विवरण दिया गया है जिसमे न केवल सभा के ही अपितु आर्य समाज के शृंखलाबद्ध इतिहास का परिज्ञान होजाता है। मूल्य ७५ न॰ पै॰

२—सार्वदेशिक सभाके निर्णय—इस पुस्तक में १९६० तक के सभी महत्त्व पूर्ण निर्णय दिए गए हैं जिनको जानना प्रत्येक आर्य सभासद् के लिए अनिवार्य है। इसमे आर्य जनो और आर्य समाजो के पथ-प्रदर्शन के लिए अलभ्य प्रचुर सामग्री विद्यमान है। मूल्य ७५ न॰ पै॰

३—आर्य महासम्मेलनों के प्रस्ताव—इस सग्रह में ८ आर्य महासम्मेलनों के प्रस्ताव अकित हैं। प्रत्येक सम्मेलन के स्थान, समय और प्रधान आदि केउल्लेख के साथ २ उसकी पृष्ठ भूमि भी लिखदी गई है। इसमें आर्य महासम्मेलन के नियम भी दे दिए गए हैं। मूल्य ६० न॰ पै॰

४—आर्य महासम्मेलनो के अध्यक्षीय भाषण—इस समय तक आर्य महा सम्मेलनों के ६ अधिवेशन हुए हैं। इस पुस्तक में इन ६ अधिवेशनों के अध्यक्षीय भाषण दिए गए हैं। प्रत्येक सम्मेलन के अध्यक्ष का चित्र व जीवन परिचय भी दे दिया गया है। यत सभी अध्यक्ष आर्य समाज और देश के सार्वजनिक जीवन मे उच्च और विशिष्ट स्थान रखने हैं अत उनके भाषण मार्ग प्रदर्शन युक्त प्रचुर एव वरिष्ठ सामग्री से ओत-प्रोत हैं। पृष्ठ २०० मूल्य १)

इनके अतिरिक्त इस अवसर पर 'पाथ आफ परफेक्शन' नाम की एक अग्रेजी पुस्तक छपी जिसमें चरित्र निर्माण और भ्रष्टाचार निरोधक अलभ्य सामग्री उपलब्ध होती है। इसके लेखक सभा के भूतपूर्व प्रधान श्री बाबू पूर्णचन्द्र जी ऐड-वोकेट हैं। मूल्य ४० नए पैसे

सस्ते सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन की योजना

सार्वदेशिक सभा कम से कम मूल्य पर सर्व सामान्य जनता के लिये सत्यार्थ प्रकाश को सुलभ बनाने के लिये प्रयत्नशील हैं क्योकि इस ग्रन्थ का वर्तमान मूल्य अधिक होने से जन साधारण को इसे क्रय करने में कठिनाई होती है। सभा चाहती है कि वर्तमान में यह ग्रन्थ १) मे मिल सके। इसके लिये परोपकारिणी सभा को तय्यार करने का प्रयत्न किया जा रहा है। विचार है कि एक साथ १ लाख प्रतिया छपवाई जाय। परन्तु दो कठिनाइया मुख्य हैं। एक तो कागज की उपलब्धि की और दूसरी १ लाख प्रतियों के रखने के लिए स्थान की। इसके लिए यह सुझाव है कि प्रान्तीय सभाए आर्य समाजे और आर्य नरनारी पूर्व से ही धन भेज कर अपने आर्डर अकित करा दें। ज्यों ही पुस्तक छपे त्योंही वह आर्डर अकित कराने वालों को भेज दी जाय। इस सम्बन्ध में प्रान्तीय सभाओं और आर्य जनता को प्रेरणा की गई है। परोपकारिणी सभा ने विद्वानों की एक विशेष समिति के द्वारा इस ग्रन्थ के हस्तलेख से मिलाकर एक कापी तय्यार कराई है जिसमें छापे की अशुद्धियां ठीक कर दी गई हैं। यह सभा भी इस सशोधित कापी को अपने योग्य विद्वानों द्वारा

दिखलाना चाहती है ताकि इस बात का सन्तोष हो जाय कि यह संस्करण बिल्कुल शुद्ध है। पुन प्रचलित वा इस संशोधित कापी के आधार पर नया सस्ता संस्करण निकालने की चेष्टा की जायगी परन्तु इसके लिए आर्य जनता को पूर्व से ही बहु संख्या में अपने आर्डर बुक कराने होंगे।

अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश

अंग्रेजी का सत्यार्थ प्रकाश इन दिनो प्राप्य नही है। कला प्रेस प्रयाग श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय कृत अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश का नया संस्करण निकाल रहा है। सभा ने १५००) उधार देकर इसके शीघ्र प्रकाशन को प्रोत्साहित किया। यह १५००) पुस्तकों के रूप मे वापस मिल जावेगा। यह तात्कालिक मांग की पूर्ति के लिए किया गया है। श्रीयुत रतन लाल जी रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेशन जज मेरठ ने अंग्रेजी सत्यार्थ प्रकाश की तैयारी का कार्य अपने हाथ मे लिया हुआ है। भाषा और अनुवाद दोनो दृष्टियो से इसे उत्कृष्ट बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। श्रद्धेय जज साहब का यह अनुवाद सभा को प्राप्त होगा। इस मूल्यवान एवं स्मरणीय सेवा के लिए यह सभा श्री जज साहब को धन्यवाद देती है।

वेद संहिताओं का मन्त्र संग्रह विषयवार है वा नहीं

श्रीयुत पं० सातवलेकर जी चारों वेदो का विषय वार मन्त्र संग्रह प्रकाशित करने की व्यवस्था कर रहे हैं। उन्होंने सभा से मांग की थी कि सभा इस कार्य के सम्पादनार्थ उन्हें १० हजार रुपया वार्षिक का अनुदान दे। इस विषय पर इस सभा की २३-४-६१ की अन्तरंग में विचार होकर निश्चय हुआ कि यह सभा इस बात को नही मानती है कि वेद संहिताओं का मन्त्र संग्रह विषय वार नही है अतः इस कार्य के लिए कोई सहायता नहीं दी जा सकती।

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी के संस्कृत वेदान्त भाष्य का हिन्दी अनुवाद

हिन्दी अनुवाद को सभा द्वारा प्रकाशित किए जाने का विषय सभा के विचाराधीन है। ८-१० ६१ की अन्तरंग सभा ने इस अनुवाद को छापने की अनुमति दी हुई है साथ ही निर्देश दिया है कि छापने से पूर्व इसकी हिन्दी भाषा किसी विद्वान द्वारा दिखायी जाय। सभा ने भाष्य का निरीक्षण करा लिया है। इस सम्बन्ध में श्री स्वामी जी के साथ आवश्यक विचार विनिमय हो रहा है।

अष्टाध्यायी भाष्य

श्री स्वामी विरजानन्द जी महाराज कृत अष्टाध्यायी भाष्य का हस्तलेख अलवर के राजकीय पुस्तकालय में है। श्रीयुत डा० हरिदत्त जी शास्त्री एम ए एकादशतीर्थ ने विशेष प्रयत्न और परिश्रम करके इस भाष्य की लिपि सभा के व्यय पर कराई है। बहुत सी कापियां कार्यालय में प्राप्त हो गई हैं और शेष प्राप्त होने को हैं। इस स्तुत्य कार्य के लिए श्री शास्त्री जी सभा और आर्य जगत् के धन्यवाद के पात्र हैं।

उड़िया भाषा के सत्यार्थ प्रकाश का नया संस्करण

उड़िया भाषा मे सत्यार्थ प्रकाश के ऐसे अनुवाद का विषय सभा के विचाराधीन है जो भाषा और अनुवाद दोनों दृष्टियों से उत्तम हो। श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज वैदिक आश्रम पानपोष

सुदर गड उडीसा इसके लिए यत्न शील हैं। आशा है यह कार्य शीघ्र ही सम्पन्न होकर एक बड़ी आवश्यकता की पूर्ति हो जायगी।

स्थिर पुस्तकालय

इस पुस्तकालय मे वर्ष के अन्त पर विविध विषयो की ६८८ पुस्तकें १०९७६)३ मूल्य की थी। गत वर्ष ६ २२ पुस्तके १०६६६)४६ की थी। इस वर्ष ६६ पुस्तकों का वृद्धि हुई जिनमें से २५ क्रय की गई। २४ पुस्तके सार्वदेशिक मासिक के लिए समालोचनार्थ प्राप्त हुई तथा १७ दान में मिली।

२१-४-६१ की अन्तरग सभा ने पुस्तकालय की पुस्तके पढ़ने के लिए देने के विषय में निम्न लिखित नियम बनाए—

१—पुस्तक लेने वाले से कम से कम १५) सिक्योरिटी ली जाय जो पुस्तक के मूल्य से कम न हो।
२—पुस्तकालय की पुस्तकों से लाभ उठाने वाले सदस्य बनाए जाए और उनसे ३) वार्षिक चदा लिया जाय।
३—दुर्लभ ग्रन्थ किसी दशा में न दिए जाये।
४—अत्यधिक मूल्यवान् पुस्तके न दी जायें।
५—अत्यधिक चित्र बने ग्रन्थ न दिए जाये।
६—रेफरेंस पुस्तके न दी जायें।

सार्वदेशिक पत्र

इस वर्ष में पत्र का सपादन सभा मन्त्री द्वारा हुआ इस वर्ष चन्दे और विज्ञापन से कुल आय ४०५१)१५ हुई। छपाई, कागज, वेतन लेखक और डाक व्ययादि मे ५३५३)४० व्यय हुआ। घाटा १३००)२५ रहा। गत वर्ष घाटा १०८२)८९ रहा।

फरवरी के अन्त में ग्राहक सख्या ७०५ थी।

पुस्तक भण्डार

इस वर्ष इस विभाग में निम्नलिखित पुस्तके बिक्री के लिए छपी —

	सख्या	लागत
१—ईशोपनिषद्	२००००	४१९)
२—पाथ आव परफेक्शन	१०	२४१)
३—प्रवेश पत्र आर्य समाज	५०	४१ ७५
४—भारत का एक ऋषि	५०	५१३।४२
५—यज्ञ पद्धति	५०	१५१९ ६२
६—मृत्यु और परलोक	३०	१८७२)५०
७—अथर्व वेदीय अतिथि	१०	७०)७५
८—उर्दू सत्यार्थ प्रकाश	१०	७२३)५१
९—ईसाई पादरी उत्तर दे	२०	१७५)५०
१०—ईसाई पादरियों के कुचक्र से देश को बचाओ	२०	१६९)
११—ओ३म् ध्वज	२६१	५००)६६

सार्वदेशिक सभा की सम्पत्ति

सार्वदेशिक भवन—

यह सभा का तिमजला अपना भवन है जो परेड के मैदान के सामने एस्प्लेनेड रोड पर स्थित है। इस भवन को श्रीमती जानकी देवी ने अपने स्व० पति श्रीयुत ला० ज्योति प्रसाद जी खिलौने वाले की पुण्य स्मृति में १९१५ ई० में सभा को दान किया था। यह भवन १७०) मासिक पर किराए पर चढ़ा हुआ है। इस भवन की रजिस्ट्री १९-२-१९१५ को हुई थी। भवन को किराए दार से खाली कराने के लिए वकील के द्वारा नोटिस दिया गया है।

श्रद्धानन्द बलिदान भवन—

इस भवन के नीचे की २ दुकाने ९७)७४ मासिक किराए पर तथा दूसरी मंजिल का १ कमरा (बलिदान वाले कमरे को छोडकर) तथा कोलेनेड का एक भाग २५०) मासिक किराए पर रहा।

किराए से ४१७२)८८ की आय हुई और इस वर्ष कार्पोरेशन के टैक्स आदि पर ७५८)५६ व्यय हुआ। इस भवन के सम्यक प्रयोग का विषय सभा के विचाराधीन है। इस वर्ष ऊपर की मंजिल को खाली करने के लिए वकील के द्वारा किराए दारों को नोटिस दिया गया है।

दयानन्द भवन –

यह भवन सभा ने ४५८४ ८)४४ नया पैसा में क्रय किया। ४३६०००) भवन का क्रय मूल्य था और १५२८३)५० नए पैसे भवन की रजिस्ट्री तथा ७१२४)६४ अन्य व्यय हुआ। रजिस्ट्री १-६-५८ को हुई। यह भवन रामलीला मैदान में आसफअलीरोड पर स्थित है। इस समय सभा का कार्यालय इसी भवन की सबसे ऊपर की मंजिल पर स्थित है। शेष भाग इस प्रकार किराए पर चढ़ा है—

१—बेसमेन्ट (तहखाना) डनलप रबर कम्पनी	८७५)
२—आधा भाग (ग्राउन्डफ्लोर) अमेरिकन एम्बेसी का एक कार्यालय	१२५०)
३ बी० धर्म्म सिंह ऐण्ड कम्पनी आधा भाग (ग्राउन्डफ्लोर)	१४००)
४—लिपटन कम्पनी (पहली मंजिल)	१२५०)
	४७७५)

नोट—अमेरिकन एम्बेसी ने अपना भाग खाली कर दिया है। यह भाग १६००) मासिक पर ओरियन्टल लोंगमेन्स कम्पनी दिल्ली को दे दिया है जो भारत का सुप्रसिद्ध विदेशीय पुस्तक प्रकाशन सम्स्थान है।

मकान का म्यूनिसिपल नम्बर ५/३ है

मकान की मरम्मत एवं कार्पोरेशन के टैक्स इत्यादि पर ६१२४)१२ व्यय हुआ। १४४५)६५ मरम्मत पर और ७६७८)१७ टैक्स पर।

श्रद्धानन्द नगरी—

श्रद्धानन्द नगरी (पहाड गंज) दिल्ली मे इस सभा के अधीन अखिल भारतीय श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित २ भवन हैं इन दोनों की लागत ६९९३) है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश—

इस आश्रम की भूमि तथा उनपर बने हुए मकानों का मूल्य लगभग १५ हजार रुपया है और यह सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबंध के लिए वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है जिसकी ओर से श्री स्वामी देवानन्द जी सन्यासी प्रबंध करते हैं। इस आश्रम के मकानों में विशेष नियमों के अनुसार यात्रियों को निवास की सुविधा दी जाती है। आश्रम की ओर से यात्रियों को आवश्यकतानुसार १ तख्त वा चारपाई, पानी की बाल्टी, भोजन बनाने के बर्तन और ३ दिन के लिए कम्बल दे दिया जाता है। आश्रम में प्रति सप्ताह रविवार को प्रातः ८ बजे से १० बजे तक साप्ताहिक सत्संग लगता है।

श्री ला० बाबूराम शाहदरा निवासी स्मारक निधि—

देहली शाहदरा के प्रसिद्ध और वयोवृद्ध आर्य स्व० ला० बाबू राम जी ने एक वसीयत के द्वारा जो दान किया था उसमें से सभा को ४५ सहस्र नगद १ मकान लगभग ४०००) का तथा १ प्लाट २०० गज का प्राप्त होगा। न्यायालय से प्रोबेट प्राप्त होकर ट्रस्टियों को दे दिया गया है। इस वर्ष सभा को ३० हजार रुपया नकद प्राप्त हो गया है। शाहदरा के मकान का ७॥।) मासिक किराया सभा को प्राप्त हो रहा है। प्लाट में भवन निर्माण का विषय विचाराधीन है और इम्प्रूवमेन्ट ट्रस्ट से अनुमति प्राप्त करने का यत्न किया जा रहा है।

ट्रस्टियों की ओर से सभा को प्रेरणा की गई है की श्री ला० बाबूराम जी की स्मृति में सभा द्वारा शाहदरा में औषधालय आदि लोकोपकारक कार्य प्रारम्भ किया जाय। यह विषय भी सभा के विचाराधीन है।

मूलचन्द बजरंगलाल डीडवानी पीलवा (राजस्थान) स्मारक निधि

स्व० श्री मूलचन्द जी ने अपने जीवन काल में ५००) की राशि सभा को दान की थी, जो मूलचन्द बजरंगलाल स्थिरनिधि के रूप मे जमा है जिसके ब्याज से महर्षि कृत ग्रन्थ तथा अन्यान्य आर्य साहित्य प्रकाशित हुआ करेगा।

श्री थरियालाल जी का दान

श्रीयुत थरियालाल जी जानकीगंज लश्कर निवासी ने वेद प्रचारार्थ ५ हजार की राशि २६-१-६० को सभा को दान मे दी थी।

श्रीयुत ला० जगन्नाथ जी का दान

श्रीयुत ला० जगन्नाथ जी दिल्ली निवासी ने अपनी ५ हजार की जीवन बीमा पालिसी इस सभा के नाम मे दान की हुई है जिसमें से दानी की इच्छानुसार २ हजार श्री सर्वदानन्द साधु आश्रम अन्तगर्त क दिये जायेंगे।

चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक स्थिर निधि

यह निधि श्री चन्द्रभानु जी रईस तीतरो (सहारनपुर) निवासी की पुण्य स्मृति मे उनके सुपुत्र श्रीयुत म० वेदमित्र जी जिज्ञासु द्वारा प्रदत्त ५ हजार के दान से मथुरा शताब्दि के अवसर पर स्थापित हुई थी। दानी की इच्छानुसार इस राशि के ब्याज से आर्य साहित्य प्रकाशित किया जाता है। गत वर्ष तक इस निधि से १९ पुस्तके छप चुकी थी। इस वर्ष 'मृत्यु और परलोक' पुस्तक छपी।

दक्षिण अफ्रीका वेद प्रचार सीरीज

२०-८-५० की अन्तरंग सभा के निश्चयानुसार यह निधि श्रीयुत प० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के १०३५०) के दान से स्थापित हुई थी जिसमे से वर्ष के अन्त मे ७६४,६८ शेष थे। यह धन उन्हें दक्षिण अफ्रीका से वहां के आर्य भाइयो की ओर से निजी व्यय के लिए भेंट रूप में मिला था। इस निधि के धन से अब तक 'सनातन धर्म और आर्य-समाज' 'लाइफ आफ्टर डैथ' तथा 'एलीमेण्टरी टीचिंग्स आव हिन्दुइज्म' पुस्तके छप चुकी हैं

दयानन्द आश्रम निधि

इस निधि के २२५० के ब्याज से वृद्ध हुए भाइयो की सहायता की जाती है मुख्यत विद्यार्थियों को छात्र वृत्तिया दी जाती हैं।

दयानन्द दलितोद्धार निधि

यह निधि ३ हजार की राशि की है जो स्व० श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज द्वारा एकत्र धन से निर्मित हुई थी। इसके ब्याज से इस वर्ष गढवाल के शिल्पकार (आर्य कहे जाने वाले २ विद्यार्थियो को जो देहरादून के हाई स्कूल मे पढते हैं ८), ८) मासिक की छात्र वृत्तिया दी गई। इससे पूर्व भी अनेक विद्यार्थियो को इससे छात्र वृत्तिया दी जा चुकी हैं और श्रद्धानन्द नगरी पहाड गंज की दलितोद्धार सभा के भवनो का सरकारी लीज का धन भी दिया जाता रहा था।

श्रीमती चन्द्रा देवी का दान

श्रीमती चन्द्रोदेवी ने अपना जगपुरा नई दिल्ली स्थित मकान जिसका मूल्य लगभग ८ हजार है और जिसमे २६७ वर्ग गज भूमि ६० फुट लम्बी ४० फुट चौडी है अपने पति स्व० श्री कल्लू सैनी की स्मृति मे १९५५ मे सभा को दान किया था। इसकी रजिस्ट्री १२-५-५५ को हुई थी। इम्प्रूवमेन्ट के कागजो मे यह मकान सभा के नाम मे परिवर्तित हो चुका है। इस मकान पर श्रीमती चन्द्रो देवी के सम्बन्धियो ने अनधिकृत कब्जा कर रखा है। नियमित कब्जा प्राप्ति के लिए कानूनी कार्यवाही हो रही है।

श्रीयुत अर्जुनलाल जी आचार्य का दान

श्रीयुत अर्जुनलाल जी आचार्य रिटायर्ड गार्ड ने अपना मकान जो सदर बाजार नीमच छावनी में

स्थित है जिसका म्युनिसिपल नम्बर १०३९ तथा मूल्य लगभग १० हजार रुपया है आर्य समाज नीमच छावनी के उपयोग के लिए सार्वदेशिक सभा को दान मे दिया था।

गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार ट्रस्ट

इस सभा के भूतपूर्व प्रधान श्रीयुत प० गंगा प्रसाद जी रि० चीफ जज ने दो हजार रुपये के दान से एक स्थिर निधि स्थापित की हुई है जिसका ब्याज दानी महोदय की अनुमति से आर्य समाज टिहरी (गढवाल) के कार्यों मे व्यय होता है।

भवानीलाल गजूमल शर्मा स्थिर निधियां

विश्वकर्मा कुलोत्पन्न स्व० श्रीमती निज्जो देवी भवानीलाल शर्मा ककूहास की पुण्य स्मृति मे श्री भवानीलाल शर्मा कानपुर वर्तमान अमरावती (विदर्भ) निवासी ने सार्वदेशिक पत्र के हितार्थ ५ हजार रुपये की स्थिर निधि स्थापित की हुई है जिसके वार्षिक ब्याज में से आधा सार्वदेशिक पत्र को दिया जाता है और शेष आधा स्थिर निधि में जमा कर दिया जाता है। इस समय इस निधि में ५३७५) जमा है।

श्रीयुत शर्मा जी ने ५०००। के दान से एक दूसरी निधि स्थापित की हुई है जिससे सत्यार्थ प्रकाश छपा करेगा। इस निधि से सभा ने सत्यार्थ प्रकाश का एक अच्छा संस्करण प्रकाशित किया हुआ है।

एक वसीयत

एक सज्जन ने ४०००) की अपनी जीवन बीमा पालिसी इस सभा को दान मे दी है। इसके ब्याज से आर्य गर्ल्स हायर सेकेण्डरी स्कूल नई दिल्ली की ९, १० और ११ श्रेणियो की उन छात्राओ को छात्र वृत्तिया दी जाया करेगी जो धर्म शिक्षा आदि विषयो मे सर्व प्रथम रहा करेगी।

जोधपुर की सम्पत्ति

जोधपुर में निम्नलिखित सम्पत्ति सभा के नाम है —

१—५६५५ वर्ग गज भूमि सर प्रताप हाई स्कूल के सामने श्री रणछोडदास मन्दिर के पास।

२—आर्य श्मशान भूमि २७१२ वर्ग गज।

३—गुरुकुल मारवाड मडोर ७ मकान कुल भूमि २५-६६ वर्ग गज।

४—गोशाला मारवाड मंडोर १ कोठरी (चारे की) ४ अन्य कोठरिया २ बगाडे भूमि ३० हजार वर्ग गज।

रणछोडदास मन्दिर के पास जो प्लाट था उसे सरकार ने हस्तगत करके उसके बदले मे ५ प्लाट अन्यत्र दे दिये हैं।

सभा मन्त्री ने इस वर्ष जोधपुर जाकर सम्पत्ति का निरीक्षण किया। उनकी रिपोर्ट प्राप्त हो गई है वह अन्तरग के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत हो जायगी। सम्पत्ति की सुरक्षा और सदुपयोग की व्यवस्था की जा रही है मुख्यतया पाचो प्लाटों और गुरुकुल मारवाड मडोर की इमारतो की।

अभियोग

सभा को १९५५ में ६० हजार की प्राप्ति के लिए जो १९४८, १९४९ मे ला० श्रीराम पहाडगंज देहली को मकानो पर ऋण रूप में दिया था, न्यायालय की शरण लेनी पड गई थी। इस वर्ष सभा को न्यायालय से लगभग ८४०००) की डिग्री प्राप्त हो गई है। इसके अतिरिक्त ला० श्रीराम पर ३६३२३) के शेष मकान किराए की प्राप्ति के लिए दावा किया गया था इसमे भी न्यायालय से डिग्री प्राप्त हो गई है।

सभा की ओर से इन अभियोगों की पैरवी का काम श्री मास्टर पोहकर मलजी के सुपुर्द रहा जो सभा के मुख्त्यार आम के रूप में कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त मकानो के किराये आदि की प्राप्ति और अन्य अभियोगो की पैरवी का जो न्यायालय में चल रहे हैं, मास्टर जी कार्य करते रहे।

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का विदेश से प्रत्यागमन

श्रीयुत पूज्य स्वामी ध्रुवानद जी महाराज पूर्वीय अफ्रीका, मोरीशस मेडागास्कर आदि २ में लगभग ४॥ वर्ष पर्यन्त सफल प्रचार और समाजो की सुव्यवस्था करके १२ अप्रैल १९६१ को भारत लौटे। बम्बई में लगभग एक सप्ताह रह कर २१ अप्रैल को फ्रन्टियर मेल से देहली पधारे। बम्बई में उनका भव्य स्वागत हुआ। बम्बई से दिल्ली के मार्ग मे प्रमुख २ आर्य समाजों ने रेल्वे स्टेशनो पर उनका अभिनन्दन किया। नई दिल्ली के स्टेशन पर सहस्रो आर्य नरनारियो ने उल्लास पूर्ण हृदय से उनका स्वागत किया। स्वामी जी महाराज को स्टेशन से दयानन्द भवन तक जलूस के रूप में लाया गया जहा उन्होने सक्षिप्त भाषण में आर्य जनता का आभार मानते हुए इस बात पर हर्ष व्यक्त किया कि दिल्ली के आर्य नर नारी उन्हें भूले नही हैं और वे यथापूर्व आत्मीयता की भावना रखते हैं। यह आयोजन सार्वदेशिक सभा की ओर से किया गया था। २२ अप्रैल को दिल्ली की आर्य समाजो की ओर से डिप्टीगज (सदर) मे उनका सार्वजनिक अभिनन्दन हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री महाशय कृष्ण जी ने की। २३ अप्रैल को सायकाल ४ बजे सार्वदेशिक सभा की ओर से दयानन्द भवन में उनका स्वागत किया गया और अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। इस आयोजन मे सार्वदेशिक सभा की अन्तरग के सदस्य एव विशेष रूप से आमन्त्रित आर्य नरनारियो के अतिरिक्त दिल्ली के आर्य समाजो ने भाग लिया था।

सभा प्रधान श्री बा० पूर्णचन्द जी ने अपने प्रारम्भिक भाषण में विदेश में किये गये श्री स्वामी जी के कार्य का भावपूर्ण शब्दो में अभिनन्दन किया और इस अवसर पर घोषणा की कि प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओंके बहुमत और सार्वदेशिकसभा की २३-४-६१ की अन्तरग बैठक की सम्पुष्टि से स्वामी जी महाराज स्वर्ण जयन्ती और नवम आर्य महा-सम्मेलन समारोह के प्रधान निर्वाचित हुए हैं।

श्री स्वामी जी ने अपने भाषण में कहा— "मैंने सार्वदेशिक सभा की प्रार्थना स्वीकार कर विदेश में कुछ सेवा की है आप लोगों का यह कथन ठीक नही है। मैं व्यक्ति हूं और सभा एक बहुत बडी सस्था है। सस्था व्यक्तियो से ऊची होती है, वही सच्चे अर्थों में आदर की पात्र है। मैं विदेश में लगभग ५ वर्ष रहा। इतना मैं कह सकता हू कि वहा मैंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया जिससे आर्य समाज और सार्वदेशिक सभा की प्रतिष्ठा को धक्का लगा हो। यदि हम अपने व्यक्तित्व को सस्थाओं के मुकाबले में पीछे रखे तो कलह और सघर्ष न रहे। मैंने सार्वदेशिक सभा की प्रतिष्ठा के अनुसार आर्य सभा मोरीशस की स्थिति को सुदृढ बना दिया है। उस सभा के विधान में सार्वदेशिक सभा की प्रतिष्ठा को बनाये रखने की व्यवस्था कर दी गई है। मैंने मोरीशस तब छोडा जब सार्वदेशिक सभा की ओर से मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज वहां पहुंच गये। आर्य महासम्मेलन के प्रधान का दायित्व लेने में मुझे उत्सुकता नही है उत्साह नहीं है परन्तु जैसी आप सब की आज्ञा और इच्छा। आप सब आर्य महासम्मेलन और स्वर्ण जयन्ती सफल बनाने मे प्राणपण से जुट जाये। इस सम्मेलन की सफलता से निश्चय ही आर्य समाज में एक स्वर्णिम युग का उदय होगा और उसका फल शुभ होगा।"

लौटने पर श्री स्वामी जी को आर्य समाज में जो वातावरण व्याप्त हुआ देख पड़ा वह चिन्ता जनक था। वह उसी समय इस वातावरण को हटाने के सत्प्रयत्न मे लग गए। सार्वदेशिक सभा के विरुद्ध जो अभियोग आ० प्र० सभा बम्बई तथा श्री बालमुकन्द जी आहूजा की ओर से सरकारी न्यायालयों में चल रहे थे वापस करा दिए गये।

अन्यत्र भी व्याप्त गृह कलह के शमन के लिए उन्होंने यत्न आरम्भ कर दिया और वह अब भी इस कार्य में सलग्न हैं।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का विवाद

१४-१-६२ की अन्तरग सभा ने पजाब सभा के विवाद के सम्बन्ध में निम्नलिखित निश्चय किया—

"आर्य प्रतिनिधिसभा पजाब के वर्तमान चुनाव के दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों के वक्तव्य सुनने और विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार विमर्श करने के पश्चात अन्तरंग सभा यह अनुभव करती है कि दोनों पक्षों के अधिकारियो और अन्तरग सदस्यो के निर्वाचन से सभा सन्तुष्ट नहीं है अत यह सभा इन निर्वाचनों की वैधता या अवैधता के सम्बन्ध मे कोई निर्णय किये बिना यह सुझाव देना उचित समझती है कि दोनो पक्षो के वरिष्ठ प्रतिनिधियो को बुला कर यह सुझाव रखा जाय कि वे शीघ्र से शीघ्र आपस में समझौता कर ले और इस बीच मे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की अन्तरङ्ग जिसके अध्यक्ष श्री प० बुद्धदेव जी हैं काम करती रहे।

यदि दोनों पक्ष समझौता न कर सके तो सार्वदेशिक सभा के प्रधान जी जब उचित समझे नया चुनाव करा देवे।

इस दिशा में प्रधान जी के प्रयत्न जारी हैं।

मौरीशस का कार्य एक दृष्टि में—

१—आर्य सभा के नियमों का सशोधन जो गवर्नमेन्ट द्वारा भी स्वीकृत हुआ।

२—आर्य प्रतिनिधि तथा आर्य सभा दोनो सभाओं का एकीकरण।

३—१८-१२-६० को दोनो सभाओं का सम्मिलित निर्वाचन।

४—आर्य सभा मौरीशस के वैदिक पुस्तकालय के लिए ७१५१ एकत्र करके सभा को देना।

५—फर्नीचर के लिए ४ हजार से अधिक रुपया दिलाना।

६—आर्योदय पत्र की ग्राहक सख्या २५० से बढ़ा कर लगभग १५०० करा दी गई।

७—निजी दक्षिणा के रूप में प्राप्त लगभग ६ हजार रुपया उक्त सभा को प्रदान करना।

२२ जनवरी ६१ को आर्य सभा के भवन में मोरीशस के आर्य भाइयो की ओर से विदाई समारोह हुआ और श्री स्वामी जी को भव्य विदाई दी गई।

श्री स्वामी जी की विदेश मे अंतिम प्रचार यात्रा मैडागास्कर द्वीप की हुई जो फ्रेंच सरकार के अधिकार में है। इसी द्वीप के तनानारीव तमा ताव, डिगोस्वरेज, अचिराव, नगरों में प्रचार करके नैरोबी होते हुए श्री स्वामी जी बम्बई पहुंचे।

भारत में प्रचार यात्राए

स्वास्थ्य के अच्छा न होते हुए भी श्री स्वामी जी निरन्तर प्रचार यात्राओ पर रहे।

सभा मन्त्री का भ्रमण वृत्तान्त

इस वर्ष सभा मन्त्री ने विविध प्रचार-यात्राओं के अतिरिक्त नागपुर और हैदराबाद की यात्राए कीं और दोनों सभाओं के कार्यालयों का निरीक्षण किया और व्यवस्था सन्तोषजनक पाई। इस प्रकार की यात्राओं की उपयोगिता असन्दिग्ध है। इसके अतिरिक्त आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध की स्थिति के निरीक्षणार्थ फरवरी के अन्त मे बम्बई गए। उनकी सिन्ध सभा विषयक रिपोर्ट अन्तरङ्ग के समक्ष विचारार्थ रखी जायगी।

हिन्दी रक्षा समिति पंजाब

दुर्भाग्य से पंजाब में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि

सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा निर्मित संयुक्त समिति के मुकाबले में एक स्वतन्त्र हिन्दी रक्षा समिति संघटित हो गई। इस सभा की २४-६-६१ की अन्तरंग सभा ने इस सम्बन्ध में निम्न लिखित प्रस्ताव पारित किया —

नि० सं० ११

'विशेष रूप से सभा प्रधान की अनुमति से पंजाब में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब के संगठन से बाहर नव निर्मित पंजाब हिन्दी रक्षा समिति की स्थिति पर विचार का विषय प्रस्तुत हुआ। श्री पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित का २३-६-६१ का पत्र भी पढ़ा गया। विचार के पश्चात् निम्नलिखित प्रस्ताव पारित हुआ

श्री पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित का पंजाब हिन्दी रक्षा समिति विषयक पत्र प्रस्तुत हुआ। इस सम्बन्ध में स्थिति स्पष्ट करते हुए घोषणा की जाती है कि पंजाब की दोनों आर्य प्रतिनिधि सभाओं द्वारा संगठित पंजाब हिन्दी रक्षा समिति ही प्रामाणिक है और सभी आर्य समाजों तथा आर्य जनों को उसी के आदेशानुसार कार्य करना चाहिए।

इसके विपरीत जो कोई नई हिन्दी रक्षा समिति पंजाब में बनी है, वह अवैध एवं अमान्य है।"

निर्वाचन आयोग ने पंजाब में चुनाव के पत्र एक मात्र पंजाबी में छापने का आदेश दिया जिसका आर्य जगत् ने तीव्र प्रतिवाद किया जिसके फल स्वरूप केन्द्रीय सरकार के हस्तक्षेप से हिन्दी और पंजाबी दोनों भाषाओं में चुनाव पत्र छपे।

बिहार में बाढ़ पीड़ितों की सहायता का कार्य

गत नवम्बर मास में बिहार प्रान्त में बड़ी भयंकर बाढ़ आई जिससे महान् विनाश और हानि हुई। आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार ने सहायता कार्य का आयोजन किया। सभा प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने बिहार का भ्रमण करके स्थिति का निरीक्षण किया और बिहार सभा के इस आयोजन को सफल बनाने के लिए आर्य जनों को धन जन प्रत्येक प्रकार की सहायता देने की प्रेरणा की। सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से भी भारत भर के आर्य समाजों को परिपत्र के द्वारा प्रेरणा की गई।

आर्य समाजों तथा दानशील व्यक्तियों से आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार को २४३३) ८२ प्राप्त हुआ और २३१०)५० नया पैसा व्यय हुआ। जिसकी मुख्य २ राशियां इस प्रकार है —

१००) आर्य समाज मन्दिर मठगुलनी (गया) के जीर्णोद्धार के लिये।

१००) आर्य समाज मन्डोर जीर्णोद्धार के लिए।

६०३'८१ कपड़ा-मुंगेर जिले के २८ ग्रामों में लगभग ५०० अनाथ बच्चों में वितरित किया गया।

५९५)७५ हवेली खड़गपुर तथा लखीसराय के बाढ़ पीड़ितों में भोजन सामग्री वस्त्रादि।

इस सभा की ओर से ५००) इस कार्यार्थ दिया गया। हरियाणा के बाढ़ पीड़ितों की सहायतार्थ भी सभा से १०००) दिया गया।

प्रेस सम्मेलन

राजनैतिक उद्देश्यों के लिए आर्य समाज तथा उसके मन्दिरों के प्रयोग के विषय में आर्य जगत का मार्ग प्रदर्शन करने के उद्देश्य से २९ ६-६१ को सभा की ओर एक प्रेस सम्मेलन किया गया जिसमें दिल्ली के हिन्दी उर्दू अंग्रेजी के समाचार पत्रों के प्रतिनिधियों ने बहु संख्या में भाग लिया। इस सम्मेलन में सभा मंत्री बा० कालीचरण का निम्नलिखित वक्तव्य पढ़ा गया। प्रतिनिधियों की इस शंका का निवारण किया गया कि हिन्दी रक्षा आन्दोलन राजनैतिक आन्दोलन है। उन्हें बताया गया कि हिन्दी रक्षा आन्दोलन विशुद्ध सांस्कृतिक आन्दोलन है राजनीति के साथ इसका

कोई सम्बन्ध न है और न रहा है। एक प्रतिनिधि की जिज्ञासा के समाधान स्वरूप बताया गया कि यदि कोई आर्यसमाज मन्दिर राजनैतिक कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाय तो प्रान्तीय सभा को उसके विरुद्ध उचित कार्यवाही करनी चाहिए।

सभा मंत्री का वक्तव्य

इस समय भारत मे विधान सभाओ तथा ससद् के साधारण निर्वाचन सन्निकट होने के कारण सारे देश के राजनैतिक वातावरण मे उत्तेजना आ रही है और निर्वाचनो मे भाग लेने के लिये विशिष्ट रुचि पैदा हो रही है। विभिन्न राजनतिक दल अपनी अपनी दृष्टि से शक्ति के सग्रह तथा आकलन मे लगे हैं। साथ ही वे अन्य अराजनैतिक सघटनो का समर्थन प्राप्त करने का भी यत्न कर रहे हैं। उनकी कुछ प्रतिक्रिया आर्य सामाजिक क्षत्रो मे भी होनी स्वाभाविक है। अत आवश्यक है कि इस सम्बन्ध मे आर्य समाज की नीति स्पष्ट की जाय।

सार्वदेशिक सभा ने समय समय पर जो निश्चय किये हैं उनके अनुसार आर्य समाज की यह चिरघोषित नीति है कि वह सामूहिक रूप से प्रचलित राजनीति मे सक्रिय भाग नही लेता। आर्य समाज एक सार्वभौम धार्मिक सस्था है और उसका कार्य क्रम समस्त ससार के लिये अभिप्रेत है। अपने इस सार्वभौम स्वरूप को अक्षुण्ण रखने के लिये यह युक्ति युक्त ही था और है कि आर्य समाज किसी भी देश का राजनीति मे सामूहिक रूप से सक्रिय भाग न ले। वैसे आर्य समाज ने अपने सदस्यो को छूट दी हुई है कि वे व्यक्तिगत रूप से प्रचलित राजनीति मे भाग लेने मे स्वतन्त्र हैं।

आर्य समाज देश तथा विश्व की सामाजिक एव राजनैतिक समस्याओ के सम्बन्ध मे भी सदा अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करता रहा है। भारत की राजनीति को उसने पर्याप्त रूप मे प्रभावित किया है और देशके स्वाधीनता-आन्दोलन मे आर्य-सामाजिक लोगो का योगदान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। हमारा मन्तव्य है कि राजनैतिक योगक्षम के लिये सामाजिक योगक्षम अनिवार्य है। आर्य समाज ने इस दिशा मे जो पुरोगम बनाया देश के राजनीतिक दलो तथा प्रशासन ने उसे प्राय अपना लिया है— जैसे अछूतोद्धार, जात पात निवारण शिक्षाप्रसार नशाबन्दी तथा रूढि उन्मूलन आदि आदि। आज भी आर्य समाज को प्रशासन तथा राजनीति मे नैतिकता का स्तर ऊचा करने की बहुत रुचि एव चिन्ता है। परन्तु वह अन्य क्षेत्रो की भांति इस क्षेत्र मे भी रचनात्मक तथा प्रचारात्मक साधनो को ही अपना कर चलना चाहता है।

इस समय राजनैतिक कार्यो के लिये आर्य समाज के नाम तथा उसके मन्दिरो के उपयोग का प्रश्न भी उठ रहा है। सभा इस उचित नही समझती विशेषत इन दिनो जबकि विभिन्न राजनैतिक सस्थाए देश मे परस्पर विरोधी कार्यों तथा उद्देश्यो की प्राप्ति के लिये प्रतिस्पर्धा मे सलग्न है। यदि आर्य मन्दिरो का प्रयोग इस प्रकार राजनैतिक कार्यों तथा सगठनो के लिये करने दिया जायगा तो बहुत सी उलझने पदा हो जायगी। अत सार्वदेशिक सभा की अब तक की नीति के अनुसार आर्य समाजो तथा आर्य पुरुषो का कर्त्तव्य है कि वे इस विषय मे सतर्क रहे सार्वदेशिक सभा आर्य समाज के नाम तथा मन्दिरो का प्रयोग राजनैतिक कार्यों के लिये उचित नही समझती। इससे उनके महत्व तथा पवित्रता पर कुप्रभाव पडता है।"

महर्षि दयानन्द—स्मारक डाक टिकिट

ससद सदस्य तथा सार्वदेशिक सभा के अन्तरग सदस्य श्री प० प्रकाशवीर जी शास्त्री ने ८ १० ६१ को अन्तरग बैठक मे प्रकट किया कि भारत सरकार ऋषि बोधोत्सव पर महर्षि दयानन्द के सम्मान मे डाक टिकिट छाप रही है और ससद भवन में महर्षि दयानन्द का चित्र लगाने का भारत सरकार का जो निश्चय स्व० श्री प०

इ द्रजी विद्यावाचस्पति जी के यत्न से हुआ वह शीघ्र कार्यान्वित होने वाला है उक्त अन्तरंग बैठक ने इस सूचनाको प्रसन्नता पूर्वक अंकित करके श्री शास्त्री जी के द्वारा इस दिशा में किए जा रहे प्रशंसनीय कार्य के लिए धन्यवाद का प्रस्ताव पारित किया। सभा इस प्रयत्न मे है कि श्री स्वामी जी महाराज का अच्छा और प्रमाणिक चित्र उपलब्ध करके भारत सरकार को दे जिससे वह प्रामाणिक चित्र ही संसद भवन में लगाया जाय। विदित हुआ है कि भारत सरकार श्री स्वामी जी का बहु प्रचलित समाधि अवस्था का चित्र ही लगाने पर विचार कर रही है।

आर्य समाज का प्रवेश पत्र

८-१०-६१ को अन्तरंग सभा के निश्चय के अनुसार आर्य समाज का प्रवेश पत्र इस प्रकार संशोधित हुआ।

"मैं प्रसन्नता पूर्वक आर्य समाज के उद्देश्यो को जैसा कि नियमो में वर्णन किए गए हैं तथा मन्तव्यो को के आगे "सिद्धान्तो को" शब्द बढ़ाए जाएँ।

सभा के अन्तरंग सदस्यों की संख्या में वृद्धि

८-१०-६१ की अन्तरंग सभा में साधारण सभा दिनांक २५-६-६१ की बैठक द्वारा भेजे हुए श्री वेदीराम जी एम ए के इस सुझाव पर विचार हुआ कि यत सार्वदेशिक सभा की सदस्य संख्या बढ गई है और बढती जाती है अत नियमों में अन्तरंग सदस्यो की संख्या बढ़ाई जाय। अन्तरंग सभा ने २५ के स्थान में २७ की संख्या की सिफारिश की है।

सद्भावना मिशन

पाकिस्तान में आर्य समाज के कार्य तथा उसकी स्थिति का निरीक्षण करने के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा सिंध की प्रेरणा पर यह सभा एक सद् भावना मिशन भेजने का प्रयत्न कर रही है। इस विषय में भारत सरकार के साथ पत्र व्यवहार हो रहा है।

दयानन्द सेवाश्रम बांसवाड़ा का कार्य विवरण

(सन् ६१—६२)

मार्च १९६१ ई०—बांसवाडे में दयानन्द छात्रावास चलता रहा जिसमें तेरह भील छात्र प्रविष्ट रहे जिन्हें वैदिक सिद्धान्तो की शिक्षा दी जाती रही।

आर्य पाठशाला गाव भील कुआ मे चलती रही जिसमें पास के गावो के पचास लडके ईसाई स्कूल को त्याग कर शिक्षा ग्रहण करते रहे जिन्हें प्राईमरी शिक्षा के साथ कुछ धार्मिक शिक्षाये भी दी जाती रही हैं।

अप्रेल ,,—गाव बावडी खेडा मे एक परिवार के छै ईसाइयों की शुद्धि की गयी।

मई ,,—आर्य महासम्मेलन के अवसर पर छात्रावास के पाच छात्र दिल्ली लाये गये जिनपर सम्मेलन के कार्य क्रमो एवं व्याख्यानो का अच्छा प्रभाव पडा।

जून ,,—गाव आम्बा पाडा, जीवा खूटा, जाम्बूडी ढोढिया और सवेनिया में प्रचार किया गया तथा ईसाइयों के पास जाने वाले छात्रो को अपने छात्रावास में प्रविष्ट होने की प्रेरणा की गयी।

जुलाई ,,—गाव आम्बापाडा, परथीपुरा और जीवा खूटा के लडके जो ईसाई छात्रावास में जाने वाले थे उनके सहित उन्नीस भील लडकों को छात्रावास में प्रविष्ट किया गया।

अगस्त—प्रचारक विरजी को विशेष शिक्षा के लिए प० देवप्रकाश जी द्वारा संचालित उपदेशक विद्यालय रतलाम को भेजा गया तथा अपने छात्रावास का एक मनमोहन पारगी मैट्रीक

की परीक्षा मे अनुत्तीर्ण होकर उपदेशकी की शिक्षा के लिए रतलाम गया।

गाव जालिमपुरा गोयका के बालको को ईसाई स्कूल से हटा कर सरकारी स्कूलो मे प्रविष्ट कराया गया।

सितम्बर गाव गोयका मे चार ईसाई परिवारो के पच्चीस व्यक्तियो की शुद्धि की गयी तथा गाव कानीगरा तथा बेडऊ मे धर्म प्रचार किया।

अक्तूबर—गाव बेडऊ मे ईसाइयो के मुकाबल मे आर्य पाठशाला खोल दी गई जिसमे गाव के आधे लडके ईसाई स्कूल छोडकर आगये गाव जोवा खूटा शेपुरा जाम्बूडी और लोलवानी मे धर्म प्रचार किया गया।

नवम्बर गाव तलवाडा मे आदिवासी धम रक्षा सम्मेलन का विशेष रूप से आयोजन किया गया तथा बामवाडे मे जिले भर के शिक्षित भील युवको को सगठित एव उनमें आर्य धर्म की भावना प्रवाहित करने के उद्देश्य से एक सम्मेलन किया गया।

दिसम्बर—एक नवयुवक श्री रूपचन्द को भजनोपदेशकी की शिक्षा के लिए जयपुर भेजा गया तथा गाव बडेऊ और जीवाखूटा के दो ईसाई परिवारो मे बारह व्यक्तियो की शुद्धि कीगई।

जनवरी १९६२ ई०—गाव ढानर सागवा लसोडिया और हमीरपुरा मे धर्म प्रचार किया गया।

फर्वरी ६२ ई०—तीनो उपदेशक शिक्षित होकर आगये जिनमें से दो श्री रूपचन्द और श्री मनमोहन पारगी ने १६ फर्वरी से कार्य आरम्भ कर दिया और बागीसैरा तहसील के क्षेत्र में गाव छनरी अगोरिया हमीरपुरा सरेडी' लालाश्राडा और नालगाटिया मे विशेषरूप से ईसाइयो को शुद्ध होने की प्ररणा की गयी।

श्री पं० हरिराम जी का प्रचार कार्य

मार्च अप्रेल, मई तीन मास तक छोटा नागपुर में काय किया २०-३ ६१ का महुआडाड जिला पलामू में ३३४ तीन सौ चौंतीस शुद्धिया की। (१) ग्राम पारहिकेना टोली के १५ (२) ग्राम तम्बोली ६१ (३) गोठ गाव १५४ ४) चैनपुर थाना महुआडाड ५८ तथा (५) बेल टोनी ४६ ईसाइयो की शुद्धि की कुल ३ ४ शुद्धिया की हैं।

(२) ८ ४-६१ को ग्राम चचकपी थाना बीड़ू के २०० आदि वासियो को ईसाई होने से बचाया।

(३) १४ ४ ६१ को ग्राम बेंठठ थाना लोहरदगा के २५० आदिवासियो को ईसाई होने से बचाया।

(४) २२ ४ ६१ को ग्राम करकरी थाना बीड़ू के ३०० आदिवासियो को ईसाई होने से बचाया।

(५) ग्राम (१) मस्जिद मोठ २) बेगमपुर (३) चिराग दिल्ली तथा (४) लाडोसराय के ईसाइयो की शुद्धि की गई थी, इन मे प्रचार काय किया जाता रहा है।

(६) ग्राम मसीहगढ (ओखला नई दिल्ली) के ५०० ईसाइयो को शुद्ध कर के रामगढ नाम रखा, गया था। एक आर्य प्राइमरी स्कूल चल रहा है जिसमें राम गढ के शुद्ध किये परिवारो के बच्चे पढते हैं, उस का १२५) मासिक खर्च होता है बाबू विद्यासागर जी बी० ए० के सहयोग से पूरा किया गया।

महकमा शिक्षा समाज दिल्ली से एक अध्यापिका की सेवाए रामगढ के लिये प्राप्त की गई जो कि रामगढ के शुद्ध किये परिवारो की लडकियो को सीने कढाई आदि का कार्य सिखलाती हैं।

रामगढ में आर्य सम ज है जिसमे साप्ताहिक प्रचार सालाना उत्सव आदि होते हैं।

मसीहगढ (रामगढ के ईसाइयो की शुद्धिकरते ही रोमन कैथोलिक मिशन की ओर से शुद्ध किये परिवारो पर ३० मुकद्दमे चलाये गये थे २० मुकद्दमो में तो सफलता मिली परन्तु १० मुकद्दमे जमीन की

बेदखली के हार गए क्योंकि दिल्ली शहरी इलाके के किसान कानूनन बेदखल हो रहे थे इन मुकद्दमों की अपील पर अपील हो रही है। इस समय हमारे १० मुकद्दमे माननीय चीफ कमिशनर की अदालत मे चल रहे हैं रामगढ के शुद्ध किये किसानो के लिये भूमिधर बनने का एक कानून बनाया गया है। इन लोगो को भूमिधर तो मान लिया गया है अब हम १० मुकद्दमे भी जीत जायेगे परन्तु इस समय भारत सरकार ने रामगढ के शुद्ध किये परिवारो की सब जमीन एकवायर करली है पादरी मुआवजा उठा रहा है। ६० मुकद्दमे पादरी के मुआवजा रोकने के लिये करने पडे हैं भूमिधर बनने के कारण रामगढ वासियों को एक रुपया मे तेरह आना मिलेंगे पादरी को ≡) तीन आने एक रुपया मे मिलेगे ऐसी सभावना है

(१) महपालपुर (२) रगपुर, (३) डेराफतह पुर बेरी (महरौली) (४) भोगल (५) खेडाखुर्द (६ ग्राम कनहई आदि जिला गुडगावा के ईसाइयो मे प्रचार काय किया गया, विशेष ध्यान देने पर उपरोक्त ग्राम भी शुद्ध हो सकते हैं।

सितम्बर सन् ६१ मे प० जी राची गये थे। थाना चैनपुर के हिन्दुओ पर वहा के ईसाई लोग बडा अत्याचार कर रहे थे। राची मे बडे अफसरो को सब हालात बताये गए जिस पर उन्होने न्याय किया था।

दयानन्द-सेवा आश्रम हिन्दी विद्यालय-गौर (नेपाल)

का वार्षिक काय विवरण ता० १ ३-६१ से २८-२-६२ तक

(१) दिनाक २८-२-६२ को छात्रो की सख्या-७५

	छात्र	छात्रा	योग
वर्ग ५ मे	२	३	५
४	८	१२	२०
३	१२	६	१८
,, २	४	६	१०
,, १	१२	१०	२२
	३८	३७	योग ७५

(२) सन् १९६१ की वार्षिक परीक्षा मे ४३ छात्र सफल हुए।

(३) कार्यकर्त्ताओ की सख्या—२ वेतनिक

(४) विद्यालय भवन—एक गोला मासिक भाड़ा पर लिया गया है। इसी मे विद्यालय सचालित हो रहा है तथा सेवाश्रम' कार्यालय भी है।

(५) पुस्तकालय एव वाचनालय –

(क) 'सेवाश्रम' मे एक पुस्तकालय भी चलाया जा रहा है जिसमें ट्रैक्ट आदि मिला कर कुल लगभग २५ पुस्तके हैं। 'आर्य मित्र तथा 'आर्यावर्त' पत्रिकाए आती हैं।

(ख) स्वामी विरजानन्द बाल विकास क्लब —इस क्लब के तत्वावधान मे प्रति शुक्रवार को वाद-विवाद सभा का सफल आयोजन किया जाता है।

(६) सभा' द्वारा स्वीकृत और घोषित सभी पर्वों को सोत्साह मनाया गया। बसन्तोत्सव के अवसर पर प्रीतिभोज का आयोजन किया गया जिसमे नगर के गण्यमान्य सज्जन सम्मिलित हुए।

(७) सहायता एव सहयोग —

अभी हाल ही त्रिभुवन ग्राम विकास केन्द्र की ओर से सस्था को निम्न लिखित वस्तुए प्राप्त हुई हैं—

हाफ पैन्ट ७ हाफ कमीज ७, कुदाल १ खुरपी ४, रूमाल बुनने का फरमा, सूत कातने की तकली रिंगबौल फुटबौल १, केरम बोर्ड कपडे १५ गज बागबानी के निमित्त खाद इत्यादि। विद्यालय की स्वीकृति एव सहायता के लिये पत्र व्यवहार चल रहा है। श्री बी० डी० ओ० साहब तथा स्थानीय शिक्षा पदाधिकारी महानुभावो ने शीघ्र ही स्वीकृति एव सहायता का आश्वासन दिया है।

(८) फर्नीचर्स एवं अन्य सामान -

संस्था में पूर्व से निम्न लिखित सामान है—६ बेंच, कुर्सी ४, टेबुल २, डेस्क ३, आलमारी १ कृष्णपट २, घंटी १, लोटा १ एव बाल्टी २ विद्यमान हैं।

(९) सेवाश्रम एव विद्यालय का निरीक्षण

श्री ब्रह्मानन्दजी, सबइन्सपेक्टर ग्रोफ स्कूल्स और श्री दिवाकर कान्ले S E O और, तथा अन्तर्राष्ट्रीय धर्मसंघ की एक अमेरिकन प्रचारिका (देवी)

द्रष्टव्य — छात्राओ को रुमाल आदि बुनना सिखलाने के लिये त्रिभुवन ग्राम विकास केन्द्र की ओर से एक अध्यापिका आंशिक समय विद्यालय को देती है।

उड़ीसा प्रचार विवरण ताः १ ३-१९६१से २८-२-१९६२ तक

१—शुक्रा मु डा—यह सुन्दर गढ़ केन्द्र में कार्य करते हैं इनके द्वारा इस साल ४७ ईसाई नर नारियों की शुद्धि हुई। आदि वासी सेवा मडल नाम का एक अनुष्ठान भी चला रहे हैं। बारह स्थानों में आदि वासी सास्कृतिक मेला का भी आयोजन किया, पिछले साल गार्डबीरा ईसाई मिशन के पास जो मेला लगा था मिशन के पादरियों ने मेला पर आक्रमण कर दिया। मु डा जी ने उस पर केस दायर कर दिया है जो अब तक चल रहा है, इनको दक्षिणा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से मिलती है।

२—बिरसा मुन्डा यह महीरू डीह केन्द्र से कार्य करते हैं, इनके द्वारा इस साल १२५ ईसाई नर नारियों की शुद्धि की गई। इनको दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियार पुर से दक्षिणा मिलती है।

३—स्वामी नित्यानन्द वानप्रस्थी सन्डोपुर जिला बालेश्वर केन्द्र से कार्य करते हैं वैदिक कुटीर नाम का एक आश्रम बना कर यहीं से यहा के हिन्दुओं में सुधार वाद का प्रचार करते हैं और इनकी देख रेख में एक दयानन्द दातव्य औषधालय भी चलता है। इस साल ३ तीन हजार से भी अधिक रोगियों को औषध वितरण किया। स्वामी जी का भोजन व्यय स्त्री आर्य समाज कलकत्ता भवानी पुर की ओर से मिलता है।

४—चन्दसिंह किशान - गुढीयाली केन्द्र (सुन्दर गढ़) दयानन्द सेवा आश्रम से कार्य करते है। इनके द्वारा १७ ईसाई नर नारियो की शुद्धि की गई। रात्रि में एक पाठशाला भी चला रहे हैं जिसमें ४२ बच्चे तथा स्त्रिया पढती हैं और साथ ही साथ औषध वितरण भी करते हैं। इस साल ८२७ नर नारियों को औषध दिया। आप एक अच्छे चिकित्सक हैं। इनको दक्षिणा भारतीय सरक्षणी समाज राजगगपुर से मिलती है।

५—फिर नाथ भगत—ये अन्डाली जाम बहाल केन्द्र से कार्य करते हैं। ये यहा एक रात्रि पाठशाला चलाते हैं दिन में आदि वासियों के गाव में जा जाकर प्रचार तथा औषध वितरण भी करते हैं। इनको दक्षिणा भारतीय सरक्षणी सभा राज गगपुर से मिलती है।

६—बुधु भगत—कोके रमा (सुन्दर गढ़) केन्द्र से कार्य करते है इनके द्वारा रात्रि पाठशाला तथा दातव्य औषधालय चलाया जा रहा है एव दिन में आदिवासियो में प्रचार कार्य करते है इनको दक्षिणा भारतीय सरक्षणी समाज राज गगपुर से मिलती है।

७—नेम्हा भगत—ये लु गम (सुन्दर गढ) केन्द्र से कार्य करते हैं। इनके द्वारा रात्रि पाठशाला चलती है तथा दिन में तथाकथित आदिवासी ईसाई क्षेत्रोंमें प्रचार कार्य करतेहै इनको भी दक्षिणा भारतीय सरक्षणी समाज राजगगपुर से ही मिलती है।

८—सनातन साहु—यह राजगग पुर (सुन्दर गढ) केन्द्र से कार्य करते हैं। सुन्दर गढ जिला का सारा कार्य सचालन इन्ही के द्वारा होता है

आप एक अच्छे नैष्ठिक कर्मठ कठोर कार्य कर्ता हैं इनको दक्षिणा भारतीय सरक्षणी समाज राजगगपुर से ही मिलती है।

९ –महेश्वर राउत—वैदिक आश्रम पानपोष की ओर से कार्य करते हैं। आश्रम की देख रेख तथा प्रचार कार्य भी करते हैं। इनको दक्षिणा तथा भोजन व्यय आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर से मिलता है।

१०—श्रीदिवेश पाणि—वैदिक आश्रम वेदव्यास केन्द्र से कार्य करते हैं। आश्रम पाठशाला दातव्य औषधालय चलाने के साथ ही साथ प्रचार कार्य भी कर लेते हैं। इनको भोजन व्यय वैदिक आश्रम पानपोष से मिलता है।

११ –हृषिकेश चन्द—वैदिक आश्रम पानपोष की ओर से कार्य करते हैं ये बडे अच्छे कर्मठ सेवक हैं इनकी सेवा से स्थानीय सभी लोग खूब खुश रहते है आश्रम तथा गोशाला बागबगीचों का भार इन्हीं पर है भोजन व्यय इनको आश्रम की ओर से मिलता है।

अवैतनिक कार्य कर्ता

१२ –श्री रघुनाथ महापात्र - यह पटना गढ जिला (बालगीर) की ओर से प्रचार कार्य करते हैं। इनका प्रचार का बडा ही अच्छा प्रभाव पडता है। ये एक अच्छे कविराज है प्रचार के साथ ही साथ गरीबों को मुफ्त चिकित्सा तथा औषध वितरण भी करते हैं।

१३—मुक्तेश्वर पडा- सोहला (सम्बलपुर) केन्द्र से कार्य करते हैं इनके द्वारा इस साल १२८ स्थानों में प्रचार हुआ। ये यहाँ की स्थानीय भाषा में बडा ही सुन्दर व्याख्यान देते हैं।

१४—गोपाल शर्मा ये बढ गढ केन्द्र से कार्य करते हैं। यह पहले पौराणिक कान फुकने वाले गुरुगोशाई थे अब ये आर्य समाज के प्रभाव में आकर वैदिक धर्मका बडा ही सुन्दर ढग से प्रचार कर रहे हैं।

१५—भवानी शकर साहु—काटा पाली (बढ गढ) केन्द्र से कार्य कर रहे हैं। यह एक सफल कविराज है। यह गरीबों का मुफ्त इलाज करते हैं साथ ही साथ उनमें वैदिक धर्म का सदेश भी देते रहते हैं इससमय पाच सत्सग मडली अपने निकट ग्रामो में चला रहे हैं जिनमें सत्यार्थ प्रकाश पाठ इत्यादि भी रखते हैं।

१६ –श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती -- उडीसा प्रान्त का सारा कार्य जो ऊपर बताया गया है सब इन्ही के द्वारा हो रहा है। विशेष कार्य जो स्वय किया है वह यह है। इस साल १८७ स्थानो मे प्रचार करना तथा स्वय व्याख्यान देना ५५ ईसाइयों की शुद्धि करना, पांच वेद पारायण महायज्ञ करवाना तथा ३ तीन नये आर्य समाजो की स्थापना करना, तीन विवाह सस्कार ८८ उपनयन ७ मु डन चूडा कर्म करवाया, एक दातव्य औषधालय की स्थापना की। बाढ पीडित क्षेत्रो में सेवा कार्य किया विशेष कर २५-२-६२ को एक ईसाई प्रचारक को शुद्ध कर आर्य प्रचारक बना रहे हैं उसका नाम इस समय विचित्र पाणि अही रखा गया है जो उलवा ग्राम का रहने वाला है इसने अपने परिवार सहित शुद्ध होकर वैदिक धर्म को बडी ही श्रद्धा से स्वीकार कर लिया।

"आय शुद्धि विभाग"

रकम आय	नाम पता
२०४०)	सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली
६४८)	अ० भा० दयानन्द साल्वेशन मिशन
६००)	आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालधर
६००)	आर्य स्त्री समाज भवानीपुर कलकत्ता
१२०)	श्री पवन कुमार बन्सल काटा बाजी बालगीर
२४०)	श्री श्याम सुन्दर जी सिन्धी आर्य समाज कलकत्ता
३६००)	भारतीयसास्कृतिक सरक्षणी समाज राज गगपुर (सुन्दरगढ़)

१०५) रायसाहब बलदेव साहु लोहर दगा रांची
५००) लालचन्द बाहरी ट्रस्ट शिबपुर हावडा
११० अन्यान्य महानुभाव दाताओ से

८५६३) कुल आय

इसके अतिरिक्त दातव्य औषधालय के लिये ५००) की दवाईया बृटिश मेडीशन एण्ड फारमिसियल कम्पनी कलकत्ता ने दी।

व्यय शुद्धि प्रचार विभाग

रकम नाम
१०२०) शुक्रा मु डा —दक्षिणा
७२०) स्वामी ब्रह्मानन्द-भोजनादि
६८४) बिरसा मुन्डा दक्षिणा
६००) स्वामी नित्यानन्द भोजनादि
३००) महेश्वर राउत ,,
३०१) श्री हृषिकेश चन्द ,,
३००) श्री श्रीदिवेश पाणि ,,
७२०) श्री सनातन साहु दक्षिणा
६६०) श्री तेम्बा भगत ,,
५४०) श्री फिरनाथ भगत ,,
५४०) श्री बुढ्‌ु भगत
५४०) श्री चन्दुसिंह किसान दक्षिणा
४८०) भोजनालय शुद्धि विभाग तथा अतिथियो को
४८०) पाठशाला मे बच्चो के लिये पुस्तक आदि
२६८) माग व्यय प्रचारक मण्डली
८१) पत्र व्यवहार
५२७) विशेष शुद्धि व्यय

८७६०) रुपया कुल जोड

(विशेष शुद्धि व्यय ५२७) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से प्राप्त)

उड़ीसा बाढ़ पीड़ित सहायता तथा सेवा कार्य

उडीसा बाढ पीडित क्षेत्रो मे लगातार सेवा कार्य दो महीना तक चलता रहा। स्वामी ब्रह्मानन्द जी के तत्वावधान मे सोडपुर (जिला बालेश्वर) ठाकुर पाटणा (जि० कटक) मे सहायता केन्द्र खोला गया। इस कार्य के लिये नीचे लिखे निम्न प्रकार से दान मिला एव वितरण किया गया।

आय

१०००) हिन्दुस्तान चेरिटेबिल ट्रस्ट कलकत्ता १२ से
१५१) जे नागरदास कम्पनी केनिग स्ट्रीट कलकत्ता
१०१) नागरदास हरिदास १० शरतबोश रोड कलकत्ता
१००) सुन्दरदास ठाकुर सी ब्रदर्स अरमनी स्ट्रीट कलकत्ता
५०) आर्य स्त्री समाज भवानीपुर कलकत्ता
५०) आर्य स्त्री समाज कलकत्ता
५५) अन्यान्य लोगो से
७३) आर्य समाज बडा बाजार कलकत्ता

१५८०) कुल जोड

व्यय

४३२) का चावल खरीद कर ५८७ परिवार को दिया गया
५५७) का कपडा खरीद कर ३५८ नरनारियो को दिया गया
२८४) का औषधी खरीद कर ११३१ नर नारियो को दिया गया
१५६) का यातायात खर्च (ट्रेन बस नौका तथा कुली) मे
१३२) का गृह विहीन लोगो को सहायता दी गई।
१६) का पत्र व्यवहारादि

१५८०) कुल व्यय

इसके अतिरिक्त ५३५ पुराना वस्त्र बाटा गया और जे नागरदास कम्पनी की सहायता से सोडपुर (बालेश्वर) केन्द्र मे अब तक दयानन्द धर्मदा औषधालय चल रहा है।

मेला प्रचार

पानपोष स्थानीय (जि०सुन्दरगढ) मेला उडीसा

का प्रसिद्ध मेला है जो ४ मार्च से ३० मार्च तक लगता रहा इस अवसर पर वैदिक आश्रम की ओर से ऋषि बोध उत्सव मनाने के साथ साथ सामवेद पारायण महायज्ञ मेला प्रचार होता रहा। ऋषि लगर खोले गये जिसमे सैकडो नर नारिया नित्य प्रति भोजन करते थे। प्रभातफेरी मेला मैदान मे प्रचार अत्यन्त प्रभावशाली था इस कार्य के लिये जे नागर दास कम्पनी केनिग स्ट्रीट कलकत्ता ने दो मन हवन सामग्री १०१) रु० आर्य समाज जमसेदपुर १००) रु० श्री चिरजीलाल बाहरी शिवपुर कलकत्ता १००) रु० श्रीमती मोहनी देवी थापड कलकत्ता ५०) रु० श्रीमती सावित्री देवी मलहोत्रा कलकत्ता ५१) रु० आर्य स्त्री समाज कलकत्ता ३८) रु० स्त्री समाज भवानीपुर कलकत्ता राउरकेला के दानियो से ७ बोरा दाल तथा चावल राज गगपुर दानियो से ४ बोरा दाल तथा चावल मिला।

जिला बालागीर मे जनवरी ३१ से ६ फरवरी तक अथर्ववेद पारायण महायज्ञ दयानन्द मेला लगाया गया। ऋषि लगर मे हजारो नर नारिया मुफ्त भोजन खाते रहे नित्य प्रति सात दिनो तक दोनो समय। प्रभातफेरी मे ५०० से भी अधिक नर नारिया भाग लेते रहे। प्रचार कार्य दिन रात लगातार रहता था।

कुम्भ प्रचार

८-१०-६१ की अन्तरग सभा मे आगामी मार्च मे होने वाले हरिद्वार कुम्भ पर प्रचार की व्यवस्था करने का विषय विचारार्थ प्रस्तुत होने और आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब तथा आर्य प्रति० सभा उत्तर प्रदेश के साथ इस सभा का पत्र व्यवहार चले जाने पर निश्चय हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश प्रचार की व्यवस्था करे और सार्वदेशिक सभा स्वय साहित्य आदि की सहायता दे और अन्य प्रान्तीय सभाओ से भी सहायता दिलाने का यत्न करे। तदनुसार परोपकारिणी सभा और वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर आदि को सहायता देने की प्रेरणा की गई। वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर ने उन उपदेशको और सन्यासियो के निवास तथा भोजन का प्रबन्ध करने का आश्वासन दिया जो वहा पहुचेगे। इसके अतिरिक्त वितरण के लिए बहु सख्या मे ट्रैक्ट देने का भी वचन दिया। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश को इस आश्वासन से अवगत किया। उक्त सभा प्रचार का आयोजन कर रही है।

नैपाल प्रचार

इस वर्ष सभा के उपमन्त्री श्री प० क्षितीश कुमार जी वेदालकार नैपाल भ्रमण के लिए गए। उन्होने वहा के आर्य समाज के कार्य का निरीक्षण किया। उनकी रिपोर्ट १४-१-६२ की अन्तरग में प्रस्तुत हुई। सभा ने एक विस्तृत योजना बनाने का कार्य उनके सुपुर्द किया हुआ है। नैपाल मे प्रचार विस्तार आवश्यक है परन्तु ऐसा करते हुए वहा की विशेष स्थिति की उपेक्षा न की जा सकेगी।

कार्यालय

सभा का कार्यालय दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली मे स्थित है। सभा कार्यालय मे ५ लेखक और ३ सेवक कार्य करते हैं। इस वर्ष सामान्य पत्र व्यवहार के अतिरिक्त समाजो को निम्नलिखित परिपत्र जारी किए गए —

१-८-६१

सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस २६-८-६१ को मनाने विषयक विस्तृत प्रोग्राम सहित—

१६-८-६१

इस परिपत्र मे निम्न विषयो के सम्बन्ध मे आदेश जारी किए गए।

१—उपनियम धारा स० ४ का परिपालन करना।

२—आर्य समाज की वेदी की पवित्रता की रक्षा करना।

३—आर्य मन्दिर विक्रय करना।

४—आर्य वीर दल स्थापना दिवस मनाना।
५—सभा के प्रलभ्य प्रकाशन क्रम करना।

२०—११—६१

इस परिपत्र में बिहार के पीड़ितों की सहायतार्थ बिहार सभा की सहायता करने, एकमात्र सार्वदेशिक आर्य वीरदल को मान्यता देने, संशोधित आर्य ध्वज गीत को अपनाने, ओमानन्दतीर्थ से सावधान रहने, आर्य समाज को सामूहिक रीति से प्रचलित राजनीति से पृथक् रखने की नीति पर दृढ़ रहने की प्रेरणा की गई थी। इसी परिपत्र में १९६२ की आर्य पर्व सूची अंकित की गई थी।

आर्य वीरदल दिल्ली का ३१ मार्च ६२ तक का विवरण निम्न प्रकार है।

१—१८ ११'६१ से २२-११-६१ तक २० स्वयं सेवकों द्वारा गढ़मुक्तेश्वर मेले पर प्रबन्ध, घाटों पर इन्तजाम किया, खोये हुये बच्चों को अभिभावकों के सुपुर्द किया और फ्री औषधालय के द्वारा श्री हकीम नानक चन्द ने जनता की सेवा की।

२—८-१२ ६१ नगर कीर्तन आर्य समाज करोल बाग श्री पन्नालाल जी का प्रबन्ध २५ आर्य वीरों के साथ।

३—८-१२-६१ नगर कीर्तन आर्य समाज बाजार सीताराम का प्रबन्ध ५ आर्य वीरों के साथ। प्रधान सन्चालक आर्य वीरदल श्री हकीम नानक चन्द जी द्वारा।

४—२५ १२-६१ श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के अवसर पर १७ आर्य वीर बिड़ला मिल आर्य वीरदल जयकिशन की अध्यक्षता में ५ आर्य वीर आर्यपुरा, ४ आर्य वीर सोहन गंज, ६ स्वयं सेवक महावीरदल श्री विशनस्वरूप जी गोटे वाले प्रबन्धक।

उपरोक्त सभी कार्यवाही श्री हकीम नानक चन्द जी की उपस्थिति में हुई।

कानूनी परामर्श दाता

इस वर्ष श्रीयुत महेन्द्रसिंह जी वेदी ने इस सभा के अवैतनिक कानूनी परामर्श दाता के रूप में कार्य किया। उनका सहयोग बड़ा मूल्यवान सिद्ध हुआ। उनकी सेवाओं के लिए सभा उन्हें धन्यवाद देती है।

इन्कम टैक्स से मुक्ति का प्रमाण पत्र प्राप्त किया जाना

सभा के लिए इन्कमटैक्स से मुक्ति का प्रमाण पत्र प्राप्त किए जाने के लिए गत ४ वर्ष से कार्यवाही चालू है। इन्कमटैक्स विभाग में प्रार्थना पत्र दिया गया था तथा तत्सम्बन्धी आवश्यक सामग्री समय २ पर उक्त विभाग को दी जाती रही। इस वर्ष इस विभाग ने सभा को २३३ वापस किया जो कई वर्ष हुए मोहनी शुगर मिल्स के डिवेंचर्स पर इन्कमटैक्स का काट लिया गया था। यह कार्य श्रीयुत प्रो० रामसिंह जी एम० ए० की प्रेरणा पर श्रीयुत कंवरसैन गुप्त वकील इन्कमटैक्स नया बाजार दिल्ली के आधीन किया गया था जो बिना कोई पारिश्रमिक लिए सेवा भाव से प्रेरित होकर बड़े परिश्रम से इस कार्य में सलग्न रहे। यह सभा इस सेवा के लिए श्री गुप्त जी को धन्यवाद देती है। स्थायी प्रमाण-पत्र की प्राप्ति का यत्न जारी है।

उपसंहार

वर्ष का विवरण समाप्त करने से पूर्व यह लिखते हुए अत्यन्त दुःख होता है कि इस सभा के भूतपूर्व प्रधान श्री स्वामी अभेदानन्द जी महाराज का असह्य वियोग सहन करना पड़ा। श्री स्वामी जी इस सभा की ओर से ५-१०-६० को प्रचार कार्य तथा संघठन कार्य के लिए आर्य सभा मोरीशस की विशेष प्रार्थना पर मौरीशस गये थे। उन्होंने श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी का स्थान ग्रहण करके अपनी

योग्यता और कार्य कुशलता का अच्छा परिचय दिया था। श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज उनके यहां रहत निश्चिन्त थे। दव दुर्विपाक से १६ ७-६१ को वह हमसे सदैव के लिए छीन लिए गये। वस्तुत आर्य जगत् की उनके निधन से बड़ी क्षति हुई है।

इनके अतिरिक्त श्री दत्तात्रेय प्रसाद वकील हैदराबाद, श्री धारेश्वर जी बी० ए० हैदराबाद, श्री सेठ विक्रमसिंह कूर जी (बम्बई), श्री प० जियालाल जी (अजमेर), श्री स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक, श्री बा० व्रजलाल जी, श्री गोपाल नारायण सोमानी (जयपुर, और श्री स्वामी कल्याणानन्द जी का वियोग सहन करना पड़ा।

कालीचरण आर्य
सभा मन्त्री

आकाशवाणी की हिन्दी अब भी सरल ही है

[श्री रामधारी सिंह 'दिनकर']

रेडियो की हिन्दी काफी आसान है। अरबी-फारसी के शब्दों का बहिष्कार उसमें पहले से ही नहीं है। रेडियो से रात के समय १५ मिनट की जो समाचार बुलेटिन प्रसारित होती है उसमें औसतन १५० से २०० तक शब्द अरबी फारसी व अंग्रेजी के होते हैं। बाकी शब्द ऐसे होते हैं, जिनका प्रचलन बोलचाल की भाषा मे है। इसके सिवा कुछ पारिभाषिक शब्दो का भी प्रयोग होता है जो संस्कृत के आधार पर बनाए गए हैं। जैसे—अणु-परीक्षण निश्शस्त्रीकरण, राष्ट्रसंघ, सुरक्षा परिषद्, लोकसभा, राज्यसभा, संसद् इत्यादि। यदि इन शब्दो को उर्दू भाषी लोग स्वीकार नही करते तो हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी या नही यह कह सकना कठिन है।

हिन्दी मे अरबी-फारसी के कितने शब्द है इसकी गिनतीनही की जा सकती। इन सभी शब्दो को हिदी में चलते रहना चाहिए और सारा देश संस्कृत के जिन शब्दो को स्वीकार करता है उन शब्दों को उर्दू भाषियो को भी स्वीकार कर लेना चाहिए।

हिन्दी क्षेत्रीय नहीं

श्री दिनकर ने आगे कहा कि सूचना मन्त्री ने अपने लोकसभा वाले भाषण में कहा था कि दिल्ली से जो हिन्दी प्रसारित की जाती है वह क्षेत्रीय है और उसे उर्दू के करीब होना चाहिए। लेकिन इसी विषय पर ८-१० वर्ष पहले बम्बई के कुछ लोगो ने जो रिपोर्ट तैयार की थी उसमें उन्होंने कहा था कि क्षेत्रीय हिन्दी वह है जो संस्कृत निष्ठ है। सच्ची बात तो यह है कि हिन्दी सर्वत्र एक सी है। जो हिन्दी सारे देश में चलाई जाएगी उसी हिन्दी का प्रचार हिन्दी प्रान्तों में भी होना चाहिए।

हिन्दी के अभिभावक अब हिन्दी भाषी नही रहे उसका अभिभावक सारा देश है और भाषा के बारे में सारे देश का जो मन हो उसे हिन्दी और उर्दू भाषी लोग मान लें, इसी में कल्याण है।

हिन्दुस्तानी का कोई हिमायती नहीं

हिन्दी उर्दू के विवाद का जिक्र करते हुए 'दिनकर' जी ने कहा कि हिन्दुस्तानी का समर्थन न तो उर्दू वाले करते हैं और न हिंदी के पक्षपाती। गांधी जी ने जब हिन्दुस्तानी चलाना चाही थी तब उसका विरोध टण्डन जी ने भी किया था और डा अब्दुल हक ने भी।

हिन्दुस्तानी का आन्दोलन जब जब देश में उठा है तब-तब उससे देश को लाभ कम और हानि बहुत पहुंची है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से हिंदी और उर्दू एक ही भाषा है। लेकिन हम अपना सिर जितना भी पीटें ये दोनों भाषाएं भावनात्मक कारणों से दो हो गई। कोई भी उर्दू भाषी हिन्दी को अपनी मादरी जबान नही मानता और हिन्दी में भी विरले ही लोग होंगे जो उर्दू को अपनी मातृ भाषा मानने को तैयार हो। इस स्थिति पर मुहर संविधान ने भी लगा दी। उसमें उर्दू का स्थान स्वतन्त्र भाषा के रूप में है और स्वतन्त्र रूप में उर्दू की सेवा की जाए तो इससे किसी को विरोध नही होगा। मगर देश में ऐसे लोग हैं जो यह जानते हैं कि उर्दू की तरक्की का सबसे आसान तरीका यह है कि उसे हिन्दी के साथ बांध दिया जाय। मेरा निवेदन है कि यही रास्ता सबसे कठिन है।

संस्कृत ही क्यों?

सारा देश संस्कृत की ओर क्यों जा रहा है? इसका कारण यह है कि आधुनिक भारतीय भाषाओं में नए शब्द गढ़ने की शक्ति नही रही। उर्दू वाले अपनी पसन्द के शब्द चाहे तो उन्हें अरबी-फारसी की ओर जाना पड़ेगा और बाकी देश की भाषाएं

(शेष पृ० ४५ पर)

देहली कन्वेंशन

अणु अस्त्र विरोधी कन्वेंशन १६, १७ और १८ जून ६२ को गांधी शान्ति प्रतिष्ठान' के तत्वावधान में नई दिल्ली में हुआ जिसका उद्घाटन भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने किया। कन्वेंशन की परिसमाप्ति एक वक्तव्य के द्वारा हुई जिसमें समस्त ससार के प्रगतिशील एव मानवता के प्रेमी स्त्री-पुरुषो के विचारो और भावनाओ की सामान्य रूप में अभिव्यक्ति देख पडती है। कतिपय बातो पर मतभेद भी देख पडा। परन्तु वह मतभेद उन साधनो से सम्बद्ध था जो सार्वभौम निःशस्त्रीकरण के लिए प्रयुक्त किये जा सकते हैं। आज के ससार पर असाधारण शक्ति का प्रभुत्व है और शक्ति का आकर्षण बडा दुर्भाग्यपूर्ण है। शक्ति की इस भावना की जनतन्त्र के सिद्धान्त के साथ सगति नहीं बैठती एकमात्र जिस पर उपयुक्त विश्व सरकार (चक्रवर्ती राज्य) सम्भावित हो सकती है। यह कहना कठिन है कि ऐसी तीसरी शक्ति का निकट भविष्य में प्रादुर्भाव होगा या नही जिसमें शक्तिसम्पन्न धडो की मध्यस्थता करने की क्षमता होगी। तटस्थ राष्ट्र प्रबल नैतिक और राजनैतिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं परन्तु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र उन मामलो में जिन्हें वे अपनी तथा अपने साथियों की सुरक्षा केलिए मौलिक समझते हैं अपनी नीतियों और आयोजनोमें परिवर्तन कर देंगे ऐसा सम्भव नही जान पडता। सोवियत सघ ने अणु आयुधों का लगातार परीक्षण पुन आरम्भ किया था और ये परीक्षण उस भावना के द्योतक थे जिसका परिचय शक्ति सम्पन्न राष्ट्र तटस्थ राष्ट्रों के सुझावो पर विचार करते समय दिया करते हैं।

दिल्ली के कन्वेंशन ने भारत सरकार को प्रेरणा की है कि वह सयुक्त राष्ट्र सघ के द्वारा अणु आयुधों के परीक्षणो और राष्ट्रों के मध्य उनके आदान-प्रदान को स्थिर रूप से बन्द कराने की तत्काल चेष्टा और व्यवस्था करे। कन्वेशन ने यह भी सुझाव दिया है कि वरिष्ठ व्यक्तियो का एक शिष्ट मण्डल मास्को वाशिंगटन लन्दन और पेरिस जाय और अणु आयुधों का परीक्षण और उत्पादन बन्द करदें। इन आयुधो के परीक्षणों और उत्पादन के विरुद्ध विश्वमत के निर्माण के लिए सब कुछ कहा जा सकता है। विश्वमत के निर्माण के साथ ही अणु आयुधों के नियन्त्रण के विषय में महान शक्तियों के मध्य जो मतभेद व्याप्त है उसके निराकरण के लिए भी सच्चा प्रयत्न होना चाहिए। महान् शक्तियों पर अणु आयुधों के परीक्षण को बन्द करने की दिशा में नैतिक प्रेरणाओं का कोई प्रभाव पडेगा यह बात सदिग्ध है। इसका कारण यह नहीं है कि महान् शक्तिया समस्त नैतिक प्रेरणाओं के लिए अभेद्य हैं और वे अणु आयुधों के परीक्षणोंके परिणामों के प्रति उदासीन हैं। कारण यह है कि वे निःशस्त्रीकरण के विषय पर समझौते के अभाव में अधिक घातक अस्त्रों की खोज के कार्य को बन्द करने के लिये उद्यत नहीं हैं। श्री राजगोपालाचार्य ने सुझाव दिया था कि जो राष्ट्र अणु

आयुधों के परीक्षणों पर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध को तोड़े वह उससे निकाल दिया जाये। देहली कन्वेंशन ने इस सुझाव को रद्द करके ठीक ही किया क्योंकि इस सुझाव में संसार की वास्तविक स्थिति की नितान्त उपेक्षा प्रतिलक्षित होती है। एक सुझाव यह भी था कि भारत सरकार प्रशान्त महासागर तथा अन्य परीक्षण क्षेत्रों मे नागरिकों के जहाज को भेजे। इस सम्बन्ध में भी कन्वेंशन ने कोई सुनिश्चित सिफारिश नहीं की है।

एक पक्षीय निःशस्त्रीकरण व्यावहारिक नहीं है। जब तक दूसरे देश ऐसा नहीं करते तब तक कोई राष्ट्र अपनी सैनिक शक्ति को कम करने के लिए उद्यत न होगा। डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने सुझाव दिया था कि भारतवर्ष अपने को निःशस्त्र कर दे जिससे कि भय और आशंका के वातावरण के निराकरण में सहायता मिले जो निःशस्त्रीकरण के मार्ग में बाधक बन रहा है। यह सुझाव स्पष्टत अव्यावहारिक है। इस प्रश्न पर प्रतिनिधियो में मतभेद था अत कन्वेंशन ने डा० राजेन्द्रप्रसाद जी के उद्घाटन भाषण पर विशेषत उसके उन अंशो पर जिनमे महात्मा गाधी की निःशस्त्रीकरण विषयक भारत तथा अन्य राष्ट्रों को दी गई चुनौती की चर्चा थी गम्भीरता पूर्वक विचार की प्रेरणा की। निःसन्देह वर्तमान स्थिति मे महात्मा गाधी का अहिंसा और आत्म-बल का आदर्श व्यावहारिक नहीं है। यह तभी व्यावहारिक हो सकता है जब कि प्रशिक्षण के द्वारा मानव-स्वभाव का कायापलट हो जाय और ऐसा समाज बन जाय जो संग्रह प्रवृत्ति का उन्मूलन कर दे। इसी बीच में संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से सामूहिक सुरक्षा और प्रभावशाली निरीक्षण और नियन्त्रण के अधीन निःशस्त्रीकरण की व्यवस्था के लिये प्रयत्न होना चाहिए। प्रत्येक राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि वह निःशस्त्रीकरण के लिए कार्य करे। उसका यह भी कर्त्तव्य है कि वह अपनी सुरक्षा की उपेक्षा न करे। हम सदैव आक्रमण से रक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की सामूहिक सुरक्षा प्रणाली पर अवलम्बित नहीं रह सकते क्योंकि सुरक्षा परिषद् सत्ता से प्रभावित है और वह निष्पक्ष रूप में अपने दायित्व की पूर्ति मे असमर्थ भी हो सकती है। इस देश को धीरे २ निःशस्त्र करने के स्थान में अपनी सैनिक शक्ति में वृद्धि करनी होगी जिससे कि वह अपनी सीमाओं की आक्रान्ताओं से रक्षा करने में सक्षम रहे।

निस्सन्देह आत्म-बल शारीरिक बल से ऊंचा होता है परन्तु यह एक दिन में तो आ नहीं सकता। भारत ने बल प्रयोग का आश्रय लिए बिना स्वतन्त्रता प्राप्त की है इसका अर्थ यह नहीं है कि सैनिक शक्ति के बिना इसकी रक्षा या इसकी सुरक्षा सुनिश्चित हो सकती है। शक्ति स्वत अच्छी या बुरी नहीं होती। भारत ने गोआ के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही की और श्रेष्ठ उद्देश्य के लिए सैनिक शक्ति के प्रयोग का भव्य उदाहरण प्रस्तुत किया। कोई समय आ सकता है जब कि मानव जाति बल प्रयोग को तिलांजलि दे दे। इस बीच में साम्राज्यवादिनी शक्तियों को यह विश्वास दिला कर कि युद्ध से लाभ नहीं होता उनके घृणित हथकण्डों को रोकने का प्रयास होना चाहिये।

(ट्रिब्यून २० जून ६२)

संस्कृत की ओर जाएगी। (पृ ४३ का शेष)

तीसरी राह यह है कि अंग्रेजी शब्दों को ही हम रख ले। लेकिन यह राह किसी को भी पसन्द नहीं है। बिना आपसी राय-मशविरे के ही गुजरात, महाराष्ट्र प० बंगाल और हिन्दी प्रान्तों में जो शब्द बन रहे हैं वे बहुत समान है और उनका आधार संस्कृत भाषा है।

दिनकर जी ने अन्त में कहा कि हिन्दी भाषियों की भी अपनी भावनाएं हैं। हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने से उसकी मातृभाषा वाली हैसियत खत्म नहीं हो गई। हिन्दी की निन्दा सुनकर १६ करोड़ हिन्दी भाषियो को कष्ट पहुँचता है और इसकी प्रति क्रिया एकता के लिए अच्छी नहीं समझी जानी चाहिए। (राज्य सभा में भाषण २६-६ ६२)

उत्तर और दक्षिण मिलकर रहें

श्री डा० कैलाशनाथ काटजू

पिछले दिनों राज्य सभा में भारतवर्ष की राजनैतिक एकता बनाए रखने के महत्त्व पर जो बहस हुई थी वह मनोरंजक और विचारणीय थी। एक ओर द्रविड मुन्नेत्तर काजगम का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया जिसका ध्येय दक्षिण को उत्तर से पृथक करा देना है। दूसरी ओर यह उत्साह वर्द्धक दृश्य देख पड़ा कि पृथकता के दावे का सदन के प्रत्येक अंग ने प्रबल विरोध किया।

यह बड़े सन्तोष की बात है कि देश के समस्त राजनैतिक वर्ग और दल (चाहे वे दक्षिण पन्थी हों या वाम पथी) देश की प्रत्येक प्रकार की एकता को (राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और भावात्मक) सर्व प्रभुता सम्पन्न स्वतन्त्र भारत के अस्तित्व के लिए अनिवार्य समझते हैं। परन्तु आत्म-सन्तोष की इस अवस्था में हमें एक आवश्यक तथ्य की उपेक्षा न करनी चाहिए। राष्ट्रीय जीवन में यह बात महत्त्वपूर्ण होती है कि राजनैतिक एवं भावात्मक एकता की अनुभूति समस्त व्यक्तियों को समानरूप से हो और वे समान रूप से ही उसका आदर करें। इसमें बाध्यता का कोई तत्त्व न होना चाहिए। यह प्रत्येक नागरिक के अन्तस्तल से निकली हुयी विशुद्ध प्रेरणा होनी चाहिए।

प्रत्येक की भावना यह होनी चाहिए कि वह एक ही भारत माता की सन्तान है और भारत के समस्त लोगों में भाई चारे की भावना प्रदीप्त रहनी चाहिए। इस भावना के बिना हमारा जीवन सुखी नहीं रह सकता। देश के लोगों में घनिष्ट भ्रातृभाव होना चाहिए। धारा सभाओं और राजनैतिक कान्फ्रेंसो में होने वाले उच्चस्तरीय वाद-विवादों का अपना महत्त्व होता है जिसकी शैक्षणिक उपयोगिता होती है।

प्रचार

राजनैतिक और सांस्कृतिक एकता की अपनी विशेषता होती है जो प्रत्येक भारत निवासी पर अंकित होनी चाहिए और जो व्यक्ति पृथकता और सम्बद्ध-विच्छेद की चर्चाओं से पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं उनके विचारों को बदलने का यत्न होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि समस्त वैध साधनों से प्रेस और प्लेट फार्म से एकता के पक्ष में प्रबल प्रचार किया जाय। शेष भारत के प्रमुख २ व्यक्ति तामिल नाड में जायें, सहस्रों स्थानीय लोगों से मिलें उनमें भाषण दें, उनके समक्ष देश की एकता के पवित्र सिद्धान्त की व्याख्या करें और समस्त भारतीयों पर संयुक्त परिवार के सदस्यों के रूप में रहने की वांछनीयता अंकित करें। बहुधा मैं सोचा करता हूँ कि परिवहन की आधुनिक सुविधाएं इस सम्पर्क के मार्ग में क्योंकर बाधक हो रही हैं। शताब्दियों पूर्व आवागमन की प्रतिक्रिया बड़ी दु:खद थी और सचार साधन बड़े नगण्य थे। पवित्र स्थानों की तीर्थयात्रा की प्रणाली समस्त भारत में व्याप्त थी जो एकता की भावना के विकास के लिये अत्यन्त प्रभावशाली साधन था।

देश के समस्त भागों के यात्री पैदल या बैल गाड़ी में यात्राएं किया करते थे। वे यह अनुभव करते थे कि हम अपनी मातृ भूमि में हैं और वे ग्रामों एवं कस्बों में कई २ दिन और हफ्ते बिताया करते थे। वे लोगों से मिलते थे, उनसे वार्त्तालाप करते थे, और अपनी मातृभूमि के सुन्दर स्थानों को देखा करते थे। इलाहाबाद से कुमारी अन्तरीप तक आने जाने में लगभग १ वर्ष लगता था और इस १ वर्ष के काल में लोग देश के भिन्न २ भागों में घूम लिया करते थे।

आज परिवहन सुलभ होगया है और आधुनिक सुविधाओं से लाभ उठातेहुए हम कुछ दिनों में ही बिना कुछ सोचे और बिना किसी से बातचीत किए सीधे कुमारी अन्तरीप पहुँच सकते हैं। इन परिस्थितियों में कुमारी अन्तरीप में पूजा के अनुष्ठान का धार्मिक महत्त्व भले ही हो इसका कोई राजनैतिक महत्त्व नही होता। पारस्परिक सम्पर्क के तत्त्व पर बल दिए और उसको विकसित किए जाने की आवश्यकता है।

देश में बिखरी हुई राजनैतिक और अराजनैतिक सस्थाओं को जिनका स्वरूप अखिल भारतीय हो यात्राओ और जन-सम्पर्क के कार्य को प्रोत्साहित करना चाहिए। इस दिशा में प्रेस भी उपयोगी कार्य कर सकता है परन्तु उसका दृष्टिकोण प्राय प्रातीय रहता है उसके लक्ष्यमें प्राय प्रान्तीय आवश्यकताए एव सुविधाए होती हैं। यह मुकाव हमारी राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं के प्रान्तीय स्वरूप पर ही बल देता है।

विश्व विद्यालयों का कार्य

प्राचीन काल में हमारे शिक्षा सस्थान राष्ट्रीय जीवन में बडा उपयोगी एव प्रभावशाली काय किया करते थे। समस्त देश में विश्व विद्यालय फले रहते थे जिनमें देश के विभिन्न भागो के सहस्रों विद्यार्थी पढ़ते और निवास करते थे।

उदाहरण के लिए कहा जाता है पटना के निकट नालन्दा में १० सहस्र विद्यार्थी एक साथ पढ़ते और निवास करते थे। उत्तर भारत में स्थित तक्ष शिला प्रसिद्ध शिक्षा सस्थान था। काशी का अपना निराला महत्त्व था। देश के समस्त भागों और समाज के समस्त वर्गों के विद्यार्थी एक साथ रहते एक साथ पढ़ते और अनुसधान कार्य किया करते थे।

सौभाग्य से देश की एक ही राष्ट्रीय भाषा थी और वह थी सस्कृत। इस प्रसग में देश की एक ही राष्ट्रीय भाषा की महत्ता पर बल दिए जाने की विशेष आवश्यकता नहीं है। आज हमारे विश्व विद्यालयों में शिक्षा के माध्यम के रूप में क्षेत्रीय भाषाओं के प्रचलन की चर्चा सुनी जाती है। मेरी परमात्मा से यही प्रार्थना है कि इस प्रकार की कोई बात न होने पाए।

भारत के प्रत्येक विश्व विद्यालय का प्रबल यत्न यह होना चाहिये कि वह देश के प्रत्येक भाग के विद्यार्थियो को अपनी ओर आकृष्ट करे। मैं इस प्रस्ताव के पक्ष में हू कि प्रत्येक रेजीडेन्शियल विश्व विद्यालय में (जहा पढाई और निवास का एक साथ प्रबन्ध हो) उन विद्यार्थियों के लिये स्थान सुरक्षित हो जो प्रान्त विशेष के बाहर से आएं। जाति के समस्त वर्गों में शिक्षा के प्रसार के लिये देश में सैकडो विश्वविद्यालयो की आवश्यकता है।

जहा तक सभव हो ये विश्व विद्यालय रेजीडेन्शियल होने चाहिए। प्रत्येक कालेज में १०० से १००० तक विद्यार्थियों के एक साथ रहने की व्यवस्था होनी चाहिये जिससे कि विद्यार्थियों को एक साथ रहने और भारत के प्रति प्रेम-भावना का विकास करने के अवसर समुपलब्ध हों।

मुझे यह देख कर बडा हर्ष होता है कि सस्कृत के प्रति प्रेम बढ रहा है। लोग इसके महत्त्व को अनुभव कर रहे हैं। अखिल भारतीय सस्कृत सम्मेलन के अवसर पर प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने अपने अभिनन्दन के उत्तर में दिये भाषण में जो विचार प्रकट किए थे वे बडे मूल्यवान् थे। सस्कृत हमारी प्राचीन सस्कृति का अक्षय कोष है। इसके पठन-पाठन को देशव्यापी बनाना चाहिये।

सक्षेप में देश के भिन्न २ भागों और उनके निवासियों में सामाजिक, राजनैतिक और शैक्षणिक सपर्क खूब बढ़ाया जाना चाहिए। 'हमारा देश एक है' इस भावना के विकास और रक्षण का यही एक मार्ग है।

("आर्य समाज के गुरुकुलों यथा कागडी और

वैयक्तिक आयोजनों को सहायता न दी जाय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री बाबू कालीचरण जी आर्य का आर्य जनता को आवाहन।

आर्य जगत मे व्यक्तिगत रूप से बड़े बड़े सार्वजनिक यज्ञों का आयोजन और वेद मन्दिरों, स्वाध्याय मन्दिरों आदि की स्थापना के नाम पर सार्वजनिक रूप से धन संग्रह करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। व्यक्तिगत आयोजनो के लिए दिये हुए धन पर जनता का नियन्त्रण नहीं होता है। अतः सर्व साधारण जनता और आर्य जनता को इन आयोजनों के सम्बन्ध में धन इत्यादि का सहयोग देने में विशेष सावधान रहना चाहिये। इस प्रकार के आयोजन किसी प्रामाणिक संस्था के नियन्त्रण और संरक्षण में होने से धन के दुरुपयोग की आशंका नहीं रहती और कार्य सुचारु रूप से चलने की आशा रहती है। इस प्रकार के नियन्त्रित आयोजन ही सहायता के पात्र हैं।

प्रान्तीय सभाओं और आर्य समाजों को इस प्रवृत्ति को न बढ़ने देने में सक्रिय होना चाहिये। इसी में सब का हित है।

कालीचरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

आर्यसमाज आर्यनगर (श्रद्धानन्द नगरी) पहाड़ गंज दिल्ली का वार्षिक चुनाव

तिथि १३-५-६२ प्रातः ९ बजे श्री हरबसलाल जी कालड़ा के सभापतित्व में आर्यनगर में आर्यसमाज आर्य नगर (श्रद्धानन्द नगरी) पहाड़ गंज दिल्ली के सभासदों की साधारण सभा ने इस चालू वर्ष के लिए निम्नलिखित अधिकारियो को सर्व सम्मति से चुना —

प्रधान—श्री सत्यपाल जी कपूर वकील, उपप्रधान —श्री हंसराज जी सभ्रवाल और श्री हरबसलाल जी कालड़ा, मन्त्री—डा० बलराम राणा, सहायक मन्त्री- श्री बनारसीलाल जी, कोषाध्यक्ष -श्री डा० साधूराम जी, पुस्तकाध्यक्ष—श्री मनोहरलाल जी और आडीटर श्री हरबंसलालजी चौपड़ा जनरल मैनेजर दैनिक प्रताप।

अन्तरंग सदस्य—श्री डा० सहदेव जी बतरा, श्री सुखदेव जी वर्मा, श्री चमनलाल जी चोपड़ा श्री ज्ञानेन्द्र जी और श्री ओ३म् प्रकाश जी।

बलराम राणा
मन्त्री
आर्य समाज, आर्य नगर, पहाड़ गंज, दिल्ली

वृन्दावन ने जहां देश के समस्त भागों के विद्यार्थी यहां तक कि विदेश के विद्यार्थी भी जाति, नस्ल, और छूत-अछूत के भेद-भाव के बिना एक साथ पढ़ते और रहते हैं, प्रारम्भ से ही भावात्मक एकता की सुरक्षा की दिशा में आदर्श उपस्थित किया हुआ है। हमारे गुरुकुलों की उपलब्धियों में से यह एक विशिष्ट उपलब्धि है जिस पर हम गर्व अनुभव कर सकते हैं।"

—सम्पादक

स्वामी श्रद्धानन्द अखिल भारतीय स्मारक ट्रस्ट

स्वामी श्रद्धानन्द अखिल भारतीय स्मारक ट्रस्ट दिल्ली का वार्षिक अधिवेशन २ -५-६२ को श्री लाला मेलाराम जी की कोठी २, टालस्टाय मार्ग नई दिल्ली में हुआ। निम्नांकित पदाधिकारी निर्वाचित हुए -

१—प्रधान	श्री महाशय कृष्ण जी
२ –उपप्रधान	श्री लाला चरणदास जी पुरी
३—महामन्त्री	श्री सेठ रामनारायण जी विरमानी
४—मन्त्री	श्री प० ज्ञान चन्द जी
५—कोषाध्यक्ष	श्री मेलाराम जी

६—कार्य कारिणी के सदस्य —

१—श्री लाला हमराज जी गुप्त
२—श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त
३ श्री लाला नारायण दास जी कपूर
४—श्री लाला हसराज जी बड़ेहरा
५ —श्री मा० शिवचरणदास जी
६—श्री लाला हरिवंश जी

सन् १९६२ के लिए ३१०००) के व्यय का बजट स्वीकार हुआ।

ज्ञानचन्द
मन्त्री

अखिल भारतवर्षीय श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा का वार्षिक चुनाव

दिनाक २-४-६२ साय चार बजे श्रद्धानन्द बलिदान भवन दिल्ली मे अखिल भारतीय श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा (रजि०) दिल्ली का वार्षिक चुनाव सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (International Aryan League) दिल्ली की देख रेख मे हुआ और इस वर्ष के निम्नलिखित अधिकारी चुने गये —

प्रधान—श्री हरवंशलाल जी चोपडा, उपप्रधान—श्री बालमुकन्द जी आहूजा और श्री हरिवंश जी, मन्त्री श्री हरकृष्ण लाल सेठी, सहकारी मन्त्री—डा० बलराम राणा, कोषाध्यक्ष—श्री मक्खनलाल कत्याल। आडीटर—श्री मदन गोपाल।

निम्नलिखित सज्जन अन्तरग सभा के सदस्य चुने गये —

श्री न्यादरमल जी गुप्त, श्री वासुदेव जी वर्मा, श्री द्वारकानाथ जी सहगल, कैप्टन यशपाल जी और श्रीमती सुशीला मनोचा। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान, मन्त्री और कोषाध्यक्ष पदेन अन्तरग सभा के सदस्य चुने गये।

बलराम राणा
सहकारी मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के विवाद का अन्त

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के विवाद के विषय में श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने निम्नलिखित वक्तव्य प्रेस को दिया है —

"मैंने आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब के दोनों पक्षों के महानुभावों को बुलाकर पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी की उपस्थिति में, दोनों पक्षों को निकट लाने का यत्न किया। दोनों पक्षों ने उदारता से मेरे सुझाव स्वीकार किये, और मुझे आश्वासन दिया कि दोनों पक्ष सभा के हित में मिलकर कार्य करेंगे।

यदि किसी आर्य समाज के प्रतिनिधियों के विषय में आपत्ति होगी तो उसका अन्तिम निर्णय मैं करूंगा।

इस निश्चय को दोनों पक्षो ने स्वीकार किया है।"

इस प्रसंग में श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने भी प्रेस को निम्नलिखित वक्तव्य दिया है:—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री पूज्य स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज ने पजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के दोनो पक्षो को बुला कर परस्पर सहयोग और प्रेम से कार्य करने का आदेश दिया और आपस की भ्रान्तियों को दूर किया।

अत मैं घोषणा करता हू कि आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब से सम्बद्ध समस्त आर्य समाजे, सभा कार्यालय गुरुदत्त भवन जालन्धर शहर में वेद प्रचार' दशांश और प्रतिनिधि फार्म भेजें।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली-१

दान सूची आर्य समाज स्थापना दिवस

(गताक से आगे)

		रसीद सं०
५)	आ० स० नेमदार गज गया (बिहार)	३८४५
१०१)	आ० स० नया बास, दिल्ली	३८४६
१९)	,, सदर मेरठ	३८५२
४६)	,, नाहन (हिमाचल प्रदेश)	३८५३
२५)	,, निजामाबाद	३८५४
२५)	,, ग्वालियर	३८५५
७)	,, लुधियाना रोड फिरोजपुर छावनी	३८६५
११)	,, भगवतगढ़ (राजस्थान)	३९०९
२५)	,, मवाना कलां (मेरठ)	३९११
११)	,, बेवर (मैनपुरी)	३९२४

२७५)
१३२) गत योग
४०७) कुल योग (क्रमश)

दान दाताओं को धन्यवाद

आशा है अन्य आर्य समाजें भी शीघ्र से शीघ्र इस दिवस की अपील का धन मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सार्वदेशिक सभा को अविलम्ब भेजेंगे। स्थापना दिवस का धन प्रत्येक आर्य समाज से प्राप्त करने के लिये सभा कृत सकल्प है। अत स्मरण कराये जाने का अवसर दिए बिना आर्य समाजों को यह धन भेज देना चाहिये।

कालीचरण आर्य
सभा मन्त्री

हरिद्वार में आर्य समाज मन्दिर

आर्य जगत् को इस समाचार से अत्यन्त प्रसन्नता होगी कि हरिद्वार में आर्य समाज मन्दिर के लिए एक स्थान पर भूमि क्रय कर ली गई है और भवन निर्माण का उपक्रम हो रहा है। इस वर्ष कुम्भ प्रचार के अवसर पर इस भूमि में ही प्रचार केन्द्र रहा। यह सम्पत्ति आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश की रहेगी और प्रबन्ध की दृष्टि से भी उक्त सभा के अन्तर्गत रहेगा परन्तु हरिद्वार के कारण इस समाज का महत्व भी अन्तर्प्रान्तीय होगा। अत इस को सुदृढ और शक्तिशाली बनाने में समस्त आर्य जनता को सहयोग देना है। आशा है जनता इसके लिए सन्नद्ध रहेगी।

कालीचरण आर्य
मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई देहली की

धार्मिक परीक्षायें

प्रत्येक आर्य समाज तथा प्रत्येक आर्य विद्यालय को अपने यहा अनिवार्य रूप से इनका केन्द्र स्थापित करना चाहिये और पूरा यत्न करना चाहिए कि समस्त आर्यसदस्य तथा प्रायमरी से ऊपर की कक्षाओं के छात्र इनमें से किसी न किसी परीक्षा में अवश्य सम्मिलित हों। ये परीक्षायें गत पाच वर्षों से प्रचलित हैं।

इस वर्ष "पहली परीक्षा" श्रावणी पर २६ अगस्त १९६२ को होगी जिसके लिए परीक्षार्थी सूची और शुल्क इस २६ जुलाई १९६२ तक आ जाना चाहिए। नियमावली को अपने पास सभाल कर रखिये और सलग्न पत्र भर कर भेजिए। आवश्यक पत्र व्यवहार मन्त्री से कीजिए।

निवेदक —

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती
प्रधान
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
नई देहली

वीरेन्द्र शास्त्री, एम० ए०, आचार्य
मन्त्री
सार्वदेशिक विद्यार्य सभा
कार्यालय–रायबरेली (उ० प्र०)

नियमावली तथा पाठविधि

[सन् १९६२ से पुनः परिवर्तन पर्यन्त]

१—किसी भी परीक्षा में कोई भी व्यक्ति बैठ सकता है किन्तु मुख्यतया ये परीक्षाए छात्रो तथा छात्राओ और आर्य सदस्यों के लिये है।

२—कम से कम ५ परीक्षार्थी होने पर किसी विद्यालय के आचार्य या आर्य समाज के प्रधान की अध्यक्षता में केन्द्र स्थापित किया जा सकता है।

३ परीक्षाये प्रतिवर्ष श्रावणी पूर्णिमा पर (अगस्त मे) तथा बसन्त पचमी पर (जनवरी में) ली जावेगी। आवेदन पत्र शुल्क सहित साधारणत एक मास पूर्व भेजना चाहिए। तत्पश्चात् २५ नये पैसे प्रति छात्र अतिरिक्त शुल्क देना होगा।

४—परीक्षाये आर्य सिद्धान्त विषय में होगी। परीक्षाओं की उपाधि तथा शुल्क आदि का विवरण निम्नलिखित हैं —

नाम उपाधि	शुल्क	प्रश्न पत्र
(१) आर्य सिद्धान्त विशारद	१ रु०	१
(२) आर्य सिद्धान्त भूषण	२ रु०	२
(३) आर्य सिद्धान्त रत्न	३ रु०	३

५—उत्तीर्ण छात्रों को उपाधि तथा प्रमाण पत्र सभा की ओर से सार्वदेशिक सभा के प्रधान के हस्ताक्षरों से युक्त प्रदान किये जायेगे। सर्व प्रथम परीक्षार्थी को विशेष पुरस्कार दिया जायेगा।

६—प्रत्येक प्रश्न पत्र का पूर्णांक १००, उत्तीर्णांक तृतीय श्रेणी में ३३ से ४४ तक, द्वितीय श्रेणी में ४५ से ५९ तक, प्रथम श्रेणी में ६० से १०० अंक तक प्रतिशत होगे।

७—परीक्षा का माध्यम हिन्दी होगा। आवश्यकतानुसार अन्य भाषाओं के लिए विशेष अनुमति लेनी चाहिए।

पाठ विधि

१—आर्य सिद्धान्त विशारद (१ प्रश्न पत्र, पूर्णांक १००)

(१) पञ्चमहायज्ञ विधि (सन्ध्या अर्थ सहित तथा हवन मन्त्र दैनिक)

(२) आर्योद्देश्यरत्नमाला (३) व्यवहारभानु

(४) महर्षि दयानन्द का स्वकथित जीवन चरित्र

२—आर्य सिद्धान्त भूषण (२ प्रश्न पत्र, पूर्णांक २००)

प्रथम प्रश्न-पत्र—सत्यार्थ प्रकाश (पूर्वार्ध—१ से १० समुल्लास)

द्वितीय ,, ,,—संस्कार विधि

(संस्कार विधि की व्यावहारिक परीक्षा भी ऐच्छिक रूप में होगी। जो चाहें वे फार्म में निर्देश कर दें)

३—आर्य सिद्धान्त रत्न (३ प्रश्न पत्र, पूर्णांक ३००)

प्रथम प्रश्न-पत्र—ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका

द्वितीय ,, ,,—सत्यार्थ प्रकाश (उत्तरार्ध—११ से १४ वे समुल्लास तक)

तृतीय ,, ,,—आर्य सिद्धान्तो पर निबन्ध

वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०, आचार्य,

मन्त्री, सार्वदेशिक विद्यार्य सभा, कार्यालय रायबरेली (उ०प्र०)

केन्द्र के लिए प्रार्थना पत्र तथा परीक्षार्थी—सूची

श्री मन्त्री जी, सार्वदेशिक विद्यार्य सभा, कार्यालय रायबरेली (उ० प्र०)

श्रीमान् जी नमस्ते!

कृपया निम्नलिखित केन्द्र स्थापित रखे। परीक्षाओं की व्यवस्था पूर्ण उत्तरदायित्व के साथ की जावेगी। कोई परीक्षार्थी अनुचित व्यवहार न करने पावेगा। वि० स० २०१ (सन् १९६) की श्रावणी/बसन्त पञ्चमी की परीक्षा में सम्मिलित होने वाले परीक्षार्थियो की सूची भेजी जाती है—

केन्द्र स्थान डाक घर जिला स्टेशन

परीक्षार्थी संख्या विशारद भूषण रत्न सम्पूर्ण योग ह० केन्द्राध्यक्ष

संख्या	परीक्षार्थी का नाम	पिता का नाम	आयु	परीक्षा नाम	शुल्क	परीक्षार्थी के हस्ताक्षर

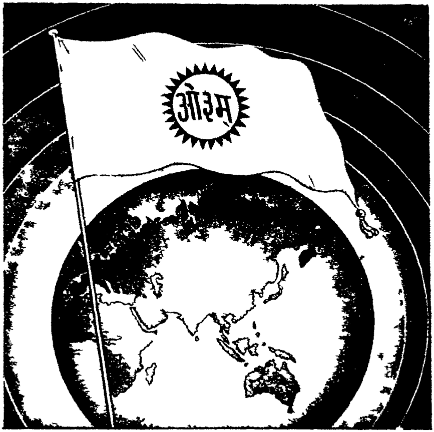
(शेष नाम पृथक् कागज पर इसी प्रकार खाने भर कर लिखिए।)

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली७मे मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसादजी पाठक मुद्रक और प्रकाशक

* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



वार्षिक मूल्य ६) सृष्टि सम्वत दयानन्दाब्द विदेश से वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ३८ १९७२९४९०६ १३८ अगस्त १९६२ श्रावण २०१९। अंक १६

विषय-सूची

✽ सम्पादक
कालीचरण आर्य सभा मन्त्री

● सहायक सम्पादक
रघुनाथप्रसाद पाठक

✽ प्रकाशक व मुद्रक
रघुनाथप्रसाद पाठक

● कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द भवन, नई दिल्ली
फोन २२४७७१

✽ मुद्रक
सार्वदेशिक प्रेस, दरियागंज दिल्ली।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥
ऋ० म० १ । मन्त्र २ । म० ७ ॥

उपदेश

धन्य आपकी दया की वृष्टि ! हम तुच्छ आत्मा जिससे आप किसी प्रकार की सेवा की आवश्यकता नहीं रखते उस पर ऐसी अपार दया ! आपने नेत्र देकर हमें इस योग्य बनाया कि हम आज आपकी विस्तृत सृष्टि में आपकी रचना देख आपके महान् ज्ञान के सम्मुख विस्मित हो रहे हैं। आपने कान देकर हमें उस उपदेश को श्रवण करने योग्य बनाया जिसके श्रवण बिना कोई भी मनुष्य अपने ज्ञान की वृद्धि कर आत्म ज्ञानी नही बन सकता एव आपकी महिमा को नही जान सकता। प्रभो ! आपने जो वाणी दी है उसके द्वारा उपदेश कर हम सहस्रो आत्माओ का हृदयान्धकार दूर कर एव पुण्य भागी बन आपका साक्षात् दर्शन पाने के लिए प्रार्थना कर सकते हैं। जिसमे ये इन्द्रिया बनी रहें आपने यह शरीर रूप यन्त्र कैसा अद्भुत बनाया है ? उदान वायु के द्वारा अन्न पान भीतर जाता है जिसके विकृत भाग को अपान वायु बहिष्कृत करता है और सार भाग को समान वायु क्रमश रक्त रूप में परिणत करता हुआ लाखो नाड़ियो मे विस्तृत कर देता है। इस रक्त के विकार को फेफड़ो द्वारा प्राण वायु बारम्बार परिशुद्ध करता हुआ उसे शरीरावयवो के पोषण के उपयुक्त करता है जिससे इस शरीर रूप यन्त्र में बैठा हुआ आत्मा अपने कार्यों को सिद्ध करता रहता है। भगवन् ! एक क्षण भी तो ऐसा नही है जिससे आपकी कृपा का फल हम न भोगते हों। प्रति श्वास में आपका ही वायु लेकर सुखी होते हैं फिर प्रति श्वास में आपका नमस्कार क्यो न करे ? इस पृथिवी के छोटे २ कण वियुक्तावस्था में हमारे व्यवहार के अयोग्य थे। आपने उन्हें पृथिवी रूप मे परिणत कर और इस पृथिवी पर नाना प्रकार के फल फूल कन्द-मूल उत्पन्न कर हमारी रसना के द्वारा हमें कितना सुख पहुंचाया।

पिता पुत्रवत हमारा पोषण करने वाले ! आपकी असीम कृपाओं का वर्णन हम कहा तक करे। सच्चे सम्बन्धी तो आप ही हमारे हैं। पूर्व जन्म के शरीर स्थान, प्यारे माता पिता सभी से सम्बन्ध टूट गया परन्तु आपकी कृपामय शरण में जिस प्रकार पूर्व जन्म में सुख भोगते थे उसी प्रकार इस जन्म में भी भोग रहे है। आप जैसे दयामय पिता का एक बार दर्शन पाते ! आप है तो हमारे आत्मा में ही विद्यमान परन्तु हाय ! हमारे पाप इतने बढे कि हम अपने में ही आपका दर्शन नही कर पाते। अनात्मा में फस कर हमने आत्म स्वरूप को विस्मृत कर दिया है। पिता ! प्रकृति की ओर से ध्यान खींच लेने की शक्ति प्रदान करो जिससे आत्मस्थ होकर हम अपने में ही आपको पा जावे और फिर प्रति दिन आपकी ही उपासना करते रहें।

प्यारे बन्धुओ ! प्राणायाम से मन को शिथिल कर प्रत्याहार और धारणा की साधना कीजिये। हम में न अन्नमय कोष, न मनोमय कोष और न ज्ञानेन्द्रियां प्रत्युत हैं हम एक सूक्ष्म चेतन सत्ता। हमें अपने में ही अपने प्रभु को खोजना है अत एव हम अपने प्रभु के ध्यान में कैसे निमग्न हों जब तक प्रकृति का हम ध्यान न छोड़ देवें। क्या हम अपने मनुष्य जीवन को यों ही बीतने दे और अपने प्रभु को हृदयङ्गम न करे ?

सम्पादकीय—

हुतात्माओं की पुण्य स्मृति में !

पुण्य स्मृति के धर्मवीरो ! आप लोगों का जितना गुण गान किया जाय उतना ही कम है। आप लोगो ने धर्म की पवित्र वेदि पर अपने प्राणों का उत्सर्ग किया था।

हैदराबाद राज्य में धार्मिक स्वतन्त्रता का निर्ममता पूर्वक अपहरण किया जा रहा था। आप लोग धर्म युद्ध के सैनिक बन कर उस स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये गये थे। सत्य और अहिंसा आपका अस्त्र था। आप लोगो पर घोर अमानुषिक अत्याचार किये गये इसलिए कि आप अपने व्रत से च्युत हो जाय। आपने अपने व्रत एव सत्य और अहिंसा के आदर्श की रक्षा के लिये उन अत्याचारो को धैर्य पूर्वक सहन करके हसते २ मृत्यु का आलिगन किया। आप उन पुण्यात्मा वीरो के मार्ग के पथिक बने जो उच्च उद्देश्यों के लिये अपने प्राणों की बलि देते हैं। आपने अपने उत्सर्ग से आर्य जाति तथा धर्म युद्ध को अमित गौरव प्रदान किया और इतिहास मे अपना नाम अमर किया। आने वाली सन्तान जब इस धर्म युद्ध के इतिहास को पढ़ेगी तो निश्चय ही आर्य वीरो के त्याग और बलिदान पर जो इस युद्ध में दर्शाया गया था आनन्द विभोर होगी और गद्‌गद हृदय से आप लोगों के चरणों में श्रद्धा और प्रेम से उनका मस्तक नत हो जायगा।

जो लोग सत्य और न्याय के पक्षपाती थे अथवा पक्षपाती होने का दावा करते थे वे मौन रहे। कदाचित वे हमारी परीक्षा लेना चाहते प्रतीत होते थे कि कष्ट सहिष्णुता का जो मार्ग हमने स्वय चुना था उसमें हम कितने दृढ और धीर सिद्ध होते हैं। इस परीक्षा की हमारी सफलता के सम्बन्ध में यदि उनके हृदय में कोई सन्देह रहा होगा तो आप लोगों के उत्सर्ग ने उसे दूर कर दिया होगा।

ससार के दुर्बल हृदय लोग आपके बलिदान पर दुःख अनुभव कर सकते हैं परन्तु दिव्यात्माए उन पर हर्ष प्रकट करती हैं। दुर्बल हृदय लोग आपको मरा हुआ समझते हैं परन्तु दिव्यात्माए आपको जीवित समझती हैं। धर्म, सत्य और परमात्मा के कार्य में लगे हुए व्यक्ति धूल में मिल कर भी ज्योति के रूप में उदित हो जाते हैं। आप लोगों के बलिदान की ज्योति सदैव जगमगाती रहेगी।

आर्य समाज के जीवित शहीदों ने उसका मार्ग प्रशस्त किया तो आप लोगों ने और आर्य समाज के अन्य अनेक हुतात्माओं ने अपने रक्त से उसकी नीव दृढ़ की और आर्य समाज के इतिहास में उज्ज्वल अध्याय जोड कर उसको चमकाया।

आप लोगो में से अधिकाश को जनता जानती न थी परन्तु अत्याचार आपको यश के सोपान पर चढा गये। आप लोगों के बलिदान ने उस पुल का निर्माण किया जिस पर से होकर आप लोग दिव्य लोक में पहुँचे और कीर्ति आपका पीछा करती रही। निश्चय ही आपके और आर्य समाज के अन्य हुतात्माओ के बलिदान से साहित्यकारों की कृतिया अलङ्कृत होंगी और कवियों की कृतियों को पवित्र रूप प्राप्त होगा।

आप लोगो की एक मात्र मृत्यु ने नही अपितु आपके पवित्र उद्देश्य ने आपको हुतात्मा का पद प्रदान किया। आप लोग सत्य पर बलि हुए। सत्य के लिये प्राणो का उत्सर्ग करना न धर्म विशेष के लिये और न देश विशेष के लिए अपितु ससार के लिए मरना होता है। आप लोगों का उत्सर्ग ससार भर के लोगो को प्रेरणा प्रदान करता रहेगा —

वे माता पिता धन्य हैं जिन्हें आप जैसी वीर आत्माओं का माता पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वह देश और जाति धन्य है जिसमें आप जैसे वीर जन्म लेते हैं।

आप लोग मूर्खों के सदृश कीर्ति की चाह रखते हुए शहीद नहीं हुए और न अन्धे जोश में ही शहीद हुए हैं वरन् धर्म रक्षा सत्य और न्याय के लिए शहीद हुए हैं। यही आपके बलिदान की महिमा है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

*

टिप्पणियां

उचित शिकायत

श्रीयुत प्यारेलाल जी गांधी कु ज हापुड़ (मेरठ) से लिखते हैं -

"हिन्दुओं को मिटाने के लिये ११ शक्तियां काम कर रही हैं —ईसाई, मुसलमान कम्यूनिस्ट, बौद्ध, अकाली, राज्य, राधा स्वामी, ब्रह्माकुमारी, कबीर पन्थी, दादू पन्थी और हन्सा महाराज। इन शक्तियों से वैदिक संस्कृति को बचाने की शक्ति एकमात्र आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों में हैं।"

परन्तु आज आर्यसमाज के सदस्यों की शक्ति का सत्ता और सम्पत्ति को हथियाने के संघर्ष में दुरुपयोग हो रहा है। इस संघर्ष को देखकर यह भाव सहज ही उत्पन्न हो जाता है कि आर्यसमाज प्राय उन लोगों के हाथ में पड़ गया है जो आत्म-संवर्धन के लिए आर्यसमाज में प्रविष्ट होते और उसका दोहन करते हैं।

श्री प्यारेलाल जी की शिकायत ठीक है कि —

"उसके अधिकांश सदस्य स्वाध्याय नहीं करते, सन्ध्या, हवन नहीं करते, आपस में अधिकारों के लिए लड़ते हैं।' शताब्द और सदाचार के नियम पालन की चिन्ता नहीं की जाती और न कड़ाई के साथ इनका पालन किया जाता है।"

आर्य समाज को सशक्त बनाने का उपाय श्री प्यारेलाल जी के शब्दों में इस प्रकार हैं —

"आर्य समाज को अपने भीतर क्रान्ति करनी होगी। तादाद (संख्या) का लोभ छोड़कर थोड़े से त्यागी तपस्वी नियमों पर चलने वाले सच्चे आर्यों के हाथ में ही आर्य समाज की बागडोर देनी होगी। तथा कथित आर्यों से आर्यसमाज की रक्षा करना अनिवार्य है तभी महर्षि दयानन्द का कार्य पूरा हो सकता है और हिन्दू जाति को बचाया जा सकता है।"

आर्यसमाज के प्रति आभार प्रदर्शन

कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय के वाइस चांसलर श्रीयुत प्रि० सूर्यभानु जी ने अम्बाला में एक सार्वजनिक समारोह में जो उनके सम्मान में आयोजित किया गया था भाषण देते हुए आर्यसमाज का इस प्रकार गुण गान किया —

"मैंने निश्चय ही आर्यसमाज और डी०ए०वी० कालेज से बहुत कुछ प्राप्त किया है। मैंने जितना प्राप्त किया है उतना उन्हें दे नहीं सका हूं। मैं आर्यसमाज और डी० ए० वी० कालेज सोसाइटी का आभारी हूं जिन्होंने मेरा निर्माण किया और इन्हीं की अच्छाइयों के कारण मुझे यह स्वरूप प्राप्त हुआ है जो देख पड़ता है। मैं इस ऋण से कभी उऋण न हो सकूंगा। मैंने सर्वश्री महात्मा हंसराज, बख्शी रामरतन, प्रि० साईंदास प्रि० मेहरचन्द, मेहरचन्द महाजन और आर्यसमाज के अन्यान्य नेताओं से बहुत कुछ सीखा है।"

उन्होंने कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय में चरित्र-और शिक्षा को एक नया मोड़ देने का और हमारे जैसे अनुन्नत समाज में जहां नवयुवक और जन-साधारण प्राचीन वरिष्ठताओं के प्रति संशयशील हैं, एक नूतन ज्योति का संचार करने की दिशा में यत्नशील होने का आश्वासन दिया।

आर्यसमाज और सरकारी कर्मचारी

एक आर्यसमाज के मन्त्री लिखते है —

"हम कुछ भारतीय सरकार के कर्मचारी हैं जो

कि आर्यसमाज के सिद्धान्तो को मानते हैं। हम यह जानकारी चाहते हैं कि क्या हम समाज के प्रचार मे अपना योग दे सकते हैं ? तथा क्या समाज के पदो पर रहकर कुछ प्रचार कर सकते हैं ? इसके बारेमे बहुत से लोगो ने हमसे ऐसा कहा है कि इसमे कुछ कानूनी उलझने हैं। इस विषय में हमारा मार्ग-प्रदर्शन करे ।"

सरकारी कर्मचारी आर्यसमाज के सदस्य, अधिकारी वा समर्थक रहकर उसका कार्य वा प्रचार करने मे स्वतन्त्र हैं उन पर किसी प्रकारका कोई कानूनी वा राजकीय प्रतिबन्ध नही है। जो व्यक्ति कानूनी अडचनो का भय दिखाते हैं वे या तो अनभिज्ञता वश या जानबूझ कर ऐसा करते हैं। उनकी बातोपर ध्यान न देना चाहिए। कोई समय था जबकि ब्रिटिश शासन काल में सरकारी उच्चा धिकारियो ने प्रतिबन्ध लगाने वा सरकारी कर्म चारियो को आर्यसमाज का कार्य करने से रोकने का यत्न किया था परन्तु उनको मुह की खानी पडी थी। आर्य समाज सर्वभौम धार्मिक संस्था है सम्प्रदायिक संस्था नही है ना ही वह राजनैतिक संस्था है। अत उसके सदस्यो के मार्ग मे कानूनी अडचनो का न कोई भय है और न हो सकता है।

सत्यार्थ प्रकाश परीक्षाएं

आर्य युवक परिषद दिल्ली ने महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रचाराथ १६ अगस्त ६२ को समस्त देश मे तीन परीक्षाए कराने का उत्तम आयोजन किया है। इन परीक्षाओ सम्बधी जानकारी परीक्षा मन्त्री श्रीयुत देवव्रत जी धर्मेन्दु १६५४ कूचा दक्खनीराय दरियागज दिल्ली से प्राप्त की जा सकती है। हम हृदय से इस आयोजन की सफलता चाहते हैं।

अन्तर्जातीय विवाह

११ ७-६२ को श्रीयुत आर ऐन श्रीनिवास पाडे की पुत्री कुमारी सविता का विवाह पूनाके श्रीयुत वासुदेव छद्रराज बेठवानी के साथ आर्य समाज पिम्परी कालोनी में सम्पन्न हुआ। यह अन्तर्जातीय विवाह था। प्रमुख २ पुरुषो और स्त्रियोने इस विवाह के समारोह मे भाग लिया। पजाब के गवर्नर काका साहेब गाडगिल मध्य प्रदेश के गवर्नर श्रीयुत ऐच वी पाटस्कर पूनाके कलक्टर श्री वी प्रभाकर और डी ए वी कालेज शोला पुर के प्रिंसिपल श्री भगवानदास जी ने बधाई के सन्देश भेजे। हमारी कामना है कि वर वधू चिर काल पर्यन्त यशस्वी जीवन व्यतीत करे और यह विवाह परिवारो समाज और देश के लिए मगल कारी सिद्ध हो।

द्रविड मुन्नेतर कजगम का आन्दोलन

मद्रास से प्राप्त समाचारो के अनुसार इस सस्थाने एक दिन के प्रदर्शन मे जो हुल्लडबाजी की जिसके फल स्वरूप सरकारी सम्पत्ति का विनाश हुआ, पुलिस को लाठी चार्ज करना पडा अश्रु गैस का आश्रय लेना पडा और लगभग ७००० हुल्लडबाजो को गिरफ्तार करना पडा और निर्दोष प्रजा पीडित हुई उनपर सर्वत्र उचित रोषारोष प्रकट किया जा रहा और उसकी भर्त्सना की जा रही है। यदि कजगम का इसी प्रकार का औचित्यविरोधी रवैया रहा तो वह दिन दूर नही जबकि इस दल पर सरकारी प्रतिबध लग जायगा। इस प्रसग मे सहयोगी नवभारत टाइम्स दिल्ली अपने २१ जुलाई के अक मे लिखता है —

'देश मे वस्तुओ के मूल्य में वृद्धि से तो प्राय सभी क्षुब्ध हैं, परन्तु मद्रास में द्रविड मुनेतर कषगमने जिस रूप मे अपना क्षोभ प्रकट किया [illegible] इसस ता यहा ध्वनित होता है कि उसका उद्देश्य मूल्य-वृद्धिका विरोध इतना नहीं था जितना अपनी शक्तिका प्रदर्शन अन्यथा प्रदर्शन ने वह हिंसात्मक स्वरूप न ग्रहण किया होता जिसके परिणाम-स्वरूप शहर के पुलिस चीफ सहित पचास से भी

अधिक व्यक्ति घायल हो गये।"

"महगाई केवल द्रविड मुनेत्र कषगम के लोगों के लिए ही नही है। उसके विरोध में प्रदर्शनकी बात किसी अंश तक ठीक हो सकती है, परन्तु उसका राष्ट्रीय सम्पत्तिको क्षति पहुँचाने से क्या सम्बन्ध है? कषगम के प्रदर्शन के सम्बन्ध में जो समाचार मिले हैं उनसे यह प्रकट है कि कषगम समर्थकोंने केवल सरकारी दफ्तरों पर धरना दिया अपितु ईंट-पत्थर से भी खुलकर काम लिया, जिसके परिणाम स्वरूप राज्य की ४५ बसे क्षति-ग्रस्त हो गयी तथा अनेक बालक और यात्री घायल हो गये। कम से कम कोई समझदार आदमी इस बात का समर्थन नहीं कर सकता कि किसी बातपर सरकार से क्षुब्ध होने पर उस सम्पत्ति और उन लोगों को क्षति पहुंचायी जाय जिनका उस बात से कोई सम्बन्ध नहीं।

फिर एक बात यह है कि द्रविड मुनेत्र कषगम एक से अधिक बार यह प्रकट कर चुका है कि वह संवैधानिक तरीके से काम लेगा। इस प्रदर्शन के प्रसग में जिन तरीकों से काम लिया गया है, वे निश्चित रूप से संवैधानिक नहीं हैं। वे तो वस्तुत राज्य भरमें अव्यवस्था और अशांति फैलाने वाले हैं।

मद्रास विधानसभा में कषगम की सदस्य सख्या पचास अवश्य है, परन्तु इसका यह अर्थ नही है कि उसने जो यह हिंसात्मक प्रदर्शन किया उसके साथ राज्य की जनता का एक बहुत बडा भाग है। वह तो वस्तुत कषगम और उसके समर्थकों की ही करतूत है। आश्चर्य तो यह है कि इसमें विधान-सभा के उन कषगमी सदस्यों ने भी भाग लिया जिनसे जनता को किसी गैर जिम्मेदारीपूर्ण आचरण की सभावना नहीं होती। कांग्रेस के विरोधी वे अवश्य है, पर इसका यह अर्थ नहीं कि वे एक ऐसे प्रदर्शन के संगठन में योग दे जो हिंसात्मक रूप धारण कर ले।

द्रविड़ मुनेत्र कषगम और उस के नेता श्री अन्नादोराई द्रविडस्थान की अपनी मांग के लिए बदनाम हैं। श्री अन्नादोराई ने गत २ मई को राज्य सभा में जब यह माग रखी थी तो प्राय सब दलों की ओर से उसकी निन्दा की गयी थी। प्रधान मन्त्री नेहरू ने यह स्पष्ट कहा था कि देश के टुकडे करने की बात सोची भी नहीं जा सकती और इस मांगका पूरा प्रतिरोध किया जायगा। मद्रास के वित्तमन्त्री श्री भक्तवत्सलम ने इस मागको राष्ट्रीय द्रोह का नाम दिया था। यद्यपि इस माग का इस प्रदर्शन से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, परन्तु इसके पीछे वही भावना काम कर रही है। कांग्रेस के विरुद्ध प्रदर्शन करके और उसे बदनाम करके कषगम अपनी माग के पक्ष में जनमत सगठित करने की कोशिश कर रहा है, परन्तु उसे यह नहीं भूलना चाहिए कि इस असवैधानिक कार्य में जनता उसका साथ कभी नही देगी और न सरकार ही इस प्रकार की विघटनात्मक कार्र-वाइयों को अधिक देर तक बर्दाश्त कर सकेगी।

इस बात के लिए राज्य की पुलिस की प्रशसा करनी होगी कि कषगम के लोगों द्वारा ईंट-पत्थर की वर्षा के बाद भी उसने अपना धैर्य और सयम नही खोया। उसे शांति और व्यवस्था के लिए लाठी चार्ज अवश्य करना पडा, किन्तु गोली उसने नही चलायी। पुलिस तथा सार्वजनिक सम्पत्तिकी सुरक्षा को जो खतरा उत्पन्न हो गया था उसमें गोली चारी कोई असाधारण बात न थी, किन्तु फिर भी उसने अश्रु गैस के प्रयोगपर ही सन्तोष करके जनतन्त्र के अनुरूप अनुकरणीय परम्परा का आरम्भ किया है।"

हिन्दी-दिवस

सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री बाबू काली-चरण जी आर्य के निर्देश पर आर्य जगत में १५ जुलाई को 'हिन्दी दिवस' व्यापक रूप में मनाया गया। आर्य समाजों ने प्रस्ताव पास करके

भारत सरकार को राष्ट्रपति महोदय को, गृह-मन्त्री तथा सूचना मन्त्री आदि २ को भेजे जिनमें आकाश वाणी की हिन्दी भाषा को उर्दू शब्दों के मिश्रण से विकृत करने की सरकारी नीति का विरोध करते हुए माग की गई है कि आकाश वाणी की सस्कृत निष्ठ हिन्दी राज्य भाषा को बदलने की चेष्टा न की जाय। प्रसन्नता है कि आकाश वाणी की भाषा परिवर्तन की जो नीति अपनाई जा रही है उसका खुलकर विरोध हो रहा है। देश में सस्कृत निष्ठ हिन्दी को समझने वालों की सख्या उर्दू मिश्रित हिन्दी को समझने वालों की सख्या से अधिक है अत उसे उर्दू मिश्रित बनाने का प्रयत्न करना न केवल हिन्दी के ही अपितु देश के अधिकाश नरनारियों के प्रति भी अन्याय है। आशा है राज्याधिकारी इस विषय में देश वासियो के अधिकांश भाग की भावनाओं को समझने की दूर दर्शिता दिखाकर और परिवर्तन न करने को उपादेयता को अनुभव करके राजनीतिज्ञता का परिचय देगें और ऐसी स्थिति उत्पन्न न होने देंगे बाद में जिस का सम्भालना उनके लिए कठिन हो जाय। यह निश्चित है कि अदूरदर्शी राजनीतिज्ञों द्वारा गलत नीतियों का अनुसरण किए जाने पर भी हिन्दी की प्रगति और उसका प्रसार कुठित न होगा।

रंग भेद की मार

जोहान्स बर्ग का १६ जुलाई का सम चार है कि एक ८० वर्षीय श्वेत कहे जाने वाले वृद्ध को जिसने १६१८ में एक अश्वेत महिला के साथ विवाह किया था अपने पुत्रों और प्रपौत्रों के साथ रहने से रोक दिया गया है।

यह व्यक्ति १९०३ में इटली से आया था और ४४ वर्ष पूर्व इसने विवाह किया था। विवाह के पश्चात् वह अश्वेतों के एक कस्बे में रहने लगा था।

जब अश्वेतों को इस कस्बे से निकाला गया तो वह अपनी सबसे बडी पुत्री के पास आकर अलवर्ट विले नामक अश्वेतों के एक दूसरे कस्बे में रहने लगा।

अब यह अलवर्ट विले कस्बा 'श्वेत कस्बा' उदघोषित किया गया है जिसके फल स्वरूप उस लडकी को अन्य नगर में आना पडा परन्तु राज्य की ओर से उस लडकी को चेतावनी दी गई है कि वह अपने पिता को अपने साथ न ले जाय। उस लड़की ने राज्याधिकारियों से पूछा है कि क्या मेरा पिता अपने बच्चो और बच्चों के बच्चों के साथ शान्ति पूर्वक रहने का अधिकारी नही है? रग भेद विश्व-समाज में तिरस्कृत है। शरीर शास्त्र की आधुनिक ऊहा पोह ने यह स्पष्ट कर दिया है कि रग और जन्म के कारण न कोई उच्च और न नीच होता है। रग-भेद और जन्म भेद की दीवारें कृत्रिम हैं जिनका धराशायी होना सुनिश्चित होता है। मनुष्य अपनी योग्यता और गुणो के कारण सम्मानित और अयोग्यता एव अवगुणो के कारण लाछित होता है। मानवीय भावनाए इतनी प्रबल होती हैं कि वे इस प्रकार की दीवारों को लाघकर अपना प्रभुत्व स्थापित करही देती हैं। जो व्यक्ति वा प्रशासन पशु-बल के सहारे इन दीवारों को खडा करते वा खड़ा रखने का यत्न करते हैं अन्त में उन्हें मुह की खानी पडती है। वह दिन दूर नहीं जबकि अफ्रीका में रग-भेद के पृष्ठ पोषकों को अपनी अदूरदर्शिता पर पश्चाताप होगा।

पंजाब में हिन्दी

पजाब की मैट्रिक परीक्षा के इस वर्ष के परिणाम से ज्ञात हुआ है कि किसी भी परीक्षार्थी ने अनिवार्य हिन्दी पंजाबी अथवा उर्दू की परीक्षा नहीं दी तथापि ऐच्छिक विषयों में ७४७४१ परीक्षार्थियों ने हिन्दी की परीक्षा दी जिनमें से ५६४३६ पास हुए।

पजाबी की परीक्षा ४८४७१ परीक्षार्थियों ने दी

और ३६२७२ पास हुए।

स्कूलों के केवल २१ परीक्षार्थी उर्दू की परीक्षा के लिए बैठे और उनमें से १२ पास हुए। ४१६ प्राइवेट परीक्षार्थियों ने उर्दू की परीक्षा दी और उनमें से ३१६ पास हुए। किसी भी परीक्षार्थी ने अरबी, जर्मन या लेटिन भाषा की परीक्षा नहीं दी।

जाति प्रथा के अभि शाप

श्रीयुत जे० ऐच० हटन सी० आई० ई० एम० ए० डी० ऐस-सी (प्रोफेसर कैम्ब्रिज विश्व विद्यालय) ने कास्ट इन इन्डिया (भारत में जात-पात) नामक पुस्तक लिखी है जो यूनिवर्सिटी प्रेस कैम्ब्रिज द्वारा प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक में विभिन्न जातियों का सविस्तार वर्णन करते हुए लेखक महोदय जन्म की जात-पात के दोषों पर विचार करते हुए लिखते हैं —

"जन्म की जात-पात ने बर्बरता से ऊपर उठने की तो मनोवस्था उत्पन्न की परन्तु उन्नति का आधा मार्ग तय कर लेने पर मनुष्य को बीच में ही रोक दिया। इस प्रकार जात-पात ने समाज के आर्थिक उत्थान में बाधा पहुँचाई (गुण कर्मानुसार) श्रम विभाजन का कार्य तो व्यक्ति को आर्थिक विकास की स्वतन्त्रता देना होता है परन्तु जात-पात की प्रणाली द्वारा जिस ढाचे का निर्माण हुआ उससे श्रम विभाजन की वह योजना विकसित हुई जिससे आर्थिक विकास की स्वतन्त्रता कुंठित हो गई क्योंकि योग्यता, क्षमता और रुचि के स्थान पर सामाजिक स्थिति और पैतृक व्यवसाय के आधार पर पेशोंका निरूपण हुआ जिसके फलस्वरूप समाज का राजनैतिक विकास अवरुद्ध हुआ। भारत की राजनैतिक दासता में भी जात पात की प्रणाली का बहुत बडा हाथ रहा। विदेशीय आक्रमणों को भी इस प्रणाली ने ही सुगम एव सफल बनाया। बिखरे हुए और सघठित होने में असमर्थ समाज का सामना करने में आक्रान्ताओं को विशेष कठिनाई का अनुभव न हुआ। भारत में शताब्दियों पर्यन्त राष्ट्रिय जीवन का अभाव रहा जिसके कारण भारतवासियों ने राष्ट्र की आपत्ति को अपनी आपत्ति न समझा। हिन्दुओं की देश-भक्ति जात-पात की भक्ति में केन्द्रित रही। धार्मिक आचरण की अपेक्षा जाति के नियमों का पालन करने पर विशेष ध्यान रखा गया। कोई हिन्दू नैतिक दृष्टि से कितना ही गिरा हुआ क्यों न होता यदि वह जाति के नियमों का पालन करता था तो वह उस व्यक्ति की अपेक्षा अच्छा समझा जाता था जो धार्मिक जीवन व्यतीत करता हुआ भी बिरादरी के नियमों का उलघन करता था।

जात-पात की प्रणाली ने समाज-विरोधी व्यवहार और आचरण पर पर्दा डालने और उसका औचित्य प्रतिपादित करने का भी काम किया। बहुत सी जरायम पेशा जातियो ने मनुष्यो के प्रति किए जाने वाले दुर्व्यवहार और अत्याचार का यह कहकर समथन किया कि यह उनकी जाति का पेशा है जिसके कारण वे विवश हैं। ठगों ने ठगी के पेशे को धर्म बनाकर भवानी के नाम पर लोगों का गला घोट कर अपनी जेबे भरीं। वे यह मानते थे कि उनके शिकार तो ईश्वर द्वारा मारे गए हैं और वे निमित्त मात्र हैं। जात पात के कारण स्त्री-जाति को भी बहुत सी कठिनाइया सहन करनी पडती हैं विशेषत उन जातियों की जो सामाजिक स्थिति को ऊचा करने का यत्न करती हैं।

जहातक अन्त्यजो के प्रति व्यवहार का सम्बन्ध है जात-पात की प्रणाली कठोर आलोचना का विषय रही है और रहेगी।

जात-पांत की प्रणाली के विनाश को समाज के लिए घातक बताते हुए भी प्रोफेसर महोदय उसमें सुधार करने की प्रेरणा करते हुए लिखते हैं:—

"यदि जात-पात का विनाश सम्भव भी हुआ तो यह विनाश समाज के लिए घातक सिद्ध होगा

विचारार्थ---

क्या सूक्ष्म शरीर द्वारा किये कर्म का प्रभाव अन्यों पर पड़ता है ?

(श्रीयुत बा० कालीचरण आर्य)

हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम् ऊधर्न नग्ना जरन्ते ॥

यह तो निर्विवाद सत्य ही है कि मनुष्य अपने और अन्यों के कर्मों से (यदि अन्यो के कर्म मनुष्य के सामने हैं) तो प्रभावित अवश्य होता है कैसा प्रभाव पडता है यह निश्चित नहीं कहा जा सकता। किन्हीं पर अच्छा और किन्हीं पर बुरा भी। क्योंकि बाहर से प्राप्त ज्ञान जब द्रष्टा या श्रोता के हृदय में स्थान पाता है तब द्रष्टा व श्रोता के अपने विचार भी उसमे सम्मिलित हो जाते हैं और यत मनुष्यो के विचार समान नही होते अत उनका मिश्रण भी समान फल या प्रभाव नहीं रखता सचाई भी यही है कि यदि किसी राशि में असमान राशि जोडी जावे या निकाली जावे तो योग या शेष भी असमान ही होगा परन्तु फल या प्रभाव अवश्य होगा। प्रश्न है कि स्थूल शरीर के समान सूक्ष्म शरीर द्वारा किये कर्म का प्रभाव अन्य पर पडता है या पड सकता है अथवा नही।

इसमे तो कदाचित दो मत न होंगे कि स्थूल शरीर अकेला कर्म नही करता परन्तु सूक्ष्म शरीर अकेला भी करता है और स्वप्न तो केवल सूक्ष्म शरीर का ही खेल है। इस सूक्ष्म शरीर द्वारा किये कर्मों का प्रभाव दूसरे सूक्ष्म शरीर पर तब ही होना सम्भव है जब हमें यह सिद्ध हो जावे कि किसी प्रकार भी दो सूक्ष्म शरीरो का परस्पर सम्बन्ध है या हो सकता है प्रत्यक्ष में तो ऐसा होता प्रतीत नहीं होता तो क्या सीधा सम्बन्ध न सही किसी के द्वारा सम्भव है ?

अब हमारे पास दो साधन हैं जो दो सूक्ष्म शरीरो को जोड़ सकते हैं या जिनके साथ दो सूक्ष्म शरीरो का सम्बन्ध है एक तो हमारा तीसरा कारण शरीर जो सब का एक है दूसरा साधन परम पिता परमात्मा है जिसके कारण हम सब प्रकार से एक दूसरे से मिले हुए हैं।

यदि यह ठीक है कि हमारे स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर प्रति क्षण क्षीण होते रहते है यत यह दोनो भौतिक हैं और जितना क्षीण होता है वह कारण शरीर से ही पूरा होता रहता है और हमारे शरीरो से क्षीण तत्व कारण मे मिलते रहते हैं तब इस प्रकार हमारे मानसिक तत्व मानसिक तरङ्गो के साथ प्रवाहित होकर दूसरे मनो को प्रभावित करेंगे ? जब कि हमारे स्थूल शरीर द्वारा वायु मण्डल में फेंके हुए शब्द दूर स्थान पर बैठे हुए पुरुषो को प्रभावित कर सकते हैं। वायु देवता आकाश में स्वच्छन्दता से बहने वाली वायु को इससे क्या सम्बन्ध कि कोई शब्द जिह्वा से निकला है या मन से उसके लिये दोनो समान हैं।

दूसरा साधन ईश्वर का तो स्पष्ट है कि प्रभु से सम्बन्ध हो जाने पर साक्षात् कर लेने पर दूसरो को प्रभावित करना और दूसरो से प्रभावित हो जाना साधारण बात है।

❀

जिसका निर्माण अतीत काल से इसके जाने में हुआ है। धार्मिक विश्वासों में सुधार आने से जिसका प्रारंभ हो चुका है इस प्रणाली में सुधार हो जायगा। कम से कम सुधार का कार्य तो सुगम हो ही जायगा और स्वत ही अन्त्यजो की अवस्था सुधर जायगी। जो प्रणाली सुतरा व्यक्ति और समाज के लिए कई दृष्टियों से बाधक है उसे नष्ट करने का कोई कारण नहीं जान पडता।"

प्रोफेसर महोदय के इस मत से उस मत की पुष्टि होती है जो जन्मना जात पात के स्थान में गुण कर्म पर आश्रित वर्ण व्यवस्था का पृष्ठ पोषण करता है क्योंकि वर्तमान जन्मना जात पात की प्रणाली वर्ण-व्यवस्था का ही विकृत रूप है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

प्राणिजगत् और विकासवाद

[श्रीयुत उदयवीर शास्त्री, गाजियाबाद]

[१]

प्राणि जगत् के प्रादुर्भाव मे अनेक मत हैं। आधुनिक पाश्चात्य विद्वानो का विचार है कि सर्वप्रथम एक कोश वाले देह के रूप मे प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ। धीरे धीरे उसी के विलक्षण-विकास के परिणाम स्वरूप अनेकानेक कोशयुक्त देहो का प्रादुर्भाव होता रहा। इस प्रकार एक ही मूल से विभिन्न शाखा प्रशाखा फूट चली जो अब अनेक वर्गों के रूप मे पाई जाती हैं। कतिपय ऐसी मान्यता है, जिन पर आधुनिक विकासवाद आधारित है, मान्यताओ को सक्षेप से इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है —

(क) प्रारम्भ मे पृथिवी एक गैस या अग्नि का पुञ्ज थी धीरे धीरे वह कठोर और ठण्डी हुई। फलत उसका ऊपरी भाग ऊचा नीचा तथा कठोर हो गया। किन्ही प्राकृतिक कारणो से उस पर वायु एव जल का प्रादुर्भाव हुआ, तब तक पृथिवी का ऊपरी भाग परतहीन ठोस चट्टानो के रूप मे अति कठोर था। ताप तथा वायु आदि के प्रभाव से ये चट्टाने धीरे धीरे तिडकी फटी-टूटी, और तब क्रमश मिट्टी के रूप में बनी।

(ख) प्राणी अथवा जीवन-तत्त्व का प्रथम आविर्भाव जलो मे उद्भिज के रूप मे हुआ। पहले जल वायु मिट्टी आदि के ससर्ग से एक प्रकार की सूक्ष्म काई बनी, उसी से पुन जल वायु का विलक्षण प्रभाव प्राप्त कर समस्त जलीय तथा पृथिवी के तृण, वीरुध, लता, गुल्म, ओषधि, वनस्पति तथा विविध वृक्ष आदि का क्रमश विकास हुआ।

(ग) कालान्तर मे इसी मूल जीव बीज सर्वप्रथम जल मे ही एक दूसरी जीवनशाखा चली। यह आरम्भ मे अमीबा की भाति के एक कोश वाले सूक्ष्म जतु हुए। धीरे धीरे जलीय कीट, मछली, मेढक कछुवा वराह रीछ बन्दर वनमानुष आदि विभिन्न प्राणिस्तरो को पार करता तथा विकसित होता हुआ मनुष्य बना है उस आदिकालीन एक कोश के प्राणो से मनुष्य तक पहुँचने के लिए मध्य मे जीवन के सैकडो सहस्रो स्तर पार किये गये, सम्भवत लाखो करोडो वर्षों मे मनुष्य वर्तमान रूप मे आया है।

आधुनिक खोजी अध्यवसायशील व्यक्तियो द्वारा मूल एक कोशीय प्राणी से मनुष्य तक की शृ खला के बहुत से अस्थिपञ्जर ढू ढ निकाले गये है जहा यह शृ खला नही मिली, वहा मध्यवर्त्ती ढाचो के प्राणी नष्ट हो गये मान लिये गये हैं, उनके ककाल भी आज तक कोई उपलब्ध नही है।

जीवन विकास के कारण——

आद्यकालिक प्राणि रचना को क्रमिक विकास सिद्धान्त के आधार पर मानने वाले विद्वानो ने इस बात पर विचार किया है कि एकमात्र मूल से अनेक शाखा-प्रशाखाओ मे बट कर विभिन्न योनियो के रूप मे जीवन कैसे पहुच जाता है। उनका कहना है, कि प्राणी की इच्छा और उसकी आवश्यकता ऐसी स्थितिया हैं जो उसके विकास एव परिवर्तन का विशेष कारण होती हैं। भोजन के लिये प्रयत्न तथा प्राकृतिक सघर्षों एव शत्रुओ से रक्षा के लिए प्राणी को अनेक परिवर्तनो मे से होकर गुजरना पडा है। उनमे जो अपने को

प्रकृति के अनुकूल बनाने मे सफल हो सके, वे बचे रहे, जो उन सघर्षों मे अपने को परिवर्तित न कर सके एव जीवन की रक्षा मे असफल रहे वे नष्ट हो गये। इन्ही कारणो से शरीरो मे धीरे धीरे परिवर्तन होता रहा, और विभिन्न योनियो के रूप मे प्राणी बट गया।

उदाहरण के लिए देखिये, पानी का समुद्र था, नदिया थी, छोटे-छोटे सागर थे इन जलो के तट भागो मे भूप्रदेश घने जगलो से घिरे थे, वायु के तीव्र झोको से वृक्षो की शाखा टूटती और पानी मे गिर जाती वह इधर उधर बहती और तैरती। उनके गलने सडने पर उनमें कीडे पड जाते। उन्हे खाने के लिये जो मछलिया उछल कर उन पर पहुचने लगी, वे धीरे-धीरे मेढक बन गई। इसी प्रकार जो मेढक तरुओ के तनो पर रेगते हुए कीडो को पकडने लगे वे क्रमश गिलहरी बन गये, ऐसे ही अपनी रक्षा के लिए परिस्थितियो के अनुसार किन्ही प्राणियो के सीग, किन्ही के नख और किन्ही के दातो की क्रमश ऐसी रचना हो गई जिन्हे सघर्ष के समय प्राणी अपने बचाव के लिए एक हथियार के समान प्रयोग करने लगे अधिक शीत और उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशो मे प्राणियो के अधिक रोम तथा रोम का प्राय अभाव हो गया।

अफ्रीका के मरु प्रदेशो मे एक लम्बी गर्दन का जानवर जेरा नाम का पाया जाता है, कहते हैं, यह प्रारम्भ में ऐसा न था जैसा आज देखा जाता है। मरु प्रदेशो मे ऊचे वृक्षो पर अपने आहार को प्राप्त करने की इच्छा ने उसके अग्रिम भाग और गर्दन को लाखो वर्षों मे इतना लम्बा बना दिया। उन्ही प्रदेशो में जिनको आहार के दूसरे साधन मिल गये, वे वैसे ही रह गये। अभिप्राय यह है, कि आधुनिक विकासवाद के अनुसार प्राणी के क्रमिक विकास मे उसकी आवश्यकता जन्य इच्छा और उसके पूरा करने के चिरकालीन अभ्यास को आकृति परिवर्तन का मूल कारण माना जाता है।

विकासवाद की मान्यताओं का विवेचन--

प्राणि जगत् के प्रादुर्भाव की यह कल्पना बडी रोचक है। आज का तथाकथित बुद्धिजीवी मानव इस पर मुग्ध है। भावुकता की बात और है पर प्राणी के प्रादुर्भाव की यह प्रक्रिया विचारशील मानव-मस्तिष्क को पूरा सन्तोष नही दे पाती। सम्भवत इस विषय मे अन्य कोई प्रक्रिया भी ऐसी प्रकाश मे नही आई, जो विचार की सन्तोषजनक स्थिति के लिए सहयोग दे। पर इससे उक्त प्रक्रिया के दोषो व न्यूनताओ को ओझल नही किया जा सकता। इस विषय के किसी भी विवेचन से पूर्व यह जान लेना अपेक्षित होगा, कि प्राणि रचना में विकास सिद्धान्त की उद्भावना करने वाले विद्वानो ने चेतन आत्म तत्व की स्थिति को उस रूप में स्वीकार नही किया, जिस रूप मे भारतीय ऋषियो ने माना और उसका प्रतिपादन किया है।

विकासवाद के अनुसार चेतना का उद्भव प्राकृत तत्वो से माना जाता है। जेरा के सर्वप्रथम स्तर के किसी पूर्वज की यह भावना जागृत हुई कि वह ऊचे पेड के पत्तो को खा सके। प्राकृतिक नियमो व व्यवस्थाओ के अनुसार अपनी सन्तति के लिये प्रजननक्रिया के अनन्तर गर्भाशय मे नवीन शरीर की रचना जिन तत्वो से प्रारम्भ होती है, वे प्राकृतिक तत्व है, वह चेतना, जहा ऊचे पत्तो को खाने की भावना जागृत हुई है, वह भी एक प्राकृत तत्त्व है। इन तत्त्वो के समान जातीय होने के कारण जनक प्राणी की भावनाओ के जन्य-प्राणी शरीर मे सक्रान्त होने की सम्भावना हो सकती है। अभिप्राय यह, कि इस वाद में देह की आकृति समानता की तरह भावसमानता भी सन्तति मे आ सकती है ऐसा माना जाने का उपयुक्त अवकाश है। इस प्रकार जेरा के जिस पूर्वज को ऊचे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, वह उसकी सन्तति में भी सक्रान्त होती रही, और लाखों वर्षों की इस अनवरत भावना का परिणाम

वर्त्तमान जेरा के रूप में प्रकट हुआ।

यदि चेतना की स्थिति को उक्त रूप में स्वीकार कर लिया जाता हैं, तो भी इस विचार में बहुत आपत्ति है। जिस जेरा के पूर्वज को ऊचे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, अवश्य वह दस-पन्द्रह बीस वर्ष जीवित रहा होगा। यह निश्चित है, कि वह अपने जीवन में ऊचे पत्ते नही खा सका, फिर भी अवश्य वह इतने वर्ष किसी आहार पर जीवित रहा होगा। यह सम्भावना सवथा हास्यास्पद होगी, कि जैसे ही उसे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, उसने सन्तति में अपनी भावना सक्रान्त कर तत्काल आहार के अभाव में शरीर छोड दिया। आगे होने वाली का पालन पोषण, पोषकों के जीवन का निर्वाह आदि आहार के बिना सम्भव नही माना जा सकता। ऐसी स्थिति मे यह स्वीकार करना होगा, कि अन्य प्राणियो के समान—जिनको आहार मिलते रहने के कारण गर्दन नही बढ़ी—जेरा के पूर्वजों को भी बराबर आहार मिलता रहा, इसी रूप में उन्होने लाखों वर्ष बिताये। तब गर्दन बढ़ने का विकासवाद प्रतिपादित कारण ही जड से उखड जाता है।

विकासवाद के पोषक विद्वान् सम्भवत यह समझते हो, कि जेरा ने जब वृक्षो के नीचे के पत्ते चुग लिये, फिर दुबारा वृक्षो के उन स्थलो में पत्ते नहीं निकलते होगे, इसी लिए ऊपर के पत्ते खाने की भावना उसमे बराबर उभरती रहती है। पर ऐसा सोचना सृष्टिक्रम के सर्वथा विपरीत है जिन निचलो टहनियो के पत्ते एक बार खाये जाते हैं, समय आने पर उनमें फिर नये पत्ते निकल आते हैं, और जेरा का आहार नई कोमल पत्तियो के रूप में बराबर बना रहता है। आज भी इस स्थिति को स्पष्ट रूप में देखा जा सकता है। पशु प्रतिदिन जगल में घास पत्तिया चुगते हैं, और न मालूम कब से चुगते चले आ रहे हैं, पर अन्य विविध बाधाओं व आपत्तियों के रहने पर भी आहार में कोई कमी नही है। जेरा के लिए नीचे पत्तियों या आहार में ऊपर की पत्तियो के खाने की भावना का जो उद्भावन किया गया है वस्तुत विकासवाद के सस्थापको की यह कल्पना ही निराधार है। हम देखते हैं, बकरी नीचे के घास पत्ते चुगती है, और पेड के तनो व टहनियो पर अगले पैर रखकर जहा तक उसका मुह जाता है, पत्ते चुग लेती है। इसी तरह वह लाखो वर्षों से चुगती चली आ रही है जहा तक चुग सकती है, उसके ऊपर भी पत्ते रहते हैं, सम्भवत उन्हे भी चुगना चाहती हो पर न उसकी गर्दन बढी, न अगला भाग लम्बा हुआ और न उसके लिये चारे की कमी हुई, फलत जेरा की बनावट के लिये विकासवादियो की कल्पना बालको की कहानी जैसी है।

चेतन आत्मा को भारतीय विचार के अनुसार प्राकृत तत्त्वो से अतिरिक्त मानने पर एक चेतन की भावना प्रजनन व्यवस्थाओ के अनुसार साधारण रूप से किसी अन्य चेतन में सक्रान्त होनी नहीं मानी जाती, अन्यथा जनक और सन्तति की भावनाओ में अनिवार्य समानता माननी होगी, जिसका कदाचित् कोई विरला ही उदाहरण मिल सके। किसी भी वर्ग में व्यवसाय आदि की समानता एक सामाजिक व्यवस्था है, यह सन्तति-अनुक्रम का फल नहीं। इसी कारण मूर्खों की सन्तान विद्वान्, पापियों की धर्मात्मा और इनके विपरीत बराबर देखी जाती है। नित्य चेतन आत्माओं के अपने कर्मों का सहयोग, आत्माओं की सर्वात्मना भावना समता में बाधक रहता है। फलत यह मानना चाहिये, कि प्राणि-रचना की विविधता के प्रतिपादन में विकासवाद के उक्त कारण अत्यन्त दुर्बल हैं।

अस्थि—

विकासवाद में अस्थि को आकृति परिवर्त्तन का आधार माना जाता है, विचारना चाहिए, ऐसे

शरीर अगो पर इच्छा आदि के प्रभाव की सभावना हो सकती है, या नही ? हम देखते हैं, शरीर के अनेक अगो पर इच्छा का कोई नियन्त्रण नही रहता दात, बढे नख, राम, केश आदि पर इच्छा का कोई दबाव नही है। इच्छा मात्र से यह उनको हिला तक नही सकते। शरीर का कोई अग टूट जाने पर जब अलग हो जाता है उस अस्थि को छूने या काटने मे किसी तरह का कष्ट या अन्य कोई अनुभव नही होता। शरीर मे सम्बद्ध रहने पर भी अपनी इच्छा मात्र से उसे अनुकूल अवस्था मे नही लाया जा सकता। इच्छा का जब इन पर कोई नियन्त्रण ही नही, तो इच्छा द्वारा अस्थि आदि की रचना तथा इनमे परिवतन कैसे सम्भव हो सकता है ?

प्राणी की आवश्यकता और उसकी पूर्ति के लिये दीघकालीन अभ्यास को आकृति परिवर्तन का कारण बताया गया पर यह स्थिति भी आकृति-परिवर्तन में असमर्थ है। कारण यह है, कि अभ्यास का दीघकाल दस बीस या पचास सौ वर्ष में पूरा नही हो जाता यह दीर्घ काल लाखो या करोडो वर्षो का स्वीकार किया गया है। इतने काल मे भौतिक स्थितियो की बहुत उलट-फेर हो जाती है जिस प्राणी को किसी समय कोई आवश्यकता प्रतीत हुई, उसके लिए दीर्घ काल के उतने वर्ष अपने जीवन मे पूरे करने सर्वथा असम्भव है। काल क्रमानुसार जन्म जन्मान्तर मे सन्तति क्रम के साथ इतने दीघ काल तक एक मात्र आवश्यकता की पूर्ति के अभ्यास का किसी भी युक्ति या प्रमाण से प्रतिपादन किया जाना अशक्य है। प्राणी की आवश्यकता और उसकी पूर्ति की स्थिति लाखो वर्षों तक लगातार एक जैसी बनी रही हो, यह सिद्ध किया जाना भी सम्भव नही।

केवल आहार या निवास आदि की ऐसी आवश्यकता कही जा सकती है। यदि आहार की प्राप्ति मे प्राणी सफल नही होता, तो उसका नष्ट हो जाना निश्चित है फिर दीर्घकालीन अभ्यास कैसा ? यदि प्राणी को आहार प्राप्त होता रहता है, चाहे वह किसी भी तरह का हो, तो उसकी आहार की आवश्यकता पूरी हो जाती है। यह ठीक है, कि उसके सुधार की ओर प्राणी का ध्यान आकृष्ट हो सकता है, और उसके लिए अनेक दिशाओ मे अथवा विधाओ मे प्राणी द्वारा प्रयत्न करते रहना सम्भव है ऐसा प्रयत्न सन्तति क्रमानुसार दीघ काल तक किया जाना सम्भव हो सकता है पर ऐसी आवश्यकताओ की पूर्ति और प्रयत्न के लिए आकृति परिवर्तन अपेक्षित नही है।

इस बात से कोई नकार नही करेगा कि ससार की प्रत्येक बालिका आभूषण धारण करने के लिये अत्यन्त उत्सुक व लालायित रहती है। इसके लिये वह बडी रुचि से अपने कान नाक छिदवा लेती हैं। पुराने से पुराना इतिहास इसका साक्षी है, कि बालिका अथवा महिला वर्ग की यह मनोवृत्ति एव प्रवृत्ति लाखो वर्ष से चली आ रही है, सम्भवत इस अभ्यास मे सन्तति क्रमानुसार कभी कोई आघात नही हुआ होगा। पर फिर भी इतने लम्बे काल से चली आ रही भावना और उसके अभ्यास ने ऐसी स्थिति को पैदा नही किया जिससे नाक कान छिदी बालिका उत्पन्न होने लगी हो। इस प्रकार के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो आवश्यकता और अभ्यास के विकास सिद्धान्तानुमोदित परिणामो के अनुकूल नही हैं। फलत ये कारण आकृति परिवर्तन मे सर्वथा असमर्थ समझने चाहिये।❀

(अपूर्ण)

× ×

❀ लेखक के मुद्रयमाण ग्रन्थ 'साख्यसिद्धान्त' के एक अश के आधार पर। लेख का अवशिष्ट अश अगले अक मे पढिये।

श्वेताश्वतर उपनिषत् का महत्व

आचार्य मेधार्थी स्वामी विद्यालकार, एम० ए०

आर्य समाज १० उपनिषदों को मानता है। उन १० उपनिषदों में श्वेताश्वतर उपनिषत्' की गणना नही है। वैसे इस ११ वी उपनिषत् के प्रमाण सत्यार्थप्रकाश में भी अंकित हैं। हमारे सन्यास दीक्षा गुरु, वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज का तो कोई भाषण ही प्रारम्भ नही होता था— जब तक इस 'श्वेताश्वतर उपनिषत्' के श्लोक (गाथा) गान लेते थे। आज भी अनेक आर्य-समाजी महात्मा अपाणि पादो' आदि श्लोक सुना कर 'ईश्वर' के गुण गान करते हैं परन्तु खेद है कि इस महत्वपूर्ण 'श्वेताश्वतर' उपनिषत् का प्रचार नही किया जाता है। इस 'उपनिषत्' के साथ जो अन्याय हुआ है उसमे रहस्य पूर्ण कारण हैं। भारत में उदार और अनुदार 'आर्य' सदैव रहे हैं। ये बेचारी उपनिषत् अनुदार आर्यों के चक्कर में पड कर सड रही है। यही बात इस लेख द्वारा व्यक्त कर रहा हूं। विज्ञ गण निष्पक्ष होकर लिखे।

महर्षि दयानन्द जी ने सस्कार विधि के गृहस्थ आश्रम प्रकरण मे 'गीता' के श्लोको को प्रमाण रूप मे प्रस्तुत करते हुए प्रतिपादित किया है कि वेदानुकूल श्लोक सर्वत्र सम्माननीय हैं। मनुस्मृति के साथ भी तो यही नियम वर्ता गया है। फिर 'श्वेताश्वतर' उपनिषत् को भी इस कसौटी पर क्यों न कसा जाय। मेरा तो दावा है कि 'श्वेताश्वतर' उपनिषदों में एक शब्द भी वेद विरुद्ध नही है। ऐसी दशा में 'ईशोपनिषत्' को सर्व प्रथम उपनिषद् न मानने से काम चल जाता है।

'ईशोपनिषत्' का तो स्वाध्याय यजुर्वेद के ४०वे अध्याय के रूप में स्वत स्वामी दयानन्द कृत वेदभाष्य के साथ समीचीनतया हो जाता है। फिर ईशोपनिषत् को १० उपनिषदों में गिनने से बड़ा पक्षपात हुआ है।

शुक्ल यजुर्वेद वाले कृष्ण यजुर्वेद को सदैव हीन मानते रहे।

और काण्व शाखा वाले कठशाखा वालो को सदैव हेय मानते रहे। यजुर्वेद शतपथ ब्राह्मण में कठ शाखा वालों ने स्त्रियो को 'प्रणीता' बता कर पौरोहित्य से वंचित रखा है काण्व शाखा वाले तो इस मन्त्र को मानते है —

अधः पश्यस्व मोपरि, संतरां पादकौ तर ।
मा ते कच प्लशौ दृशन् स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ

(ऋग्वेद)

इस मन्त्र का कण्व ऋषि है। कण्व शाखा वाले उदार आर्य थे और कठ शाखा वाले अनुदार आर्य (पुराणपन्थी पोप=कठमुल्ला) थे। 'कठोपनिषत्' मे भी गुप्त रूप से 'सर्वेन्द्रियाणा जयन्ति तेज' कह कर स्त्रियो को समुचित स्थान नही दिया गया है। दूसरी तरफ काण्व शाखा की उपनिषत् 'श्वेताश्वतर' में परमात्मा को भी 'त्व स्त्री' ऐसा कह कर स्त्रियो को मान प्रदान किया गया है। स्मरण रहे—

(श्वेताश्वतर उपनिषत्) कृष्ण यजुर्वेदीय है। इतनी अच्छी है कि सब उपनिषदो से बढ कर है। महर्षि दयानन्द ने भी सब से अधिक प्रमाण (श्वेताश्वतर) उपनिषद् के ही दिये है। आर्य जगत् के अनेक सन्यासी (स्वामी सर्वदानन्द सर्वोपरि थे) श्वेताश्वतर के ही श्लोक गाया करते थे। तमीश्वराणा, अपाणि पादो, न तस्य कार्य और एकोवशी० आदि सुप्रसिद्ध श्लोक श्वेताश्वतर उपनिषद् के ही हैं। योग विद्या तथा जीवात्मा का जेसा विधिवत बढिया वर्णन इस उपनिषद् में है वैसा अन्य में नही है। इसलिए मेरी अपनी सुदृढ सम्मति है कि ईशोपनिषत् को तो यजुर्वेद का ४०वां अध्याय मान कर वहा ही सुप्रतिष्ठित रहने दिया

भगवान् कृष्ण

चरित्र-विश्लेषण

[प्रो० भवानीलाल भारतीय एम० ए०]

मनुष्य अपनी विविध प्रवृत्तियो को उन्नति के सर्वोच्च सोपान पर पहुँच कर किस प्रकार एक साधारण मानव से महामानव के उच्च पद पर प्रतिष्ठित हो सकता है इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण कृष्ण का जीवन है। कारागार की विवशतापूर्ण परिस्थितियो मे जन्म लेकर भी कोई मनुष्य ससार का महानतम नेता किस प्रकार बन जाता है यह कृष्ण के चरित्र से स्पष्ट है। बकिमचन्द्र के अनुसार कृष्ण ने अपनी ज्ञानाजनी, कायकारिणी और लोकार्जनी तीनो प्रकार की प्रवृत्तियो को विकास की चरम सीमा तक पहुँचा दिया था तभी उनके लिये यह सम्भव हो सका कि वे अपने समय के महान् राजनीतिज्ञ समाज व्यवस्थापक और धार्मिक नेता के गौरवास्पद पद को आसीन कर सके।

बाल्यावस्था से लेकर जीवन के अन्तिम क्षण तक कृष्ण उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होते रहे। उनका एक मात्र उद्देश्य रहा धर्म के अनुसार लोगो को अपने २ कर्त्तव्यो के पालन मे रत रखना। वे स्वय धर्म मे अनन्य निष्ठा रखने वाले और उसके वास्तविक रहस्य को जान कर उसका उपदेश देने वाले महान् उपदेष्टा थे। ऋषि दयानन्द ने तो यहा तक कह दिया है कि श्रीकृष्ण ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी बुरा काम नही किया। यह सब कुछ धम के कारण ही सम्भव हो सका और तभी तो महाभारतकार ने लिखा—

यतो कृष्णस्ततो धर्मः यतो धर्मस्ततो जयः।

जहा कृष्ण हैं वहा धर्म है और जहा धर्म है वहा जय है। सजय ने भी गीता के अन्त मे धृतराष्ट्र से यही बात कही —

यत्र योगेश्वरो कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिध्रुवा नीतिर्मति मम ॥

जाए क्योकि इतनी क्लिष्ट है कि आज तक क्लीयर नही है। सम्भूति असम्भूति, विद्या, अविद्या और हिरण्यमयेनपात्रेण० अभी तक गुत्थिया हैं। सर्वप्रथम केनोपनिषत् रहे, क्योकि सरल समुपयोगी और सुरुचिर है। १०वी उपनिषत् काण्वशाखा की कृष्ण यजुर्वेदीय श्वेताश्वतर' हो जाय। इस उपनिषत् का जितना प्रचार होगा— लाभ ही लाभ होगा, आनन्द ही आनन्द होगा। आज तक जो पक्षपात कण्वशाखा वाली कृष्ण यजुर्वेदीय इस उपनिषत् के साथ हुआ है उसका प्रायश्चित यही है कि घोषणा पूर्वक प्रामाणिक १० उपनिषदो में इसकी गणना की जाय। खूब प्रचार किया जाय। मैं तो शीघ्र ही प्रकाशित भी करने जा रहा हू। इसके पाठमात्र से चित्त गद्गद हो जाता है। एक एक श्लोक कण्ठ करने योग्य है। अब कुछ दिन (ईशोपनिषत्) को शुक्ल यजुर्वेद के गर्भ में रहने दिया जाय। नही तो कहना पडेगा। कुछ परिवतन करके —

अन्धतमः प्रविशन्ति ये ईशां उपासते।
ततो भूय इव ते तमो ये ह्यस्याथरताः ॥

— ❀ —

जहां योगेश्वर कृष्ण और गाण्डीव धारी अर्जुन हैं वहां श्री है, विजय है, अधिक क्या कहे वहीं विभूति और अचल नीति है। ये उक्तियां कृष्ण को ईश्वरावतार मान कर नहीं कही गई हैं। यदि ऐसा होता तो इनका कुछ भी मूल्य नहीं होता। ये कृष्ण की सर्वोपरि मानवी भावनाओं को ही प्रकाशित करती हैं जिनकी चरम साधना से कृष्ण साधारण कोटि से उठ कर महापुरुषों की श्रेणी में आये, योगेश्वर और योगीराज बने।

बाल्यकाल से ही देखिये। एक दृढ विचार वाले पुष्ट शरीर वाले, स्वस्थ मन तथा बलवान आत्मा वाले अन्तेवासी मे जो २ विशेषतायें होनी चाहिये वे हमे कृष्ण मे मिलती हैं। उनका शारीरिक बल एक अनुकरणीय वस्तु है जिससे उन्होने बाल्यकाल में ही अनेक आपदायक और हिंसक जन्तुओ का वध किया। समय आने पर उन्होने युद्धकौशल और रणनीति का सांगोपांग अध्ययन किया। युद्ध नीति के वे प्रकाण्ड पण्डित थे यह तो इसी से ज्ञात हो जाता है कि अर्जुन और सात्यकि जैसे वीर उनके शिष्य थे जिनको उन्होने युद्ध विद्या सिखाई थी। गदा युद्ध और असियुद्ध के वे विशेषज्ञ थे और निर्भयता, चातुर्य और साहस के भण्डार।

शारीरिक बल के अतिरिक्त उनका शास्त्रीय ज्ञान भी बढा चढा था। भीष्म की इस उक्ति से यह ज्ञात होता है कि वे वेद वेदांग, विज्ञान के ज्ञाता थे—

वेद वेदांग विज्ञानं बलं चाप्यधिकं तथा।
नृणां लोकेहि को अन्योऽस्ति विशिष्टःकेशवादृते

साथ ही साथ वे चिकित्सा, संगीत अश्व-परिचर्या आदि विविध लौकिक विद्याओं के भी पण्डित थे। मृत प्राय उत्तरा के बालक को जीवन प्रदान करना, मुरली वादन के द्वारा सब के मनों को मोहित करना तथा अर्जुन के सारथी बन कर भयकर युद्ध क्षेत्र में अपने सखा की रक्षा करना आदि उदाहरण इन बातों को सिद्ध करते हैं।

शारीरिक बल और मानसिक शक्तियों का उन्होंने चरम विकास किया परन्तु आचार की दृष्टि से भी उनकी बराबरी उस समय का कोई पुरुष नही कर सका। वे महान् सदाचारी और शीलवान पुरुष थे। माता पिता की आज्ञा का पालन करने और उनके प्रति पूज्य भाव रखने में उन्होने कभी प्रमाद नही किया। वे मादक द्रव्यो तथा द्यूत आदि बुराइयों से सदा दूर रहते थे यहा तक कि उन्होने समय २ पर यादवों मे ये आज्ञाये प्रचारित करा दी थी कि कोई जन यदि मदिरा पियेगा तो वह राज्य की ओर से दण्डनीय होगा।* एक पत्नीव्रत का पालन करते हुए भी उन्होने सपत्नीक बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया।

ब्रह्मचर्यं महद्घोरं चीर्त्वा द्वादशवार्षिकम्।
हिमवत पार्श्वमभ्येत्य यो मया तपसार्जितः॥

(सौप्तिक पर्व १२।३०)

तदनन्तर उनके प्रद्युम्न जैसा पुत्र उत्पन्न हुआ जो रूप, गुण, शील और आचार मे पिता के तुल्य ही था। पुराणकारों ने उनके चरित्र के इस पहलू को सम्पूर्णतया विस्मृत कर दिया है।

श्रीकृष्ण सन्ध्या और अग्निहोत्र आदि दैनिक कर्तव्यों के पालन में कभी प्रमाद नहीं करते थे। महाभारत मे स्थान २ पर इसका उल्लेख मिलता है। दुर्योधन से सन्धि वार्ता के लिये जाते हुए कृष्ण को जब २ प्रात या सायकाल उपस्थित होता है तब २ वे सन्ध्या और अग्निहोत्र करना नहीं नहीं भूलते। महाभारत में लिखा है—!

प्रातरुत्थाय कृष्णस्तु कृतवान्सर्वाह्निकम्।
ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातो प्रययौ नगरं प्रति॥

उद्योग पर्व अ० १३

---

* अद्य प्रभृति सर्वेषु वृष्ण्यन्धक कुलेष्विह।
सुरासवो न कर्तव्य सर्वैर्नगरवासिभिः॥
यश्च नो विदित कुर्यात् पेय कश्चिन्नर क्वचित्।
जीवत स शूलमारोहेत स्वय कृत्वा सबाधव॥
मौसलपर्व १। २९। ३॥

प्रात काल उठकर कृष्ण ने आह्निक आदि कियाये की, पुन ब्राह्मणो की आज्ञा लेकर नगर की ओर गये। इसी प्रकार का एक अन्य श्लोक हैं —

कृत्वा पौर्वाह्णिक कृत्यं स्नातः शुचिरलंकृतः।
उपतस्थे विवस्वन्तं पावकं च जनार्दनः ॥

उद्योग पर्व अ० ८ ॥

स्नान के अनन्तर अपने शरीर को कृष्ण ने अलकृत किया। तत्पश्चात् सन्ध्यादि कृत्य सूर्योपस्थान और अग्निहोत्र किया। अब इसे विडम्बना के अतिरिक्त और क्या कहा जाय कि नित्य सन्ध्या योग के द्वारा सच्चिदानन्द ब्रह्म का ध्यान करने वाले और अग्निहोत्र के द्वारा देवताओ का यजन करने वाले आर्य मर्यादा पालक महापुरुष कृष्ण को लोगो ने साक्षात् ईश्वर ही बना दिया।

कृष्ण चरित्र की सर्वोपरि विशेषता उनकी राजनतिक विचक्षणता और नीतिज्ञता है। उनका राजनीति के प्रति यह अनुराग किसी स्वार्थ की भावना से प्रेरित होकर नही था जैसा कि आज कल के अनेक तथाकथित राजनीतिज्ञो का होता है। उनकी राजनैतिक विचारधारा किसी सकुचित राष्ट्रीयता के क्षेत्र मे बधी हुई नही थी। उस समय वर्तमान युग मे व्यापक सीमित राष्ट्रीय भावना का तो जन्म ही नही हुआ था। कृष्ण के इस क्षेत्र में प्रवेश करने का एक मात्र उद्देश्य था लोक कल्याण व विश्वकल्याण की भावना का प्रसार एव आर्य विधि का सस्थापन। लोकोपकार की यही भावना लेकर वे इस क्षेत्र मे प्रविष्ट हुए।

उन्होने जहा अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्वपूर्ण प्रश्नो को सुलझाया वहा सामाजिक प्रश्नो की भी अवहेलना नही की। वे वर्णाश्रम धर्म के प्रबल समर्थक और शास्त्रीय मर्यादा के रक्षक थे। किसी भी प्रकार की सामाजिक कट्टरता या अनुदारता का समर्थन एव गतानुगतिकता का पोषण उन्होंने नही किया। उनकी सामाजिक धारणाये उदारता पूर्ण और नीतियुक्त होती थी। उन्होने सदा दलित और पीडित वर्ग का पक्ष ग्रहण किया। विदुर जैसे धर्मात्मा लोगो का उन्होने सदा सम्मान किया। नारी वर्ग के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी। कुन्ती, गाधारी, देवकी आदि पूजनीया गरीयसी महिलाओ तथा सुभद्रा, द्रौपदी आदि कनिष्ठा देवियो के प्रति उनके हृदय में सम्मान और आदर के भाव रहे।

कृष्ण के व्यक्तित्व के इन विविध रूपो की आलोचना कर लेने के पश्चात् भी उनके चरित्र की उदात्तता और महनीयता की ओर ध्यान आकर्षित कराना आवश्यक हैं जिसके कारण आध्यात्मिक क्षेत्र के महान् उपदेष्टा और योगेश्वर के रूप मे उनका सर्वत्र सम्मान हुआ, हो रहा है, और ससार मे आर्य सस्कृति का प्रशसक जब तक कोई रहेगा तब तक होता रहेगा। कृष्ण राजनीतिज्ञ भी थे, धर्मोपदेष्टा भी थे, समाज सशोधक और क्रान्ति विधायक भी थे परन्तु वास्तव मे वे योगी थे और अध्यात्म पथ के अपूर्व पथिक। उन्होने कर्मयोग का उपदेश दिया और अपने जीवन में आचरण के द्वारा उसे प्रत्यक्ष कर दिखलाया।

वे ज्ञान और कर्म के समन्वय के पक्षपाती थे। यही आर्य धर्म की विशिष्टता है जो कृष्ण के व्यक्तित्व मे साकार हो उठी है। सच्चिदानन्द के परम तत्व का साक्षात्कार कर लेने के उपरान्त भी वे लोक मार्ग से च्युत नही हुए क्योकि वे गीता मे कह चुके हैं कि पूर्ण काम हो जाने के उपरान्त भी योगी को कर्तव्याचरण से विराम नही लेना चाहिये। इस प्रकार उन्होने पद्म पत्र की तरह निर्लिप्त रह कर कर्म करने का पाठ पढाया। यही कृष्ण के उपदेश का सार है और उनके जीवन की सफलता का रहस्य। जीवन की इसी विविधता और सर्वांगीणता के कारण कृष्ण चरित का स्थान ससार मे अद्वितीय है। स्वदेश ही क्यो विदेश मे भी ऐसा सर्वगुण सम्पन्न महापुरुष अद्यतन उत्पन्न नही हुआ, यह ध्रुव सत्य है।

महान् कृष्ण

(डा० सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार, एम० ए० डी० लिट्, अजमेर)

(१)

(छप्पय छन्द)

भारत के भर्तार, नीति के नेता नागर।
आगम के अवतार, अमित उपमा के आगर॥
श्रुति–समृति के सार, सुभग सुखमा के सागर।
अविचल अगम उदार, लोक–उद्यान उजागर॥
अरि दुष्ट-दल दहन के लिये, पावक–पुञ्ज प्रमान थे।
श्रुति धर्म उधारन के लिये, श्रीकृष्ण सुमहान् थे॥

(२)

था अधर्म का राज्य, अनय अन्याय अड़ा था।
भारत का साम्राज्य, नाश के निकट खड़ा था॥
मानसवासी हंस, पाप के पंक पड़ा था।
दश वश अवतंस, कंस कुअंश कड़ा था॥
जब पापाधिक बढ़ने लगे, फैले विपत्ति वितान थे।
तब भारत भू उर में जगे, श्रीकृष्ण सुमहान थे॥

(३)

भादो का था मास, अष्टमी तिथि थी प्यारी।
तमसावृत आकाश, निपट निशि थी अन्धियारी॥
धनि वह कारागार, अवनि पर उपमा न्यारी।
हरने को अघभार, जन्म जहं धरे मुरारी॥
है वह प्रसिद्ध जन्माष्टमी, भारत के इतिहास में।
जो युग युग से मनती रही, पावन पुण्य प्रकाश मे॥

(४)

था दुर्योधन दुष्ट न्याय का नाम मिटाया।
किया पाप को पुष्ट, फूट का फाट बढ़ाया॥
धर्मराज थे रुष्ट, व्यथित थी नय की काया।
कौरव दल का कुण्ठ, उभर जब ऊपर आया॥
तब युद्ध महाभारत रचा, दानव दल को दल दिया।
जय धर्म धूम जग में मचा, सत्य न्याय पर बल दिया॥

(५)

अहो ! कृष्ण महाराज, दुष्ट दल दलने वाले।
सजा विजय का साज, खलो को खलने वाले॥
योगी योग निधान, दिव्य-पथ चलने वाले।
राजनीति उद्यान बीच, फल फलने वाले।
शुभ कर्मयोग का देश को, पुण्य पाठ पावन दिया।
दे गीता के सन्देश को, ज्ञानयोग पुष्पित किया॥

आर्य समाज के सघठन के विकास में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अन्तिम कड़ी है। इस सभा की स्थापना २५ सितम्बर १९०८ को श्री स्वर्गीय भगवान दीन के सभा पतित्व में आगरे में हुई थी और इसका नियमानुसार प्रथम अधिवेशन ३१ अगस्त १९०९ को दिल्ली में हुआ था जिसमें भारतीय छ प्रान्तो के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। इस केन्द्रीय सभा की राजकीय नियम के अनुसार रजिस्ट्री २५ अगस्त १९१४ को सम्पन्न हुई थी। आर्य समाज के विस्तार के फल स्वरूप अन्य प्रान्तीय सभाये भी स्थापित होती गई और इसमें सम्मिलित होती गई। १९३७ में १३ प्रान्तों की प्रतिनिधि सभाये सार्वदेशिक सभा से सम्बन्धित थी और तब से इस का नाम वास्तविक रूप से सार्वदेशिक सार्थक हो गया क्योंकि उस समय भारत के केन्द्रीय सभा है जिसमें पांच भारत के बाहर स्वतन्त्र राज्यों में स्थित है। तथा प्रादेशिक सभा और सार्वदेशिक सभा के सम्बन्ध ने आर्य जगत् में एक महत्व पूर्ण कार्य करके दोनों सभाओं को गौरवान्वित करके आर्य ससार को अधिक शक्ति शाली बना दिया है।

सार्वदेशिक सभा के इस सगठन से हम यह परिणाम निकालते हैं कि इस केन्द्रीय सभा के दो रूप हैं। भारत की आर्य समाजों के लिये वह अखिल भारतीय सभा के रूप में है और ससार की आर्य समाजों के लिये वह वास्तविक रूप से सार्वदेशिक है।

यद्यपि आर्य समाज की विचार-धारा का प्रसार सार्वदेशिक सभा का मुख्य क्तव्य है तथापि भिन्न २ राज्यो की भिन्न २ परिस्थितियो के कारण वर्तमान सावदेशिक का काय दो प्रमुख विभागो मे बटा हुआ

आर्य समाज के संघठन की अन्तिम कड़ी

[श्री चन्द्र सहाय, बरेली]

बाहर की भी चार प्रतिनिधि सभाये इसमें सम्मिलित थी। सभा का कार्य और मान बढता गया और एक प्रकार से सभा का इतिहास ही आर्य समाज का इतिहास कहा जावे तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। सभा के १९६०-६१ के वार्षिक विवरण से पता चलता है कि सभा में निम्नलिखित १५ प्रतिनिधि सभाये सम्मिलित थी। उत्तर प्रदेश, पजाब, बिहार, बगाल, मध्यभारत, मध्यप्रदेश, राजस्थान, मध्य दक्षिण, सिंध कैम्प कल्याण बम्बई, पूर्वीय अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका, फिजी, सुरीनाम, पारामारिबो, मारिशस, उससे यह भी ज्ञात होता है कि उसी वर्ष २५-६ ६० को आर्य प्रादेशिक सभा उस सभा से सम्बद्ध हुई और गुजरात आर्य प्रतिनिधि सभा २९-१-६१ को उस में प्रविष्ट हुई। इस प्रकार हम देखते हैं कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा १७ प्रतिनिधि सभाओं की एक प्रतीत होता है। भारत की आर्य समाजो का पथ-प्रदर्शन और भारत के उन भागो में आर्य समाज का प्रसार जहा आर्य समाज की आवाज धीमी अथवा न होने के बराबर है और दूसरे समस्त ससार के आर्य समाजो का पथ-प्रदर्शन जिस में भारत की आर्य समाजें भी सम्मिलित हैं तथा भारतेतर ससार में आर्य समाज के प्रसार की योजना बनाना और उसको कार्य रूप में परिणत करना। दो विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों से घिरे रहने के कारण सभा के दोनों रूपो की मनोवृति में भिन्नता का आना स्वाभाविक है जो कार्य प्रणाली में अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रह सकता। सभा का एक रूप जहां एक समस्या को भारतीय दृष्टि कोण से देखने का प्रयत्न करेगा वहा सभा का दूसरा रूप उसी समस्या को वसुधैव कुटुम्बकम् के दृष्टि कोण से देखने के लिये बाधित

है। यदि हमारा जयघोष कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का है। सभा का यह रूप ही ऐसा रूप है जो वैदिक है और जो संसार के विद्वानों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है और जिसके द्वारा वैदिक धर्म का वास्तविक स्वरूप व्यक्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त भारतेतर देशों की आर्य समाजों का संगठन और उसका प्रसार नये क्षेत्रों में आर्य समाज की विचार धारा का वपन, उपयोगी साहित्य का प्रकाशन आदि २ भी ऐसे कार्य हैं जो एक संगठन के पूरे ध्यान को आकर्षित करने वाले हैं। हम देखते हैं कि संगठित आर्य प्रतिनिधि सभाओं की मांगों के अतिरिक्त कभी हमारे लिये संयुक्तराष्ट्र अमरीका के न्यूयार्क नगर से पुकार आती है और कभी दक्षिण अमरीका के चिल्ली प्रदेश से आती है। हम यह भी जानते हैं कि ब्रह्मा में आर्य समाजों का एक जाल सा बिछा हुआ है और उसमें एक प्रतिनिधि सभा भी स्थित है जो सार्वदेशिक सभा से अभी कुछ दिन से सम्बद्ध है। श्याम देश की राजधानी बैंकाक में समृद्ध आर्य समाज स्थित है। सिंगापुर में अपनी शान का अनोखा आर्य समाज है। बगदाद में भी आर्य समाज कार्य कर रहा है। अन्य अनेक स्थानों में आर्य समाज का वपन हुआ होगा। इन सब की देखरेख के लिये गहन विचार और ध्यान की आवश्यकता है ताकि उचित भोजन और जल-पान के सामयिक प्रदान से आर्य समाज के पौधे वृक्ष का रूप धारण कर सकें और सार्वदेशिक सभा को योगदान तन मन धन से दे सकें।

हम लोग "जीवित रहो और जीवित रहने दो" के सिद्धान्त के मानने वाले सार्व भौम दृष्टि कोण रखते हुए राष्ट्रवाद में भी पूरी आस्था रखते हैं। इस हेतु सभा के भारतीय रूप के सामने भी महान कार्य हैं और स्वराज्य प्राप्ति के बाद से उसका उत्तर दायित्व बहुत बढ़ गया है। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के मौखिक व्यावहारिक तथा लिखित उपदेशों से और आर्य समाज की वेदी से जिस स्वराज्य का यज्ञ प्रारम्भ किया गया था वह देश वासियों के महान बलिदान के फल स्वरूप १५ अगस्त १९४७ को फली भूत हुआ और २६ जनवरी १९५० ई० को भारत का प्रत्येक नागरिक उसके यज्ञशेष का अधिकारी भी घोषित कर दिया गया और हम लोग उस यज्ञ का प्रसाद भी पान करने लगे। परन्तु राष्ट्र के आधारभूत स्तम्भों के निर्माण में सतर्कता की कमी रही है जो स्तम्भो को अभी से जर्जरित करने लगी है। कहीं राष्ट्र भाषा के विरुद्ध आवाज उठाई जाती है, कहीं आदि वासी, हिन्दू द्रविड़ के कल्पित नामो पर नवजात राष्ट्र पर कुठाराघात किया जाता है और यद्यपि राज्य में विनाशकारी जाति उपजाति की प्रथा के उन्मूलन की नीति जन गणना में अपनाई है परन्तु जाति सूचक उपनामों के प्रयोग के प्रचलन पर रोक न लगाकर व इलेक्शन में अपने किये कराये काम पर लीपा पोती करके राष्ट्र के उत्थान में घोर संक्रामक रोग के भयङ्कर रूप धारण कराने में प्रोत्साहन सा दे दिया है और सर्वत्र अर्वाचीन काल की कलुषित विचार धारा के संसर्ग से हमारे सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय पर्वों के वास्तविक स्वरूप से उदासीन कराकर देश वासियो को आत्म गौरव से विहीन करके किं कर्तव्य विमूढ सा बना दिया है। यह केवल सार्वदेशिक सभा के भारतीय रूप का ही कार्य है जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के प्रशस्त मार्ग पर चलते हुए एक ही आवाहन में सब दोषों को परे हटाकर भारत के प्रबुद्ध मस्तिष्क को भारतीय गौरव की श्रेष्ठतम रूपरेखा से युक्त करके राजकीय शासन के कार्य को दृढ़ बनाकर राष्ट्र में मानसिक तथा भावात्मक एकता को उद्बोधित करके सारे भारत को एक झण्डे के तले विश्राम करने का पाठ पढ़ाये। इसके अतिरिक्त भारत में आर्य समाज के प्रसार के लिये अनेक कार्य हैं जिन में एक मन से लगने की आवश्यकता है। हमारा अनुमान है कि सार्वदेशिक सभा के दोनों रूप सम्मिलित रहते हुए अनेक कार्य जो वह सुगमता से कर सकती थी करने में असमर्थ सी रही है क्योंकि उसका ब्यौरा

आर्यों का मूल स्थान

श्री ओ३म् प्रकाश आर्य 'साहित्य रत्न'

सहस्रो वर्षों से ससार के राजनीतिज्ञ किसी उन्नतदेश को गुलाम बनाने और वहा के मूल निवासियो को समाप्त करने के लिए उनके गौरव शाली इतिहास और सस्कृति के साहित्य को नष्ट करते रहे हैं। यह एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि ससार के मानचित्र से किसी भी राष्ट्र को तब तक नही समाप्त किया जा सकता जब तक कि उसका साहित्य और गौरवशाली इतिहास सास्कृतिक कृतियो के रूप मे सुरक्षित रहेगा। कूटनीतिज्ञ विदेशियो ने भारत को अपने चगुल में फसा कर भारतीयो को मानसिक दासता की बेडियो में जकडने के लिए इसी उपर्युक्त कूटनीति के आधार पर भारतीय इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठो मे परिवर्तन प्रारम्भ किया। यह कूटनीतिज्ञ विदेशियो की ही देन है कि भारत को भारतीयो का मूल स्थान नहीं माना जाता। उन्हीं विदेशी गौराग महाप्रभुओ की अपमान जनक दीक्षा का यह परिणाम है कि आज भारतीय अनेक इतिहासकार, साहित्यिक और लेखक कहे जाने वाले महानुभाव भी भारत को भारतीयो का मूल स्थान नही मानते।

महर्षि दयानन्द ही वह प्रथम व्यक्ति थे जिन्होने विदेशियो की इस कूटनीतिक चाल को समझ सप्रमाण भारत को आर्यों का मूल स्थान सिद्ध करते हुए अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम् समुल्लास मे घोषित किया 'कि जब हमारे किसी भी प्राचीन ग्रन्थ वेद, शास्त्र उपनिषद आदि में यह नही लिखा कि आर्य भारत में बाहर से आए, तब विदेशियो की कपोल कल्पित बात कैसे माननीय हो सकती है ?" अर्थात् कभी नही हो सकती। यद्यपि दूसरे देशो के अनेक प्राचीन ग्रन्थ ऐसे हैं जिनमे लिखा है कि उनके मूल निवासी भारत से आए थे। आयरलेंड मे १८५७ में प्रकाशित लेडी व इन्ड की 'आयरलेंड की रहस्यमय पौराणिक कथाए" नामक पुस्तक के आमुख में लिखा है "... इसमे आयरिश लोगो की पुरानी मान्यताओ ... का वर्णन है, जो हजारो वर्ष पूर्व आर्यों के देश से आए थे।" आजकल भारतीयो के मूल स्थान और भारत के मूल निवासियो के सम्बन्ध मे अनेक प्रकार के लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते हैं, विद्वानो की अपनी अनोखी कल्पनाए और

कभी प्रकाश में नही आया आर्य समाज के अनेक सदस्य तथा हितैषी इस बात की बडे उत्कंठित हृदय से प्रतीक्षा मे रहते हैं कि जो ससार के राजनैतिक विद्वान् तथा सास्कृतिक शिष्ट मण्डल आए दिन भारत में और विशेष कर राजधानी दिल्ली में आते रहते हैं उन से सम्पर्क पैदा करने का शुभ समाचार पढने को मिले जो थोड़ा प्रयत्न करने पर भी अधिक फलदाता सिद्ध हो सकता है।

मैं सार्वदेशिक सभा की नीति से अनभिज्ञ रहता हुआ एक साधारण आर्य समासद के नाते इस प्रकार के विचार व्यक्त कर रहाहूँ जो सम्भवत अनेक सदस्यो के हृदयो में गूज रहे हैं और समझता हू कि अब केवल समय आ ही नही गया है किन्तु कुछ विलम्ब भी हो गया है जब कि सार्वदेशिक सभा में श्रम विभाजन की पद्धति अपनाई जावे। ऐसा करने में सार्वदेशिक सभा को अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जावेगा और उसके अनुरूप कार्य करने की पद्धति अपनाई जावेगी। यह भी सत्य है कि साम्प्रति सार्वदेशिक सभा के अन्तर्राष्ट्रीय विभाग के चलाने में भारत पर ही अधिक भार पडेगा परन्तु सम्बन्धित भारतेतर प्रतिनिधि सभाए भी अपना दायित्व समझकर तन मन धन से अधिक सहायता देने पर तत्पर हो जावेगी और भारत के भी आर्य जन तथा विचारशील सम्पन्न महानुभाव और सघ व समुदाय ऐसे कार्य को आगे बढाने में उदासीन नहीं रहेंगे।

मान्यताए होती हैं जिन्हें वे "गवेषणा" बताते हैं। 'आर्य मित्र' लखनऊ की ओर से उनकी भ्रमपूर्ण बातों का समुचित आलोचनात्मक उत्तर देने का भरसक प्रयास किया जाता है लेकिन उन माननीय साहित्यकार और इतिहासकार कहे जानेवाले महानु भावों के नेत्रो से विदेशी दीक्षा का रगीन चश्मा नहीं उतरता, ताकि वे वास्तविकता समझ सके।

१८-२-६२ के दैनिक नवभारत टाइम्स देहली के पृष्ठ ५ पर श्री रामधारीसिंह जी दिनकर का एक लेख 'आर्यों का मूलस्थान' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसमें आदरणीय श्री दिनकर जी ने आर्यों का मूल स्थान मध्य एशिया और दक्षिणी रूस सिद्ध किया था। उनके इस लेख की कुछ भ्रामक बातों के स्पष्टीकरण के लिए एक पत्र श्री दिनकरजी को और एक पत्र नवभारत टाइम्स के सम्पादक महोदय को भेजा गया। श्री दिनकर जी से उसका कोई उत्तर प्राप्त न होने और 'नवभारत टाइम्स' में उस पत्र के प्रकाशित न होने पर उसकी एक प्रति 'आर्य मित्र' लखनऊ के सम्पादक महोदय को भेजी गई, उन्होंने कृपा करके उसे ६-५-६२ के 'आर्य मित्र' में पृष्ठ ११ पर "आर्यों का मूल स्थान" शीर्षक से प्रकाशित कर दिया। वह लेख इस समस्या पर बहुत अच्छा प्रकाश डालता है।

आर्य समाज की इतनी आलोचना समालोचनाओ के पश्चात् भी हमारे राष्ट्र के कर्णाधार और निर्माता बनने वाले नौनिहालो को अभी भी यही पढ़ाया जा रहा है कि 'आर्य भारत के मूल निवासी नही थे।"

" आखिर आर्य समाज के ८७ वर्ष के सतत परिश्रम और बलिदान तथा राष्ट्र की स्वतन्त्रता के १५ वर्ष के उपरान्त भी हमारे देश की यह स्थिति है तो हमारे विद्वानों को इस गम्भीर स्थिति पर विचार करना चाहिए कि हमारा भविष्य और भविष्य निर्माता कैसे होंगे ? मक्तबा जामिया लि० दिल्ली द्वारा प्रस्तुत "हमारा भारत" नामक पुस्तक के पृष्ठ ३ पर लिखा है "भारत के मूल निवासी द्रविड थे। करीब ३ हजार वर्ष पूर्व आर्यों के भारत में आने पर दोनों की मुठभेड हुई।" यह बात एक उदाहरण के रूप में लिख दी। तात्पर्य यह है कि इसी प्रकार के साहित्य से देश के समस्त पुस्तक विक्रेताओ की दुकाने भरी पडी हैं। हमें सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग करने और करवाने में सदैव उद्यत रहना चाहिए।

अभी तक अग्रेज विद्वान और उनके भारतीय शिष्य ही यह कहते थे कि "आर्य भारत में बाहर से आए" परन्तु अब कुछ दिनो से कम्यूनिस्ट देशों के विद्वानों और कम्यूनिस्ट पत्रिकाओ ने भी गवेषणा के नाम पर इसी प्रकार की बाते कहना प्रारम्भ कर दिया है, हमें इस ओर से सचेत रहना चाहिए। सोवियत रूस की विज्ञान अकाडेमी के एशियाई जनगण स-थान के कार्यकर्त्ता श्री ई० वेजिन ने सोवियत रूस को "सोवियत भूमि" नामक पाक्षिक पत्रिका के १९६२ के १०वे अक के पृष्ठ १५ पर "कृष्ण सागर तट पर भारतीयों के सजातीय लोग" शीर्षक के लेख में लिखा है —"प्राचीन वैदिक जातियों का मूल स्थान काकेशस, कैस्पियन और कृष्ण सागर के उत्तर में था।" इसी पत्रिकाके ११वें अक में इसी शीर्षक के अपने लेख में श्री वेजिन ने लिखा है ' वैदिक काल के भरतीयों का मूल स्थान काकेशस के उत्तर में दक्षिण रूसी स्तेपियों में था।" इनके प्रमाण में आप कहते हैं "प्राचीन युग के कबीलो तथा वैदिक जातियों के पूर्वजों के रहन-सहन में बहुत ज्यादा साम्य था।" यद्यपि इस बात का कोई प्रमाण नहीं फिर भी आपकी बात मान ली कि "साम्य था" तब भी आप यह कैसे मानते हैं कि भारतीयों के पूर्वज भारत में कृष्ण सागर तट से आए थे, आप यह सत्य बात क्यों नहीं स्वीकार करते कि भारत से ही जनसख्या विस्तार के कारण वहा के लोग दूसरे देशों में गए।

भारत के लोग विदेशों में जहा पर बहुत समय

पूर्व गए वहाँ के निवासियों और भारतीयों की रग-रूप आकृति में कुछ अन्तर है किन्तु जहा पर बहुत बाद में गए वहा के निवासियों और भारतीयों में कुछ समानता दृष्टिगोचर होती है। किसी भी देश के रहन-सहन पर वहा के जलवायु और परिस्थितियों का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। दो देशों की समान जलवायु और परिस्थिति से भी वहा के निवासियों के रहन सहन में समानता हो सकती है। ३-१२-६१ के आर्य मित्र में पृष्ठ १२ पर प्रकाशित "भारत की प्राचीन सीमा" नामक लेख में सप्रमाण बताया गया है कि प्राचीन युग में कैस्पियन और कृष्ण सागर तट तक के क्षेत्र भारत के अन्तर्गत थे। सोवियत इतिहास और पुरातत्व विद्वानो को यह बात निस्सकोच स्वीकार कर लेना चाहिए। दैनिक वीर अर्जुन नई देहली के दिनाक १०-६-६२ के पृष्ठ २ पर श्री ए मोन्गेत का एक लेख "पुरातत्व खोज की आधुनिक प्रणाली" शीर्षक से प्रकाशित हुआ है उसमें उन्होंने लिखा है कि "भारतवासियों के पूर्वज पूर्वी एशिया से आए थे।" उनकी इस कल्पना का आधार यह है कि पूर्वी एशिया में भारतीय सस्कृति के अनेक चिन्ह आज भी विस्तृत रूप से प्राप्त होते हैं। इसका कारण यह है कि प्राचीन काल में समस्त पूर्वी एशिया भारत के अन्तर्गत था, हमारे रामायण-महाभारत भी इसके साक्षी हैं। अत्यन्त आश्चर्य होता है इन विद्वान कहे जाने वाले महानुभावो पर जब वे सत्य से विमुख होते हुए साक्षात् दिखाई देते हैं। इनको असत्य कपोल कल्पनाओं मे अपना समय और राष्ट्र का अमूल्य धन व्यर्थ ही नष्ट करते हुए देख कर हृदय तड़प उठता है।

मान्य सोवियत विद्वान् ने भाषा के सम्बन्ध में लिखा है कि "भारतीय भाषाए इन्डो-यूरोपियन भाषाओ के विशाल परिवार की सदस्याए हैं।" लेकिन उनकी यह बात भ्रम पूर्ण विदित होती है क्योंकि यूरोपियन भाषाए सर्वथा नई तथा भारतीय भाषाए अत्यन्त प्राचीन, सर्वांग सम्पूर्ण और सर्वथा समृद्ध है। भारत की प्रमुख भाषा सस्कृत विश्व की समस्त भाषाओं की जननी मानी जाती है, जिसमें ससार के सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद-शास्त्र-उपनिषद आदि की रचना हुई। ससार में प्राप्त सबसे प्राचीन पुस्तक ऋग्वेद संस्कृत में है जिसको ससार के सभी विद्वान सबसे प्राचीन मानते हैं, जबकि फारसी की जिन्द अवस्ता ३ हजार वर्ष, पाली त्रिपिटक २॥ हजार वर्ष, अग्रेजी की बाइबिल १६०० वर्ष और अरबी की कुरान केवल १३०० वर्ष प्राचीन हैं। छः हजार वर्ष से अधिक प्राचीन, आजकल कोई भी भाषा अपने मूल रूप में अब नही मिलती, लेकिन भारतीय भाषाए लाखो वर्ष पुरानी हैं। ससार की सबसे प्राचीन भाषा सस्कृत लगभग २ अरब वर्ष पुरानी है।

यदि भारतीय भाषाओं से विश्व के किसी अन्य देश की भाषा की कुछ समानता है तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि भारतीय जन उन उन देशों के मूल निवासी थे, वरन इसका कारण यह है कि जनसख्या विस्तार आदि कारणो से भारतीय जन जहा जहा जाकर बसे वही भारतीय भाषाएं भी उनके साथ गई। ससार की समस्त भाषाओं ने भारतीय भाषाओं से अनेकानेक शब्द ग्रहण कर अपने को पुष्ट बनाया है, इसका प्रमाण यह है कि ससार की समस्त भाषाओं मे भारतीय भाषाओ के कुछ न कुछ शब्द अवश्य पाए जाते हैं। देवनागरी लिपि का व्याकरण जितना शुद्ध है उतना विश्व की किसी भी भाषा का व्याकरण शुद्ध नही है। देवनागरी लिपि की सबसे बड़ी वैज्ञानिकता यह है कि जिस ध्वनि का उच्चारण होता है वही लिखी जाती है जबकि ससार की अन्य किसी भी भाषा में ऐसी सुविधा नही है। देवनागरी विश्व की सबसे प्राचीन लिपि होते हुए भी आज भी विश्व में सबसे अधिक वैज्ञानिक है।

श्री बेर्जिन महोदय ने अपने लेख मे एक प्राचीन

लेखक "हेरोडेटस" के लेखों के उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जिसने अपने एक लेख में "सिडियन" जाति का वर्णन किया है, उसी 'सिडियन' शब्द को बेंजिन महोदय 'इंडियन' सिद्ध करते हैं। उन्होने उन सिडियनों के देश का नाम 'सिडिका' बताया है और सिडिका का वर्णन करते हुए लिखा है "यह देश वहां था जहां आज तमन प्रायद्वीप है। उस जमाने में यह इलाका कुबान नदी के मुहाने में छोटे छोटे द्वीपों में बिखरा हुआ था।" सिडियनो की सभ्यता और संस्कृति का वर्णन करते हुए आपने लिखा है खुदाई के समय सिडिका के कबाइली सरदारों के मजारों से दर्जनों पशुओं के अवशेष मिले। इन पशुओं की कबाइली सरदारों की अन्त्येष्टि संस्कार के समय बलि दी गई होगी। खुदाई के समय एक साधारण सिडियन के घर में अत्यन्त सुन्दर सुरापात्र मिले। एक सिडिका की कब्र से सींग की शकल का एक सुरापात्र मिला।"

मान्य सोवियत विद्वान् ने यह लेख सोवियत या पश्चिमी वातावरण में लिखे हैं जो कि उस स्थिति में बिल्कुल स्वाभाविक और उचित ही हैं। लेकिन यदि वे अपने लेख भारतीय वातावरण में भारत की सभ्यता संस्कृति के अध्ययन के पश्चात् लिखते तो निश्चय ही उनकी बहुत सी बातों में पर्याप्त परिवर्तन होता। भारत में मास-मदिरा का प्रयोग मुसलमानों के आगमन के पश्चात् ही व्यापक रूप में प्रारम्भ हुआ, उससे पूर्व भारत में 'वाममार्गी' ही मास मदिरा का सेवन करते थे। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों के अध्ययन से विदित होता है कि भारत में १००० ई० पूर्व के पश्चात् ही 'वाममार्ग' प्रारम्भ हुआ था, उससे पूर्व भारत में कोई भी मास मदिरा का सेवन नहीं करता था। जब प्राचीन भारतीय जन मास मदिरा का सेवन ही नही करते थे तब उनके यहा पशु बलि भी नही होती थी और सुरापात्र भी नही होते थे। श्री बेंजिन महाशय के कथनानुसार वहा पर पशु बलि के चिह्न और सुरापात्र मिले हैं, अत स्वत सिद्ध हो गया कि भारत के मूल निवासी कैस्पियन या कृष्ण सागर तट से नही आये।

भारत में एक सहस्र वर्ष के भीतर ही यवन और ईसाई आये हैं जो कि अपने मृतकों के शव भूमि में गाडते हैं, लेकिन इससे पूर्व और आज तक भी भारत के मुख्य निवासी हिन्दू लोग सदैव ही अपने मृतकों के शव का दाह संस्कार करते रहे हैं हैं। विश्व के आदि ग्रन्थ वेदों में "भस्मान्तꣳ शरीरम्" अर्थात् मृतक शरीर की अन्त्येष्टि क्रिया शरीर भस्म करने के रूप में ही करने का विधान है। मान्य सोवियत विद्वान ने अपने लेख में 'सिडियन" कथित इण्डियनों को मास मदिरा का सेवन करने वाला और मृतकों के शव भूमि में गाड़ने वाला बताया है जिससे सिद्ध होता है कि वह कोई अर्धसभ्य या असभ्य जाति होगी परन्तु वे भारतीयों के पूर्वज कदापि नही थे। ससार के समस्त गवेषणा कर्ताओं, साहित्यकारो, इतिहासज्ञों और लेखकों को यह विदित होना चाहिये कि भारत के मूल निवासी आर्य थे और आर्यों का मूल स्थान भारत था।

—०—

विज्ञान जड का अध्ययन करता है तो अध्यात्म चेतन का। चेतन ही जड़ को कार्यान्वित करता है जैसे कि वायुयान है जो जड है और अपने स्थान पर निष्क्रिय स्थित है अब एक चालक उस वायुयान को क्रियाशील कर देता है और वह वायुयान उड़ने लगता है। किन्तु यह यान चालक के पहुंचने से पूर्व क्रियाहीन था। वैसे ही चेतन आत्मा जो शरीर में विद्यमान है यदि निकल जाय तो शरीर लाश हो जाता है। इस हेतु आत्मा के लिए शरीर चाहिए अर्थात् अध्यात्म के लिए विज्ञान चाहिये। अत स्वत सिद्ध है कि विज्ञान और अध्यात्म कोई दो भिन्न नहीं। दोनो को साथ रख कर उन्नति करना मानव का परम लक्ष्य होना आवश्यक है।

स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्द जी महाराज की पुण्य स्मृति में

[श्री स्वामी सत्यमुनि जी महाराज]

श्रद्धेय स्वामी आत्मानन्द जी महाराज आर्य जगत् के ही नही अपितु भारत के उन प्रखर गम्भीर सौम्यस्वभाव कर्मठ और सुलझे हुए उद्भट विद्वानों तथा महात्माओ में से थे कि जिन पर कोई भी समाज चित्तान्तस्तल में गर्व अनुभव कर सकता है। उनकी ऊहापोह-प्रतिभा वेदादिसच्छास्त्रो के मर्मों, कठिन स्थलों सन्दिग्ध एव विवादास्पद विषयो के उत्तम समाधान की योग्यता इतनी अद्भुत थी कि उनके सम्पर्क में आने वाले प्राय सभी सज्जन उसे हृदय से अनुभव करते हैं। उनके पवित्र व्यक्तित्व सात्त्विक प्रकृति की गहरी छाप, चञ्चल स्वभाव, छिद्रान्वेषी उद्दण्ड व अहङ्कारी जनों के हृदयों पर अङ्कित थी कि उनकी सगति में रह कर वे उनके भक्त बन जाते।

वेद, व्याकरण साहित्य, आयुर्वेद, दर्शन शास्त्र के पारङ्गत पाण्डित्य के साथ साथ ऋषिकल्प वाग्मित्व तथा बृहस्पति के समान वक्तृत्व उनके जीवन की विशेष विभूतिया थी। अपने साधनामय जीवन में उपाध्याय के रूप में बहुत से विद्वान् व सुयोग्य कार्यकर्त्ता आर्य-जगत् की भेट किये। जन जन के श्रद्धा भाजन होते हुये भी मान ने मान और यश की प्राप्ति के लिये घृणित साधनों का आश्रय कभी नहीं लिया। इन्द्रिय सुखों का स्वेच्छया परित्याग तो उनके प्रत्येक व्यवहार से व्यक्त एव विशद होता था। बाल्यकाल से ही एक यति के रूप में सस्कृत विद्या के केन्द्र वाराणसी (काशी) में पढ़ाते हुए न्यायशास्त्र के उद्भट विद्वान् स्व० स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज (गुरुकुल पोठोहार के तत्कालीन आचार्य) की प्रेरणा पर जब गुरुकुल पोठोहार पधारे तो उस समय के सस्कृत के विख्यात विद्वानों के समान प्राय क्षौम (सिल्क) के वस्त्र पहिनते थे। एक आदर्श जिज्ञासु जैसे पग पग पर अपनी भूलें स्वीकार करते हुये उनका सहर्ष सुधार तथा दुराग्रह का परित्याग करता है वह भी इसी भांति क्रियात्मक रूप से तत्पर रहते और जनमत की सत्यता का तो इतना आदर करते कि एक बार गुजरखान (रावलपिण्डी) में गुरुकुल के उत्सव पर जब ब्रह्मचारियों तथा आर्य जनो की शोभायात्रा (जलूस) के साथ जा रहे थे तब उनके कान में दूर से किसी व्यक्ति की धीमी से यह आवाज सुनाई दी कि देखो आर्यों का पण्डित सिल्क के वस्त्र पहिने हुये जा रहा है। कैसी सिल्क की पगड़ी बान्ध रखी है? स्वर्गीय स्वामी जी (जो उस समय आचार्य मुक्तिराम उपाध्याय के रूप में थे) ने उसी समय आर्य समाज मन्दिर में आकर रेशमी कपडे उतार दिये और खद्दर के स्वदेशी वस्त्र धारण कर लिये।

गुरुकुल पोठोहार में उपाध्याय के रूप में ब्रह्मचारियो को शिक्षा देते हुए वैदिक सस्कृति का वह कमाल का रङ्ग चढ़ा कि उत्तरोत्तर गहरा ही होता गया। गुरुकुलीय जीवन में किसी प्रकार की भी कोई विशेष सुविधा न लेते हुए कभी कभी पाचक के अभाव में भोजनादि भी स्वय बनाकर ब्रह्मचारियो को खिलाते। यदि किसी समय किसी गुरुकुलवासी वा बाहर से आये किसी सज्जन ने विशेष श्रद्धाभाव से कभी शाक या मीठे में घृत मिला कर उनकी थाली में रख दिया तो सौम्य स्वभाव से यह कहते हुए उसे लौटा देते "जैसा भोजन ब्रह्मचारियों तथा सेवकों को मिलता है मुझे भी वैसा ही खाना चाहिये"।

हैदराबाद सत्याग्रह आन्दोलन में आर्यवीरों को ज्वार की आध आध पाव की दो रोटियां एक समय

खाने को दी जाती थी। जेल के मुसलिम अधिकारी उनको भी तोल में घटा कर देते। इस लिये बहुत से सत्याग्रही वीर थोड़ा अन्न मिलने के कारण भूखे रहते। महात्मा आचार्य मुक्तिराम जी उदारता एवं प्रसन्नता पूर्वक अपनी दो रोटियों में से एक ऐसे वीरों को दे दिया करते थे। पौने दो छटांक की रोटी में अपना निर्वाह करते।

देश के दुखद विभाजन के दिनों रावलपिण्डी जैसे वैभवशाली नगर में पचासों हजार नर नारी रिफूजी कैम्प में घिरे हुये थे। स्वामी जी महाराज उस कैम्प के सञ्चालक थे। कई बार पाकिस्तानी अधिकारियों ने उनको कलुषित भावनाओं से अपने पास बुलाया। मृत्यु की घड़ी सामने आती दिखाई देती रही किन्तु आप अधीर न हुए। दिल्ली से कुछ सज्जनों ने प्रमुख व्यक्तियों को लाने के लिये रावलपिण्डी जाने वाले हवाई जहाज में उनके लिये सीट रिजर्व करवा के भेजी। परन्तु आपने यह दृढ़ प्रतिज्ञा की हुई थी कि उस कैम्प के एक एक नर नारी को भेज कर अन्तिम ट्रेन से मैं भारत के लिये प्रस्थान करूंगा। प्रतिज्ञा अनुसार आपने वैसा ही किया। रावलपिण्डी से आने वाले पुरुषार्थी भाइयों की अन्तिम गाड़ी से ही आप आये।

देश के विभाजन के पश्चात् जब यमुनानगर (अम्बाला) में वैदिक साधना आश्रम की स्थापना की तो आश्रम के साथ साधना शब्द को सार्थक करने के लिये आप पहिले से भी अधिक दृढ़ता-पूर्वक मन वचन कर्म द्वारा यम नियमों का पालन करने में तत्पर रहने लगे। एक सफल एवं सरल स्वभाव योगी का जीवन व्यतीत करते हुये अपनी साधना में सफल होते हुये भी आत्म श्लाघा पर निन्दा, अहङ्कार, आडम्बर मय जीवन, निराशावाद, निष्कर्मण्यता के दोषों से सावधान हो कर परम सात्त्विक रूप से आध्यात्मिक क्षेत्र में आगे बढ़ने लगे। आत्मप्रसाद जो भगवद् भक्तों की विशेष दैवी सम्पत्ति होता है उसे अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करके विभूतिमान् रूप में देदीप्यमान होने लगे "अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्" महर्षि पतञ्जलि के इस वचनानुसार अपरिग्रह एवं सर्वाङ्ग शुचिता के अभ्यास से सब प्रकार के ऐश्वर्य उनके चरणों में आने लगे। उनकी प्रज्ञा ऋतम्भरा के रूप में अभिव्यक्त होने लगी। आर्यजगत् ही नहीं अपितु अन्य क्षेत्रों में भी कोटि कोटि हृदयों में श्रद्धा का उच्च आसन जो इस महात्मा को प्राप्त हुआ उसका सच्चा प्रमाण हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन के सूत्रधार के रूप में काम करते हुये देखने को मिला। जब कि लाखों नरनारी उनके आह्वान पर अपने प्राणों की बाजी लगाते हुये धर्म क्षेत्र में कूद पड़े। आन्दोलन में अतीव कार्य भार के कारण उनका पुराना रक्तचाप (High Blood Pressure) का रोग भयङ्कर रूप में बढ़ने लगा। चार वर्ष निरन्तर शिरोवेदना (जो कि प्राय हर समय रहती थी) होते हुये भी कोई भी दुखसूचक शब्द उनके मुखारविन्द से कभी सुनने में नहीं आया।

साङ्गोपाङ्ग वेदाध्यापन के साथ साथ आर्य-जगत् के महान् उत्तरदायित्वों व अनेक लोकोपकारक कार्यों के भार के होते हुये भी समय बचा कर जो लेख उज्ज्वल साहित्य के रूप में हमें देगए हैं वह विद्वद्वरेण्य तथा जिज्ञासु समाज के लिये विशेष आत्मोद्धारक सामग्री—१ वैदिक गीता २—सन्ध्या-ष्टाङ्ग योग ३—मनोविज्ञान तथा शिवसङ्कल्प ४—आदर्श ब्रह्मचारी ५—जैन भाइयों से प्रश्न इत्यादि पुस्तकों के रूप में हमारे सामने विद्यमान है।

इस समय यद्यपि उनका भौतिक कलेवर हमारे सामने नहीं है तथापि उनका आप्तजीवन उदात्त कर्म हमें दिव्य उपदेश व पवित्र प्रेरणा दे रहे हैं।

आर्य युवक सभा दक्षिण अफ्रीका

(पोस्ट बक्स १७७० डरबन)

यह सभा १९ अप्रेल १९१२ को श्री स्व० डी० जी० सत्यदेव के निवास स्थान पर डरबन नगर मे स्थापित हुई थी। प्रारम्भ मे इसका नाम 'आर्य बाल मित्र मण्डल' था। श्री स्व०स्वामी शकरानन्द जी ने बाद में इसका नाम 'आर्य युवक सभा' रख दिया। पडित बी० सी० नायनाडु और श्री स्व० सत्यदेव जी के पौरोहित्य में साप्ताहिक सत्सग हुआ करते थे।

उद्देश्य

यह सभा आर्य समाज के सिद्धान्तो पर अवलम्बित थी और वैदिक धर्म का प्रचार इसका मुख्योद्देश्य था।

(१) नियमित धार्मिक सत्सग करना।

संस्था-परिचय

इस शीषक के अन्तर्गत सभाओ समाजो और सस्थाओ के परिचय देने की व्यवस्था की गई है। जनता को इससे पूरा २ लाभ उठाना चाहिए।

(२) भारतीय समाज के असहाय बच्चो और बूढो को आश्रय देने के निमित्त एक 'घर का निर्माण।''

(३) बच्चो का प्रशिक्षण।

धार्मिक प्रगतियाँ

जब १९१२ में यह सभा स्थापित हुई थी तो भारतीय मिश्नरी श्री स्वामी शकरानन्द जी का सदस्यो पर बडा प्रभाव था और धार्मिक सत्सग प्रति सप्ताह नियम से होते थे। स्वामी जी के भारत चले जाने पर उनकी भावना काम करती रही और सभा की प्रगतियो मे मुख्य रूप से प्रतिलक्षित होती रही। १९२१ में गुरुकुल कागडी के स्नातक प० ईश्वरदत्त विद्यालकर को प्रचारार्थ बुलाया गया। १९२४ मे एक धार्मिक कान्फ्रेंस हुई और उसमे आर्य प्रतिनिधि सभा नेटाल की स्थापना का निश्चय हुआ।

शिक्षा के क्षेत्र में हुआ कार्य

अगरेजी

१९२७ मे एक प्राइवेट स्कूल खोलागया।१९२८ की पहली अगस्त को बलाइर रोड मेविली पर स्थित (Bellair road mayville) सभा की भूमि पर 'आर्य युवक सभा इण्डियनस्कूल' खोला गया जिसे सरकारी सहायता प्राप्त हुई बाद में स्थान की कमी हुई और तीन इमारते इसमे और जोडी गई। १९५९ में सभा ने इस स्कूल को एक दूसरे स्थान पर ले जाने की योजना की जो आधा मील दूर था। परन्तु 'ग्रुप एरियाज ऐक्ट' (सरकारी कानून) की बाधा के कारण यह योजना क्रियान्वित न हो सकी। शिक्षा के आधुनिक स्टैण्डर्ड को लक्ष्य में रखते हुए एक अच्छे भवन के निर्माण का विचार है।

हिन्दी

श्री स्व० डी० जी० सत्यदेव और पडित बी० सी० नायनाडु ने १९१२ में डरबन और सी० काओ लेक में हिन्दी कक्षाए खोली थी। १९३०मे श्रीरामशकर और०पी० प्रतापसिंह शिक्षण के लिए भारत से बुलाए गये। ये कक्षाए अब भी नियमित रूप से लग रही हैं।

तमिल

स्थानीय व्यक्ति तामिल कक्षाए भी चलाते थे।

आर्य परोपकार गृह

आर्य युवक सभा ने अपने तीसरे उद्देश्य की पूर्त्यर्थ एक आर्य परोपकार गृह' की स्थापना की और उसे सचालित किया। उक्त सभा का यह कार्य मुख्यतम कहा जा सकता है।

१९१८ की एक रात्रि में सभा के प्रधान श्री सत्यदेव जी ने एक बडा हृदय द्रावक दृश्य देखा। एक बूढे भारतीय भिक्षुक ने जो गृह विहीन, थका मादा और निरुपाय था एक सार्वजनिक शौचालय में इस उद्देश्य से आश्रय लिया कि कही अफ्रीकन सिपाही उसे बूट की ठोकरे न दे बैठे। सत्यदेव जी ने यह घटना सभा के सामने वर्णन की। यह घटना उपर्युक्त गृह की स्थापना का कारण बन गई।

सभा के कोष में केवल १२॥ सेन्ट थे फिर भी इसने काम प्रारम्भ कर दिया और धन सग्रह करके जमीन का एक टुकडा खरीद लिया। १९२१ में स्व० स्वामी भवानीदयाल जी ने इस गृह का उद्घाटन किया। इण्डियन इमीग्रेन्टस के प्रोटेक्टर श्री एच० रोबिन्सन की सद्भावना के फल स्वरूप ३ वर्ष के उपरान्त पहली सरकारी ग्रान्ट (सहायता) प्राप्त हुई। प्रारम्भ में इस गृह में बहुत बूढे व्यक्ति रखे गए थे। इसके पश्चात् अनाथ बच्चो के प्रवेश की प्रार्थनाए प्राप्त हुई। ७-१०-२६ को कुछ अनाथ बच्चे प्रविष्ट किये गये। तब से दक्षिण अफ्रीका की रिपब्लिक के प्रत्येक भाग के और प्रत्येक मत मतान्तर के बच्चे भरती किये जाने लगे। शीघ्र ही सख्या बढ़ती गई और गृह की इमारतों का विस्तार होता गया। बूढ़ों और बच्चो के लिए पृथक् २ स्थान बनाये गये।

बढ़ी हुई पहली इमारत की आधार शिला १९२८ में श्री वी एम० सिह के द्वारा रखी गई। इमारत के बन जाने पर इसका उद्घाटन भारत सरकार के तत्कालीन एजेन्ट सर कर्मं रेड्डी द्वारा हुआ। इसके बाद २ इमारतें और बनीं। १९२३ में श्री राबिन्सन ने उस प्रशासकीय ब्लाक का उद्घाटन किया जो इससे पहले लकडी और लोहे का बना हुआ था। इसके १० वर्ष बाद नेटाल के मान्य प्रशासक श्री हीटन निकोलस ने दूसरे ब्लाक का उद्घाटन किया जिसमें आज कल बच्चे रहते हैं।

स्वास्थ्य की दृष्टि से बूढो को बच्चो से पृथक् रखना आवश्यक हो जाने पर १९४७ में वर्तमान स्थान से १ मील दूर १७॥ एकड भूमि क्रय की गई परन्तु आर्थिक कठिनाइयो के कारण कोई मकान न बन सका। बूढ़ों के लिए एक अस्थायी निवास गृह बनाया गया। यह स्थान 'श्वेतों के लिए' सुरक्षित हो गया है। उद्घोषित भारतीय क्षेत्र में कोई दूसरा स्थान ढूढना होगा।

इस गृह को भारतीयों का, राज्य का और राज्य द्वारा समर्थित अन्य सस्थानो का पूर्ण सहयोग प्राप्त रहता है।

प्रारम्भ से अब तक के प्रवेश आदि का विवरण इस प्रकार है —

	प्रविष्ट हुए	मुक्त हुए	विवाह हुआ	मृत्यु
पुरुष	७९८	६२१	+	१६०
स्त्रिया	४५३	३०७	+	१३७
लडके	४५६	४०४	२	३
लडकिया	३९५	३११	३५	४
	२१०२	१६४३	३७	३०४

इस 'गृह' को बडे २ वकीलो, डाक्टरो अध्यापकों, व्यापारियो, गृह देवियो आदि का सक्रिय सहयोग प्राप्त रहता है।

❀

A brief history of the Arya Yuvak Sabha, Durban

(SOUTH AFRICA)

Prologue

The Arya Yuvak Sabha was established at the home of D G Satya Deva, on the 19th April, 1912 Constituted by a group of young men, the Sabha was originally called the "Arya Bal Mitra Mandal Swami Shankeranandjee, who was instrumental in teaching the correct recital of the Sandhya and Havan, changed "Arya Bal Mitra Mandal" to Arya Yuvak Sabha Pandit V C Nayanah the first of the locally ordai ned Vedic priests and D G Satya Deva guided the weekly services held every Thursday

Aims and Objects.

The Sabha was established on the principles of the Arya Samaj a movement founded in India by Swami Dayanand Saraswati with its main objectives as the propagation of the tenets of the Vedic religion and service to humanity by –

(1) Holding regular Religious Services

(2) Establishing a Home to provide refuge to indigent aged persons and children in need of care in the Indian Community, and

(3) Educating children

Religious Activities

When the Sabha was inaugurated in 1912, the presence of His Holiness Swami Shankeranandjee, a Vedic Missionary from India, had a great influence on the minds of the members and Religious services became a regular weekly feature The Swami's spirits remained after his departure and became a dominant force in the Sabha's activities In 1921 Pandit Ishwardutt Vidyalankar, a graduate of Gurukul, Kangri, India was brought as a Vedic Missionary On 10th November 1924 a religious Vedic Conference was convened at which the Arya Pratinidhi Sabha (Natal) (Aryan Representative Assembly) was formed

WORK DONE IN THE FIELD OF EDUCATION

English

In the year one thousand nine hundred and twenty seven, a private school was started on a privately owned property On 1st August 1928, the Arya Yuvak Sabha Govt Aided Indian School was built on the Sabha's premises, in Bellair Road, Mayville Three a ditions were made to the school building to meet the growing demand for accommadation In 1959 the Sabha planned to transfer the school to a site about half a mile away but was thwarted by the Group Areas Act To comply with modern standards of education the Sabha has in mind to erect an up-to date building

Hindi

As vernacular is the best gateway to the culture of one's motherland, Hindi classes were started in Durban and at Sea Cow Lake by D G Satya Deva and Pandit V C Nayanah Rajh respectively in 1912 During the 1930's Rama Shanker Srivastava and P Partap Singh were imported from India to teach The Classes are still in progress

Tamil

Tamil classes were also conducted by local persons

Aryan Benevolent Home

The most outstanding function of the Arya Yuvak Sabha and a living example of the Arya Samajic benevolent activities is the establishment and the administration of the Aryan Benevolent Home in pursuance of its third objective

One night in 1918, an exceedingly pitiful incident was witnessed by the President of the Sabha, D G Satya Deva An old Indian beggar homless, tired and weary, sought shelter in a public latrine only to be hit and chased out by an African constable

This incident was reported to the Sabha at its meeting Profoundly affected the members resolved to establish a benevolent home for the amelioration of the sufferings of the aged, destitutes and the infirm

With only 12½ cents in its coffers, the Sabha staged dramas and plays and soon raised sufficient funds to purchase a property In 1921 Swami Bhawani Dayal Sanyasi opened the Aryan Bebevolent Home hree years later, through the goodwill of Mr H Robinson, Protector of Indian Immigrants the Home received the first annual Government Grant At the inception only very old destitutes persons were admitted as inmates, but later requests were made for the admission of orphans and children in need of care On 7th October 1926, the first batch of orphans was admitted Since then children from various parts of the Republic of South Africa and from different religious groups have sought refuge at the Home As the number of inmates steadily increased the Home had to be extended and separate wards were built for the aged and the children

The foundation stone of the first wing was laid by B M Singh in 1928 When completed this section was opened by Sir Kurma Reddy the then Agent General of the Government of India in South Africa Two more additions were made —In 1933 Mr H Robinson, the Protector of Indian Immigrants, officially opened the Administrative Block which replaced the original wood and iron building, and ten years later, His Honour the Administrator of Natal, Mr Heaton Nicolls opened the second block which houses the boys at present

It became necessary primarily for health reasons to separate the aged from the young To effect the separation and for the purposes of expansion, a block of 17½ acres of land was bought in 1947 about a mile away from the present site but no buildings were constructed owing to financial difficulties A temporary dwelling was erected to house the aged inmates separately The promulgation of Cato Manor as a future white area has thwarted the ambitious future projects of the Sabha and an alternate site has to be found in a proclaimed Indian Area

The Home enjoys the fullest support of the Indian Community, the State and statuto y bodies As far as it is possible financially, the inmates of the Home are provided with the amenities of life

The following table shows the admission and releases of the inmates since the inception of the Home —

	Admitted	Releases	Married	Deceased
Men	798	621		160
Women	453	307		137
Boys	456	404	2	3
Girls	395	311	35	4
	2102	1643	37	304

Epilogue

In the vanguard of the activities of the Arya Yuvak Sabha we find men and women who are impelled by some urge perhaps the knowledge that travels ' this way" only once to make available their resources on a voluntary basis These men and women came from every walk of life Among then are lawyers, doctors, teachers, businessmen, housewives and laymen who in a practical way serve the wants of the poor and needy and by their action inspire others to serve God by serving men

Truly these inspired individuals can be said to have two careers, one being the conventional task of providing for themselves and their dependants, and the other, a career of unselfish service on an exalted plane, as exemplified by the activities of the Arya Yuvak Sabha.

यज्ञोपवीत का वैदिक समाज-शास्त्र

श्री धीरेन्द्र शास्त्री 'शील' काव्यतीर्थ

यज्ञोपवीत हमारे वैदिक धर्म का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुण्य प्रतीक है। हम वस्तुत संस्कार जन्य भावुकता के कारण ही इसके इतने दृढ समर्थक नही हैं, अपितु इन सूत्रो के प्रतीक मे हमें धर्म, दर्शन तथा समाज-शास्त्र का पूर्ण व्याख्यान मिलता है। इसी कारण हम इसे अपनी धारणाओ का प्रतीक मानते और सदैव धारण करते हैं। सदैव धारण करने का भाव ही यही है कि हम अपनी धारणाओ के प्रति सजग और सचेष्ट रहे, हमारी साधना शिथिल न होने लग जाये।

यज्ञोपवीत के धर्म और दर्शन की व्यापकता को शब्दो में 'वैदिक धर्म का त्रैतवाद' कह सकते हैं वेद त्रयी ज्ञान कर्म व उपासना के अनुयायी हम वैदिक धर्मी, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एव प्रलय कारण भूत शक्तियो की तीन सत्ताओ (१) ईश्वर (२) जीव (३) प्रकृति को अनादि और अनन्त मानते हैं। यजुर्वेद के चालीसवे अध्याय का और ईशोपनिषद् का पहला मन्त्र —

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचित्"

आदि त्रैतवाद के स्पष्ट वैदिक प्रमाण हैं, जिनमें व्याप्य परमेश्वर व्याप्त जगत् का त्याग पूर्वक भोक्ता जीवात्मा बिना किसी माया वा भ्रान्ति के स्वीकार किया गया है। इस प्रकार यज्ञोपवीत के धार्मिक एव दार्शनिक पक्ष की त्रैतवादी व्यवस्था पर बहुत अधिक लिखा जा सकता है। किन्तु यहा हम उसके सामाजिक पक्ष पर ही विचार करेंगे।

जीव सृष्टि मे सर्वाधिक विकसित एव पूर्ण रचना मानव योनि है, और यह सर्व सम्मत सिद्धान्त है। मनुष्य मस्तिष्क, विचार चिन्तन की शक्ति रखता है, जिससे अन्य योनिया वचित है और इसलिये मनुष्य "उभय योनि" (कर्म व योग) है। जब अन्य योनिया मात्र भोग योनि है। इसी से कहा है—

"आहार निद्रा भय मैथुनं च
सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषः
धर्मेण हीनाः पशुभिःसमानाः॥

अर्थात् आहार निद्रा मैथुनादि मे समान है किन्तु धर्म कर्त्तव्य की प्रतिष्ठा ही मनुष्य की मनुष्यता का विशेषण है।

पशु-पक्षी आदि केवल भोग भोगते हैं, किन्तु मनुष्य प्रकृति से बधे रहकर मस्तिष्क से विचार कर प्रकृति के बन्धनो से मुक्ति का यत्न करता है। उसे नये कर्म करने का अधिकार प्राप्त है, जब कि अन्य योनिया उसे नये कर्म करने के मस्तिष्क अनुभव ज्ञान के साधन से वचित हैं। अत मनुष्य जन्मत कुछ कर्म-कर्त्तव्य वा धर्म लेकर आता है, जो उसे अपने जीवन मे पूर्ण करने होते हैं। दूसरे शब्दो में मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना उसका जीवन चलना नितान्त असम्भव है। अपने जीवन अस्तित्व के लिये उसे जो जो कर्म करने होते हैं उन्हे हम समाज का आदान प्रदान कह सकते हैं। समाज पारस्परिक सहयोग के आदान-प्रदान

पर अवस्थित है। अत हमें अपने प्रत्येक स्वार्थ के लिए दूसरों को कुछ चुकाना पड़ता है। कुछ पाने के लिए देना होता है। सीधे शब्दों में इसी पारस्परिक आदान प्रदान की व्यवस्था व नियम आदि के सिद्धान्तों की रचना समाज शास्त्र कहलाती हैं। हमें दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ? समाज की रचना में किसका अधिकार तथा कर्तव्य होना चाहिये ? आदि ही समाज-शास्त्र के मुख्य विषय हैं।

हमारा विश्वास है वेद ईश्वरीय ज्ञान है। अत इससे मानव को उसके कर्तव्य का निर्देश कराने वाले समाज शास्त्र का व्याख्यान प्राप्त होना ही चाहिये। यज्ञोपवीत के तीन सूत्र वेद के सामाजिक शास्त्र के मूल सिद्धान्तो का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर मनुष्य के जीवन की सफलता उसके तीन ऋणो से मुक्त होने में निहित है और वे तीन ऋण हैं —(१) देव ऋण (२) ऋषि ऋण (३) पितृ ऋण।

ये तीन ऋण ही हमारी शारीरिक, मानसिक एव सामाजिक उन्नति के आधार हैं। जो मानव समाज जितना ही अधिक इन ऋणो से मुक्त है, अथवा ऋण मुक्ति के लिए कर्मशील हैं निस्सन्देह वह उतना ही अधिक सौख्य तथा वास्तविक शान्ति के समीप है।

देव ऋण—देवताओं का हम पर ऋण है देवता की व्युत्पत्ति करते हुए निरुक्त ने लिखा है—"देवो दानाद्वा' जो 'दान' देता है, बिना किसी फलाकांक्षा के, वह देवता कहलाता है। पृथ्वी, जल, वायु, तेज आदि ऐसे जड देवता हैं जिनसे हमारी उत्पत्ति व पालन होता है और जिनके अभाव में मृत्यु होती है। निस्सन्देह इन तत्त्वों के बिना हमारा जीवन अस्तित्व शून्य है। पृथ्वी से पृथुता, जल से जीवन वायु से प्राण, सूर्य से शक्ति आदि प्राप्त होते हैं अत एव कृतज्ञता के लिये उनकी पूजा तथा ऋण मुक्ति के लिए उनसे प्राप्त दान का पुन दान करना वैदिक धर्मी का प्रथम कर्तव्य है।

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

"जिससे सासारिक अभ्युदय होकर मोक्ष की प्राप्ति हो।' अत धर्म के आधार पर सासारिक उन्नति के लिए मनुष्य को इन देवताओं से प्राप्त दान का समुचित अधिकाधिक उपयोग करना चाहिये।

पृथ्वी से अधिकाधिक श्रेष्ठ खाद्य पदार्थ, फल-फूल, अन्न दुग्धादि उत्पन्न करना जल से सिंचाई आदि की व्यवस्था करना। इसी प्रकार अन्य भी। इन देवो की सच्ची पूजा प्राप्त दान का समुचित उपयोग है। अब प्रश्न है ऋण का, मानव समाज की सामूहिक शक्ति ही मिल कर इस वैदिक ऋण का अधिकाधिक प्रयोग कर सकती है। मिल कर खेती करना, सिंचाई करना, बाग, भवन, नगर, ग्राम आदि का निर्माण करना। क्योंकि हम व्यक्ति की सत्ता में इनका अधिक उपयोग नही कर सकते और इन देवो के ऋण का प्रतिफल चुका नहीं सकते, अत समाज मे नियमबद्ध होकर इन-इन भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति के बदले शरीर से श्रमदान करना ही देव ऋण से मुक्ति का साधन है।

मनुष्य समाज के वैदिक समाज शास्त्र मे किसी पूंजीपति, शासक अथवा शोषक को यह अधिकार नहीं है कि वह अपने हाथ पैर बिना चलाए एक बूंद पसीना बहाये, सामाजिक श्रमदान दिये बिना इन भौतिक सुखो का उपभोग कर सके। जो ऐसा करता है वह समाज के माध्यम से देवो के प्रति अपने ऋण की मुक्ति के कर्तव्य से च्युत होता है। वह अपराधी है और इसीलिये सामाजिक दण्ड का भागी भी। इस प्रकार देव ऋण को चुकाने का प्रथम प्रकार है, प्रत्येक व्यक्ति का समाज के नियमों में आबद्ध होकर पूर्ण श्रम दान करना।

दूसरा प्रकार है—देवों से प्राप्त दान का

मानव समाज में उचित पक्षपात रहित वितरण करना। यहां हम एक व्यापक विस्तृत रूप रखना चाहेंगे, जिसमे सम्पूर्ण मानवता को एकत्व बन्धुत्व के बन्धन में आबद्ध होना होगा।

जब पृथ्वी, जल वायु आदि देवी शक्तियों से प्राप्त वैभव पक्षपात रहित सम्पूर्ण प्राणी मात्र के लिए है और उसके उपयोग मे छोटे-बडे, ऊच नीच अथवा गारे काले का कोई भेद नही रहता तब किसी शोषक शक्ति को कोई अधिकार नही कि वह इन दैविक सुख सुविधाओ की प्राप्ति मे सामाजिक विभेद उत्पन्न कर सके।

प्रत्येक व्यक्ति को जीने का स्वतन्त्र अधिकार प्रकृति से प्राप्त है। अत 'जिओ और जीने दो' के सिद्धान्त पर पारस्परिक सद्भावना पूर्ण सहयोग से राष्ट्र जाति, रग अथवा वश के भेद भाव रहित, एक विश्वबन्धुत्व की स्थापना करना हमारा प्रथम कर्तव्य है क्योंकि देवो का दान व्यापक एव भेद-भाव शून्य है अत किसी शक्ति को शोषण व अन्याय करने के लिए दैविक सम्पत्ति का विभाजन नही करने दिया जा सकता।

देव ऋण की पुनीत वैदिक कामना के अभाव मे ही मानव समाज ने भेदों व उपभेदों की असंख्य सीमायें अपने चारो ओर बना डाली हैं और आज वह उन्हीं पोषक सीमाओं और अधिकारों की रक्षा के लिए विध्वंसक शस्त्रास्त्रो का निर्माण कर, दैविक शक्तियों के अनुचित प्रयोग से विश्व की मानवता का विध्वस कर रहा है। अन्यथा प्रकृति ने उसे अनन्त सुख के साधन दिये है और उसे आवश्यकता है मुट्ठी भर अन्न, गज भर वस्त्र, थोडे से जलवायु और वायु तेज की। मृत्यु के बाद उसे केवल दो गज कफन अथवा दो गज भूमि का टुकडा ही चाहिए। किन्तु आज शोषण व अन्याय से लाखों भूखे दम तोड देते हैं, जब कि अमेरिका के समुद्र में लाखों मन अन्न डुबोया जाता है, और अरबों के शक्ति विनाशक व्यर्थ प्रयोग व विस्फोट होते हैं।

यदि प्रत्येक व्यक्ति स्वश्रम से अपने लिये अन्न वस्त्र प्राप्त करते हुए समाज को उन्नति मे निश्छल योग देने लगे, तो आज विश्व की आर्त मानवता शान्ति के जीवन का पुन प्राप्त कर सकती है और अभाव व शोषण समाप्त हो सकते हैं।

अत यज्ञोपवीत को उपनयन सस्कार के बाद धारण करते हुए बालक पहली वैदिक प्रतिज्ञा करता है कि वह यावज्जीवन स्वश्रम मे अपना कल्याण करते हुए देवदान में समुचित वितरण के लिए विश्व से शोषण व अन्याय का मूलोच्छेद करके जगतो के प्राणि मात्र की हित कामना मे यज्ञ क्रियात्मक जीवनमय जीवन बना कर देवऋण से मुक्ति का प्रयत्न करता रहेगा।

ऋषि ऋण — दूसरी प्रतिज्ञा है ऋषि-ऋण से मुक्त होने की "ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः" मन्त्र ज्ञान के द्रष्टा ऋषि होते हैं मानव जीवन की सब से प्रमुख आवश्यकता है ज्ञान। जिन ऋषियो मुनियों की तपश्चर्या से हमें ईश्वरीय वैदिक ज्ञान की प्राप्ति हुई उनके प्रति भी हमारे अपने कतव्य हैं। तृष्णा से मुक्ति का साधन है, अधिकाधिक विद्या ध्ययन तथा ज्ञान विज्ञान का व्यापक प्रसार कर मानव समाज से अज्ञान मूर्खता का उन्मूलन करना।

इस वैदिक सिद्धात पर समाज का आधार ज्ञान होगा, धन अथवा राज्य शक्ति नहीं। ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि राज्य का सचालन विद्वानो के हाथो मे होना चाहिये। प्राचीन परम्परा में विद्वान का सम्मान राजा से भी अधिक था। विद्या विक्रय न होकर यह गुरुकुलों म गुरु की सेवा से प्राप्त होती थी। "अन्तेवासी बनकर" कुल मे रहने वाले बालक के गुण-कर्म स्वभावानुसार ही गुरु विद्या दान करते थे।

किन्तु वर्तमान काल में विद्या भी धन के द्वारा क्रय की जाने लगी है। आज विद्वान वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञो और पूजीपति शोषकों के

अधीन है। यदि वैज्ञानिक "रोजनबर्ग" अमेरिकी राजनीतिज्ञ पूंजीपतियों की अवहेलना करता है, तो उसे सपत्नीक प्राण दण्ड मिलता है और इसी अपराध पर बूढे वैज्ञानिक "आपन हायमर" को अदालत के कटघरे में खड़ा कर अपमानित किया जाता है पैसे वालो के बच्चे धन बल पर उच्च शिक्षा प्राप्त करके अन्याय व शोषण की खुला छूट प्राप्त कर लेते हैं। तपश्चर्या से प्राप्त विद्या की "पात्रता" उत्पन्न कर कल्याणकारी प्रयोग की भावना या व्यवस्था आज समाज मे नही है।

वैदिक समाज-व्यवस्था मे विद्वान् स्वतन्त्र तथा सम्पूर्ण सुविधाओ का महान् मान्य अधिकारी होता है। वह श्रेष्ठ शासक है मूर्खों से शासित नही। ज्ञान प्राप्ति के द्वार प्रत्येक पात्र व्यक्ति के लिए समान रूपेण खुले होने चाहिये। धन, जाति, राष्ट्र आदि का भेद वहा नही किया जा सकता।

इस प्रकार शोषण अन्याय के उच्छेदन के लिये ज्ञान का प्रसार करना, ऋषियो से प्राप्त विद्या का प्रचार करना प्रत्येक उपवीतधारी 'आर्य' का प्रमुख कर्त्तव्य है 'अज्ञान'' का मूलोच्छेदन हो, यज्ञोपवीत की दूसरी प्रतिज्ञा 'ऋषि ऋण'' से मुक्ति की साधना है।

पितृ-ऋण हमारी तृतीय धारणा है। अन्य योनियो से मनुष्य मे यह भी श्रेष्ठता है कि वह जन्म के बाद भी स्मृति के बल पर अपने सम्बन्ध स्थिर रखता है। इसीलिये मानव का विकास स्त्री-पुरुषो के उचित यौन सम्बन्धो पर अत्यधिक अवलम्बित है जिस वर्ग व समाज में यौन सम्बन्ध जितने ही अधिक स्वस्थ होगे—मनोवैज्ञानिक भित्ति पर वह समाज उतना ही अधिक श्रेष्ठ व स्वस्थ होगा। अतएव वैदिक व्यवस्था में स्त्री-पुरुषों के यौन सम्बन्धो को भी अत्युच्चादर्श साधन का अग माना गया है। हमारे यहा विवाह वासना की अशान्ति का बन्धन न होकर 'पितृ ऋण' से मुक्ति अर्थात् ससार चक्र की नियमित गति प्रतिष्ठा के लिये सन्तानोत्पत्ति का माध्यम स्वीकार किया गया है।

वैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य के उचित पालन पोषण मे माता पिता का पूर्ण भावनात्मक योग होना चाहिये। वर्तमान विश्वकी सामाजिक अशान्ति का मनोवैज्ञानिक कारण पर्याप्त अशों मे पारिवारिक स्नेह-सम्बन्धों का अभाव भी कहा जा सकता है। पारिवारिक प्रेम के अभाव में मनुष्य का स्वभाव, स्वार्थी क्रूर,कुटिल और हिंसक बन जाता हैं। वह पशुत्व की स्वच्छन्द सम्बन्ध रहित भावनाओं को प्राप्त होता है। कहना न होगा—एशिया की अपेक्षा यूरोप के समाजमे अपराधो की अधिकता और भयकरता का यह भी एक मुख्य कारण है कि यूरोपीय व्यवस्था मे अनिश्चित बच्चों की प्राप्ति तथा पारिवारिक स्नेह सम्बन्धो की मात्राका अभाव होने से मानवोचित कोमलता सहिष्णुता आदि गुणो का अभाव होता जाता है।

अत वैदिकादर्श समाज व्यवस्था के आधार पर यज्ञोपवीत को धारण करने वाले 'आर्य'' की तृतीय साधना होनी चाहिये सयमशील जीवन बिताते हुए निस्वार्थ, परोपकारी बन, स्वमानव परिवार की हित साधना अर्थात् ब्रह्मचय, गृहस्थ, वानप्रस्थ सन्यास चारो आश्रमो का पूर्ण पालन करना। वेद की कामना है।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो, मात्रा भवतु समनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं, वाच वदतु शान्तिवाम् ॥
मा भ्राता भ्रातर, द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यच सव्रता भूत्वा, वाचं वदत भद्रया ॥

भावार्थ — सन्तान माता-पिता के अनुकूल आचरण युक्त हो। पति पत्नी परस्पर प्रेम व शान्ति युक्त रहें। भाई बहनों मे द्वेष न हो। श्रेष्ठ स्वभाव गुणादि से युक्त हो, परस्पर मगल कामना करे।

ऐसे श्रेष्ठ परिवार एवं शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना करना हमारी तृतीय प्रतिज्ञा है।

हिन्दी का विरोध क्यों ?

[श्री प० रघुवीरसिंह शास्त्री]

अपने पहले एक लेखमें मैने आकाश-वाणी के भाषा विवाद के सम्बन्ध में कुछ लिखा था जिसमें मैंने बताया था कि पहले हिन्दी का विरोध उर्दू के पक्षपातियो की ओर से होता था, परन्तु स्वराज्य के पश्चात् देश की राजनैतिक परिस्थितियां तथा दृष्टि कोण बदले और फलस्वरूप भाषा सम्बन्धी विचारों में भी परिवतन आया। जैसे विश्व की राजनीति में छोटे-छोटे राज्यो का पृथक् अस्तित्व होना इस का कारण है कि वहा के राजनतिक नेताओं की महत्वाकाक्षा की पूर्ति उनके द्वारा होती है। यदि इन राज्यो को किसी दूसरे के साथ मिलाकर बडे बनाने की बात कही जाय तो उन राजनीतिज्ञो को अपना भविष्य सन्देह में पडा दीखने लगता है। अत उनका पूरा यत्न होता है कि राज्य अलग ही रहें। ठीक यही दशा भारत में प्रात अथवा राज्यो की मागों का नारा लगाने वालों की है। नेता लोग अपनी महत्वाकाक्षा की पूर्ति के लिए प्राय इन नारो को पकडते हैं। स्वराज्य के पश्चात् भाषाई आधार पर प्रान्तो के पुनर्गठन की चर्चा चली। काग्रेस पहले से इसके लिए वचनबद्ध थी, परन्तु पीछे उसे इससे कुछ खतरे भी नजर आने लगे थे। इसलिए वह कुछ करने में हिचकिचाती थी, परन्तु पुरानी पृष्ठभूमि तथा अपने ही सगठन के महत्वाकाक्षी लोगों के आदोलन से बाधित होकर उसे पुनर्गठन आधे मन से मानना पडा। आधे मन से मानने का तात्पर्य यह है कि जहां दबाव अधिक पड गया, वहा मान लिया, अन्यथा मना कर दिया।

क्योंकि राज्यों का पुनर्गठन भाषा के आधार पर हो रहा था तो स्वाभाविक था कि क्षेत्रीय भाषाओं को भी महत्व मिले। यों भी क्षेत्रीय भाषाओं को महत्व मिलना सामयिक था। परन्तु अवांछनीयता इतने अश में हुई कि राजनैतिक लोगों ने भाषा के प्रश्न को भी राजनैतिक प्रश्न बना दिया और क्षेत्रीय भाषाओं को हिन्दी की प्रतियोगिता में खडा करने की बात चलाई गई। इधर सविधान में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार कर लेने से सरकारी कार्यालयों में जमे अग्रेजी वालों को लगा कि कुछ दिन में उनका महत्व कम हो जायगा। वे यों ही साधारण तया हिन्दी के मुकाबले मे अग्रेजी का समर्थन करने का नैतिक साहस न रखते थे। अत उन्होंने अपनी नीति को दूसरा रूप यह दिया कि अहिन्दी-भाषी प्रदेशो के लोगो को यह कह कर भडकाया कि राजकाज मे हिन्दी के प्रचलित हो जाने पर उनके लिये सरकारी कार्यालयो के द्वार बन्द हो जायेगे। क्षेत्रीय भाषाये तो केन्द्रीय प्रशासन में प्रवेश न कर पायेगी अत उनका हित इसी मे है कि अग्रेजी चालू रहे और हिन्दी को येन-केन प्रकारेण आगे न बढ़ने दिया जाय। उन्हें यह भी बताया गया कि केन्द्र में हिन्दी चालू हो जाने के पश्चात् वह क्षेत्रीय भाषाओं के क्षेत्र में भी प्रवेश करेगी और वहां के प्रशासन तथा शिक्षा आदि क्षेत्रों में भी हिन्दी ही चालू हो जायगी। इसे हिन्दी के साम्राज्य का रूप बताया गया।

परिणाम यह हुआ कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी के विरुद्ध एक विभीषिका का वातावरण बन गया। अग्रेजी के समर्थकों की चाल सफल हो गयी। अगरेजी, उर्दू तथा क्षेत्रीय भाषाओं के समर्थक

इकट्ठे हो गये। प्रधान मन्त्री प० जवाहरलाल नेहरू पहले से ही हिन्दी विरोधी के रूप मे प्रसिद्ध हैं संविधानमे निर्माण के समय भी उन्होने डटकर हिन्दी का विरोध किया था। परन्तु राजर्षि टंडन आदि महारथियो के सामने विवश हो गये और बहुमत का निर्णय स्वीकार करना पड़ा। परिस्थितिवश कांग्रेस के नेतृवर्ग में भी परिवर्तन हुआ। हिंदी वाले एक-एक करके ससार से चले गये या रंगमंच के पीछे धकेल दिये गये।

एक नयी परिस्थिति दक्षिण मे और बनी। अंगरेज शासको की कूटनीतिक स्थापनाओ में से एक यह स्थापना भी थी कि इस देश के आदिवासी अनार्य हैं और आर्यों ने बाहर से आक्रान्ता के रूप मे आकर उत्तर भारत के उपजाऊ मैदानो पर अपना कब्जा कर लिया तथा इन आदिवासी अनार्यों को नीचे दक्षिण मे धकेल दिया। दक्षिणवासी प्राय अनार्यों की सन्तान है यहा की भाषाये भी अनार्य परिवार की हैं। आर्य अथवा उत्तर भारत वाले शोषक हैं और अनार्य अर्थात् दक्षिणवासी शोषित हैं। अंगरेजो द्वारा आरोपित इस विष वृक्ष के कुफल अब राष्ट्र के सामने आये हैं। दक्षिण में द्रविड मुनेत्र कड़गम आदि राजनैतिक संगठन खड़े हो गए हैं जो उत्तर भारत को दक्षिण भारत का प्रत्येक प्रकार से शोषण तथा शत्रु बताते हैं। संस्कृत का भी उसी आधार पर विरोध करते हैं यद्यपि दक्षिणी भाषाये संस्कृत के बहुत निकट हैं। उनके हिंदी विरोध की भी यही पृष्ठभूमि है। एक बार जब भाषायी उन्माद आरम्भ हो गया तो अन्य राजनैतिक दलो के लोगो का भी साहस नही रहा कि वे हिन्दी का उचित समर्थन कर सके। बहुत से नेता तो उन अन्य दलो मे ऐसे भी निकले जिन्होने हिन्दी विरोधियों के स्वर में स्वर मिला कर निर्वाचन जीतने की भावना बनाई यही प्रतिक्रिया कांग्रेसी चेलो में भी हुई। नेहरू जी को भी दक्षिण में कांग्रेसी प्रभुता की चिन्ता ने सताया और वे भी हिन्दी तथा उसके समर्थको को दो-चार सुनाने लगे। कांग्रेस में अब उनका व्यक्तित्व तथा प्रभाव ताना शाही के दर्जे तक पहुँच चुका है और यही कांग्रेस संगठन का सब से बड़ा खोखलापन है। प्राय यह भेड़ चाल चल गई है कि नेहरू जी किसी समस्या के सम्बन्ध मे जो युक्तिया देते हैं वही अन्य सभी स्तरो के कांग्रेसी दोहराने लगते हैं। कभी कभी तो वे युक्तिया बहुत निस्सार होती हैं परन्तु मानो सब की बुद्धि या विचारशक्ति को इस साम्प्रदायिक ढग की मनोवृत्ति ने बिलकुल कुंठित बना दिया है।

नेहरू जी समझते हैं कि उत्तर भारत तो उनके साथ है हो कही दक्षिण भारत न बिगड जाय, इसलिये उन्होने हिन्दी का विरोध आरम्भ किया। केन्द्रीय शासन मे हिन्दी के समर्थको को छाट छाट कर कम करने का यत्न किया जा रहा है। राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति, लोक सभा तथा राज्य सभा के अध्यक्ष आदि सभी महत्वपूर्ण पदो पर आज वे लोग हैं, जिनका हिन्दी के साथ कोई लगाव नही। यो उनका व्यक्तित्व योग्यता सेवा आदि कितने ही प्रशसनीय क्यो न हो परन्तु हिन्दी की दृष्टि से उनकी स्थिति बिलकुल दूसरी है। मन्त्रिमण्डल मे एक आध को छोडकर कोई भी व्यक्ति ऐसा नही जिसे हिन्दी का समर्थक कहा जा सके।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अब हिन्दी का विरोध राजनैतिक हेतुओ से हो रहा है। इसीलिये अंग्रेजी के प्रयोग की सविधान में निर्धारित अवधि समाप्त होने पर उसे पुन १५ वर्ष के लिए बढाने के लिए एक नया विधेयक लाया जा रहा है। खेद है कि संविधान तथा भाषा सम्बन्धी आयोगो की सम्मति की अवहेलना करके राजनैतिक स्वार्थों के कारण हिन्दी के मुकाबले अंग्रेजी को प्रतिष्ठित किया जा रहा है, हिन्दी को सरल बनाने के बहाने उसका रूप बिगाड़ा जा रहा है। वास्तविकता यह है कि राजनैतिक व्यक्ति अथवा दल प्रत्येक काम इस दृष्टि से करते हैं कि उनका हित किस प्रकार सिद्ध हो सकता है या सुरक्षित रह सकता है। हिन्दी के समर्थकों को सोचना होगा कि इस राजनैतिक अन्याय का सामना किस प्रकार किया जाय? प्रतीत तो यह होता है कि यदि हिन्दी वालो की राजनीतिक शक्ति कम रही तो हिन्दी को भी न बचाया जा सकेगा।

*

आर्य समाजों के नाम परिपत्र

सत्याग्रह बलिदान-स्मारक दिवस

बुद्धवार १५ अगस्त १९६२ को मनाइये

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के दिनाक ११-१०-४० के स्थायी निश्चयानुसार सत्याग्रह मे अपने प्राणो की आहुति देने वाले आर्य वीरो की पुण्य स्मृति में श्रावण शुक्ला पूर्णिमा तदनुसार बुद्धवार १५ अगस्त १९६२ को आर्यसमाज मन्दिरो मे सत्याग्रह बलिदान स्मारक दिवस मनाया जायगा। इसी दिन श्रावणी का पुण्य पर्व है। इसका कार्यक्रम आर्य पर्व पद्धति के अनुसार श्रावणी उपाकर्म के साथ मिलाकर निम्न प्रकार किया जाय —

प्रात ८॥ बजे आर्य समाज मन्दिरो मे सभाएँ की जाये जिनमें उपाकर्म की कार्यवाही के पश्चात सब उपस्थित भद्र पुरुष तथा देवियां मिलकर निम्न पाठ करे।

१-ओ३म् ऋतावान् ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विष ।
तेषा व सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नर स्याम ये च सूरय ।। ऋग्वेद ७ । ६६ । १३ ।।

२-ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रत चरिष्यामि तच्छकेय तन्मे राध्यताम् ।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ।। यजुर्वेद १ । ५ ।।

३-ओ३म् इन्द्र वर्धन्तो अप्तुर कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।
अपघ्नन्तो अरावण ।। ऋ० ० । ६३ । ५ ।।

४-ओ३म् उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्य सन्तु पृथिवि प्रसूता ।
दीर्घ न आयु प्रतिबुध्यमाना वय तुभ्य बलिहृत स्याम ।। अथर्ववेद १२ । १ । ६२ ।।

आर्यसमाजो के पुरोहित अथवा अन्य कोई वेदज्ञ विद्वान् उपर्युक्त मन्त्रो का तात्पर्य इन शब्दो मे पढ कर प्रार्थना कराये —

१—जो विद्वान् सदा सत्य के मार्ग पर चलते हुए सत्य की निरन्तर वृद्धि और असत्य के विरोध मे तत्पर रहते है, उनके सुखदायक उत्तम आश्रय मे हम सब सदा रहे तथा हम भी उनकी तरह मन, वचन और कर्म से पूर्ण सत्यनिष्ठ बने।

२ हे ज्ञानस्वरूप! सब उत्तम सकल्पो और कर्मों के स्वामी परमेश्वर! हम भी आज से एक उत्तम व्रत ग्रहण करते हैं जिसके पूर्ण करने की शक्ति आप हमे प्रदान करे ताकि उस व्रत के ग्रहण से हमारी सब तरह से उन्नति हो वह व्रत यह है कि असत्य का सर्वथा परित्याग करके हम सत्य की ही शरण मे आते हैं। आप हमें शक्ति दे कि हम अपने जीवनो को पूर्ण सत्यमय बना सके।

३-हे मनुष्यो! तुम सब आत्मिक शक्ति तथा उत्तम ऐश्वर्य को बढाते हुए श्रमशील बन कर उन्नति मे बाधक आलस्य प्रमादादि दुर्गुणो का परित्याग करते हुए सारे ससार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ सदाचारी, धर्मात्मा बनाओ।

४—हे प्रिय मातृभूमे! हम सब तेरे पुत्र और पुत्रिया तेरी सेवा में उपस्थित होते हैं। सर्वथा नीरोग, स्वस्थ तथा ज्ञान सम्पन्न होते हुए हम दीर्घायु को प्राप्त हो और तेरी तथा धर्म की रक्षा के लिए आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राणो की बलि देने को भी तैयार रहें।

इसके पश्चात् मिलकर निम्नलिखित कविता का गान किया जावे —

धर्मवीरों के प्रति श्रद्धांजलि

श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हम, करके उन वीरो का मान।
धार्मिक स्वतन्त्रता पाने को, किया जिन्होंने निज बलिदान ॥
परिवारों के सुख को त्यागा युवक अनेको वीरो ने।
कष्ट अनेको सहन किये पर, धर्म न छोड़ा वीरो ने ॥
ऐसे सभी धर्म वीरो के, आगे शीश झुकाते हैं।
उनके उत्तम गुण गण को हम निज जीवन मे लाते हैं ॥
अमर रहेगा नाम जगत् मे, इन वीरो का निश्चय से।
उनका स्मरण बनायेगा फिर, वीर जाति को निश्चय से ॥
करे कृपा प्रभु आर्य जाति मे, कोटि कोटि हो वीर
धर्म देश हित जो कि खुशी मे प्राणो की आहुति दे वीर ॥
जगदीश को साक्षी जानकर, यही प्रतिज्ञा करते हैं।
इन वीरो के चरण चिह्न पर, चलने का व्रत करते हैं ॥
सर्वशक्ति दे बल ऐसा धीर वीर सब आर्य बने।
पर उपकार परायण निशिदिन, शुभ गुणधारी आर्य बने।

(ध० दे०)

❀ धर्मवीर नामावली ❀

श्यामलाल जी महादेव जी राम जी श्री परमानन्द।
माधव राव विष्णु भगवन्ता, श्री स्वामी कल्याणानन्द ॥
स्वामी सत्यानन्द महाशय मनखाना श्री वेदप्रकाश।
धर्म प्रकाश रामनाथ जी पाण्डुरग श्री शान्तिप्रकाश ॥
पुरुषोत्तम जी ज्ञानी लक्ष्मण राव सुनहरा बेंकट राव।
भक्त-अरुडा मातुराम जी नन्हूंसिह जी श्री गोविन्दराव।
बदनसिह जी रतीराम जी मान्य सदाशिव ताराचन्द।
श्रीयुत छोटेलाल अशर्फीलाल तथा श्री फकीरचन्द ॥
माणिकराव श्री भीमराव जी महादेव श्री अर्जुनसिह।
सत्यनारायण बैजनाथ ब्रह्मचारी दयानन्द नरसिह ॥
राधाकृष्ण सरीखे निर्भय अमर हुए इन वीरो का।
स्मरण करे विजयोत्सव के दिन, सब ही वीरो धीरो का ॥

कालीचरण आर्य
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

शुद्धि समाचार

भारतीय शुद्धि सभा द्वारा ७ ७ ६२ को शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री बनारसीलाल आर्य ने ग्राम बरहाई जिला मुरादाबाद मे एक शुद्धि सम्मेलन का आयोजन किया जिसमे १०५ ईसाइयो को वैदिक हिन्दू धर्म की दीक्षा देकर उनको पुरातन बाल्मीकि जाति मे प्रविष्ट किया गया।

दिल्ली से सम्मेलन मे भाग लेने निम्न महानुभाव सम्मिलित हुए—श्री द्वारिकानाथ जी मन्त्री आर्यसमाज राजेन्द्रनगर श्री गोकुलचन्द जी राजेन्द्रनगर व प्रधान जी आर्यसमाज राजेन्द्रनगर, श्री दीपचन्द जी शर्मा भजनोपदेशक श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी व हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष। शुद्धि सस्कार श्री वानप्रस्थी जी ने कराया। श्री द्वारिकानाथ जी सभा मन्त्री ने शुद्ध हुओ का स्वागत तथा उपस्थित ग्रामवासियो का धन्यवाद किया।

८ ७-६२ को शुद्धि

सभा उपदेशक श्री बनारसीलाल के परिश्रम से ग्राम बैटरा जिला मुरादाबाद मे ५५ ईसाइयो की शुद्धि हुई और उनको वैदिक हिन्दू धर्म की दीक्षा देकर उनकी बा मीकि जाति मे सम्मिलित किया गया। शुद्धि सस्कार श्री वानप्रस्थी जी द्वारा हुआ और उक्त सभी महानुभाव इस सम्मेलन में उपस्थित थे

१० ७-६२ को शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा देहली के उपदेशक श्री प० गगालाल जी ने ग्राम नगला अमरसिंह जिला एटा में १ नव मुस्लिम परिवार जिसमे सब आठ व्यक्ति हैं श्री मा० पहुपसिंह जी व श्री ठा० देवीसिंह जी की अध्यक्षता मे शुद्धि सस्कार कराकर उनके नाम नवेदार खा व दफेदार खा से बदल कर ठा० नवेदारसिंह व ठा० दफेदारसिंह रक्खा जिसमें लाला रामनारायण जी का विशेष सहयोग रहा। शुद्धि सस्कार क पश्चात् लगभग ३०० आसपास के व्यक्तियो का एक सहभोज हुआ। सब ठाकुर बिरादरी के पचो ने सब शुद्ध हुए भाईओ का स्वागत कर अपनी राजपूत जाति मे मिला लिया और सवर्ण राजपूतो मे एक लडकी का विवाह उसी दिन सम्पन्न हुआ।

१५-७ ६२ को शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा क तत्वावधान में १५ ७ ६२ को आर्य भवन सिकन्दराबाद (बुलन्द शहर) मे श्रीमती एम० फ्रेक नामक ईसाई युवती के उसके पुत्र क साथ शुद्ध करके उसकी पुरातन ब्राह्मण कौल जाति मे प्रविष्ट करके उसका नाम श्रीमती कौशल्या देवी तथा पुत्र का नाम बिनोद कुमार रखा गया। देहली से सभा अधिकारी श्री द्वारकानाथ मन्त्री, श्री यशपाल जी श्री गोकल चन्द जी, श्रीमती पूर्णदेवीजी श्रीमती सीतादेवीजी, श्रीमती कौशल्या देवी जी सदस्य श्री दीपचन्द सभा भजनोपदेशक श्री रामजीदास जी कल्याण प्रधान दलित वर्ग सघ मेरठ ने जाकर भाग लिया। और अनेको विद्वान विभिन्न स्थानो से पधारे जिनमे श्री खजानदत्त जी शर्मा आचार्य गुरुकुल सिकन्दराबाद, श्री गणेशशकर शास्त्री ग्राम घोडी श्री वैद्य यशपाल जी दादरी के नाम उल्लेखनीय है। शुद्धि सस्कार श्री हरिप्रसाद जी वानप्रस्थी ने कराया।

श्री पृथ्वीनाथ जी भाटिया मैनेजर स्टेट बैंक के सभापतित्वमें एक विशाल सभा हुई जिसमें उपस्थित महानुभावों के आशीर्वाद के पश्चात् श्री द्वारकानाथ जो मन्त्री शुद्धि सभा ने हर प्रकार को रक्षा का आश्वासन व एक सभा प्रमाण पत्र दिया।

इस शुद्धि का श्रेय श्री पं० रामजीलाल जी आत्रेय महोपदेशक गुरुकुल सिकन्दराबाद को है।

नारायणदास कपूर
प्रधान मन्त्री

अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार नि० स० द्वारा ५८५६ ईसाई वैदिक धर्म में वापस आये

उज्जन आगर लाइन (मध्य प्रदेश) में ईसाई मत के बढते हुए प्रचार को रोकने के लिए अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति (सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा स्वामी श्रद्धानन्द अखिल भारतीय स्मारक ट्रस्ट द्वारा सस्थापित) ने इस क्षेत्र में फरवरी १९६२ से अपना प्रचार कार्य आरम्भ किया। जैसा कि इससे पूर्व आर्य जगत् को सूचना दी जा चुकी है फरवरी से मई ६२ तक ईसाई मत में गये हुए ६३४९ बलाइयो को शुद्ध करके वैदिक धर्म में वापस लिया जा चुका है। श्री पण्डित देवप्रकाश जी के निर्देशन में हमारे प्रचारक गाव गाव में पहुंच कर ईसाई मत के खतरों से बलाई लोगो को सावधान करते हैं और जो लोग अज्ञान, भूल या लालच से बलाई बन गये थे उन्हें शुद्ध करके वैदिक धर्म में वापस ला रहे हैं। हमारा प्रचार कार्य दिन प्रतिदिन तीव्र होता जाता है। परिणाम स्वरूप जून १९६२ में ३६ ग्रामों में प्रचार हुआ और ५८५६ ईसाइयों को शुद्ध करके वैदिक धर्म में लिया गया।

छात्रावास की आवश्यकता

इस क्षेत्र में शुद्ध हुए परिवारों के स्कूलो में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए उज्जैन या शाजापुर में एक छात्रावास की विशेष आवश्यकता है। प्रत्येक छात्र के भोजन तथा रहन-सहन का मासिक व्यय २५) होता है। यदि आर्य जनता का सहयोग मिले तो हाई स्कूल की उच्च कक्षाओं में पढने वाले २० छात्रों के लिये एक छात्रावास खोला जा सकता है। इस पर हमारा ५००) मासिक व्यय होगा। इस छात्रावास के पढ़े लिखे लडके आगे चल कर हमारे अच्छे प्रचारक सिद्ध होगे और उनसे गावो में ईसाई मत के प्रचारको रोकने में सहायता मिलेगी।

अत आर्य जनता से विनम्र निवेदन है कि प्रत्येक आर्य उज्जैन आगर लाइन के १७ लाख बलाइयों की रक्षा के लिए हमारे प्रचार और छात्रावास के कार्य में अपना अपना आर्थिक सहयोग प्रदान करे ताकि इस कार्य को और भी बढ़ाया जा सके। धन निम्नांकित पते पर भेजिए

ज्ञानचन्द्र
मन्त्री
अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति
दीवान हाल, दिल्ली-६

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण

१—दिनाक ६-८-६१ को पं० मगलदेव जी शास्त्री महोपदेशक सभा और आर्यसमाज पूर्णा के प्रेरणा व प्रयत्न से एक सम्पूर्ण ईसाई परिवार जिसके पाच सदस्य हैं शुद्ध हुए। श्री काशीनाथराव जी ने अपनी पत्नि कमलाबाई पुत्र प्रभुदास एव देवदास और पुत्री मनोरमादेवी के साथ वैदिक धर्म में प्रवेश किया। यह परिवार जन्मजात ईसाई परिवार था।

२—२०-८-६१ को आर्यसमाज कोत्तागुडा के वयो वृद्ध आर्य कार्यकर्त्ता श्री रामचन्द्र जी अग्रवाल और नवयुवक कार्यकर्त्ता श्री बी० एस० गुप्त जी के प्रयत्नोंसे एक महिला बासन्ती शुद्ध की जाकर श्री डा० नारायण रेड्डी जी के पौरोहित्य मे हिन्दू नवयुवक श्री के० वीररेड्डी जी के साथ विवाह सम्पन्न कराया गया।

३—तारीख ५-१०-६१ को सभा कार्यालय

भवन, सुलतान बाजार में आन्ध्र प्रदेश हाईकोर्ट के एल० डी० सी० क्लर्क श्री चक्का जान पीटर पश्चिम गोदावरी की शुद्धि प० कालीचरण जी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुई। श्री जानपीटर जन्मजात ईसाई थे।

४—दिनाक २-११ ६१ को आर्यसमाज मन्दिर सुलतान बाजार में प० कालीचरण जी ने श्री वाई ई राबर्ट का शुद्धि संस्कार किया। शुद्धि उपरान्त इनका नाम श्री नारायणराव रखा गया।

५—दिनाक २२-११-६१ ई० को प० रुद्रदेवजी उपदेशक के प्रयत्नो से ग्राम मोरताड जिला—निजामाबाद में श्री सरोजनीदेवी (कोटगीर दवाखाने की नर्स) जो ईसाई थी शुद्धि संस्कार कर श्री शिवचरणप्रसाद जी के साथ विवाह सम्पन्न कराया गया।

६—तारीख ४-१२-६१ को कर्नूल निवासी श्री बी० प्रकाशम् की शुद्धि प० कालीचरण जी के पौरोहित्य में सपन्न कराई गई। श्री बी० प्रकाशजी के माता, पिता और बहने सभी हिन्दू परिवार के हैं केवल श्री बी० प्रकाश जी बीच में ईसाई हो जाने से शुद्ध होकर पुन अपने परिवार के सदस्य बन गये हैं।

७—कई वर्ष पूर्व सदाशिवपेठ जि० मेदक का का एक हरिजन परिवार ईसाई हो गया था। सभा के उपदेशक प० गोपालदेव जी शास्त्री एव श्री सगमेश्वर जी मन्त्री, आर्यसमाज सदाशिवपेठ के प्रेरणा से दिनाक २७ २-६२ ई० को श्री नागप्पा अपनी पत्नि लक्ष्मीबाई और उसके दो बच्चो सहित शुद्ध हुए। प० गोपालदेव जी ने शुद्धि संस्कार करवाया।

८-दिनाक ११-३-६२ ई० को गुलबर्गा निवासी श्री मुहम्मद इस्माईल की पुत्री मौलाना बेगम मुस्लिम महिला की शुद्धि प० गोपालदेव जी शास्त्री उपदेशक सभाके पौरोहित्य में सम्पन्न हुई। उपरात इस युवतीका नाम मालतीबाई रखा गया। तदुपरांत मालतीबाई का विवाह गुलबर्गा निवासी आर्य हिन्दू नवयुवक श्री दत्तात्रयकरदीकर के साथ सम्पन्न कराया गया।

अन्तर्जातीय विवाहः—

१ दिनाक १-९-६१ ई० को आर्यसमाज तुलजापुर जिला उसमानाबाद के कार्यकर्ताओ के प्रेरणा से समाज मन्दिर में अन्तंजातीय विवाह सम्पन्न हुआ। वर महोदय श्री तानोजी अनन्तराव (मराठा) और रेवतीबाई (ब्राह्मण) कुल से सम्बन्धित थीं।

२— तारीख २२-११ ६१ को सभा के उपदेशक प० ज्ञानेन्द्र जी शर्मा के प्रयत्नो से सिलखोड जिला परभनी के तहसीलदार श्री नामदेवराव बेडेकर (चर्मकार) का वैदिक विवाह इन्दू कुलकर्णी (ब्राह्मण) कन्या के साथ सम्पन्न किया गया।

नरेन्द्र
मन्त्री सभा

आर्यसमाज महनार (मुजफ्फरपुर)

इनके परिवार के लोग पहले मुसलमान हो गये थे। २९ ६-६२ को ये स्वेच्छा से आर्य समाज महनार के द्वारा शुद्ध हुई। मिथिला वैदिक धर्म यज्ञाश्रम, खड़का (दरभगा) के प० जितेन्द्र शर्मा आर्य महोपदेशक भी उपस्थित थे। उपस्थित सभी लोगों ने सहर्ष उनके हाथ का प्रसाद पाया। अब उनका नाम यो है – १ सुदामादेवी, मोलीदेवी, ३ मालती कुमारी और ४ अञ्जनो कुमारी।

मालती कुमारी की आयु चौदह साल की है। वह सुशील एव अति सुन्दरी लड़की है। उससे विवाह की इच्छा रखने वाले आर्यजन उपर्युक्त पते से पत्र व्यवहार करे।

ठाकुर देशराज पुरी
मन्त्री

शोकोद्‌गार

देश की महान् क्षति

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी ने श्रीयुत पुरुषोत्तम दास टंडन और श्री बी० सी० राय के निधन पर निम्नलिखित प्रेस वक्तव्य दिया है :—

श्री टंडन जी

श्रीयुत पुरुषोत्तम दास जी टंडन का निधन वस्तुतः एक बड़ी राष्ट्रीय क्षति है। उन्होंने निस्पृह सेवा और त्यागमय जीवन का भव्य उदाहरण प्रस्तुत किया हुआ था। टंडन जी देश की एक महान् विभूति थे। उनसे वंचित होने पर देश अपने को अकिंचन अनुभव करता है। श्री टंडन जी आर्य संस्कृति के प्रेमी थे। हिन्दी भाषा का प्रचार उनके जीवन की साधना थी। हिन्दी को राज्य-भाषा का गौरवास्पद स्थान प्राप्त कराने में श्री टंडन जी का जो मूल्यवान योग रहा वह भुलाया न जा सकेगा। आर्य संस्कृति के प्रति प्रेम, हिन्दी के प्रति अटूट निष्ठा और आर्य समाज की प्रगतियों के प्रति सहानुभूति के कारण आर्य जगत् उन्हें बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता था। मैं समस्त आर्य जगत् की ओर से उनके शोक संतप्त परिवार के प्रति समवेदना का प्रकाश करता और दिवंगत आत्मा की सद्‌गति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करता हूं।

बंगाल के मुख्यमन्त्री

श्रीयुत विधानचन्द्र राय के निधन से भी देश की बड़ी क्षति हुई है जिसकी निकट भविष्य में पूर्ति होनी असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। परमात्मा दिवंगत आत्मा को सद्‌गति प्रदान करे यही अभ्यर्थना है।

श्रीयुत पं० भीमसेन जी विद्यालंकार

आर्य जगत् में यह समाचार बड़े दुःख के साथ सुना जायगा कि श्रीयुत पं० भीमसेन जी विद्यालंकार का दिल्ली के सफदरजंग हस्पताल में १८-७-६२ को केंसर के रोग से देहान्त हो गया। इस समय पण्डित जी की आयु ६२ वर्ष की थी। गत मास सर गंगाराम हस्पताल में उनका आपरेशन हुआ था।

पण्डित जी के निधन से आर्य समाज की बड़ी क्षति हुई है। वह गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक थे। उन्होंने जीवन पर्यन्त आर्य समाज की बहुमूल्य सेवा की। वर्षों पर्यन्त आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री रहे। आर्यसमाज की अन्य प्रमुख २ संस्थाओं संघठनों तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ भी उनका सम्बन्ध प्रायः बना रहा। इस समय वह सार्वदेशिक सभा के सदस्य तथा विद्यार्य सभा के कार्यकर्ता प्रधान थे। पंजाब में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की शाखा को प्रगति के पथ पर डालने में उनका प्रमुख हाथ था। कांग्रेस के स्वातन्त्र्य आन्दोलन में भी उन्होंने भाग लिया और कई मास तक बन्दीगृह में रहे। 'वन्दे मातरम्' 'आर्य' आदि अनेक पत्रों के सम्पादन में भी योग देकर उन्होंने अपनी पत्र-कारिता के प्रति अभिरुचि का अच्छा परिचय दिया था।

पण्डित जी बड़े शिष्ट और मिलन सार थे। हृदय के बड़े शुद्ध थे। जो बात उन्हें ठीक जंचती उसके कहने में संकोच न करते थे। उनके इस प्रकार के गुणों के कारण उनसे मतभेद रखने वालों तक के हृदयों में उनके प्रति आदर तथा विश्वास की भावना थी।

परमात्मा दिवंगत आत्मा को सद्गति और शोक सन्तप्त परिवार को इस महान् दुःख के सहन करने की क्षमता और धैर्य प्रदान करे।

श्री देशराज चौधरी पर वज्रपात

यह समाचार बड़े दुःख के साथ सुना जायगा कि सार्वदेशिक सभा के उपप्रधान तथा दिल्ली नगर निगम के उपमहापौर श्रीयुत देशराज जी चौधरी की धर्मपत्नी श्रीमती चन्द्रवती देवी का ६-७-९२ के प्रात ८॥ बजे तीरथराम हस्पताल दिल्ली में देहान्त हो गया। वह ७-८ दिन पर्यन्त पेट के रोग से पीड़ित रही।

देवी जी बड़ी सौम्य प्रकृति की सद्गृहिणी देवी थीं। श्री देशराज चौधरी को अपने व्यस्त सार्वजनिक जीवन के दायित्वों की पूर्ति में उनसे बड़ी सहायता मिलती थी। राष्ट्रीय और सामाजिक सेवाओं में यह मौन भाव से निरत रहती थी। आर्य अनाथालय के संचालन में श्री चौधरी जी उनके कारण निश्चिन्त से रहते थे। वह बड़े मनोयोग से इस संचालन कार्य में हाथ बटाती थीं। आर्यसमाज के अन्यान्य क्षेत्रों में भी उनकी सेवायें महत्वपूर्ण रहीं।

देवी जी की चिकित्सा और परिचर्या में किसी प्रकार की कमी न आने दी गई। योग्य से योग्य चिकित्सकों ने बड़े ध्यान से चिकित्सा की। उनकी शव यात्रा में नगर निगम के वरिष्ठ अधिकारियों, संसद सदस्यों, आर्य नरनारियों और चौधरी देशराज जी के बहुसंख्यक मित्रों और प्रशंसकों ने भाग लिया।

मैं अपनी सभा प्रधान तथा आर्य जगत् की ओर से इस महान् दुःख में श्री देशराज चौधरी और उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करता हुआ परमात्मा से प्रार्थना करता हूं कि वह दिवंगत आत्मा को सद्गति और परिजनों को इस महान् दुःख को सहन करने की क्षमता प्रदान करे। कालीचरण आर्य, मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली-१

आवागमन का प्रमाण

तुर्की में पुनर्जन्म की घटना

दक्षिणी-पूर्वी तुर्की में इस्माइल नामक ४ वर्षीय लडका यहां डाक्टरों के लिये सिरदर्द बना हुआ है।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इस लडके के शरीर में एक ऐसे व्यक्ति की आत्मा है जिसकी ६ वर्ष पूर्व अदाना नामक स्थान पर हत्या कर दी गई थी। इस लडके को देखने के लिये तुर्की के बहुत से डाक्टर और वैज्ञानिक पहुंचे हैं।

इन डाक्टरों का कहना है कि यह एक शरीर में दो आत्माओं की घटना नहीं बल्कि एक आत्मा के पुनः जन्म लेने (पुनर्जन्म) का मामला है। इस लडके के बारे में वैज्ञानिकों की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था द्वारा विचार किया जायेगा।

इस लडके के शरीर में जिस व्यक्ति की आत्मा है उसका नाम आबिद सोज हसूद था और उसकी ६ वर्ष पूर्व अदाना में हत्या कर दी गई थी। हत्या के समय इसके गुलसीरन, जकी और हिकमत नामक ३ बच्चे थे। यह लडका कभी-कभी अचानक चिल्ला उठता है कि वह तीनों बच्चों को देखना चाहता है। कभी कभी सोते से उठ कर चिल्लाता है कि गुलसीरन तुम कहां हो।

इस्माइल के पिता ने बताया कि हाल ही में एक आइस क्रीम बेचने वाला गुजर रहा था। इस्माइल ने जब इसकी आवाज सुनी तो दौड कर बाहर चला गया और आइस क्रीम विक्रेता से कहने लगा मुहम्मद तुम यहां क्या कर रहे हो, तुम तो तरकारी बेचा करते थे। आइस क्रीम विक्रेता जिसका नाम वास्तव में मुहम्मद था आश्चर्य चकित रह गया और

(शेष पृष्ठ ५० पर)

द्रविड मुन्नेतर कज़गम
(देश की एकता के लिए बड़ा खतरा)

द्रविड कज़गम के नेता के साथ कांग्रेस ने समझौता किया जिसके फल-स्वरूप द्रविड कज़गम के कुछ सदस्य कांग्रेस में घुस गए और उनके कुछ प्रतिनिधियों को शासन में प्रमुख पद दिए गए।

इसका परिणाम यह है कि तामिल की पाठ्य पुस्तकें बदल दी गई हैं जिनमें तामिलनाद के पृथकतावाद के सिद्धान्त मिलाए गए, संस्कृत के शब्द निकाले गए और वर्णमाला को विशुद्ध रूप दिया गया। अधिकांश अध्यापकों में भी पृथकता वाद का रोग पाया जाता है। आज श्रीयुत कामराज और श्रीयुत भक्तवत्सलम को इस प्रक्रिया को बदलने के लिए बडा संघर्ष करना होगा।

द्रविड कजगम और द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम के लोगो की अन्य विभागो में भी भरमार हो गई है जिसका प्रभाव यह हुआ है कि विघ्नकारी तत्त्व छुपे २ क्रियाशील हैं।

इस प्रकार सबसे पहला प्रश्न यह है कि प्रशासन की इस प्रकार के तत्त्वों से शुद्धि किस प्रकार की जाय। देहली का मत यह है कि प्रसिद्ध २ उपद्रवियों को निकाल देने से नैतिक प्रभाव पडेगा। यत सरकारी नौकरी का मोह अत्यधिक होता है अत विविध अधिकारियो के कान खडे हो जायेगे और वे अपने दृष्टिकोण को बदल देगे। कहा जाता है कि केन्द्रीय सरकार के कार्यालयो से जन संघ के छर्तों को इसी भाति हटाया गया था।

इसके पश्चात् व्यवस्थित सरकार की चुनौती का प्रश्न है जिसका परिचय अभी हाल के सामूहिक प्रदर्शनों से मिला है जो वस्तुओं के बढे हुए मूल्यो के प्रश्न पर किए गए थे। देहली की भावना यह है कि उपद्रवियों से निबटने के लिए कानून के अन्तर्गत अनेक धाराए हैं। साम्प्रदायिक क्षेत्रीय और जातिगत प्रेरणाओ पर आश्रित आन्दोलनो से निबटने के लिए फौजदारी कानून में जो संशोधन हुआ है वह पर्याप्त है। यह अनुभव किया गया है कि द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम के सिर फिरो के होश ठिकाने लगाने के लिए देश-द्रोह के कानून को क्रियान्वित किए जाने की इस समय आवश्यकता नही है। बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि साधारण कानून किस प्रकार लागू किया जाता है और किस प्रकार सजाए दी जाती हैं। प्रशासकीय अनुभव रखने वाले राजनीतिज्ञो की धारणा है कि द्रविड मुन्नेत्तर कजगम के नेता कांग्रेस की मुट्ठी मे हैं और कानून का कडाई के साथ प्रचलन किया जाय तो द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम के सर्व साधारण अनुयायियों को पाठ पढ़ाया जा सकता है। इसके साथ ही राज्य के मन्त्री मण्डल को उचित है कि वह प्रशासन को अच्छा और सहानुभूति पूर्ण रूप दे और इस प्रकार उस असन्तोष को दूर करे जिसका द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम ने दोहन किया है।

अन्त में आदर्शों और सिद्धान्तो पर अवलम्बित युद्ध लडना है। राज्य के कांग्रेसी कर्णधारों पर यह आरोप लगाया गया है कि वे पृथकतावादी चैलेञ्ज की गुरुता का अनुमान लगाने और समय पर उसका प्रतिकार करने मे असफल रहे हैं। कुछ समय तक कांग्रेस के नेता यह समझते रहे कि केन्द्र से अधिकाधिक रियायते प्राप्त करने में मुन्नेत्तर कज़गम का आन्दोलन परोक्ष रूप से उनकी सहायता कर रहा है। यत श्रीयुत कामराज की लोक-प्रियता पर कोई आंच न आई थी अत वह यह सोचने लगे थे कि हम मुन्नेत्तर के वक्ताओं के प्रलाप और आन्दोलन को उपेक्षा कर सकते हैं।

गत महानिर्वाचन मे द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम को मिली हुई सफलता पहला धक्का था जो मद्रास के कर्णधारों के हृदयों पर लगा था। अब केन्द्र भी चिन्तित है क्योंकि इस राष्ट्र विरोधी दल ने नगर

पालिकाओं और पचायतों के क्षेत्रों में भी चुनौती प्रस्तुत करदी है। काग्रेस हाई कमान का अब यह मत है कि मद्रास के शासक दल को बचाव का क्षेत्र छोड देना चाहिए। उसे यह आशा है कि काग्रेस के कर्णधारों को यह कह देना चाहिए कि दक्षिण, मुख्यत मद्रास भारतीय सघ का अनिवार्यत अग रहना चाहिए और उसकी समृद्धि एव सुरक्षा का एक मात्र यही उपाय है। साथ ही उन्हें यह स्पष्ट करना चाहिए कि दक्षिण की कोई उपेक्षा नही हो रही है उल्टे उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश और बिहार के लोगो की प्रति व्यक्ति जो आय है उससे अधिक मद्रास के लोगो की है। दूसरे शब्दो में मद्रास के काग्रेस जनों को राष्ट्रिय एकता के धर्म्म युद्ध के वीरो के सदृश कार्य करना है।

द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम दक्षिण के अन्य राज्यों में अपना प्रभाव व्याप्त करने का सिर तोड यत्न कर रहा है। यह कार्य लगभग १० वर्ष से चल रहा है। दूसरे शब्दों में उस समय से जबकि श्री रामास्वामी नाइकर ने द्रविड कज़गम की स्थापना की थी। मद्रास राज्य के काग्रेस नेताओं की मान्यता है कि मेसूर, केरल वा आन्ध्र में द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम की प्रगतियों से भय का कोई कारण नहीं है। द्रविड मुन्नेत्तर कज़गम एकमात्र बगलोर नगर में उत्तर विरोधी प्रदर्शन कराने में सफल हो सका है और वह भी वहा जहा तामिल भाषा भाषी प्रजा अधिक थी। मुन्नेत्तर कज़गम ने अपनी शाखाओं के द्वारा मलाया में भी कुछ प्रदर्शन कराए हैं।

द्रविड मुन्नेत्तर का दावा है कि मद्रास राज्य में उसके समर्थकों की सख्या ३० या ४० लाख है। आगामी अक्तूबर में मद्रास राज्य के नगर पालिकाओं के चुनाव होने वाले हैं अत कज़गम कांग्रेस के साथ अपनी शक्ति के परीक्षण की तय्यारी में व्यस्त है। मद्रास राज्य में कज़गम की लगभग ४००० शाखाए है और मद्रास नगर निगम पर उसका अधिकार है। कांग्रेस क्षेत्रो की मान्यता है कि नगर निगम पर पुन काग्रेस अधिकार प्राप्त कर लेगी।

राज्य मे कुल ४२ नगर पालिकाए हैं। मद्रास के बाद मदुराई और कोयमबटूर की बडी नगर पालिकाए हैं परन्तु इन दोंनो पर भी काग्रेस का अधिकार नहीं है। काग्रेस ने गत चुनाव में १२ नगर पालिकाओं का चुनाव लडा था और २५ पर अधिकार प्राप्त करने में समर्थ हुई थी।

—(ट्रिब्यून २७-७-६२)

द्रविड़ मुन्नेतर कजगम पर पाबन्दी लगाना भी उचित

त्रिमुरायल्ली २९ जुलाई—

द्रविड कजगम के नेता श्री रामस्वामी नायकर ने कहा कि द्रविड मुन्नेतर कजगम की गतिविधियां इस प्रकार की है कि यदि सरकार उक्त सस्था को गैर कानूनी भी घोषित करदे तो भी न्याय सगत होगा। उन्होंने एक सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए द्रविड मुन्नेतर कजगम पिकेटिंग अभियान की आलोचना की तथा कहा कि जनता इस स्टण्ट से दूर रहे।

श्री नायकर ने कहा कि द्रविड मुन्नेतर कजगम ने कीमत कम करने के लिए कोई ठोस सुझाव तो दिया नहीं। उन्होंने वर्तमान कर नीति का भी समर्थन किया।

राज्य का आदर्श

(रघुनाथ प्रसाद पाठक)

धर्म की रक्षा और उसका मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से राज्य की स्थापना की जाती है। राज्य को कोई भी पद्धति क्यों न हो उसका सूक्ष्म विवेचन करते २ अन्ततोगत्वा धर्म और नैतिकता का प्रश्न सामने आ जाता है और मनुष्य यह मानने के लिये विवश हो जाता है कि जो बात नैतिक वा धार्मिक दृष्टि से ठीक नही होती वह राजनीतिक दृष्टि से भी ठीक नही हो सकती। समाज के लोगों को एक दूसरे से पीडित होने का भय लगा रहता है। इस प्रकार के पीडन को निर्मूल वा नियन्त्रित करने की आवश्यकता होती है। राज्यों को व्यवस्थित करने का एक यह भी कारण होता है। समाज में भले और बुरे दोनों प्रकार के व्यक्ति होते हैं। भले व्यक्तियो का अपने आभ्यन्तर पर शासन होता है अत एव उनके लिए बाह्य शासन की विशेष आवश्यकता नही होती, परन्तु बुरे व्यक्तियों का अपने आभ्यन्तर पर शासन न होने से उनके लिए बाह्य शासन की बडी आवश्यकता होती है। यही शासन राज्य-शासन का रूप ग्रहण करता है। यदि राज्य शासन लोगो को अपने ऊपर शासन करने में समर्थ बना दे तो वह शासन सर्वोत्तम माना जाता है।

सुशासन का सूत्रपात घर में होता है। यदि घर सुव्यवस्थित एव सुशासित हों तो राज्य भी सुव्यवस्थित एव सुशासित होता है। यह दोनो एक दूसरे पर निर्भर रहते और एक दूसरे के सुधार तथा बिगाड में योग देने वाले होते हैं। यदि घरो में शान्ति होती है तो राज्यों में भी शान्ति रहती है। घरों में शान्ति किस प्रकार रह सकती है इसका चीन के एकप्राचीन ग्रन्थमें बड़ा विशद वर्णन आता है :—

"प्राचीन काल के लोगो ने अपने राज्य को सुव्यवस्थित करने की इच्छा से सर्व प्रथम अपने परिवारो की सुव्यवस्था की। अपने परिवारो को सुव्यवस्थित करने की इच्छा से उन्होने सर्व प्रथम अपने शरीर का विकास किया। अपने शरीर का विकास करने की इच्छा से उन्होने सर्व प्रथम अपने मस्तिष्क को ठीक किया अपने मस्तिष्क को ठीक करने की इच्छा से उन्होने सर्व प्रथम अपनी इच्छाओ को पवित्र बनाया। अपनी इच्छाओं को पवित्र बनाने की इच्छा से उन्होने सर्व प्रथम अपने ज्ञान को बढ़ाया। ज्ञान की वृद्धि वस्तुओं की ऊहा-पोह पर निर्भर हुई। वस्तुओ की ऊहा-पोह से ज्ञान परिपक्व हो जाने पर इच्छाए पवित्र हुई। इच्छाओं के पवित्र हो जाने पर मस्तिष्क ठीक हुए, जब मस्तिष्क ठीक हो गये तो शरीर विकसित हुए। शरीरके विकसित होजानेपर परिवार व्यवस्थित हो गए। परिवारो के व्यवस्थित हो जाने पर उनके राज्य व्यवस्थित हो गये। राज्यों के व्यवस्थित हो जाने पर परिवारो तथा राज्यों में शान्ति और समृद्धि व्याप्त हो गई।"

एक बार कन्फ्यूशस ने मुख्य प्रशासक और एक बार न्याय मन्त्री के रूप में कार्य किया। चु गटू के लोगों की प्रार्थना पर वहा के राजा द्वारा नगर के मुख्य प्रशासक नियुक्त हुए। १ वर्ष के भीतर २ समस्त प्रान्त में चु गटू का नगर प्रसिद्ध हो गया। चु गटू की प्रसिद्धि और समृद्धि का समाचार पाकर लू के राजकुमार ने महात्मा कन्फ्यूशस को अपने यहा बुलाया और चु गटू की समृद्धि का कारण पूछा। कन्फ्यूशस ने कारण बताते हुए कहा—'मैंने सत्पुरुषों को पुरस्कृत और दुष्टों को दण्डित किया। जब लोगो ने देखा कि भला बनना अच्छा और बुरा बनना बुरा है तो वे भले बन गए। सज्जन पुरुष राज्य के प्रति निष्ठावान होते हैं। मैंने सदाचारी और बुद्धिमान लोगो को चुनकर लोगों को शिक्षित करने और उन पर दृष्टि रखने

के काम पर लगाया। फल यह हुआ कि लोगो को सत्पुरुषों का सम्पर्क प्राप्त हो गया। जब लोग अच्छे वातावरण में रहते और उन्हें अच्छी संगति प्राप्त होती है तो वे भले बन जाते हैं।"

कन्फ्यूशस के इस कार्य से प्रसन्न होकर लू के राजकुमार ने उन्हें समस्त प्रान्त का न्याय मन्त्री बना दिया। कन्फ्यूशस ने कई महीने लगा कर कैदियो की दशा का विवरण प्राप्त किया। जब उन्हें पूर्ण जानकारी हो गई तो उन्होने जजों, वकीलो और जेलरो को एकत्र करके कहा—"मैंने जेलो के पूर्ण विवरण प्राप्त कर लिए हैं। मुझे ज्ञात हुआ है कि प्राय सब कैदी अज्ञानी और निर्धन हैं। निधनता एव अज्ञान के कारण ही लोग अपराध करते और कानून का उल्लंघन करते हैं। यदि हम शिक्षा के द्वारा लोगों को ज्ञानवान बना दे और उनके लिए ईमानदारी से रोटी कमाने की सुविधा उत्पन्न कर दे तो प्रान्त में अपराध होने बन्द हो जाए।"

एक जज ने पूछा—"इसका उपाय क्या है ?"

कन्फ्यूशस ने उत्तर दिया "सर्व प्रथम आप लोग अच्छे बने। लोगों को ऐसे शासकों की आवश्यकता होती है जिनका वे अनुगमन कर सकें। यदि शासक भ्रष्ट होगे तो प्रजा भी भ्रष्ट होगी।"

कन्फ्यूशस के २ वर्ष के शासन में लू प्रान्त की जेले खाली हो गई। जज, वकील और जेलर हाथ पर हाथ धर कर निठल्ले बैठ गये।

कन्फ्यूशस का शासन इतना अच्छा था कि दुष्टों को लज्जा के मारे मुह छिपाने को जगह न मिलती थी। प्रजा राज-भक्त बन गई थी। स्त्रियों ने अपने शील और सदाचार के लिए प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी।

राज्य की भावना सर्वोपरि

राज्य की शासन-पद्धति चाहे कोई क्यों न हो उसकी भावना मुख्य होती है। यह भावना प्रजा के हित की ओर प्रेरित रहनी चाहिए। जब शासन शासकों के हित के लिए होने लगता है तब वह प्रजा पर भार बन कर शीघ्र ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। आधुनिक युग में साम्राज्य वादियो मुख्यतया भारत में ब्रिटिश शासन की समाप्ति इस बात का ज्वलन्त उदाहरण हैं।

राजनियम

राजनियमो का अपना महत्त्व होता है परन्तु यदि शासक वर्ग स्वय ही उन नियमो की उपेक्षा वा उनका उल्लघन करने लग जाय तो उस राज्य का परमात्मा ही रक्षक होता है। प्रजा और शासक दोनों के द्वारा ही नियमों का यथोचित पालन होने से शासन अच्छा बनता है। परन्तु यदि राजनियमों के पीछे शासको का उत्तम व्यक्तित्व न हो तो राजनियम व्यर्थ सिद्ध हो जाते हैं। एक मात्र अच्छे राजनियमो के निर्धारण से शासन अच्छा नही बना करता। शासक का श्रेष्ठ होना राजनियमो की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली तत्त्व होता है। शासक का शासन प्रजा के शरीर पर ही नहीं अपितु हृदय पर भी होना चाहिये। परन्तु राजनियम बहुत कम होने चाहिए। राजनियम जितने अधिक होते हैं शासन उतना ही अधिक जटिल बन जाता है।

शासन के मुख्य तत्त्व

ससार तीन वस्तुओ से प्रशासित रहता है—बुद्धिमत्ता, दण्ड और प्रदर्शन। समझदार लोगो पर शासन करने के लिए बुद्धिमत्ता की, दुष्टो पर शासन करने के लिये दण्ड की और मध्यम वर्ग पर शासन करने के लिए प्रदर्शन की भी आवश्यकता होती है। इसी भाति तीन प्रकार की शासन-पद्धतिया होती हैं—एक तन्त्र, कुलीन वर्ग तन्त्र तथा प्रजातन्त्र। एक तन्त्र शासन अत्याचार से, कुलीन वर्ग तन्त्र महत्वाकांक्षा से और प्रजातन्त्र अराजकता से नष्ट हो जाता हैं। इन तीनों पद्धतियों में प्रजातन्त्र पद्धति सर्वश्रेष्ठ पद्धति होती है। इसकी गति तब ठीक रहती है जब प्रजा अपने अधिकार के

साथ २ कर्त्तव्य को भी समझती और राज्य के प्रति अपनत्व की भावना रखती है।

जीवन का दृष्टिकोण

जीवन के दो दृष्टिकोण होते हैं एक आत्मवादी और दूसरा भोगवादी। जीवन के लिए भोग आवश्यक है परन्तु यही एक मात्र जीवन की साधना नही हो सकती। इन्द्रियों से ऊपर आत्मा जैसी उच्च सत्ता है और आत्मा से भी ऊंची ईश्वर सत्ता जगत में ओत-प्रोत है। जीवन के आत्मवादी दृष्टिकोण की परिणति विश्वप्रेम में होती है। विश्व प्रेम का अभिप्राय है सब का सब के प्रति प्रेम। हमें न केवल अपने सगे सम्बन्धियों से ही अपितु विश्व के प्राणी मात्र से प्रेम करना चाहिए। केवल मनुष्यमात्र से ही नही अपितु प्रत्येक जीव-धारी से भी प्रेम करना चाहिये। विश्व प्रेम की इस भावना का उदय और विकास—आत्मा के और उसके स्वरूप को जानने पर ही सम्भव होता है।

सुकरात ने कहा 'तू अपने आपको जान।' वेद ने बतलाया कि आत्मा के स्वरूप को न जानने से पारस्परिक विद्वेष, कटुता और विविध पापो की सृष्टि होती है। आत्मा का स्वरूप ईश्वर भक्ति से जाना जाता है क्योकि इससे हमारे हृदयों में विश्व साम्राज्य के नियमों के प्रति आदर का भाव उत्पन्न होता है और हम अपने को एक महान विश्व का अङ्ग मानने लगते हैं।

जो सस्कृतिया आस्तिकता और आत्म-ज्ञान की सुदृढ़ नीव पर खडी होकर विकसित होती हैं वे चिरस्थायिनी रहतीं और विश्व के लिए कल्याण कारिणी होती हैं। समन्वय, एकता, प्रेम और शाति स्थिर रह सकती है। परमात्मा और आत्मिक गुणो में मनुष्य का जितना अधिक विश्वास होगा वह उतना ही अधिक शाति और सौहार्द का इच्छुक और उसके लिए यत्नशील होगा। जो मनुष्य शरीर की सजावट और इन्द्रियों की सन्तुष्टि में जितना अधिक ग्रस्त होगा उतना ही अधिक स्वय अशान्त और दुखी रहेगा और दूसरो को भी अशान्त एव दुखी बनायगा। अत जीवन का दृष्टिकोण आत्मा पर केन्द्रित और उसी के द्वारा प्रशासित होना चाहिए। इसी में सुख और शान्ति है। इसी के विकास में राजनीति वरदान सिद्ध होती है। जिन जातियों ने हिसा और भोग को जीवन का लक्ष्य समझा और मार-काट, लूट-पाट, अत्याचार अना-चार और भोग-विलास में रत रही आज उनका नाम भी सुनाई नही देता।

विश्व-प्रेम की भावना में बाधक बातें

विश्व-प्रेम की इस भावना के मार्ग में समानता स्वाधीनता, सहयोग, सह अस्तित्व, वर्ग शून्यता, शोषण आदि की भ्रान्त धारणाए बाधक बन रही हैं।

समानता का अर्थ यह नहीं है कि सब मनुष्यों की जीवन दशा उनकी क्षमताए और उनका कार्य एक जैसा होना चाहिए। यह न तो सम्भव है और न आवश्यक है। प्रकृति का यह नियम भी नहीं है। समानता का अर्थ यह है कि समस्त व्यक्तियों का जीवन सम्मान योग्य होना चाहिए। वे सब एक ही पिता की सन्तान है। सब समान भूमि पर रहते हैं अत सबको जीवित रहने, उन्नति करने और अपनी इच्छा और योग्यता के अनुसार कार्य करने का अवसर प्राप्त होना चाहिए। इसी शैली से समाज का काम चलता है। इस दृष्टि से न कोई बड़ा और न कोई छोटा होताहै। अवश्य कार्यकी दृष्टिसे उनकी सामाजिक उपयोगिता में भेद और असमानता रहती है और रहेगी। इसी श्रम-विभाजन पर आश्रित समाज के पुन सगठन से शान्ति स्थिर रह सकती है। राजनीति के पडितो की यह मान्यता ठीक है। इसी श्रम-विभाजन पर वैदिक वर्ण-व्यवस्था आश्रित थी।

पूर्ण स्वाधीनता का अभिप्राय है सबकी सबके लिए स्वाधीनता। लगभग सभी देशों के सविधानों में प्रजा के लिए आवास, व्यवसाय, उपासना आचरण

और प्रेस की स्वाधीनता की व्यवस्था पाई जाती है। परन्तु ये स्वतन्त्रताए पर्याप्त नही हैं। इन स्वतन्त्रताओ की परिधि में अपने देश के ही लोग आते हैं। स्व० रूजवेल्ट ने गत महा समर के समय ससार केलिए ४ प्रकार की स्वाधीनता की घोषणा की थी (१) भाषण स्वातन्त्र्य (२) पूजा-पाठ की स्वतन्त्रता (३) अभाव से निश्चिन्तता (४) भय से निश्चिन्तता। परन्तु ये स्वतन्त्रताए अनिश्चित और अपर्याप्त हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी देश में जाने रहने, भ्रमण करने, लोगों से मिलने जुलने और विवाह करने आदिकी स्वतत्रता होनी चाहिए। इसी भाति समस्त देशो को अपने राज-कार्य मे पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए परन्तु किसी भी व्यक्ति वा देश को स्वतन्त्रता का गलत अर्थ लगाने वा उसका दुरुपयोग करने की छूट न होनी चाहिए। स्वतन्त्रता की माग है कि हम वैयक्तिक वा समष्टि रूप से अन्यों की स्वतन्त्रता में बाधक न बने।

बहुत से व्यक्ति और अनेक देश स्वतन्त्रता का दुरुपयोग करते हैं। उनकी धारणा होती है कि वे अपनी शक्ति और प्रभाव के बल पर जो चाहें और जहा चाहे बुरा-भला सब कुछ कर सकते हैं। वे नियम, व्यवस्था, नैतिकता और शिष्टता सब ही बाह्य प्रतिबन्धों को तोडकर अपने को स्वतन्त्र कर लेते हैं परन्तु वे यह नही जानते कि वे स्वय अपनी इच्छाओं और वासनाओ के दास होते है। इससे उत्पन्न दुष्परिणामो और पर-पीडन की कथा बडी लम्बी होती है। यह दासता है, स्वतन्त्रता नही होती।

मानव जाति का जीवन व्यष्टिगत नहीं अपितु समष्टिगत होता है। अत मानव-जाति का मुख्यतम ध्येय सर्वहित-सम्पादन होना चाहिए। इस सहयोग का आधार स्वत प्रेरणा होनी चाहिए परन्तु दुर्भाग्य से विविध देश दूसरे देशों को विवश करके सहयोग प्राप्त करने का दुष्प्रयत्न करते हैं। जीवन के विकास-वाद द्वारा प्रतिपादित जीवन सघर्ष के सिद्धान्त ने केवल एक पक्ष पर दृष्टि रखी और वह भी शरीर-विज्ञान के एक काले स्थल पर। लोगों ने मनमानी करने और अन्यों के जीवन को चूसने और कुचलने में इस सिद्धान्त से बडा अनुचित लाभ उठाया। विकास वाद का निकृष्टतम स्वरूप निटशे की भयकरतम स्थापनाओं में परिणत हुआ जिसने स्वार्थी अहम्मन्य एव भोगवादी व्यक्ति के प्रादुर्भाव की कल्पना की। विकास वाद का सिद्धान्त क्या है? यह है मानव की दिव्यता, ईश्वर के अटल और पवित्र नियमों से अनभिज्ञता और उनकी घातक एव अशुद्ध व्याख्या।

आज मानव जाति का बडा दुर्भाग्य यह है कि कुछ व्यक्तियो के स्वार्थ, उनकी शक्ति, उनकी स्थिति, उनकी कीर्ति, उनकी परम्परा, उनके विचार उनका धर्म, उनके रीति-रिवाज और उनकी जीवन-शैली दूसरों की इन वस्तुओं से मेल नही खाती। वे व्यक्ति दूसरों की इन वस्तुओ को न केवल घृणा की दृष्टि से देखते अपितु अपनी वस्तुओं को दूसरों पर बलात् लादने का यत्न भी करते हैं। यह अन्याय है, ऐसा करने से उन्हें लाभ के बदले हानि होती है।

सार्वजनिक कार्यों के सचालन की सुविधा, कानून और व्यवस्था की सुरक्षा, लोक हित के सम्पादन आदि २ के लिए राज्यों की स्थापना होती है। परन्तु घातक राष्ट्रवाद ने लोगो को भौगोलिक सीमाओ में बन्द करके दूसरे देशों के लोगो को मनुष्य न समझना ही सिखा दिया है। नस्ल, रग, भाषा, धर्म सस्कृति वा अन्य किसी आधार पर स्थापित राज्यो के आचल तो मानवता के प्रति घोर अपराधोसे कलुषित हैं। इन बुराइयो के निराकरण के लिए लीगआवनेशन्स स्थापित हुई, द्वितीय महा समर के पश्चात् राष्ट्र मडल अस्तित्व में आया लीग आव् नेशन्स का अब नाम ही अवशिष्ट है और राष्ट्र मडल पारस्परिक झगड़ों का अखाडा बना हुआ है। जब तक विश्व की एक भाषा, एक धर्म, एक विचार, एक स्वार्थ, एक जीवन पद्धति नहीं बनती और चक्रवर्ती साम्राज्य का स्वप्न मूर्तरूप धारण नही करता तब तक विविध राष्ट्रों की पारस्परिक स्पर्धा और सघर्ष का अन्त सभव न हो सकेगा।

❁

(पृष्ठ ४२ का शेष)

इसने पूछा कि तुम्हे कैसे पता कि मैं तरकारिया बेचा करता था। इस्माइल ने उत्तर दिया कि मै आबिद हू, तुम मुझे नही पहचानते। तुम हमेशा मुझ से तरकारी खरीदा करते थे।

कुछ पत्रकार इस्माइल को आबिद के घर ले गये तो वह १७ वर्षीय गुलसीरन को देखते ही कह उठा कि मेरी प्यारी बेटी गुलसीरन। फिर वह दौड कर उस वृद्धा के पास पहुँचा जो खाना बना रही थी। उसके गाल को चूम कर वह बोला कि यह मेरी पहली पत्नी हतीस है। जब इससे पूछा गया कि इसने अपनी पहली पत्नी को तलाक देकर शाहिद से विवाह क्यो किया था तो इसने उत्तर दिया कि शाहिद बहुत सुन्दर थी और हतीस के सन्तान न होने की आशा न थी। आबिद मकान में ऐसे फिरता रहा जैसे यह इसका ही मकान हो।

इसके बाद वह पत्रकारो को उस अस्तबल मे ले गया जहा इसके ३ नौकरो ने इसकी हत्या कर दी थी। फिर वह सारे घर को आबिद की कब्र पर ले गया और बोला कि यहा मैं दफना हूँ। यह सब बाते सत्य निकली।

● ओ३म् ●

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

शेष-पत्र दिनांक २८-२-१९६२

दातव्य

स्थिर निधियां—	
वेद प्रचार	१००,०००-००
वेद देशान्तर प्रचार	५०,०००-००
रक्षा निधि	२५,०००-००
सार्वदेशिक भवन	२४,५००-००
ऋषिकेश भवन	१४,०००-००
चन्दो देवी भवन	८,०००-००
आर्य साहित्य प्रकाशन	१२,०००-००
हुतात्मा परिवार सहायता	१५,०००-००
चन्द्रभानु वे·मित्र स्मारक	५,०००-००
श्री भवानीलाल गब्बू-लालजी शर्मा अमरावती वेद प्रचार	५,३७५-००
श्री मूलचन्द बजरंगलाल वेद प्रचार आर्य साहित्य प्रकाशन	५,३००-००
श्री गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार ट्रस्ट	२,०००-००
श्री शिवलाल वेद प्रचार	६५०-००
श्री ठोढाराम चूनामणि वेद प्रचार	५०१-००

सम्पत्ति तथा प्राप्तव्य

भूमि व भवन			
दयानन्द भवन नई दिल्ली		४५८,४८८-४४	
श्रद्धानन्द बलिदान भवन दिल्ली		१०,५००-००	
सार्वदेशिक भवन दिल्ली		२४,५००-००	
ऋषिकेश भवन ऋषिकेश		१४,०००-००	
शोलापुर आर्य समाज मन्दिर		१४,६२२-६२	
चन्दोदेवी भवन नई दिल्ली		८,४३३-००	
श्रद्धानन्द नगरी आ० स० मन्दिर	३९१६-००		
श्रद्धानन्द नगरी पाठशाला भवन	२७४७-००	६,६६३-००	
गाजियाबाद भूमि	२७०४६-०३		
कृष्ण आर्य नगर गाजियाबाद	२९६७-४७	३०,०१३-५०	५८७,४४०-५१
इन्वेस्टमेंट			
हिस्से सार्वदेशिक प्रकाशन लि० दिल्ली— १३२० हिस्से १०) के			

श्रीमती डामा महतो सुन्दरदेवी वेदप्रचार		१००-००	२६७,४२६-००
विशेष निधियां—			
दलितोद्धार			
शेष १-३-६१ को	३४८७-५४		
ब्याज	९०-००		
	३५७७-५४		
न्यून व्यय	१६२-८८	३४१४-६६	
दयानन्द आश्रम			
शेष १-३-६१ को	२३३०-००		
ब्याज	७०-००		
	२४००-००		
न्यून व्यय	५-००	२३९५-००	
श्रद्धानन्द नगरी		९९९३-००	
ब्याज स्थिर निधि हुतात्मा परिवार सहायता			
शेष १-३-६१ को	११७९-४९		
ब्याज	४५०-००		
	१६२९-४९		
न्यून सहायता	८२६-६६	८०२-८३	
ब्याज गंगाप्रसाद गढ़वाल ट्रस्ट स्थिर निधि			
शेष १-३-६१ को	४७३-६६		

हिसाब से ७)५० प्रति हिस्सा भुगतान हुए	९९००-००		
३ हिस्से १०) के हिसाब स भुगतान हुए	३०-००	९,९३०-००	
हिस्से आर्य साहित्य मण्डल लि० अजमेर ३ हिस्से १०) के हिसाब से पूरे भुगतान हुए		३०-००	
पंजाब नेशनल बैंक फिक्सड डिपोजिट		४०,०००-००	४९,९६०-००
सुरक्षित ऋण (मकानों तथा भूमि पर)			१००,०००-००
फर्नीचर			
शेष १-३-६१ को		१४,१३०-१४	
इस वर्ष की वृद्धि		३४३-८१	
		१४,४७३-९५	
न्यून घिसाई		१,२००-००	१३,२७३-९५
स्थिर पुस्तकालय			
शेष १-३-६१ को		९६३८-२६	
इस वर्ष में वृद्धि		२४४-७०	९८८२-९६
पुस्तकों का स्टाक			७१६३४-१३
कार्यालय अध्यक्ष द्वारा स्टाक लिया तथा प्रमाणित।			

ब्याज	६०—००		
	५२३-६६		
न्यून व्यय	१-२०	५२२-४६	१३८०८-०८
पीड़ित सहायता निधियां			
बिहार			
शेष १-३-६१ को	३९४८७-७२		
ब्याज	११४०-००		
हरियाणा बाढ़ पीड़ित निधि से	१०००-००		
	४१६२७-७२		
न्यून सहायता बिहार	५००-००	४११२७-७२	
बंगाल पीड़ित		१००००-००	
हरियाणा बाढ़ पीड़ित			
शेष १-३-६१ की	४९२६-९०		
जनरल पीड़ित निधि को दिया गया गत वर्ष का	१०००-००		
	३९२६-९०		
न्यून सहायता	१०००-००	२९२६-९०	
पंजाब पीड़ित			
शेष १—३—६१ की	८२-७८		
न्यून सहायता	५७-००	२५-७८	

कागज का स्टाक (कार्यालय अध्यक्ष द्वारा स्टाक लिया तथा प्रमाणित)			[illegible]
डिपोजिट्स			
दिल्ली इलेक्ट्रीसिटी सप्लाई अन्डर टेकिंग		४६८७-४०	
दिल्ली नगर निगम		५५०-००	
दिल्ली टेलीफोन डिस्ट्रिक्ट मैनेजर		१००-००	५३३७-४०
प्राप्तव्य मकान किराया तथा ब्याज			
किराया रहन के मकानों से		६५०४०-००	
किराया सभा के मकानों से		२०८०-९६	
ब्याज रहन की जमीन से		२२५-००	
ब्याज बैंकों से		९३६-९६	६८२८२-९२
प्राप्तव्य			
प्रदेशीय सभाओं से—			
बंगाल	१००००-००		
सिन्ध	७९७५-००		
कर्नाटक	६२१३-७५		
उत्तर प्रदेश	१११२-४३		
पंजाब	११५१-९८		
अन्य	२२४-२३	२६७१५-३९	

बिहार पीड़ित सहायता	३०२–००	५४३८२–४०
दक्षिण भारत प्रचार निधियां		
केशवार्य हाई स्कूल		
हैदराबाद (दक्षिण)	२५,०००–००	
हैदराबाद स्टेट		
मन्दिर निर्माण	५,०५४–४१	
शोलापुर आर्यसमाज मन्दिर	१५,०००–००	
आर्यसमाज कार्कल मन्दिर	१,०२५–००	४६०७९–४१
विदेश प्रचार निधियां		
अमेरिका	४,५००–०६	
बिरला	१३,०००–००	
जनरल	१,९११–८८	
अवदाद फण्ड	१,२७२–००	
उपदेशक तैयारी	२००–००	२०८९३–८८
प्रकाशन निधियां		
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक		
शेष १९६१ को ५,८१०–८६		
ब्याज स्थिर निधि १५०–००	५,९६०–८६	
आर्य साहित्य प्रकाशन	४,२२६–७७	
श्री नारायण स्वामी पुस्तक	२,७१२–६६	
श्री भवानीलाल जी शर्मा अमरावती (सत्यार्थप्रकाश प्रकाशन)	५,०००–००	
कन्नड़ सत्यार्थप्रकाश आदि प्रकाशन	६,०४०–००	

केशव हाईस्कूल हैदराबाद दक्षिण	२५०००–००	
प० मदनमोहन विद्यासागर जी (आन्ध्र साहित्य)	८२१–००	
पजाब हिन्दी रक्षा समिति (अम्बाला)	१२५०–००	
कला प्रेस प्रयाग (अगाऊ)	१५००–००	
कार्यालय कर्मचारियों से	१८४४–१२	
अन्य से	११०२१–६१	६८२१०–१४
व्यय जो अभी तक खर्चे में नहीं डाले गये		
व्यय भ्रमियोग	२५५८–५१	
आर्य समाज इतिहास	१५२०–४४	४०७८–९५
देनदार (पुस्तकों के)		३०१४–३१
श्री स्टाफ (प्रोवीडेन्ट फंड पर)		२८१२–००
नकद तथा बैंकों में		
इलाहाबाद बैंक लि०		
चांदनी चौक दिल्ली चलत	२११४–३५	
पजाब नेशनल बैंक अजमेरी गेट चलत	११३६९–१२	
पजाब नेशनल बैंक अजमेरी गेट सेविंग (कर्मचारी प्रोवीडेन्ट फंड)	१७९३–१८	
नकद	४७१–०१	१५७४७–६६

श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय पुस्तक	६९१-१९	
दक्षिण अफ्रीका वेदप्रचार सीरिज	७६४-६४	
श्री स्वामी ब्रह्ममुनि पुस्तक	१००-००	
आर्य सिद्धान्त विरोधी खण्डनीं	२६०-१४	
आन्ध्र साहित्य	८२१-००	२६७८५-२६
सत्यार्थप्रकाश रक्षा निधि		२१४९६-८६
सिन्धी सत्यार्थप्रकाश रक्षा निधि		७०८६-१२
हिन्दी निधि		
शेष १-३-६१ को	२,०९ ७९३-०६	
ब्याज	६,०००-००	
	२,१५,७९३-०६	
कुल व्यय	२,९६३-७४	२१२८२९-३२
स्मारक हुतात्मा सुमेरसिंह		३०९-५०
अन्य निधियां		
दयानन्द पुरस्कार	४०,५००-००	
अनुसन्धान	१२,९३१-११	
गोरक्षा आन्दोलन	६,२७०-९२	
उपदेशक विद्यालय	१४००-८०	
आर्य नगर गाजियाबाद (सुरक्षित)		
शेष १ ३-६१ को	५३६६५-०७	
बचे प्लाट रजिस्ट्री द्वारा	२५१८-००	५६१८३-०७

आर्य नगर गाजियाबाद			
" (सुरक्षित होने वाले)		१२६१५-७५	
[illegible] प्रचार			
शेष १-३-६१ को	४५२३-३७		
जमा	१०१-००		
	४६२४-३७		
मूल व्यय	८१-१३	४५४३-२४	
[illegible]निधि		११२६२-२५	
[illegible] स्मारक		३००००-००	
स्वर्ण जयन्ती निधि		२१६८५-५७	
[illegible] निधियां		१८[illegible]-३४	२०२२२७-२५
स्टाफ प्रोविडेन्ट फण्ड			१४७९८-५४
धरोहरें			
आर्य समाज कराची		११७१३-३२	
आर्य समाज हैदराबाद (सिन्ध)		१३६-५०	
आर्य सभा मौरीशस		२१९९-८०	
आर्य सभा मौरीशस मरम्मत मन्दिर		८५२ ००	
[illegible] प्रचार निरोध संयुक्त समिति		६७४-८०	
[illegible] किराया मकानों का		२२९५०-००	
[illegible] किराया विज्ञापन(साईनबोर्ड)		७५०-००	
देय जमीन टैक्स दयानन्द भवन		५००-००	३९७७६-४२

लेनदार			
पुस्तकों के	१२७४९-४०		
अन्य	६४६०-०२	१९२०९-४२	
उचन्ती खाता		२५५८-८१	
आय व्यय खाता			
शेष १-३-६१ को	७०७८४-०२		
इस वर्ष की अधिक आय	८३-७५	७०८६७-७७	
योग		१०२०५३५-१२	योग १०२०५३५-१२

हमारी आज की पृथक् रिपोर्ट के अनुसार प्रमाणित
(ह०) नारायणदास कपूर
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट

नई दिल्ली
दिनाक १-५-६२

(ह०) स्वामी ध्रुवानन्द, प्रधान
रघुनाथ प्रसाद पाठक, कार्यालयाध्यक्ष
(ह०) रामसिंह एम०ए०, कोषाध्यक्ष
(ह०) प्रेमचन्द्र, एकाउन्टेन्ट
(ह०) कालीचरण आर्य, मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

आय-व्यय १-३-१९६१ से २८-२-६२ तक

आय

पंचमांश			
दशांश (सम्बद्ध प्रदेशीय सभाओं से)			३१५७-१४
प्रतिनिधि (सभा सदस्यता शुल्क			२५०-००
दान			
आर्य समाज स्थापना दिवस		४३१-६०	
वेद प्रचार		१४१०-७०	
शुद्धि प्रचार		१११२-१२	
ईसाई प्रचार निरोध —			
बिड़ला जी से	२४००-००		
अन्यों से	२८६०-३१	५२६०-३१	८२५०-०३
किराया मकान			
किराया दयानन्द भवन		५७३००-००	
किराया बलिदान भवन		४१७२-८८	
किराया सार्वदेशिक भवन		२०४०-००	
किराया शाहदरा मकान		६३-००	

व्यय

वेतन कर्मचारी कार्यालय १४३६७-१०			
दशांश लेखक पुस्तक भंडार, सार्वदेशिक पत्र व ईसाई प्रचार निरोध से	१६५०-००	१२४१-१०	
प्रोवीडन्ट फण्ड सभा का भाग		५६८ ७५	१३०१५-८५
अधिवेशन व्यय			१७६१-७७
मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य			८३६-७६
मार्ग व्यय विधान उप-समिति सदस्य			३५-४०
विद्यार्य सभा			
मार्ग व्यय अन्तरंग सदस्य		२६०-७२	
अन्य व्यय	२०२७-७२		
न्यून आय (परीक्षा शुल्क इत्यादि)	१६३५-३९	३९२-३३	६५३-०५
व्यय धर्मार्य सभा			१६-४०

किराया मदत्त (रहन के मकान से)	६१५६-००	६६७६१-८८	
ब्याज जमीन (रहन) तथा बैंकों में		१७६६-०६	
आय बीज आर्य नगर गाजियाबाद		७४-६०	
विविध आय			
विज्ञापन (साइन बोर्ड) दयानन्द भवन		७५०-००	
विज्ञापन (साइन बोर्ड) सार्वदेशिक भवन		२१०-००	९६०-००
पुस्तक भंडार			
इस वर्ष की बिक्री	९५२०-७०		
शेष स्टाक (२८-२-६२)	७१६३४-१३	८११५४-८३	
गत वर्ष का स्टाक	५९८५६-०६		
वर्ष में छपाई तथा खरीद	१९२२९-२६	७९०८५-३२	२०६९-५१
उड़ीसा बाढ़-पीड़ित सहायता		२००-००	
व्यय सहायता		२००-००	—

व्यय सभा के भवन		
दयानन्द भवन नई दिल्ली	९१२४-१२	
श्रद्धानन्द बलिदान भवन	७५८-५६	
सार्वदेशिक भवन दिल्ली	२११-१४	
अन्य भवनों पर	१६-९४	१०११०-[illegible]
व्यय आर्य वीर दल	४३५-२२	
न्यून आय	५७-००	३७८-२२
व्यय आर्य नगर गाजियाबाद		२९७-७३
सार्वदेशिक पत्र (मासिक)		
छपाई कागज आदि	५३५३-४०	
न्यून आय चन्दा ग्राहक	४०५३-१५	१३००-२५
व्यय न्याय सभा		२८६-१३
प्रचार व्यय		
ईसाई प्रचार निरोध	१९२६९-४५	
शुद्धि	२५-००	
साहित्य	५९४-६०	
वेद वेदान्तर	३३-४०	
चरित्र निर्माण	८७-५३	२०००९-[illegible]
अभियोग व्यय		
सभा के कार्यकर्त्ता का वेतन व मार्ग-व्यय	१८६१-२६	
अभियोग श्री श्रीराम पहाड़गंज	१४०२३-६३	

अभियोग मठगुलमी (सहायता)	१७५०—३२	
अभियोग चान्दादेवी भवन	१५६७—६७	
अन्य व्यय	२३—५०	११२२६—३८
व्यय स्थिर पुस्तकालय		१६४—२१
व्यय पुस्तक भंडार बिक्री (लेखक, विज्ञापन, डाक) इत्यादि		१७८७—८२
ब्याज		
विविध निधियो को	८२६०—००	
प्रोवीडन्ट फण्ड को	३०४ ८०	८५६४—८०
विविध व्यय		
कार्यालय	६२६६—०३	
पानी (दयानन्द भवन)	५८८—१२	
बिजली (दयानन्द भवन)	६७८—९२	७५३३—०६
बीमा भाग (दयानन्द भवन)		१०००—००
घिसाई फर्नीचर		१२००—००
		८८२३८—७७
अधिक आय इस वर्ष में—शेष-पत्र में आय-व्यय खाते में सम्मिलित		८३—७५

योग ८८३२२—५२   योग ८८३२२—५२

नई दिल्ली
दिनांक १-५-६२

हमारी आज की पृथक रिपोर्ट के अनुसार प्रमाणित
(ह०) नारायणदास कपूर
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट

(ह०) स्वामी ध्रुवानन्द
प्रधान

(ह०) रघुनाथ प्रसाद पाठक
कार्यालयाध्यक्ष

(ह०) रामसिंह एम ए
कोषाध्यक्ष

(ह०) प्रेमचन्द्र
एकाउन्टेन्ट

(ह०) कालीचरण आर्य
मन्त्री

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की
पुस्तकों का सूची-पत्र

निम्न प्रकाशन नेट मूल्य पर दिये जायेंगे।

१ ऋग्वेद संहिता सजिल्द १०)
२ अथर्ववेद संहिता सजिल्द ८)
३ यजुर्वेद संहिता सजिल्द ४)
४ सामवेद संहिता सजिल्द ३)
५ सत्यार्थ प्रकाश २।)
६ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका २॥)
७ संस्कार विधि १)
८ आर्याभिविनय ॥)
९ कन्नड सत्यार्थप्रकाश ३।)
१० मराठी सत्यार्थप्रकाश १।≈)
११ कर्तव्य दर्पण सजिल्द ॥≡)
१२ पंच महायज्ञ विधि भाष्यम् ५)

निम्न पुस्तकों पर निम्न प्रकार कमीशन दिया जायगा।

१०) से २५) तक १२½ प्रतिशत
२५) से ऊपर २५०) तक २०) प्रतिशत
२५०) से ऊपर १०००) तक २५ प्रतिशत
१०००) से ऊपर २०००) तक ३०) प्रतिशत
२०००) से ऊपर ३३⅓ प्रतिशत

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि कृत

१ यम पितृ परिचय २)
२ वैदिक ज्योतिष शास्त्र १॥)
३ वैदिक राष्ट्रीयता ।)
४ अभ्यास और वैराग्य १)६५
५ बाल संस्कृति सुधा)५०
६ वैदिक ईशवन्दना ।≈)॥
७ वैदिक योगामृत ॥≈)
८ दयानन्द दिग्दर्शन ॥)
९ वेदो में दो बडी वैज्ञानिक शक्तियां ।।)
१० निज जीवनवृत्त बनिका अजिल्द)५०
" " सजिल्द)७५
११ हत् विमान शास्त्र सजिल्द १०)
१२ छान्दोग्य उपनिषद् कथा ३)
१३ दार्शनिक अध्यात्म तत्व १॥)
१४ वेदान्त दर्शनम् (संस्कृत मे) ३)
१५ वैदिक वन्दन ५)

ओ३म् ध्वज

ओ३म् ध्वज के लिए आर्य जनता की माग की पूर्त्यर्थ सभा ने ओ३म् ध्वज का निर्माण का कार्य अपने हाथ में ले लिया है और उसने शुद्ध खादी के निम्न डिजाइनो के ओ३म् ध्वज निर्माण करा लिए हैं। उनको लागत मूल्य पर आर्य जनता को पहुचाने का सभा ने निश्चय किया है। अत आर्य जनता को उन्हें तत्काल मगा कर अपने समाज, मन्दिर और अन्य संस्थाओ पर लगाने चाहिए।

ओ३म् ध्वज २७ इच × ४०। इच मूल्य २)
ओ३म् ध्वज ३६ इच × ५४ इच मूल्य ३)
ओ३म् ध्वज ४५ इच × ६७। इच मूल्य ४)
मगाने की दशा मे १) अगाऊ भेज देवे।

आर्यसमाजो को अविलम्ब आर्डर भेज कर प्रतियां सुरक्षित करा लेनी चाहिए जिससे बाद मे उन्हे पुस्तके न मिलने की शिकायत का अवसर न रहे।

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट कृत

१६ कर्मव्यवस्था ४)
१७ मन मन्दिर १।
१८ दयानन्द दीक्षा शताब्दी का सन्देश ।-)
१९ चरित्र निर्माण १≈)॥
२० ईश्वर उपासना और चरित्र निर्माण ।≈)॥
२१ वैदिक विधान और चरित्र निर्माण ≈)॥
२२ दौलत की मार ।
२३ अनुशासन का विधान ।)
२४ धर्म और धन ।)
२५ सत्यार्थप्रकाश (उर्दू) मूल्य ३)५०
२६ उत्तराखण्ड के वन पर्वतो में
ऋषि दयानन्द अजिल्द)६२
" " सजिल्द)७५
२७ आर्यसमाज प्रवेश पत्र मूल्य १) सैकडा

श्री महात्मा नारायण स्वामी कृत

२८ योग रहस्य १।)
२९ मृत्यु और परलोक १)
३० विद्यार्थी जीवन रहस्य ॥≈)॥
३१ प्राणायाम विधि ≈

१२ उपनिषद

ईश ।-) केन ।।) कठ ।।) प्रश्न)

मुण्डक =) माण्डूक्य ।) एतरेय)

तैत्तिरीय)

बृहदारण्यकोपनिषद्

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत

१४ आर्योदय काव्यम् पूर्वार्द्ध १।)

५ उत्तरार्द्ध १।)

६ वैदिक संस्कृति १।)

मुक्ति से पुनरावृत्ति ।)

आर्यसमाज और सनातनधर्म)

६ आर्यसमाज की नीति)

श्री प० इन्द्रजी द्वारा लिखित

४० आर्यसमाज का इतिहास (प्रथम भाग) ६)

१ द्वितीय भाग) ५)

आर्यवीर दल बौद्धिक शिक्षण

श्री रघुनाथप्रसादजी पाठक कृत

आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ।)

कथा माला

६५ सन्तति निग्रह १।

५६ नया संसार)

७ आदर्श गुरु शिष्य ।

श्री प० धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड कृत

स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार १)

भक्ति कुसुमाञ्जलि ।)

५० हमारी राष्ट्र भाषा व लिपि ।)

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द कृत

१ आर्यसमाज के महाधन २)

५ वेद की इयत्ता १।)

श्री लाला ज्ञानचन्द कृत

धर्म और उसकी आवश्यकता)

४ वर्णव्यवस्था का वैदिक रूप १।।)

इजहार हकीकत (उर्दू में) ।-

५ मद्य निषेध १।)

विविध

५७ अरब में मेरे सात साल (प० रुचिरामजी) ।)

५८ विरजानन्द प्रकाश (श्री भीमसेन शास्त्री))

५६ वेद रहस्य

(म० महात्मा नारायण स्वामी) २५०

प० मदनमोहन विद्यासागर कृत

६० जन कल्याण का मूल मन्त्र ।।)

६१ संस्कार महत्व ।।)

६२ वेदों की अन्तः साक्षी का महत्व ।-

५ आर्य घोष परिवर्द्धित संस्करण) ६

६ आर्य स्तोत्र

अन्य विद्वानों कृत

६५ स्वराज्य दर्शन (स्वामी दयानन्द ...)

स्वराज्य दर्शन (प० लक्ष्मीदत्त दीक्षित) ।

६७ राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती)

८ भूमिका प्रकाश (संस्कृत में

द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री

एशिया का वेनिस (स्वामी सदानन्द)

७० दयानन्द सिद्धान्त भास्कर)

(श्री कृष्णचन्द्र विरमानी)

भजन भास्कर

(संग्रहकर्ता प० हरिशंकर शर्मा कविरत्न))

७ सनातन धर्म शुद्धिशास्त्र (गंगाप्रसाद शास्त्री) २,

आर्य डायरेक्टरी पुरानी ।

सार्वदेशिक सभा का २७ वर्षीय कार्य

विवरण अजिल्द

५ आर्य पर्व पद्धति (प० भवानीप्रसाद कृत))

७ श्रद्धानन्द चरित्र ७

प० शान्तेन्द्र (अतरौली) कृत

७७ गीता विमर्श)

ईसाई प्रचार निरोध साहित्य

७ ईसाई षड्यन्त्र

७६ ईसाई पादरी उत्तर दो दर ५) सैकड़ा

८० ईसाई पादरियों के कुचक्र से देश को बचाओ

दर ५) सैकड़ा

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार दयानन्द भवन, नई दिल्ली १

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली७में मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसादजी पाठक मुद्रक और प्रकाशक के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन रामलीला मैदान) नई दिल्ली १ से प्रकाशित

* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



स्व० श्रीयुत प० इन्द्र विद्यावाचस्पति जी

जिनकी पुण्य स्मृति दिवस मनाया गया

वार्षिक मूल्य ६) सृष्टि सम्वत दयानन्दाब्द विदेश से वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ८ १९७२९४९०६३ १३८ सितम्बर १९६२ (भाद्रपद २०१९) अंक ९

विषय-सूची

❀ सम्पादक
कालीचरण आर्य सभा मन्त्री

❀ सहायक सम्पादक
रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ प्रकाशक व मुद्रक
रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द भवन नई दिल्ली
फोन २२४७७१

❀ मुद्रक
सार्वदेशिक प्रेस दरियागंज दिल्ली।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का धर्मोपदेश

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं, त देवतानां परमञ्च दैवतम ।
पतिं पतीनां परमं पुरस्तात, विदाम देवं भुवनेशमीड्यम ॥

श्वेताश्वतरोपनिषद् अ० ६ म० ७

उपदेश

क्या वह पुरुष जिसे अपनी शक्तिया प्रयोग में लाने का मौका ही नहीं मिला या वह जो सचाई के मार्ग से भटका हुआ है जिसने अपनी शक्तियो को अनुचित रूप से प्रयुक्त किया है। क्या वह कभी भी सर्व शक्तियों के स्वामी को जान सकता है ? पहले इसके कि सर्व शक्तिमान की महत्ता को समझने का साहस कर सके मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह स्वय शक्ति की महत्ता को अनुभव करके उसका प्रयोग सीखे और उस पर आचरण करे कौन मनुष्य है जिसे ताक्त अन्धा नही कर देती।

"असनर कोउ उपज्यो जग नाही । प्रभुता पाय जाहि मद नाही ।" मननशील सच्चा मनुष्य वही है जिसने ताकत के रहस्य को समझा है। इन्द्रियो की दासता में फसे हुए, विषयो की मजबूत जजीरो के अन्दर जकडे हुए पशु भाव को प्राप्त हुए पुरुष अविद्या के गढ़े में गिरकर समझ लेते हैं कि विषयो को अन्धाधुन्ध भोगना ही ताकत का प्रकट करना है। जिन वीर पुरुषो ने अपने मन को हर प्रकार के मल विक्षेप और आवरण से पृथक् करके परमपिता के केवल चौथे जागृत पाद पर ही विचार किया है और इसकी विचित्र महिमा के लेश मात्र भी दर्शन किए हैं उनका अनुभव है कि आनन्द ताकत को नष्ट करने में नही है अपितु उसके सुरक्षित रखने के अन्दर ही सच्चा आनन्द है। परमात्मा क्यो आनन्द स्वरूप है ? इसलिए कि सासारिक कर्म बन्धन के अन्दर फसना उसके स्वभाव के विरुद्ध है। अत सामर्थ्य के अभिलाषियो के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि परमशक्तिमान परमात्मा के शक्तिस्वरूप को अनुभव करने का यत्न करें।

फिर उस परमात्मा के देवीय स्वरूप के दर्शन कौन कर सकता है ? जो स्वय प्रकाश से अलग रहता है, जिसने अपनी आयु अ धेरे में नष्ट की है, वह सब प्रकाशकों के प्रकाशक महादेव को कैसे जान सकता है ? प्रकाश स्वरूप तक पहुँचने के लिए सबसे पहले हृदय के भीतर प्रकाश को धारण करने की सामर्थ्य होनी चाहिए। परम रक्षक परमात्मा को किसने समझा है ? जिसने दीनों को दबाने में अपनी शक्ति को नष्ट किया है और अनाथों को लूटने में ही पुरुषार्थ को खर्च किया है वह रक्षा धर्म्म को क्या समझ सकता है ? जिसकी हमदर्दी का क्षेत्र विस्तृत नही हुआ ? जिसने मनुष्यों को ही केवल अपना भाई समझकर बे जुबान पशु पक्षियों की गर्दन पर बिना कारण छुरी चलाना अपना हक समझा हुआ है वह क्या समझ सकता है ? परमात्मा की उस शक्ति को जिसके द्वारा वह सारे ससार की रक्षा करते हैं किसने समझा है ? ससार में अनगिनत मनुष्य हैं जो मन द्वारा शक्ति के पृथक् २ पहलुओं पर विचार कर सकते हैं लेकिन उनके अन्दर एक मूर्ख नेक नियत इन्सान जितनी शक्ति भी नही है।

(शेष पृष्ठ ५० पर)

सम्पादकीय

श्रीयुत विनोबा जी

श्रीयुत विनोबा भावे ने कुरान शरीफ से छांट कर उसकी आयतों का एक संग्रह तय्यार किया है जिसका उद्देश्य इस्लाम की भावना का स्पष्टीकरण है। इस प्रस्तावित ग्रन्थ का नाम 'कुरान का तत्त्व' होगा और यह सितम्बर के दूसरे सप्ताह में प्रकाशित होने वाला है। कहा जाता है कि इस संग्रह को तय्यार करने में श्री विनोबा जी का जन-साधारण को इस्लाम के सन्देश से परिचित करना और इस्लाम की शिक्षाओं से अपरिचित जनता में उसके प्रति आदरभाव उत्पन्न करना है। पाकिस्तान के कुछ कठमुल्ला और कतिपय राजनैतिक आलोचक जिन्होने भारत के प्रति घृणा उत्पन्न करना अपना जीवनोद्देश्य बना रखा है कुरान का संग्रह तय्यार करने के कारण विनोबा जी पर बरस रहे हैं। वहां के कट्टर पन्थी मुस्लिम पत्रों ने भी विष उगलना आरम्भ कर दिया है जिसके कुछ नमूने नीचे उद्धृत किए जाते हैं —

"एक पत्र का शीर्षक है—चौदह सौ वर्षों में पहली बार कुरान पाक को अपमानित करने का दुस्साहस" पूर्वीपाकिस्तानमें दौरेके समय मुसलमानो को पथ भ्रष्ट करने की नई शरारत। सरकार इस शरारत को रोक दे।" एक दूसरे समाचार पत्र का शीर्षक है—"विनोबा भावे ने कुरानेकरीम का अपमान करके अक्षम्य अपराध किया है। इनको पाकिस्तान की पवित्र भूमि में कदम रखने की अनुमति न दी जाय।' तीसरे पत्र ने शीर्षक दिया—आचार्य विनोबा भावे ने कुरानपाक में परिवर्तन करके अक्षम्य भूल की है। पाकिस्तान और अरब देश भारत से विरोध प्रदर्शन करे।" एक पत्र के सम्पादकीय का शीर्षक है—'कुराने हकीम से गुस्ताखी' उसके शब्द देखने योग्य हैं —

"मुसलमानों के दिलों को प्रत्येक सम्भव ढंग से ठेस पहुँचाने के लिए देश के विभाजन से पूर्व और विभाजन के बाद इस्लाम का अपमान धर्मान्ध हिन्दुओं ने किस २ रंग में नही किया ? मस्जिदे कब शहीद नही की गई ? मस्जिदों से अस्तबल के काम कब नही लिए गए ? कुराने हकीमका अपमान जितनी अधिकता से हुआ है उसका तो कोई उदाहरण ही नहीं मिलता। मुहम्मद साहब के महान व्यक्तित्व पर कीचड उछाल कर रंगीला रसूल लिखकर तथा गुस्ताख बन कर जहन्नुम का अधिकारी ही नहीं बना था अपितु इस प्रकार का नापाक साहस धर्मान्ध हिन्दू न जाने कितनी बार कर चुके हैं और अब तो भारत की लादीनी सरकार ने उनको मानो इसका पूर्ण अधिकार दे दिया है कि वे मुसलमानों की भावनाओ से जिस सीमा तक चाहें खिलवाड करे। उनको कोई रोकने वाला नही परन्तु यह आशा न थी कि गांधी जी के सहयोगी होने का दावा करने वाले आचार्य विनोबा भावे तक ऐसे विषाक्त निकलेंगे कि वह उन धर्मान्ध सस्थाओं के कारनामो को भी ताक पर रख दे गे और जिनका धर्मान्धता के विष से दग्ध तीर उन सबसे अधिक घातक सिद्ध होगा जिसका साहस आजतक किसी ने भी नहीं किया।"

इन कट्टर पन्थियों की दृष्टि में विनोबा जी का अपराध दो प्रकार का है—एक तो वह भारतीय हैं और दूसरे वह 'मुसलमान' नहीं हैं। किसी की यह धारणा तो हो सकती है कि संग्रह ग्रन्थ के आशय को ठीक २ व्यक्त नहीं करता अथवा वह संग्रह विषय के तत्व को भलीभांति प्रस्तुत करने में अपर्याप्त है। परन्तु आनन्द यह है कि श्री विनोबाजी के आलोचकों ने ग्रन्थ को पढ़ा तक नहीं है।

आचार्य विनोबा भावे के विरुद्ध पाकिस्तान के

कुछ पत्रों में जो आन्दोलन हो रहा है उसका आन्तरिक उद्देश्य ट्रिब्यून के शब्दों में राजनैतिक है धार्मिक नहीं है। राजनैतिक उद्देश्य है भारत के प्रति घृणा फैलाना और दोनों देशों की मैत्री को रोकना। कराची के डान का जीवन भारत के प्रति घृणा उत्पन्न करने पर अवलम्बित है। वह ही इस आन्दोलन का अग्रणी है। वह विनोवा जी के दोनों देशोंके मध्य सौहार्द उत्पन्न करने वाले सिद्धान्तों को न तो समझ सकता है और न उनका आदर ही कर सकता है। उसे (डानको) भय है कि यदि पाकिस्तान के लोग विनोवा जी के साक्षात दर्शन करके उनका उपदेश सुन लेंगे तो उसने भारत का जो काल्पनिक चित्र बनाया हुआ है वह नष्ट होजायगा। पाकिस्तान सरकार ने आसाम की पद यात्रा समाप्त करके पश्चिमी बगाल जाते समय पूर्वी पाकिस्तान के कुछ भाग में से गुजरने की विनोवा जी को जो आज्ञा प्रदान की है उसको रद्द करने की माग के पीछे यही भय काम कर रहा है। विनोवा जी की निन्दा करने से उनकी हानि न होगी अवश्य उनका प्रवेश निषिद्ध कर देने से पाकिस्तान की जनता एक महान् व्यक्ति के सम्पर्क से लाभ उठाने से वंचित हो जायगी। विनोवा जी के सगृह से कुरान के महत्व को ठेस लगेगी यह अचिन्त्य है। धार्मिक तत्व सर्वत्र एक समान होते हैं। यदि विनोवा जी के सगृह से उनका पलडा भारी रहे तो इसमें तो मुसलमानों को गौरव अनुभव करना चाहिए। आज की भौतिक सभ्यता के दुष्प्रभावों को निर्मूल करने के लिए गहरी आध्यात्मिकता और मानव-प्रेम के प्रचार की आवश्यकता है जिसके अभाव में सर्वत्र मृत्यु और विनाश का ताण्डव नृत्य देखने को मिलेगा। विनोवा जी ने अपने को इसी श्रेष्ठ कार्य पर अर्पणकर रखा है। उनके इस कार्य में बाधा पहुँचाना नीचता एव मूर्खता की पराकाष्ठा ही कहा जा सकता है। इन पक्तियो को लिखते २ समाचार मिला है कि श्री विनोवा जी ने यह सगृह लेकर पाकिस्तान में गुजरने का विचार छोड़ दिया है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

—•—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी के शोकोद्गार

श्रीयुत बख्शी टेकचन्द जी के निधन का समाचार आर्य जगत में बडे दुःख केसाथ सुना जायगा।

बख्शी जी आर्यसमाज के एक बडे स्तम्भ थे। सरकारी उच्च पद पर रहते हुए भी उन्होंने आर्य समाज की बहुमूल्य सेवा की। वह बात कम महत्त्व पूर्ण न थी। आर्य समाज सम्बन्धी अभियोगों में अपना मूल्यवान परामर्श देने और आवश्यक होने पर उनकी स्वय पैरवी करने में भी अग्रसर रहते थे। वह आर्य प्रादेशिक सभा के निर्माताओ में से थे। मृत्यु के समय उनकी आयु ७९ वर्ष की थी।

आर्य समाज के स्तम्भ एक २ करके जा रहे हैं। यह नई पीढ़ी के लिए चुनौती है। उसे अपने को उनका स्थान लेने के दायित्व की पूर्ति की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवगत आत्मा को सद्गति और उनके परिवार को इस दुःख को सहन करने की क्षमता प्रदान करे।

मैं अपनी, सार्वदेशिक सभा और आर्य जगत की ओर से उनके परिजनों के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करता हूँ।

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

श्री पं० इन्द्र जी की स्मृति में

२३ अगस्त को श्री प० इन्द्र विद्यावाचस्पतिजी का स्मृति-दिवस मनाया गया। दिल्ली में आयोजित सार्वजनिक सभा की अध्यक्षता दिल्ली विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री चिन्तामणि देशमुख ने की। इस सभा में राजधानी के प्रमुख पत्रकार, शिक्षा-शास्त्री और राजनीतिक नेता बडी संख्या में उपस्थित थे।

श्री देश मुख ने अध्यक्ष के आसन से भाषण देते हुए कहा—"गुरुकुल कागडी के विश्वविद्यालय बन जाने से स्व० प० इन्द्र जी की आत्मा जहां कहीं भी होगी अवश्य शान्ति लाभ करेगी क्योंकि उनके जीवन का अन्तिम भाग इसी स्वप्न में, इसी प्रयत्न में व्यतीत हुआ था।"

श्री देशमुख ने पंडित जी के धीर, गम्भीर स्वभाव, सौजन्य और उनके साथ अपनी घनिष्ठ मित्रता की चर्चा करते हुए कहा "उनकी स्मृति को सुरक्षित रखने के लिये स्नातक मण्डल जो भी कार्य करेगा उसमें पूर्ण सहयोग देने को मैं सदैव उद्यत रहूंगा।"

हिन्दी के प्रसिद्ध पत्रकार श्री सत्यदेव विद्यालंकार ने उनकी स्मृति में ग्रन्थ तैयार करने और ससत्सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने गुरुकुल कागडी में पत्रकारिता विभाग खोलने का सुझाव दिया।

राजस्थान के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री जयनारायण व्यास ने कहा—"मुझे देश भक्ति की प्रेरणा स्व० पंडितजी के ओजस्वी लेखों से ही प्राप्त हुई थी।"

श्री जुगलकिशोर खन्ना ने कहा "दिल्ली के राष्ट्रीय जीवन में जितना महत्त्व पूर्ण स्थान पंडित जी का रहा है उतना और किसी का नहीं।"

काका कालेलकर ने पंडित जी की सिद्धान्त-वादिता और उदार दृष्टि की प्रशंसा की। डा० नगेन्द्र ने हिन्दी साहित्य के प्रति उनकी सेवाओं का उल्लेख किया।

ससत्सदस्य श्री ठा० यशपालसिंह ने पंडित जी को आदर्श पत्रकार बताते हुए कहा—"यदि उनकी विचार-धारा का व्यापक प्रसार हुआ होता तो देश की अनेक राजनीतिक और सामाजिक समस्याएं सुलझ जाती।"

ससत्सदस्य श्री जगदेवसिंह जी सिद्धान्ती ने कहा "पंडित जी की बुद्धि और हृदय की विशालता का ही परिणाम था कि वे विषम परिस्थिति में भी समन्वय का मार्ग खोज निकालते थे।"

वस्तुत पंडित जी को लोगों का हार्दिक आदर प्राप्त रहा। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चमके और खूब चमकें। उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करके उनके गुणों और विशेषताओं से अपने जीवन को अलकृत करने का हम यत्न कर सके तो वस्तुत हम सच्चे अर्थों में उनका स्मृति दिवस मनाने के अधिकारी होंगे।

डा० मार्कस्

अमेरिका की वेदिक सोसाइटी के अध्यक्ष श्री डा० मार्कस इन दिनों भारत में आये हुए हैं। उन्होंने अमेरिका के एक बालक को गुरुकुल कागडी में प्रविष्ट कराया है। विविध आर्यसमाजों की इच्छा है कि उन्हें अपने यहा आमन्त्रित कर उनके उपदेशों से लाभ उठाया जाय। वह इन दिनों गुरुकुल कागडी में हैं। गुरुकुल से ज्ञात करने पर विदित हुआ कि वह वैदिक धर्म के सम्बन्ध में अधिक अध्ययन करना चाहते हैं। वहा उनके नियमित अध्ययन की व्यवस्था कर दी गई है। उनका भारत भ्रमण का विचार नही है। वह युरोप और अमरीका में वैदिक धर्म के प्रचार के लिए तैयारी कर रहे हैं। यहा सम्प्रति ९-१० मास रहेंगे। आर्य समाजों को यह बात अकित कर लेनी चाहिये। हम हृदय से डा० मार्कस के मिशन की सफलता

की कामना करते हैं।

मेला प्रचार

जिला आर्य उपप्रतिनिधि सभा मेरठ ने आगामी गंगा के मेले पर गढ़ मुक्तेश्वर में नवम्बर ६२ में मेरठ कमिश्नरी का विराट् आर्य महासम्मेलन करने का आयोजन किया है। सम्मेलन को प्रत्येक प्रकार से सफल बनाने का उपक्रम आरम्भ हो गया है। सम्मेलन के संयोजक श्री डा० भगवद्दत्त जी तथा श्री श्यामलाल जी आर्य कार्यकर्त्ता प्रधान ने कमिश्नरी के आर्य नर नारियों से पूर्ण सहयोग की अपील की है। इस अवसर पर छोटे २ ट्रैक्टो के द्वारा भी प्रचार की ठोस योजना बननी चाहिये।

आर्य वीर दल

आर्य वीर दल गाजियाबाद की ओर से साधना मन्दिर में श्रावणी पर्व आर्य वीर दल मेरठ मण्डल के जिला संचालक आचार्य देवव्रत जी एम० ए० की अध्यक्षता में मनाया गया। श्री पुरुषोत्तम जी का प्रभावशाली भाषण हुआ और आर्य वीरो द्वारा शारीरिक प्रदर्शन तथा कोरस प्रस्तुत किये गये। स्कूलों की छात्राओं आदि को गुण्डों के अत्याचारों से संरक्षण प्रदान करने की दिशा में भी आर्य वीर दलों को सक्रिय होना चाहिए। उनकी यह सेवा बडी ठोस सेवा होगी जिसको राज्य और प्रजा दोनो का समर्थन प्राप्त होगा।

आचार्य विश्वेश्वर जी

गुरुकुल वृन्दावन के आचार्य श्रीयुत विश्वेश्वर जी के निधन से आर्य जगत् एक प्रतिभाशाली विद्वान से वंचित हो गया है।

श्री आचार्य जी बड़े विद्वान और सौम्य स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्होंने अपने को गुरुकुल वृन्दावन का सुयोग्य स्नातक सिद्ध किया और अपने कार्य एवं अपने ग्रन्थों से (जिन पर उन्हें राजकीय एवं अराजकीय अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए थे) गुरुकुल और आर्य समाज का नाम चमकाया।

परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति और उनके शोक सन्तप्त परिवार को इस दुःख को सहन करने की क्षमता प्रदान करें।

धार्मिक सोसाइटियों और सत्संगों के प्रति उदासीनता क्यों बढ़ रही है ?

विभिन्न क्षेत्रों से यह शिकायत आ रही हैं कि धार्मिक सोसाइटियों के अनुयायियो में उन सोसाइटियों के प्रति उदासीनता छा गई है। धार्मिक सोसाइटियों के सदस्यो की संख्या कम हो गई है वे बन्द होती जा रही हैं या वीरान देख पड़ती हैं।

इस अवस्था के कई कारण प्रकट किये जाते हैं। कहा जाता है कि भोगवाद का लोगों पर जादू चल गया है तथा लोग रोटी की परेशानियों में आज कल इतने अधिक व्यस्त हो गये हैं कि उन्हें धर्म-कर्म की चर्चा नहीं सुहाती है।

कुछ लोगों की धारणा है कि धर्म-संघों के उपदेश पुराने, लम्बे और अत्यन्त साधारण बातों से भरे होते हैं और श्रोता उन्हें सुनना पसन्द नहीं करते। ऐसे लोगों का मत है कि धर्म-संघों की कार्यवाही को अधिक से अधिक नवीन आकर्षक और संक्षिप्त बनाना चाहिये।

एक मत यह भी है कि संघो को परम्परागत धर्मों का स्थान न रहने दिया जाय वरन् वे जनोपकारक और सामाजिक कार्यों के केन्द्र बना दिये जायें। यह मत उन लोगों का है जो धर्म और समाज को पृथक् २ समझते हैं।

इस प्रकार विविध निदान और उन निदानो के अनुसार विविध उपाय किये जा रहे हैं, परन्तु समस्या का हल नही होता है। अवश्य समस्या के हल में कोई त्रुटि है।

आज धर्म के प्रति लोगों की रुचि बढ़ रही है। संसार के लोग भोगवाद से दुखी और अशान्त होकर धर्म की शीतल छाया में आश्रय के लिए आतुर देख पड़ते हैं। विनाश की ओर दौड़ती हुई

संस्कृति को रोकने के लिए धर्म एक मात्र प्रभावशाली उपाय समझा जा रहा है। प्रश्न होता है कि फिर धार्मिक सघो और सोसाइटियो के प्रति लोग उदासीन क्यों हैं ?

हमारी सम्मति में इसके कई कारण हैं। एक तो यह कि सच्चे धर्म से कोसों दूर हृदयों और दिमागो को अपील न करने वाले तथा अन्यान्य हानिकर प्रभावों के साथ अनिच्छुक जनता के सामने मजहब प्रस्तुत किये जा रहे हैं। दूसरा यह है कि सच्चे धर्म को ठीक २ रूपमें रखे जाने का पर्याप्त यत्न नही हो रहा है। जो थोडा-बहुत यत्न हो रहा है उनके प्रति उदासीनता का सबसे बडा कारण यह प्रतीत होता है कि इसके प्रचार का कार्य ऐसे बहुत थोडे से प्रचारकों के हाथ में हैं जो सुगन्धित गुलाब के फूल की तरह अपनी सुगन्धि का प्रसार करके बिना ढोल पीटे जनता को अपनी ओर खींच लेते हैं। यह प्रचार मुख्यतया उन लोगों के हाथ में देख पड रहा है जो अपने ऊचे पद से बहुत नीचे पर हैं जिनमें सजीवता की कमी है तथा जो अपनी वाक्पटुता बढ़िया वेष-भूषा तथा लच्छेदार बातों से अपनी सजीवता की कमी की पूर्ति के यत्न में लगे होते हैं।

एक तीसरा कारण यह है कि धर्म-मन्दिर कार्यालय बन गये हैं जिसके कारण उनकी पवित्रता और विशुद्ध धार्मिक वातावरण नष्ट हो गये है।

हमें देखना चाहिये कि आर्य समाज पर उपर्युक्त बाते कहा तक घटती हैं तथा त्रुटियों के सुधार मे वे कहा तक सहायक होती है।

श्री बख्शी टेकचन्द जी का निधन

१८ अगस्त को मध्यान्होत्तर १ बजकर १० मिनट पर १० जनवरी (अलुबुकर्क रोड) मार्ग नई दिल्ली में स्थित अपने निवास सथान पर जस्टिस बख्शी टेकचन्द जी का निधन हुआ। वह गत कई वर्ष से बीमार चले आते थे। मृत्यु के समय उनकी आयु ७६ वर्ष की थी।

सायकाल ५ बजे निगम बोध घाट पर उनका दाह सस्कार हुआ। उनकी अर्थी के साथ लोगों की बहुत बडी भीड थी जिसमें समाज के विभिन्न क्षेत्रो के अनेक प्रमुख व्यक्ति सम्मिलित थे। प्रधान मन्त्री प० नेहरू और भारत के मुख्य न्यायाधीश के प्रतिनिधि भी विद्यमान थे।

उनकी धर्म्म परायणा पत्नी श्रीमती लं लावती ने उनकी लम्बी बीमारी में बडी सतर्कता और तन्मयता से उनकी परिचर्या की। मृत्यु के समय उनकी समस्त पुत्रियां और परिवार के अन्य सदस्य जिनमें उनके दामाद कनल जे० जी० सिह भी थे, उपस्थित थे। उनकी सबसे बडी पुत्री अपने पति श्री वाई० के० पुरी के साथ मलाया मे है जहां वह भारत के हाई कमिश्नर हैं। बख्शी जी के कोई पुत्र न था।

बख्शी टेक चन्द जी का जन्म २६ ८ १८८३ को हुआ। उनके पिता बख्शी जेसीराम दृढ़ आर्य समाजी थे। उनकी शिक्षा डी० ए० वी० हाई स्कूल लाहौर में हुई और एम० ए० गवर्नमेन्ट कालेज लाहौर से किया। इसके बाद उन्होंने प जाब विश्वविद्यालय से एल० एल० बी० किया।

१९०६ में उन्होंने वकालत प्रारम्भ की और १९२७ तक लाहौर हाई कोर्ट के प्रमुखतम वकीलों में उनका स्थान रहा जबकि वह हाई कोर्ट के जज नियत कर दिए गये। २६ अगस्त १९४३ को वह रिटायर हुए और तबतक हाई कोर्ट के जज रहे। १९३४, १९३७ १९३९ और १९४२ में उन्होंने चीफ जस्टिस के रूप में भी कार्य किया।

१९४२ में ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने उन्हें 'नाइट' की उपाधि प्रदान की। ६० वर्ष की आयु में रिटायर होने के उपरान्त १९४४ में वह सुप्रीम कोर्ट के एडवोकेट बने।

प जाब की यूनिवर्सिटी ने जिसके वह १९२३ से फेलो और १९२० से इसकी सिन्डीकेट के सदस्य थे दिसम्बर १९४४ में उन्हें डाक्टर आफ ला, की

उपाधि से सम्मानित किया ।

पंजाब हाई कोर्ट में स्पृहणीय स्थान बना लेने पर १९२६ में वह प्रान्तीय धारा सभा के लिए चुन लिए गए जो उन दिनों लेजिस्लेटिव कौंसिल कहलाती थी। उन्होने लाहौर शहर के निर्वाचन क्षेत्र से नेशनलिस्ट पार्टी के टिकिट पर चुनाव लड़ा था जिसकी स्व० लाला लाजपतराय और मालवीयजी ने स्थापना की थी। उनका चुनाव वस्तुत उनके जीवन के एक अध्याय का प्रारम्भ था। इसके शीघ्र बाद ही वह हाई कोर्ट के जज नियुक्त कर दिए गए थे। इस चुनाव के लिए बख्शी जी के नाम का चयन ला० लाजपतराय ने किया था जिनका उनपर बड़ा प्रभाव था। लाला लाजपतराय जी के समर्थन और वकालत में प्राप्त लोक प्रियता के बल पर ही वह स्वतन्त्रता संग्राम के प्रसिद्ध महारथी और देश भक्त ला० दुलीचन्द बैरिस्टर को परास्त कर सके थे। श्री ला० दुली चन्द जी को प्रेरणा की गई थी कि यदि वह कांग्रेस के टिकिट पर खड़े न होकर स्वतन्त्र प्रत्याशी के रूप में खड़े होगे तो उनका विरोध न किया जायगा। परन्तु यह उन्होंने स्वीकार न किया और वह कांग्रेस के टिकट पर बख्शी जी के विरुद्ध खड़े हो गए थे।

पंजाब विभाजन के समय उन्होने पार्टीशन कमीशन के समक्ष गैर मुस्लिमो का केस प्रस्तुत करने में बड़ा प्रशसनीय कार्य किया था। उस समय उनकी कोठी (फेनरोड पर स्थित) ने एक कार्यालय का रूप ले लिया था।

बख्शी जी अपने पिता जी के पद चिन्हों पर चले जिनका भी डी० ए० बी० कालेज लाहौर की स्थापना एव निर्माण में बड़ा हाथ था और जो आर्य समाज के एक बड़े स्तम्भ थे। बख्शी टेक चन्द जी का स्थान अपने समय में आर्य समाज के प्रमुख व्यक्तियों और नेताओं में था और वह डी० ए० बी० आन्दोलन की आत्मा माने जाते थे। वर्षों तक वह डी० ए० बी० कालेज मैनेजिंग कमेटी के अध्यक्ष रहे जिसकी सेवा में उन्होंने कोई प्रयत्न उठा न रखा।

वह सरगगाराम ट्रस्ट के सस्थापकों में से थे और बाद मे वह इस ट्रस्ट के पंजाब मेडीकल एजुकेशन और रिलीफ सोसाइटी के प्रधान रहे। इसी ट्रस्ट ने बालकराम मेडीकल कालेज और गगाराम हस्पताल की स्थापना की।

सार्वजनिक हित से सम्बद्ध कदाचित ही कोई बड़ी योजना हो जिसके साथ किसी न किसी रूप में बख्शी जी का सम्पर्क न रहा हो। (ट्रिब्यून)

आकाशवाणी के अधिकारी ध्यान दें

अबोहर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति के आसन से सुप्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री श्री डा० अमरनाथ झा ने १९४१ में 'हिन्दी' के स्वरूप के विषय में जो विचार व्यक्त किये थे उनका महत्त्व आज भी विद्यमान है। हमारे आकाशवाणी के जो अधिकारी हिन्दी के सरलीकरण के नाम पर उसमें उर्दू के शब्दो की भरमार करने का दुष्प्रयत्न कर रहे हैं उन्हें उन विचारो को हृदयङ्गम करके अपने अहितकारी कार्यक्रम से पीछे हट जाना चाहिए। डा० झा० के विचार इस प्रकार हैं—

"हिन्दी का स्वरूप सब को ज्ञात था। हिन्दी कोई नई भाषा घड़ी नहीं जा रही थी। हिन्दी चन्द वरदाई के समय से स्वाभाविक उन्नति कर रही है, इसका रूप लेखकों द्वारा निर्धारित हो चुका है। रामचरित मानस में अनेक फारसी और अरबी के शब्द हैं। बिहारी की सतसई में बहुत से फारसी शब्दों का समावेश है। जो शब्द व्यवहार में स्वभावत आ जाते हैं उनके बहिष्कार का यत्न हिन्दी में नहीं हुआ।

हिन्दी का जन्म सस्कृत से है। जो कोई गम्भीर विषय पर हिन्दी में लिखेगा उसके लिए सस्कृत शब्दों का प्रयोग अनिवार्य है। जो नये वैज्ञानिक शब्द हिन्दी में निर्मित होगे वे सस्कृत से ही लिए

आ सकते हैं। यदि हम आग्रह करते हैं कि हिन्दी अहिन्दी प्रान्तों में समझी जाय और व्यवहृत हो तो केवल वही हिन्दी सर्व ग्राह्य होगी जो संस्कृत-मयी होगी और जिसमें उन प्रान्त वालों को कुछ परिचित शब्दों और अपनी संस्कृति की झलक मिलेगी। इस हिन्दी से भारतीय संस्कृति की परम्परा में व्याघात न पहुँचेगा और यह आशंका किसी को न होगी कि अपरिचित अभारतीय भाषा उन्हें सीखनी पड़ेगी।

जो हिन्दी और उर्दू दोनों को जानता है वह तो यह न मानेगा कि दोनों भाषाएं एक हैं।

उर्दू और हिन्दी एक नहीं हैं, दोनों के साहित्य के भिन्न २ आदर्श हैं। दोनों की विचार-धारा में कोई साम्य नहीं है। दोनों का वातावरण अलग है। केवल समान क्रिया पद के कारण तो दोनों को एक नहीं समझ सकते।"

—रघुनाथप्रसाद पाटक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी का समाजों को आह्वान

हिन्दी के साथ अंग्रेजी को सहभाषा बनाये रखने का विरोध

यह सुना गया गया है कि भारत सरकार द्वारा एक ऐसा विधेयक संसद में प्रस्तुत किया जाने वाला है जिससे संविधान में अंग्रेजी भाषा की जो स्थिति निर्धारित की गई है उसमें इस प्रकार परिवर्तन किया जा रहा है कि अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व भारत के प्रशासन में अनिश्चित काल तक बना रहे। इसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि भारत में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं का प्रवर्तन प्रशासनिक कार्यों में प्रतिरुद्ध हो जायगा। यह देश के हित की दृष्टि से अवाछनीय है। अत इस नीति का विरोध करना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है। शासन को चाहिये कि ऐसा कोई विधेयक प्रस्तुत न करे जिससे हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं की प्रगति में रुकावट हो और अंगरेजी भाषा का प्रयोग चालू रहे। यह संविधान के स्पष्ट आदेश तथा राज्य भाषा आयोग एवं राज्य भाषा संसदीय समिति के प्रतिवेदनों की सिफारिशों के भी प्रतिकूल होगा।

समस्त आर्य समाजें इस आशय का प्रस्ताव स्वीकार करके उसकी प्रतिलिपियां भारत सरकार, सार्वदेशिक सभा और समाचार पत्रों को भेजें।

आर्य समाजें अपने २ क्षेत्र में जनता को इस विषय में इस प्रकार जागृत करें कि उस २ क्षेत्र के प्रतिनिधि जो लोक सभा के सदस्य हैं वे ऐसे विधेयक के विरुद्ध अपने मत का प्रयोग करें।

स्वामी ध्रुवानन्द
महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान,
नई दिल्ली-१

धर्म का जीवन पर प्रभाव

(श्री कालीचरण आर्य)

पूर्व इस के कि विषय पर कुछ लिखू यह जानना आवश्यक प्रतीत होता है कि धर्म किस को कहते हैं —

जिससे वस्तु का अस्तित्व जाना जाय वह उस वस्तु का धर्म कहलाता है जिस प्रकार उष्णता और प्रकाश से जाना जाता है कि यह अग्नि है अत उष्णता और प्रकाश अग्नि के धर्म हैं यदि उष्णता या प्रकाश न रहे तो समझ लीजिये कि अग्नि नहीं है परन्तु यह बात केवल स्वाभाविक धर्म के साथ ही है स्वाभाविक धर्म अपने धर्मो से किसी अवस्था में भी दूर नहीं होसका यह स्वाभाविक धर्मकेवल जड जगत में या चेतन जगत में ही नहीं होता अपितु जड व चेतन दोनों जगन में होता है। चेतन जगत अपने स्वाभाविक धर्म से स्वाभाविक क्रिया करता है और जड जगत के स्वाभाविक धर्म को जान कर चेतन जगत उस से लाभ उठाता है।

इस स्वाभाविक धर्म (गुण) से चेतन जगत में मनुष्य को अधिक लाभ नही। पशु-पक्षियो को इस स्वाभाविक धर्म (गुण) से ही लाभ है। इस स्वाभाविक धर्म (गुण) को ही (Natural Instinct) कहा जाता है। मनुष्य में यह स्वाभाविक धर्म (गुण) केवल इतना होता है कि वह नैमित्तिक धर्म से अधिक लाभ उठा सके जो पशु नही कर सकता। परमपिता परमात्मा ने मनुष्य को बुद्धि का ऐसा साधन दिया जिस से वह अनेक स्वाभाविक धर्म (गुणों) को प्राप्त (धारण) कर सके। इस प्रकार स्पष्ट हुआ कि धर्म (गुण) दो प्रकार का है, एक स्वाभाविक दूसरा नैमित्तिक पशुओं के जीवन पर उनके स्वाभाविक धर्म (गुण) का ही प्रभाव होता है और बहुत कम नैमित्तिक का पशुओं में अन्त करण का मन्न भाग अधिक काम करता है। पशु योनि यत भोग योनि है और मन का भोग से सम्बन्ध है अत मन का स्वाभाविक धर्म (गुण) से ही सम्बन्ध है। मनुष्य बुद्धि प्रधान हैं अत उस का ज्ञान से अधिक सम्बन्ध है जिस को प्राप्त कर वह नैमित्तिक अनेक गुणों को धारण कर विचित्र विचित्र कार्य करता है यहा तक कि अभ्युदय और नि श्रेयस की प्राप्त कर महान आनन्द को भोगता है।

प्रकृति के तीन स्वाभाविक गुण (धर्म' है स त्, रज, तम, ससार का कोई पदार्थ इन तीनों गुणों से खाली नही यत मनुष्य भी भौतिक शरीरों के आधीन कार्य करता है। बिना भौतिक शरीरों के कार्य करता है। बिना भौतिक शरीरो के कार्य करना मनुष्य के लिये सम्भव नहीं अत' प्रकृति के इन सत्, रज, तम से मनुष्य भी पूर्णतया प्रभावित है।

कार्य से कारण जाना जाता है। हम देखते हैं कि ससार में मनुष्य और मनुष्यों में देवता ऋषि-मुनि, साधारण पुरुष, पापी-चाडाल, असुर और राक्षस भी होते हैं, दूसरे पशु-पक्षी, कीट-पतग और इन में भी उत्तम-मध्यम-निकृष्ट सब प्रकार के पाये जाते हैं। इसी प्रकार वृक्ष, लता आदि भी होती हैं तो प्रश्न होता है कि क्या यह तीनों का महान् अन्तर अकारण ही है, नहीं ऐसा कदापि नही हो सकता। मनुष्य जीवन पर धर्म का प्रभाव ही है जो इस अन्तर का साक्षी

हो सकता है, जिस मनुष्य ने वेदो का ज्ञान और कर्म का अनुष्ठान कर ऊचे से ऊचे ज्ञान को प्राप्त किया और उस ज्ञान से ससार का उपकार करने में कार्य कुशल बन कर स्वार्थ की तिलाञ्जली दी, यज्ञ करने और कराने में तत्पर रहकर अपने लक्ष की प्राप्ति की प्रकृति के सत्व गुण प्रधान से अपने को प्रभावित कर कडी से कडी आपत्ति आने पर लाखों और करोडों के प्रलोभनो पर लात मारी। क्षमा का देवता बन कर अपने विषदाता को भी क्षमा किया, अपनी इन्द्रियो पर पूर्ण विजय अधिकार) प्राप्त कर आदित्य ब्रह्मचारी रहकर ससार को जीवन दान दिया। सत्य और दया का पुजारी बन कर पवित्र जीवन की उज्ज्वल चादरपर कोई दाग नही लगने दिया। ऐसे जीवनो पर धर्म का प्रभाव वही हुआ जो ऋषियों ने वर्णन किया अर्थात् अभ्युदय और नि श्रेयस की प्राप्ति हुई। जिन मनुष्यों ने इन धर्म के नियमों में से जितनी जितनी कमी की उतने ही उन के जीवन धर्म से कम प्रभावित हुए और वह मोक्ष धाम न पहुँच कर ससार के मनुष्यों में ऊचे नीचे बनते रहे। जिन मनुष्यों ने प्रकृति के प्रधान धर्म को नहीं अपनाया अपनी अल्पज्ञता से प्रभावित हो ज्ञान शून्य कार्य किये वह पशु योनि को प्राप्त हुए। जिन मनुष्यों ने प्रकृति के तम गुण को अपने जीवन में प्रधानता दी और प्रमाद से वेद विरुद्ध कार्य किये वह सीधे वृक्ष योनियों के अधिकारी बन कर स्वेच्छा से नहीं परतन्त्रता से दूसरों के उपकारी बने।

ऊपर मैं ने कहा है कि कार्य से कारण जाना जाता है, अब आप समझ गए होगे कि आचारी, अनाचारी, अत्याचारी ससार में कहा से और क्यो बन जाता है —आचारी मनुष्य ज्ञान से विद्या पूर्वक बुद्धि पूर्वक क्रिया से ज्ञान और धर्म में स्वतन्त्रता को प्राप्त करते हैं —

पशु योनि को प्राप्त करने वाले अज्ञान से सृष्टि नियम को न जानते हुए बुद्धि हीन ज्ञान शून्य कर्मों के कारण भोग योनि को प्राप्त करते हैं।

वृक्षो में जाने वाले अत्याचारी प्रमाद से सृष्टि नियम के विरुद्ध कर्म और बुद्धि हीन ज्ञान से शून्य भोग्य बन कर ससार में आते हैं और ससार में सब से पहिले वही भेजे जाते है जिन्होंने धर्म की अवहेलना कर प्रमाद से काम लिया, पश्चात वह आते है जिन्होंने सृष्टि नियम न जान कर भूले की और सब के पश्चात वह आते हैं जिन्होने धर्म का पालन किया।

मनुष्य के ही धर्म, अधर्म रूपी ज्ञान और कर्म का ससार के निर्माण में और जीवनों पर प्रभाव है और जिस के कारण प्रभु को स्वाभाविक सृष्टि नियमो के अतिरिक्त भी आपत्ति कालिक नियमों का प्रयोग करना पडता है। जब मनुष्य धर्म से निताात विमुख होकर प्रमाद में फस कर तामसो वृत्तियो को जगा कर परोपकार के स्थान पर स्वार्थ ही स्वार्थ सामने रख कार्य करता है तब प्लेग महामारी भूचाल आदि अति वृष्टि, अनावृष्टि का प्रयोग होता है। इस लिये अपने जीवनो को धर्म की भावना मे सर्वदा प्रभावित रखना ही श्रेयस्कर हैं। धर्म की परिभाषा यही है कि अपने को सयम में रख कर परोपकार में लगाना धृति-क्षमा दमोस्तेयम　　　　यही मनु महाराज ने धर्म के लक्षण किये हैं।

विधान के अनुकूल चलना ही भक्ति है

[स्वा० गंगागिरि जी महाराज, रायकोट (लुधियाना)]

शास्त्र वेद के अनुकूल चलना ही भगवान् की भक्ति है। वेद ने भक्ति के चार साधन बताए हैं। प्रथम अहिंसा है। 'नकि देवा मिनीमसि"। दूसरा साधन है आपस का मिलाप। फूट का पैदा करना महापाप है। मनुष्य मात्र में प्रेम पैदा करना ही पुण्य है क्योंकि फूट से राग द्वेष की उत्पत्ति होती है। राग द्वेष बढ़ने से अपने और पराये का भेद पैदा होता है जो फूट का बीज है। इसी बात को वेद ने कहा है— "नकि रायोपयामसि" न तो हम किसी प्राणी की हिंसा करते हैं। न ही हम मिले हुए मनुष्यों में फूट डालते हैं। "मन्त्र श्रुत्य चरामसि" हमारा आचरण वेद के अनुकूल होना चाहिये।

यह बात कहनी तो सुगम है परन्तु इसका पालन कठिन है। कोई धीर पुरुष, पवित्र आत्मा, भगवान् का विश्वासी ही इसका पालन कर सकता है। परिवार में फूट पड़ जाय तो परिवार का नाश हो जाता है। नगर में फूट पड़ने से नगर का नाश होता है। देश में फूट पड़ने से देश का नाश हो जाता है। आज संसार में फूट के कारण ही शस्त्र अस्त्र की वृद्धि हो रही है। एक दूसरे को एक दूसरे पर विश्वास नहीं रहा है। अतएव संसार में क्लेश की वृद्धि हो रही है।

हम एक ही पिता के पुत्र हैं एक ही माता की गोद में बैठे हैं। यह समझ नहीं पड़ रहा, हम लड़ क्यों रहे हैं। एक ही परमात्मा हमारा पिता है जिसने हमें पैदा किया है जो हमारा पालन पोषण कर रहा है। माता अपने बालक के पाखाने और पेशाब को उतना काल ही गोद में लेती है, जितना काल बच्चा अबोध है। बोध वाला बालक माता की गोद को गन्दा करे, माता दो थप्पड़ मार कर गोद से फेंक देती है। मातृ भूमि की गोद मे कितनी बार पेशाब और पाखाना करते हैं। मगर कभी इस माता ने दण्ड दिया है, कहना पड़ेगा, नहीं।

यह खाने को अन्न देती है। शुद्ध जल पीने को देती है और अनेक प्रकार के फल खाने को देती है। अज्ञान का पर्दा हमारी आंखों के सामने पड़ा है। एक दूसरे के साथ लड़ रहे हैं। इसी बात को किसी सन्त ने लिखा है -

• पर्वत जितनी भूल पड़ी है भेद नहीं बिच राई रे।
बन्दोबस्त जब करता फिरता घर की सुध नहीं आई रे॥
गौ सूर जब उसने बनाया वह है बड़ी खुदाई रे।
धागे, सूते टूने काम न टुकड़ों की विधि बनाई रे॥
कौन पशुओं की पढ़े कलामा कौन तवीत मढाईरे।
साईं लोक लड़लग प्रभुके कही जय यमकी फाहीरे

इन शब्दो से प्रभु की एक रूपता का कथन किया है। तथा संसार की एकता के भाव को बताया है। कोई जाति गौ को इष्ट मान रही है दूसरी सूर को मान रही है। दोनों बे समझ आपस में लड़ रहे हैं। यह नहीं जानते दोनो का बनाने वाला एक है। उसको भूल कर संसारी लोग अशांति की ओर जा रहे हैं। परमात्मा का विश्वास ही संसार में एकता ला सकता है। और कोई साधन नहीं है। इसी को वेद मे स्पष्ट रूप से वर्णन किया है —"पक्षेभि रभि कक्षिभिरन्नभि सरभामहे"।

वेद बलपूर्वक मनुष्यों को उपदेश करता है। जैसे एक पिता अपने परिवार को कहता हो प्रिय पुत्रो ? मिल कर चलो। इसी में आपका भला है। छोटे बड़े के भेदभाव को भूल जाओ। फिर सारा संसार शांतिका धाम बन जायेगा। आप सबकी उन्नति होगी। यह मेरा है यह पराया है। यह भाव आपके मन में नहीं आना चाहिये। आपको परमात्मा की

कर्म क्यों ?

श्री उग्रसेन लेखी, कार्यकर्ता प्रधान,
आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान

गति इस ससार का स्वभाव है जड और चेतन सबके अन्दर गति का प्रवाह है कोई भी वस्तु चाहे वह जड हो या चेतन इस महान शक्ति के बिना नही है। इसी कारण वह सब गतिशील है। पृथ्वी हर समय सूर्य के इर्दगिर्द घूमती रहती है सूर्य अपने आपके इर्दगिर्द घूमता है। चन्द्रमा और सितारे सब घूमने में लगे हुए हैं। कही समुद्र ठहाटे मार रहा है और कही हवा के तूफान उठ रहे हैं। पशु पक्षी सब अपने अपने कार्यों में व्यस्त हैं जिधर भी दृष्टि डाले आपको ससार गतिमान नजर आवेगा, गति का ही दूसरा नाम है कर्म। दूसरे शब्दो मे आप कह सकते हैं कि ससार का एक ही धर्म और केवल एक ही धर्म है और वह है कर्म न समाप्त होने वाला कर्म। बिना थकावट पूरी शक्ति और पूरी लगन से दूसरो के हितके लिए किया गया कर्म। फिर मनुष्य बिना कर्म के कैसे रह सकता है ?

ईश्वरीय नियम है कि प्रत्येक अणु अपने जैसे दूसरे अणु से मिलने का यत्न करता है जैसे अग्नि सूर्य से, पानी पानी से, आकाश-आकाश से, आत्मा परमात्मा का अणु ही तो है—फिर वह अपने सखा से मिलने का यत्न क्यो न करे। आत्मा और परमात्मा दोनो अनादि हैं। सत्य हैं, अविनाशी हैं चेतन स्वरूप हैं दोनो का निकट सम्बन्ध है, परमात्मा ही से तो आत्मा को ज्ञान की प्राप्ति होती है दोनो ही एक दूसरे के मित्र और सखा हैं, दोनो ही प्रकृति नामी वृक्ष पर बैठे हुए हैं परन्तु आत्मा इस प्रकृति वृक्ष के फलो के खाने के चक्कर मे फस कर अपने मित्र और सखा से बिछुड गया है। ससारी माया ने उसे गुमराह कर दिया है वह सिर्फ अपने शरीर के पालन पोषण को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना बैठा है। यह सब होते हुए भी आत्मा की हमेशा यह भावना बनी रही है कि वह अपने प्यारे मित्र, सखा ईश्वर से मिले। इस मिलने के यत्न को आप विचार या भावना कह सकते हैं परन्तु यह गति के बिना हो नही सकता इसी गति का दूसरा नाम है कर्म।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।
यजु० ४०—२

अर्थ—इस ससार मे १०० वर्ष तक कार्य करते

भक्ति से दूर ले जा रहा है। सब मिल कर ससार कार्यों को करते चलो। राग और द्वेष को हृदय मगल से निकाल दो। मन को पवित्र करो इसी से आपका कल्याण होगा। अपने आचरण को वेद के अनुकूल बनाओ फिर सत्य और अहिंसा अनायास आपके जीवन मे आ जायेगी।

इन शुभ कर्मो को करता हुआ अमर पद को प्राप्त करेगा। इस विषय को महात्मा जन इस रूप में कथन करते हैं। सिक्खो से गुरू कहते हैं।

'कलम जले मसि वाणिया कागज भी जल जाय।
लिखनहारा जल मरै जिन लिख्या दूजा भाय।।"

वह कलम क्यो न जल गई। वह स्याही क्यो न समाप्त हो गई। वह कागज भी क्यो न जल गया और लिखने वाला भी क्यो न जलकर मर गया जिसने मैं और हू वह और है के भेदभाव का वर्णन किया है अथवा लिखा है। यही भावना मनुष्यो को प्रभु भक्ति से दूर लिये जा रही है। इसने ससारी लोगो में राग द्वेष का बीज बोया है। इसी भावना का वेद निषेध कर रहा है। एकता को जीवन मे लाना, एक दूसरे की सहायता करते हुए जीवन व्यतीत करना ही वेद ने विधान किया है। यह ही भगवान् के भजन और भक्ति का मूल है। आज कल तो आडम्बर बढ गये हैं लोक दिखावे के लिये। जिसका फल है प्रजा दु खकी ओर बढती जारही है।

हुए जीने की इच्छा करो, पूरी आयु पर्यन्त कर्म करते रहो, तथा ऐसे कर्म नर के लिए बंधन का कारण नहीं बनते।

इस मन्त्र में कर्म करने की आज्ञा ही नहीं बल्कि मनुष्य के लिये कर्म करना अनिवार्य है। मनुष्य कर्म बिना रह ही नहीं सकता। क्या आप ऐसे किसी मनुष्य की कल्पना कर सकते हैं जो बिना कर्म के रह सके, जो अपनी इच्छा से हृदय की धड़कन बन्दकर सकता हो, जो अपनी नस नाड़ी की चाल को रोक सकता हो ?

पिछले जीवन में किये गये कर्मों के आधार पर जो भोग मनुष्य को इस जन्म में प्राप्त हैं वह उससे छुटकारा नहीं पा सकता।

हे मनुष्य जब कर्म करना तेरे लिये अनिवार्य है तो क्यो नहीं अच्छे कर्म करता जो तुझे तेरे प्रभु से फिर से मिलादे।

जिस तरह बीज से वृक्ष और वृक्ष से अनेक बीज पैदा होते हैं इसी प्रकार कर्म से कर्म की उत्पत्ति होती है इसी का परिणाम आवागमन की कड़ी है। परन्तु आत्मा जो कर्म काम, क्रोध, मोह, लोभ और अहङ्कार आदि को छोड़कर दूसरों की भलाई के लिये करता है उस कर्म के फलस्वरूप आत्मा को बन्धन में डालने वाले दूसरे कर्म उत्पन्न नहीं होते। देखो ! एक किसान एक चावल के दाना को जिस पर छिलका भी होता है (जिसे हम धान या मूंजी कहते हैं) बोता है। कुछ दिन बाद चावल का पौधा उग आता है समय पाकर पक जाता है और सैकड़ो धान के दाने लग जाते हैं। यदि वही किसान चावल का एक ऐसा दाना जिसका छिलका उतार दिया गया हो, बोता है तो पूरे यत्न पर भी उससे पौधा पैदा नही हो सकता क्योंकि वह निर्भिय और आवरण रहित है उसके ऊपर पैदा करने वाली ताकत दाने छिलका जिसके अन्दर वह लिपटा हुआ था नही रहा। यह दृष्टान्त मनुष्य के कर्मों पर भी लागू होता है। जीवात्मा इस मनुष्य योनि में जो भी कर्म करता है उसमें काम, क्रोध, राग, क्लेश अहंकार आदि की भावना मिली होती है और यह कर्म बीज मूंजी के दाने की तरह आत्मा को कर्मों के बन्धन में जकड़ते रहते हैं और जीवात्मा को बार बार जन्म मरण के चक्कर में डालता रहता है। दूसरी तरफ चावल का वह दाना जो बिल्कुल साफ नगा व आवरण रहित होने के कारण जैसे नहीं उगता इसी तरह जीवात्मा अगर काम, क्रोध, राग द्वेष, लोभ, अहंकार आदि भावनाओं से रहित होकर कर्म करता है तो वह उसे बन्धन में नहीं डाल सकते बल्कि जीवात्मा मोक्ष पद को प्राप्त कर लेता है।

आम कहावत है जैसे विचार वैसे कर्म और जैसी बुद्धि वैसे विचार या यूं कहिये जैसी बुद्धि वैसे कर्म। बुद्धि ही कर्मों की मान सरोवर है इसी मानसरोवर से कर्म फूट फूट कर निकले हैं इसी लिये तो गायत्री मन्त्र में परमात्मा से बुद्धि की प्रार्थना की गई है जब बुद्धि अच्छी होगी मनुष्य कर्म भी अच्छे ही करेगा परन्तु अच्छी बुद्धि आयगी स्वाध्याय से। आर्य बन्धुओ ! अगर आप ईश्वर प्राप्ति चाहते हैं तो स्वाध्याय से अपनी बुद्धि का विकास करो ताकि बुरे कर्मों को छोड कर अच्छे कर्म कर सको, अच्छे कर्म जो दूसरों की भलाई के लिए किये गये,हो मुक्तिका साधन हैं। ईश्वर हमारी सहायता करे।

पाच चोर हैं भीतर तेरे,
काम, क्रोध, मोह, लोभ अह लुटेरे।
पाच पाच के साथी जान,
हाथ पाव जो इन्द्रिय मान।
पाच बडे शत्रु भाई,
शुभ करम ना देन मनभाई।
इनको त्याग खरा मन होई,
राखो इसको मस्तिष्क टेक ॥
जासे बुद्धि स्थिर होई,
मिटे कल्पना मन की कोई।

प्राणिजगत् और विकासवाद

[श्रीयुत उदयवीर शास्त्री, गाजियाबाद]

(२)

(गताङ्क से आगे)

रोम तथा चर्म —

शीत प्रदेशो मे प्राणी के रोम बढ जाना और उष्ण कटिबन्ध मे रोम का अभाव, विकास सिद्धान्त क अनुसार आकृति परिवर्त्तन प्रसग मे प्राणी की आवश्यकता पूर्ति का एक उपोद्बलक प्रमाण उपस्थित किया जाता है। पर हम देखते हैं कि यह कथन सर्वथा निराधार है किसी एक व्यवस्था का निश्चायक नही। न मालूम कितने युगो से मनुष्य उत्तरी ध्रुव और वर्तमान ग्रीनलैण्ड आदि के हिम प्रधान प्रदेशो में बसा हुआ है। उसकी आवश्यकता और अभ्यास अब तक भी उसके शरीर पर रीछ जैसे रोम उत्पन्न करने मे सर्वथा असमर्थ रहे हैं। वहा के मनुष्य के रोम ऐसे ही हैं, जैसे एक मरुभूमि के मनुष्य के। हिमालय की भेड के बाल जैसे लम्बे होते हैं, मरुप्रदेश तथा अन्य उष्ण कटिबन्ध की भेड के भी वैसे ही होते हैं।

किसी पशु के रोमो का बडा होना, उसका शीत से रक्षा का प्रबन्ध नही, यह उस प्राणी वर्ग की प्राकृतिक रचना का परिणाम है। हिम प्रदेश का निवासी मानव प्राणी शीत से अपनी रक्षा का प्रबन्ध अपनी बुद्धि के द्वारा सोचता व करता है। अफीका के अति उष्ण प्रदेशो मे रोम हीन गेंडा और दीर्घ रोमा रीछ दोनो रहते हैं। हम अपने ही प्रदेश में गाय और भेस आदि पशुओ को देखते हैं भेस का चर्म पतला चिकना और लघुरोमा होता है वही पर रहने वाली गाय का चर्म कठोर तथा रोम बहुल होता है। इससे यह निश्चित है, कि इन प्राणि-जातियो की रचना नैसर्गिक रूप में आदि काल से ही ऐसी हुई है। कोई असाधारण परिवर्त्तन शीत आतप तथा अन्य वातावरण से इनमे होता रहा हो, ऐसा नही हैं।

सींग—

विकासवाद के अनुसार कहा जाता है, कि रक्षा की भावना प्राणी मे सीग नख आदि के उद्भव प्रयोजक रही पर हमईं देखते है, हरिण चीतल महा नील गाय आदि अनेक प्रकार के जगली पशुओ में नर के सीग होते हैं, मादा के नही, जब कि विकास सिद्धान्त के अनुसार उनकी अपनी रक्षा की आवश्यकता सीगो की उत्पत्ति मे कारण है। क्या वह आवश्यकता नर मे ही होती है, मादा में नही ? फिर जिन पशुओ के सम्बन्ध म इतिहास के द्वारा हम जानते हैं कि सहस्रो सदियो से वे मनुष्य के सम्पक मे हैं प्रत्येक प्रकार की विपत्ति से मनुष्य उनकी रक्षा करता है, उन पशुओ को अपनी रक्षा, आहार या निवास आदि की कभी चिन्ता नही रहती, न आवश्यकता। उन गाय भेस बकरी आदि जानवरो के आज भी सीग उसी तरह है, जैसे अब से सहस्रो लाखो वर्ष पूर्व थे। आश्चर्य यह, कि इनमें नर और मादा दोनो के सीग होते हैं। इस प्रकार के अनेकानेक उदाहरण विकासवाद प्रतिपादित सिद्धान्तो के व्यतिक्रम को स्पष्ट करते हैं। फलत यह स्वीकार किया जाना चाहिये कि जो योनिया जिस प्रकार की हैं उनमे किसी तरह का परिवर्त्तन, आवश्यकता, तन्मूलक इच्छा, अभ्यास व वातावरण के कारण नही होता। अत्यन्त प्रतिकूल प्राकृतिक स्थितियो मे अनेक 'जातिया नष्ट भले ही हो जाये, पर उनमे किसी प्रकार का असाधारण परिवर्त्तन नही आता, जो

उनकी नैसर्गिक जाति को बदल डाले।

इस सब के अतिरिक्त हम देखते हैं, कि आवश्यकता, इच्छा या भावना का सम्बन्ध आत्मा व मन के साथ रहता है। जब हम आत्मा, मन और देह के पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट होता है, कि वह स्थिति अथवा वे सम्बन्ध आकृति के परिवर्त्तन में कोई सहायता नहीं पहुंचा सकते। यद्यपि एक दुर्बल किशोर अपने मनोबल आदि तथा शारीरिक अभ्यास व्यायाम आदि से अपने शरीर को सबल बना लेता है और हम वहा ऐसा व्यवहार करते हैं, कि आश्चर्य है—छः महीने में नरेन्द्र की तो शक्ल ही बदल गई। इस व्यवहार में हम नरेन्द्र के शारीरिक सुडौलपन सौन्दर्य एव पुष्टि आदि को—शक्ल बदल जाना कहते हैं। इसमें देह की दुर्बलता, ढीलापन तथा रूखापन आदि बदलते हैं, आकृति नही। इससे यह निश्चित है, कि लोक में ऐसा व्यवहार केवल औपचारिक होता है, इसको आकृति परिवर्त्तन के उदाहरण रूप में प्रस्तुत करना सर्वथा उपहासास्पद है।

प्राणी उद्भव विषयक विचार-भेद--

विकासवाद और प्राणि-जगत् के उद्भव विषयक भारतीय परम्परा मे माने गये सिद्धान्त का मूलभूत भेद आत्म सम्बन्धी मान्यता है, चेतना अथवा आत्म तत्त्व का उद्भव प्राकृत तत्त्वो से हो जाता है, इस आधिभौतिक विचार धारा का विवेचन भारतीय दर्शनशास्त्र तथा उपनिषद् आदि में विस्तार पूर्वक उपलब्ध होता है। इस विषय में साख्यशास्त्र का यह परम सिद्धान्त हैं, कि आत्म तत्त्व अथवा चेतना प्राकृत परिणाम नहीं है। उन आधारो पर यह निश्चय किया गया है, कि समस्त विश्व का नियन्त्रण व सचालन करने वाला एकचेतन तत्त्व है, सृष्टि-प्रक्रिया के प्रत्येक पहलू पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने के परिणाम स्वरूप उस सर्वनियन्ता चेतन तत्त्व की उपेक्षा किया जाना अशक्य है।

यह स्थिति मानने पर एक तर्क सन्मुख आता है, कि आज मानव पर्यन्त विविध प्राणि जगत् की विद्यमानता में एक कोश का प्राणी अमीबा भी उसी तरह पाया जाता है, जैसे आदि सृष्टि में, तब आदि सृष्टि में विकास सिद्धान्त सम्मत एक कोश युक्त प्राणी की उपस्थिति के समान अनेक कोश युक्त प्राणी नहीं था, इसमें क्या प्रमाण है? अभिप्राय यह है, कि जैसी आज सृष्टि की स्थिति है, और इसमें अमीबा से मानव तक सभी श्रेणी के प्राणी विद्यमान हैं, ऐसी ही सृष्टि आदिकाल में नहीं थी, इसमें कोई प्रमाण होना चाहिए। मानव ने अपनी प्रतिभा मूलक रचना द्वारा जो कुछ बनाया या बिगाडा है, उसकी तुलना ईश्वरीय रचना से करना, अथवा उसके आधार पर उसी के अनुरूप ऐश्वरी सृष्टि की कल्पना करना सगत नहीं होगा। अब भी माता के गर्भ में प्राणी देह की रचना ऐश्वरी-सृष्टि का अद्भुत चमत्कार है।

विज्ञान की असमर्थता--

आज इतना उन्नत भी विज्ञान - जो मानव प्रतिभा का महत्त्वपूर्ण चमत्कार है—एक साधारण वृक्ष के पत्तेका निर्माण नही कर सकता। मानव प्रतिभा का सम्पूर्ण चमत्कार भूत-भौतिक तत्त्व पर आधारित है पर यह भारी अचम्भे की बात है, कि मानव अपनी अतिसाधारण खिलौना जैसी रचना की चकाचौंध में समस्त भूत-भौतिक के पीछे बैठ उस महान् शिल्पी की ओर दृष्टिपात नहीं कर पाता, जिसकी साधारण रचना समस्त मानव रचना का एक मात्र आधार है। विज्ञान कहता है, कि सर्वप्रथम एक कोश का प्राणी हुआ, पर इस समस्या का समाधान विज्ञान आज भी नहीं कर पाया है, कि वह एक कोश का प्राणी भी कैसे हो गया? अमीबा नामक प्राणी का जो एक कोश का देह है, ठीक वही देह अनेकानेक सख्या में मिल कर अन्य अनेक कोशयुक्त प्राणी-देह की रचना करते हैं, ऐसा नियम विज्ञान के लिए भी सिद्ध

करना कठिन है, समस्त विभिन्न प्रकार के कोशो की रचना स्वतन्त्र रूप में होती रहती है, यह नेचर [स्वभाव अर्थात् उस अचिन्त्य शक्ति] का कार्य है। जैसे एक कोश के देह की पूर्ण रचना पर वहा चेतना के चिह्न प्रकट हो जाते हैं इसी प्रकार अनेक कोश युक्त देह की रचना पूर्ण होने पर होता है। नेचर के नियन्त्रण में जैसे एक कोश के देह की रचना होती है, वैसे ही अनेक कोश युक्त देहो की रचना भी हो रही होती है, उनके पूर्ण होने पर चेतना के चिन्ह वहा समान रूप से प्रकट हो जाते हैं।

देहों की स्वतन्त्र रचना--

इस विषय मे यह कहा जा सकता है, कि पहले एक कोश युक्त देह की रचना हुए बिना अनेक कोश युक्त देह की रचना सम्भव नही। इसलिये पहले एक कोश की रचना होना आवश्यक है। यह कथन ठीक है, पर सोचना चाहिये आदि सृष्टिमे नेचर द्वारा अनेकानेक कोशों की रचना हो रही होती है। एक कोश की रचना भी अति समस्या पूर्ण है। अमीबा नामक प्राणी के देह को अति लघु जान कर हमने उसे इकाई मान लिया है, उतनी रचना को हम 'एक कोश' कहते हैं, परन्तु देह की वह स्थिति रचना क्रम के अनेक जटिल स्तरो को पार कर यहा तक पहुची है। रचना के उस स्तर पर एक विशिष्ट देह पूरा हो जाता हैं, और वहा चेतना उभर आती है। इसी प्रकार अनेक कोश युक्त देहो की रचना भी चालू है, और अन्य कोई विशिष्ट देह जैसे ही रचना की दृष्टि से पूरा होता है, चेतना वहा उभर आती है। अमीबा के एक कोश के देह से इस अनेक कोश देह की रचना का कोई ऐसा सम्बन्ध नही है, जिससे इनका परस्पर कार्य कारण भाव स्थापित किया जा सके। विशिष्ट देहो की रचना अपनी नियत ईकाइयो अर्थात् अपने उपादान कारणो से स्वतन्त्र रूप में होती रहती हैं। प्राकृतिक नियमो व व्यवस्थाओ के अनुसार जैसे ही आत्मा के निवास योग्य देह रचा जाकर पूरा होता है—चाहे वह देह एक कोश का है अथवा अनेक कोशो का—वहा आत्म चेतन के बैठे होने के चिन्ह प्रकट हो जाते हैं।

ऐसी सब प्राणी सृष्टि अमैथुनी' कही जाती है, जो आदि सर्ग काल में सम्भव है। चालू सर्गकाल के नर-मादा के प्रत्यक्ष सम्पर्क से होने वाला प्रजनन मैथुनी सृष्टि है। एक कोश देह के प्राणी से भी जब आगे वंश चलता है, तो वह सजातीय प्रजनन के मैथुन मूलक प्राकृतिक नियमो के अनुसार चलता है, पर सब से पहले अमीबा का प्रादुर्भाव अमैथुनी सृष्टि है। ऐसे ही अनेक कोश युक्त देहो के प्राणियो की सर्वप्रथम सृष्टि अमथुनी होती है, उसके आगे सजातीय प्रजनन का नियम चालू होता है। प्राणी जनन के लिये चालू सर्गकाल मे जो कार्य नर-मादा के सम्पर्क से होता है, वह आदि सर्गकाल में प्राकृतिक नियमो व व्यवस्थाओ के अधीन होता है। इसी कारण यह रचना अमैथुनी कही जाती है।

विकासवाद और साजात्य प्रजनन--

पुराने से पुराने प्रागैतिहासिक काल से लगाकर आज तक जो ककाल और आकृतिया प्राप्त होती रही हैं, उनके आधार पर विकासवाद का वर्णन करने वाले विद्वान् यह मानते हैं, कि अनेक सहस्रों सदियो पूर्व जो प्राणी जिस रूप में थे, उनमें से भले ही कुछ जा तया नष्ट हो गई हो, पर जो उपलब्ध हैं, उसी रूप मे चली आ रही हैं। इससे प्राणियो मे साजात्य प्रजनन की एक व्यवस्था स्पष्ट होती है इतने लम्बे काल मे हम इस सर्वप्रमाण सिद्ध साजात्य प्रजनन में किसी प्रकार के व्यतिक्रम का कोई उदाहरण नही पाते। विकास का सिद्धान्त जब हमारे सन्मुख एक मात्र मूल से अनेकानेक विभिन्न प्राणी शाखाओ के उद्भव को प्रस्तुत करता है तो यह साजात्य प्रजनन सिद्धान्त के विपरीत जाता है। परस्पर साम्मुख्य में इन दोनों

ऐसे व्यक्तियों के कारण ही आर्य समाज बना और दृढ़ रहा

[आचार्य श्री नरदेव जी शास्त्री वेदतीर्थ, ज्वालापुर]

जालन्धर की आर्यसमाज बनरही थी। मेम्बरोने निश्चय किया सब कार्य स्वावलम्बन से किया जाय- फिर क्या था ? सदस्यगण लगे मिट्टी और गारा ढोने ईटे ढोने—१ मास में ही आर्यसमाज का मन्दिर ऊपर उठ गया--उन सदस्यो को कितना सन्तोष हुआ होगा ? इन मिट्टी गारा ढोने वालों में महात्मा पार्टी नेता, जालन्धर के प्रसिद्ध वकील महात्मा मुन्शीराम थे, कन्यामहाविद्यालय जालन्धर के सस्थापक स्वर्गीय लाला देवराज थे, स्व० भक्त राम बैरिस्टर आदि थे—

जालन्धर में

आर्यसमाज का नगर कीर्तन था, बडे जोर का नगर कीर्तन था। बीच बीच में ला० मुन्शीराम ला० देवराज आदि बोलते जाते थे। पर कोई स्टूल या कुरसी साथ लेजाना भूलगये। दिकत होने लगी—तब भक्तराम बैरिस्टर सामने आये और झुक गये और बोले मेरी पीठ पर चढकर बोलो। ऐसा ही किया गया। बैरिस्टर भक्तराम इस प्रकार वक्ताओ को एक मील तक बराबर अपनी पीठपर चढाकर बुलवाते रहे और इस कार्य में अपना गौरव अनुभव करते रहे—

हुशियारपूर में

एक बार हुशियारपूर के जिलेमे बडी प्लेग पडी। वहा एक साधारण हैसियत के व्यक्ति प० रलाराम नामक आर्य रहते थे। उन्होंने जिलेमें फिर फिर कर कोई ढाईसौ व्यक्तियों की प्लेग की गिल्टी को अपने मुह से चूसकर उनके प्राण बचाये। महात्मा हसराज इनको झुककर नमस्ते करते रहते थे और कहा करते थे कि ऐसे ही व्यक्तियो ने आर्य समाज की नीव को मजबूत किया—

लाहोर में

वच्छो वाली और अनारकली आर्यसमाजो के नगर कीर्तन बडे जोर से निकला करते थे। मैंने उस समय देखाकि महात्मा मुन्शीराम और महात्मा हसराज मण्डली बाधकर स्वय भजन गाते थे और सैकडों आर्यों की टोलिया भजन गाते गाते चलती थी। आजकल भजन मण्डलियां न हो तो नगर कीर्तन ही न निकले। आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्सग मे भी आर्यसदस्य ही मिलकर गाते थे—मानापमान का कोई प्रश्न ही नही था। आजकल साप्ताहिक सत्सगो और नगर कीर्तनों में

वादों की रक्षा होना कठिन प्रतीत होता है। यह विवेचन किया जा चुका है, कि कोई प्राणी अपनी इच्छा या आवश्यकताओ की पूर्त्ति के लिए लाखों वर्षों में किस प्रकार अपनी जाति या स्वाभाविक वश का व्यतिक्रम नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में या तो विकास सिद्धान्त को निराधार मानना होगा, या फिर साजात्य प्रजनन की व्यवस्था से मुख मोड़ना होगा। पर यह सम्भव नहीं है, क्योकि साजात्य प्रजनन की स्थिति को हम प्रत्यक्ष से अनुभव करते हैं। फलत इस दृष्टि से विकासवाद की दुर्बलता स्पष्ट हो जाती है।❀

(अपूर्ण)

\+ \+ \+

❀ लेखक के मुद्रयमाण ग्रन्थ 'साख्यसिद्धान्त' के एक अश के आधार पर। लेख का अवशिष्ट भाग अगले अ क में पढ़िये।

गाना भजन मण्डलियों का ही काम समझा जाता है —

आर्य मुसाफिर पण्डित लेखराम

एक उत्सव में पण्डित लेखरामजी का व्याख्यान था। व्याख्यान के पूर्व पण्डित जी के पेट में बड़ा दर्द उठा। इधर प० जी के भाषण सुनने के लिए वच्छोवाली समाज में जनता उमड पडी, लोगों ने पण्डित जी के पेट दर्द की बात जब सुनी तब निराश होकर लौटने लगे। पण्डित जी को इस बात का पता चला कि लोग निराश होकर लौट रहे हैं तो एकदम खडे हो गये, प्लेटफार्म पर पहुंचे और "भाइयो मैं आ गया हू—जरूर बोलू गा" कह कर भाषण प्रारम्भ किया और आश्चर्य और परमाश्चर्य कि बाये हाथ से पेट को दबा कर कोई ३॥ घण्टे तक धारा-प्रवाह बोलते रहे—और जब उनका व्याख्यान समाप्त हुआ तब उनका पेट दर्द भी बन्द हो गया।

स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती

बुखार में खाट पर पडे हुए हैं। लगभग १०४॥ डिग्री बुखार चढा हुआ और पादरी ज्वालासिंह आर्यसमाज के जलसे मे आधमके आर्यों मे खलबली पड गयी, अब क्या होगा, कौन उत्तर देगा। स्वामी दर्शनानन्द जी बिजली की तरह उठे और प्लेट फार्म पर जा खडे हुए और पादरी ज्वालासिंह को ललकारा। ३॥ घण्टे शास्त्रार्थ रहा। ऐसे शास्त्रार्थ भी किसी ने देखे होंगे।

एकबार

इसी प्रकार गाव में शास्त्रार्थ करने का अवसर आया—शायद सहारनपुर के एक गाव में। पुस्तके तो शहर समाज में थी, इतनी पुस्तकों को दस मील तक कौन ढोवे। स्वा० दर्शनानन्द उठे और जितना पुस्तके वे उठा सकते थे सिर पर सम्भाल सकते थे उठाई और गाव की ओर चल पडे। इस बात को देखकर आर्य लोग भी जुट गये और पुस्तके सिर पर ले लेकर ग्राम में पहुंचे—एक विचित्र उत्साह था। शास्त्रार्थ सुनने के लिए ग्राम में दश सहस्र लोग पहुचे—बडे जोर का शास्त्रार्थ रहा। जहा सस्कृत प्रमाणों की आवश्यकता पडती थी, वहा मैं खडा होकर प्रमाण पढ़ देता था।

मौत के बिस्तरे पर

स्वा० जी मौत के बिस्तरे पर पडे हुए थे—शायद हाथरस मे, पडे पडे ही ईसाई-मुसलमानों को चैलेंज देते रहे कि "मैं थोडे दिनो में चला जाऊ गा। जिसको किसी प्रकार की शका हो मुझसे पूछे" कैसी विचित्र धुन थी।

ऐसे ईश्वर विश्वासी

और भोगवादी कि पास एक पैसा नही और गुरुकुल (नि शुल्क) खोलते जाते थे। गुरुकुल पोठोहार (रावलपिण्डी), गुरुकुल झेलम (पजाब), गुरुकुल बिरालसी (उत्तर प्रदेश) गुरुकुल सिकन्दराबाद (उत्तर प्रदेश), गुरुकुल बदायू (उत्तर प्रदेश) गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर खोल ही तो डाले। पीछे सचालकों को बडे कष्ट उठाने पडे, त्याग तपस्या करनी पडी और इन गुरुकुलों द्वारा सहस्रों निर्धन आर्य बालकोंका कल्याण हुआ। इन गुरुकुलों ने आर्य समाज को बडे बडे अच्छे अच्छे विद्वान् पण्डित और उपदेशक, महोपदेशक दिए। उस समय तो (जब गुरुकुल स्थापित हुए थे) लोग स्वामी जी के भोगवाद और ईश्वर विश्वास की खिल्ली उडाते रहते थे।

पं० नन्दकिशोर देवशर्मा

स्व० प० नन्दकिशोर देवशर्मा महामहोपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा सयुक्त प्रान्त (अब उत्तरप्रदेश) को कौन भुला सकता है—वे अपने हाथ से ही अपना भोजन बनाया करते थे। महाविद्यालय के महोत्सव पर ईसाइयों के साथ शास्त्रार्थ रखा गया था। ईसाई पादरी श्री तिवारी जी जरा विलम्ब से पहुंचे पर तत्काल शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। प० जी भोजन बना रहे थे इसलिए किसी की हिम्मत न पडी कि उनसे कोई कहता कि भोजन बनाना छोड़

कर सभा में चले। इसलिए पादरी साहब के प्रश्नो का उत्तर देने के लिए रुडकी के प्रसिद्ध मास्टर हरिद्वारीसिह तथा महाविद्यालय के प्रसिद्ध कार्यकर्ता को खडा किया गया। मास्टर जी ईसाई साहित्य के पण्डित थे और वे योग्यतापूर्वक उत्तर देते जा रहे थे। परन्तु जनता उनके उत्तरो से सन्तुष्ट न हुई—वह तो चाहती थी कि पादरी तिवारी जी को (जो मुरादाबाद से आये थे) खूब रगड दिया जाय। किसी मु हफट आर्य ने जाकर प० नन्दकिशोर जी से कहा कि "क्या पूरी तल रहे हो उधर आर्यसमाज को नीचा देखना पड रहा है चलिए। पण्डित जी एकदम उठे और आटे से सने सनाए हाथो से ही सभा के मच पर जा पहुंचे और पादरी को ऐसा छकाया, ऐसा छकाया कि जनता मुग्ध हो गई। सभा मे जाते समय मुझसे कह गये कि "रसोई को देखते रहो" मैंने कहा यह जो पूरिया कढ़ाई में डाल रखी है ये जलने लगी तो क्या करू।" पण्डित जी मुस्कराकर बोले कि "तुम छूनाछूवाना नही, खाली देखते रहो मैं अभी आरहा हू" मेरा छुटकारा तब हुआ जब पण्डित जी पादरी तिवारी की खूब रगडी पट्टी कर आये। आते ही मुझ से पूछा कि "तुमने छूआ तो नही" जब मैंने कहा कि नही तब फिर स्वय पूरिया उतारने लगगये।

जिन्होंने पण्डित जी को आटे से सने सनाये हाथ मञ्चपर देखा तब उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा—

ऐसे ही

खुर्जा (बुलन्दशहर) में एक प्रतिभा सपन्न प्रसिद्ध दार्शनिक पण्डित स्वर्गीय प० चण्डी प्रसाद जी न्यायोपाध्याय के साथ शास्त्रार्थ में किया। वस्तुत आर्यसमाज की नींव ही ऐसे लोगों ने, महारथियों ने दृढ़ की।

ऐसे ही

स्व० पण्डित गणपति शर्मा

ने महाविद्यालय ज्वालापुर में रेवरेण्ड फ्रैंक के शास्त्रार्थ में और काश्मीर में पादरी जान मन को परास्त करने में अपनी अनुपम प्रतिभा का परिचय दिया—महाराज कश्मीर ने उन से पूछा कि क्या आप आर्यसमाजी हैं? पण्डित जी ने मुस्करा कर कहा कि "महाराज हम सब इस आर्यवर्त देश के निवासी ही आर्य हैं, आप भी आर्य है, मे भी आर्य हूं" महाराज बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि खेद है कि प० गणपति जैसे पण्डित पौराणिको में नही है। आज मेरे काश्मीर मे गणपति न होते तो मेरा काश्मीर शास्त्राथ मे जानम्न से हार दिखा जाता—

ऐसे ही शास्त्रार्थ महारथियों ने आर्यसमाज की नीव को दृढ़ किया।

स्वर्गीय पण्डित मुरारिलाल शर्मा

सिकन्दराबाद के स्वर्गीय शर्मा जी को कौन नहीं जानता। उनको भुला भी कौन सकता है सस्कृत-वस्कृत कम ही जानते थे पर पूर्वजन्म के सस्कारो के कारण प्रतिभा इतनी तीव्र थी कि अपने समय में, ईसाई, मुसलमान तथा पौराणिकों से सैकडो शास्त्रार्थ किये और जनता में आर्य समाज का प्रचार करना इनका ही काम था—इनकी एक बात हो तो मैं लिखू। इनकी छोटी मोटी चुटकुलों की बात पूरी पूरी लिखनी हो तो पूरे ५० पृष्ठ चाहिए—

संस्कृत विद्या के प्रचार में स्वर्गीय स्वामी शुद्ध बोधतीर्थ जी

स्व० आचार्य तथा कुलपति गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के कारण ही जालन्धर में मुन्शीराम जी के प्रयत्न से आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब में उपदेशक विद्यालय खुला, फिर यही विद्यालय गुजरानवाला में चला गया, फिर यहीं से ३३ नये ब्रह्मचारियों को लेकर महात्मा मुन्शीराम कागडी पहुंचे-आचार्य स्वा० शुद्धबोधतीर्थ जी ही कागडी के प्रथम आचार्य रहे। इनके ज्वालापुर महाविद्यालय चले आने के पश्चात् म० मुन्शीराम

कागडी के आचार्य बने। स्वामी शुद्धबोध तीर्थ जी नव्य और प्राचीन व्याकरण के सूर्य थे। आप के महाविद्यालम में पधारने से इनकी शिष्य मण्डली भी महाविद्यालय में आयमकी (१९०८ की बात) और पिछले ५२ वर्ष में महाविद्यालय ने आर्य जगत् में सस्कृत विद्या प्रचार करने तथा आर्य जगत् को विद्वान् आर्य पण्डित देने में जितना काम किया उसको आर्य जगत् जानता है। स्वामी शुद्धबोधतीर्थ जी को जगन्नाथ पुरी की शकराचार्य्य की गद्दी मिल रही थी पर आपने निषेध करदिया। ऐसे ही त्यागी, तपस्वी विद्वानों के कारण आज आर्य जगत् की प्रतिष्ठा है।

अब

आर्य जगत् में स्व० पडित पद्मसिंह जैसा हिन्दी जगत् का साहित्यकामहारथी कहा है। सस्कृत साहित्य का महारथी भी कहा मिलेगा ?

— o — o —

स्व० आगरा निवासी साहित्याचार्य वेदान्तवाग्मी, प्रतिभाशाली सस्कृत कवि भी कहा मिलेगा ? प० पद्मसिह शर्मा तथा प० भीमसेन जी स्व० शुद्धबोधतीर्थ के ही शिष्य रहे।

— o — o —

महाविद्यालय के इन पडितों ने आर्यसमाज को, व्याकरण, दर्शन, सस्कृत साहित्य के अच्छे अनेक तगडे पडित दिये हैं और सहस्त्रों निर्धन छात्रों का उपकार किया है। महाविद्यालय की ख्याति उसके दिए हुए विद्वानो के कारण अधिक है—वैसे महाविद्यालय के पास न कोई चिरस्थायी कोष है और न कोई विशेष साधनसामग्री।

स्वर्गीय स्वा० आनन्दप्रकाशतीर्थ

इन्होंने भी आर्य समाज के प्रचार प्रसारसचार के लिए जीवन भर लगादिया। स्वामी विरजानन्द के शिष्य थे महर्षि दयानन्द और अनेक विद्वान् अष्टाध्यायी महाभाष्य के पडित थे। उनमें प० बनवारी लाल जी के शिष्य थे स्व० आनन्द प्रकाश जिन्होंने ४० वर्ष तक अनथक महाविद्यालय की सेवा की—विद्याध्ययन के पश्चात् भरतपुर रियासत में एक मन्दिर के पुजारी बने और वर्षों पुजारी रहे फिर सत्यार्थप्रकाशादि ग्रन्थ पढ़कर पुजारी पद को त्याग दिया और आमरण महाविद्यालय की सेवा की–महाविद्यालय की सूखी रोटी-दाल पर। इस प्रकार लोग ही उत्पन्न होंगे तब आर्य समाज की गाडी फिर जोर से चल निकलेगी।

इस समय

आर्य जगत् के जीवित विद्वानो के विषय में कुछ नही लिखना चाहता—अवकाश मिलने पर विस्तारपूर्वक लिखू गा किसी समय। आज बैठे-बैठे इन स्वर्गीय आत्माओ की याद आई इसलिए उनके विषय में अति-सक्षेप से कुछ लिख डाला है—

नई पीढ़ी के विद्वानों में

वर्तमान विश्वविद्यालय के पचासो उपाधिधारी हैं पर पुरानी पीढी के से एक एक विषय के गाढ़ विद्वान् नहीं हैं। प्रकाण्ड पण्डित नहीं हैं, जो एक एक शास्त्र को हस्तामलक की तरह जानते हो। आर्यजगत् में ऐसे ही एक एक विषय के प्रकाण्ड पण्डितो की सख्या जिस प्रकार बढ़ती जायगी उस उस प्रकार आर्य जगत् का गौरव बढ़ता जायगा—ईश्वर इस कमी को पूरी करने में सहायक रहें—

कांगड़ी से

सैकडो स्नातक निकले।

वृन्दावन से भी सैकडों स्नातक निकले।

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर ने भी सैकडों स्नातक दिये।

छोटे मोटे गुरुकुल भी यत्न कर ही रहे हैं।

पर खेद से देखा जा रहा है कि इन सब का ध्यान सरकारी सेवा वृत्ति की ओर जा रहा है।

मैंने १९०२ में शास्त्री पास किया था १९६० में कलकत्ते का प्रथम वेद तीर्थ ऋग्वेद में हुआ था। मैं जब शास्त्री हुआ था। ६० वर्ष पूर्व तब भारतवर्ष भरमें केवल ३६ छात्र शास्त्री परीक्षा में बैठे थे। उनमें केवल १० छात्र उत्तीर्ण हुए थे। उन दस में भी केवल ४ छात्रों को (जिनमें मैं भी एक था) पंजाब की शास्त्रि परीक्षा का डिप्लोमा मिला था। इन साठ वर्षों में गुरुकुल कागडी के विद्यालङ्कारो, वृन्दावन के शिरोमणियो, महाविद्यालय के विद्याभास्करों और आयुर्वेद-भास्करों की कोई गिनती ही नहीं इतने हो गये हैं। ये सब के सब आर्य सिद्धान्तो के प्रचार में सब दिशाओं में फैलजाते तो आज आर्यसमाज कहीं का कही निकलजाता। इनसे आर्य समाज की शोभा तो है, ये विद्वान् तो हैं पर "भक्तिमान्" नही

इन स्नातको में से सेकडो स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करके भिन्न-भिन्न वर्तमान विश्वविद्यालयों की उपाधियो को प्राप्त कर चुके हैं—जैसे,—विश्वविद्यालयो के डाक्टर, एम, ए, बी ए, पजाब के शास्त्री, कलकत्ते के "तीर्थ" काशी के आचार्य, शास्त्री आदि। इनको अर्थकरी विद्या चाहिए थी अथवा वर्तमान समान की उपाधिए चाहिए थी—वे उधर ही लुडके जारहे हैं।यही चिन्ता का विषय है—

इधर यह हाल है और उधर आर्य समाज के प्लेटफार्मों से "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" की घोषणा इतनी जोर से होती जारही है पूछिए नहीं।

शङ्कराचार्य के मुट्ठीभर शिष्यों ने ससार को हिला डाला था और वैदिक धर्म की पुन स्स्थापना में और बौद्ध धर्म के उन्मूलन में इतना आश्चर्यजनक काम किया था।

बौद्धधर्म के सेकडों भिक्षुओं ने देश देशान्तरो में प्रचार प्रसार करने में इतनी आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की थी।

ईसामसीह के बारह शिष्यों ने विश्वभर में अपने धर्म प्रचारार्थ कितना समुद्योग किया था—ससार जानता है।

परन्तु

स्वामी दयानन्द को विद्वान् तपस्वी ऐसे शिष्य नही मिले। जो कुछ काम दिखलाई पड रहा है वह अकेले दयानन्द की त्याग-तपस्या का ही फल है—

उनके पीछे

आर्यसमाज के प्रसार–प्रचार–सचार का भार मध्यमश्रेणी के लोगों पर ही पडा और अपनी शक्तिनुसार गत ८० वर्ष में उन्होंने जितना हो सकता था उतना कार्य किया। और प्रसुप्त भारत को प्रबुद्ध किया परन्तु विश्वभर में अपने धर्म के प्रचारार्थ जितने और जैसे लगन् के सेकडो सहस्रों विद्वान्, साधु, महात्मा, प्रचारक, उपदेशक, महोपदेशको की आवश्यकता हुआ करती है वह आवश्यकता अधूरी की अधूरी पडी हुई है।

बस आज इतनाही, विशेष फिर कभी। प्रश्न यह है कि क्या कभी हमारा यह आर्य धर्म, वैदिक धर्म विश्वव्यापी ससार का धर्म बन सकेगा? सक्षेप से यही उत्तर है कि क्यो नही—तप के सामने असाध्य क्या है, सुदुष्कर क्या है। रोना तो यही है कि आर्यसमाज में उसी सुदुष्कर तपकी पूंजी समाप्त हो चली है—

एक अत्यन्त खोजपूर्ण विवेचन —

क्या यह ऐतिहासिक तथ्य है या राज-नैतिक गल्प ?

द्रविड़ स्थान*

श्रीयुत डी० वी० येनगाडी

जब तक राष्ट्रीयता की भावना को भली भांति हृदयङ्गम न कर लिया जायगा और अशुद्ध निष्कर्षों पर पहुंचाने वाले उपद्रव पूर्ण सिद्धान्तो को निर्दयता पूर्वक कुचल न दिया जायगा तबतक 'राष्ट्रीय एकता' जिसकी इन दिनों बडी चर्चा है, मृगमरीचिका बनी रहेगी। 'द्रविडवाद' का सिद्धान्त जो अभी हाल में पृथक् 'द्रविड स्थान' की माग में परिपक्व हुआ है इसी प्रकार का एक उपद्रव पूर्ण सिद्धान्त है।

द्रविड़ सिद्धांत का सूत्रधार

यह बडे महत्व की बात है कि प्राचीन तमिल साहित्य में 'द्रविड' शब्द का कही पर भी उल्लेख नहीं है। इसके लिए आप कका (सघ) कालों के 'मुदल' (प्रथम) इडइ (मध्य) या कडे (कडै) (अन्तिम) साहित्य का परिशीलन कर जांय आपको कहीं पर भी 'द्रविड' शब्द न मिलेगा।

द्रविड सिद्धान्त का सूत्रधार (भाषा के क्षेत्र में सर्वप्रथम) विशप काल्डवेल था। द्रविड भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण (१८५६) नामक अपने ग्रन्थ में इस विशप ने यह सिद्ध करने के लिए कि तथा कथित द्रविड लोग तूरानी वर्ग की भाषाओं को बोलते थे, दक्षिण भारत और चीन, जापान, हगरी, फिनलैण्ड, तुर्किस्तान और काकेशिया की भाषाओं में सादृश दिखलाने का यत्न किया है। यूरोपियनो ने ससार की भाषाओं के २ अन्य वर्ग निश्चित किये थे और वे थे (१) सेमेटिक और (२) इण्डो युरोपियन। उन्होंने सस्कृत को दूसरे वर्ग में स्थान दिया है। इस विशप ने यह भी सिद्ध करने की चेष्टा की है कि द्रविड भाषाओं के आकार-प्रकार का सस्कृत के साथ कोई सम्बन्ध नही है और इन भाषाओं का व्याकरण सम्बन्धी स्वरूप सेमेटिक वर्ग की तूरानी भाषाओ से मिलता जुलता है। उस स्वरूप में कही २ इन्डो युरोपियन भाषाओं के साथ समानता भी देख पडती है परन्तु इसका विकास भारतीय भूमि पर न होकर प्रागैतिहासिक भूतकाल में हुआ जब कि आर्य और तूरानी लोग अविभाजित जाति के रूप में एक साथ रहते थे।

विशप काल्ड वेल के मतानुसार "द्रविड भाषाओ का सस्कृत रहित भाग सस्कृत की तुलना में बहुत बडी मात्रा में विद्यमान था। द्रविड भाषाओं के सर्वनाम और अक उनकी क्रियाओं के रूप और वाक्य-विन्यास इत्यादि प्रत्येक वस्तु जिनमें भाषा में शक्ति और प्रवाह आता है मूलत सस्कृत से भिन्न थी। वास्तविक द्रविड शब्दों को जो दक्षिण की शब्दावलियो मे बहु-सख्या में पाये जाते हैं उनके वैयाकरणों ने सस्कृत के अपभ्रष्ट शब्दो मे पृथक् स्थान दिया है और उन वैयाकरणो ने उन शब्दों को 'जातीय' एव 'पवित्र' शब्दों की सज्ञा प्रदान की है।"

"सामान्यत प्राचीन द्रविड क्रियाओं और सस्कृत अप भ्रशो में पहचान करने में कठिनाई नहीं होती।" कति-

* अंग्रेजी साप्ताहिक आर्गेनाइजर (गणतन्त्र दिवस १९६२ विशेषांक) के सौजन्य से।

पथ द्रविड भाषाए जो सस्कृत के अपभ्रशो का प्रयोग करती हैं उन अपभ्रशों के बिना भी कार्य चलाने में समर्थ हैं क्योकि वे अपभ्रश आवश्यकता की अपेक्षा सजावट की वस्तुए मानी हैं और तमिल भाषा जो सर्वाधिक विकसित भाषा है आवश्यक होने पर सस्कृत का सर्वथा परित्याग करके उसकी सहायता के बिना स्वत फल फूल सकती है।

डा० किटेल (D Kittel) डा० एच० गनडर्ट (D H Gundart) तथा अन्यान्य अधिकाश युरोपियन विद्वानों ने बाद में इन मान्यताओं को अविकल रूप में स्वीकार कर लिया और उन्होंने सत्य की खोज करने की चेष्टा न की।

बाद की खोज के आधार पर यह माना गया —

(१) तूरानी शब्द जो यूनानी लेखको द्वारा प्रदान किये गये थे वे स्पष्टत ईरानी शब्द थे और इन्डो युरोपियन वर्ग से सम्बद्ध थे।

(२) तथाकथित सीथियन (तूरानी) भाषाए किसी भी साधन के द्वारा एक भाषायी वर्ग के साथ ग्रथित नहीं की जा सकती और द्रविड भाषाओ को भारत से बाहर के अन्य भाषायी वर्गों के साथ सयुक्त करने का प्रयत्न साधारणत अब व्यर्थ माना जाता है।

(भारत का भाषायी परिवेक्षण लिंग्विस्टिक सर्वे आव इण्डिया कालम ४)

बिशप की स्थापनाओं में से "द्रविड बोलियों के सम्बन्ध में कुछ चीजे बहुत जल्दी में स्वीकृत मान ली गई हैं।" दक्षिण भारत की भाषाओ और आय वर्ग की भाषाओं के मध्य बहुत गम्भीर और स्वाभाविक तारतम्य विद्यमान है। 'द्रविड' और 'आर्य' वर्ग की बोलचाल की भाषाओं मे उतना बडा अन्तर नहीं हैं जितना सेमेटिक (उदाहरणार्थ) और सस्कृत भाषाओं में है। इसके फल स्वरूप द्रविड बोलियों का स्थान तूरानी भाषाओं की अपेक्षा आर्य वर्ग की बोलियो के अधिक निकट है। यह सिद्धान्त अब भी समर्थन के योग्य है। त्यागमय जीवन से सम्बद्ध आचार-विचार उपकरणो और स्थानों के नामों में सादृश बडा आश्चर्यजनक है और यह सिद्ध करना सभव है कि द्रविड भाषाओं के प्रत्यय आर्य वर्ग की भाषाओं के समान है (डा० जी० यू० पोप) द्रविडवाद के सिद्धान्त के पुरस्कर्त्ता और बाद में इसका समर्थन करने वाले लोग वैदिक वाङमय और उससे उद्भूतप्राकृत भाषासे पर्याप्त रूप में परिचित न थे। द्रविड भाषा में व्याकरण सम्बन्धी प्राय समस्त रूप प्रत्ययों के तत्वों से बने हैं जो इण्डो एर्यन वग से ग्रहण किये गये हैं। द्रविड भाषाओं के शब्द भण्डार के मौलिक अ शो में अनार्य तत्व अब भी अधिक नही हैं। द्रविड भाषाओ के व्याकरण विषयक तत्वों का स्रोत आर्य भाषा है। सस्कृत के जिन शब्दों का रूप प्राकृत भाषा मे पूर्व से ही विकृत था उन शब्दों का रूप द्रविड भाषाओ में और भी विकृत हो गया जिसके फल स्वरूप उनमें से बहुत से पहचाने भी नहीं जाते, यहा तक कि प्राकृत भाषाओं में प्रचलित ध्वनि के नियमों के ज्ञान बिना उनके सस्कृत के 'तद्भव' शब्दों का निश्चय करना भी असम्भव है। वस्तुत इन कल्पित द्रविड शब्दों में से बहुत से शब्द और क्रिया पद जिन्हें तमिल के विद्वान् विशुद्ध तमिल मानते हैं सस्कृत के नितान्त विकृत तद्भव सिद्ध किये जा सकते हैं, निश्चय वाचक और प्रश्न वाचक सर्वनामों का मूल स्रोत आर्य वर्ग है। द्रविड भाषाओ में प्रयुक्त होने वाले अधिकाश उपसर्ग और क्रिया के काल आर्य वर्ग से लिए गये हैं। द्रविड भाषाओ के शब्द भण्डार में अनार्य तत्व बहुत अधिक नहीं हैं। द्रविड भाषाओं के अधिकाश व्याकरण सम्बन्धी रूप द्रविड पदों के साथ जो मूलत इण्डो एर्यन वर्ग से सम्बद्ध हैं आर्य शब्द जोड़ देने से बन जाते हैं।

(द्रवीडियन थियोरीज अध्या० १)

द्रविडवाद जिसका प्रवेश भाषायी विवाद के पिछले द्वार से भारत में हुआ था धीरे २ राष्ट्रकी भावना में परिणत होता गया। प्रारम्भ में विशप काल्डवेल की जो बाते कपोल कल्पना समझी जाती थी वे कालान्तर में जाच पडताल किये बिना सही मान ली गई। विद्वान् विशप के 'अस्तित्व रहा होगा' के शब्द 'अस्तित्व है' में परिणत हो गये। उनकी कल्पनाओं और उनके अनुभवों को ऐतिहासिक सचाई का रूप दे दिया गया।

इस विषय में तथा कथित अधिकृत लोगो की अवैज्ञानिक स्थिति ध्यान देने योग्य है। उदाहरणार्थ श्री बी० ए० स्मिथ अपनी पुस्तक एनशियन्ट एन्ड हिन्दू इण्डिया' (प्राचीन और हिन्दू भारत ' १९२० में विशप काल्डवेल की बातों की प्रामाणिकता की पुष्टि करते है। परन्तु इसके साथ ही वह यह स्वीकार करते हैं कि —

'प्रारम्भिक द्रविड सस्थानो' के अध्ययन के लिए जो सामग्री समुपलब्ध है वह बहुत न्यून है और उसका अन्वेषण अपूर्ण रीति से हुआ है। उसे इतिहास का आधार बनाये जाने की अनुमति नही दी जा सकती।"

सम्भवत किसी समय द्रविड सभ्यता का इतिहास किसी ऐसे विद्वान् के द्वारा लिखा जाय जो विषय के अध्ययन के लिए अपेक्षित भाषाओं और विद्याओ में निष्णात हो परन्तु वर्तमान में प्रासगिक साहित्य अत्यन्त अस्त-व्यस्त त्रुटि पूर्ण और विवादास्पद हैं और वह प्रामाणिक नही कहा जा सकता।"

इस पर भी स्मिथ महोदय विशप काल्डवेल की अविश्वसनीय मान्यताओं पर विश्वास करके द्रविड संस्कृति आदि २ के अस्तित्व को मान्यता प्रदान करते हैं।

युरोप के अन्य विद्वानों ने भी ऐसी ही स्थिति ग्रहण की है। श्रीयुत कनकस भाई पिल्ले वह प्रसिद्ध भारतीय लेखक थे जिन्होंने सर्व प्रथम इस विषय पर लेखनी उठाई थी। उन्होंने कल्पना की ऊ ची २ उडानें लीं और इतिहास का काल्पनिक चित्र प्रस्तुत किया। उनकी और विशप काल्डवेल की कपोल कल्पनाओ और गप्पें को बाद के इतिहासकारो ने ऐतिहासिक तथ्य मान कर उनका समादर किया। राष्ट्रीय इतिहास के क्षेत्र में अनुमानों पर आधारित निष्कर्षों को इस प्रकार की मान्यता और प्रमुखता यदा कदा ही मिलती है।

भाषावाद के स्तर से राष्ट्रीयता के स्तर पर

युरोप के इन स्वयभू अधिकृत व्यक्तियों को द्रविड सिद्धान्त को भाषायी स्तर से उठाकर राष्ट्रीयता के उच्च स्तर पर पहुँचाने के लिए काल्पनिक द्रविडों के लिए किसी 'जन्म-भूमि' के आविष्कार की आवश्यकता अनुभव हुई। अत यह कल्पना की गई कि लीमूरियन महाद्वीप जो इस समय हिन्द महासागर में डूबा हुआ हैं द्रविड़ सभ्यता की जन्म भूमि था। क्या इस कल्पना के पक्ष में कोई सुनिश्चित प्रमाण विद्यमान है? कदापि नहीं। न तो इस द्वीप का कोई अवशेष ही मिलता है और न ससार के इतिहास में इस बात का कहीं पर उल्लेख ही किया गया है।

ससार में किसी ने उस अस्तित्व विहीन सभ्यता के अस्तित्व की उस समय तक चर्चा तक न सुनी थी जब तक कि युरोप के विद्वानों को उन्नीसवीं और बीसवीं शती में अचानक उसका इलहाम न हो गया था। यत उनको अपने सिद्धान्त की पुष्टि के लिए भारत से बाहर किसी द्रविड जन्म-स्थान की परमावश्यकता थी अत उन्होंने स्थापना की कि द्रविड़ सभ्यता अवश्य ही लीमूरियन महाद्वीप में फली फूली थी। यदि उनकी यह स्थापना न हो तो हिन्दू सभ्यता से पृथक् द्रविड कही जाने वाली सभ्यता का अस्तित्व चुनौती का विषय बन जाता है।

इस प्रकार 'द्रविडस्थान' का सिद्धान्त अनुमान

पर आधारित है। युरोप के ये सिद्धान्तवादी 'अन्तर्ज्ञान' के विषय में योगियो से कही अधिक बढ़े चढे हैं। योगी जन भूतकाल की दिशा में यात्रा करके उस समय की अवस्थाओ का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं परन्तु युरोप के ये सिद्धान्त वादी तो भूत-काल की दिशा में यात्रा किये बिना ही उस वस्तु की खोज करने में समर्थ हैं जिसका कभी अस्तित्व ही न था।

पंच द्रविड़

इसके आगे यह सिद्ध करना आवश्यक था कि सुदूर दक्षिण के तथाकथित द्रविड लोग शेष हिन्दू जाति से पृथक् थे। जैसा कि पूर्व कहा जा चुका है प्राचीन तमिल साहित्य में 'द्रविड' शब्द का कही पर भी उल्लेख नहीं मिलता है। स्कन्ध पुराण में उल्लिखित पच द्रविड' की भावना द्रविड राष्ट्र के सिद्धान्त की पुष्टि नही करती। विपरीत इसके यह द्रविडो की शेष भारत के साथ एकरूपता का प्रति-पादन करती है। परम्परागत पच द्रविडों में महाराष्ट्र और गुजरात भी सम्मिलित हैं परन्तु इससे 'द्रविड वाद' के पृष्ठ पोषको का काम नहीं बनता। इस कठिनाई से निकलने का सर्वोत्तम मार्ग ऐसा पृथक् 'शब्द' बनाना वा ज्ञात करना था जो दक्षिण भारत के हिन्दुओ को छोडकर हिन्दू राष्ट्र का द्योतक हो। उन्होने सोचा कि इसके लिए 'आर्य' शब्द सब से अधिक उपयुक्त है इसलिए 'आर्य जाति' के सिद्धान्त और आर्यों तथा अनार्यों, दस्युओं वा द्रविडो के काल्पनिक सघर्ष की कल्पना कर ली गई। कहा गया कि 'द्रविड जाति' आर्यों की विरोधी पृथक् जाति थी।

डा० अम्बेडकर का मत

'आर्य' शब्द का अभिप्राय क्या है ? डा० बाबा साहब अम्बेदकर प्रभृति विद्वानो ने यह अनुभव किया कि 'आर्य' किसी नस्ल वा जाति का नाम नहीं है। यह शब्द 'ऋद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है श्रेष्ठ वा सम्मानित। उदाहरण के लिए साहित्य दर्पण में निर्देश दिया गया है कि 'नटी' और 'सूत्रधार' एक दूसरे को 'आर्य' कह कर सम्बोधित किया करे और छोटा भाई बडे भाई को 'आर्य' नाम से पुकारा करे। व्यक्तियों के गुणों वा अवगुणों के अनुसार चारों वर्णों में 'आर्य' और अनार्य वा दस्यु होते हैं। श्वपच (चाडाल) भी 'आर्य' बनने का अधिकारी होता है। महाभारत में वर्णित है कि धर्म व्याध नाम का एक म्लेक्ष 'आर्य' बन गया था और वह अपनी साधना के आधार पर कौशिक नाम के ब्राह्मण को शिक्षा देने का अधिकारी बन गया था। प्रहलाद का पिता धर्म विरोधी था परन्तु प्रहलाद को हिन्दुओं ने 'आर्य' माना। भागवत के अनुसार धर्म परायण बनने से चाडाल भी 'आर्यत्व' प्राप्त कर सकता है और धर्मा-चरणसे विहीन ब्राह्मण भी अपने को'आर्य'नही कह सकता है। शकराचार्य जी के मतानुसार आत्मोन्नति के एक विशेष स्तर पर पहुंच कर 'चाडाल' आर्य बन जाता है। 'आर्य' और 'दस्यु' प्रत्येक वर्ण में होते हैं। 'आर्यत्व' और 'दस्युत्व' किसी वर्ण विशेष तक सीमित नही होता। महाभारत के शान्ति पर्व में कहा गया है —

'दृश्यन्ते मानुषे लोके सर्व वर्णो दस्यवः।'

अर्थात् दस्यु गण सब वर्णों में पाये जाते हैं। 'आर्यत्व पर किसी वर्ण विशेष का एकाधिकार नहीं होता। उसको किसी एक वर्ण तक सीमित कर देना गलत होता है।

इन सब विचारो से प्रेरित होकर श्री बाबा जी महाराज ने 'आर्य' शब्द की निम्न लिखित परम्परा-गत परिभाषा को प्रमाण माना है--

कर्त्तव्यमाचरन् कार्यम् अकर्त्तव्यमनाचरन्।
तिष्ठति प्रकृताचारे स तु आर्य इतिस्मृतः।

जो व्यक्ति करने योग्य कार्य को करता और न करने योग्य कार्यों को नही करता और जो अपने

कर्तव्यानुष्ठान में निरन्तर सलग्न रहता है वही वास्तव में 'आर्य' होता है।

युरोप का कोई भी शब्द-शास्त्र विज्ञ यह सिद्ध नहीं कर सकता कि 'आर्य' शब्द किसी नस्ल या जाति का द्योतक है।

आर्य नस्ल का सिद्धान्त

पाश्चात्य विद्वानों ने 'आर्य नस्ल' और 'द्रविड राष्ट्र' के सिद्धान्तों का निरूपण इस प्रकार किया था —

> "सर्व प्रथम यह कल्पना की गई कि भारत एक राष्ट्र नहीं है। भारतीय जन एक जाति नही है और न वे भारत के मूल निवासी हैं। वे इस देश में बाहर से आने वाली विभिन्न शाखाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक शाखा की अपनी पृथक् भाषा थी इसी लिए भारतीय जन जिन भाषाओं को बोलते है वे मूलत भिन्न २ हैं। मोटे तौर पर वे दो भाषायी परिवारो में परिगणित हो सकते हैं और ये दोनो वर्ग जो भाषा और नस्ल पर आधारित थे चिरकाल पर्यन्त एक दूसरे के विरोधी बने रहे।

यह समस्त सिद्धान्त भाषायी विभिन्नता की काल्पनिक विचित्रता के लचर आधार पर अवलम्बित रही परन्तु यह समय के परीक्षण को सहन न कर सका। यह स्पष्ट होते देर न लगी कि द्रविड भाषाओं की काल्पनिक विलक्षणताए दक्षिण की भाषाओं तक ही सीमित न थी जो द्रविडों की भूमि समझा जाता था। ये विलक्षणताए उत्तर की भाषाओ में भी पाई गई थी।

सस्कृत भाषा में जिसे इस सिद्धान्त के पृष्ठपोषकों ने इण्डो युरोपियन वर्ग का एक अग माना था, इस वर्ग की कतिपय सुस्पष्ट विशेषताए न थी। इस बात के साथ पहली बात के मिल जाने से मूल सिद्धान्त की विशुद्धता के सम्बन्ध में अनेक शकाए उत्पन्न हो सकती थी। इस पृष्ठ भूमि को लक्ष्य में रखते हुए कोई भी निष्पक्ष विद्वान् यह समझ सकता था —

१—सम्भवत सस्कृत उस अर्थ में इ डो युरोपियन परिवार से सम्बद्ध नही है जिसमें सामान्यत वह समझी जाती है।

२—सस्कृत तथाकथित द्रविड भाषायी परिवार के लिए पराई नही हैं।

३—सस्कृत का और द्रविड भाषाओ का मूल स्रोत एक ही है।

४—भाषाओ का आर्य परिवार एक ही है।

पक्षपात और द्वेष के कारण युरोपियन विद्वान इन निष्कर्षों पर नही पहुंचे जो अधिक युक्तियुक्त है। इसके स्थान में वे अपनी पूर्व निर्धारित धारणाओं से चिपटे रहे और उन्होने यह जान कर कि आर्यों के भारत में प्रवेश से पूर्व द्रविड लोग उत्तर और उत्तर पश्चिम में फैले हुए थे और इसी से आर्य भाषाओं पर द्रविड भाषाओं का प्रभाव पडा इस कठिनाई पर पार पाने की चेष्टा की परन्तु वे ऐतिहासिक तथ्यों की साक्षी से इस धारणा को पुष्ट करने में अभी तक सफल न हो सके हैं।

यह कहा जाता है कि आर्यों के भारत-प्रवेश से पूर्व भारतके उत्तर और उत्तर पश्चिमी भागमें द्रविड भाषाए प्रचलित थीं। इस धारणा की पुष्टि क्यो कर हो सकती है ? इन्डो एर्यन सूक्तियों में द्रविड विशेषताए पाई जाती हैं। वैदिक सूक्तियो में भी द्रविड, प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। द्रविड भाषाओं की विशेषताए इस प्रकार वर्णित हैं -

(१) इन्डो एर्यन वाङ्मय में तथा कथित मस्तिष्क सम्बन्धी (पाई वाले) वर्गों का अपनाया जाना।

(२) र' के स्थान में 'ड' (I) का और 'ड' के स्थान में 'र' का अनियमित प्रयोग।

(३) क्रिया के रूपों के स्थान में 'कृदन्त' का अधिक प्रयोग। यह बात मनोरजक है कि अन्य कतिपय विद्वानों ने इस बात पर बल दिया है कि

द्रविड भाषाओं की ये विशेषताए 'आर्य भाषाओ' की ही विशेषताए है जो द्रविड़ भाषाओं में प्रविष्ट हो गई थी। उन्होंने यह भी सिद्ध कर दिया है कि तथा कथित द्रविड शब्द जो हिन्दू संस्कृति से पूर्व की सभ्यता के कल्पित अस्तित्व के समर्थक माने जाते है वे वस्तुत 'आर्य' शब्द हैं। (Oryza, Gengiblr, Karpion, Algum, Tulki आदि २)

द्रविड़ सिद्धान्त की भ्रान्तियां

द्रविड सिद्धान्त के प्रस्तोताओ को परेशानी का सामना करना पडता है क्योंकि उन्होंने बिना जाच पड़ताल के यह स्वीकार कर लिया कि —

(१) इन्डोयुरोपियन कहे जाने वाले भाषायी परिवार का अस्तित्व है और संस्कृत उस परिवार से सम्बद्ध है।

(२) द्रविड नाम का भाषायी परिवार भी विद्यमान है।

(३) ये दोनों परिवार भारत में बाहर से आने वाली दो विभिन्न धाराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

हिन्दू संस्कृति से पूर्व भारत में एक और संस्कृति का अस्तित्व था। यह बात प्रारम्भ में कपोल कल्पना पर अवलम्बित थी परन्तु बाद के लेखकों ने इसे एक तथ्य के रूप में स्वीकार कर लिया इसीलिए 'आर्यों में द्रविड की विलक्षणताओ और द्रविडो मे आर्यों की विलक्षणताओ का विवाद उठ खड़ा हुआ। यदि हम इस ऐतिहासिक सचाई को दृष्टि में रखे कि भारतवर्ष में 'एक ही जाति थी और वह एक ही राष्ट्र था तो इस कठिनाई का सहज ही समाधान हो सकता है।

तमिल ग्रन्थों की साक्षी

इस प्रसग में निम्नांकित बातों पर गम्भीर मनन आवश्यक है —'पोतिया पर्वत के हिन्दू ऋषि अगस्त्य ने सबसे पहले तमिल व्याकरण का निर्माण किया था। इस व्याकरण में वर्णमाला का क्रम संस्कृत की वर्णमाला के अनुरूप है। तमिल की वर्तमान लिपि का सूत्रपात ९वी शती में हुआ था। मूल लिपि अर्थात वेटेइडत् (Vattez huthu) वर्तमान तमिल लिपि से भिन्न है जिसका मूल स्रोत अशोक की ब्राह्मी लिपि है। थौल कापियम, इर थ्यानर अकापोरुल, कुरु न टोकाई, अयुगुरम नूह पातिरुपाटू नरीनाई अकानुनुरु काली टोकाई परिपाटल, पट्टुप्पट्ट मनी मेकालाई, पुराननुन चिलप्पातिकरम आदि २ ग्रन्थों से जो झाकिया हमे मिलती हैं वे निश्चित रूप से हिन्दू समाज की हैं। उदाहरणार्थ चिलप्पा तिकरम मे वर्णित नगर के विभिन्न स्थानो में वर्णों के क्रम से जिस आवास-व्यवस्था का उल्लेख मिलता है उससे पटना और उत्तर भारत के अन्य नगरो में 'अर्थ शास्त्र' के काल में हुई एक जैसी व्यवस्था का स्मरण हो आता है। जहा तक नगर की बसावट का सम्बन्ध है मदुराई नगर पाटलिपुत्र का नमूना है। कौटिल्य ने नगर के परकोटे के निर्माण की जो विशेषताए बताई थीं ये सब मदुराई नगर के परकोटे में देख पड़ती थीं। चिलप्पा तिकरम में अन्यान्य बातो के साथ २ चार वर्णों के अधिष्ठातृ देवो का, चारो वर्णों के एकत्र हुए जन-समूह से उत्पन्न कोलाहल का, यज्ञ धूम का, वार्षिक इन्द्र पर्व का, हिन्दू देवताओं यथा शिव, सुब्रह्मण्य, विष्णु, बलराम, इन्द्र आदि की पूजा का, शिव, कृष्ण श्री देवी और इन्द्राणी के नृत्य का, फाल्गुन मास में रति पर्व का, नक्षत्रों के हिन्दू नामों का, पूर्णिमा के आधार पर महीनो के नाम रखने की प्रणाली का तथा महीनों के हिन्दुओ जैसे नाम रखने का उल्लेख है।

मनीमेकालाई और परिपाटल नामक तमिल ग्रन्थों से सुस्पष्ट है कि उस समय का दर्शन, शास्त्र, उपासना की विधि, जीवन दर्शन और समय विभाग शतप्रतिशत हिन्दुओं जैसे थे। थुरुकुरुल नामक ग्रन्थ 'द्रविडस्थान' के पृष्ठ पोषकों में बड़ा समादृत है। उसके अध्यायों का क्रम हिन्दुओं के पुरुषार्थ चतुष्टय

मेरी रूस तथा युरोप यात्रा

(श्री डा० नन्दलाल जी बजाज)

[जून के अंक से आगे]

इस देश में पहाड़ों व जगलो के दृश्य मुझे तो कुल्लू व मनाली की याद दिला रहे थे। हर गाव में बिजली है। ग्रामीण घर दो तीन मजिले हैं पर साफ सुथरे। सडके चौडी और बहुत मोडों वाली हैं जैसे पहाडी इलाको में होती ही हैं। ९९ प्रतिशत ट्रेनें बिजली द्वारा सचालित है। नौकरी पेशा लोगों के लिये आराम घर भी पर्याप्त सख्या में विद्यमान है जहा वे लोग छुट्टी मनाने आया जाया करते हैं। देश की कुल भूमि का केवल चौथाई भाग उपयोग में लाने योग्य हैं क्योंकि चौथाई भाग तो बर्फ से ढका रहता है, लगभग इतना ही झीलो ने सम्भाल रखा है और शेष पर जगल व पथरीले पहाड खडे हैं। देश के २१, ७० तथा ६० प्रतिशत क्रमश फ्रेंच, जर्मन व इटालियन भाषा बोलते हैं। सात वर्ष की आयु से पूर्व बच्चे स्कूल में प्रविष्ट नहीं हो सकते। देश में आठ यूनीवर्सिटी हैं। गौए यहा भी हृष्ट पुष्ट है और एक गौ प्रति दिन लगभग २० सेर दूध देती है। छोटी २ पहाडियों को तोड मोड कर अत्यन्त परिश्रम व बुद्धिमत्ता से काफी भूमि को अनाजादि बोने के लिये तैयार कर लिया है। इस ओर हमारी सरकार को विशेष ध्यान देना चाहिये। १८ वर्ष से कम आयु के लडके सिनेमा नही देख सकते। कुल देश मे ५० प्रतिशत लोग तम्बाकू पीते हैं। समूचे योरुप की भाति शिक्षा यहा भी अनिवार्य है। लडकों को मद्यपान वर्जित है। प्राय हर गाव में गिर्जा है। ६४ प्रतिशत लोग प्रोटेस्टेन्ट ३३ प्रतिशत रोमन कैथोलिक और ३ प्रतिशत किसी भी धर्म को न मानने वाले हैं। झीले बहुत बडी व अधिक हैं। कई तो मीलों लम्बी चौडी हैं जिनसे मछलिया बहुत भारी सख्या में पकडी जाती हैं। रेड क्रास का आरम्भ इसी छोटे से देश में हुआ था। इसी देश में एक दस मील लम्बी सुरग है जो योरुप में सब से बडी है। इस देश की जनसख्या लगभग पचास लाख है। हमे सैर को जाते हुए एक विचित्र घटना देखने में आई। भ्रमणार्थ निकली हुई एक देवी अपने चार वर्षीय बच्चे सहित एक बैच पर विश्राम को बैठ गई और बच्चे को एक केला खाने को दिया। केला खाकर बच्चे ने छिलका सड़क पर फैंक दिया। मा ने केवल एक उ गली बच्चे की ओर निहारते हुए उठाई, पर मुख से कुछ न बोली। बच्चा तुरन्त ही अपनी भूल समझ छिलके उठा लाया और माता को दे दिया, जिसे उसने अपने थैले मे डाल लिया ताकि किसी गन्द फैंकने की टोकरी आदि में डाल सके। अब आप अनुमान लगावे कि जिन देशो में माताए अपने बालक बालिकाओ को सफाई के विषय में इस प्रकार शिशु काल मे ही शिक्षा देती हो वहा गन्दगी आदि का क्या काम ? हमारी सरकार को भी इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये यानी सडकों पर जगह २

के क्रम के अनुरूप है। उसका 'अर्थ' शीर्षक अध्याय कौटिल्य अर्थ-शास्त्र के तत्सम्बन्धी प्रकरण से मिलता-जुलता है साथ ही उसमें हिन्दू समाज के वातावरण की झाकी भी देखने को मिलती है।

इन समस्त तथ्यो से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ऐसा न तो कोई धर्म है न दर्शन-शास्त्र है, न जीवन का आदर्श है,न इतिहास है, न शास्त्र है, न भाषा है, न ज्ञान-विज्ञान है, न सामाजिक व आर्थिक प्रणाली है, न संस्कृति या सभ्यता है जो द्रविड कही जा सके। जिसे अनुमान के आधार पर 'द्रविड' की सज्ञा दी गई है वह सम्यक परीक्षण के उपरान्त एक मात्र 'हिन्दू' सिद्ध होती है।

कूड़ा आदि डालने के लिए डिब्बे खड़े करवाने होंगे, और जनता का भी कर्तव्य है कि वह बाल्यावस्था से ही अपने परिवार वालों को स्वच्छ रहने और गन्दगी न फैलाने का पाठ पढ़ाए। ठीक है पहले पहले ऐसे करने में कुछ कठिनाई होगी पर शनै २ अभ्यास हो जायगा और हमें स्वय थोड़ी सी गन्दगी फैलाने में ग्लानि अनुभव होगी। अस्तु, हमारी बस Lurkun Lake के किनारे २ दौड़ते हुए Gutachem रेलवे स्टेशन पर पहुंची जहा से हमने Mount Pilatus नामी पहाड़ पर स्थित होटल के लिए छोटी सी रेल द्वारा प्रस्थान किया। तब मुझे जोगेन्द्र नगर (जो हिमाचल प्रदेश में है) का स्मरण हो आया क्योंकि मार्ग का दृश्य इससे मिलता जुलता था। ऊपर पाइलेट्स पहाड़ । जो Alps का भाग है) से नीचे झीलों मकानों व हरे भरे वनो के दृश्य अत्यन्त हृदयाकर्षक व अपूर्व ही थे। वैसे तो प्रकृति ने कोई दो दृश्य एक जैसे नही बनाये तो भी ये मनाली या श्रीनगर इत्यादि के इलाको से टक्कर खाते थे।

स्वीटजर लैण्ड में cabel railways अधिक प्रसिद्ध तथा विचित्र है। mount pilatus से हमने rope railway or Funicula से यात्रा की। ये तार से लटक रहा एक डब्बा होता है, जिसमें लगभग ४० व्यक्ति खड़े हो सकते हैं। एक मील का रास्ता इस हवा में लटकती गाड़ी ने ५ मिनट में तय किया। मार्ग में दूर २ पहाडो के दृश्य बहुत सुन्दर थे। एक-दो स्थानो पर तो दृश्य मनाली को मात करते थे। इस रेल की गति १२-१५ मील प्रति घंटा होती है। सब लोग अपने आपको इसमें बैठ कर धन्य २ मान रहे थे। सचमुचही हमारी रूस व यूरोप यात्रा की cream ही थी। इसी यात्रा का कुछ भाग हमने एक बार सीटों वाले डिब्बेमें बैठकर भी आरामसे तय किया। यात्रा सर्वथा सुरक्षित होती है। युरोप में किसी जगह भी आकर swiss के इस rope railway में सफर किये बिना लौटना अबुद्धिमत्ता हीनहीं, बल्कि अदूरदर्शिता है। ज्यूरिच में १३० Hotel और कई Restaurant है। युरोप के सब से modern होटल यहा भी विद्यमानहै। Switzerland में हर शहर मे अपने ही निराले ढग के मकान बने हुए हैं। गउए इस शहर में सब बाहर से मगाई जाती है और भारत की तरह उनके गले में बडी २ घण्टिया पडी हुई होती है। कई Restaurant झीलो में किश्तियो पर बने हुए हैं। जहा मोटर व रेल न जा सके वहा rope railways ही यातायात का साधन है।

इस देश मे सारी आबादी झीलो के किनारे व पहाडो पर बसी हुई है। लोग बडे मेहनती हैं। यहा औरतों को वोट देने का हक नही है। उन्होंने स्वय ही बहुमत से ऐसा करने का निश्चय किया है। यू तो सारे यूरोप में स्त्रियों का बोल बाला है पर इस देश मे तो यह विशेष तौर पर माननीय है। इस देश में ५० प्रतिशत लोग बहुत खाते हैं जो ३० प्रतिशत रोगों का कारण है।

३-१०-६० को हम ३ बजे दोपहर रोम को रवाना हो गये जो वहा से लगभग ५०० मील दूर है वहां शाम ५। बजे पहुंचे। रूस तथा अन्य यूरोप देशों से यहा अधिक गर्मी है केवल यहा ही हमे रेढी वाले नजरपडे। एक जगह एक पुरुष रेढी पर कटे तरबूज बिना ढके बेच रहा था और कुछ ऐसे दृश्य भारत से मिलते जुलते थे और सारे यूरोप मे हमें यह चीज देखने को भी नही मिली। बसों मे बडी भीड़ होती है। इस देश में अग्रेजी समझने वाले लोग अन्य देशो के मुकाबले मे बहुत कम हैं। Rome में बहुत सी पुरानी इमारते व खण्डहर हैं। मकान ४-६ मजिलें हैं। यहा पर पूर्वी और पश्चिमी देशो का मिलन दिखाई पडता है। यहा २०० साल B C पुराने खण्डहर उस जमाने के गिरजो तथा महल्लों के हैं। यह एक बहुत पुराना Roman carbolic city है। पुरानी इमारते भारत की

तरह छोटी २ बनी हुई हैं यहा पर बडे २ apartment houses ८-१० मंजिले American नमूने के व लम्बी चौडी सडके मौजूद है। यहा पुराने रोम को नया रूप देने का प्रयत्न हो रहा है। slums साफ किये जा रहे हैं। इस शहर की आबादी २०लाखहै। जहा olympik Games होती हैं वह स्थान भी हमने देखा। यह एक बहुत विस्तृत मैदान है इसके साथ का Car-park भी बहुत विशाल है। Rome से Naples २०० Kilometers है इस देश के वृक्ष भी शेष यूरोप से कुछ भिन्न हैं। यह जल वायु का ही प्रभाव है। इस देश की भूमि इतनी उपजाऊ नही दीख पडती। क्योकि रोम में चोरी की घटनाए बहुत होती हैं। अत पुलिस अधिक मात्रा में, बाजारो में गश्त करती रहती है। जिस प्रकार दूसरे यूरोपीय देशों के किसान अपने खेतो को सुन्दर ढग से रखते हैं उतना परिश्रम इस देश के वासी नहीं करते। यह शहर समुद्र की सतह से कुछ मीटरही ऊचा है Naples को जाते हुए चीलों के वृक्ष दोनो ओर खडे मिलते है, भूमि समतल नही। यहा सेब के बाग बहुत कम हैं। यहा भी जनसख्या बहुत शीघ्र बढ़ रही है और ये हमारी तरह एक समस्या बनी हुई है।

यहा पर बहुत बड़े २ मुर्गी खाने हैं और अण्डे कई दूसरे देशो को भेजे जाते हैं। Alpines के कुछ भाग इटली में फैले हुए हैं। नेपलज को जाते हुए उन पहाड़ों की तलाई के इलाके देखे जहा भूमि में जगह २ कीचड व पानी खडा रहा करता था और भूमि मलेरिया के मच्छरों का घर बना रहता था। १६३५ के उपरान्त यहा के बादशाहों ने इस विस्तृत भूमि खण्ड से नहरों द्वारा पानी निकाल उपजाऊ बनाना आरम्भ किया और बहुत सफलता भी प्राप्त करली है। यहा पहली बार योरुप में भैंसे देखने को मिलीं। यहा की गौए शेष योरुप से घटिया नसल की जान पडती हैं। यहा इटली मे सडक पर यूकलिपटस के वृक्ष बहुत बडी सख्या में सडकोके दोनो ओर खडे देखनेको मिलते हैं। योरुप के लगभग सब देशो में नारियो की सख्या पुरुषों से अधिक है पर यहा उत्पत्ति की सख्या दोनों की बराबर ही हैं। नेपलज को मोटर द्वारा जाते हुए आप के एक हाथ मैडीटरेनियन सागर तथा दूसरे हाथ की ओर Alpines पहाडो के खण्ड हैं। इटली में अगस्त का महीना सब से गर्म होता है। खजूरों के वृक्ष भी यहा ही दीख पडते हैं। खुम्भी तथा अंगूर की खेती बहुत होती है। एक दो रु० में एक बढिया शराब की बोतल मिल जाती है।

नेप्लस इसकी बहुत बडी व सुन्दर बन्दरगाह है। यह शहर बहुत अच्छा है। पिछली लडाई में यह अधिकतर तबाह हो गया था, परन्तु अमरीकी सहायता से इसका पुनर्निर्माण हो गया है। इसी के बारे में कहते हैं(See Naples Before you die) इसके निकट ही सागर में वह द्वीप भी देखा जिसका नाम वेसूवियस है और जिसमें ज्वालामुखी पर्वत है और चारो ओर सागर है। यहा पिछली बम्ब वर्षा में मकानो के नष्ट हुए खन्डरात अब भी विद्यमान हैं और वह पुरानी देहली की याद दिलाते हैं। कुछ स्थानो पर भारत की तरह कपडे खिडकियो में सूखने के लिये डाल रखे थे। ऐसी प्रथा यूरुप के किसी अन्य भाग मे देखने को नहीं मिली। यहा एक मरियल टट्टू के इक्के पर सब्जी लाई जा रही थी। यहा हाथ से चलाये जाने वाले रेढे भी भारतकी भाति मौजूद है। कुछ बच्चे गन्दी सी जगह पर खेल भी रहे थे। और बाजारो में कही २ रोम की तरह कागज के टुकडे भी पडे हुए थे। ऐसी बात यूरुप में कहीं देखने को नही मिली। इस नगर में बडे २ कारखाने हैं विशेषतया गन्धक के। जिस वेसूबिसाई पर बर्फ भी पडती है वह २५००० फुट समुद्र तट से ऊपर है। यहा से हम एक नगर Pompii के खडर देखने के लिये गये। इसको लगभग २०० वर्ष पूर्व भूकम्प ने नष्ट कर

दिया था। इसे अब इन लोगों ने अजायब घर बना दियाहै। वहा आभूषणपात्रादि जो खडरोंमे से खोदने पर निकले थे दिखलाए गये हैं। यहा ६० वर्ष पूर्व के Paraffin के plaster cast में रखी हुई मानवों कीहड्डिया हैं जो उस भूकम्प में मर गए थे। Pompii लेपटिट (Lepetit) के पास स्थित है। यहा दवाइया बनाने के कई कारखाने हैं। इस अजायब घर में उस काल के उपरोक्त वस्तुओ के अतिरिक्त शीशे के बर्तन, सिक्के, मकानों के दरवाजे, गिरजों व महल्लो के कुछ भाग, तथा बडी २ Building- के कुछ भाग दिखलाए गये हैं। कुछ भाग एक मन्दिर का भी था जहा पादरी प्रश्नो के उत्तर पैसे देने पर दिया करना था। यह शहर लगभग दो हजार वर्ष पूर्व बना था किसी समय यह वास्तव में बहुत बडा तथा महत्त्वपूर्ण शहर होगा कही २ छोटी ईंटो तथा सगमरमर के मकानो के अ श विद्यमान है। कहते हैं कि तब इसकी जनसख्या पच्चीस हजार थी और भूकम्प में सबके सब ही लगभग मर गये थे। इस शहर में तब पानी २० मील की दूरी पर स्थित पहाडो से नालियों द्वारा लाया जाता था। कुछ एक दृश्यो को Museum से देख जान पडता था कि उस समय लोग बहुत विलासिता मे ग्रस्त थे। ऐसे दृश्यों को वर्णन करते भी लज्जा आती है।

मार्ग में जो गाव हमने देखे उनमें मकान भारत के गावों की तरह हैं। घोडे गाडी व हमारे देश के टागे भी काफी सख्या मे चलते हैं। रेले अधिकतर योरुप की तरह बिजली से दौडती है।

नेपलज के इलाके में गन्धक, लोहा और Radio active के कुछ चश्मे हैं जिनका पानी सारे ससार में मोल बिकता है और कई विदेशी देखने व स्नान करने यहा आते हैं। समुद्र में कई छोटे २ टापू हैं जहा सैर के लिये हर वर्ष बहुत लोग आते हैं। इस समुद्र में तूफान आदि नही आते हैं। यह वर्ष भर चुप चाप (Still) ही रहता है शायद यही कारण है कि रोम से नेपलज की सडक मीलो तक समुद्र के किनारे से कुछ थोडे ही गजो की दूरी पर है कई एक जगह तो बीस गज का ही अन्तर था।

Leptit से हम एक सोरण्टो नामक कसबे को देखने गये जो समुद्र के किनारे Leptit से कुछ थोडी ही मीलों की दूरी पर है। यहा घोडे बग्घी की सवारी का रिवाज है। एक दो सवारियों वाली बग्घी के आगे गधा जोत रखा था और उसे भी घोडो की तरह साफ व सुसज्जित रखा था। यह सवारी शेष योरुप में नहीं देखी थी।

इटली के उपरोक्त शहरो में कही २ औरते सिर पर दुपट्टा ओढे फिर रही थी। योरुप में यह रिवाज इस देश के मुकाबले में बहुत ही थोडा है। केवल सारी योरुप यात्रा में हमे इसी देश के नेपलज शहर की बन्दरगाह के विशाल होटल पर दो भिखारी लडको को भोजन व अगूरो के लिये हाथ पसारते देखा जिससे जान पडता था कि इस देश में गरीबी काफी अधिक मात्रा में है। शेष योरुप मे दुकानो के दरवाजे बन्द रहते हैं पर यहा इटली में खुले हुए है शायद यहा की गर्मी इसका कारण हो नेपलज से ५-१०-६० को हो पुन रोम लौट आये यहा रोम के एक Museum को देखने गये इसकी बाहर की दीवार ग्यारह सौ वर्ष पूर्व की बनी हुई थी। अजायब घर के दरवाजे पर कुछ ऐसे पादरी देखने का भी अवसर मिला जिनके सिरो के ऊपर से लगभग चार इ च की हजामत ऊपर मध्यम भाग चार इ च के व्यास भर में उस्तरे से बनी हुई थी तथा यह लोग काले या खाकी चोगे पहने हुए थे।

अजायब घर में B C से कई वर्ष पू ' के सिक्के व पात्र इत्यादि रक्खे हुए हैं और एक पुरानी बहुत बडी बाईबल है जो १।। फुट लम्बी १। फुट चौडी और १। फुट ऊ ची थी। यद्यपि भारत का नोट U. S S R Swiss और Italy इत्यादि

सार्वदेशिक सभा तथा श्रद्धानन्द ट्रस्ट द्वारा निर्मित—

अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध संयुक्त समिति द्वारा

जून ६२ तक का कार्य विवरण

तनौडिया (उज्जैन आगर लाइन) म० प्र०

इस क्षेत्र मे लगभग १७ लाख बलाई लोग हैं जो कि हिन्दुओ के अत्याचारो के कारण बहाई मत मे जा रहे हैं। बहाई लोग उन्हे स्कूल आदि की सुविधा देकर अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। समाचार यह है कि अब तक लगभग एक लाख बलाई बहाईमन मे चले गये हैं अत इस क्षेत्र मे हमारा प्रचार कार्य १० फरवरी सन् १९६२ से आरम्भ हुआ

श्री प० देव प्रकाश जी के प्रयत्न से हमारे प्रचारको ने अब तक ६२४६ बलाई बने बहाइयो को शुद्ध करके पुन वापस ले लिया है। हमारा प्रचार कार्य बढ रहा है वह इसी बात से प्रकट है कि १०- -६२ से अप्रैल तक २५६६ शुद्धिया हुई वहा मई ६२ मे ३६८३ शुद्धिया हुई हैं। यह कार्य और भी बढेगा क्यो कि अब इन प्रचारको को साइकिले पेट्र मेक्स लेम्प तथा मैजिक लालटेन की सुविधाये भी दी जा रही हैं।

पानपोष (उड़ीसा)

ईसाई प्रचार निरोध कार्य का दूसरा क्षेत्र उड़ीसा है जहा मई के अन्त तक १४५३ शुद्धिया हुई हैं। यहा श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी अच्छा कार्य कर रहे है उनके पास जो उपदेशक हैं उनके सहयोग से उन्होन १९-२-६२ तक ६५३ शुद्धिया की थी और मई मास मे ११०० शुद्धियो की तेयारी पूरी हो चुकी हैं।इससे प्रकट है कि इस क्षेत्र मे भी अच्छी प्रकार कार्य आगे बढ रहा है।

महुआ डांड (पलामू) विहार राज्य

श्री देव प्रकाश जो तथा स्वामी ब्रह्मानन्द जी के समान ही लगन के कार्यकर्ता श्री स्वामी सत्यानन्द जी ने महुआ डाड का कार्य सम्भाल लिया है। उनके आने से पूर्व जो प्रचारक कार्य करते थे अपने प्रयत्नो से ही उन्होने मई तक २०७ शुद्धिया की हैं। आशा है कि श्री स्वामी सत्यानन्द जी के वहा पहुँच जाने के कारण शुद्धि प्रचार कार्य आगे बढेगा।

मे भुनाया जा सकता है पर इटली का सिक्का (लीरा) ससार मे कही भी नही भुनाया जा सकता यहा पर रद्दी कागजो के लिये टोकरिया देखने को नही मिली। लोगो का रहने का स्तर दूसरे यूरोपीय देशो से न्यून हैं। सवारी के लिये स्कूटर इत्यादि काफी हैं जो अन्य यूरोपीय देशो मे बहुत ही कम सख्या मे हैं। दुकाने प्रात ८ से एक तक और साय ४ से ८ तक खुलती हैं। यहा हमें ससार का सबसे बडा गिरजा भी देखने को मिला। St Peters Church इसको बनाने मे १०० से भी अधिक वर्ष लगे थे। यह ६२० फुट लम्बा ३०० फुट चौडा और १४४ फुट ऊचा है। फर्श बढिया सगमरमर का बना हुआ है इसके अन्दर अनेको बुत रखे हुए हैं तथा दीवारो पर बहुत बढिया चित्रकारी है। गिरजे मे सैकडो मोमबत्तिया जल रही थी। गिरजे के बाहर बहुत विशाल मेदान है जहा खम्भो पर कई बुत खडे कर रक्खे हैं। शहर में जगह २ christ और फरिश्तो के अनेको बुत बने हुए हैं। जैसे वृन्दावन में लाखो घर मन्दिर बने हुए हैं इसी तरह Rome में ईसा मसीह के बुतो की झलक मौजूद है। इस शहर से १० बजे रात हवाई जहाज द्वारा अगले दिन हम बम्बई पहुँच गये और इस प्रकार हमारी विदेश यात्रा समाप्त हुई। —समाप्त

यदि इस क्षेत्र के शुद्ध हुए परिवारों में वितरण करने के लिए धोतिया, कच्छे, नेकर, बनियाने, कमीजे आदि दें या दिला सके तो हमारे कार्यकर्ताओं का उत्साह बढेगा और वे अपने कार्य को और भी आगे बढा सकेंगे।

अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति का कार्य पूर्ववत् महुआ डाड (विहार) अम्बिकापुर (सरगूजा म० प्र०) उडीसा तथा उज्जैन आगर लाइन पर हो रहा है। बासवाडा में एक छात्रावास तथा दो प्राइमरी पाठशालायें चल रही हैं। उपरोक्त स्थानो पर प्रचारको की सख्या निम्न प्रकार है, जिन पर लगभग १२००) मासिक व्यय होता है।

१—महुआ डाड (विहार) में	१० प्रचारक
२—अम्बिकापुर (म० प्र०) में	३ प्रचारक
३—उडीसा में	२ प्रचारक
४—उज्जैन आगर लाइन पर	६ प्रचारक
५—बासवाडा में	५ प्रचारक
	२६ प्रचारक

मई और जून मास में शुद्धि का विशेष कार्य उडीसा तथा उज्जैन आगर लाइन (म० प्र०) में ही हुआ है। उडीसा में जिन ११०० व्यक्तियो को शुद्धि के लिए तैयार किया गया है अब उनकी सख्या बढ कर १५०० तक पहुंच गई है। ये १५०० आदमी ईसाइयों के लिए सरदर्द बन गये हैं। इन लोगों ने अपने ईसाई बने पूर्वजो की अस्थिया कब्रो से निकाल कर जल प्रवाहित करना प्रारम्भ कर दिया है। अत ईसाई पादरियो ने कब्रे खोदने के जुर्म में २७ व्यक्तियों को गिरफ्तार करा दिया है और उनपर मुकद्दमे चल रहे हैं किन्तु ये लोग ईसाइयो के कट्टर विरोधी बन गये हैं। यह आन्दोलन और भी जोर पकडता जा रहा है।

उज्जैन आगर लाइन पर बहाई बने बलाईयों की शुद्धि का कार्य पूर्ववत जारी है। जैसा कि पिछली रिपोर्ट में अंकित है अप्रैल तक २५६६ शुद्धिया हुई हैं। शुद्धि का कार्य अब और भी बढा है। फलत मई मास में ३७८३ तथा जून मास में ५८५६ शुद्धियां हो चुकी हैं। इस प्रकार फरवरी से जून तक शुद्ध हुए व्यक्तियों की कुल सख्या (२५६६-३७८३-५८५६) १२२०५ तक पहुंच गई है। आशा है शुद्धियों की यह शृंखला और भी बढेगी। इस क्षेत्र के लिए अभी हाल ही मे ७५०) मूल्य को एक मैजिक लालटैन समिति की ओर से दी गई है।

महुआ डाड के क्षेत्र में ७० ईसाइयो को शुद्धि हुई तथा एक मुसलमान स्त्री को २ बच्चों के साथ शुद्ध किया गया।

६१४० बलाई पुनः वैदिक धर्म में

अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति, दीवान हाल, दिल्ली के प्रचारको ने जौलाई ६२ मे उज्जैन आगर लाइन पर ५६ ग्रामो में प्रचार किया। फलस्वरूप ६१४० बलाई जो अज्ञान के कारण बहाई मत में चले गये थे, शुद्ध होकर पुन वैदिक धर्म में प्रविष्ट किये। विदित हो कि इन्ही प्रचारकों के प्रचार से प्रभावित होकर इससे पूर्व बहाई बने १२२०५ बलाइयो को शुद्ध करके वैदिक धर्म में प्रविष्ट किया जा चुका है।

ज्ञानचन्द्र
मन्त्री
अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध संयुक्त समिति

❀

द्रविड मुन्नेतर कज़गम का प्रदर्शन
(उसकी शिक्षा)

(हिन्दुस्तान टाइम्स के विशेष सम्वाददाता द्वारा १-८-६२)

द्रविड़ मुन्नेतर कजगम ने बढते हुए मूल्यों के विरुद्ध मुख्यतया मदरास और वेलोर मे जो प्रदर्शन किया और इन के परिणाम स्वरूप हिंसा वा बल-प्रयोग का जो दु खद दृश्य उपस्थित हुआ उससे सरकार और द्रविड़ मुन्नेतर के नेताओं को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। राज्य भर मे ६००० से अधिक गिरफ्तारियाँ हुई जिनमे १४ राज्य की विधान सभाके और ४ पार्लियामेन्ट के सदस्य थे। इन्हीं मे कज़गम पार्टी के नेता श्रीयुत सी० ऐन० अन्नादुराई भी सम्मिलित है। इन उपद्रवों मे उत्तरभारत के नागरिकों के मकानऔर दुकानें मुख्य रूप से आक्रमण का लक्ष्य बनाई गई यह इस बात का प्रमाण है कि उत्तर भारत के लोग दक्षिण वालों पर शासन करते हैं इसके विरुद्ध जो आन्दोलन हो रहा है उसके दुष्परिणाम सामने आने लगे है। मदरास और वेलोर मे उपद्रवी भीड को भगाने मे पुलीस चीफ को मिला कर पुलीस के लगभग ६० कर्मचारी आहत हुए। ४० से अधिक आहत व्यक्ति मदरास के हस्पताल मे चिकित्सा के लिए भरती हुए।

भयंकर धक्का

वित्तमन्त्री श्रीयुत भक्तवत्सलम ने उस दिन की घटनाओं पर विधान सभा में वक्तव्य देते हुए बताया कि प्रारम्भ मे यह कहा गया था कि प्रदर्शन शान्तिपूर्ण होगा परन्तु १५ जुलाई को हुई कान्फ्रेंस मे यह घोषणा की गई कि जो व्यक्ति कलक्टरी मे और माल के अन्य दफ्तरों मे प्रविष्ट होंगे उन्हे बलात् रोका जायगा इसका अभिप्राय यह था कि उस दिन इन दफ्तरों में काम न होने दिया जाय। इस प्रकार की धमकी की विद्यमानता में सरकार के लिए हाथ पर हाथ धरकर बैठ जाना सम्भव न था। मन्त्री महोदय ने इस बात पर दु ख प्रकट किया कि विधान सभा की प्रमुख विरोधी पार्टी ने अवैधानिक आन्दोलन का आश्रय लिया और इस प्रकार राज्य में पार्लियामेन्टरी परम्पराओं के विकास को धक्का पहुचाया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राज्य सरकार कानून और व्यवस्था बनाए रखने के अपने कर्त्तव्य से च्युत न होगी और पुलीस अराजक तत्वों का दमन करने तथा सार्वजनिक शान्ति एव सुरक्षा बनाए रखने के लिए शीघ्रता और दृढता के साथ कार्य करेगी।

द्रविड़ मुन्नेतर कजगम के २६ नेताओं ने जिनमें पार्टी के सघठन मन्त्री भी सम्मिलित है १६ जुलाई के प्रदर्शन के सम्बन्ध में एक वक्तव्य दिया था। यदि वह वक्तव्य पार्टी की विचार-धारा का द्योतक है तो कहना पडेगा कि द्रविड़ मुन्नेतर कजगम को अब भी कोई पश्चात्ताप नहीं है। पार्टी के इस वक्तव्य में मन्त्री महोदय पर यह आरोप लगाया गया है कि उन्होंने अपने वक्तव्य में छुपी हुई धमकी दी है जबकि सरकार को चुनौती देने वाली कोई सघठित शक्ति विद्यमान नहीं है। मुन्नेतर के नेताओं ने यह भय प्रकट किया है कि अराजक तत्वों के दमन के नाम पर शासक दल (कॉंग्रेस) विरोधी दलों को मिटा देने का चक्र चलाना चाहता है। इस वक्तव्य में यह बहाना बनाया गया है कि हुल्लड़ बाजी उपद्रवियों के या उन कानून प्रिय साधारण व्यक्तियों के कृत्य हो सकते हैं जो क्रोध के वशीभूत हो ऐसा कर बैठते हैं। इस वक्व्य में

पुलीस पर भी यह आरोप लगाया गया है कि उसने भी बहुत ज्यादती की है। इसके आगे कहा गया है कि यत सहस्रों अनुयायियों की उपस्थिति में नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई अत उपद्रवों का कारण ये गिरफ्तारियाँ ही थीं और पुलिसका यह व्यवहार न केवल कौशल-शून्य और मूर्खतापूर्ण ही था अपितु पुलीस ने जान पूछकर लोगों को भड़काया था। वक्तव्य में इस मामले की न्यायिक जाँच की मांग की गई है। मन्त्री महोदय के इस आरोप की ओर सकेत करते हुए कि विधायकों का व्यवहार अवैधानिक था वक्तव्य मे कहा गया है कि विधायकों को विधान सभा के क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों मे पग न रखना चाहिए और वाद-विवाद के अतिरिक्त अन्य किसी उपाय का आश्रय न लेना चाहिए। यदि वित्तमन्त्री ऐसा मानते है तो वह गलती पर हैं। वक्तव्य के अन्त मे कहा गया है कि यदि मदरास सरकार का व्यवहार अधिक उत्तर दायित्व और सहानुभूतिपूर्ण होता और वह इस सुझाव को स्वीकार कर लेती कि बढते हुए मूल्यों के प्रश्न पर विचार करने के लिए सब दलों की एक कमेटी बना देनी चाहिए तो शोचनीय घटनाए न हुई होतीं।

घिसे पिटे ढंग

जबकि द्रविड़ मुन्नेतर कजगम के नेता यह पूछते हैं कि राजनैतिक दल अपनी प्रगतियों को विधान सभाओं तक और वाद-विवाद की रीति-नीति तक सीमित क्यों रखें तो वे देश के राजनैतिक भविष्य के लिए एक मौलिक प्रश्न उठा देते हैं जिसके विषय में विचार-धारा सुस्पष्ट होनी चाहिए।

वे यह अनुभव करते प्रतीत नहीं होते कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति और वयस्क मताधिकार पर अवलम्बित प्रजातन्त्र शासन की स्थापना के साथ २ एक नई स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसके कारण पुरानी रीति-नीति असामयिक होगई। जब यहाँ विदेशी शासन था तब सविनय अवज्ञा और धरना देने जैसी सीधी कार्यवाही का महत्व भले ही कुछ क्यों न रहा हो आज इस प्रकार के उपायों का आश्रय लेनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। किसी भी राजनैतिक दलके लिए अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए एक ही मार्ग खुला है और वह यह कि वह चुनाव के समय अपना पुरोगम जनता के समक्ष रखे और पर्याप्त समर्थन प्राप्त करे। यदि वह बहुमत में रहता है तो वह शासक दल बनकर ससदीय कार्यवाही से अपने पुरोगम को मूर्त्तरूप देता है। यदि वह हार जाता है तो विधान मण्डल मे विरोधी दल बनकर मतदाताओं के प्रशिक्षण का कार्य करता हुआ अपना समय गुजारता है। यदि उन्नति और विकास शांत्तिपूर्णबनाएरखनेअभीष्ट होतोसमस्त राजनैतिक दलों के लिए एक मात्र यही उपाय खुला रहता है अन्य किसी मार्ग का अवलम्बन करने से अशान्ति का मार्ग खुल जाता है। जो अल्पमत वर्ग सीधी कार्यवाही की रीति का आश्रय लेने का यत्न करते हैं उन्हें यह अनुभूति होते देर नहीं होती कि एक बार ऐसा कर लेने पर स्वभावत बल-प्रयोग का बाँध टूट जाता है और उस दशा में डडा तो सफल रहता है औचित्य सफल नहीं रहता।

कार्यवाही का यही समय है

जहाँ तक द्रविड मुन्नेतर कजगम का सम्बन्ध है, एक और अधिक आवश्यक प्रश्न सामने आ जाता है। अपने उद्देश्य के अनुसार इसका लक्ष्य विघटन है। यद्यपि इसने विधान सभा मे प्रविष्ट होकर विरोधी दल के रूप में कार्य करना पसन्द किया है तथापि जिस दल का उद्देश्य सविधान विरोधी हो उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह सविधान द्वारा निर्णीत सीमाओं के भीतर रहकर कार्य करेगा। १६ जुलाई की घटनाओं ने चुनौती दी है कि यह दल सवैधानिक दल की

साहित्य-समालोचना

राष्ट्रपति जी की सेवा में मेरे ११ निवेदन पत्र

लेखक—श्री ला० चतुरसेन जी गुप्त, पाटौदी हाउस, दरियागंज, दिल्ली–७

श्रीयुत ला० चतुरसेन जी गुप्त ने १ जनवरी ६२ से ११ जनवरी ६२ तक लगातार ११ विषयों पर ११ पत्र भूतपूर्व राष्ट्रपति श्रीयुत डा० राजेन्द्र प्रसाद जी की सेवा मे भेजे थे। इन पत्रों में आर्य जाति की विशिष्ट परम्पराओं की रक्षा करने की प्रेरणा की गई थी जिनको निर्मूल करने वा प्रभाव हीन बनाने का वर्तमान कांग्रेस शासन के द्वारा प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूपमे जान में वा अनजान मे प्रयत्न हो रहा है। इसके साथ ही हमारी आर्थिक परम्परागत सामाजिक एव राजनैतिक पृष्ठ भूमि के अन्तगत समृद्धि और राजनैतिक योगक्षेम के भी ठोस सुझाव दिए गए थे। पत्रों की निम्नांकित सूची से एक दृष्टि में उनके सदर्भों का परिज्ञान हो जाता है

१—कृत्रिम परिवार नियोजन स्थगित कराओ २ आर्य इतिहास को ठीक कराओ ३ भयानक अपराधो के दड में परिवर्तन कराओ ४ हिन्दुओ के धार्मिक ग्रन्थो का अपमान क्यो ? ५ जो करदाता-सो कर दाता जो करदाता-सो मत दाता ६ सीमित मत-दाता हो ७ प्रजा की रक्षा का भार राज्य पर हो ८ विरोधी दल नही सहयोगी दल हो ९ दूध की समस्या का समाधान १० कृषि भूमि की रक्षा कराओ ११ जातीय घृणा फैलाने वाले तत्वो का निराकरण।

१६ फरवरी ६२ के पत्र द्वारा राष्ट्रपति की अनुसचिव श्रीमती ज्ञानवती दरबार ने इन पत्रो की प्राप्ति स्वीकार करके सूचित किया कि वे सम्बद्ध मत्रालयो को प्रेषित कर दिए गए हैं।

प्रस्तुत पुस्तिका इन्ही पत्रो का सग्रह है। इन पत्रो में भारतीय आत्मा की कराहट प्रतिध्वनित हो रही है जिसकी विशिष्टताओ और आदर्शो पर कुल्हाडी चलाई जा रही है।

ओट मे जो विधान सभा मे कार्य कर रहा है अपनी अवॉछनीय प्रगतियों को मूर्त रूप दे रहा है। इस दल के कार्यों और दल के नेताओं के वक्तव्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि वह अपने को ससदीय क्षेत्र तक सीमित रखना नहीं चाहता। केन्द्रीय और राज्यप्रशासन को यह निश्चय करना है कि क्या वे दोनों इस दल को इस प्रकार के हथकडों से अपने दल के अनुयायियों मे सख्या वृद्धि करने और अपने लिए भविष्य में एक जटिल समस्या उत्पन्न होने देंगे अथवा वे अभी इससे निबट लेंगे। यह चुनौती ऐसी है जिसका निपटारा निर्णय को अनिश्चित काल तक स्थगित रखने से नहीं हो सकता। उडीसा के मुख्य मन्त्री श्री विजयानन्द पतनीक ने एक सम्वाददाता से अभी हाल मे पूछा था।

"यह क्या बात है कि एक ओर तो द्रविड़ मुन्नेत्र कजगम मूलभूत अधिकारों को चुनौती देता है और भारतीय संघ के सविधान के अन्तर्गत सभी अधिकारों की प्राप्ति का यत्न करता है और दूसरी ओर विच्छेद का प्रचार करता है?"

इसका उत्तर सरल है। क्योंकि उसे ऐसा करने दिया जाता है।

Dayanand: Prophet of India's Freedom

(By Pandit Nanak Chand)

MAHARSHI Dayanand Saraswati is well-known throughout India as the greatest religious and social reformer of modern times But his teachings and his work as a great political thinker are not so well-known Even educated Indians who had been in the forefront of the political awakening of this country and who had taken a leading part in the freedom movement hardly knew that Maharshi was the first great exponent of Swaraj and Swadeshi movements Swami Dayanand was an apostle of Indian unity also, and he preached and worked throughout his life to achieve these ideals

In 1875 6 Dayanand Saraswati wrote his immortal work "Satyarth Prakash" wherein he preached that Swaraj or the people's own Government was the best Government, how soever good or benevolent foreign rule might be it could be no substitute for Swaraj One might praise the good work of foreign rulers but one should never forget that foreign rulers will always try to tread under foot and destory the civilisation and culture of the ruled According to Dayanand, a "Swadeshi Government" would try to protect all that was best in the culture and civilization of the people In no uncertain terms, Swamiji denounced the activities of those societies which not only sang the praises of foreign rulers but decried their own culture and civilization

Gospel of Vedas

This great preacher visited almost all the cities of Northern India and preached the gospel of Vedic culture as being the best, and invited the people not to forget the ... of their own country He urged

the so-called untouchables had every ... which the higher castes enjoyed

Any impartial student of Dayanand's work and teachings would unhesitatingly declare that the great Swami placed before us the ideal of a free India long before any other leader did so Dayanand Saraswati has been several times criticised by men of other faiths as being a harsh critic of their religion but it can be proved that the leaders of other religions who lived and flourished in his times were great admirers of Swami Dayanand, and paid the highest tributes to his memory after his death Thus Sir Sayad Ahmad Khan, founder of the Aligarh Muslim University, said, "I was very well acquainted with the late Swami Dayanand Saraswati and I always showed great respect to him he was such a great man as has no equal in India Everyone, therefore, should mourn his death and feel sorry that such an unparallelled man has passed away from our midst"

M Romain Roland, the great French writer, stated ' Dayanand preached 'Strive to combat, to humiliate, destory the wicked, even the rulers of the world, the men in power Seek constantly to sap the power of the unjust and to strengthen that of the just even at the cost of terrible sufferings, of death itself, which no man should seek to avoid Dayanand transfused into the languid body of India his own formidable energy his certainty, his lion's blood "

Sir Jadunath Sarkar, the great historian, wrote He is a true statesman who can legislate for the future, who can set a force at work which will go on influencing the lives and thoughts of unborn generations When the history of India's growth comes to be written that high rank will be adjudged to the naked fakir-Dayanand Saraswati "

Talks In Delhi In 1877

toria as the Empress of India and to show to the world that Great Britain was a strong Imperial Power This Darbar was attended

Use of Punjabi and Hindi at District Level

Procedure explained by Government

Chandigarh, August 17

THE Punjab Government has announced that after the introduction of Punjabi and Hindi as the official languages at and below the district level in the Punjabi and Hindi regions respectively the Public will be allowed to submit applications to the district administration, either in Hindi or in Punjabi and the reply will be given in the language of the application

The decision to adopt the regional languages up to the district level will come into force on October 2

Government notifications (including court and auction notices) will be issued both in Hindi and Punjabi A particular notification can be issued in Urdu also if the issuing authority so desires, keeping in view the interest of adequate publicity Notifications in the regional language will, however be considered the only official texts for legal purposes and the notifications in the sister language will be only for the convenience of the public

As regards the language to be used in correspondence between districts lying in different regions and in internal correspondence between tehsils and district headquarters within the bilingual district of Ambala and Sangrur, it has been decided that the language in correspondence will be that of the addressor

by the Rulers of Indian States, Governors and noblemen of the various provinces The Governor-General presided as the representative of the Queen Taking advantage of this opportunity, Swami Dayanand also came to Delhi He put himself in touch with leader of various religions such as Sir Sayad Ahmad Khan Babu Keshab Chander Sen, Munshi Indermani, Babu Harish Chandra Chintamani, and a few others Swami Dayanand convened a meeting at his residence in order to persuade them to work in unity with him Swamiji told in that meeting that if they all united and worked together, the pace of reform and national integration would be very rapid and fruitful.

Swami Dayanand had a great faith in the Rajputs and their Rulers Therefore he met the princes who assembled at this Darbar and impressed upon them that they should work for the benefit of their subjects and uplift of their country

This great prophet of Indian freedom saw very clearly how Indian unity could be achieved He insisted that Arya Bhasha (Hindi) should be the common language of this country There should be no distinction of higher and lower castes and there should be no different grades of society based upon religion, caste, and race All persons should be equal before the law Merit alone should be the criterion of one's worth, and women should have equal opportunities regarding education

There is not the least doubt that India of today is trying to fulfil the mission of the Maharshi and so long as India keeps to the path indicated by him, she need have no fear for her future

EXAMPLES

The following examples illustrate how this principle will work —

(a) The district of Amritsar is in the Punjabi region whereas the district of Rohtak is in the Hindi region The Deputy Commissioner of Amritsar will write to the Deputy Commissioner of Rohtak in his own regional language i-e Punjadi The Deputy Commissioner of Rohtak will write to the Deputy Commissioner of Amritsar in his own regional language, i e, Hindi

(b) In the district of Ambala, the Rupar constituency is in the Punjabi region whereas the district headquarters or Ambala tehsil is in Hindi region The tehsildar of Rupar will write to the Deputy Commissioner or the Tehsildar of Ambala in his own regional language, i e Punjabi The Deputy Commissioner or the Tehsildar of Ambala will write to the Tehsildar of Rupar, in his own regional language, i e Hindi—P T I

जिला स्तर पर पंजाबी और हिंदी का प्रचलन

पंजाब सरकार द्वारा सरकारी कार्य प्रणाली का स्पष्टीकरण

चण्डीगढ़, १८ अगस्त । पंजाब सरकार ने घोषणा की है कि पंजाबी और हिंदी क्षेत्रों में जिला और उससे नीचे के स्तर पर पंजाबी और हिंदी को सरकारी भाषा के रूप में लागू किए जाने पर भी जनता को इस बात की अनुमति होगी कि वह जिला प्रशासन को अपने आवेदन पत्र हिंदी अथवा पंजाबी किसी भी भाषा में भेजे।

सरकारी घोषणा में यह भी स्पष्ट किया गया है कि जिस भाषा में आवेदन पत्र प्राप्त होगा उसी भाषा में उसका उत्तर दिया जाएगा।

क्षेत्रीय भाषाओं को जिला स्तर पर लागू करने का निर्णय २ अक्तूबर से क्रियान्वित किया जा रहा है।

सरकारी सूचनाएं (जिनमें अदालती और नीलामी नोटिस भी सम्मिलित हैं) हिंदी और पंजाबी दोनों भाषाओं में प्रसारित की जाएंगी। यदि किसी सूचना को जारी करने वाले अधिकारी चाहेंगे तो वह सूचना उर्दू में भी जारी की जा सकती है। क्षेत्रीय भाषाओं में प्रसारित सूचनाओं को ही कानूनी मामलों में सरकारी घोषणा समझा जाएगा। दूसरी सहायक भाषा में सूचना देने की व्यवस्था जनता की सुविधा को दृष्टिगत रखते हुए ही की गई हैं।

सरकारी भाषा नीति को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित उदाहरण भी दिए गये हैं।

(अ) अमृतसर जिला पंजाबी क्षेत्र है जबकि रोहतक जिला हिंदी क्षेत्र में आता है। अमृतसर का डिप्टी कमिश्नर यदि रोहतक के डिप्टी कमिश्नर को कोई पत्र भेजेगा तो वह अपनी क्षेत्रीय भाषा अर्थात् पंजाबी में ही वह पत्र भेजेगा। इसी भांति रोहतक का डिप्टी कमिश्नर अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर को जो पत्र लिखेगा वह अपनी क्षेत्रीय भाषा हिंदी में लिखेगा।

(ब) अम्बाला जिले में रोपड़ क्षेत्र पंजाबी अंचल में है जबकि अम्बाला तहसील हिंदी अंचल में आती है। अतः रोपड़ का तहसीलदार अम्बाला के डिप्टी कमिश्नर अथवा तहसीलदार को जो पत्र लिखेगा वह पंजाबी भाषा में होगा और अम्बाला का डिप्टी कमिश्नर अथवा तहसीलदार रोपड़ के तहसीलदार को जो भी पत्र लिखेगा वह हिंदी में लिखा जाएगा।

Notes on the subject of National Integration

BY

SHRI G S, GUPTA

representing

Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha*

1 The question of National Integration involves two major problems In fact they are faces of one coin —

First Rooting out fissiparous tendency

Second Creating encouraging and maintaining National Outlook

2. I am doubtful if we are all determined to destroy the poisonous tree root and branch or only to scratch its skin and paint it white wherever possible

The greatest impetus given to our separatist tendency has been the conversion of what till yesterday were provinces of India into States. We have made India the *Union of States* The primary elements are the States and their grouping together is India The necessary corollary of this solid fact is bound to be exhibited in our outlook and daily behaviour however much our few national leaders wish it otherwise

While other great countries—even the U S A—are fast converting what were originally States into mere provinces, we have done and are doing quite otherwise As the saying goes "If we sow the wind we must reap the whirlwind "

An average man's loyalty is bound to be divided between loyalty to his State and loyalty to India

I have been of the view, which is getting stronger every day, that the most important remedy, if not the only remedy, of destroying separatist tendency & ensuring National Integration is to have what is called the Unitary form of Government in India so that it may become one consolidated unit exercising powers of government in all branches of administration

I have no doubt that our parochial outlook has gone so far that the reform may be difficult It is already late and it may soon become impossible when the nation's trusted and popular leaders go out of the field I would, therefore, in all humility strongly recommend that steps be immediately taken in this direction We have the system of Party Government You cannot expect that the Congress Party or any one party will form the Government in all the States and in the Centre If parties having conflicting ideologies form governments in different States and in the Centre the result will be most unhappy We are having some taste of it even at present

3 The other thing that I would like to impress is that it is time that in the country's administrative spheres we should cease thinking or acting in terms of religion or communities or of majorities or minorities based on them or even of backwardness and forwardness except in a limited sphere

The more you remind people to forget it, the more you make them remember it

There is no denying the fact that there are backward tracts and tribes and there are city dwellers and village dwellers They must be encouraged educationally and economically Educationally by giving them special scholarships grants, etc for studies But in the matter of public services in all branches of administration merit alone must

* At the committee of National Integration and Communalism on 22 8 62

count All public services higher grade must be filled by competitive examination Preferential treatment should be limited in the matter of giving educational and economic facilities

4 Re-National outlook in the reading material provided to students in s hools and colleges

There are two factors which come in the way of National Outlook One is feeling of attachment to particular part of India Th s may be called Parochial The other is feeling of attachment outside India This may be called Extra territorial

One has to guard against both with courage and convict on without pampering one or the other in preparing the subject matter of reading materials There is vast field of material available in this our ancient land from all walks of life We have lives of great men extending from thousands of years But the main thing is the selection of names and more than that, the method of writing about them Selection should be made of great men from all walks of life, not only kings or heroes in battlefield,

5 The second point in the matter of education of our boys and girls is their character building encouragement of spiritual and moral values in their daily life This can be built only on the foundation of religion I have used the word 'religion not in the sectarian or communal sense but in the sense of what I may call *Dharma* or universal religion, I would suggest that no religious book of any Community may be made use of to impart spiritual and moral values to our children We have therefore to go to a time when the human race was not divided into communities Even if you may not agree with the opinion of the Vaidik Dharmis that the Vedas are eternal, nobody can deny the fact that scholars throughout the whole word that Rigveda is the first product of human mind and that no other book in any shape or form preceded it It will therefore be safe to draw suitable extracts from Rigveda in the text books of our students particularly as it is free in the very nature of things from criticism directed against any religion



GHANSHYAM SINGH GUPTA

6 There is one more important mattar which has gone a long way in creating misunderstanding and friction among the people of India It is a patent fact that during the British regime Indian History was coloured, if not distorted to suit their political purpose One such distortion was that India was invaded by the Aryans who were foreigners and they drove the orignal inhabitants into the forest This they have tried to infer from old Sanskrit texts

Rishi Dayanand who was most profound Sanskrit Scholar of his age, has categorically repudiated this idea, but the same idea is still being imparted in our schools and colleges with the result that it continues to poison their minds The re orientation of ideas on the subject needs to be examined from the view point of national integration

7, Elections in the context of National Integration cannot be said to have a happy record A way must be found so that elections do not breed animosity and disintegration It is really a very difficult job, when *victory* of a party or its candidate (or even a group in the party) guides all actions from top to bottom Purity in election is hardly to be found anywhere Besides this there is almost always some election or the other It is for political parties to sit together and

sincrely try to improve matters But I have grave doubts if this would be fruitful If we could generate the feeling that defect at the poll with rectitude is really more honourable than success by unfair means, it would go a long way to improve matters But this requires self introspection which is a rare thing

I may suggest for your consideration the method of indirect election, say, for the Lok Sabha also

QUESTION OF LANGUAGE

8 The question of language is also an important factor in considering the question of National Integration Our Constitution (in Schedule VIII) has recognised fourteen languages They are all languages of our Nation Besides these, owing to the policy of the British rulers, English language was made compulsory for all educational and administrative purposes and thus became the medium of intercourse among educated classes in the country Not being a language of our nation it has no place in Schedule VIII of the Constitution, But as it was in use and a sudden change was not possible its use was allowed for a period of 15 years for the purposes of the Union,

In the field of education, although there is no express provision in the Constitution, there are varying opinions about the position of English Some hold that it should be made a compulsory language for study from the lower classes upto University classes There are some who would like it to be the medium of instruction also from the secondary to highest education I am of the view that it should not be a medium of instruction at any stage nor even as a compulsory language subject There is no doubt that English has a vast literature in all branches of knowledge but this must be made available in our language also and this can only be done after our languagesare made the medium of instruction, To say that the preparation of text-books in our languages should precede their being made the medium of instruction is only correct to a certain limited extent, beyond that it will be like putting the cart before the horse They will in fact go on simultaneously In this connection I would emphasise that the technical terms should be the same for all our languages, How to evolve that is a long and different question The medium of instruction, at any rate in the beginning, must be the students' or their guardians' free choice

As regards the three language formula I would suggest that besides the mother tongue of the student he must know any other two languages given in Schedule VIII of the Constitution provided that a student whose mother tongue is a North India language must learn one South India language and viceversa

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि श्री घनश्यामसिंह गुप्त के राष्ट्रीयता एकीकरण विषयक विचार—*

१—राष्ट्रीयता एकीकरण के प्रश्न से दो मुख्य बाते सामने आती हैं। वास्तव में ये दोनो एक ही वस्तु के दो पहलू है।

प्रथम —विकेन्द्रीकरण मनोवृत्ति को उखाडना।

दूसरा —राष्ट्रीय भावना को जागृत करना, प्रोत्साहित करना और अविचलित रखना।

२— क्या हम इस वृक्ष को जड मूल से उखाडने के लिए कृत सकल्प हैं या केवल उसकी लीपा पोती करना चाहते हैं इसमें मुझे सन्देह है।

पृथकत्व की भावना को जिस बात ने सब से अधिक जागृत किया है वह यह है, जो कल तक भारत के केवल प्रान्त मात्र थे, उनको राज्य घोषित किया। इस दृढ़ तथ्य का जो अनिवार्य परिणाम होना था वह हुआ और भी होगा चाहे हमारे कुछ चोटी के नेता कुछ भी चाहें।

जहां अमरीका के सदृश ससार के अन्य देश इस ओर लगे हुए हैं कि देश के विभिन्न राज्यों को प्रान्त का रूप दे, वहा भारत में प्रान्तों को राज्य

* ये विचार श्री गुप्त जी ने २२-८-६२ को अशोक महता कमेटी के समक्ष लेखबद्ध रूप में प्रस्तुत किए।

बनाया गया है। कहावत प्रसिद्ध है—"बोये पेड़ बबूल के तो ग्राम कहा से होय।"

साधारण जनता की भक्ति राज्य के प्रति और राष्ट्र के प्रति विभाजित होने ही वाली है

मेरी सदा से धारणा रही है जो दिनो दिन दृढ़ होती जाती है कि इस रोग की एक ही दवा है। भारत की राज्य पद्धति को बदला जाय, ऐकिक राज्य पद्धति स्थापित की जाय ताकि प्रबन्ध के सम्पूर्ण क्षेत्रो में शासन की पूर्ण शक्ति का प्रयोग करते हुए यहा एक ही सुदृढ़ राष्ट्र हो।

इसमें सन्देह नही कि हमारी पृथकत्व की भावनाए इतनी बढ़ गई हैं कि यह सुधार करना कठिन हो गया है। परन्तु कठिन होते हुए भी वह अभी हो सकता है बाद को तो असम्भव हो जायगा जब कि राष्ट्र के विश्वास पात्र और लोकप्रिय इने गिने नेता बिछुड जायेंगे। अत मैं विनम्र आग्रह करूगा कि यह सुधार तुरन्त ही किया जाय। शासन पद्धति में यह सम्भव नहीं कि एक ही राजनीतिक दल का शासन केन्द्र में और विभिन्न राज्यो में रहे। विभिन्न आदर्श कार्यक्रम और भावनाओ वाले राजनैतिक दलो का प्रभुत्व केन्द्र में और विभिन्न राज्यों में हो तो क्या दशा होगी इसका अनुमान लगाया जा सकता है, कुछ २ दिग्दर्शन तो होने लगा है।

३—दूसरी बात जो मैं निवेदन करना चाहता हू वह यह है कि देश के प्रबन्ध के क्षेत्र में धर्म और सम्प्रदाय की बात को सर्वथा भुलाया जाय और सम्प्रदाय पर आधारित अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक की बात को तथा पिछड़े हुए क्षेत्र उन्नत क्षेत्र की भावनाओं को भी त्याग दे। इसमें सन्देह नहीं कि पिछड़े वर्ग और पिछड़े क्षेत्र हैं और उनको ऊंचा उठाने का भरसक प्रयत्न होना चाहिये। उनको पढ़ाने लिखाने में और उनकी आर्थिक सहायता के साधन जुटाने में जितनी भी सहायता दी जा सके दी जानी चाहिये। परन्तु जहा राज्य प्रबन्ध सम्बन्धी सेवाओं की बात है वहा केवल योग्यता ही देखी जानी चाहिए।

४—विद्यालय और महाविद्यालय के विद्यार्थियों के लिए पठनीय सामग्री के विषय में।

किसी व्यक्ति की राष्ट्रीय भावनाओ को कुंठित करने वाली दो प्रवृत्तिया हैं। एक है—भारत के प्रति निष्ठा की जोड में अपने प्रदेश के प्रति निष्ठा—यह प्रादेशिकता कहा जा सकता है। दूसरा है भारत के प्रति निष्ठा के जोड में भारत से बाहर किसी देश के प्रति निष्ठा—यह वैदेशिक निष्ठा कहा जा सकता है। पहिले मे दूसरा अधिक भयानक है। विद्यार्थियो के लिए पठनीय सामग्री तैयार कराने में इन दोनो ही प्रवृत्तियों के उन्मूलन की ओर दृढता और निश्चय से ध्यान रखना होगा। किसी एक की उपेक्षा करना घातक होगा। इस हमारे पुरातन देश भारत में इसके लिये पर्याप्त सामग्री है। असली बात उनको चुनने की है और उससे भी मुख्य बात यह है कि उसे किस रूप में लिखा और दिखाया जावे। हर युग और क्षेत्र के महापुरुषों की जीवनी से शिक्षा ली जा सकती है और उनको वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप दिखाया जा सकता है।

इस प्रकार की पठनीय पुस्तको में केवल राजा महाराजाओ के अथवा योद्धाओ के जीवन चरित्र से ही सामग्री इकट्ठी न की जावे अपितु जीवन के हर क्षेत्र के महापुरुषों की जीवनी और कृत्यो से पर्याप्त मसाला मिल सकता है।

५ हमारे विद्यार्थियो के शिक्षण काल में उनके चरित्र निर्माण का प्रश्न भी बडे महत्व का है। सच्चरित्र की आधार शिला धर्म है। सम्प्रदायवाद या पन्थवाद के अर्थ में मैंने "धर्म" का प्रयोग नहीं किया है। परन्तु विश्व धर्म के अर्थ में। विद्यार्थियों के लिये पुस्तको में किसी भी सम्प्रदाय के धर्म ग्रन्थों से उद्धरण न रहें क्योकि उसमें साम्प्रदायिकता का गन्ध अवश्य रहेगा। अत ऐसे धर्म ग्रन्थ

को लेना होगा जो सम्प्रदाय वाद से सर्वथा मुक्त हो। वेदो के बारे में उन लोगो के विचार को छोड भी दे जो इन्हें अनादि मानते हैं ससार के समस्त विद्वानो की यह धारणा है कि ऋग्वेद मनुष्य समाज का सर्व प्रथम ग्रन्थ है, जिसकी रचना तब हुई थी जब कि मनुष्य समाज सम्प्रदायो में विभक्त नहीं हुआ था। अत ऋग्वेद के कुछ चुने हुए मन्त्रो के आधार पर विद्यार्थियो को धार्मिक शिक्षा दी जावे जो उनके सच्चरित्र निर्माण का आधार शिला हों।

६—इस सम्बन्ध में एक और बात आपके विचार के लिए प्रस्तुत करना चाहता हूँ। ब्रिटिश साम्राज्य काल में हमारे इतिहास को विकृत रूप से दिखाया गया है और वह साधारण पढे लिखे लोगों की धारणा बना दी गई है जो उनके मस्तिष्क को विषाक्त किया हुआ है। ऐसी एक बात यह है कि आर्य लोग बाहर से आये और यहा के मूल निवासियों को जगलो में ढकेल दिया। इसे वे सस्कृत साहित्य के आधार पर सिद्ध करने का प्रयत्न किया करतेहैं। किन्तु महर्षि स्वामी दयानन्दजी जो इस युग में सस्कृत के चोटी के विद्वान् माने जाते हैं, इसको असत्य मानते हैं। राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से इसका अनुसन्धान होना आवश्यक है।

७—चुनाव में सफलता के उद्देश्य से राजनैतिक दलों का जो व्यवहार होता है वह चरित्र निर्माण और राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से सुखद नही कहा जा सकता। उससे तो कटुता और अनैतिकता का प्रचार होता है उसे किस प्रकार रोका जावे यह एक कठिन प्रश्न है। जहा चुनाव में किसी प्रकार और किन्ही साधनों से जीतना ही लक्ष्य हो वहा सुधार होना कठिन है। अनैतिक व्यवहार से जीतने की अपेक्षा नैतिकता का व्यवहार करते हुए हारने में गौरव मानने की प्रथा कैसे हो कहना कठिन है। यह तो राजनैतिक दलों के नेताओं के सोचने की बात है। इसमें आत्म निरीक्षण और आत्मसयम आवश्यक है जो कि कदाचित् ही पाई जाती है।

भाषा का प्रश्न

८—राष्ट्रीय एकता के सम्बन्ध में भाषा का प्रश्न भी एक महत्व पूर्ण प्रश्न है। हमारे सविधान की अष्टम अनुसूची मे जितनी भी भाषाओं का उल्लेख है वे सब राष्ट्र की भाषाए है। स्वभावत अ गरेजी उसमें नही है क्योकि अ गरेजी हमारे राष्ट्र की भाषा नहीं है। फिर भी अ गरेजी का प्रयोग होने के कारण उसे एक दम बन्द करना सम्भव नहीं था अत केन्द्र के कार्यों के लिये यह १५ वर्षों के लिये जारी रखा गया।

शिक्षा के क्षेत्र में भाषा सम्बन्धी अनेक विचार है। कुछ चाहते हैं कि अ ंगरेजी भाषा निचली श्रेणियो से ही आरम्भ की जावे और महाविद्यालय तक चले। कुछ तो उसे शिक्षा का माध्यम भी रखना चाहते है। मेरे विचार में अ गरेजी भाषा शिक्षा का माध्यम किसी श्रेणी में भी नही होना चाहिये और भाषा के रूप में भी उसे कही अनिवार्य नही करना चाहिये। शिक्षा का माध्यम देशी भाषाए ही हो और वह विद्यार्थियों या उनके पालको की मरजी पर छोडा जाना चाहिये।

शिक्षा में तीन भाषाओं वाली बात के विषय में मेरी राय है कि विद्यार्थी को मातृभाषा के अतिरिक्त उसे दो और ऐसी भाषाए सीखना चाहिये जो सविधान की अनुसूची आठ में उल्लिखित हैं। परन्तु जिस विद्यार्थी की मातृभाषा कोई उत्तर भारतीय भाषा हैं तो उसे एक दक्षिण भारतीय भाषा पढना चाहिये और उसी प्रकार दक्षिण वाले को एक उत्तर भारतीय भाषा पढना चाहिये।

राष्ट्रीय एकता तथा साम्प्रदायिकता के विषय में अशोक महता कमेटी के साथ सार्वदेशिक सभा के प्रतिनिधि श्रीयुत घनश्यामसिंह के वार्त्तालाप का विवरण (१२-८-६२)

श्रीयुत घनश्यामसिंह जी गुप्त द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रवक्ता प्रतिनिधि के रूप में राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में अपने लिखित विचार संक्षेपत श्री अशोक मेहता कमेटी के प्रत्येक सदस्य को आरम्भ में ही दे दिए गये थे जो इसी अ कमें अन्यत्र हिन्दी और अ ग्रेजी में छपे हैं। उसके पश्चात कमेटी के सदस्यो के साथ जो प्रश्नोत्तर हुए उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है —

श्री मेहता ने पूछा कि आपने एकात्मक शासन का सुझाव दिया है उसके अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रो के प्रशासन की व्यवस्था क्या होगी ?

उत्तर—कमिश्नरो के डिवीजन स्तर पर प्रशासन की व्यवस्था हो सकेगी।

प्रश्न—एकात्मक शासन से साम्प्रदायिकता की समस्या का समाधान किस प्रकार सम्भव है ? क्या आपका यह अभिप्राय है कि एकात्मक शासन में केन्द्रीय सत्ता इतनी प्रबल होगी कि वह साम्प्रदायिक राजनैतिक सस्थाओ का दमन कर सकेगी ?

उत्तर—मेरा अभिप्राय यह है कि वर्तमान व्यवस्था में यह दोष है कि राजनैतिक सस्थाओ के साथ उचित तथा एक नीति से वर्त्ताव नहीं हो पाता। उदाहरण के रूप में महाराष्ट्र राज्य में हिन्दू महासभा की सरकार बन जाय उत्तर प्रदेश में कांग्रेस की सरकार बने और तीसरे किसी अन्य प्रान्त की किसी और दल की सरकार बन जाय तो तीनों ही सरकारे मुस्लिम लीग के साथ भिन्न २ ढग से बरतेंगी। इस स्थिति का यह सस्थाएं लाभ उठाकर पनपती रह सकती हैं। एकात्मक शासन का यह लाभ होगा कि ऐसी सस्थाओ के साथ एक जैसी नीति से बर्त्ताव होगा।

प्रोफेसर मुजीब ने प्रश्न किया—

यह बात तो उचित जचती है कि आपने अपने मेमोरडम में यह लिखा है शिक्षा-सस्थाओं में किसी धर्म का साहित्य न पढ़ाया जाय।

परन्तु साथ ही आपने लिखा है कि ऋग्वेद की शिक्षा का पाठ विधि में समावेश किया जाय। उसकी क्या सगति है ? क्योंकि ऋग्वेद तो एक विशेष धर्म की पुस्तक है। आप इसे सब सम्प्रदायों के लिए कैसे स्वीकार्य बना सकेंगे ?

उत्तर—मेरा कहना है कि ऋग्वेद सर्वथा असाम्प्रदायिक पुस्तक है क्योंकि पाश्चात्य विद्वान भी सभी यह मानते हैं कि ऋग्वेद ही मानव की प्रथम पुस्तक है। इसका यह अर्थ हुआ कि ऋग्वेद उस समय बना जबकि वर्तमान सम्प्रदायों में से किसी का भी आविर्भाव न हुआ था और मानव-समाज कई सम्प्रदायो में विभक्त न हुआ था। इसलिए भी यह असाम्प्रदायिक है कि उसमें किसी भी सम्प्रदाय का खण्डन या विरोध नहीं किया गया। अत चरित्र निर्माण तथा नैतिक उत्थान के लिए ऐसे ग्रन्थ से सकलित मन्त्रों का अध्यापन उपयोगी होगा।

प्रो० मुजीब—यह तो आप भी मानेंगे कि सब धर्म्मों की पुस्तको में कुछ ऐसी अच्छी बाते होती हैं जो निर्विवाद होती हैं उन सबके सग्रह यदि पढ़ाए जाय तो उसमें क्या आपत्ति हो सकती है ?

उत्तर—आपत्ति है और वह इसलिए कि उन पुस्तकों में दूसरे धर्म्मों का खण्डन तथा विरोध पाया जाता है। यदि आप उनकी एक बात को पढ़ायेंगे तो कोई भी आपत्ति कर सकता है कि इस

पुस्तक में तो ये अवाञ्छनीय बातें भी हैं।

ऋग्वेद में किसी का खण्डन न होने के कारण उसके सम्बन्ध मे यह आपत्ति नहीं उठाई जा सकती।

प्रश्न—यह तो आप मानेंगे कि सब धर्मों वाले अपने २ धर्मों को ही सत्य मानते हैं।

उत्तर—हां मैं यह मानता हू परन्तु वे दूसरे धर्मों को असत्य मानते हैं अत संघर्ष का बीजारोपण होता है।

प्रश्न—क्या आप भी सब धर्मों को सच्चा मानते हैं ?

उत्तर—नही, मान लीजिए मैं यदि बाइबिल को सच्चा मानू फिर मैं ईसाई ही बनू गा।

प्रश्न - आप साम्प्रदायिकता कितने प्रकार की मानते हैं ?

उत्तर—एक साम्प्रदायिकता तो यह है कि यदि दूसरा देश हमारे देश पर आक्रमण करेगा तो हम अपने देश के लिए मर जायेंगे। दूसरे प्रकार की यह है कि यदि अमुक देश हमारे देश पर आक्रमण करेगा तो हम देश के लिए मरजायेंगे और यदि अमुक आक्रमण करेगा तो हमारी स्थिति दूसरे ढग की होगी।

उदाहरण के लिए इस देश में कुछ ऐसे लोग हैं जिनकी मनोवृत्ति यह है कि यदि जापान भारत पर आक्रमण करे तो वे देश का साथ देगे और यदि कोई मुस्लिम देश आक्रमण करे तो उनकी नीति दूसरी होगी। यही हाल कुछ लोगों का चीन या रूस के सम्बन्ध में भी हो सकता है।

प्रश्न—क्या आप यह मानते हैं कि पाकिस्तान में हिन्दुओं के साथ जो व्यवहार होता है उसकी प्रतिक्रिया भारत में भी होती है ?

उत्तर—हां मैं यह मानता हूं कि होती है।

प्रश्न—इसका क्या प्रतिकार हो सकता है ?

उत्तर—इसका प्रतिकार भारत के राष्ट्रवादी मुस्लिमों को करना चाहिए।

प्रो० मुजीब—तो क्या आपका अभिप्राय यह है कि पाकिस्तान में हिन्दुओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के लिए भारत के राष्ट्रवादी मुसलमान उत्तरदायी हैं ?

उत्तर—नहीं, मेरा अभिप्राय यह है कि इस देश में कुछ तत्त्व अभी भी मुस्लिम लीगी मनोवृत्ति के शेष हैं। पाकिस्तान बनाने में मुख्य भाग पाकिस्तान के मुसलमानों का न होकर उत्तरप्रदेशके मुसलमानो का था क्योंकि पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के मुसलमान इसके विपक्ष में थे। इस मुस्लिम लीगी मनोवृत्ति को समाप्त करने के लिए मेरा मत यह है कि न सरकार प्रभावशाली कार्य कर सकती है और न हिन्दू ही कुछ कर सकते हैं अपितु राष्ट्रवादी मुस्लिमो का यह कर्त्तव्य है कि वे भारत मे जो मुस्लिम लीगी मनोवृत्ति के मुसलमान हैं उनकी उस मनोवृत्ति को बदलें। इसकी प्रतिक्रिया पाकिस्तानमें भी ठीक ढग से होगी—क्योंकि मैं समझता हू कि पाकिस्तान का भारत के प्रति जो रवैया है उसके लिए भारत के मुस्लिम लीगी मनोवृत्ति के मुसलमानो का भी पाकिस्तान वाले किसी अ श में आश्रय लेते हैं।

इसी प्रसग में गुप्त जी ने विदेशी ईसाई मिशनरियों के राष्ट्र विरोधी प्रचार के रोकने की भी आवश्यकता बताते हुए कहा कि जब नियोगी कमेटी के सदस्य के नाते मैंने मध्यप्रदेशके वन्य क्षेत्रों का भ्रमण किया तो मैंने स्वय ऐसा प्रचार होते देखा।

प्रश्न—ऐसे विचार केवल प्रचारक मिशनरियों के हैं या मत परिवर्तन द्वारा ईसाई बने लोगो के भी हैं ?

उत्तर—ईसाई बनने वालों के भी—

नोट —यह वार्त्तालाप लगभग १ घण्टा तक चलता रहा। इस वार्त्तालाप के समय श्रीयुत रघुवीरसिंह जी शास्त्री उपमन्त्री सार्वदेशिक सभा भी श्री गुप्तजी के साथ थे।

समाचार

बिहार राज्य द्वादश आर्य सम्मेलन का विराट आयोजन

नवम्बर १९६२ को बिहार की राजधानी पटना में

पटना जिले के आर्य समाजों के प्रतिनिधियो, जिले की विभिन्न सस्थाओं के सदस्यों एव आर्य धर्मानुरागी महानुभावों और देवियो की एक आम सभा ने जिसकी अध्यक्षता बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान एव बिहार विश्वविद्यालय के उपकुलपति, पद्मभूषण डा० दुखन राम जी ने की, बिहार की राजधानी पटना में विराट आर्य सम्मेलन इसी वर्ष के नवम्बर मास में करने का निश्चय किया है। सम्मेलन की तिथि की सूचना बाद में प्रसारित की जायेगी। सम्मेलन की तैयारी प्रारम्भ करने तथा इसके प्रबन्ध के लिए एक स्वागत समिति गठित की गई है जिसके स्वागताध्यक्ष—बिहार के भूतपूर्व शिक्षा निर्देशक डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री स्वागत मन्त्री—प० राम नारायण शास्त्री, कार्यालय मन्त्री—श्री बनारसी सिंह विजयी, प्रचार मन्त्री—श्री सुखलाल सिंह एव कोषाध्यक्ष—श्री सुन्दर साव जी चुने गये हैं।

इस समय सामान्यत समग्र देश में और विशेषत बिहार राज्य में राष्ट्रीय एकता-सूत्र को खण्डित करने वाली प्रवृत्तिया अपनी दूषित साम्प्रदायिक मनोवृत्तियो के वशीभूत होकर राष्ट्रीय एकता के प्रबल समर्थक प्रात स्मरणीय महर्षि दयानन्द जी द्वारा प्रवर्तित आर्य समाज को चुनौतिया दे रही हैं। छोटानागपुर में विदेशी ईसाई मिशनरियो का आदिवासी आन्दोलन, विभिन्न अवसरो पर भारतीय सस्कृति-विरोधियो के षडयन्त्र-पूर्ण विभिन्न आयोजन, साम्प्रदायिकता के विषैले मनोभावो का अत्यन्त घृणित प्रदर्शन और जातीयता एव भाषागत विभेदक प्रवृत्तियो का सम्पूर्ण राज्य में सामाजिक स्थिरता, भौगोलिक एकता तथा परम्परा को नष्ट करने का कुप्रयास आर्य समाज के लिए अपने विभिन्न कार्यक्रमो की गति मे तीव्रता लाने के लिए एक सकेत है। अत उपर्युक्त समस्याओं के समाधान के लिए आर्य समाज अपनी शक्ति के साथ एक स्थिर बिन्दु पर पहुँचना चाहता है। पटना नगर में यह आर्य सम्मेलन इसीलिए आयोजित किया जा रहा है।

आर्य सम्मेलन के इस पुनीत अवसर पर यजुर्वेद-ब्रह्म-पारायण महायज्ञ के अतिरिक्त आर्य-विद्वत् सम्मेलन, वेद सम्मेलन, आर्य शिक्षा सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, आर्य कुमार सम्मेलन, कवि सम्मेलन, सास्कृतिक सम्मेलन, महिला सम्मेलन, अवैध-ईसाई-प्रचार-निरोध सम्मेलन आदि होंगे। सर्वश्री स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती, महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी रामेश्वरानन्द, स्वामी आनन्द भिक्षु, प० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु,, शास्त्रार्थ महारथी प० रामचन्द्र देहलवी, प० वैद्यनाथ शास्त्री, युवक नेता भारतीय ससत्सदस्य प० प्रकाश वीर शास्त्री, हैदराबाद के आर्य सेनानी प० नरेन्द्र जी, कुँवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, गुरुकुल विश्वविद्यालय के कुलपति कर्नल सत्यव्रत सिद्धांतालकार, आचार्य प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति, प० सुखदेव जी

वाचस्पति, विश्वनाथ जी वेदालकार, धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति श्रीमती प्रभावती देवी काव्यतीर्थ, श्री युधिष्ठिर मीमासक, ब्रह्मचारी अखिलानन्द प० आनन्द प्रिय मिहरचन्द धीमान, उदयवीर शास्त्री, हरिदत्त जी पचदशतीर्थ, दण्डी स्वामी ब्रह्मानन्द जी, अमेठी युवराज रणञ्जय सिंह, अलगूराय शास्त्री, चौधरी चरण सिंह प० वाचस्पति शास्त्री, ओ३म प्रकाश त्यागी, प० माधवेन्द्र शास्त्री, कविरत्न प्रकाश चन्द्र जी कुवर जोरावर सिंह श्री पन्ना लाल पीयूष ठाकुर यशपाल सिंह जी, ठाकुर इन्द्रदेव सिंह श्री न द लाल जी जैसे आर्य जगत के चोटी के नेताओ शास्त्रार्थ महारथियो उपदेशक उपदेशिकाओ एव सन्यासियो को सम्मेलन मे आमन्त्रित किया जा रहा है।

स्वागत समिति ने (१) सम्मेलन के सभी आयोजनो को सफल बनाने के लिए ५०,०००) (पचास हजार रुपये) की अपील प्रचारित की है तथा प्रान्त के आर्यों से प्रेरणा की है कि (२) सम्मेलन मे अधिक से अधिक सख्या मे भाग ले तथा शोभा-यात्रा (नगर कीतन) मे सम्मिलित होवे और (३) सम्मेलन के प्रबन्ध एव सफलता के सम्बन्ध मे अपना बहुमूल्य सुझाव स्वागत समिति के पास भेजने की महती कृपा करे। यह उल्लेखनीय है कि इस आर्य सम्मेलन का बहुत बडा ऐतिहासिक महत्त्व है तथा आर्य जगत की सुदृढीकरण की दिशा मे यह एक महान कदम होगा।

कार्यालय	निवेदक
आर्य समाज मन्दिर	स्वागत समिति
मीठापुर, पटना—१	बिहार राज्य आर्य सम्मेलन
२० जुलाई, १९६२	पटना

आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद का वार्षिक अधिवेशन

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद का वार्षिक अधिवेशन दिनाक २९, जुलाई १९६२ ई० को ताण्डूर मे प० विनायकराव जी विद्यालकार प्रधान सभा की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ जिसमे कर्नाटक, महाराष्ट्र और आन्ध्र के ११२ सदस्यो मे से ७२ सदस्यो ने अधिवेशन मे भाग लिया।

अधिवेशन मे पिछले वर्ष का कार्य विवरण, आय-व्यय और अगले वर्ष के लिये अनुमानिक आय व्यय स्वीकार किया।

आगामी वर्ष के लिये अधिकारियो का निर्वाचन हुआ जिसमे प० विनायकराव जी विद्यालकार एव प० नरेन्द्र जी पुन सभा के प्रधान व मन्त्री निर्विरोध निर्वाचित हुए। अन्य अधिकारी निम्न प्रकार है

उप प्रधान श्री रामचन्द्र कल्याणी एम० एल० ए०, प० सुशीलादेवी विद्यालकृता और श्री कौतूर सीतैया गुप्त एम० एल० ए०

उप मन्त्री—सव श्री ए० बालरड्डी जी, छगनलाल विजयवर्गीय और अनन्त शर्मा जी बी० ए० एल० एल० बी०

कोषाध्यक्ष—श्री रामरखा जी बी० ए० और

पुस्तकाध्यक्ष—प० ऋभुदेव जी शर्मा निर्वाचित हुए।

अन्तरग सदस्य सर्व श्री प० मुन्नालाल जी मिश्र, प० डी० आर० दास जी, प० मनोहरलाल जी, डा० ओ३म्प्रकाश जी आयुर्वेदालकार, हरिश्चन्द्र जी एम० ए०, एम० गगाराम जी, एस वेंकटस्वामी जी एडवोकेट, वेदकुमार जी वेदालकार नागनाथ जी तम्मेवार एम० एल० ए० कविराज पुरुषोत्तमदेव जी आयुर्वेदालकार, दिगम्बरराव लाठकर एडवोकेट मधुसूदनराव जी एम० पी०, बी० सत्यनारायण जी, प० ज्ञानेन्द्र जी शर्मा, प० नरदेव जी स्नेही, प० भद्रदेव जी शास्त्री, अयोध्याराम जी लक्ष्मणराव जी गोजे, एन० देवेया जी और शकरराव जी चिद्री।

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरग सभा की बैठक १६ ९-६२ को दयानन्द भवन, नई दिल्ली मे होगी। सम्बद्ध महानुभाव अंकित करले।

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

सैकड़ों दार्शनिक विद्वान हैं जो आकाश के हरेक बाह्य प्रकाश को बडी खूबी से बयान कर सकते हैं। परन्तु यदि वे अपने मन के अन्दर के भावो को प्रकट करे तो उसके अन्धकार का केवल विचार करने से ही शरीर काप उठता है। मैंने हजारो सुडौल और दृढ शरीर धारी देखे जो कुश्ती के हर प्रकार के दाव पेच मे निपुणता रखते हुए भी दूसरो की तो और रही, अपने शरीर की रक्षा के योग्य भी सिद्ध न हुए। कारण क्या है ? यही कि "केवल ज्ञान से उद्देश्य की प्राप्ति नही होती।" बल्कि जब उसके साथ साधन और कर्त्तव्य सम्मिलित हो जाय तब मनुष्य जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करता है। विद्या बिना आचरण के बजाय सुख के दुःख का साधन बन जाती है। इसलिए यदि शक्तिमान,प्रकाशस्वरूप परमरक्षक परमात्मा तक पहुंचना है तो शक्ति, प्रकाश और रक्षा धर्म्म को अपने अन्दर धारण करो।

प्रचार करने योग्य ट्रैक्ट

	मूल्य प्रति सैंकडा
१ मद्य निषेध की आवश्यकता (ट्रैक्ट)	) ८
२ वेद और गोमेध (ट्रैक्ट)	) १२
३ आर्य समाज के मन्तव्य	१२) , १०)
४ शकासमाधान	)०३ ,, २)५०
५ पूजा किमक	)०३ ,, २)५०
६ आयमामाज	)०३ ,, २)५०
७ ऋग्वेद में देवृकामा या देवकामा	)०६ ,, ५)
८ गोकरुणानिधि	)०६ ,, ४)
९ गोहत्या क्यो ?	)१२ , १०)
१० चमडे के लिए गोवध	)१० ,, १५)
११ मासाहार घोर पाप	)१५ ,, १२)
१२ दशनियम व्याख्या	)०९ ,, ७)५०
१३ तीर्थ और मोक्ष	)०९ ,, ७)५०
१४ ग्रहण और दान	)०९ ,, ७)५०
१५ भारतवर्ष में जाति भेद	)०९ ,, ७)५०
१६ वैदिक राष्ट्र धर्म	)२० ,, १५)
१७ प्रजापालन	)०५ ,, ४)
१८ नारायण स्वामी जी की सक्षिप्त जीवनी	)०६ ,, ५)
१९ सत्यार्थप्रकाश की रक्षा मे	)०६ ,, ५)
२० मुर्दो को क्यो जलाना चाहिए	)०६ ,, ५)
२१ आर्यसमाज के नियमोपनियम	)०९ ,, ७)५०
२२ आदर्श गुरु शिष्य	)२५ ,, २०)
२३ भारत का एक ऋषि	)१२ ,, १०

ENGLISH PUBLICATIONS

(1) Introduction to the Commentary on Vedas	2-50
(2) Kenopanishat (Translate on by Pt Ganga Prasad ji M A)	0-25
(3) Kathopanishat (Pt Ganga Prasad M A Rtd Chief Judge)	1 25
(4) The Universality of the SATYARTH PRAKASH	0 06
(5) PUNISHMENT PRESCRIBED for The unbelievers in the Quran	0 19
(6) Vedic Trinity	0-12
(7) Arya Samaj & International Aryan League (Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A)	0-06
(8) Truth Bed Rocks of Arya Culture KR(aiSahib Thakur Datt Dhawan)	0 50
(9) A case of Satyarth Prakash in Sind (S Chandra)	1 50
(10) In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A)	0-12
(11) Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharam Deva ji Vidyavachaspati)	0-50
(12) Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati)	0 50
(13) Elementary Teachings of Hinduism (Ganga Prasad Upadhyaya M A)	0-50
(14) Life after Death ,,	1-25
(15) Philosophy of Dayanand	10-00
(16) Agnihotra (Dr Satya Prakash)	2-50
(17) Daily Prayer of an Arya (Shri Narain Swami)	0-50
(18) The Constitution of Arya Samaj	0 20

नोट —(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अगाऊ रूप में भेजे।

(२) अपना पूरा पता डाकखाने तथा स्टेशन के नाम सहित साफ साफ लिखे।

(३) विदेश से यथासम्भव धन पोस्टल आर्डर द्वारा आना चाहिये।

व्यवस्थापक—सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार, दयानन्द भवन, नई दिल्ली-१

यज्ञ पद्धति प्रकाश मूल्य)५०

जिस यज्ञ की पद्धति की आय जनता चिरकाल मे प्रतीक्षा कर रही थी वह छपकर तैयार होगई। सब आर्यसमाजो का कर्तव्य है कि उसके अनुसार साप्ताहिक अधिवेशनो तथा यज्ञ आदि को करे जिससे देश देशान्तर मे एक रूपता धार्मिक कर्म काण्डो मे रहे।

इस ग्रन्थ में पांच पद्धतियां हैं

१—साप्ताहिक अधिवेशन आदि के समय बृहत् यज्ञ की पद्धति।

२ नित्य यज्ञ करने वालो के लिये नित्य यज्ञ पद्धति।

३—आहिताग्नियो के लिये आहिताग्नि नित्य यज्ञ पद्धति।

४ ब्रह्मपारायण यज्ञ पद्धति।

५—साप्ताहिक अधिवेशन सर्वत्र किस प्रकार हो इसके लिये साप्ताहिक अधिवेशन पद्धति।

इन पाच पद्धतियो के अतिरिक्त साप्ताहिक अधिवेशन के **समय विभाग** का एक पृथक् चार्ट छापा गया है जो समाज मन्दिरो मे लगना चाहिये इसका मूल्य १० न पै मात्र है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का यात्रा चित्र

मूल्य ।।) मात्र

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का यात्रा चित्र तीन रंगो मे बहुत सुन्दर सार्वदेशिक सभा ने प्रकाशित किया है। यह एक बड़ा चित्र नक्शे के समान है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति बडी आसानी से एक दृष्टि डालते ही जान सकता है कि महर्षि अपने जीवन मे कहा गये और कहा नही। जिस किसी नगर या जगल मे स्वामी जी अनेक बार गये वहा सख्या दी हुई है। ऋषि के दो चित्र भी उसमे हैं एक खड़ाऊ पहने और दूसरा पूर्ण वस्त्रो मे कि टकारा से चलकर परमर्षि योगाभ्यास के लिये गगोत्री आदि से भी ऊपर पर्वत के किस शिखर तक पहुचे वहा एक कुटिया दिखाई गई है। विद्याध्ययन के लिये और प्रचार के लिये किन किन स्थान को पवित्र किया वे सब स्थान दिखाए गए हैं।

यह चित्र के रूप मे महर्षि का सारा जीवन एक पृष्ठ पर है सार्वदेशिक सभा ने बडे परिश्रम से इसको तैयार कराकर तीन रगो मे छापा केवल इसलिये के प्रत्येक के पास पहुच जावे नाम मात्र मूल्य ।।) रखा है।

सार्वदेशिक सभा ने स्वर्ण जयन्ती व आर्य महासम्मेलन के अवसर पर निम्नलिखित पुस्तके प्रकाशित करके बहुत बडी आवश्यकता और प्रबल माग की पूर्ति की है।

१–सार्वदेशिक सभा का संक्षिप्त इतिहास–

इस इतिहास मे सभा के स्थापना काल से अब तक की प्रमुख २ प्रगतियो का वर्णन अंकित है जो आर्य समाज के इतिहास को आधार बनाने वाली है। मूल्य)७५ नए पैसे

२–सार्वदेशिक सभा के निर्णय–

सभा ने स्थापना काल से लेकर अब तक जो नीति सम्बन्धी आवश्यक निर्णय किए हैं व सब आर्य जगत् के मार्ग प्रदर्शन के लिए इस पुस्तक मे सग्रहीत कर दिए गए है। मूल्य)४५ नए पैसे

३–आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव।

इस समय तक आर्य महासम्मेलन के जो अधिवेशन हो चुके है। इस पुस्तक मे प्रारम्भ से लेकर आठवे महासम्मेलन तक के निश्चय अंकित है सम्मेलन के स्थान, तिथि, तथा प्रधान आदि के उल्लेख के साथ २ प्रत्येक सम्मेलन के होने के कारणो पर भी प्रकाश डाला गया है। मूल्य ६० नए पैसे

४–आर्य महासम्मेलनों के अध्यक्षीय भाषण–

इस सग्रह मे समस्त महासम्मेलनो के अध्यक्षो के भाषण दिए गए हैं। प्रत्येक अध्यक्ष का चित्र तथा जीवन परिचय भी दिया गया है। पुस्तक मे लगभग २०० पृष्ठ हैं। मूल्य १) रुपया

५–आर्यसमाज का परिचय–

इस पुस्तक मे आर्यसमाज तथा उसमे सम्बद्ध आवश्यक सामग्री के साथ २ अनेक अलभ्य चित्र भी दिए गए हैं इस पुस्तक को पढने पर आर्य समाज विषयक कोई जानकारी शेष नही रह जाती। यह भेट करने योग्य अलभ्य प्रकाशन है। समस्त पुस्तक आर्ट पेपर पर छपी है। मूल्य १) रुपया

६ पाथ आफ परफेक्शन (अंग्रेजी)–

यह पुस्तक चरित्र निर्माण में परम सहायक हो सकती है। इसके लेखक हैं सभाके भूतपूर्व प्रधान श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट। मूल्य)४० न पै

इन सब प्रकाशनो की छपाई,सफाई गेटअप बडे भव्य और चिताकर्षक है।

मिलने का पता--सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली७मे मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसाद जी पाठक मुद्रक और प्रकाशक

* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



स्व० प० विनायकराव जी विद्यालंकार बार एट ला

वार्षिक मूल्य ६) सृष्टि सम्वत दयानन्दाब्द विदेश से वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ३८ १९७२९४९०६३ १३८ अक्टूबर १९६२ (आश्विन २०१९) अंक १८

—: विषय सूची :—

❀ सम्पादक

कालीचरण आर्य सभा मन्त्री

❀ सहायक सम्पादक

रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ कार्यालय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दयानन्द भवन नई दिल्ली

फोन २४७७१

❀ प्रकाशक व मुद्रक ❀ मुद्रक

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली-७ मे मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसाद पाठक मुद्रक और प्रकाशक

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी के धर्मोपदेश

देव द्विज गुरु प्राज्ञ पूजनं शौचमार्जवम् ।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च, शारीरं तप उच्यते ॥ गीता १७, ७४ ॥

उपदेश

तप की महिमा प्राचीन ऋषियो ने अपने शास्त्रो मे स्थान २ पर वर्णन की है, वेदो की व्याख्या करते हुए, एकान्त मे बैठे हुए, अपने शिष्यो को ब्रह्माण्ड का रहस्य बताते हुए वे यही समझते थे कि सृष्टि की उत्पत्ति मे भी तप का ही बडा हाथ है। तप कहते हैं असीम दृढता को और उसी परमात्मा के गुण का परिणाम रूप प्रकृति का रूप में आना है।

सारा ब्रह्माण्ड ही तप के सहारे खडा है। महामुनि पतञ्जलि ने अपने योग शास्त्र मे पहली क्रिया योग का वर्णन करते हुए तप की प्रधानता बतलाई है। अत जीवनोद्देश्य रूपी लक्ष्य के मार्ग पर चलने के अभिलाषियो के लिए आवश्यक है कि वे सब से पहले तप की असलियत को समझें। ज्ञात रहे कि वेद धर्म के अनुयायी सदैव से प्रत्येक कर्त्तव्य को तीन भागों में बाटते रहे हैं अर्थात् मन, वाणी और कर्म सम्बन्धी।

कृष्ण भगवान् ने सब से पहले शारीरिक तप का वर्णन किया है और वह इसलिए कि अभ्यास के लिए शारीरिक तप सब से सुगम है। सब से पहले बुद्धिमान् द्विजो की पूजा लिखी है और वह इसलिए कि द्विज दो जन्मो के कारण सर्व साधारण से बुद्धिमान् होगे। गुरु की पूजा और फिर अन्य विद्वानो की पूजा। इन तीन प्रकार के मननशील विद्वानों की पूजा का अभ्यास इसलिए करना चाहिए ताकि जहा एक तरफ अभिमान का नाश हो वहा दूसरी तरफ ऐसे तपस्वी मनुष्यो के सत्सग से अपने में अच्छे गुण आवे। यही कारण था कि गुरु की शारीरिक सेवा को विद्यार्थी के कर्त्तव्य कर्मो में से बहुत बडा कर्त्तव्य कर्म बतलाया जाता था। अपने गुरु श्री स्वामी विरजानन्द जी के स्नान के लिए महान् दयानन्द का स्वय प्रेम से यमुना जल भरकर लाना, इसी नियमपर आश्रित था। अपने शरीर से दूसरे की सेवा करना, यह शारीरिक तप का आरम्भ है। जो सेवक नही बना वह कभी प्रभु नहीं बन सकता। इसका स्पष्ट परिणाम यह होगा कि शारीरिक पवित्रता स्वयमेव मनुष्य मे पहुँच जायगी। पवित्र मनुष्यो की सगति में रह कर मनुष्यों को पवित्र रहने के लिए किसी मौखिक उपदेश लेने की आवश्यकता नही रहती। जब सत्सग में रह कर मनुष्य के अन्दर शारीरिक पवित्रता का गुण आ जाता है तब उसके लिए अपने अगो को सरल सीधा रखना कठिन नही रहता। परन्तु प्रश्न हो सकता है कि अगो को सरल सीधा रखने का जीवन के उद्देश्य से क्या सम्बन्ध है ? इसके समझने के लिए अहिसा व्रत को धारण करने की आवश्यकता है। बाकेपन से रहने का धर्म से बडा भारी वैर है। जो अकड कर चलता है और दिखावे का आदी है वह किसी न किसी प्राणी का दिल दुखाए बिना नही रह सकता। अहिसा का पालन कठिन है जब तक मनुष्य वीर्य रक्षा नहीं कर सकता। (शेष पृष्ठ ४६ पर)

सम्पादकीय

आर्य और द्रविड़ की भूल भुलैया

राष्ट्रीय एकता कौंसिल की क्षेत्रीय परिषद ने द्रविड मुन्नेतरम कजगम के 'पृथकत्व' के आन्दोलन के सम्बन्ध में दो तीन दिन तक मदरास मे प्रतिष्ठित व्यक्तियो के विचार सुने। मदरास राज्य के वित्त और शिक्षामन्त्री श्री भक्त वत्सलम ने सरकार और कांग्रेस दोनों का दृष्टिकोण परिषद के समक्ष प्रस्तुत किया। कजगम के नेताओ का दृष्टिकोण ज्ञात न हो सका क्योंकि गत जुलाई के उपद्रवो के सम्बन्ध में कई नेता इस समय जेल में बन्द हैं। आशा है बाद में देहली में उन्हे आमन्त्रित करके उनके विचार सुने जायेगे। यह बात ध्यान देने योग्य है कि द्रविड कजगम और तमिलनाद नेशनल पार्टी के प्रवक्ता कमेटी के समक्ष प्रस्तुत न हुए। स्वतन्त्र पार्टी के नेता श्री राजगोपालाचार्य ने भी कमेटी के समक्ष अपने विचार रखने से इन्कार कर दिया था परन्तु मदरास के राज्यपाल ने जो भोज दिया था उसमे राजा जी सम्मिलित हुए थे और अनौपचारिक रूप से उन्होंने अपने विचार प्रकट कर दिये थे। उडीसा के मुख्य मन्त्री ने परिषद के सदस्यों को बता दिया था कि राजा जी पृथक् करण के पक्ष में नही हैं और स्वय द्रविड मुन्नेतर कजगम का भी इस विषय में विशेष आग्रह नही है। परिषद ने पत्रकारो के विचार भी सुने।

'पृथकत्व' की मांग के विविध कारण बताए गये और इस मांग से निपटने के उपाय भी भिन्न २ बताए गये। एक कारण यह बताया गया कि 'भाषावाद' का उग्र स्वरूप ही इस आन्दोलन की जड़ है और भाषायी राज्यों का निर्माण एक घातक भूल थी। हिन्दी की तथाकथित बाध्यता भी एक कारण बताया गया था। उत्तर और दक्षिण के वित्तीय विकास मे और अन्तर भी एक कारण के रूप में प्रस्तुत किया गया।

परन्तु मुख्यतम युक्ति यह दी गई कि 'आर्य' और 'द्रविड' दो पृथक् २ भिन्न २ वर्ग हैं और एक मात्र स्वतन्त्र तामिलनाड मे ही दक्षिण की प्रजा अपने ऐतिहासिक भाग्य का निर्णय करने में समर्थ हो सकती है।

इस सम्बन्ध में हिन्दुस्तान टाइम्स के विशेष सम्वाददाता के विचार महत्व पूर्ण हैं (हिन्दुस्तान टाइम्स १२-९-६२ पृ० ७) वह लिखता है --

"भारतीय महाद्वीप मे निवास करने वाले लोगो का मानवीय उत्पत्ति से सम्बद्ध मूल निवास स्थान कोई भी क्यो न हो, यह ऐतिहासिक तथ्य है कि शताब्दियो तक भारत वर्ष में बहुत सी नस्लें आती और एक दूसरे में समाती रही हैं। अत कोई भी व्यक्ति निश्चय पूर्वक अपने को न आर्य नस्लों का कह सकता है और न द्रविड नस्ल का। मदरास के भूतपूर्व चीफ जस्टिस श्री सी० वी० राजा मनार ने इस 'आर्य-द्रविड' की थ्योरी को कपोल कल्पना बताया और कहा कि इसका भाडा फोड होना चाहिए। हिटलर के समान नाजियो और फासिस्टों के हथकण्डो को अपनाते और अहिंसा में आस्था न रखते हुए द्रविड मुन्नेतरम कजगम का विश्वास है कि लोगो में विश्वास उत्पन्न करने के लिए एक झूठ को सौ बार कहा जाय। इस थ्योरी के आधार पर जातीय विद्वेष फैलाने में द्रविड मुन्नेतरम को सुविधा रहती है अत इस थ्योरी की निस्सारता जितनी जल्दी स्पष्ट की जाय उतनी ही देश के लिए हितकर है।"

वस्तुत आर्य का नस्ल से कोई सम्बन्ध नहीं है। गुण कर्मानुसार व्यक्ति आर्य और अनार्य होते हैं श्रेष्ठ गुण और कर्म वाले व्यक्ति आर्य और अश्रेष्ठ गुणकर्म वालेव्यक्ति अनार्य कहलातेहैं। आर्य और अनार्य ससार के समस्त व्यक्तियों में विद्यमान

होते हैं भले ही वे किसी धर्म के या तथाकथित नस्ल के ही क्यों न हो।

पराधीनता के काल में भारतीयों को एक दूसरे से पृथक् रखने के कुत्सित उद्देश्य से हमारे इतिहास में यह बात अंकित की गई कि इस देश के मूल निवासी द्रविड लोग थे। आर्यों ने बाहर से आकर उन्हें सताया और उनसे युद्ध करके देश में अपना प्रभुत्व जमाया। जब कि तथ्य यह था कि आर्य जन ही इस देश के मूल निवासी थे। वह कहीं बाहर से न आये थे।

यह बात अभी तक हमारे बच्चो के गले उतारी जा रही है। भारत सरकार भी इस विषय में उदासीन प्रतीत होती है। इतना ही नही उसके वरिष्ठ अधिकारी जब तब सार्वजनिक आयोजनों में भी यही बात दुहराते रहते है। अभी हाल मे श्रीयुत हुमायू कबीर ने एक सार्वजनिक भाषण में इस खोज का प्रकाश किया कि द्रविड लोगो का सम्बन्ध मिस्र की पुरानी संस्कृति के साथ रहा है। उनके इस प्रकार के उद्गारो पर सहयोगी हिन्दुस्तान टाइम्स ने उचित रीत्या आपत्ति की है।

भारत सरकार और उसके अधिकारियो को अपने उद्गारो के प्रकटीकरण मे विशेष सावधानता बर्तनी चाहिए। इसी मे देश का कल्याण है। भारत के इतिहास के पुनर्लेखन मे सबसे पहले इस विष वृक्ष पर कुठाराघात करना आवश्यक है। 'आर्य और द्रविड'की विभीषिका को निःशेष करनेका यही उचित और प्रथम पग है।

देशवासियोंको आर्यसमाजके प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द को धन्यवाद देना चाहिये जिन्होने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में आर्य जन बाहर से आये थे इस कपोल कल्पना पर प्रहार करके भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता की दिशा मे सर्व प्रथम उत्तम पाठ पढ़ाया था। — रघुनाथ प्रसाद पाठक

सम्पादकीय टिप्पणियां—

अंग्रेज पुनर्जन्म में विश्वास करने लगे हैं

पिछले दिनो ज्यॉफरी गोरर नामक एक अंग्रेज विद्वान् ने ५००० प्रश्नों की एक प्रश्नावली के माध्यम से अंग्रेज के धर्म्म के विषय में छानबीन की। उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि अधिकाश प्रजा पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखती है।

लन्दन के सडे औब्जर्वर में प्रकाशित अपनी रिपोर्ट मे उन्होने लिखा —

The prevalence of this belief was the most surprising single piece of information which came out of my research on aspect of English character

अंग्रेजी चरित्र के विषय में जो सर्वाधिक आश्चर्यजनक जानकारी मुझे प्राप्त हुई है वह है उनमें पुनर्जन्म के विश्वास की विद्यमानता। उक्त विद्वान के आश्चर्य का कारण यह है कि यह धार्मिक विश्वास पौर्वात्य है पाश्चात्य नहीं है क्योंकि युरोप के किसी भी मत (धर्म्म) में इस सिद्धान्त को मान्यता प्राप्त नही है।

उक्त विद्वान की मान्यता है कि ब्रिटेन में फलित ज्योतिष के अनेक मासिक पत्र प्रकाशित होते हैं। उनके कारण वहा के निवासियों की श्रद्धा इस सिद्धान्त के प्रति आकृष्ट हो गई है। परन्तु वह यह जानते प्रतीत नहीं होते कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त न केवल पूर्व ही अपितु पश्चिम में भी प्रचलित रह चुका है जिसका प्रचार पाइथागोरस प्लेटो और प्लोटिनस प्रभृति तत्त्व वेत्ताओं ने किया था। ईसाई पादरियो द्वारा प्रचारित एक जन्म वाद की तुलना मे पुनर्जन्म का अत्यन्त उपयुक्त और न्याय्य सिद्धान्त यदि पाश्चात्य जनों में संस्कार रूप में अब भी विद्यमान हो तो इसमें अचरज की कोई बात नही है।

पाइथा गोरस ने यह सिद्धान्त मिश्र वासियों से प्राप्त किया था। उसकी मान्यता थी कि आत्माएं मरण धर्मा नही होती। हा वे आकाश में एक ओर से दूसरी ओर विचरती हैं और जिस समय कोई शरीर प्राप्त हो जाता है तो फिर उसमें प्रवेश करती

हैं। जैसे जब एक आत्मा मनुष्य के शरीर से पृथक् हो जाती है और उसका घोड़े, बैल, गधे, चूहे अथवा पक्षी और मछली आदि प्राणियो के शरीर से यथा कर्म मेल हो जावे तो फिर वह उनमें प्रवेश कर जाती हैं। इसी प्रकार मनुष्य शरीर के सम्बन्ध बिना किसी प्रकार के अन्तर के हैं अर्थात् जैसे ही आत्मा किसी प्राणी के शरीर से निकलती है वह मनुष्य अथवा पशु आदि के शरीर में प्रवेश करती है। यही कारण था कि पाइथा गोरस पशु पक्षियो को खाने के सम्बन्ध में बडा कठोर व्यवहार करता था। उसका विचार था कि निर्दोष पशु पक्षियो को मारने का उतना ही पाप है जितना मनुष्य वध का क्योंकि समस्त जीवात्मा एक जैसे और सब प्राणियो में मरकर रूपान्तर होने वाले हैं।

इस प्रकार पुनर्जन्म का सिद्धान्त भूत दया और शाकाहार का पोषक है।

पाश्चात्य जगत में यह सिद्धान्त प्रचलित रह चुका है। अत ईसा पर ईमान न लाने वाले अधिकांश व्यक्ति शाकाहारी थे और उनका पुनर्जन्म में विश्वास था। ईसाई पादरियों ने अविश्वासी शाकाहारियो पर अत्याचार करने के साथ २ उनके पुनर्जन्म के सिद्धान्त का डटकर खण्डन और विरोध किया। इस प्रकार पुनर्जन्म के सिद्धान्त के खण्डन का यह भी एक प्रबल कारण था।

हर्ष है कि पाश्चात्य जगत धीरे २ ईसाई पादरियो द्वारा फैलाए गए भ्रमजाल के बन्धनो को तोडकर पुनर्जन्म के उदात्त के सिद्धात की वरिष्ठता और जीव-दया की गरिमा को अनुभव करके उसे अपनाने की दिशा में अग्रसर होने लगा है।

प्रशंसनीय कार्य

पिम्परी कालोनी पूना में बम्बई पूना रोड पर गोमांस की एक दूकान खोली गई। आर्यसमाज पिम्परी ने इस दूकान के खोले जाने का विरोध किया और सरकार को सूचित किया कि इस क्षेत्र में हिन्दुओं की घनी बस्ती है अत इस दूकान से उनकी पवित्र भावनाओं को ठेस लगती है और लिखा कि इस दूकान को यहा से हटाया जाय। इस दूकान के न हटने पर ९ ९-६२से आर्यसमाज ने सीधी कार्यवाही के करने का भी निश्चय किया। इसके फलस्वरूप सरपच महोदय ने लाइसेन्स रद्द कर दिया और दूकान बन्द हो गई।

वस्तुत आर्य समाज पिम्परी का यह कार्य ठोस और प्रशसनीय है।

श्रीयुत सेन का मत देश की भावनाओं के विरुद्ध

गोहत्या निरोध समिति के मन्त्री लाला हरदेव सहाय ने बगाल के मुख्यमन्त्रीद्वारा हिन्दुओं को गोमाँस खाने की प्रेरणा देने वाले वक्तव्य के विरोध में वक्तव्य देते हुए कहा है कि बगाल के मुख्य मन्त्री श्री पी० सी० सेन ने कलकत्ता कृषि सोसाइटी की वार्षिक बैठक में भाषण देते हुए गोवश की सख्या अधिक बतलाते हुए अन्न समस्या का समाधान गोवश का मास खाना बताया है।

केन्द्रीय सरकार की गोरक्षण गोसम्वर्धन कमेटी १९४८ ने पशुवध का निषेध किया है। भोजन की समस्या पशु हत्या से पूरी नहीं हो सकती। प्रथम पंचवर्षीय योजना की रूप रेखा रिपोर्ट जुलाई १९५१ के पृष्ठ १११ पर साफ लिखा है कि "आज का पशुवध अनुपयोगी और फालतू पशुओं की सख्या पर कोई प्रभाव नहीं रखता। अनुपयोगी पशुओं कावध रचनात्मक समाधान नहीं, अन्न और गोमास उत्पादन की दृष्टि से भी अन्न का उत्पादन मास की अपेक्षा कई गुणा अधिक होता है। एक एकड़ भूमि मे गोमास १६८ पौंड तथा गेहू-जौ २००० पौंड' मक्का ४००० पौंड तक उत्पन्न होता है। अत खाद्य समस्या का समाधान करने के लिए माँस का उत्पादन बढ़ना समस्या का समाधान नहीं।

उन्होंने कहा कि १५ नवम्बर १९५५को बड़ौदा

में भाषण देते हुए प्रधान मन्त्री प० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि "जहाँ तक देश के पशुधन के निरन्तर ह्रास का प्रश्न है इस मामले में कलकत्ता और बम्बई सबसे बडे पातकी शहर हैं।" क्या सेन साहब नेहरू जी की इस चिन्ता का कुछ ख्याल करेंगे ?

श्री सेन साहब ने यह अवैधानिक और लाखों लोगों की भावना को ठेस पहुचाने वाला निराधार वक्तव्य दिया है जो गलत है।

भूचालों की शृङ्खला क्यों?

पिछले कुछ सप्ताहों मे ससार के विभिन्न भागों म भूचाल आए हैं। अगस्त के आरम्भ मे भूचाल ने कोलम्बिया को हिलाया। इटली मे कई दिन तक भूचाल के धक्कों की अनुभूति हुई। जापान के एक द्वीप मे भारी भूचाल आया जिसके धक्के कई सप्ताह पर्यन्त भूमि को हिलाते रहे। साल्टलेक और लास ऐंजिल के नगरों में प्रच ड भूचाल अकित किए गए।

और अब पश्चिमी ईरान की भयावह दुर्घटना हमारे समक्ष हैं। लोगों की याद में इतना विनाशकारी भूकम्प अबतक नहीं आया है। भूकम्प के पीडितों के प्रति हमारी हार्दिक सहानुभूति है।

भूकम्पों की इस शृङ्खला को देखकर भोले भाले लोगों का ध्यान गत फरवरी के 'अष्टग्रह योग' की ओर चला जाना स्वाभाविक है। परन्तु इनका कारण अष्टग्रह योग नहीं अपितु रूस और अमेरिका द्वारा अणुबमों का परीक्षण बताया जा रहा है जो उन्होंने भूमि के भीतर किए हैं, और जिनका प्रभाव अब देख पड़ रहा है। आणविक विस्फोटों से पृथ्वी के पर्ते विशेषत ज्वाला मुखी पर्वतों के क्षेत्रों में कम्पन्न उत्पन्न होती हैं जो उस समय दब कर बाद में भयकर कम्पन का रूप ले लेती है। १९५९ में फ्रॉस ने सहारा के रेगिस्तान मे अणुबम का प्रथम परीक्षण किया था। इस परीक्षण के तत्काल पश्चात अफ्रीका के तट के निकट अगादीर में भयकर भूचाल आ गया था। कुछ लोगों का विश्वास है कि यदि अणुबम का विस्फोट न हुआ होता तो अगादीर के निकट समुद्र के भीतर के ज्वाला मुखी का विस्फोट लगभग १०० वर्ष बाद होता।

हिन्दी वाले क्या करें, क्या न करें !

श्री कृष्ण मेनन ने हिन्दी दिवस के अवसर पर दिल्ली मे जो भाषण दिया उसकी सराहना करनी पडेगी। आज कम लोग ऐसे निकलेंगे जो सरकारी तन्त्र के प्रमुख पुरजे होते हुए भी हिन्दी के मच पर उसके समर्थन में जोरदारी से कुछ कह सकें। खास तौर से अहिन्दी भाषा-भाषी न जाने क्यों आज कल बेहद झिझके हुए हैं ? परन्तु प्रतिरक्षा म त्री हमारे साहसी आदमी हैं। सही बात को खरेपन से कहने में वह चूकते नहीं उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि हिन्दी को राज-भाषा बनाने का निर्णय सारे देश का निर्णय था। उससे पीछे हटना संविधान की अवज्ञा करना है। मैं अगर हिन्दी नहीं जानता तो इसका मतलब यह नहीं है कि मैं उसका विरोध करू । मैं बहुत सी झंझटों में फ सा रहता हूँ। देश विदेश घूमता रहता हूँ। मुझे हिन्दी सीखने की फुरसत नहीं मिलती पर मुझे हिन्दी से अपने देश की राष्ट्र भाषा से प्रेम है। मैं चाहता हू कि सभी भाषाओं की लिपि देवनागरी हो जाए, इससे राष्ट्रीय एकता को बड़ा बल मिलेगा।

इसी समारोह में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के श्री भालचन्द्र आप्टे भी बोले थे। उनके भाषण का सारांश यह था कि दक्षिण भारत के लोग इस समय हिन्दी के अनुकूल नहीं हैं। उत्तर भारत में जब हिन्दी की आवाज उठती है तो उससे दक्षिण में चिन्ता और शंका फैलने लगती है। दक्षिण भारत हिन्दी सभा

इस कशमकश में अपने को नहीं डाले।

श्री आप्टे केकहने का मतलब हुआ भाई, हमारी हिम्मत नहीं है। हमें कुछ नहीं सूझ रहा। हिन्दी का काम करते हैं इसके माने यह नहीं कि कोई बड़ा सिरदर्द मोल ले लें। अपना पढाने-लिखाने का काम है। राजी खुशी से चलता जाएगा तो करते जाए गे। अब आप देखिए यह राय है हिन्दी के एक प्रमुख प्रचारक की और ऊपर राय है बिल्कुल हिन्दी न जानने वाले श्री कृष्ण मेनन की। दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर है या नहीं ? मेनन की बात सिद्धान्त की है लेकिन आप्टे की बात का सिद्धाँत से कोई सरोकार नहीं। मेनन की बात एक राष्ट्र भक्त सिपाही जैसी है और आप्टे की बात लाभहानि देखने वाले एक व्यापारी जैसी। पहले के स्वर में निश्चय है, प्रेरणा है और दूसरे के स्वर में किं कर्त्तव्यविमूढ़ता है और निराशा।

परन्तु अकेले श्री आप्टे को इस सबके लिये दोष देना उचित नहीं होगा। आज परिस्थिति ही ऐसी है जो जितनी जोर से बोलता है' जो जितना ऊ चा मुक्का तानता है, जो जितना अधिक उपद्रवी है उससे सभी डरते है। वह अपनी बात साहूकार समाज और सरकार तीनों से मनवा ले जाता हैं। आज के युग में समाज विरोधी तत्व ऐसे बढ़े हैं कि भले आदमी इन सबसे घबराते है और अपनी इज्जत बचाकर रहते हैं दक्षिण में आज यही हो रहा है। वहा कुछ ऐसे तत्व उभर आए हैं जो संविधान को नहीं मानते और संस्कृति में अपने को भिन्न बताते हैं। राष्ट्र की भावनात्मक एकता में उनका कतई विश्वास नहीं। सबके प्रति अनादर, सबके प्रति अनास्था और सबके प्रति विद्रोह ही उनका मूलमत्र है। वे न राष्ट्र के प्रेमी हैं, न राष्ट्र भाषा के। वे न राज को चलने देना चाहते हैं न राजभाषा को। ऐसे लोग सबकी इज्जत उतारने पर उतारू है। हमारी सरकार ही जब इनसे घबराकर अपने पूर्व निश्चय से डांवाडोल होने लगी है तो बेचारे हिन्दी के सरल सेवक क्या करें ?

सचमुच हिन्दी वालों के सन्मुख आज बड़ी विषम परिस्थिति है। एक ओर दक्षिण भारत के कुछ लोगों का यह हाल है और दूसरी ओर राजेन्द्रबाबू अपने हिन्दी दिवस के सन्देश में कहते हैं कि हिन्दी वालों को धैर्य और सयम से काम लेना चाहिये और हिन्दी का प्रश्न अहिंदी भाषियों को सौंप देना चाहिए। क्या यह वैसी ही बात नहीं कि एक व्यक्ति ने अपना लड़का किसी को गोद दे दिया। ख्याल था कि लड़का वहाँ जाकर सुख से रहेगा। पढ़ेगा-लिखेगा और एक दिन बड़ा आदमी बनेगा पर इसके विपरीत जब उस लड़के का जीवन ही सकट में दिखाई दे तो असली माँ-बाप की क्या हालत होगी, यह सन्तान वाले अच्छी तरह जान सकते हैं।

(हिन्दुस्तान)

बलिदान जयन्ती

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने ७ से १४ अक्टूबर ६२ तक अम्बाला छावनी में बलिदान जयन्ती मनाने का निश्चय किया है। उक्त सभा ने निम्न लिखित कार्यों की पूर्ति के लिए ६ लाख रुपए की अपील की है -

१—च डी गढ़ में शहीदों के स्मारक लेखराम भवन का निर्माण

२—ग्राम-प्रचार (३) हिन्दी व अन्य प्रदेशीय भाषाओंमें सस्ते साहित्य का प्रकाशन (४) ईसाई प्रचार विरोध (५) अनुसधान पूर्ण वैदिक साहित्य का प्रकाशन। सभा के अधिकारी चाहते हैं कि यह राशि शीघ्र एकत्र हो जाय। धन भेजने का पता मन्त्री बलिदान जयन्ती समारोह समिति अम्बाला छावनी वा मन्त्री ;आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब गुरुदत्तभवन

होशियार पुर रोड, जालंधर है।

हम इस आयोजन की हृदय से सफलता चाहते हैं। इन कार्यों में श्रीयुत प० लेखराम जी आदिशहीदों के अप्राप्त ग्रन्थों का प्रकाशन और आवश्यकतानुसार शहीदों के परिवारों की आर्थिक सहायता भी सम्मिलित होनी चाहिए। साथ ही शहीदों के संक्षिप्त परिचय भी पुस्तक रूप मे छपना चाहिए।

हीरक जयन्ती

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश दिसम्बर ६२ के अन्तिम सप्ताह में अपनी हीरक जयन्ती मना रही है। उक्त सभा की स्थापना १८८६ में हुई थी। इसकी तय्यारियाँ जोर शोर से आरम्भ हो गई हैं। हम हृदय से इसकी सफलता की कामना करते हैं। इस अवसर पर ठोस कार्य की जो योजनाऐं बने उनमें समस्त प्रान्तके उन आर्यो के परिचय की पुस्तक का प्रकाशन भी होना चाहिए जिन्होंने प्रान्त मे आर्य समाज को एक शक्ति बनाने मे योग दिया होभलेही वह कितनेही छोटे स्तर के व्यक्ति क्यों न रहे हों।

चांदनी चौक की हिंदी

श्रीयुत् ओ३म् प्रकाश अम्वाला से लिखते हैं -

"सूचना मन्त्री श्री गोपाल रेड्डी ने अभी हाल में 'चाँदनी चौक' की हिन्दी का समर्थन किया था। इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि भारत के अन्य भागों के लोग हिन्दी पढ़ना क्यों नहीं चाहते यदि हिन्दी के निर्माण में एक मात्र चाँदनी चौक के फेरी वालों का हाथ रहना है और कलकत्ता, मद्रास, त्रिवेन्द्रम और पूना के लोगों को राजधानी के लोगों की बातचीत की आदतों का अनुकरण करना है तब राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रसार और उद्धार हो चुका।

राष्ट्र भाषा के कार्यों की स्पष्टतया व्याख्या हो जानी चाहिए। जिन लोगों की मातृभाषा हिन्दी से भिन्न है उन्हें न्यूनाधिक रूप में हिन्दी सीखनी ही है। तमिल नाड का निवासी न केवल चादनी चौक के फेरी वालों से ही अपितु बगालियों और आँध्र वासियों से बातचीत करते समय हिन्दी का प्रयोग करेगा। अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार में देहली से बाहर इसका अधिक प्रयोग होगा। तामिल, कन्नड, मलयालम, उड़िया, बगला, तिलुगू भाषा-भाषी लोगों के लिए चाँदनी चौक जाने का कभी अवसर प्राप्त न होगा, व्यवहार और पारस्परिक सम्पर्क के लिए इसी भाषा (हिन्दी) पर निर्भर रहना होगा। हमें हिन्दी को उन लोगों के लिए सरल बनाना है जिहें कर्त्तव्य वा आवश्यकता के रूप मे इसे पढना हैं न कि चाँदनी चौक के निवासियों के लिये।

जिसे हम विशुद्ध हिन्दी कहते हैं और जो श्री युत् गोपाल रेडी की चाँदनी चौक की हिन्दी से भिन्न हैं उसमें एक ओर तो वे तत्व विद्यमान है जो भारतीय भाषाओं के आकार प्रकार की शक्ति को सुरक्षित रखते और आधुनिक एवं प्राचीन भारत के मध्य कडी का काम करते हैं और दूसरी ओर उत्तर को दक्षिण से मिलाते है। भारत की राष्ट्र भाषा की मौलिक शब्दावली की सरकारी सूची में किस शब्द को सम्मिलित करना उपयुक्त होता इसका निर्णाय शब्द विशेष के प्रचलन की सीमा समय एव स्थान की दृष्टि से करना होगा।

श्री जगनन्दनलाल जी

श्रीयुत बाबू जगनन्दनलाल जी ऐडवोकेट हाईकोट प्रयाग २३ सितम्बर को हार्ट फेल हो जाने से हम सबसे सदैव के लिए वियुक्त हो गए। १६ सितम्बर को दिल्ली में सार्वदेशिक सभा की अन्तरग बैठक थी। बाबू जगनन्दनलाल जी उसमें सम्मिलित हुए थे। किसी को क्या पता था कि उनका अन्त इतना आकस्मिक और शीघ्र हो

जायगा। वह सभा मे कई वर्षों से उत्तर प्रदेश की सभा के एक प्रतिनिधि सदस्य थे और अन्तरंग सदस्य भी रहे। सभा की बैठकों में उनकी उपस्थिति से बड़ा जीवन रहता था। बड़ी मृदु और हास्य प्रकृति के सज्जन थे। सूझ बूझ भी अच्छी थी।

वह उपर्युक्त अन्तरंग बैठक मे कुछ देर मे उपस्थित हुए थे। दिल्ली मे अपने किसी निजी कार्य से गए हुए थे। बाहर से लौटने पर सभा के कार्य-कर्ताओ से द्वार पर पूछा कि कितनी कार्यवाही हो चुकी है। जब के कहा गया कि अभी तक शोक प्रस्ताव पारित हुए हैं। कहने लगे अरे, मेरा शोक प्रस्ताव भी पारित कर देते। ' बात हास्य की थी परन्तु जब यह स्मरण हो आती है तो विस्मय जनक दुःख हुए बिना नही रहता। अब उन जैसी भव्य मूर्ति के दर्शन दुर्लभ ही हो जायगे।

हम समस्त आर्य जगत और सार्वदेशिक परिवार की ओर से उनके परिजनो के प्रति हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते हुए परमात्मा से दिवगत आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना करते हैं।

श्री आचार्य नरदेव जी

श्रीयुत आचार्य नरदेव जी के नाम के साथ 'स्वर्गीय' शब्द लगाते हुए बड़ा दुःख होता है। २४-९-६२ को ८४ वर्ष की अवस्था मे अपने महाविद्यालय ज्वालापुर (सहारनपुर) मे उनका निधन हुआ। वह टाईफाइड से पीड़ित थे।

आचार्य जी हैदराबाद राज्य के निवासी थे। विद्यार्थी अवस्था मे ही उत्तर भारत में आ गये थे और जीवन पर्यन्त यही के बने रहे। उन्होने यही आर्य समाज की सेवा का व्रत लिया। जीवन पर्यन्त आर्य समाज की सक्रिय सेवा में संलग्न रहे और अपनी विद्वत्ता एव कार्य से आर्यसमाज की शोभा बने रहे।

गुरुकुल कागड़ी, महाविद्यालय ज्वालापुर और कांग्रेस उनकी मुख्यतम प्रगतियो के केन्द्र रहे। स्वतन्त्रता आन्दोलन मे जेल भी गये। कई वर्ष पर्यन्त उत्तर प्रदेश की विधान सभा के सदस्य रहे।

श्रीयुत राव जी आर्य समाज की नई और पुरानी पीढ़ी की शृंखला की भव्य कड़ी थे। उन्होने आर्य समाज का इतिहास लिखा और उनके पुरानी पीढ़ी के आर्यों के सस्मरण बड़े स्फूर्तिदायक रहते थे।

आचार्य जी कलम के धनी थे। प्राय समाचार पत्रो के लिए लिखते ही रहते थे। सार्वदेशिक के ग्राहको को उनके गम्भीर और प्रेरणाप्रद लेख पढ़ने को मिलते रहते थे।

उनका निधन वस्तुत आर्य समाज की गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर की जिसके निर्मातओ मे वह एक थे और देश की एक बहुत बड़ी क्षति है।

परमात्मा दिवगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

श्रीयुत बा० ज्योतिस्वरूप जी

इटावा निवासी श्रीयुत बा० ज्योतिस्वरूप जी का निधन वस्तुत आर्य समाज की बड़ी क्षति है। वह निरन्तर लगभग ३० वर्ष तक सार्वदेशिक सभा के आजीवन सदस्य रहे। वर्षो तक अन्तरंग सदस्य रहे। सभा के पुस्तकालय को उन्होने अपने पुस्तकालय का अच्छा सग्रह दान दिया। वह सभा का बड़ा ध्यान रखते थे और उसकी सेवा के लिए सदैव उद्यत रहते थे।

उनके परिजनो के प्रति इस महान् दुःख में हम हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते और परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि दिवगत आत्मा को सद्गति और उनके परिवार को इस महान् वियोग को धैर्यपूर्वक सहन करने की क्षमता प्रदान करे।

—रघुनाथप्रसाद पाठक

विश्व शान्ति कैसे हो ?

(श्री आचार्य रामानन्दजी शास्त्री)

आज सबसे बडी समस्या राष्ट्र तथा महान् व्यक्तियों के सामने यही है कि कैसे विश्व शान्ति हो। मानव समुदाय को युद्ध की विभीषिका से मुक्त करने के लिये सब सचेष्ट हैं। यह सत्य है कि साथ ही युद्ध की तैयारी भी हो रही हैं इसका कारण परस्पर अविश्वास हैं। मनो वैज्ञानिको का कहना हैं कि जो झगडालू प्रकृतिके आदमी हैं वे भी हृदय से झगडा नही चाहते है किन्तु परिस्थिति ऐसा करने को बाध्य करती हैं। निष्कर्ष यह है कि सब शान्ति चाहते हैं। किन्तु क्या कारण है कि शान्ति हमसे दूर भागतो जा रही है ? बारम्बार मनन करने पर यह सिद्धान्त बनता है कि विचार की भिन्नता ही इसका सबसे बडा हेतु है प्रत्येक व्यक्ति किसी विशेष बिचार से प्रेरित होता रहता है। भौतिक शरीर पर मन का प्रभाव है। अपने मन से ही आदमी अपने को बडा या छोटा बनाता हैं। शतपथ ब्राह्मण का वचन है "यो यत् श्रद्ध स एव स" जिसकी जैसी श्रद्धा है वह वैसा ही है। बाईबिल का वचन ठीक इसी से मिलता जुलता है- As a man thinketh so he becometh मनुष्य जैसा सोचता है वैसा बनता है । नही तो देखा गया है कि एक ही पिता के दो लडके दो विचारों के हुये। मानसिक जगत् अध्यात्मिक जगत' से नियन्त्रित होता हैं। इसीलिये श्री कृष्ण ने गीता में कहा हैं कि—अध्यात्म बिद्या विद्याना वाद प्रवदतामहम्"।

हमें किसी बिचार को सृजन करने के लिये आत्मा में ही उसका बीज बपन करना पडेगा। उसी को सस्कृति या Culture कहते हैं। सस्कृति का सम्बन्ध आत्मा से है। आत्मा में ही जैसा विचार दिया जायेगा आगे वह वैसा ही बनेगा। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने इसीलिये कहा था कि छोटे बच्चों में जो प्रारंभिक ज्ञान का बीज भर दिया जाता है वह वैसाही रहता हैं। हमारे ऋषि और महात्माओं ने धर्म का सृजन एतदर्थ किया कि मानव मात्र के कल्याण की भावना आत्मा मे ही जागृत हो।

महा भारत में भीष्म पितामह कहते हैं—

प्रभवार्थाय भूतानाम्,
धर्म प्रवचन कृतम्।
य स्यात् प्रभव सयुक्त
स धर्म इति निश्चय ॥

अर्थात् प्राणियो की वृद्धि के लिये कल्याण के लिये ही धर्म का प्रवचन किया गया। जिससे कल्याण हो जगत का उत्थान हो वही धर्म है उसी का पालन तुम्हें करना चाहिए।

आगे उसी सम्बन्ध में कहा गया है कि —

अहिंसार्थाय भूनाना, धर्म प्रवचन कृतम्।
य स्यादहिंसा सम्पृक्त स धर्म इति निश्चय ॥

अर्थात् प्राणी मात्र का वध न हो इसलिये धर्म का प्रवचन किया गया। जो दया एव करुणा से समृद्ध विचार है उसे ही धर्म जानो। जो लोग लेनिन का अनुकरण कर अथवा मार्क्स विचार धारा से ओत प्रोत हो यह कहा करते हैं कि Religion is the opium अर्थात धर्म अफीम है उन्हे इससे शिक्षा लेनी चाहिए।

आत्मा की क्रान्ति बहुत बडी क्राति है। बुद्ध, ईसा शकर, दयानन्द, गाधी आदि महान पुरुष कानून से घर को छोडकर मानव सेवा के लिये नहीं निकल पडे थे। उन्होंने मानव समाज को आहत और दुखित देखा, इसलिये उनकी सेवा के लिये निकल पडे। उनके हृदय में मानवता के प्रति करुणा थी - युधिष्ठिर कहते हैं—

गुह्य ब्रह्म तदिद ब्रवीमि
नहि मानुषाच्छ्रेष्ट तरोहि किञ्चिद ॥

बनपर्व अ १७१

अर्थात् मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ नहीं है।

आगे फिर कहा गया हैं कि—

वेद में भक्ति भावना

(डा॰ सूर्यदेव शर्मा सिद्धांत वाचस्पति एम॰ ए॰ डी–लिट॰ अजमेर)

'वेद सब सत्यविद्याओंकी पुस्तकहै''ऐसा अटल विश्वास रखने वाले भी कभी कभी कह देते हैं कि "वेद में अन्य विद्यायें भले ही हों लेकिन भक्ति परक मन्त्र तो हैं ही नहीं। विद्याये दो प्रकार की मानी जाती हैं, परा और अपरा, इनमें से अपरा (सासारिक विद्यायें) तो वेद में है, परा (ब्रह्म विद्या) नहीं है, वह केवल उपनिषदो में अथवा अन्य ग्रन्थों में मिल सकती है।" इसी आधार पर हिन्दी साहित्य के इतिहास में तो "भक्ति काल" ही पृथक् एक युग मान लिया गया। सारांश यह कि वेदो में भक्ति भावना का अभाव ऐसे ही अन्ध भक्तों ने घोषित कर दिया और इन्हीं का अनुकरण पाश्चात्य तथा-कथित वैदिक विद्वानों ने भी किया।

आज हम ऐसे महानुभावों के विचारार्थ ऋग्वेद के मडल ७ के ८९ वे सूक्त के जिसे "वरुण सूक्त" भी कहा जाता है, कुछ मन्त्र यहा केवल उदाहरणार्थ उपस्थित करते हैं जिनसे पता चलेगा कि जो भक्ति भावना सूर और तुलसी, मीरा और कबीर के काव्यों में भी नही मिलेगी उसका मूल तत्व कितने उदात्त शब्दो में अभिव्यक्त किया गया है —

(१ मोषु वरुण मृन्मय गृह राजन्नह गमम्। मृडा सुक्षत्र मृडय ॥

इस मन्त्र में एक भक्त वरुण भगवान से प्रार्थना करता है कि हे राजन वरुण! (अह मृन्मय गृहम् मा उ गमम्) मैं इस मिट्टी के घर में फिर कभी न आऊँ! (मृडा सुक्षत्र मृडय) मुझे सुखी कर एवं

पालयिष्याम्यह भौमम्
ब्रह्म इत्येव चासकृत् ॥

यहा मनुष्य को भौमगत ब्रह्म कहा गया है। इस प्रकार हमारे ऋषि मुनियो ने मानवता की रक्षा की संस्कृति आत्मा में देने का प्रयास किया। लेकिन यूरोपीय दर्शन इस समय डार्विन के विकास वाद से प्रभावित हैं। मार्क्स लेनिन आदि सब डार्विन के विकासवाद से सहमत हैं। डार्विन का सिद्धान्त हैं कि प्रकृति योग्य का चयन करती हैं जिसे Survival of fitttest कहतेहैं। इससिद्धात के अनुसार विश्व में वही रह सकता हैं जो योग्य हैं। वन में वह वृक्ष रहेगा जो दूसरे वृक्ष को दबा कर आगे बढ़े। समुद्र में वही मछली रह सकती है जो और मछलियों को खाकर जीवित रहे। यही सिद्धान्त राष्ट्र पर भी चरितार्थ किया गया कि राष्ट्र वही जीवित रहेगा जो दूसरे राष्ट्र को हड़प ले। "जीवो जीवस्य भोजनम्" को मानव के लिये ही मानव भक्ष्य बनाया गया। अत इस सिद्धान्त को ही हटाना पड़ेगा तभी शान्ति की भावना आयेगी। अब विचारना यह है कि क्या जो सिद्धान्त वृक्ष, लता, पशु, मछलियों के लिये है वही मनुष्य के लिये भी है? पशु का बच्चा जन्म लेते ही घूमने लगता है। मछलिया अण्डों से निकलते ही अपने भोजन की तलाश में घूमने लगती हैं। क्या मनुष्य का बच्चा भी ऐसा ही है। नहीं! मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सम्पूर्ण मानव के साथ उसका अभिन्न सम्बन्ध है। अथवा यों समझा जाय कि सबके साथ इसका अभिन्न सम्बन्ध है। विश्व की सारी वस्तुओं से इसका सम्बन्ध जुटा हुआ है। अत डार्विन विकास वाद के दार्शनिक पहलू को 'मानव' मात्र से हटाकर आत्मा की एकरूपता की शिक्षा लेनी होगी, तब ही शान्ति स्थायी होगी।

यस्तु सर्वाणि भूतानि, आत्मन्येवानु पश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति ॥

(क्रति)

मेरे द्वारा अन्यों को सुखी कराने का आयोजन कर ! तू हमारा भली प्रकार से रक्षक, पालक है। यहा 'मिट्टी का घर' कौनसा है ? यह हमारा शरीर जो पंच तत्वों से बना होने पर भी जिसमें पार्थिवतत्व सब से अधिक है, मिट्टी का घर है। अर्थात्–भक्त चाहता है कि इस पार्थिव शरीर में दुबारा न आना पडे।

"प्रभु जी अब न हमें भटकाओ।
जनम मरण की बन्ध छुड़ाकर अपने पास बुलाओ।।

इसी बात को एक उर्दू के शायर ने कहा है–

"देखली दुनियां तेरी,
अब तुझ से मिलना चाहता।
यहा के झंझट ने मुझे,
काफी परेशा कर दिया।।

इस ससार को, इस शरीर को वेद में "मिट्टी के घर" की सज्ञा दी गई है और इसमें फिर न भेजने की भगवान् से प्रार्थना की गई है, वास्तविक भक्ति की भावना का मूलाधार जो भक्त की अन्त स्थल की इच्छा में सन्निहित रहता है, यहा कैसा सुन्दर उल्लेख है।

(२) यदेमि प्रस्फुरन्निवदृतिर्न ध्मातो अद्रिव। मृडा सुक्षत्र मृडय।।

हे सुक्षत्र ! श्रेष्ठ रक्षक भगवन् ! मैं धोंकनी की तरह ऊपर नीचे झुकता हुआ, उच्चावच योनियों में जाता हुआ तथा पतग की तरह इधर उधर उडता हुआ तग आ गया हूं। अत सुख वर्षक भगवन ! मुझे सुखी कर और इस धोंकनी चक्कर से बचा, तू ही सुख दाता है मैं अन्य किसका आश्रय पकडूं ? "नचो नाच मर्कट की नाई जनम जनम भटकायो। माया मोहि खूबहि नाच नचायो।। इस मत्र में ससार की सारहीनता एव जन्म मरण के बन्धन से छूटने की कितनी प्रबल उत्कठा का दिग्दर्शन कराया गया है।

(३) क्रत्व समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे। मृडा सुक्षत्र मृडय।।

हे शुचे (पवित्रात्मा प्रभो !) मैं दीनता, विवशता नीचता से यज्ञादि शुभ कर्मों के, भक्ति भावों के विपरीत मार्ग पर चला गया, अन्धेरे में भटक गया, हे श्रेष्ठ रक्षक अब तो मार्ग दिखा और मेरा पथ-प्रदर्शन कर मुझे सुख की ओर ले चल। "भटक्यो बहुत, पथ नहिं पायो। अन्धकार में उलटो हिचाल्यो, तेरे ढिग नहिं आयो।।" ससार के विषय भोगों में पड कर जीवात्मा अत में जब मृत्यु को निकट जान-कर होश में आता है, तब पश्चात्ताप करता हुआ भगवान् से उपरोक्त प्रार्थना करता है "अहो। प्रतीप जगमा" कह कर अपने अतीत जीवन पर दृष्टि डालते हुये ग्लानि से भरे हृदय से उपरोक्त भावना व्यक्त करता है।

(४) अपा मध्ये तस्थिवासं तृष्णाविदज्जरितारम्, मृडा सुक्षत्र मृडय।

हे प्रभो। जल के बीच में खडे हुये मुझ भक्त को प्यास सता रही है, मेरी रक्षा करो, हे सुरक्षक। मेरी रक्षा करो।

कबीर जी ने इसी भाव को यों व्यक्त किया है -
पानी में मीन प्यासी, मोहिं देखत आवे हासी।

इस मायामय संसार में मानव की तृष्णा कभी कम नही होती, निरन्तर बढती ही जाती है। राजा भर्तृहरि ने कितना सुन्दर कहा है —

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता।
तपो न तप्त वयमेव तप्ता।।
कालो न यातो वयमेव याता।
तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा।।

हमने भोग नहीं भोगे, भोगों ने हमें भुगता दिया।
हमने तपको नहीं तपा, तपने ही हमें तपा दिया।।
हमने समय को नहीं बिताया, उसने हमें बिता दिया।
तृष्णा बूढी नहीं हुई, हमको ही बूढा बना दिया।।

यह है तृष्णा और प्यास, जो भक्त को सता रही है। इस से बचने का एक मात्र उपाय भगवान की शरण में जाना है। वेद मत्रों में कितनी उदात्त भावनायें हैं।

इसी लिये कहा है —

"वेद ही जग में हमारा "सूर्य" जीवन सार है।
ज्ञान, भक्ति, कर्म का वह ही अक्षय भडार है।।"

इतिहास का पुनर्लेखन

(श्री डा० धर्मपाल जी)

भारत के इतिहास के पुनर्लेखन की माग जोरों से उठ रही है। इसके लिए दो प्रारम्भिक कार्य आवश्यक हैं—जो ऐतिहासिक घटनाए अ कित होने से रह गई हैं उनका वर्णन और घटनाओ का पुनर्लेखन। पहला कार्य यद्यपि कठिन है तथापि विवादास्पद नही है।

अनेक विद्वान् अन्वेषको के अन्वेषणो के परिणाम स्वरूप भारतीय इतिहास के ज्ञान की कमी धीरे २ दूर हो रही है। ऐतिहासिक घटनाओ के पुनर्लेखन का कार्य अधिक कठिन है क्योंकि यह कार्य घटनाओं के मूल तत्त्व से सम्बद्ध होता है। ऐतिहासिक घटनाए जब इतिहासकार के मस्तिष्क की आखों से देखी जाती हैं तब वे विभिन्न स्वरूप धारण कर लेती हैं।

भारतीय इतिहास की वर्तमान ऊहा-पोह में तीन विभिन्न आदर्शों के मध्य सर्वोपरिता का संघर्ष स्पष्ट रूप में देख पडता है। वे तीन आदर्श ये हैं—इस्लाम को गौरव प्रदान करना, हिन्दू धर्म की महिमा स्थापित करना और धर्म निरपेक्षता की विजय प्रदर्शित करना। निर्विवाद ऐतिहासिक तथ्यों की भी भिन्न २ व्याख्याए की जाने लगी हैं।

पाकिस्तान के डा० ऐल० एच० कुरेशी जो इतिहासकारो के प्रमुख प्रतिनिधि हैं इस्लाम को ऊ चा दिखाने के उद्देश्य से अपनी पुस्तक 'ए हिस्ट्री आफ दी फ्रीडम मूवमे ट—स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास (हिन्द पाकिस्तान की स्वतन्त्रता के लिए मुस्लिम सघर्ष की कहानी १७०७–१९४७) की भूमिका में भारत में मुगल-शासन के स्वरूप की निम्न प्रकार आलोचना करते हैं —

"मुसलमानो को इस विश्वास की भूल भुलैयो में डालना अपराध था कि साम्राज्य को बनाए रखना उनका (मुगल सम्राटों) मुख्यतम ध्येय न था। इस भावना को प्रोत्साहित करना और भी अधिक भयावह था कि सहिष्णुता का अभिप्राय यह था कि समस्त धर्म एक मात्र भिन्न २ मार्ग थे और वे सब एक ही परमात्मा के निकट पहुंचाने के लिए समान रूप से अच्छे थे। मुसलमानो के ह्रास का प्रधान कारण यह भी था विशेषत गैर-मुस्लिम सूक्ष्म विचारों का स्वीकार कर लिया जाना। वस्तुत भारत में इस्लाम के इतिहास का यह अत्यन्त अन्धकारमय काल था।"

इस कथन से कि भारत में इस्लाम के इतिहास में मुगल काल अत्यन्त काला था और धार्मिक सहिष्णुता की नीति मुसलमानो के लिए घातक थी भारत में उन बहुत से लोगों को धक्का लगेगा जिनकी मान्यता यह रही है कि अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति ने भारत में मुगल साम्राज्य को दृढ किया जब कि औरगजेब की असहिष्णुता की नीति ने उसे,कमजोर किया था। फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि डा० कुरेशी एक विशेष दृष्टिकोण को प्रस्तुत कर रहे हैं क्योंकि मुगलकाल में भी कट्टर मुसलमानों ने राज्य को मुस्लिम राज्य का रूप देने की और गजेब की नीति का हृदय से समर्थन किया था और अकबर की सहिष्णुता तथा इस्लाम को नष्टरूप दिया जाना उन्हें पसन्द न था।

इलाहाबाद के इतिहासकार दूसरी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं जो धर्म निरपेक्षता की नीति के समर्थन का भरसक यत्न कर रहे हैं। ये इतिहासकार भारतीय इतिहास के उन पहलुओं का दिग्दर्शन कराने का यत्न करते हैं जो उस मिली

जुली संस्कृति के द्योतक हैं जिसमें हिन्दुओं और मुसलमान दोनों का योग रहा है। वे अकबर की उदारनीति, हिन्दू मुस्लिम कला और भवन-निर्माण विद्या में प्रतिबिम्बित मुगल साम्राज्य का गुण गान करते रहते हैं। वे दारा शिकोह की उपलब्धियो पर विस्तार पूर्वक विचार करते हैं जो मुसलमान होते हुए भी संस्कृत साहित्य का विद्वान था। ये इतिहासकार सूफी सन्तों और हिन्दू भक्तो की प्रशंसा करते हैं जिन्होने हिन्दुओं और मुसलमानो में एकता स्थापित करने के प्रयत्न किये थे।

सुनहरा पुल

हिन्दुओं और मुसलमानों को विभाजित करने वाली खाई पर सुनहरापुल बांधने के अपने प्रशंनीय उद्देश्य की सिद्धि के निमित्त वे कभी २ इतिहास की अप्रिय सच्चाइयों को दबाते अथवा उन पर मुलम्मा चढ़ाते वा हिन्दू धर्म के रक्षक मूर्द्धन्य नेताओं की सफलताओं को छोटा करके दिखाते हैं। उदाहरणार्थ डा० आर० पी० त्रिपाठी ने महाराणा प्रताप की उपलब्धियों का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह राष्ट्रनायक के रूप में प्रताप की कृतियों और कीर्ति से मेल नहीं खाता। वह राइज एण्ड फाल आव मुगल साम्राज्य—मुगल-साम्राज्य का उत्थान और पतन नामक अपनी पुस्तक मे महाराणा प्रताप के विषय में लिखते हैं —

"राणा प्रताप की वीरता, स्वतन्त्रता, स्वातन्त्र्य प्रेम, त्याग और कष्ट सहन के लिए उनकी सम्रद्धता ने अनेक आधुनिक लेखको को उनके सम्बन्ध में ऐसी बातें पढ़ने के लिये प्रेरणा दी है जिनका गम्भीर इतिहास से समर्थन नही होता। फारस के कतिपय इतिहासकारों ने जिनमें अबुल फजल भी सम्मिलित हैं वीर प्रताप के विषय में बहुत हल्की बातें लिखी हैं जब कि अन्यो ने अकबर और मानसिंह की भर्त्सना की है।"

साक्षी नहीं है

"वह न तो हिन्दू मुस्लिम प्रश्न था और न हिन्दू धर्म और इस्लाम के मध्य सघर्ष की ही बात थी। वह तो एक मात्र मुगल साम्राज्य और मेवाड़ के राज्य के मध्य तनाव की बात थी। यदि यह बात न होती तो राणा प्रताप अपनी सेना की एक टुकडी को हाकिमखासूर की कमान के अधीन न करते और न अकबर अपनी समस्त सेना को मानसिंह के अधीन करता। जिस भावना से अकबर ने मालवा के बाज बहादुर, गुजरात के मुजफ्फर, बगाल के दाऊद और सिन्ध के मिर्जा गनी बेग को हराया था उसी भावना ने अकबर को राणा प्रताप से सघर्ष मोल लेने के लिए प्रेरित किया था। यदि मेवाड पर मुसलमान राजा का शासन होता तो वह उसके साथ भी यही व्यवहार करता।"

ऐसा मानने की कोई साक्षी नही है। राजनैतिक उद्देश्य के अतिरिक्त अन्य किसी उद्दीश्य ने अकबर को मेवाड पर आक्रमण करने की प्रेरणा की थी। साम्राज्यवाद अच्छा अथवा बुरा हो सकता है परन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि हिन्दुओ और मुसलमानो दोनों ने युरोपियनों की भांति इसका खुलकर आश्रय लिया था।"

१९६० में अलीगढ़ में आयोजित भारतीय इतिहास की कांग्रेस में डा० के० ऐम, अशरफ ने इलाहाबाद के इतिहासकारों को उनके उस मूल्यवान योग के लिए धन्यवाद दिया था जो वे लोग मध्य युगीय भारत में सम्मिलित और मिश्रित संस्कृति के विकास के अध्ययन के द्वारा साम्प्रदायिक समस्या के समाधान में दे रहे हैं। यद्यपि वह इतिहासकारों के इस वर्ग के प्रशसक हैं तथापि वह उनको सावधान किए बिना न रह सके। उन्होंने कहा— "हमारे मध्य युगीय इतिहास को इस प्रकार का रूप देने से जो एक विशेष पहलू पर बल देता हो भले ही वह उन्नत हो और अन्य पहलुओं की उपेक्षा कर देने से हम अन्तिम विश्लेषण में जीवन की सर्वतोमुखी भावना और अपनी सामाजिक प्रेरणाओं का वास्तविक परिज्ञान प्राप्त करनेमें सफल न होसकेंगे।"

डा॰ग्रार॰सी॰ मजूमदार उन इतिहासकारों के मूर्धन्य प्रतिनिधि हैं जो हिन्दू धर्म के प्रशंसक हैं। वह इतिहासकारों की इस प्रवृत्ति के घोर विरोधी हैं कि हिन्दू मुस्लिम सम्मिलित सस्कृति की उपलब्धियो को तो प्रकाश में लाया जाय और मुस्लिम-काल की त्रुटियों की उपेक्षा की जाय। देहली सुलतानेन 'देहली के सुलतान' नामक अपनी पुस्तक की भूमिका में जो भारतीय विद्या भवन बम्बई का प्रकाशन है वह लिखते हैं —

"ब्रिटिश शासन के अन्तिम दिनों में भारतवासियों की राजनैतिक आवश्यकताओं के कारण दोनों वर्गों की एकता के महत्व पर विशेष बल दिया गया और इसका यह उपाय सोचा गया कि मतभेद की बातों की उपेक्षा की जाय और दोनों वर्गों के पारस्परिक सम्बन्धों को अधिक अच्छा दिखाने के उद्देश्य से जो वास्तव में न थे भूतकाल का काल्पनिक इतिहास तय्यार किया जाय।"

अनर्गल विचार

सुप्रसिद्ध हिन्दू राजनैतिक नेता तो यहा तक गए कि उन्होने यह घोषणा कर दी कि मुस्लिम शासन में हिन्दू लोग शासित जाति न थी। उन्नीसवीं शती के आरम्भ में जो अनर्गल विचार उपहासास्पद समझे जाते उन्हीं को भारतीय नेताओं ने उस शताब्दी के अन्त में राजनैतिक विवशतावश ऐतिहासिक तथ्य मान लिया।

दुर्भाग्य से 'नारे और मान्यताए' मुशकिल से निःशेष होती हैं। आज भी ऐतिहासिक लेखो में यदि साम्प्रदायिक सम्बन्धो के विषय में कोई आलोचना करदी जाती है तो बहुत से भारतीय विशेषत हिन्दू लोग जो इस प्रकार की आलोचना को पसन्द नहीं करते नाक भौं सिकोड़ने लग जाते हैं।' इस प्रकार की आलोचना से मुसलमानों की कोमल भावनाओं को ठेस लगने का भय हिन्दू राजनीतिज्ञों और इतिहासकारों के मस्तिष्कों पर छा जाता है और यह भय उनको न केवल सत्य के प्रकाश से ही रोकता है अपितु उनका क्रोध उन लोगों पर उतरने लग जाता है जो इस प्रकार की आलोचना करने का साहस करते हैं।

परन्तु इतिहास व्यक्तियों और जातियो का लिहाज नहीं करता और जहा तक उसे प्राप्त साक्षी से सत्य की उपलब्धि होती है वहा तक उसे सत्य बात बताने का यत्न करना आवश्यक होता है। वास्तविक जीवन से इस सिद्धान्त का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है क्योंकि अज्ञान न तो किसी व्यक्ति के लिए और न किसी राष्ट्र के लिए ही लाभदायक सिद्ध होता है। इतिहास के समस्त प्रवाह में हिन्दुओं और मुसलमानों के जो वास्तविक सम्बन्ध रहे हैं उनकी अनभिज्ञता जिसको कुछ व्यक्ति जानबूझकर प्रोत्साहित भी करते हैं, अन्त में भारत-विभाजन के मुख्य तत्वो में अकेला सबसे प्रमुख तत्व माना जायगा। किसी समस्या का समाधान करने का वास्तविक और प्रभावशाली साधन उन तथ्यों को जानना और समझना होता है जिनसे वह समस्या उत्पन्न होती है न कि शुतुर मुर्ग के समान कपोल-कल्पना की बालू में सिर छुपा देना।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सिद्धान्त और व्यवहार दोनों ही दृष्टियों से भारतीय इतिहासकार का यह कर्तव्य है कि वह किसी भी बाह्य प्रभाव से प्रभावित हुए बिना भूत काल में हिंदुओ और मुसलमानों के जो सम्बन्ध रहे हैं उनके विषय में सत्य का प्रकाश करे। इतिहासकार को हवा के रुख के अनुसार अपनी नाव नहीं खेनी चाहिये अपितु सत्य की प्राप्ति स्वरूप अपनी जल यात्रा के अन्तिम लक्ष्य को अपने समक्ष रखकर ठीक दिशा में नाव को रखना चाहिये।

डा॰ आर॰ सी॰ मजुमदार हिन्दू सस्कृति और सभ्यता की महिमा का वर्णन करने में बड़ा गौरव अनुभव करते हैं। जो लोग इतिहास की व्याख्या इस प्रकार करते हैं कि जिससे धर्म निरपेक्षता की

श्री पं० विनायकराव जी विद्यालंकार, बार-ऐट-ला

(स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती प्रधान सार्व० सभा नई दिल्ली-१)

श्रीयुत प० विनायकराव जी के निधन का समाचार सुनकर मे अवाक् रह गया। यद्यपि पिछले कुछ समय से उनका स्वास्थ्य ठीक न था तथापि यह किसी को आशा न थी कि उनका अन्त इतना आकस्मिक और शीघ्र होगा। गत मार्च मास में जब वह दयानन्द भवन में मुझ से मिले थे तब उन्होंने कहा था कि मैं अब ससद की सदस्यता के दायित्व से मुक्त हो गया हू क्योंकि स्वास्थ्य के ठीक न होने से मैं गत निर्वाचन में खड़ा नहीं हुआ था अत मैं अपना शेष जीवन एकान्तत आर्य समाज की सक्रिय सेवा में लगा देना चाहता हूँ, सार्वदेशिक सभा विदेश-प्रचार आदि मे मेरी सेवाओं का उपयोग कर सकती है। मेरे लिए उनका यह विचार उत्साह वर्द्धक था परन्तु किसको पता था कि यह विचार मूर्त्त रूप धारण न कर सकेगा।

हैदराबाद के विषय में किसी प्रसग के उठते ही जिन विशिष्ट आर्य बन्धुओं पर दृष्टि जाती

नीति सपुष्ट हो सके उनका डाक्टर महोदय खडन करते हैं। सी० एच० फिलिप द्वारा सपादित 'भारत पाकिस्तान और लका के इतिहासकार' नामक पुस्तक में प्रकाशित अपने लेख में डाक्टर महोदय निम्न-लिखित विचार प्रकट करते हैं –

"धर्म-निरपेक्ष राज्य का नवनिर्मित आदर्श भारतीय इतिहास के अब तक के ज्ञात हुए तथ्यों के विरुद्ध है। परन्तु इस आदश को भारतीय इतिहास और सस्कृति की एक नवीन भावना के द्वारा सपुष्ट किए जाने का प्रयास हो रहा है जो आधुनिक भारत में हिन्दू और मुस्लिम सस्कृति को पृथक् २ स्वीकार नहीं करती और इन सस्कृतियों के साथ पाश्चात्य सस्कृति को लेकर यह दिखाना चाहती है कि ये सब विविध धारायें हैं जो भारतीय संस्कृति के समुद्र में मिलकर अपने पृथक् अस्तित्व को खो देती है।"

"परन्तु मुसलमान इस प्रकार के विचारों का प्रतिवाद करते हैं और इस्लामी सस्कृति का न केवल पृथक् अस्तित्व ही स्वीकार किया जाता है अपितु यह सस्कृति पाकिस्तान के नए राज्य का विधिवत आधार भी बना। भारत में एक छोटा सा प्रान्त दिन पर दिन विस्तृत होने वाला प्रभावशाली व्यक्तियो का एक वर्ग सास्कृतिक इकाई के रूप में 'हिन्दू' शब्द से कतराता है और 'भारतीय सस्कृति' की परिभाषा में सोचता है। भारतीय सस्कृति के निर्माण में इस प्रकार के विचार का मूल्य भले ही कोई क्यो न हो परन्तु जब यह विचार भारतीय इतिहास के क्षेत्र में हस्तक्षेप और भारतीय इतिहास के एक सर्वाधिक प्रामाणिक तथ्य हिन्दू सस्कृति के अस्तित्व की उपेक्षा करनेलग जाताहै तो यह भयावह बनजाताहै।",

भारतीय इतिहास के पाठक भूल भुलैयो में मस्त हो जाते हैं क्योकि वे इस प्रकार की चिन्ताओं में सुनिश्चित आवाज की पहचान नही कर पाते। वे भारतीय इतिहास की इन भिन्न २ व्याख्याओं से चक्कर में पड जाते हैं। इतिहासकार विचारो का स्रष्टा होता है और वह कतिपय आदर्शो को लोक-प्रिय बनाने के लिए मूल्यवान साधन के रूप में इतिहास का प्रयोग करता है। दूसरे दर्जे के विद्वान के हाथ में पड कर इतिहास प्रचारात्मक साधन बन कर निकृष्ट हो जाता है। परन्तु चतुर इतिहासकार लोगों के मस्तिष्क को प्रभावित करने के कार्य में ऐतिहासिक सामग्री का उपयोग कर सकता है। इस प्रकार भारतीय इतिहास के पुनर्लेखन का कार्य बहुत सी कठिनाईयो और बाधाओ से परिवेष्ठित है।

थी उन मे मूर्धन्य स्थान विनायकराव जी को प्राप्त रहता था। अब हम इस विशेषाधिकार से वंचित हो गए हैं यह महान दु ख का विषय है। वह हैदराबाद के आधुनिक सार्वजनिक जीवन के सर्वोच्च निर्माताओं में से थे। अपने सौम्य स्वभाव, निश्छल व्यवहार कार्य-क्षमता निरभिमानता, सादगी, और परोपकार वृत्ति के कारण वह बडे लोक प्रिय थे। क्या हिन्दू क्या मुसलमान क्या ईसाई क्या राजकर्मचारी सभी वर्ग के लोग उन्हें आदर और प्रेम की दृष्टि से देखते थे।

निजाम शाही के दमन-चक्र और दुरभिसन्धियों के मध्य आर्य समाज के अस्तित्व और वर्चस्व की रक्षा के लिए श्री विनायकराव जी और उनके साथियों को जो त्याग करना पड़ा और कष्ट सहन करने पडे उनकी कहानी बड़ी लबी और आर्य समाज के सच्चे कार्यकर्त्ताओं के लिए बड़ी प्रेरणा प्रद है। विनायकराव जी ने आर्य समाज के कारण वर्षों पर्यन्त अपने वकालत के धन्धे तथा अन्यान्य पारिवारिक दायित्वों को एक प्रकार से भुलाए रखा। इतना ही नहीं अपने समय और धन के व्यय पर आर्यजनों की रक्षा की। जब आर्य सत्याग्रह के द्वारा आर्य समाज ने निज़ाम शाही की चुनौती का उत्तर देने का निश्चय किया और वह उसमें जूझ गया तो विनायकराव जी के समक्ष घोर परीक्षण का समय उपस्थित हो गया। निज़ामशाही येन केन मुख्यत विनायकराव जी को इस अभियान से पृथक् रखने के लिए कृत संकल्प थी यह दिखाने के लिए कि सत्याग्रह का अभियान बाहरी जनों का अभियान है निज़ाम राज्य के प्रमुखतम आर्यजन इससे पृथक् है। वैसे आर्य समाज की सक्रिय सेवा से उन्हें पृथक् रखने के लिए राज्य की ओर से उन पर दबाव डाला जाता रहता था और उन्हें उच्च से उच्च सरकारी पदोंका प्रलोभन भी दिया जाता रहता था। परन्तु जब आठवें अधिनायक के रूप में उनके नाम की घोषणा हुई और वह राज्य के ८००० सत्याग्रहियों के जत्थे के साथ सत्याग्रह के लिए चल पड़े तो निज़ाम शाही को घुटने टेकने के सिवा और कोई चारा न रहा।

विनायकराव जी गुरुकुल काँगड़ी के सुयोग्य स्नातक थे। उनके पिता श्री केशवराव जी हाई कोर्ट के जज थे। उन्होंने स्नातक बन जाने पर इग्लैंड से बैरिस्टरी पास की थी। उनके पिता हैदराबाद में आर्य समाज के जन्म दाताओं में से थे। एक कट्टर मुस्लिम राज्य के सरकारी उच्च पद पर रहते हुए खुले रूप में आर्य समाज का काम करना साधारण बात न थी। इस पर भी वह आर्य समाज को दृढ बनाने में सफल हुए। निश्चय ही उनका व्यक्तित्व और प्रभाव असाधारण था। स्व० केशवराव जी के पश्चात् उनके पुत्र विनायकराव जी पर आर्य समाज के कार्य का जो दायित्व आया उसे उन्होंने बड़ी उत्तमता से पूर्ण किया। इस प्रकार उन्हों ने अपने को सुयोग्य पिता का सुयोग्य पुत्र सिद्ध किया।

भारत वर्ष के आर्य जनों की भी विनायकराव जी के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। जब वह १९५१ मे मेरठ के छठे आर्य महासम्मेलन के प्रधान पद के लिए चुने गए तब वह हैदराबाद राज्य के वित्त मन्त्री भी थे। उनके इस चुनाव का समस्त आर्य जगत् में बडे उत्साह से स्वागत हुआ था।

यद्यपि विनायकराव जी आज इस जगत में नहीं है तथापि उनकी कीर्ति सदैव बनी रहेगी और इस प्रकार वह जीवित रहेंगे।

आर्य समाज संस्कृत का प्रचार करे

(श्री ओम्प्रकाश जी त्यागी, १५ दीवानहाल, दिल्ली)

एक समय था, जब विदेशी अंग्रेज सरकार लार्ड मैकाले की योजनानुसार भारतकी भाषा-संस्कृति व धर्म को समाप्त करना चाहती थी, तो आर्यसमाज ने उसके उस कुचक्र को असफल करने के लिये शिक्षा क्षेत्र को अपनाया, और हजारो स्कूल, हाई स्कूल, कालेज तथा गुरुकुल खोल कर यहा के लाखो लडके लडकियो को बचा लिया। यह कहते हुए मुझे गर्व अनुभव हो रहा है कि शिक्षा के क्षेत्र में आज भी आर्यसमाज का विशेष स्थान है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लार्ड मैकाले की योजना समाप्त कर भारतीय संस्कृति के आधार पर ही यहा की शिक्षा होगी, ऐसी प्रत्येक देशभक्त को आशा थी परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि लार्ड मैकाले की योजना आज भी ज्यो की त्यों सुरक्षित है, और हमारी शिक्षा सस्थाओ में भारतीय संस्कृति का नाम तक नही है। भारतीय संस्कृति की बात तो दूर, यहा अभी तक भारतीय भाषाओ का स्थान भी दासियो जैसा बना हुआ है। अंग्रेजी भाषा का पूर्ववत् ही सर्वत्र साम्राज्य है। हिन्दी तो नाम मात्र को ही राष्ट्रभाषा बनी हुई है।

वर्तमान अवस्था में आर्यसमाज को अब नया मोड लेने की आवश्यकता है। यदि महर्षि दयानन्द द्वारा निर्धारित लक्ष्य पर उसे पहुचना है तो लार्ड मैकाले की नीति पर चलने वाले इन स्कूल कालेजों पर अपनी शक्ति नष्ट न कर उसे संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य के प्रचार पर ही अपनी समूची शक्ति लगानी होगी। कारण, भारतीय संस्कृति का उद्गम स्थान वेद शास्त्र आदि संस्कृत साहित्य ही है। इनके समीप पहुंचने के लिये संस्कृत भाषा का जानना नितान्त अनिवार्य है। अत जब तक देश में संस्कृत भाषा सब के लिये अनिवार्य नहीं होगी, तब तक भारतीय संस्कृति राजनीतिक नेताओं के भाषणो का अग भले बन जाय, परन्तु यह भारतीय जनता की वस्तु कदापि नहीं बन सकती है। इसलिये आर्यसमाज को तब तक चैन से नही बैठना चाहिए, जब तक कि संस्कृत राष्ट्रभाषा न बन जाये और, उसको तुरन्त अपनी समस्त शिक्षा सस्थाओ को संस्कृत विद्यालयों में परिणत कर देना चाहिये, और इन सब विद्यालयो को मिला कर एक संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना कर देनी चाहिये।

संस्कृत का प्रचार करते समय इस बातका ध्यान करना होगा कि संस्कृत भाषा के साथ अन्य समस्त आधुनिक विद्याओ का शिक्षण भी हो, अन्यथा इन विद्यालयो के स्नातक अन्य विद्यालयो के स्नातको के साथ प्रतियोगिता में ठहर न सकेंगे। इन विद्यालयो में विज्ञान आदि विषय पढाने की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान स्कूल कालिजो में जिस प्रकार शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी भाषा या प्रान्तीय भाषाए है उसी प्रकार हमारे विद्यालयो में संस्कृत भाषा ही शिक्षा का माध्यम कम से कम आठवी कक्षा से अनिवार्य होना चाहिए। शास्त्री, आचार्य आदि की शिक्षा की व्यवस्था तो प्रत्येक विद्यालय में होनी ही चाहिये और उन्हे विशेष प्रोत्साहन मिलना चाहिये।

ऐसा करने के पश्चात् ही आर्यसमाज महर्षि दयानन्द के शब्दो में अपने सदस्यों से कह सकेगा कि वेदो का पढना पढ़ाना और सुनना सुनाना प्रत्येक आर्य का परम धर्म है।

गुरुकुल कांगड़ी में विदेशी छात्र

(कर्नल सत्यव्रत सिद्धान्तालकार, उपकुलपति गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय)

जब से गुरुकुल कागड़ी की स्थापना हुई है यहा देश--विदेश से लोग आते रहते हैं। कई इस शिक्षा सस्था की विशेषता देखने के लिये आते है, कई यहा रह कर यहा के जीवन, यहा की शिक्षा-दीक्षा से लाभ उठाने के लिये आते हैं। अभी पिछले दिनो यहा अमरीका से एक विशेष सज्जन आये हैं, उनके साथ एक अमरीकन बालक भी गुरुकुल में प्रविष्ट होने के लिये आया है। इन दोनों के विषय में समाचार पत्रो में काफी चर्चा रही है। इन दो के अलावा थाईलेन्ड से एक तीसरे सज्जन भी यहा आये हैं जो गुरुकुल में रहकर यहा की शिक्षा से लाभ उठा रहे हैं। इन तीनो के विषय में यहा कुछ जानकारी देना असगत न होगा क्योंकि प्राय इनके विषय में पूछ--ताछ के पत्र आते रहते हैं।

डा० मारकस

अमरीका में एक वैदिक सोसाइटी है जिसके अध्यक्ष डा० मारकस हैं ये डाक्टर वैसे तो कानो के डाक्टर हैं, बहरो को सुनने वाला यन्त्र बना कर देते हैं, परन्तु इनकी रुचि वेद के विषय में बहुत गहरी है। इनकी वेद विषयक रुचि का इसी से पता चलता है कि ये हजारों मील की यात्रा करके गुरुकुल कागडी में इसी उद्देश्य से पहुँचे हैं कि यहा रह कर वेदो का अध्ययन कर सके।

इनके अध्ययन के लिये यहा पूरी व्यवस्था की गई है। श्री प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड इन्हें घटा-दो घटा प्रति दिन सस्कृत पढाते हैं। प० सुखदेव जी विद्यावाचस्पति से ये दर्शन, आचार्य प्रियव्रत जी से वेद तथा प० सुरेश कुमार जी से हिन्दी सीखते है। सब उपाध्याय इच्छा पूर्वक इन्हे अपने-अपने विषय का ज्ञान करा रहे हैं। प्रात से ---तक इनका सारा समय भरा रहता है। इनकी प्रबल इच्छा है कि ये वेद का जितना ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं करे। यहा वेद का अध्ययन करने के बाद ये अमरीका में प्रचारक का काम करेगे। इस सबके साथ गुरुकुल को इनसे यह लाभ है कि ये प्रतिदिन एक घटा छोटे तथा बडे ब्रह्मचारियो को अग्रेजी सिखाने का भी काम कर रहे हैं। गुरुकुल में पिछले दिनो यह योजना चालू की गई थी कि छोटे बालक हिन्दी तथा सस्कृत का सभाषण करे और इसके साथ साथ अग्रेजी भी बोल सके। गुरुकुल की इस योजना में डा० मारकस बडे उत्साह से योगदान दे रहे हैं।

डा० मारकस ने अपने को भारत की परिस्थितियो के अनुकूल बनाने का भरसक प्रयत्न किया है। उनके लिये सबसे बडी समस्या भोजन की है। यहा का भोजन उनके अनुकूल नहीं पडता। रोटी परौठा खाना वे जानते नही, इनका अभ्यास भी उन्हें कठिन प्रतीत होता है। वे शुद्ध शाकाहारी हैं। भारत के दूध में भी वहा के लोगो को गन्ध आती है इसलिये हमारे यहा का दूध पीने का भी उन्हें अभ्यास करना पड रहा है। उनका भोजन दही, शहद, साग सब्जी, फल आदि का है परन्तु यह सब खाकर वे शारीरिक दुर्बलता अनुभव करते हैं। आशा है, कुछ दिनो में हम यह निर्णय कर सकेगे कि उनके लिये कौन-सा भोजन अनुकूल पडेगा, और वे भी देख लेगे कि किस प्रकार के भोजन से उनकी शारीरिक शक्ति बनी रह सकती है।

२-मास्टर डीन

डा० मारकस के साथ जो बालक गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करने के लिये आया है उसका नाम है डीन। अग्रेजी में बच्चो को मास्टर कह देते हैं, उसका असली नाम डीन है। मास्टर डीन को गुरुकुल मे दिनेश कुमार नाम दिया गया है। यह

बालक छ वर्ष का है। जब भी कोई पूछता है कि उसका नाम क्या है तो वह अपने अमरीकी लहजे में चाव से कहता है -दिनेश कुमार । आश्चर्य की बात यह है कि यद्यपि यह बालक हजारों मील दूर अपने माता-पिता को छोडकर आया है, तो भी वह एक दिन भी नहीं रोया, और उसने एक दिन भी अपने माता पिता को नही याद किया। गुरुकुल में जो बालक भर्ती होते हैं उनमें से कई तो हमारे नाक में दम कर देते हैं। कई ऐसे चिल्लाते है जैसे उनके माता-पिता उन्हें किसी महा सकट मे डाल गये हों। यह बालक बडे मजे में गुरुकुल में विचरता है। वह हमारी भाषा नही जानता, अग्रेजी बोलता अग्रेजी भी ऐसी कि उसे अग्रेजीदा भी न समझ सके क्योकि उसका लहजा बच्चो का सा, उच्चारण अमरीकनो का सा है। उसके लिये भी यहा का भोजन एक समस्या है, परन्तु यह बच्चा हमारे लिये एक दिन भी समस्या नहीं बना । वह यहा ऐसे विचरता है, हम लोगों के घरो में ऐसे आता है, ऐसे मिलता है, ऐसे बात करता हैं जैसे वह कभी से यहीं का रहने वाला हो।

अभी दिनेश कुमार को दूसरे बच्चो से अलग रखा गया है क्योकि उसका सारा रहन-सहन पाश्चात्य ढग का है । टट्टी के लिये वह कमोड पर बैठ सकता है, हिन्दुस्तानी तरीके की टट्टी उसके लिये अजीब चीज है। इसी प्रकार शौच के लिये पानी ले जाना भारतीय पद्धति है, परन्तु सीधा अमरीका से आये बच्चो को ये बाते एकदम नही सिखायी जा सकती। इस बच्चे को यहा के तर्ज तरीके सिखाने में कुछ समय लगेगा, किन्तु यह बच्चा बड़ी शीघ्रता से यहा के तरीके सीखता जा रहा है और आशा है कि कुछ ही दिनो में हम लोग दिनेश को अन्य बच्चो के साथ एक ही आश्रम में रख सकेंगे। वह कुछ-कुछ शब्द सीख गया है, कुछ वाक्य भी बोलने लगा है। हमारे घर आ कर वह कहता है। माता जी दो कप चाय दीजिये, कभी कहता है ठडा पानी लाओ।

अब यह बालक प्राय दिन का सारा समय अन्य बच्चो के साथ काटता है । वह उनके साथ पढ़ता लिखता, उठता-बैठता खेलता है। कुछ दिनो से भोजन भी वह अन्य बच्चो के साथ करने लगा है। जैसे अन्य बच्चे मार पीट करते हैं वैसे ही वह भी करता है। मारता भी है, मार खाता भी है, परन्तु वह रोता-चिल्लाता नही। अपने देश के जो लोग अपने बच्चो को गुरुकुल में भर्ती करा जाते हैं, वे यह सुन कर कि बच्चे मार पीट भी करते हैं, परेशान हो जाया करते हैं, परन्तु इस बच्चे के माता-पिता हमें बार-बार यह लिख रहे हैं कि इसे सबके साथ रखिये, इसे गुरुकुल के तपस्यामय जीवन का अनुभव होने दीजिये।

मुझे सर्व-साधारण को सूचना देते हुए हर्ष होता है कि उक्त दोनो विदेशी गुरुकुल में आनन्द तथा उल्लास का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

३-थाइलैंड के भिक्षु

डा० मारकस तथा मास्टर डीन के अतिरिक्त एक तीसरे सज्जन हैं थाइलैंड के भिक्षु श्री प्रमाह्रा प्रसेरत एकामन्या । ये थाइलैंड के रहने वाले हैं । बैंकोक में चार साल तक एक बौद्ध मन्दिर में पाली आदि के शिक्षक रहे हैं। इनका कहना है कि थाईलैंड में ही उन्होंने गुरुकुल विश्वविद्यालय का नाम सुना था और देर से इनकी इच्छा थी कि यहा आकर ये सस्कृत का अध्ययन करे। इनकी इच्छा हिन्दू धर्म का ज्ञान प्राप्त करने की भी है।

इन भिक्षु महोदय को गुरुकुल में आये एक महीना हो गया है ये साल भर यहा रह कर सस्कृत हिन्दी तथा आर्य-धर्म का अध्ययन करना चाहते हैं। गुरुकुल में इनके रहने की भी समुचित व्यवस्था कर दी गई है। इन्हें श्री प्रेमचन्दजी सस्कृत पढ़ाते हैं और कुछ ही दिनों में इन्होंने अच्छी प्रगति कर ली है।

भिक्षु प्रमाह्रा बड़ी सफाई से रहते है । इनका

गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के आचार्य—

स्व० आचार्य श्री विश्वेश्वर जी एम० ए०

[श्री आचार्य डा० हरिदत्त जी शास्त्री एम० ए० एकादशतीर्थ]

आज विश्वेश्वर जी ससार में नहीं रहे, यह विचार कर हृदय पर आघात होता है। मेरा आचार्य जी से परिचय तो पुराना था पर सन् '६३८ में घनिष्ठता को प्राप्त हो गया। प्रसग यह हुआ कि वृन्दावन के उत्सव पर सस्कृत सम्मेलन में मैं गया था—भोजनादि के बाद आचार्य जी ने अपनी दर्शन-कारिका' सुनानी आरम्भ की। उस समय शुक्ल जी (स्व०प० रामदत्त जी शुक्ल) भी वहीं बैठे थे। उस कारिका में शान्त रक्षित प्राचीन 'तत्व सग्रह' की एक बौद्ध सिद्धान्त सम्बन्धी कारिका जो सर्वास्तित्व-वाद के सिद्धान्त से सम्बन्ध रखती थी, भावो में कुछ विपरीत पडती थी। उसका उल्लेख करते ही मैंने देखा कि आचार्य जी ने उसका तत्काल परिमार्जन कर दिया। उसके बाद एक घटना और घटी वह यह कि महर्षि दयानन्द ने पूज्यपाद स्वा० विरजानन्द जी सरस्वती को जो अष्टाध्यायी के सूत्रार्थ बोले थे उनकी मैंने एक कापी कराई थी। उसके १ मपाद को एक छात्र जो दयानन्द वेद विद्यालय यूसुफ सराय दिल्ली का था—गुरुकुल वृन्दावन में जाकर २५) में बेच आया, प्रसङ्गत ८–१० मास बाद आचार्य जी ने इस बात का जिक्र किया तथा २५) रुपये पर मेरी पुस्तक मुझे लौटा दी। आज कल तो यह पूरी अष्टाध्यायी की टीका सार्वदेशिक सभा में मैंने लिख कर पहुँचा दी है। इसप्रकार धीरे-धीरे यह सत्तव-घनिष्ठ मैत्री रूप में परिणत हो गया एव बढ़ता ही गया। आपके अन्तिम दर्शन मुझे उनकी कन्या प्रिय गार्गी एम० ए० के विवाह के समय हुए थे। मुझे यह विदित नहीं था कि आचार्य जी इसके बाद मिलेंगे ही नहीं।

शिक्षा-दीक्षा

आचार्य जी की शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल वृन्दावन मे ही हुई थी। शिरोमणि स्नातक परीक्षा के बाद एम० ए० परीक्षा फर्स्ट डिवीजन में उत्तीर्ण की। गुरुकुल से वे दो वर्ष केलिए पूज्यपाद गुरुवर प० काशीनाथ जी शास्त्री के चरणों में पढने के लिए बनारस भी गये थे। गुरु जी आर्यसमाज के आज के विद्वानों के विद्या सम्बन्ध से पितामह कहे जा सकते हैं क्योंकि जितना गुरुकुलीय जगत् में सन् १६०० से सन् ३५ तक विद्यादान गुरु जी ने बिना किसी जातीय भेद-भाव के किया है उतना किसी ने नही किया। इस गुरु-भक्ति का परिचय भाई विश्वेश्वरजी ने 'तर्क-भाषा' की हिन्दी टीका के प्रारम्भ में स्वय दिया है तथा गुरु जी के साथ तर्क भाषा में उनका चित्र भी प्रकाशित है। गुरुकुल वृन्दावन के दर्शन विषय के परीक्षक स्वा० कृष्णानन्द जी के अध्यापन काल में पूज्य पिता जी (स्व० प० भीमसेन जी शर्मा) थे। मुझे स्मरण है उन्होने विश्वेश्वर जी को दर्शन में सबसे अधिक अङ्क दिये थे। प्रसिद्ध हिन्दी के कवि 'राही' जी आपके ही ज्येष्ठ भ्राता थे। उन दिनों उनकी कविता श्री हरिभाऊ जी के सम्पादकत्व में

कमरा शीशे की तरह चमकता है। इनका निवास श्रद्धानन्द अतिथि भवन में कर दिया गयाहै। आशा है साल भर यहा रह कर जब ये थाईलैंड जायेगे तब भारतीय सभ्यता तथा सस्कृति के सन्देश को लेकर जायेंगे।

पिछले दिनों गुरुकल कांगडी विश्वविद्यालय ने विदेशों में जो ख्याति प्राप्त की है उसका परिणाम है कि देश-विदेश से छात्र यहा शिक्षा प्राप्त करने के लिये आने लगे हैं। आशा है गुरुकुल इसी प्रकार भारत का ही नहीं अन्य देशों का भी ध्यान अपनी तरफ खींचता रहेगा।

निकलने वाले सम्भवत 'कर्मयोगी' मासिक पत्र में विशेषतया निकला करती थी।

सिद्धान्त दृढ़ता

आचार्य जी के सामने आयुष्मती गार्गी के विवाह की समस्या भी बहुत दिनों रही—पर उनके दो सिद्धान्त थे, एक तो यह कि मैं विवाह वहा नहीं करूंगा जहा 'दहेज' का प्रश्न उठाया जायगा तथा जो परिवार अभक्ष्य वस्तुओ का सेवन करता होगा। इस दृढ़ता के कारण ही आचार्य जी ने अनेक धनीमानी परिवारों से आने वाले सम्बन्धो को ठुकरा दिया। मैं तो कहूंगा कि यह दृढता गुरुकुलीय वातावरण में रहने के कारण ही आई थी।

स्वभाव

आचार्य जी का स्वभाव बडा ही मृदु और कोमल और शान्त था। वेषभूषा बडी सरल थी पर मुझसे अच्छी होती थी। एक कुर्ता व धोती ही उनका शृगार परिच्छद था। बात चीत में वे सकोची स्वभाव के थे। घर आए हुए अतिथि के सत्कार में वे कमी न उठा रखते थे। किसी पद की उन्हें अभिलाषा न थी। रात दिन पढने पढाने व लिखने की धुन थी। मैंने उन्हें कभी गुस्सा होते न देखा न सुना।

विद्वत्ता व रचनाएं

आपने तर्क भाषा, कुसुमाजलि (हरिदासी), अभिनव, भाती ध्वन्यालोक, काव्यादर्श, काव्यप्रकाश, आदि पुस्तकों की हिन्दी टीकाए की हैं—जिनके कारण आर्य विद्वज्जन् का मस्तक उन्नत हुआ है। 'मनोविज्ञान्' के ऊपर सस्कृत में ग्रन्थ लिखकर यू० पी० सरकार से १०००) का पारितोषिक प्राप्त किया था। इसी प्रकार कुसुमाजलि की टीका पर भी हिन्दी परिषद् कलकत्ता ने ५००) रु० का पुरस्कार देकर आपको सम्मानित किया था। अपने अगाध पाण्डित्य के कारण ही आप दिल्ली यूनिवर्सिटी के सम्मानित सदस्य (फेलो) थे. एक दो पुस्तकों की टीकाएं अभी चल रही थी खेद है कि वे अब अधूरी रह गयी

गुरुकुल वृन्दावन के विद्वान् स्व० श्री पं० शङ्कर देव जी पाठक काव्यतीर्थ का अष्टाध्यायी भाष्य भी इसी प्रकार अधूरा रह गया था।

रोग और निरवधि वियोग

सौ० गार्गी एम० ए० के विवाह के समय आचार्य जी यकृत् विकार से पीडित थे। उठने बैठने मे भी कष्ट होता था—किन्तु बाद में सुना कि अब वे स्वस्थ हैं। बडी प्रसन्नता हुई किन्तु उनका यह स्वस्थ होना भी बुझते दीपक की लौ के समान था। यकृत् ने अपना कार्य करना धीरे धीरे बिलकुल छोड दिया और यह उनकी ऐहिक लीला के सवरण का कारण बना तथा वे ता० ३० जून १६६२ को इस असार ससार से विदा हो गये। किन्तु उनकी टीकाए तथा समय २ पर प्रकाशित हुए पत्र पत्रिकाओ में लेख उनके कीर्ति कार्य को अजर-अमर बनाए रक्खेगे—आचार्य जी गुरुकुलीय शिक्षा-प्रणाली के भक्त थे अतएव उन्होंने अपने एकमात्र पुत्र चिरजीव भुवनेश को गुरुकुल वृन्दावन में ही प्रविष्ट किया था। वह आज कल वही की १२ वीं श्रेणी में अध्ययन करता है तथा आशा है कि वह अपने पिता की कीर्ति को अक्षुण्ण बनाये रक्खेगा। आचार्य जी के निधन से सचमुच एक सच्चा सरस्वतीका उपासक तथा आर्यजगत् की विद्वन् मण्डली का रत्न छिन गया। सच है—

सृजति तावदशेष गुणाकरम्।
पुरुष रत्न कलङ्क रण भुव।
तदपि तत्क्षणभङ्गि करोतिचेन्
अहह !! कष्टमपण्डितताविधे।

महर्षि दयानन्द की राष्ट्रीय विचारधारा

श्री प० वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री

(१) "स्वतन्त्रता का प्रथम आन्दोलन कर्ता"

सत्यार्थ प्रकाश जो कि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती महाराज ने सवत् १६३६ (सन् १८८२) में स्थान महाराणा जी का उदयपुर से प्रकाशित किया उसमें स्वतन्त्रता की विचारधारा को नीचे लिखे शब्दों में लिखा है।

क—आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतन्त्र, स्वाधीन और निर्भय राज्य इस समय नही है जो कुछ है सो भी विदेशियो के पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोडे राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियो को अनेक प्रकार के दु ख भोगने पडते हैं। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।

(स० प्र० स० ८ पृ० १४१)

ख—माता पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियो का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नही है।

(स० प्र० स० ८ पृ० १४१)

ग—सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यंत चक्रवर्ती, सार्वभौम राजा आर्य-कुल में ही हुए थे। अब इनके सन्तानो का अभाग्योदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियो के पादाक्रान्त हो रहे हैं।

(स० प्र० स० ११ पृ० १७३)

(२) आपस की फूट से सर्वनाश

स्वामी जी महाराज ने आपस की फूट के कारण देश का सर्वनाश माना है। उनके हृदय में इस परस्पर फूट को देख कर बडा दु ख होता था। उन्होने महाभारत काल से लेकर अभी तक भारत में फूट को ही दु ख का कारण माना है। स्वामी जी को दिवगत हुए ७९ वर्ष हो चुके हैं परन्तु भारत की हिन्दू समाज मे फूट दिन प्रतिदिन बढ़ी है घटी नही, यही कारण है कि सख्या, बुद्धि, बल, धन, शक्ति होते हुए भी, हम अल्प सख्या वालो से हर समय पराजित होते है। आर्य समाज जिसे स्वामी जी महाराज ने इस फूट के रोग को नाश करने के लिए स्थापित किया था, वह स्वय ही फूट का शिकार हो गई है। हर समाज, सस्था व प्रतिनिधि सभा में हम देखते हैं कि परस्पर वैमनस्य और फूट के कारण हानि हो रही है। क्या आर्य समाजी ऋषि की इस दु ख भरी वेदना को पढ कर समाज और देश से इस राक्षसी फूट को नष्ट करने का यत्न नही करे गे? औरो का उद्धार क्या कर सकेंगे, जब स्वय ही झगडे में सलग्न रहेंगे। नीचे स्वामी जी महाराज के हृदय की वेदना के वाक्यो को पढे।

क—विदेशियों के आर्यावर्त में राज्य होने के कारण आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना विद्या न पढ़ना-पढाना, बाल्यावस्था में अस्वयवर विवाह, विषयासक्ति, मिथ्या भाषण आदि कुलक्षण, वेद विद्या का अप्रचार आदि कुकर्म हैं।

(स० प्र० स० १० पृ० १६६)

श्री रामगोपाल शास्त्री वैद्य, करौल बाग, दिल्ली द्वारा प्रकाशित "महर्षि दयानन्द की राष्ट्रीय विचारधारा" पुस्तक से। मूल्य ।)

ख—जब आपस में भाई भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है। क्या तुम लोग महाभारत की बातें जो पांच सहस्र वर्ष पहले हुई थी उनको भी भूल गये? देखो, आपस की फूट से कौरव, पाण्डव और यादवों का सत्यानाश हो गया। सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है। न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा वा आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःख सागर में डुबा मारेगा उसी दुष्ट दुर्योधन, गोत्र हत्यारे, स्वदेश विनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग मे आर्य लोग अब तक भी चल कर दुःख बढ़ा रहे है। परमेश्वर कृपा करे यह राज रोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाय।

(स०प्र० १० स० पृ० १६६-१६७)

ग—स्वायम्भव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा। तत्पश्चात् आपस के विरोध से लड़कर नष्ट हो गये।

(स०प्र० ११ स० पृ० १७२)

घ—हे परमेश्वर! स्वदेशस्थ आदि मनुष्यों को अत्यन्त परस्पर निर्वैर प्रीतिमान्, पाखण्ड रहित करे। अन्योन्य प्रीति से परम वीर्य, पराक्रम से निष्कण्टक चक्रवर्ती राज्य भोगे। हम मे सब नीतिमान् सज्जन पुरुष हों।

(आर्याभिविनय द्वितीय प्रकाश मन्त्र १)

ङ—ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत के युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी यह अपनी पूर्व दशा में नहीं आया क्योंकि जब भाई को भाई मारने लगे तो नाश होने में क्या सन्देह?

(स० प्र० ११ स० पृ० १७४)

च—हे सर्व शक्तिमान् ईश्वर! आपकी कृपा, रक्षा और सहाय से हम लोग परस्पर एक दूसरे की रक्षा करे और हम सब लोग परम प्रीति से मिल के सब से उत्तम ऐश्वर्य अर्थात् चक्रवर्ती राज्य आदि सामग्री से आनन्द को आपके अनुग्रह से सदा भोगें। हे प्रीति के उत्पादक! आप ऐसी कृपा कीजिये कि जिससे हम लोग परस्पर विरोध कभी न करें किन्तु एक दूसरे के मित्र हो के सदा वर्ते।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ईश्वर प्रार्थना विषय)

छ—जब नाश होने का समय निकट आता है, तब उल्टी बुद्धि होकर उल्टे काम करते हैं कोई उनको सूधा समझावे तो उल्टा मान और उल्टा समझावे उसको सूधी माने। जब बड़े २ विद्वान्, राजा, महाराजा ऋषि, महर्षि लोग महाभारत में मारे गये और बहुत से मर गये तब विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार नष्ट हो चला। ईर्ष्या, द्वेष, अभिमान, आपस में करने लगे। जो बलवान् हुआ वह देश को दाबकर राजा बन बैठा वैसे ही सर्वत्र आर्यावर्त मे खण्ड खण्ड राज्य हो गया। पुनः द्वीपद्वीपान्तर के राज्य की व्यवस्था कौन करे?

(स० प्र० स० ११ पृ० १७५)

(३) स्वदेशी आंदोलन और स्वदेश भक्ति

बहुत सारे लोग यह समझते है कि १९०५ में लार्ड कर्जन ने जब बगाल के दो टुकडे किये तो उस समय बंगालियो ने इस विच्छेद के विरोध में, अनेक विरोधों के साथ २ स्वदेशी आन्दोलन को भी चलाया, परन्तु उनको यह पता नही कि, स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने ग्रन्थो में और व्याख्यानो में समय २ पर स्वदेशीय वस्तु प्रयोग, स्वदेश भक्ति और भारतीयता के प्रति आस्था का विचार दिया। स्वामी जी महाराज के प्रचार के अनन्तर आर्यसमाज के सदस्यों में १८७५ सन् से ही स्वदेशी कपडे पहनने और स्वदेशी वेश भूषा में रहने का आन्दोलन चल पड़ा था। "अनरेस्ट इन इण्डिया" unrest in India नामक पुस्तक में आर्यसमाजी का चिन्ह ही यह बतलाया है कि जिसके स्वदेशी और मोटे वस्त्र हों, बन्द गले का कोट हो। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि महर्षि दयानन्द ने बंग विच्छेद से ३० वर्ष पहले ही स्वदेशी का आन्दोलन बडे वेग से चलाया था, इसके लिए स्वामीजी महाराज के नीचे के उद्धरण ध्यान से पढ़े।

क—परन्तु इन लोगों में स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है। ईसाइयों के आचरण बहुत से लिये हैं। अपने देश की प्रशसा व पूर्वजों की बडाई करनी तो दूर रही। उसके बदले बहुत निन्दा करते हैं। व्याख्यानों में ईसाई आदि अ ग्रेजों की प्रशसा भर पेट करते है। ब्रह्मा आदि महर्षियों का नाम भी नहीं लेते। प्रत्युत ऐसा कहते हैं कि बिना अ गरेजों के सृष्टि में आज पर्यन्त कोई भी विद्वान् नही हुआ। आर्यावर्तीय लोग सदा से मूर्ख चले आये हैं। इनकी उन्नति कभी नही हुई।

(स० प्र० स० ११ पृ० २४१)

भला जब आर्यावर्त्त में उत्पन्न हुए हैं और इसी देश का अन्न जल खाया पिया, अब भी खाते पीते हैं, अपने माता पितामह आदि के मार्ग को छोड दूसरे विदेशी मतो पर अधिक झुक जाना, ब्रह्मसमाजी और प्रार्थना समाजी एतद्देशस्थ सस्कृत विद्या से रहित अपने को विद्वान् प्रकाशित करते हैं इ गलिश भाषा पढ़ कर पण्डिताभिमानी होकर झटिति एक मत चलाने में प्रवृत्त होना मनुष्यो का स्थिर और झटिति वृद्धिकारक काम क्योकर हो सकता है ?

(स० प्र० स० ११ पृ० २४१)

ख—देखो अपने देशके बने हुए जूते को कार्यालय (आफिस) और कचहरी में जाने देते हैं इस देशी जूते को नही। उसमें समझ लेओ कि अपने बने देश के जूतो का भी जितना मान प्रतिष्ठा करते हैं उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नही करते। कुछ १०० वर्ष से ऊपर इस देश में आये यूरोपियनों को हुए, और आज तक ये लोग मोटे कपडे आदि पहरते हैं जैसा कि स्वदेश में पहरते थे, परन्तु उन्होंने अपने देश का चाल चलन नही छोडा और तुम में से बहुत से लोगों ने उनकी नकल कर ली है इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान ठहरते हैं। अनुकरण करना किसी बुद्धिमान का काम नहीं जो जिस काम पर रहता है उसको यथोचित करता है। आज्ञानुवर्ती बराबर रहते हैं। अपने देश वालों को व्यापार आदि में सहायता देते हैं इत्यादि गुणों और अच्छे २ कामो से उनकी उन्नति है। मुण्डे जूते, कोट, पतलून, होटल में खाने पीने आदि साधारण और बुरे कामो से नही बढे हैं।

(स० प्र० स० ११ पृ० २४२)

ग—उस समय देश में धन बहुत था और स्वदेश भक्ति भी थी।

(स० प्र० स० ११ पृ० १८१)

घ—हम और आपको उचित हैं कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे होगा उसकी उन्नति तन, मन, धन से सब मिलकर प्रीति से करे। इसलिए जैसा आर्य समाज आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता।

(स० प्र० स० ११ पृ० २४५)

(ङ) देखो, बडे शोक की बात है कि जयपुर में अनेक गिरजा घर बन गये और पादरी लोग राम, कृष्ण आदि भद्र पुरुषो की निरन्तर निन्दा करते हैं और सैकड़ों को बहका कर भ्रष्ट कर रहे हैं उनको हटाने का पण्डित और राजा आदि राज पुरुषो ने कुछ भी प्रयत्न न किया।

(पत्र और विज्ञापन पत्र सख्या ४१०)

च—क्या बिना देश देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में राज्य व व्यापार किये, स्वदेश की उन्नति कभी हो सकती है ? जब स्वदेश में ही स्वदेशी लोग व्यवहार करते और परदेशी स्वदेश में व्यवहार व राज्य करे तो बिना दारिद्रय और दु ख कुछ भी नही हो सकता।

(स० प्र० स० १० पृ० १६५)

छ—ऋषि महर्षियों के किये उपकारों को न मान कर, ईसा आदि के पीछे झुक पडना अच्छा नही। ब्रह्मा से लेकर पीछे आर्यावर्त में बहुत से विद्वान हो गये हैं उनकी प्रशसा न करके यूरोपियन की स्तुति में उत्तर पड़ना पक्षपात और खुशामद के

बिना क्या कहा जाय ?

(स० प्र० स० ११ पृ० २४४)

ट—अत्यन्त आनन्द की बात है कि आप लोगों में स्वदेश हित की बात निश्चित हुई है, परन्तु स्वदेश आदि सब मनुष्यों का निर्विघ्न हित आर्य समाज से यथार्थ होगा।

(पत्र तिथि स० १९३१ मिति चैत्र शुक्ल ६ जो उन्होने बम्बई से श्रीयुत गोपाल राव हरिदेश मुख को लिखा।)

(४) 'न्याय राज्य"

ससार में सुराज्य (अच्छा राज्य) स्व (अपना) राज्य का वर्णन बडे २ विद्वानों ने भाषणों और ग्रन्थों में किया है परन्तु स्वामी दयानन्द जी महा राज पहले व्यक्ति हैं, जिन्होने सुराज्य और स्वराज्य के साथ न्याय राज्य पर बहुत बल दिया है। उनका विश्वास था कि जिस राज्य में अन्याय है वह राज्य बहुत काल तक स्थिर नही रह सकता। इसलिए वह न्याय राज्य को ईश्वरीय राज्य के साथ उपमा दिया करते थे। आर्याभिविनय द्वितीय प्रकाश मन्त्र १ के भाष्य में लिखा है।

क—(हे परमेश्वर) "जैसा सत्य, न्याययुक्त, अखण्डित आपका राज्य है वैसा न्याय राज्य हम लोगों का भी आपकी ओर से स्थिर हो।"

ख—(हे परमेश्वर) सब के मित्र शत्रु रहित हो, हमको भी आप मित्र गुण युक्त न्यायाधीश कीजिए, तथा आप सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो। हमको भी सत्यविद्या से युक्त सुनीति दे के साम्राज्याधिकारी सद्य कीजिये। हम पर सहायता करो जिससे सुनीति युक्त हो के हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढे।

(आर्याभिविनय प्रथम प्रकाश मन्त्र १८ भाष्य)

ग—अभिमानी, अन्यायकारी, अविद्वान् लोगों का राज्य बहुत दिन नही चलता।

(स० प्र० समु० ११)

घ—राजा और राजाओं के कामदार लोग अनीति से प्रजाओं का धन न लेवे, किन्तु राज्य पालन के लिए राजपुरुष प्रतिज्ञा करे कि हम लोग अन्याय न करेंगे।"

(यजुर्वेद अ० ६ म० २२ भावार्थ)

ङ जिस राजा की सभा व राज्य में पूर्ण विद्या-युक्त धार्मिक मनुष्य सभासद् व कर्मचारी होते हैं, जिसकी सभा व राज्य में मिथ्यावादी, व्यभिचारी, अजितेन्द्रिय, कठोर वचनों के बोलने वाले अन्यायकारी चोर और डाकू आदि नही होते और आप (राजा सभापति) भी इसी प्रकार का धार्मिक हो तो वही पुरुष चक्रवर्ती राज्य करने के योग्य होता है। इससे विरुद्ध नही।

(यजु० अ० ६ म० ३५ भावार्थ)

च—जो मनुष्य इस प्रकार के उत्तम पुरुषों की सभा से न्यायपूर्वक राज्य करते हैं उनके लिए परमेश्वर प्रतिज्ञा करता है कि हे मनुष्यो ! तुम धर्मात्मा हो के न्याय से राज्य करो, क्योंकि जो धर्मात्मा पुरुष हैं मैं उनके क्षात्र धर्म और सब राज्य में प्रकाशित रहता हू और वे सदा मेरे समीप रहते हैं।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पृष्ठ ३२६)

छ—राजाओं की सेना और सभा में जो पुरुष हों वे सब दुष्टों पर तेजधारी, श्रेष्ठों पर शान्त रूप, सुख, दु ख के सहन करने वाले और धन के लिए अत्यन्त पुरुषार्थी हों, क्योंकि दुष्टों पर क्रुद्ध स्वभाव और श्रेष्ठों पर सहनशील होना यह राज्य का स्वरूप है।

(ज) सगर राजा ने उसे शासन किया और उसे (अपने पुत्र को) एक गरीब के बालक को पानी में फेकने के कारण—एक महा भयकर जगल के बीच कैद कर रखा। इसी का नाम न्याय है। नही तो आजकल के राजा लोग और उनके न्याय का क्या पूछना है ?

(उपदेश मजरी पूना व्याख्यान सख्या ६)

(५) एक राजा का राज्य न हो

इस समय देशों में प्रजातन्त्र, (democracy एक राजा राज्य, तानाशाही (dictator ship) शासनों का प्रचार है। स्वामी दयानन्द जी महाराज ने आज से ८० वर्ष पहले ही वेदादि शास्त्रों के आधार से ऐसी शासन पद्धति का विचार दिया कि जिससे कोई भी स्वतन्त्रता को प्राप्त कर उच्छृ-खलता न कर सके।

(क) सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिये किन्तु राजा, जो सभापति, तदधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राज-सभा के आधीन रहे।

(स० प्र० समु० ६ पृ० ८५)

(ख) जो प्रजा म स्वतन्त्र स्वाधीन राजवर्ग रहे तो राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे जिस लिए अकेला राजा स्वाधीन व उन्मत्त हो के प्रजा का नाशक होता है। अर्थात् वह राजा प्रजा को खाये जाता है। इस लिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए।

(स० प्र० समु० ६ पृ० ८५)

जैसे सिंह वा मांसाहारी हृष्ट-पुष्ट पशु को मार कर खा लेते हैं, वैसे स्वतन्त्र राजा प्रजा का नाश करता है अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता। श्रीमानों को लूट खूट, अन्याय से दण्ड दे के अपना प्रयोजन पूरा करेगा।

(स० प्र० स० ६ पृ० ८५।८६)

(ग) जैसे मांसाहारी मनुष्य पुष्ट पशु को मार के उसका मांस खा जाता है वैसे ही एक मनुष्य राजा हो के प्रजा का नाश करनेहारा होता है; क्योंकि वह सदा अपनी ही उन्नति चाहता रहता है।

(ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका भाष्यकरण शंका समाधान विषय)

(घ) हे सभापते ! विद्या-मय ! न्याय कारिन् ! सभासद् सभाप्रिय सभा हो। हमारा राजा न्याय-कारी हो। ऐसी इच्छा वाले आप हमको कीजिये किसी एक मनुष्य को हम लोग राजा कभी न मानें।

(आर्याभिविनय द्वितीय प्रकाश मन्त्र ५२ भाष्य)

(६) तीन प्रकार की सभाओं के आधीन सब राज्य कार्य होना चाहिए

(क) जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं तभी तक राज्य बढ़ता रहता है और जब दुष्टाचारी होते हैं तब नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। महाविद्वानो को विद्यासभाधिकारी, धार्मिक विद्वानो को धर्म सभाधिकारी, प्रशसनीय धार्मिक पुरुषों को राजसभा के सभासद् और जो उन सब में सर्वोत्तम गुणकर्म स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राजसभा का पति रूप मान के सब प्रकार से उन्नति करे। तीनों सभाओ की सम्मति से राजनीति के उत्तम नियम और नियमो के आधीन सब लोग वर्तें। सबके हितकारक कामों में सम्मति करे। सर्वहित करने के लिये परतन्त्र और धर्म युक्त कामो में अर्थात् जो-जो निज के काम हैं उन उन में स्वतन्त्र रहें।

(सत्यार्थप्रकाश ६ समु० पृ० ८६)

(ख) सब जगत् का राजा एक परमेश्वर ही है और सब ससार उसकी प्रजा है इसमें यह यजुर्वेद १८ वे अध्याय के २६ वे मन्त्र के वचन का प्रमाण है। ❀ वय प्रजापते प्रजा अभूम ❀ अर्थात् सब मनुष्य लोगो को निश्चय करके जानना चाहिए कि हम लोग परमेश्वर की प्रजा हैं, और वही एक हमारा राजा है।

तीन प्रकार की सभा ही को राजा मानना चाहिए, एक मनुष्य को कभी नहीं—वे तीनों ये हैं। प्रथम राज्य प्रबन्ध के लिए एक आर्य राजसभा कि जिससे विशेषकर के सब राजकार्य ही सिद्ध किये जाये।

दूसरी आर्य विद्यासभा कि जिससे सब प्रकार की विद्याओं का प्रचार होता जाये।

स्व० विनायक राव विद्यालंकार

(सत्यदेव विद्यालंकार)

संसद के भूतपूर्व सदस्य और हैदराबाद राज्य के भूतपूर्व अर्थ मन्त्री बैरिस्टर श्री विनायक राव विद्यालंकार के निधन से आर्य जगत का ही नहीं, जनता का भी एक बड़ा सेवक दुनिया से उठ गया है। मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में पूरा एक वर्ष उनके सहवास में एक ही कमरे में बिताया था। तब उनको बहुत समीप से देखने का अवसर प्राप्त हुआ था। वह गुरुकुल विश्वविद्यालय के होनहार प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थी थे। स्नातक बनने के बाद उनकी प्रतिभा का प्राय सभी क्षेत्रों मे विस्मयजनक विकास हुआ था। छात्र जीवन मे भी वह एक प्रभावशाली वक्ता तथा लेखक थे। नेतृत्व के गुणों का अंकुर उनमें विद्यार्थी जीवन में ही प्रस्फुटित होने लगा था। क्रिकेट के खेल में गेंद फेंकने में वह विशेष चतुर थे और बाद मे अपने जीवन में भी उन्होंने इसी तरह लक्ष्य पूरा किया।

विदेशों में अध्ययन

उनके पिता श्री केशवराव कोरटकर हैदराबाद उच्चन्यायालय के न्यायाधीश थे। वह हैदराबाद में सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा राजनीतिक जागृति के केन्द्र बिन्दु रहे और पिता के ये सारे गुण पुत्र मे भी आए। केशवराव जी ऐसे कट्टर आर्य समाजी सिद्ध हुए कि उन्होंने

तीसरी आर्यधर्मसभा कि जिससे धर्म का प्रचार और अधर्म की हानि होती रहे। इन तीन सभाओं से अर्थात् युद्ध में सब शत्रुओं को जीत के नाना प्रकार के सुखों से विश्व को परिपूर्ण करना चाहिए।

(ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका राजप्रजाधर्म विषय)

इसलिए तीनों अर्थात् विद्यासभा, धर्मसभा और राजसभाओं में मूर्खों को कभी भर्ती न करे, किन्तु विद्वान् और धार्मिक पुरुषों की स्थापना करे।

(स० प्र० ६ समु० पृ० ८८)

(ख) हे विद्वान् मनुष्यों! तुम सभ्य पिता के समान प्रजा जनों की पालना करने वाले बहुत अवस्था से युक्त और दुःख को पाकर न कांपने वाले, सामर्थ्यवान् गम्भीर-आशय, अद्भुत सेना तथा शस्त्र और अस्त्रों की विद्या में कुशल बल से युक्त शत्रु समूह को सहने वाले, और बहुत गुण कर्मों से युक्त जो पुरुष हो उसी को राज्याभिषेक काम में अभिषेक करो।

(ऋग्वेद भाष्य ६।७५।९)

(७) राज्याधिकारी कैसे हों"

(ज) स्वराज्य, स्वदेश में उत्पन्न हुए वेदादि शास्त्रों के जानने वाले, शूरवीर जिनका लक्ष्य अर्थात् विचार निष्फल न हो और कुलीन अच्छे प्रकार सुपरीक्षित, सात व आठ उत्तम धार्मिक, चतुर सचिव अर्थात् मन्त्री करे क्योंकि विशेष सहायको बिना जो सुगम कर्म है वह भी एक के करने में कठिन हो जाता है जब ऐसा है तो महान् राज्य कर्म एक से कैसे हो सकता है? इसलिए एक को राजा और एक की बुद्धि पर राज्य के कार्य का निर्भर रखना बहुत ही बुरा काम है। अन्य भी पवित्रात्मा, बुद्धिमान्, निश्चित बुद्धि, पदार्थों के सग्रह करने में अति चतुर, सुपरीक्षित मन्त्री करे। जितने मनुष्यों से राज्य कार्य सिद्ध हो सके उतने आलस्य रहित बलवान्, और बड़े बड़े चतुर प्रधान पुरुषों को अधिकारी अर्थात् नौकर करे। (स० प्र० ६ समु० पृ० ९०)

[क्रमश]

अपने पुत्र को गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा के लिए भेजा और उनके इस आदर्श का बाद में दूसरों ने भी अनुकरण किया। इतने दूरस्थान से आने वाले विनायकराव पहले विद्यार्थी थे।

गुरुकुल से स्नातक होने के बाद उनके पिता ने उनको बैरिस्टरी की पढाई के लिए इगलैण्ड भेजा। विदेश में किसी भी विश्वविद्यालय में गुरुकुल की डिग्री को मान्यता प्राप्त न थी, परन्तु अपने परिश्रम व अध्यवसाय से भाई विनायकराव ने प्रतिष्ठा के साथ बैरिस्टरी की पढाई पूरी की और गुरुकुल के अन्य स्नातकों के लिए भी विदेशों के विश्वविद्यालयों के द्वार खुलवा दिए।

लोकसेवक के रूप में

उन दिनों निजाम के राज्य में बैरिस्टर बनना एक असाधारण सफलता मानी जाती थी और उसके बलपर शासन में ऊचे से ऊचा पद प्राप्त कर लेना कुछभी कठिन न था। बैरिस्टरविनायकराव के लिए तो उनके पिता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के पद पर प्रतिष्ठित हो कर ऊचे से ऊचे पद पर पहुचने के लिए रास्ता बना चुके थे। परन्तु, उन्होंने शासकीय नौकरी मे प्रवेश नहीं किया। संभवत इसीलिए कि उनके भाग्य में जनशासक बनने की अपेक्षा जनसेवक बनना ही बदा था। उन्होंने जनसेवा के जिस क्षेत्र में भी पैर रखा, उसी में वह सहज में लोकनेता के पद पर जा पहुचे। आर्य समाज, राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार और कांग्रेस तीनों में उन्होंने अपना विशिष्ठ स्थान बना लिया। उन दिनों इन तीनों ही क्षेत्रों में काम करना निजाम के राज्य में कांटों पर चलने के समान था।

मैं प्राय उनको कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों में प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित देखा करता था। एक बार मैंने उनसे पूछा कि निजाम के राज्य में रहते हुए भी आप इस हिम्मत से कांग्रेस में कैसे शामिल होते हैं? उन्होंने कहा कि आर्य समाज और गुरुकुल ने राष्ट्रीयता की घुट्टी जो पिलाई है।

हैदराबाद में पुलिस कार्यवाही के ठीक बाद हिन्दी साहित्य सम्मेलन का जो वार्षिक अधिवेशन हुआ था, उसमें भी मैंने उनके यशस्वी जीवन की एक झलक देखी थी। वास्तव में उनकी सूझ बूझ और शक्ति देखने ही योग्य थी। हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अन्तिम अधिनायक के रूप में उनकी नियुक्ति 'जल में रहकर मगर से वैर" जैसी ही बात थी।

हिन्दी के लिए भी उन्होंने बहुत कार्य किया। हैदराबाद राज्य की पुरानी हिन्दी प्रचार सभा के संस्थापकों तथा उन्नायकों में वह अग्रणी थे। हिन्दी महाविद्यालय की स्थापना मे उनका मुख्य हाथ रहा।

वह हिन्दी के अच्छे लेखक भी थे। उन्होंने अब्राहम लिंकन की जीवनी हिन्दी में लिखी थी। उनका एक कहानी संग्रह 'भावक' नाम से भी प्रकाशित हुआ है।

कांग्रेस मे अपनी लोकप्रियता के फलस्वरूप ही वह राज्य के पहले अर्थ मन्त्री नियुक्त हुए और आंध्र-राज्य के निर्माण के बाद उन्हे ससद का सदस्य चुना गया। अस्वस्थता के ही कारण उन्होंने १६६२ के चुनाव में खड़ा होने से इन्कार कर दिया। उनकी आयु के साठ वर्ष पूरे होने पर हैदराबाद की जनता ने एक वृहद् अभिनन्दन ग्रथ भेंट करके उनका जो सम्मान किया था, वह उनकी चहुंमुखी व्यापक लोकप्रियता का ही सूचक था।

गत जुलाई मे मारवाडी सम्मेलन के अवसर पर जब उनसे भेंट हुई तो मैने देखा कि वह उस समाज में भी लोकप्रिय हैं। सचमुच ही उनके निधन से आंध्र राज्य का एक ऐसा साहसी तथा सूझ बूझ सपन्न धार्मिक तथा राष्ट्रवादी नेता उठ गया, जिसके अभाव की पूर्ति सहज में न होगी।

राष्ट्र भाषा

श्रीयुत
डा० मु शीराम शर्मा
डी–लिट्०
आर्य नगर, कानपुर

जब हम किसी देश का नाम लेते हैं तो स्वभावत यह प्रश्न उठता है कि हम उस देश को यह नाम क्यो देते हैं। चीन का नाम चीन क्यो है और भारत वर्ष को भारत वर्ष क्यो कहा जाता है ? नर-शास्त्र विज्ञानी एक दम कह उठेंगे कि जिस भूखण्ड मे समान विचार धर्मा मनुष्य रहते हैं, वह एक देश है। विचार और आचारकेसाथ उच्चार भी लगा हुआ है। विचारो को वहन करने वाली तथा आचार को अभिव्यक्ति देने वाली वाणी होती है। वह वाणी भी देश की एक विशेषता है किसी नर समूह के भाव, चिन्तन, आकांक्षाए प्रेरणाए, उद्बोधन जिस वाणी द्वारा अभिव्यक्त होते हैं वह वाणी उस नर समूह के जीवन मे घुली मिली रहती है। वैसे तो वाणी का स्वरूप कोस-कोस पर बदलता है परन्तु देश के मध्य भाग की बोली अपने चारो ओर फली हुई बोलियो के साथ सम्बद्ध होने से उस देश की प्रमुख बोली बन जाती है। बोलिया जिस प्रकार स्थान के कारण परिवर्तित होती हैं, उसी प्रकार काल भी उनके रूप को एक सम नही रहने देता। जो बोलिया इस समय पृथ्वी के विभिन्न खण्डो में बोली जाती हैं, वे एक सहस्र वर्ष पूर्व इस रूप मे नही बोली जाती थी। फिर भी शब्द चिरकाल तक जीवित रहते हैं। मानव की आवश्यकताए और परिस्थितिया नये शब्दो का भी सृजन करती रहती हैं। कभी कभी शब्द मर भी जाते हैं और उनका स्थान नवीन शब्द लेने लगते हैं परन्तु जैसे एक शृ खला की कडिया परस्पर जुडी रहती हैं वैसे ही प्राचीन शब्द नवीन शब्दो से एकान्त पृथक् नही हो जाते। करोड़ो वर्षों से व्यवहार मे आने वाला अग्नि शब्द आज भी मनुष्यों की जिह्वा पर विद्यमान है।

इतिहास की यात्रा मे जातिया एक भूखण्ड से दूसरे भूखण्ड में पहुचती रही हैं। इस यात्रा के व्यापारिक, धार्मिक, राजनैतिक आदि कई कारण रहे हैं। यह यात्रा दो जातियो के मिलन से शब्दो के आदान प्रदान का कार्य भी करती रही हैं। यही कारण है कि वैदिक अग्नि कही इगनिस और कही ओगनिस के रूप मे आज भी सुरक्षित है। सस्कृत का यव जावा बन गया है वरुण ने वार्नियो का रूप धारण कर लिया है। सिन्धो, मिन्टो, शिविर साइबेरिया, इन्द्रमणि अण्डमन, पक्थन पठान, पल्हव पहलवी, अर्व अरब, अस्ति एष्टि, जीव जीवस पितृ पेतर, द्यौ, ज्यू, शरमन जर्मन आर्य आयर मे परिणत हो गये हैं। विकृत हो जाने पर भी वे अपने मूल रूप से अभी सम्बद्ध हैं। इसका तात्पर्य यह नही है कि जहा ये विकृत शब्द पाये जाते हैं वहा इनकी मूल भाषा भी प्रयोग में आती होगी। यह प्रयोग वैसा ही है जैसे अक्ल, इत्मीनान, खुदा, खैर आदि शब्दो के प्रयोग हमारी भाषाओ में है।

जिस प्रकार एक भाषा के शब्द दूसरे देश और दूसरी भाषा मे पहुचते हैं और शुद्ध स्वरूप से कुछ दूर जा पडते हैं उसी प्रकार एक ही देश मे प्राचीन शब्दो के रूप भी परिवर्तित होते रहते हैं। शब्दो के रूप ही नही भाषाओ के रूपो मे भी परिवर्तन होता रहता है। किसी देश की अखण्डता पर इस परिवर्तन का कोई प्रभाव नही पडता। इसका कारण उस देश के निवासियो के जीवन का ऐकात्मिक बने रहना है। परम्परा की शृ खला मे नई कडिया जुडती रहती हैं और वे जीवन के इस ऐकात्म्य को सुरक्षित रखती है।

भाषा निश्चित रूप से एक शक्ति है जिसकी अवहेलना कभी दुखद और कभी तीव्र एव कटु परिणाम उत्पन्न कर सकती है। भाषा का समादर जब जीवन को सुचारु रूप से अग्रसर करता

रहता है तब परिणाम सुखद होता है। भाषा की अवहेलना कब होती है ? यह एक राजनैतिक प्रश्न है, जिसके साथ आर्थिक प्रश्न भी लगा हुआ है प्राय देखा गया है कि जब २ कोई देश पराधीन हुआ है तब २ उसके निवासियों पर विजेता शासकों ने अपनी भाषा थोपने का प्रयत्न किया है। परन्तु यह प्रयत्न अनैसर्गिक है। कोई भी स्वाभिमानी देश न पराधीनता को सहन करता है और न परकीय भाषा को। उपयुक्त सहाय पाते ही वह पराधीनता के पाशों को भी छिन्न-भिन्न कर सकता है और अपने ऊपर थोपी हुई भाषा को भी।

भारत वर्ष एक देश है। इसके निवासी चिर-काल से स्वातन्त्र्य सुख का उपभोग करते रहे हैं, परन्तु विगत लगभग एक सहस्र वर्षों से इसकी स्वतन्त्रता अभिन्न नहीं रह सकी है। यूनानी आक्रमण तेईस सौ वर्ष पहले हुआ था परन्तु वह भीषण होते हुए भी नगण्य सिद्ध हुआ। उसका कोई व्यापक प्रभाव जन जीवन पर नहीं पड़ा। दीनार जैसे एकाध शब्द वह हमारे अन्दर छोड़ गया है, पर विजेता होकर भी वह हम से प्रभावित अधिक हुआ। हेलियो डोरस का अपने को वासुदेव का भक्त कहना ही पर्याप्त प्रमाण समझा जायगा। शकों और हूणों के आक्रमण मानों इस देश के साथ घुल मिल जाने के लिये ही हुए थे। वसुन्धरा के इस हृदय ने जहाँ अग्नि पूजक इरानियों को अपने अंक में स्थान दिया, वहाँ हिंसक एवं बर्बरों को भी पचा कर अहिंसक, आर्य एवं मानवतावादी बना दिया। इस्लाम का भयंकर आवेगमय आक्रमण अवश्य ऐसा था जिसका व्यापक प्रभाव इस देश पर पड़ा। परन्तु यह प्रभाव भी एकांगी नहीं रहा। भारत में भी मुसलमानों को जो रूप दिया वह अन्य देशों के मुसलमानों से उन्हें भिन्न बनाये हुए है।

मुसलमानों ने भाषा की अमरती शक्ति को अनुभव करके इस देश की भाषा का ही प्रयोग अपने सामान्य व्यवहार के लिये स्वीकार कर लिया। जिन शब्दों के प्रयोग में वे अभ्यस्त थे उन शब्दों को इस देश की भाषा में मिला कर उन्होंने अपना काम चलाया। अनेक मुसलमान ऐसे भी हुए जिन्होंने इस देश की भाषा मे भी अपने ग्रन्थों का निर्माण किया। बारहवीं शताब्दी का सन्देश-रासक, तेरहवी, चौदहवी शताब्दी के अमीर खुसरो की पहेलियां और उसके उपरान्त जायसी, रहीम, खानखाना रसखान, उस्मान, नूर मुहम्मद आदि के काव्य-ग्रन्थ इसी तथ्य को सिद्ध करते हैं। मुसलमानों में एक वर्ग ऐसा अवश्य रहा है जिसने इस देश के अन्न जल पर पल कर भी, इस देश को अपना देश नहीं समझा, और परिणामत यहा की भाषा से भी जिसने परहेज किया। इसी वर्ग वाले मुसलमानो की मनोवृत्ति का अन्त देश के विभाजन में दिखाई दिया।

अंग्रेजो के आगमन ने देश के सामने एक बड़ी समस्या खड़ी कर दी। देश की आत्मा अभी सम्हल भी नहीं पाई थी कि वह पारस्परिक वैमनस्य की विभीषिका का आखेट बनकर ऐसी परकीयता के आघात का सामना करने लगी जिसका अनुभव इसके पहले उसे नहीं हुआ था। पहिले आघातों में वह अपनी परम्परा को सुरक्षित रखने के लिये कटिबद्ध थी, क्योंकि उस पर जो वार होता था वह सीधा होता था। प्रत्यक्ष एवं आसान विपत्ति को समझने में उसे देर नहीं लगी। इस बार जो वार हुआ वह अप्रत्यक्ष था, सीधा नहीं था। आगन्तुकों ने बड़ी सावधानी के साथ पद लोलुप, अर्थ के दास जनों के गले में अपनी अंग्रेज भाषा उतार दी। दुर्दैव का कैसा कठोर अभिशाप था यह ? जिस कार्य को करने में तलवार असमर्थ सिद्ध हुई थी उसे मिथ्याअहंमन्यता ने चुपचाप सिद्ध कर दिया। मैकाले की नीति फल लाई, और हममें से अनेक उच्च पदों पर आसीन होकर नकली अंग्रेज बनने में बड़प्पन का अनुभव करने लगे। यह

प्रवाह बढ़ता ही आ रहा था। पश्चिम की चका-चौंध ने हमें ऐसा मुग्ध कर दिया था कि जो कुछ अपना है उसे भूलने में जो कुछ पराया है उसे अपनाने में हम सहर्ष गौरव का अनुभव करने लगे थे। गिटपिट अंग्रेजी बोलने वाले बाबू अपने बन्धु बाँधवों से घृणा करने लगे थे। यह वैचित्र्य वस्तुत देश के इतिहास में अनुपम था। जब उन्नत चेता-महाप्राण भारतीयों की दृष्टि इधर गई तो वे भी इस वैचित्र्य को अनुभव करके स्तंभित रह गये। पर यह अमर आर्य वंश किसी विशिष्ट सन्देश को लेकर इस भूमि पर अवतीर्ण हुआ है। अंग्रेज की चाल तुरन्त समझ में आ गई। परिणामत कहीं महर्षि दयानन्द के रूप में, कहीं भारतेन्दु बनकर, कहीं राजा राम मोहन राय और रानाडे का रूप धारण कर फिर प्रसिद्ध मनीषी लोकमान्य तिलक और अन्त में सत्याग्रह सग्राम के अप्रतिम सेनानी, सत्य और अहिंसा के पुजारी महात्मा गाधी के परिवेश में इस देश की चेतना उठ खड़ी हुई। जिसने परकीयता से हट कर स्वकीयता—प्रेम का प्रचार किया और अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिये प्राण पन से चेष्टा की। गाँधीवादी कांग्रेस, सुभाष आजाद हिन्द फौज, बलिदानी युवकों की क्रांति कारिणी सस्थाओं के लोक व्यापी प्रयत्नों से देश स्वाधीन हुआ और उसने विधान मे भी हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में घोषित किया। पर न जाने परकीयता का कोई दानव चुपचाप हमारे अन्दर बैठा हुआ कैसे हमारे स्वाधीनता सुख को सहन न कर सका? जब हिन्दी राष्ट्र भाषा स्वीकार कर ली गई तभी इस परकीयता प्रेम ने गेहूं में घुन लगा दिया। प्रस्ताव पास हो गया कि हिन्दी में अभी राष्ट्र भाषा बनने की क्षमता ही नहीं है जब तक यह क्षमता इसमें न आ जाय तब तक अंग्रेजी राष्ट्र भाषा के रूप में चले।

राष्ट्र के सम्मान पर और राष्ट्र भाषा के अंग पर यह ऐसी चोट थी जिससे देश की आत्मा कराह उठी। उठी पैंठ आठवें दिन लगती है और कौन जाने वह लगेगी भी या नहीं। लोहा जब तक गर्म रहता है तब तक उसे चाहे जैसा रूप देलो। ठंडा होनेपर तो वह लोहे का लोहा ही रहेगा। स्वाधीनता के भावनामय क्षणों में किसी कार्य को करने की जो ऊष्मा रहती है, जो उत्कट लगन होती है वह कालान्तर में समाप्त हो जाती है। हिन्दी को अक्षम कहकर जब टाला गया, तब का वह क्षण देश के अभ्युदय और कल्याण के लिये घातक क्षण था। स्वाधीन होकर जातियां अपनी वस्तु की क्षमता-अक्षमता का विचार नहीं करती। वे अपनी वस्तु को अपना समझ कर ही अपनाती है और इसीलिये अपनाती है कि इसी के द्वारा उसका हित होना सम्भव है। जिस परता ने उन्हें दुर्दिन दिखाये क्या वह उनकी हित साधिका बन सकती है? फिर अक्षम को क्षम कर्तृत्व शक्ति द्वारा बनाया जाता है, टाल कर नहीं। हिन्दी अक्षम थी भी नहीं। उसके उद्भट उपासकों ने सभी विषयों को प्रकट करने की शक्ति से उसे सयुक्त कर दिया था। प्राविधिक और पारिभाषिक शब्दों के निर्माण मे अधिक से अधिक एक दो वर्ष लगते। कार्य किसी न किसी प्रकार से चल ही सकता था। परन्तु चोटी पर बैठे हुए कुछ देश द्रोहियों को यह कैसे रुचिकर हो सकता था? अब अनिश्चित अवधि के लिये अंग्रेजी को देश के ऊपर थोपने का जो उपक्रम सोचा जा रहा वह इस देश की उठती हुई उमगों के साथ घोर विश्वास घात है। अंग्रेजी हिंदी की सखी नहीं उसके ऊपर शासन करने वाली बनने जा रही है। क्या देश की आत्मा इसे सहन करेगी हिन्दी भाषा भाषियों की ओर से नहीं इसका उत्तर अहिन्दी भाषा-भाषियों की ओर से देश की वर्तमान सरकार को मिलना चाहिये।

जहाँ तक मैं सोच सकता हूं देश का कोई भी

भाग अपनी भाषा के इस अपमान को क्षण भर के लिये भी सहन नहीं कर सकेगा। प्रान्तीय भाषायें अपने अपने क्षेत्र में बच्चों की सम्पूर्ण शिक्षा का माध्यम बने और अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिये देश के सर्वाधिक भागों में, सर्वाधिक जन समुदाय द्वारा बोली और समझी जाने वाली हिन्दी भाषा ही स्वीकरणीय होनी चाहिये। अंग्रेजी भाषा का भाषा के रूपमें हम विरोधनहीं करते। पर वह यदि हमारी राष्ट्रभाषा काकार्य करे तो इसका हम प्रबल से प्रबल विरोध करेंगे और जहाँ तक हमारी शक्ति है हम इसे राष्ट्र भाषा नहीं होने देगें। अंग्रेजी को स्वीकार करके और हिन्दी की उपेक्षा करके क्या हम आत्मघात करने के लिये उद्यत हो रहे हैं ?

राम ने लक्ष्मण से कहा था "अपि स्वर्णमयी लंका न माम् लक्ष्मण रोचते।" जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। "लंका चाहे जितने सोने की बनी हो, उसमें स्वर्ग से बढ़कर भी सुख हो, पर जो सुख अपनी अयोध्या में है वह एक क्या कोटि-कोटि लंकाओं में भी नहीं होगा। अंग्रेजी चाहे जैसी वैभवशाली हो, चाहे जितनी सक्षम हो, पर जो सुख हमें अपनी मातृभाषा के बोलने में मिलता है, जो गौरव अपनी राष्ट्रभाषा के प्रयोग में अनुभव होता है वह अंग्रेजी द्वारा प्राप्त नहीं हो सकेगा। "आंग्ल भाषा विभवेऽपि स्नेहल माम् न रोचते "जननी राष्ट्रभाषा च, सर्वाभ्योऽपि गरीयसी।" जहाँ तक शिक्षा का सम्बन्ध है वह अपनी मातृ भाषा द्वारा होनी चाहिये। अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिये राष्ट्र भाषा हिन्दी रहेगी। अन्य देशीय व्यवहारों के लिये तथा अपनी ज्ञान वृद्धि के लिये हम अंग्रेजी भी पढ़ेंगे और अंग्रेजी ही क्यों, जर्मन, रशियन, इटेलियन आदि किसी भी भाषा को पढ़ने के लिये हम सचेष्ट होंगे पर इनमें से किसी भी भाषा को हम अपनी पाठविधि में अनिवार्य विषय का स्थान नहीं देंगे। वे विकल्पों के अन्तर्गत रहेंगी और उन्हें सुकुमार मति बालक नहीं, वयस्क विद्यार्थी पढ़ेंगे। अंग्रेजी के प्रेमी यदि अंग्रेजी को रखना चाहते हैं तो वह इस देश की रानी बनकर नहीं, दासी बनकर रह सकती है। रानी के रूप मे उसने सबसे प्रबल आघात जो देश की आत्मा के ऊपर किया है उसे हम अब अधिक सहन नहीं कर सकते। और सौ बातों की एक बात हम लोकोक्ति में है कि- ओसनु प्यास बुझै नाहि मोहन, पानी भलो अपने ही घड़ा को, अपना घड़ा अपने घर मे है। जब चाहो आँज कर पानी पी लो। ओस चाटने से पहले तो प्यास ही नहीं बुझेगी और फिर ओस न सब स्थानों पर मिलेगी और न सब कालों में। अंग्रेजी से काम निकालना भी ओस चाटने के समान ही है। उसके लगभग दो सौ वर्षों के आधिपत्य मे केवल १॥ प्रतिशत जनता उसे अपना सकी है। देश के कोटि-कोटि जन समूह के व्यवहार का निर्वाह वह क्या खाकर कर सकेगी ? उसके हिमायती आँखें खोल कर निष्पक्ष हृदय से इस तथ्य पर विचार करें। परकीय प्रेम मे इतने आसक्त न हों कि वे इसके आवेश मे अपने घर को ही बरबाद कर बैठे और जो स्वाधीनता वर्षों के बलिदानों के उपरान्त प्राप्त हुई है, उसे व्यर्थ सिद्ध कर दें।

राष्ट्र के नागरिकों का भी कुछ कर्तव्य है। हमारा राज्य एक प्रजातन्त्रात्मक राज्य है, जिसमें प्रजा का स्वर सर्वोपरि माना जाता है। हम सबको इस प्रजातन्त्र का अंग होनेके कारण स्थान स्थान पर सभाओं का आयोजन करके सरकार के पास यह प्रस्ताव भेजना चाहिये कि वह संविधान में दी हुई सन् १९६५ की अवधि का उलघन न करे और अंग्रेजी के स्थान पर अपना समस्त कार्य हिन्दी भाषा में करने के लिये कटिबद्ध हो। प्रभुता प्रेमी थोडे से अंग्रेजी जानने-वालों के स्वार्थ का आखेट न बनकर सरकार प्रान्तीय भाषाओं में बच्चों की शिक्षा सम्पू

भारत का तत्त्ववेत्ता राष्ट्रपति
डा० राधा कृष्णन

[श्रीयुत ऐस० जी०]

प्लेटो ने दार्शनिक राजाओ का स्वप्न लिया था परन्तु इन २००० वर्षों में उसका स्वप्न स्वप्न ही बना रहा। जनक राम, अशोक और हर्ष प्रभृति राजा विरले ही होते हैं। सभवत प्राचीन आर्यों ने इस तथ्य को अनुभव किया और उन्होने राजा को धर्म-मार्ग मे आरूढ रखने के उद्देश्य से राजगुरु की परम्परा डाली।

उन दिनो राजगुरु की शक्ति बहुत बढी चढी थी। अत्याचारी भी उसका भय खाता था परन्तु ज्ञान और गुणों से युक्त राजगुरु की ही कल्पना की जाती थी। इन सब से बढ कर उससे आशा की जाती थी कि वह निर्लेप और निष्पक्ष होगा और वैयक्तिक राग द्वेष से ऊपर उठा होगा।

जिस दिन भारत के नए राष्ट्रपति डा० एस० राधाकृष्णन् ने कार्य-भार सभाला उस दिन राष्ट्रपति भवन मे आयोजित एक सामाजिक समारोह में फ्रास की एक कवियित्री से मेरी भेट हुई। उसने कहा "आप लोग बडे भाग्यशाली हैं कि आपका राष्ट्रपति एक तत्त्ववेत्ता है। ऐसा सुसस्कृत राज-प्रमुख अन्यत्र कहा है जिसका हृदय राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों क्षेत्रों में विविध अनुभूतियों से ओत प्रोत हो ?"

भविष्यवाणी सत्य हुई

लगभग ३५ वर्ष हुए आध्र के सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री डा० सी० आर० रेड्डो ने प्रो० राधाकृष्णन् की आध्र विश्वविद्यालय के वाइस चासलर पद पर नियुक्ति का स्वागत करते हुए भविष्य वाणी की थी कि "चित्तूर के जिले ने पूर्व ही मदरास राज्य को दो मुख्य मन्त्री, अनेक मन्त्री और दो वाइस चासलर प्रदान किये हुए हैं मैं यह भविष्यवाणी करने का साहस करता हूँ कि भारत का भावी राष्ट्रपति किसी न किसी दिन इसी जिले का होगा।" राधाकृष्णन भी चित्तूर जिले के निवासी हैं। श्री नेहरू जी की बुद्धिमत्ता को धन्यवाद है कि उसने ऐसे देश-भक्त को उपराष्ट्रपति चुना जो न तो राजनैतिक आन्दोलन के दिनो मे जेल गए और न जिनका किसी दल के साथ ही लगाव है।

देश में प्रारम्भ करदें और अंग्रेजी को जोकि तीसरी कक्षा से ही सुकुमार बालकों के सिर पर लादी जा रही है अविलम्ब हटा दें।

हिन्दी के लेखकों तथा साहित्य के कर्णधारों का भी कुछ कर्त्तव्य है। वे गभीर दृष्टि-निक्षेप द्वारा ऐसे विषयों और क्षेत्रों की खोज करे जो जन-जीवन के लिए आवश्यक हों, पर जिनपर हिन्दी में ग्रथ रचना न हुई हो। हिन्दी को वे समुचित ज्ञान भण्डार से भरी भाषा बनाने की ओर सचेष्ट हों। अन्य भाषाओं के पास जो विज्ञान-सम्पत्ति है, उसे अनूदित करके अथवा स्वतंत्र रचनाओं द्वारा वे हिन्दी भाषा में ले आवें। किसी समय सस्कृत ने यह कार्य किया था और वह अपनी महत्ता से भारत ही नहीं, विशाल भारत की भाषा बन गई थी। हिन्दी उसी की उत्तराधिकारिणी के रूप में इस देश की तो राष्ट्र भाषा बने ही, वह इससे बढ़कर अन्तर्देशीय व्यवहार एव ज्ञान-वर्धन की भी भाषा बने। परम्परा हमारे साथ है। प्रयत्न हमारे हाथ में है। क्या हम दोनों के प्रयोग द्वारा अपने दायित्व का निर्वाह करे गे ?

इस प्रकार डा० सी० रेड्डी की भविष्यवाणी सत्य हो गई है।

महात्मा गाधी का स्वप्न था कि स्वतन्त्र भारत का पहला राष्ट्रपति किसान होना चाहिए। उनका स्वप्न पूरा हुआ क्योंकि पूरे १२ वर्ष तक हमारा राष्ट्रपति 'जीरादेई का किसान' रहा जिसके हाथ में देश का भाग्य-सूत्र रहा।

राष्ट्रपति महोदय की ७४वी वर्ष गाठ ५ ९-६२ को मनाई गई।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने अपने पीछे बडी उदात्त परम्पराए छोडी हैं। अब एक बार फिर हमारा राष्ट्रपति एक ग्राम नवासी है। डा० राधा कृष्णन आंध्र प्रदेश के तीरुत्तानी ग्राम के निवासी हैं।

तिलुगु लोगो ने भारतीय दर्शन धर्म्म और सस्कृति में उल्लेखनीय योग दिया है। डा० राधा कृष्णन उन्हीं महानुभावों की सीधी परम्परा में से हैं।

राष्ट्रपति से यह आशा की जाती है कि वह एक स्तर और आदर्श उपस्थित करे साथ ही सार्वजनिक जीवन को उत्तम दिशा प्रदान करे। डा० राधाकृष्णनने ४मासके भीतर ही नेताओ और उच्च राज्याधिकारियो को अपने अनुकरणीय ढग से यह अनुभूति करा दी है कि वह समस्त स्तरो पर स्वच्छ और कुशल प्रशासन देखना चाहते हैं और यह नहीं चाहते कि वह अत्यधिक महगा हो। ऐसे समय मे जबकि हम आन्तरिक साधनों से तथा बाहर से ऋण में प्राप्त धन व्यय कर रहे हैं हमें यह देखना उचित है कि ढिलाई या अपव्यय से धन की बर्बादी या दुरुपयोग न हो। उनका कहना है कि सार्वजनिक धन के प्रति हमे स्वच्छ भावना का विकास करना चाहिए।

मितव्ययिता

उन्होने स्वय भी एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। जब से वह राष्ट्रपति भवन में आए हैं तबसे निरन्तर उनकी यह चिन्ता रही है कि राष्ट्रपति भवन का अपव्यय और वाह्याडम्बर किस प्रकार कम किया जाय। उन्होंने राष्ट्रपति निवास के नाम से विख्यात शिमला एसटेट को सार्वजनिक कार्य के उपयोग के लिए छोड दिया है। वह राष्ट्रपति भवन के एक भाग को किसी सामाजिक और सांस्कृतिक कार्य के प्रयोगार्थ छोड देने का विचार रखते हैं। यदि उन्हें स्वतन्त्रता हो तो वह अपने लिए एक छोटे से मकान को पसन्द करेगे। थोडे से कर्मचारियो से अधिक से अधिक सफलता प्राप्त करने में उनका विश्वास है। आज राष्ट्रपति भवन में सर्वत्र व्यय को घटाने का प्रयास देख पडता है। वह नितान्त न्यून स्टाफ के साथ रेलगाडी की अपेक्षा वायुयान से यात्रा करना पसन्द करते हैं। अभी कुछ दिन हुए वह अपने सैनिक सेक्रेटरी, एक ए० डी० सी० एक पी० आर० ओ० अपने प्राइवेट सेक्रेटरी और निजी सेवक के साथ हवाई जहाज में जोधपुर गए थे। वह गाजे बाजे का प्रयोग नहीं करते। वह राष्ट्रपति के उच्चपद से अधिक वैभव-विलास को कम करने के प्रयत्न में सलग्न हैं। उन्होंने न्यूनाधिक रूप से विलासिता से परिपूर्ण रेल यात्राओं का परित्याग कर दिया है क्योंकि ये यात्राए अधिक समय लेती हैं महगी और थकाने वाली होती हैं। इससे व्यय में बहुत कमी आ जायगी। इस प्रकार की बचत से वह राष्ट्रपति एस्टेट के बच्चो की शिक्षा के लिए एक नमूने का स्कूल खोलना चाहते हैं।

राष्ट्रपति भवन न्यूनाधिक रूप मे सूना सा दिखाई पडता है। मित्रों एव रिश्तेदारों को अनावश्यक रूप से वहा आने और ठहरने के लिए प्रोत्साहित नही किया जाता है। उनके पास एक मात्र उनका पुत्र और पुत्र वधू रहते हैं। उनके पुत्र डा० गोपाल के पास जो परराष्ट्र मत्रालय के इतिहास विभाग के डाइरेक्टर हैं अपनी निजी कार है। अभी कुछ दिन हुए वह सरकारी यात्रा पर

शुद्धि पचार

४६० ईसाई आर्य धर्म में दीक्षित

श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी वेद व्यास वैदिक आश्रम राउर केला सरस्वती की प्रेरणा पर ५-६ ६० को ४६० ईसाइयों की शुद्धि की गई

५७३३ बहाईवैदिक धर्म मे आए

उज्जैन १८ सितम्बर। उज्जैन से समाचार प्राप्त हुआ है कि अगस्त मास में अराष्ट्रीय— ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति दिल्ली के प्रचारकों द्वारा ५१ ग्रामों में हुए प्रचार से प्रभावित होकर ५७३३ बहाई बने हुए बलाइ शुद्ध होकर वैदिक धर्म में वापस आगए है। इससे पूर्व जौलाई६० तक १८३५४बहाइयोंको शुद्ध करके वेदिक धर्म मे वापस लिया जा चुका है।

ज्ञानचन्द
मन्त्री
अराष्ट्रीय ईसाई प्रचार निरोध सयुक्त समिति
दीवान हाल दिल्ली

दक्षिण गए थे। त्रिपुटी स्थान तक अपने बच्चो को अपने साथ ले जाने की उन्होने अनुमति दी थी। वह भी कुछ मन्दिरो को देखने के लिए जाने के लिए। वह सरकारी कार्य से वायुयान द्वारा बगलौर गए थे। उनकी पुत्रवधू भी बगलौर की है। उसने भी उनके साथ हवाई जहाज मे बगलौर जाना चाहा परन्तु उन्होने इसकी अनुमति नही दी।

नियमित जीवन

मदरास जाने पर वह राज भवन के स्थान मे मालापुर मुहल्ले मे स्थित अपने छोटे से स्वच्छ घर में ठहरे थे। राष्ट्रपति का जीवन घडी की सुई की भाति नियमित चलता है। सरकारी काम के प्रसग मे उनसे मिलने वाले अफसरो के लिए घण्टे और मिनिट नियत रहते हैं। एक अफसर ने मुझे बताया कि वह 'फालतू बात पसन्द नही करते। राष्ट्रपति महोदय भीतर से इतने नियन्त्रित हैं कि वह अपने मौखिक भाषण को नियत समय के अन्तिम सेकेन्ड तक पूरा कर देते हैं। अपने कार्यों में वह बडे नियमित रहते हैं। हैदराबाद मे उनके सम्मान में आयोजित नागरिक अभिनन्दन समारोह मे वर्षा से विघ्न पड गया और मूसलाधार वर्षा होने लगी परन्तु राष्ट्रपति ने वर्षा को चुनौती को स्वीकार किया और अभिनन्दन समारोह सम्पन्न हुआ भले ही वह एक हाल मे करना पडा।

राष्ट्रपति के द्वार प्रत्येक के लिए खुले हुए हैं। वह बडे ध्यान और सहानुभूति से बातें सुनते हैं। परन्तु वह धूर्तता, मक्कारी, चापलूसी (चाटुकारिता), धोखा धडी, धार्मिक आडम्बर और बनावटी पन को सहन नही करते। ऋषिकेश के एक स्वामी ने उनसे प्रार्थना की कि 'आप प्रधानमन्त्री नेहरू को मेरे आश्रम मे जाने के लिए तय्यार करने मे अपने उच्च पद का प्रयोग करे।" राष्ट्रपति ने मुस्कराते हुए कहा स्वामीजी! आपको प्रधान मन्त्री के स्थान मे परमात्मा के पास जाने की सोचनी चाहिए। डा० राधाकृष्णन सूखे और पीले दार्शनिक नही हैं। उनकी मान्यता है कि तत्व ज्ञान को जीवन में सुखद परिवर्तन करना चाहिए। ज्ञान, कर्म और दयाभाव से प्रेरित होकर वे प्राणियो के सम्पर्क मे रहने का प्रयास करते हैं और इसी ने उन्हें सप्ताह मे दो बार जन साधारण से मिलने की व्यवस्था करने की प्रेरणा दी है। उनका विश्वास है कि इस सीधे सम्पर्क से सार्वजनिक बुराइयो मे सुधार हो सकता है उनके इस उदाहरण का अनुसरण भी होने लगा है। कहा जाता है कि पजाब के मुख्यमन्त्री सरदार प्रतापसिंह कैरो दो बार अपने दरबारे आम में सम्मिलित हुए और निजी अनुसधान के लिए पजाब के प्रशासन से सम्बद्ध कुछ गम्भीर शिकायतें अपने साथ ले गए।

स्त्री

-रघुनाथ प्रसाद पाठक

संस्कृत शब्द-कोष के अनुसार 'स्त्री' कई नामों से सम्बोधित होती है परन्तु ३ शब्द अत्यधिक प्रचलित हैं 'स्त्री, नारी और महिला। उनकी व्युत्पत्ति बड़ी सार गर्भित है। 'स्त्री' शब्द 'स्त्यै' धातु से बना है। यास्क के मत में स्त्यै' का अर्थ है लज्जा से सिकुड़ना। 'स्त्री' को 'स्त्री' इसलिये कहते हैं कि वह लजाती है। नारी शब्द 'नृ' अथवा नर से बना है। नारी का भाव नरों का उपकारक अथवा शत्रु न होना। 'महिला' म + इलय + आ = महिला। 'मह' का अर्थ पूजा है। पूज्या होने के कारण स्त्री का नाम 'महिला' पड़ा।

सृष्टि की व्यवस्था मे प्रथम स्थान परमात्मा को और दूसरा स्थान स्त्री को प्राप्त है जो हमे जन्म देती, हमें सृष्टि में रहने योग्य बनाती और हमें शुद्ध पैरों के सहारे सुखमय जीवन यापन का सामर्थ्य प्रदान करती है।

स्त्रियों के प्रति आदर की भावना

स्त्रियों के प्रति आदर की भावना सभ्यता की सूचक होती है। वही मानव मनुष्य कहलाने का अधिकारी होता है जो स्त्रियों के साथ आदर का व्यवहार करता है इसी प्रकार जो स्त्री मनुष्यों के हृदय मे अपने प्रति आदर की भावना जाग्रत रखती है वही सच्ची स्त्री समझी जाती है। दोनों में एक दूसरे के प्रति आदर भावना के जाग्रत रहने से उनमें पारस्परिक प्रतिस्पर्धा और प्रतियोगिता के लिये स्थान नहीं रहता।

स्त्री घर की शोभा होती है

स्त्री घर की शोभा होती है। स्त्री के बिना घर उजाड़ और वीरान होता है। घर को स्त्रियों ही बनाती और बिगाड़ती हैं। नारी के जीवन की सर्वोत्कृष्ट गति और सफलता यह है कि वह अच्छी पुत्री, अच्छी पत्नी और अच्छी माता बने। जिन घरों में पुत्रियों और बधुओं का आदर होता और पुत्रों एव पुरुषों से भिन्न भेद भाव का उसके साथ व्यवहार नहीं किया जाता वे घर खूब फलते-फूलते हैं। अत्याचार और अनाचार से परिपीड़ित नारियों की आहें व्यर्थ नहीं जाती। भगवती सीता की आहों से रावण जैसा महा पराक्रमी और दुर्दान्त योद्धा कुत्तों की मौत मरा और उसकी सोने की लंका धूल में मिली। दुर्योधन की सभा में द्रौपदी का घोर अपमान महाभारत का प्रबल हेतु बना जिसकी आग में न केवल दुर्योधन ही अपने बन्धु-बान्धवों के साथ भस्मसात् हुआ अपितु उसमें भारत का सर्वस्व भी नष्ट हो गया।

स्त्रियां अवध्या होती हैं

स्त्रियों अवध्या होती हैं। व्यवहार की यह मर्यादा स्त्रियों के प्रति सम्मान और उनकी सुरक्षा की भावना से प्रकाशमान है। सद्व्यवहार, स्त्रियों के प्रति शिष्टता का सूचक होता है। उनके प्राण लेना, उन्हे मारना-पीटना अनुचित होता है। जब क्रोध मे भरे हुये शत्रुघ्न कुबरी मथरा को राम-बन गमन का हेतु समझ कर मारने पीटनेलगे तब महात्मा भरतने उन्हें वर्जतेहुए कहा स्त्रिया अवध्या होतीहै। यदि राम को हमारे इस दुष्कृत्य का पता लगेगा तो वह हमसे बोलना भी पसन्द न करेंगे।"

स्त्री प्रत्येक बड़े कार्य में आगे मानी जाती है

हमारे यहाँ राज्याभिषेक के समय राजा के साथ रानी और उसकी अनुपस्थिति में उसकी मूर्त्ति का होना, राज्याभिषेक के अनुष्ठान के समय, कन्याओं का सबसे आगे रखा जाना किसी शुभ कार्य के लिये जाते वा अभिनन्दन करते समय माताओं, बहिनों, कन्याओं आदि के द्वारा तिलक लगाया जाना उपर्युक्त बात का

प्रतिपादक है। स्त्री के हाथ के स्पर्श से आत्मा और हृदय दोनों आपस में मिल जाते हैं और मनुष्यों के हृदयों मे उत्साह और शक्ति उल्लास एव शुभ भावनाओं का सचार हो जाता है।

पुरुष और स्त्री में एक जैसी आत्मा

पुरुष और स्त्री में एक जैसी आत्मा है। स्त्री के मस्तिष्क मे विकास की वैसी ही क्षमताए होती हैं जैसी पुरुष में। अनेक अवस्थाओं में तो यह क्षमताए पुरुष की क्षमताओं से ऊपर चली जाती है अत स्त्री भी पुरुष के समान शिक्षा और विकास की अधिकारिणी होती है। कुछ व्यक्ति इतने अनुदार होते हैं कि वे यह समझते हैं कि स्त्रियाँ बुरी होती हैं। उन्हें शिक्षित करने से अहित होता है परन्तु वे भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि स्त्री के शरीर की बनावट पुरुष के शरीर की बनावट की अपेक्षा अधिक आश्चर्य जनक और सुन्दर होती है। क्या यह कल्पना की जासकतीहै किपरमात्मा उनके सुन्दर शरीरमे आत्मा नहीं रखता है यदि रखता है तो वह निकृष्ट होती है। स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक होते हैं। कुछ काम ऐसे हैं यथा सन्तान-पालन और गृहस्थ का निर्माण एवं संचालन जिन्हें स्त्री ही सुचारु रूप से कर सकती है। कुछ काम अर्थोपार्जन रक्षा आदि कार्य पुरुष ही यथोचित रीति से कर सकता हैं। स्त्री और पुरुष के शरीरों की बनावट उनकी स्वाभाविक रुचियों, प्रवृत्तियों और क्षमताओं से यह भेद स्पष्ट होता रहता है। अत स्त्री और पुरुष की शिक्षा और उनके विकास मे इस मौलिक भेद को दृष्टि मे रखना चाहिये। इस भेद की उपेक्षा करके स्त्रियोंके शिक्षण और विकास की जो योजनाए बनाई जाती हैं उनसे एक दूसरे के कर्त्तव्य क्षेत्रों में व्यवधान उपस्थित होकर अनिष्टकारी परिणाम निकलते हैं। अवश्य स्त्री और पुरुष दोनों ही आत्मिक विकास के समान रूप से अधिकारी होते हैं और एक दूसरे के मित्र, सहायक और पूरक होते हैं स्वामी और दासी नहीं। स्त्री पुरुष की पूरक ही नहीं अपितु वह उसे पशु से मानव बनाने वाली भी होती है। यदि स्त्री कुपथगामिनी होती है तो उसका दायित्व पुरुष पर ही होता है। स्त्रियों के प्रति हीन भावना, पुरुष द्वारा उन पर होने वाला अत्याचार अनाचार आदि ही स्त्री को कुपथ गामिनी बनाते है। जब स्त्री कुपथ-गामिनी हो जाती है तो वह अति पर भी पहुच जाती है। मानव इतिहास मे वह स्थल बडे घिनौने हैं जिनमें स्त्री को पैर की जूती, ताडना की अधिकारिणी और भोग की वस्तु मानकर मनुष्य ने उसके तथा मानवता के प्रति घोर अपराध किया और अपने चारित्रिक दिवालिया पन का परिचय दिया है। चरित्रकी तुलनामें मनुष्य जितना हल्का होगा उतना ही वह स्त्रियों के प्रति हीन भावना से युक्त होगा। स्त्री एक मात्र भोग की वस्तु नहीं होती। वह तो मनुष्य को सयम सिखाने के लिये निर्मित हुई है जिससे उसका पशुत्व सीमा में रहे, वह देवत्व के विकास में सहायक हो और अपना आध्यात्मिक योग क्षेम सम्पन्न करे। जिन व्यक्तियों वा जातियों का केन्द्र बिन्दु स्त्री रहती है उनके विनाश की प्रक्रिया शीघ्र ही पूर्ण हो जाती है। इतिहास इस बात का साक्षी है।

परमात्मा की सुघड़ कृति

सरल, सुन्दर और पवित्र स्त्री में परमात्मा की उत्कृष्ट कृति के दर्शन होते हैं जिस पर विश्व की कलायें न्यौछावर रहती हैं। सुन्दर स्त्री रत्न होती है तो पवित्र और सुन्दर स्त्री बहुमूल्य कोष होता है। सुन्दर स्त्री को किसी आभूषण की आवश्यकता नहीं होती। लज्जा शीलता, सच्चरित्रता, निरभिमानता और पति-निष्ठा ही उसके वास्तविक अलंकार होते हैं। कष्ट, घृणा और अत्याचार के परीक्षणों में गुज़र कर भी जो स्त्री अपने शील की रक्षा करती हैं वे ही मनुष्य के

आदर और प्रेम को जीततीं और वे ही सुन्दरता को मानव-समाज के लिये देन बनाती हैं। सुन्दरता को परिवार या समाज के लिये अभिशाप बनाने वाली स्त्रियों पद-पद पर अपमानित और लॉछित होतीं एवं इतिहास को कलुषित करती रहती हैं। वे नारियाँ धन्य हैं जो इतिहास को समुज्ज्वल करतीं और अपनी बाहरी सुन्दरता को भीतरी सुन्दरता से चमका कर सुशोभित होती हैं।

रूप-लावण्य

रूप और लावण्य पर अभिमान करना व्यर्थ है क्योंकि यह क्षणिक होते हैं। सच्चा सौन्दर्य तो भीतरी होता है। इसके बिना सुन्दरी-कुरूपा और कुरूपा-सुन्दरी बन जाती है। निस्सन्देह रूप का मन पर प्रभाव पड़ता है, परन्तु हृदय पर गुणों का ही प्रभाव पड़ा करता है। यदि बाहरी चमकते हुए आवरण के भीतर गुणों से चमकता हुआ आत्मा निवास नहीं करता तो हृदय पर दुष्प्रभाव पड़ता है। बाहरी सुन्दरता की पूर्णता आत्मा की सुन्दरता से होती है जो बाह्य आवरण पर आभा बखेरता रहता है।

स्त्री लज्जा की मूर्ति

स्त्री लज्जा, धैर्य और सहन-शीलता की साक्षात् मूर्ति होती है। कुल-मर्यादा की रक्षा, पति-निष्ठा, सन्तान के पालन-पोषण, शिक्षण एवं रक्षण में तो उसके ये गुण दिव्य बन जाते हैं। आत्म-त्याग का सर्वोत्कृष्ट रूप कहीं देखना हो तो वह स्त्री में ही देखा जा सकता है। दुःखी और पीड़ित व्यक्ति उसके अपने होते हैं। वह बेंत के समान होती है जो हल्के झोंके से झुकती तो है परन्तु तूफानों से भी नहीं टूटती। वह सुखसमृद्धि में ही नहीं विपत्ति और कष्ट में भी पति का सहारा होता है। कहा जाता है कि सुन्दर चेहरा सबसे बड़ी सिफारिश होती है और स्त्रियों की चितवन में कायदे कानूनों से अधिक शक्ति होती है। उनके आँसुओं से प्रबल से प्रबल तर्क भी कुंठित हो जाते हैं परन्तु चेहरे, चितवन और आँसुओं में पवित्रता, निर्दोषिता और दिव्यता होनी चाहिये तभी उनका प्रभाव पड़ा करता है। स्त्री कुरूपा, दुष्टा और मूर्खा हो सकती है परन्तु वह हँसी मखौल का पात्र कभी नहीं हो सकती। सभ्य व्यक्ति प्रतिक्षण इस मर्यादा का ध्यान रखते हैं।

स्त्रियां अविश्वसनीय नहीं है

स्त्री जाति पर यह आक्षेप किया जाता है कि वह अविश्वसनीय है और उसके मन में बात नहीं छिपती। कुछ अवस्थाओं में यह बात ठीक हो सकती है परन्तु सर्वांश में ठीक नहीं है। उसके हृदय में ऐसी अनेक गुप्त बातें छिपी रहती हैं जिन्हें वह स्वयं अपने से भी छुपा कर रखती है। स्त्री जितनी अधिक पूज्या होती है उतनी ही अधिक गुप्त बातें उसके मन में छुपी रहती हैं। स्त्री को बड़ा कोमल, चंचल और दयापूर्ण हृदय प्राप्त होता है। वह मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय से ही अधिक सोचती है। इसीलिये उससे अनेक बड़ी-बड़ी भूलें हो जाती हैं परन्तु इसका सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि महत्वपूर्ण विषयों पर उसके निर्णय पुरुषों की अपेक्षा अधिक सार गर्भित एवं उपयोगी होते हैं। मनुष्य में बाह्य प्रेरणा और स्त्री में अन्त प्रेरणा अधिक होती है। स्त्री प्रतिभा को बहुत शीघ्र पहचानती और ज्ञान की बात को अधिक ध्यान से सुनती है। मस्तिष्क से सोचने वाली स्त्री इतनी अच्छी नहीं लगती जितनी हृदय से सोचने वाली लगती है। गुलाब का सफेद फूल लाल फूल की तुलना में कम सुन्दर होता है।

भगवती सीता का उदाहरण

जो स्त्री पुरुष के कर्त्तव्य पालन में सहायिका होती है उसी का पुरुष के प्रति प्रेम सच्चा माना जाता है। हनुमान के अनुरोध पर भगवती सीता

श्रीयुत बाबू कालीचरण जी आर्य का दक्षिण भारत का भ्रमण

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के मन्त्री श्री बा० कालीचरण जी आर्य ने १२-८-६२ से ५-९-६२ तक दक्षिण भारत का भ्रमण करके आर्य समाजों की गति विधि का निरीक्षण किया और कार्य के विस्तार की स्थिति का अध्ययन किया। वे पूना, शोलापुर, बैलगाम, पंजिम (गोवा) मठग्राम (गोवा) हुनावर, उडुप्पी, कार्कल (दक्षिण कनारा) बैनूर, मंगलौर, मैसूर, बंगलूर, मदरास और नागपुर गए।

दक्षिण भारत में कतिपय आर्य समाजों की स्थिति दृढ़ है और अनेक आर्यसमाजों की स्थिति दृढ़ नहीं है। वहाँ की स्थिति के दृढ़ीकरण के लिए यह आवश्यक है कि वहाँ अधिक से अधिक संख्या में उपदेशक जायं। वानप्रस्थी और संन्यासी महानुभावोंसे अधिक कार्यकी आशाकी जा सकती है जो वहाँ जमकर बैठ जाय। कम से कम इन महानुभावों का २-२, ४-४ मास का भ्रमण भी हो जाय तो कार्य के आगे बढ़ने की आशा की जा सकती है। वहाँ के प्रचार के लिए उपदेशक महानुभावों को वैदिक सिद्धान्तों और आर्य समाज की गतिविधि से पूर्ण परिचित होने के अतिरिक्त संस्कृत और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

दक्षिण भारत में ही वहाँ की लोक भाषाओं के उपदेशकों के प्रशिक्षण का भी यत्न होना चाहिए। यह विषय भी सार्वदेशिक सभा के विचाराधीन है. शोलापुर, बंगलोर और मदरास में आर्य समाज की अच्छी प्रगतियाँ देख पड़ीं। वहाँ अनेक उत्साही आर्य कार्य में संलग्न हैं। शोलापुर में श्री प्रि० भगवानदास जी का पहुंचना एक वरदान सिद्ध हुआ है।

गोआ मे हिन्दुओं के अतिरिक्त ईसाइयों की भी पर्याप्तसंख्या है।परन्तु अब वहाँ हिन्दुओं का सामूहिक रूप मे ईसाई बनना बन्द हो गया है। आर्य समाज को वहाँ की सुधि भी लेनी है।

ने रावण की कैद से न निकलने का प्रबलतम हेतु यह दिया था कि मेरे चुपचाप निकल जाने से राम की कर्त्तव्य पूर्ति में बाधा उपस्थित हो जायगी। वे क्षत्रिय हैं। उन्हें क्षात्र धर्म का पालन करके और अपनी वीरता दिखाकर ही मुझे बन्धन-मुक्त करना है। भगवती सीता का यह उदाहरण बड़ा प्रेरणादायक है।

उपसंहार

आर्य संस्कृति में स्त्री के ज्ञान और विद्या की चरम परिणति "सरस्वती" में, धन और सम्पदा की "लक्ष्मी" में और वीरता की 'दुर्गा' में मंडित देख पड़ती है। वस्तुतः स्त्री अपने ज्ञान, अपने गृह-प्रबन्ध-कौशल, अपने वीरत्व, अपने प्रेम, सौन्दर्य, शील, धैर्य सहन-शीलता, आत्म-विस्मृति और त्याग से स्वर्ग के फूलों को मनुष्य के जीवन में टाँकती है।

पंजाब में हिन्दी-प्रेमियों की शिकायत

[एक मर्मज्ञ]

पजाब में इस समय सरकार की दो भाषा नीतिया चल रही हैं। जालन्धर व अम्बाला डिवीजनों में जो भाषा नीति चल रही है, उसको 'सच्चर फारमूला' कहा जाता है और पटियाला डिवीजन (यानी भूतपूर्व पेप्सू क्षेत्र) में जो भाषा नीति प्रचलित हैं उसको पेप्सू फारमूला कहा जाता है। इन दोनों नीतियो पर हिन्दी प्रेमी लोगो को आपत्ति है और इसी लिए वे असन्तुष्ट हैं।

अब २ अक्तूबर से पजाब सरकार जिला स्तर तक का सारा सरकारी काम काज प्रादेशिक भाषाओं यानी हिन्दी और पजाबी में करने के अपने निर्णय पर अमल शुरू कर रही है। इसके अनुसार 'सच्चर फारमूला' वाले इलाके के हिन्दी और पंजाबी क्षेत्र में जिले के स्तर तक सरकारी जबान पजाबी मानी जायगी। इस विषय में हिन्दी प्रेमियों को आपत्ति यह है कि जिस क्षेत्र को हिन्दी क्षेत्र माना गया गया है वह प्रधानत हरियाणा का इलाका है जिसकी भाषा हिन्दी है। अत वहा तो बेशक हिन्दी सरकारी जबान होनी चाहिए, पर जिस इलाके को पजाबी क्षेत्र माना गया वह क्षेत्र वास्तव में द्विभाषी है अर्थात् वहां की भाषा केवल पजाबी नही वरन हिन्दी और पजाबी दोनों मानी जानी चाहिए, क्योंकि जहा हिन्दी क्षेत्र में पजाबी जानने वाले मुश्किल से २-४ फीसदी होगे, वहा पजाबी क्षेत्र की स्थिति यह है कि वहा लगभग ४० फीसदी जनता हिन्दी को अपनी भाषा मानती है और हिन्दी चाहती है। इसलिये इतनी बडी सख्या में जब हिन्दी चाहनेवालेपजाबी क्षेत्र में हैं तो उनकी भावनाओ का आदर होना चाहिये और पजाबी क्षेत्र को द्विभाषी मानना चाहिये। जब सारे पंजाब को द्विभाषी माना जाता है तो उसका अर्थ यह नहीं कि पजाब का एक हिस्सा पजाबी है और दूसरा हिन्दी। इसके विपरीत सही बात यह है कि सारे पजाब में हिन्दी और पजाबी दोनों का प्रचलन है।

अत भारत सरकार को समय रहते हिन्दी प्रेमी लोगों की शिकायत पर गौर करके मुनासिब कदम उठाना चाहिये।

रही बात पटियाला डिवीजन की जहा 'पेप्सू फारमूला' प्रचलित है। वहा तो हिन्दी प्रेमी लोग अत्यन्त दबे हुए और कमजोर हैं, वरना वहां 'पेप्सू फारमूला' के मातहत हिन्दी और हिन्दी भाषी लोगों के साथ होने वाले अन्याय के विरुद्ध कभी का जबरदस्त आन्दोलन उठ खडा होता। इस पटियाला डिवीजन के जिला महेन्द्रगढ में तथा थोडे से और इलाके में तो शिक्षा का माध्यम हिन्दी है यह (अधिकतर ऐसा इलाका है जहा पजाबी न तो आसानी से समझी जा सकती है और न जहा के बाशिन्दे पजाबी बोल सकते हैं—सिवाय, पाकिस्तान से आये हुए लोगों के) बाकी तमाम पटियाला डिवीजन के सरकारी स्कूलो में शिक्षा पजाबी द्वारा दी जाती है और हिन्दी को केवल द्वितीय भाषा के तौर पर पढाया जाता है। सरकार की यह नीति या व्यवस्था हर तरह से नाजायज व उन सिद्धान्तो के खिलाफ है, जो कांग्रेस व भारत सरकार द्वारा स्वीकृत हैं। पटियाला डिवीजन के उस इलाके में जहा शिक्षा का माध्यम पजाबी है—एक नही अनेक ऐसे स्थान हैं जहा बहुमत हिन्दी प्रेमियों का है और हिन्दी भाषी लोग बडी सख्या में रहते हैं। मगर इस बात का कोई लिहाज नहीं रखा गया और सब के लिए पजाबी में शिक्षा प्राप्त करना अनिवार्य बना दिया गया। यह सब साम्प्रदायिकता के जेर असर किया गया था। लेकिन अफसोस यह है कि भारत सरकार इस अन्याय को चुपचाप बरदाश्त करती चली आ रही है।

नेहरू जी ने अनेक बार कहा है कि भाषा के मामले में जबरदस्ती नहीं होनी चाहिये। सन् १९५७ में स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती के नाम

समाचार

क्या आर्यसमाज साम्प्रदायिक संस्था है ?
नहीं ! नहीं !! नहीं !!!

नगर पालिका निगम इन्दौर के पाषदो की सभा में विचार,

इन्दौर । पिछले दिनो यहा मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित, आर्यसमाज सयोगितागज के 'लीज प्रकरण को लेकर जोरदार बहस हुई । कांग्रेसी पार्षद डा० नागू ने कहा कि आर्य समाज एक साम्प्रदायिक सस्था है इसलिए उसके साथ रियायत नही होना चाहिए ।

जैसे ही डा० नागू सा० ने 'आर्य समाज को साम्प्रदायिक सस्था कहा वैसे ही उपस्थित पार्षदो में बेचैनी छा गई । डा० नागू के बीच में बोलते हुए सर्वश्री बालाराव इंगले, राजेन्द्र धारकर, पुरुषोत्तम विजय, बाबूभाई देसाई, हरिलाल दीक्षित (नेता कांग्रेस पक्षी) ताराशकर पाठक ने अलग २ भाषण देते हुए कहा कि आर्यसमाज सुधारक और राष्ट्रीय जागरण की महान कार्यकारी सस्था है, वह एक अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप रखती है । महान ध्येय वेद का प्रचार करती है और उसे साम्प्रदायिक कहना समस्त तर्को से गलत है ।

वादविवाद में इतना रोष फैल गया कि डा० नागू सा० से कहा गया कि वे अपने शब्द वापिस ले, इस पर डा० ना० ने अपने शब्द सखेद वापिस ले लिये । इसके बाद बहुत ही सद्भावनापूर्ण वातावरण में आर्यसमाज की भूमि की वार्षिक (किराया) लीज आधीकर दी गई जैसी आर्यसमाज की माग थी ।

इन्दौर नगर पालिका निगम के महापौर प्रो० जुत्सीसा० और उपमहापौर श्री नारायण प्रसाद जी शुक्ला (पत्रकार) ने भी आर्यसमाज के कार्यो की प्रशसा की और डा० नागू के कथन का विरोध किया ।

प्रत्येक बहस में भाग लेने वाले पार्षद, सभी दलो से चुने गये हैं । - आर्यसमाज समाचार सेवा

आर्य प्रति० सभा मध्य प्रदेश का निर्वाचन

श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ का वार्षिक बृहदधिवेशन दिनांक २३-८-६२

लिखे पत्र में उन्होने यह स्पष्ट आश्वासन दिया था कि बालको के लिए शिक्षा का माध्यम क्या हो, इसका फैसला करना बच्चो के माता पिता का हक है । पर इसके बावजूद पटियाला डिवीजन में हिन्दी भाषी लोगो के बालक अपनी मातृ भाषा में शिक्षा नहीं पा सकते ।

इसके अलावा पेप्सू फारमूला का जो नतीजा निकला है वह यह है कि जिनकी मातृ भाषा हिन्दी थी और है, वे भी हिन्दी से विमुख होते जा रहे हैं । कारण स्कूलो में शिक्षा का माध्यम प जाबी बना देने से और सरकारी क्षेत्र में हिन्दी का बहिष्कार कर देने से एक ऐसा वातावरण (पटियाला डिवीजन के प जाबी क्षेत्र में) बन गया है, जिससे हिन्दी सार्वजनिक रूप में पीछे हटती जा रही हैं । भारत सरकार को अपने इस अन्याय को दूर करने की कोशिश करनी चाहिए ।

को आर्य समाज सागर में वेद प्रचार सप्ताह के साथ सम्पन्न हुआ। प्रदेश की विभिन्न समाजों से ६८ प्रतिनिधियों में से ४८ प्रतिनिधियों ने सभा में भाग लिया। सन् १९६२ के लिये निम्न पदाधिकारी व अन्तरग सदस्य निर्वाचित हुए –

१—प्रधान –श्री घनश्यामसिह जी गुप्त दुर्ग।

२—उप प्रधान —श्री स्वामी दिव्यानन्द जी सरस्वती नागपुर।

३—उप प्रधान –जयकृष्णजी कुहाडे अमरावती।

४—उप प्रधान –देवीदयाल जी पुरग कोतमा।

५—उप प्रधान –शिवराम जी बक्शी गोरखपुर जबलपुर।

६—मन्त्री –दीनानाथ जी रायपुर।

७—उप मन्त्री –हीरालाल जी शर्मा सागर।

८—उप मन्त्री –बशीलालजी उपाध्याय रायपुर।

९—उप मन्त्री –जयसिहजी गायकवाड गोरखपुर जबलपुर।

१०—उप मन्त्री –यशोदादेवी जी आर्या धमतरी।

११—कोषाध्यक्ष –प० विश्वम्भर प्रसाद शर्मा नागपुर।

१२—पुस्तकाध्यक्ष –नरदेव जी आर्य नागपुर।

अन्तरंग सदस्य

१—श्री धर्मपालसिह जी गुप्त दुर्ग।

२—श्री कान्तीलाल जी वर्मा आकोट।

३—श्री साहेबराम जी बतरा बिलासपुर।

४—श्री गोविन्दराम जी पथरोट।

५—श्री यशोदादेवी जी पारासर आकोला।

६—श्री श्रीकृष्ण जी गुप्त नागपुर।

७—श्री बद्रीनाथ जी वर्मा चिरमिरी।

८—श्री सत्यव्रतजी शास्त्री गंजीपुर जबलपुर।

९—श्री शान्ती कुमार जी अकोला।

१०—श्री विष्णु कुमार जी सागर।

११—श्री नारायणदास जी दमोह।

१२—श्री शिवनारायण जी सतना।

१३—श्री ठा० पृथ्वीचन्द्रजी गोरखपुर जबलपुर।

बन्शीलाल उपाध्याय
उपमन्त्री सभा

श्री पं० विनायकराव जी के शव की अन्त्येष्ठि क्रिया। शव यात्रा में पचास हजार से अधिक नर-नारियों ने भाग लिया

हैदराबाद ४ सितम्बर १९६२ ई०। श्री प० विनायकराव जी विद्यालकार भूतपूर्व सदस्य लोक सभा जो वेलोडी मन्त्री मण्डल तथा बी० रामकृष्ण राव, मन्त्री मण्डल मे मन्त्री थे, का कल रात १० बजकर ५० मिनिट पर हृदयगति के रुक जाने के कारण देहान्त हो गया। मृत्यु के समय आपकी आयु ६६ वर्ष की थी। सतप्त परिवार मे आपके इस समय दो पुत्र, एक पुत्री और आपकी धर्मपत्नी एव सहस्रों मित्रगण हैं। देहान्त से कुछ ही समय पूर्व आप स्वस्थ्य और प्रसन्न थे। निधन से ५ मिनिट पहले जब आपको इस बात का पता चला कि आपके नौकर की एक रिक्शा वाले से लडाई हो रही है तो आप बाहिर आए इस उद्देश्य से कि विवाद निपटा दे। जैसे ही वे घर से एक कदम बाहिर आए कि आपको चक्कर आना अनुभव हुआ और गिर पडे। गिरते ही बाए गाल पर चोट आई और रक्त बहने लगा। चिकित्सा के लिए तत्काल डाक्टरों को बुलाया गया किन्तु उस समय तक आपके हृदय की गति बन्द होकर प्राण पखेरू निकल चुके थे।

दिनाक ४ सितम्बर ६२ ई०को प० विनायकराव जी के अर्थी का जुलूस दिन के सवा ग्यारह बजे उनके निवास स्थल मौजम जाही मार्किटसे निकाला गया। ५० हजार से अधिक नर-नारी अर्थी के साथ थे। जिस मार्ग से यह शव यात्रा गई वहा पर्याप्त समय तक याता यात रुका रहा। पूरे बाजार आपके शोक में बन्द रहे। नगर के मुख्य मार्गों से

होकर अर्थी पुराना पुल के देवीबाग श्मशान घाट पर पहुंची जहा दोपहर में सहस्त्रों शोकाकुल नर नारियो की उपस्थिति मे शव अग्निदेव के समपण किया गया। प० विनायकराव जी के देहान्त का समाचार नगर में बडी ही तीव्रता से फल गया। सैकडो मित्र तथा परिचित आपके अन्तिम दर्शनो के लिए आते रहे। आप हैदराबाद के मुक्ति आन्दोलन मे कई मोर्चो के मुख्य नायक रहे। पडित जी ने अपने सरलस्वभाव और स्नेहमयी प्रवृत्ति से प्रत्येक वर्ग में लोकप्रियता प्राप्त करली थी। नगर की दुकाने और कई कार्य केन्द्र इस दिन बन्द रहे। प्रत्येक वर्ग मे आपके निधन पर शोक मनाया गया। आपके निवास स्थल पर राज्यपाल श्री भीमसेन जी सच्चर, श्री जी० ब्रह्मया जी अध्यक्ष आन्ध्र प्रदेश कांग्रेस, श्री एन० सजीवारेड्डी जी मुख्य मन्त्री, श्री डा० एम० चिन्नारेड्डी जी योजना मन्त्री, नवाब अहमदअली खान केन्द्रीय मन्त्री लोक कर्म विभाग, श्रीमती मदालक्ष्मीदेवी जी अवकाफ मन्त्री, श्री बी०बी० गुरु मूर्ति जी श्रम मन्त्री, और न्यायाधीशो में श्री पी० जे० रेड्डी जी, श्री मनोहरप्रसाद जी, श्री कुमरैया जी, श्री मुहम्मद मिर्जा साहेब, श्री गोपालराव जी एकबोटे, प्रतिष्ठित व्यक्तियो में श्री डा० एन० एम० जयसूर्य जी, तथा प० नरेन्द्र जी, श्री राजा पन्नालाल जी पीत्ति आदि के अतिरिक्त और भी कई गण्य मान्य महानुभाव उपस्थित थे। श्री राज्यपाल भीमसेन जी सच्चर ने इस अवसर पर कहा कि वे हैदराबाद से एक दु खद स्मृति लेकर जा रहे हैं कि इतने महान और अच्छे नेता का निधन हुवा है। स्व० श्री प० विनायकराव विद्यालकार की सेवाओ की स्मृति सदैव बनी रहेगी। श्री सजीवरेड्डी जी मुख्य मन्त्री ने कहा कि श्री प० विनायकराव जी का सम्पूर्ण जीवन सघर्षमय रहा है। श्री प० नरेन्द्र जी ने कहा कि एक महान व्यक्ति और राजनैतिक क्षेत्र का बहादुर परीक्षित सेनानी उठ गया है। स्वर्गीय प० विनायकराव जी की सेवाए इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अकित की जायगी। आपके देहावसान से आर्यसमाज अनाथ हो गया है।

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण, हैदराबाद

आर्य कुमार एव आर्य वीर सम्मेलन, दानापुर कैन्ट

दानापुर कैन्ट २१ सितम्बर १९६२ प्रति वर्ष की भांति इस वष भी सन् १९६२-६३ के लिए आर्य वीर दल एव आर्य कुमार सभा का निर्वाचन निम्नलिखित प्रकार हुआ —

प्रधान—श्री राजेश्वरप्रसाद (पदेन मन्त्री, दानापुर, आर्य समाज)

उप प्रधान—श्री लक्ष्मी नारायण केशरी एव राजेन्द्रप्रसाद सूरी

मन्त्री—डा० राजेन्द्र प्रसाद गुप्त

उप मन्त्री—योगेन्द्र प्रसाद एव रामनाथ गुप्त

नगर सचालक—श्री रामबलीप्रसाद आर्य

शिक्षा नायक—महादेवप्रसाद एव प्यारेलाल दास

बौद्धिकाध्यक्ष—रामदास

अर्थ नायक—श्री सतप्रसाद शर्मा

पर्व नायक—ब्रजकिशोर वर्मा

प्रचार नायक—रमेश कुमार

लेखा निरीक्षक—केदारनाथ

सरक्षक—सर्वश्री शिवरत्नलाल गुप्त, रामरतन प्रसाद एडवोकेट, श्यामलाल शोभा, कैलाशप्रसाद, झरोखीलाल, सीताराम, रामचन्द्र प्रसाद, रामदेवजी, रघुनाथ सिन्हा, हीरालाल भगत, महेन्द्र प्रसाद प्रजापति।

दानापुर कैन्ट—२१ सितम्बर १९६२ प्रति वर्ष की भाति इस वर्ष भी आर्य वीरागना दल का निर्वाचन सन् १९६२-६३ के लिए निम्न प्रकार है —

प्रधाना—श्रीमती शकुन्तला यादव, एम० ए०, एल० बी०

उपप्रधाना—सुश्री मीरा कुमारी

मन्त्रिणी—सुश्री सुमित्रा कुमारी

उपमन्त्रिणी—प्रेमाकुमारी एव मालतीकुमारी

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की बैठक

देश के भाषा सम्बन्धी विवाद के सम्बन्ध में विचार करने के लिए सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की बैठक २३-९-६२ को दयानन्द भवन देहली में हुई जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए —

१—इस समिति को इसका खेद है कि पजाब शासन ने पजाब की जनता के एक विशाल समूह की भावनाओं के विपरीत पजाबी क्षेत्र मे पजाबी भाषा को केवल गुरुमुखी लिपि तक सीमित करके २ अक्तूबर से प्रशासन मे व्यवहृत करने का निश्चय किया है। इसके कारण जनता मे अतीव असन्तोष है। परन्तु देश की वर्तमान नाजुक परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए यह समिति कोई ऐसी बात नहीं करना चाहती जिससे देश की सुरक्षा तथा शान्ति पर कोई अवाञ्छनीय प्रभाव पडे। किन्तु शासन को अपनी भावनाओं का प्रदर्शन जनता जो करना चाहती है, उसको भी रोकना उचित न होगा। अत यह समिति उचित समझती है कि पजाब में दिनाक २ अक्तूबर १९६२ को उक्त आदेश के विरोध स्वरूप हड़ताल तथा सार्वजनिक सभायें आयोजित की जायें।

२—भाषा की समस्याएं जिनके सम्बन्ध में समस्त देश की प्रजा व्यथित और चिन्तित है इस प्रकार है —

१—हिन्दी की सूचनाओं आदि से सम्बद्ध आल इण्डिया रेडियो की भाषा में परिवर्तन।

२—सम्विधान में नियत की गई अवधि से अधिक काल तक इग्लिश को बनाए रखने के लिए संविधान मे किया जाने वाला सम्भावित परिवर्तन।

सार्वदेशिक भाषा स्वातन्त्र्य समिति की सम्मति है कि यदि हम देश के समस्त श्रोताओं की दृष्टि से विचार करे तो आल इण्डिया रेडियो की सूचनाओं आदि में जो हिन्दी प्रयुक्त हो रही है उसका स्वरूप बदलने से सरल बनने के स्थान में उसका समझना कठिन हो जायगा। बहुसख्यक लोगो के लिए मुख्य तया जिनकी मातृभाषा बगला, गुजराती, और दक्षिण की भाषाए हैं, अरबी और फारसी के शब्दो का समझना वस्तुत कठिन है। अत इस समिति की यह दृढ सम्मति है कि आल इण्डिया रेडियो के हिन्दी प्रसारणो की भाषा में कोई परिवतन न किया जाना चाहिए।

५—पर्याप्त और उचित विचार के पश्चात् भारतीय सघ के प्रशासन में अग्रेजी के स्थान में हिन्दी को व्यवहृत किए जाने के लिए सविधान में १५ वर्ष की अवधि नियत की गई थी। १५ वर्ष की यह अवधि किसी भी रूप में अपर्याप्त न थी। १५ वर्ष की अवधि के व्यतीत हो जाने पर अग्रेजी को बनाये रखने का औचित्य प्रतिपादित नहीं होसकता। अग्रेजी को बनाए रखना न केवल हिन्दी के लिए ही अपितु भारतीय सघ की समस्त भाषाओं के लिए भी चुनौती है। अग्रेजी को बनाए रखने की योजना देश की समस्त भाषाओ के लिए घातक है।

इस समितिकी यह दृढ सम्मति है कि देशकी भाषाओं के हित को दृष्टि में रखते हुए सविधान में परिवर्तन न होना चाहिए।

*

अर्थ मन्त्रिणी—पुष्पलता कुमारी
शिक्षा मन्त्रिणी—उमाकुमारी
पर्व मन्त्रिणी—दमयन्तीकुमारी
प्रचार मन्त्रिणी— सरस्वती कमारी
लेखा मन्त्रिणी—शैलकुमारी

सुमित्रा कुमारी
मन्त्रिणी

महर्षि मनु और दक्षिणी प्रजा

पुस्तकालय,

[स्व० प० आत्माराम जी अमृतसरी]

महर्षि मनु ने अपने मानव धर्म शास्त्र में एक श्लोक में दर्शाया है कि 'द्रविड प्रजा' पहले आर्य क्षत्रिय थी। धर्म के ह्रास के कारण असस्कृत हो गई। मनु के इस भारी सत्य को असत्य सिद्ध करने के लिये यूरोप भर के नाना देशो के नामी सस्कृतज्ञ पडितो तथा वहा के इतिहास लेखको ने एक मत से लिखना आरम्भ कर दिया कि भारत की दखनी द्रविड प्रजा स्वतन्त्र जाति है। इसका साहित्य इसकी भाषा इसकी सस्कृति सब स्वतन्त्र हैं। उच्च भारतीय आर्य सस्कृति से इसका कोई सम्बन्ध नही। यह प्रजा आर्यों का सन्तान नही। इत्यादि २।

भारत वर्ष के सब सरकारी हाई स्कूलो तथा कालेजों में रात दिन सब ही छात्रो को उक्त पाठ कठ कराया जाता है

प्रसन्नता है कि उक्त यूरोपियन मत के विरुद्ध इतिहासकार लेखनी उठाने लगे हैं। मार्डन रीव्यू (अप्रेल १९३१-पृ०-४७३) में त्रिवेणी' से उद्धृत श्री वी० नारायण के निम्न लिखित विचार बडे महत्त्व पूर्ण हैं --

Modern writers on the history of South India are fond of pointing out the existence of a Tamil civilization in the region South of the Vindhyas But these studies of the characteristics of the Tamil civilization are vitiated at the out set by the assumption that there was a Dravidian culture a &Dravidian race independent of the Aryan culture and the Aryan race The five Dravid as of Sanskrit writers are five sanctions of the Aryan people

The early foreign writers of Greece and of Rome refer to the whole of India as one unit

Mr R Swami Nath Ayyar shows in his book that the pecularities of the Tamil language as regards grammatical form and constructions are common to the Prakrit language and that the vocabulary of earlier Tamil bore close affinities to the vocabularies of the Vedas and the earlier Prakrit which prevailed in the Punjab regions

आज कल के लेखक दक्षिण भारत का इतिहास लिखते हुए इस बात की रुचि रखते हैं कि वह विंध्याचल से नीचे तमिल सस्कृति दिखावे परन्तु तामिल सस्कृति की विशेषताओं का अध्ययन आरम्भ में ही दूषित हो जाता है। कारण कि वह पहले ही मन में कल्पना कर लेते हैं कि आर्य जाति और आर्य सस्कृति से द्रविड जाति और द्रविड सस्कृति पृथक् है। सस्कृत लेखको के पच द्रविड तो आर्य जाति के पाच भाग ही हैं। यूनान और रोम के प्राचीन इतिहासकारो ने उत्तर और दक्षिण समस्त भारत को सयुक्त भारत माना है।

श्री आर० स्वामी नाथ ऐय्यर ने अपने ग्रन्थ में दर्शाया है कि तमिल भाषा की विशेषताये व्याकरण और बनावट में प्राकृत भाषाओ से मिलती जुलती हैं और प्राचीन तमिल भाषा का शब्द अर्थ कोष वेदों तथा पजाब की प्राचीन प्राकृत भाषा के शब्द अर्थ कोष से मिलता जुलता है।

*

आर्य कुमार सभा, किंग्सवे (रजि०) दिल्ली-९ का

वैदिक प्रचारार्थ प्रकाशन

सभा वैदिक धर्मप्रचारार्थ सस्ता प्रकाशन छापती है लाभ की दृष्टि से नही। इस विभाग की सहायता के लिए इसके दो प्रकार के सदस्य हैं। एक आजीवन सदस्य जो कम से कम १००) देते हैं दूसरे १०) वार्षिक देने वाले साधारण सदस्य कहलाते हैं। कृपया सदस्य बन कर व पुस्तके मगवा कर वैदिक प्रचार में सभा की सहायता करे।

स०	नाम पुस्तक	लेखक	प्रति न० पै०	प्रतिशत
१	बलिदान का राष्ट्रीय महत्त्व	श्री ओम्प्रकाश त्यागी	१०	७)
२	गीता उपदेश	श्री जगदीश चन्द्र विद्यार्थी	२०	१५)
३	अनमोल मोती	श्री जगदीशचन्द्र विद्यार्थी	३५	२५)
४	मुक्ति सोपान	स्वामी श्रद्धानन्द जी	३०	२५)
५	नभ के तारे	श्री रमेश कुमार लौ	३५	२५)
६	विद्यार्थी और अनुशासन	श्री भवानीलाल जी भारतीय	६	५)
७	स्वर्ण सिद्धान्त	श्री जगदीशचन्द्र विद्यार्थी	२५	२०)
८	ज्ञान दीपिका	श्री रामकृष्ण भारती	३५	२५)
९	वेदों का महत्व	श्री प० धर्मदेव जी विद्यामार्त्तण्ड	३०	२५)
१०	विश्व का प्रथम राष्ट्र-गीत	श्री गणेशदत्त शर्मा	५०	४०)
११	उपनिषदों में तत्ववेत्ता पर विचार (छप रही है)	स्वर्णपदक विजेता श्री रमेशकुमार		

सुदर्शन सरीन
मन्त्री

(पृष्ठ १ का शेष)

जीवनोद्देश्य की ओर ले चलने के लिए जिस प्रकार की सामग्री इस जीवात्मा को मिली है उसमें इस शरीर का साधारण दर्जा है उसे ठीक रखना मुमुक्षु का प्रथम कर्तव्य है। सबसे पहले चतुरता के साथ गुरु और विद्वानो की तलाश करनी चाहिए, यदि परखने पर कसौटी पर ठीक उतरे तो उनके सत्सग के योग्य बनने का यत्न करना चाहिए। मानापमान का विचार छोडकर ऐसे महापुरुषों की शारीरिक सेवा करते हुए धीरे २ अपने शरीर को शुद्ध रखने का स्वभाव पड जायगा। ऐसे आलस्य का विचार छोड देना चाहिए कि सरदी की ऋतु में एक दिन स्नान न करने से क्या बिगड सकता है? एक दिन के व्यायाम के छोडने से क्या हानि हो सकती है एक बार अशुद्ध अन्न खाने से क्या बिगाड हो सकता है? नियम पूर्वक शरीर के सब अ गों को शुद्ध रखना चाहिये और फिर बाकेपन को छोडकर शरीर को सरल, सीधा रखने का स्वभाव डालना चाहिए। इससे ब्रह्मचर्य की रक्षा में भी बहुत सहारा मिलेगा अनुभव बताता है कि जिनके शरीर शुद्ध हैं उनके मन भी बहुत हद तक शुद्ध रह कर काम-चेष्टा को रोकने का साधन सिद्ध होते हैं। जब देव पूजा से शुद्ध होकर मनुष्य अपने अ ग प्रत्यग को वश में रखता हुआ वीर्य रक्षा करके बलिष्ठ होगा तब उसके लिए अहिसा धर्म का पालन करना एक स्वाभाविक बात हो जायगी। उसे सारे ससार को मित्र बनाने में किसी परिश्रम कीआवश्यकता न होगी।

आर्य वर की आवश्यकता

१८ वर्षीया आर्य कन्या के लिए जो मैट्रिक पास है एक सुयोग्य आर्य वर की आवश्यकता है जो व्यापार मे या सर्विस मे लगा हो।

पत्र—व्यवहार का पता

—श्री रामेश्वर प्रसाद आर्य

दीप नरायण सिंह घाट रोड

भागलपुर १

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की

पुस्तकों का सूची-पत्र

निम्न प्रकाशन नेट मूल्य पर दिये जायेंगे।

१	ऋग्वेद सहिता सजिल्द	१०)
२	अथर्ववेद सहिता सजिल्द	८)
३	यजुर्वेद सहिता सजिल्द	४)
४	सामवेद सहिता सजिल्द	३)
५	सत्यार्थ प्रकाश	२।)
६	ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका	२॥)
७	सस्कार विधि	१।)
८	आर्याभिविनय	।॥)
९	कन्नड सत्यार्थप्रकाश	३।)
१०	मराठी सत्यार्थप्रकाश	१।≈)
११	कर्तव्य दर्पण सजिल्द	।॥≡)
१२	पच महायज्ञ विधि भाष्यम्	५)

निम्न पुस्तकों पर निम्न प्रकार कमीशन दिया जायगा।

१०) से २५) रु० तक १२½ प्रतिशत

२५) से ऊपर २५०) तक २०) प्रतिशत

२५०) से ऊपर १०००) तक २५ प्रतिशत

१०००) स ऊपर २०००) तक ३०) प्रतिशत

२०००) से ऊपर ३३⅓ प्रतिशत

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि कृत

१	यम पितृ परिचय	२)
२.	वैदिक ज्योतिष शास्त्र	१॥)
३	वैदिक राष्ट्रीयता	।)
४	अभ्यास और वैराग्य	१)६५
५	बाल सस्कृति सुधा	)५०
६	वैदिक ईशवन्दना	।≈)॥
७	वैदिक योगामृत	॥≈)
८	दयानन्द दिग्दर्शन	।॥)
९	वेदो में दो बडी वैज्ञानिक शक्तिया	।।)
१०	निज जीवनवृत्त वनिका अजिल्द	)५०
	,, ,, सजिल्द	)७५
११	बृहत् विमान शास्त्र सजिल्द	१०)
१२	छान्दोग्य उपनिषद् कथा	३)
१३	दार्शनिक आध्यात्म तत्व	१॥)
१४	वेदान्त दर्शनम् (सस्कृत में)	३)

ओ३म् ध्वज

ओ३म् ध्वज के लिए आर्य जनता की माग की पूर्त्यर्थ सभा ने ओ३म् ध्वज का निर्माण का कार्य अपने हाथ में ले लिया है और उसने शुद्ध खादी के निम्न डिजाइनो के ओ३म् ध्वज निर्माण करा लिए हैं। उनको लागत मूल्य पर आर्य जनता को पहुचाने का सभा ने निश्चय किया है। अत आर्य जनता को उन्हें तत्काल मगा कर अपने समाज, मन्दिर और आर्य सस्थाओ पर लगाने चाहिए।

ओ३म् ध्वज २७ इच × ४०॥ इच मूल्य २)

ओ३म् ध्वज ३६ इच × ५४ इच मूल्य ३)

ओ३म् ध्वज ४५ इच × ६७। इच मूल्य ४)

मगाने की दशा में १) अगाऊ भेज देवें।

आर्यसमाजो को अविलम्ब आर्डर भेज कर प्रतिया सुरक्षित करा लेनी चाहिए जिससे बाद मे उन्हे पुस्तके न मिलने की शिकायत का अवसर न रहे।

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट कृत

१६	कर्मव्यवस्था	४)
१७	मन मन्दिर	१)
१८	दयानन्द दीक्षा शताब्दी का सन्देश	।=)
१९	चरित्र निर्माण	१≈)॥
२०	ईश्वर उपासना और चरित्र निर्माण	।≈)॥
२१	वैदिक विधान और चरित्र निर्माण	≈)॥
२२	दौलत की मार	।)
२३	अनुशासन का विधान	।)
२४	धर्म और धन	।)
२५	सत्यार्थप्रकाश (उर्दू) मूल्य	३)५०
२६	उत्तराखण्ड के वन पर्वतो में ऋषि दयानन्द अजिल्द	)६२
	,, ,, सजिल्द	)७५
२७	आर्यसमाज प्रवेश पत्र	मूल्य १) सैकडा

श्री महात्मा नारायण स्वामी कृत

२८	योग रहस्य	१।)
२९.	मृत्यु और परलोक	१)
३०	विद्यार्थी जीवन रहस्य	॥≈)॥

३२ उपनिषदे —
ईश ।≈) केन ।।) कठ ।) प्रश्न ।=)
मुण्डक ।≡) माण्डूक्य ।) एतरेय ।)
तैत्तिरीय १)
३३. बृहदारण्यकोपनिषद् ३।

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत

३४ आर्योदय काव्यम् पूर्वार्द्ध १।)
३५ ,, उत्तरार्द्ध १॥)
३६ वैदिक संस्कृति १।)
३७ मुक्ति से पुनरावृत्ति ।≈)
३८ आर्यसमाज और सनातनधर्म ।≈)
३९ आर्यसमाज की नीति ।≈)

श्री पं० इन्द्रजी द्वारा लिखित

४० आर्यसमाज का इतिहास स (प्रथम भाग) ४
४१ ,, ,, (द्वितीय भाग)
४२ आर्यवीर दल बौद्धिक शिक्षण –)

श्री रघुनाथप्रसादजी पाठक कृत

४३ आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ॥=)
४४ कथामाला ॥।)
४५ सन्तति निग्रह १।
४६ नया संसार ≡)
४७ आदर्श गुरु शिष्य ।–)

श्री पं० धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड कृत

४८ स्त्रियों का वेदाध्ययन अधिकार १।)
४९ भक्ति कुसुमाञ्जली ॥)
५० हमारी राष्ट्र भाषा व लिपि ।–)

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द कृत

५१ आर्यसमाज के महाधन २॥)
५२ वेद की इयत्ता १॥)

श्री लाला ज्ञानचन्द कृत

५३ धर्म और उसकी आवश्यकता १)
५४ वर्णव्यवस्था का वैदिक रूप १॥)
५५ इजहारे हकीकत (उर्दू में) ॥≈
५६ सत्य निर्णय १॥)

विविध

५७ अरब में मेरे सात साल (प० रुचिरामजी) ।)
५८ विरजानन्द प्रकाश (भीमसेन शास्त्री) २)
५९ वेद रहस्य
(ले० महात्मा नारायण स्वामी) २)५०

पं मदनमोहन विद्यासागर कृत

६० जन कल्याण का मूल मन्त्र ॥)
६१ संस्कार महत्व ॥।)
६२ वेदों की अन्त साक्षी का महत्व ॥≈)
६३ आर्य घोष (परिवर्द्धित संस्करण))६० न० पै०
६४ आर्य स्तोत्र ।)

अन्य विद्वानों कृत

६५ स्वाध्याय सन्दोह (स्वा० वेदानन्द तीर्थ) ४)
६६ स्वराज्य दर्शन (प० लक्ष्मीदत्त दीक्षित) १)
६७ राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
६८ भूमिका प्रकाश (संस्कृत में)
(प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री) १॥)
६९ एशिया का वेनिस (स्वा० सदानन्द) ॥।)
७० दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १॥)
(श्री कृष्णचन्द्र विरमानी) १।)
७१ भजन भास्कर
(सग्रहकर्ता प० हरिशंकर शर्मा कविरत्न) १।)
७२ सनातन बुद्धिशास्त्र (गोविन्दप्रसाद शास्त्री) २)
७३ आर्य डायरेक्टरी पुरानी १।)
७४ सार्वदेशिक सभा का २७ वर्षीय कार्य
विवरण सजिल्द २)
७५ आर्य पर्व पद्धति (प० भवानीप्रसाद कृत) १।)
७६ आदर्श चरित्र)७५

प० राजेन्द्र (अतरौली) कृत

७७ गीता विमर्श ॥।)

ईसाई प्रचार निरोध साहित्य

७८ ईसाई षड्यन्त्र ।)
७९ ईसाई पादरी उत्तर दें दर २) सैकड़ा
८० ईसाई पादरियों के कुचक्र में देश को बचाओ
दर २) सैकड़ा

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार दयानन्द भवन, नई दिल्ली १

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली७में मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसाद जी पाठक मुद्रक और प्रकाशक के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन रामलीला मैदान) नई दिल्ली १ से प्रकाशित

* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



जिनका निर्वाणोत्सव २७-१०-६७ को मनाया गया

वार्षिक मूल्य ६) | सृष्टि सम्वत | दयानन्दाब्द | विदेश मे वार्षिक ८) या १० शि०

वर्ष ३८ | १९७२९४९०६३ | १३८ | नवम्बर १९६२ (कार्तिक २०१९) अंक ११

–: विषय सूची :–

❀ सम्पादक

अखिलानन्द सरस्वती सभा मन्त्री

❀ सहायक सम्पादक

रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ प्रकाशक व मुद्रक

रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ कार्यालय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दयानन्द भवन, नई दिल्ली

फोन २२४७७१

❀ मुद्रक

सार्वदेशिक प्रेस, दरियागंज दिल्ली।



श्री स्वामी अखिलानन्द जी सरस्वती
(भूतपूर्व बा० कालीचरण जी आर्य)
मन्त्री, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
जिन्होंने १३-१०-६२ को लेखराम नगर (अम्बाला छावनी) में
बलिदान जयन्ती के अवसर पर दीक्षा ली।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के उपदेश

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥

गीता १७, १५ ॥

उपदेश

शारीरिक तप जहां अपने आप तक सीमित रहता है वहां वाणी का तप अपना क्षेत्र विस्तृत कर लेता है। वाणी का सम्बन्ध दूसरे प्राणियों से अधिक रहता है। पहली विशेषता वाणी के तप की यह है कि ऐसा तपस्वी जो शब्द मुंह से निकाले उसमें कठोरता का लेश मात्र भी न हो। वाणी साधन है एक मनुष्य के विचारों को दूसरे के मन तक पहुंचाने का। किन्तु कठोर वचन से बोलने का असल अभिप्राय नष्ट हो जाता है। जिस मनुष्य तक तुम किसी सचाई को पहुंचाना चाहते हो, अगर वह तुम्हारी बात सुनने के लिये तैयार ही नहीं होता तो तुम्हारी बात करने का क्या लाभ? किन्तु केवल कठोर वचन को छोड़ने से ही काम नहीं निकलता। कठोरबोलने से छुटकारे का केवल परिणाम यही हो सकता है कि तुम्हारे भाषण से दूसरा घृणा न करेगा। परन्तु मतलब उस समय तक सिद्ध नहीं होता जब तक वह मनुष्य जिसे तुम अपनी बात सुनाना चाहते हो तुम्हारी तरफ आकृष्ट न हो जावे। इस आकर्षण का कारण क्या हो सकता है? किस आचरण से दूसरे मनुष्य की रुचि स्वय तुम्हारी ओर खिंच सकती है। विशेष पुरुषों के भाषण में विशेष प्रकार का रस होता है. इस के कारण उनका कठोर भाषण भी सुनने के लिये लोग मजबूर हो जाते हैं। इस का रहस्य क्या है? कृष्ण भगवान् उत्तर देते हैं अपनी वाणी को प्रिय बनाओ। प्रेम भाव उसके अन्दर कूट कूट कर भर दो। फिर मनुष्यों के दिल तुम्हारे कथन की तरफ स्वय खिंचे चले आवेंगे। जिस कथन के अन्दर यह शक्ति है कि तुमसे समाज को दूर फेंक दे उसी कथन के अन्दर यह शक्ति भी है कि वह हृदयों को खींच कर तुम्हें सौंप दे। माना कि कथन में सख्ती न होनी चाहिये और यह भी मानलिया कि तुमने अपने कथन को दूसरों के लिये प्यारा बना दिया परन्तु जब तक वह कथन हितकारी नहीं, जब तक मनुष्य की भलाई के हेतु से नहीं बोला जाता तब तक उसका वास्तविक फल तुम को नहीं मिल सकता। संसार में बड़े बड़े मधुरभाषी हो चुके हैं जिन के मधुर भाषण का सारा बल मनुष्यों की उन्नति में लगता है। जिस तरह विद्या एक प्रबल शक्ति है उसी तरह वाणी भी एक प्रबल शक्ति है, जिस के द्वारा विद्या का प्रकाश होता है। परन्तु जिस तरह विद्या एक दो धारा वाली तलवार की तरह दोनों तरफ चलती है, वही अवस्था वाणी की है। स्वार्थ सिद्धि के लिये कही हुई प्रिय वाणी संसार में हलचल मचा देती है। परन्तु वही प्रियवाणी जब संसार के उपकार के लिये बोली जाती है तो अनगिनत मनुष्यों के लिये शान्ति का कारण होती है। सार यह है कि स्वार्थ सिद्धि के लिये बोली हुई वाणी चाहे कैसी ही प्रिय क्यों न हो, उसका

बल केवल दिखलावे का ही होता है, उसका प्रभाव देर तक नहीं रहता। किन्तु जिस वाणी का प्रयोग प्राणधारियों के लिये होता है उसके अन्दर स्वाभाविक बड़ा बल होता है। क्या वाणी की विशेषतायें यहाँ तक ही समाप्त हो जाती है? बिलकुल नहीं। चाहे वाणी कैसी भी कठोरता से रहित हो, चाहे कैसी प्यारी और कितना ही परोपकार करने वाली हो अगर उसकी नींव सत्य पर नहीं है तो वह मनुष्य का कर्तव्य कर्म नहीं है।

वह सत्य जिस पर सारा ब्रह्माण्ड आश्रित है, वही वाणी का भी आधार है। प्रश्न स्वतः उत्पन्नहोता है—

क्या दुःखित मनुष्य के सन्मुख सत्य बोलकर उसे और दुःखित करना हित कहला सकता है? यह प्रश्न अविद्या के कारण हम मनुष्यों के हृदयों के अन्दर उठता है। यह समझना हमें कठिन नहीं है। जो सत्य नहीं वह सर्व हित के लिये कैसे हो सकता है? हितकारी क्या है? हम यहां तक तो पता नहीं लगा सकते कि हमारे लिये क्या हितकारी है। फिर यह पतालगाना कैसा कठिन है कि दूसरों के लिये हितकारी क्या है? इस लिये हरेक वाणी की उचित अनुमान लगाने के लिये उसे केवल सत्य की कसौटी पर रखना ही पर्याप्त है, अगर सत्य बोलने के लिये वाणी में सख्ती का आना आवश्यक है तो आने दो किन्तु सचाई को विशेष मनुष्य के हित लिये कभी भी न्योछावर न करो यह ऋषियों का उपदेश बड़ा लाभकारी है। किन्तु इस पर चले कैसे? इस का उत्तर ऋषि मुनि सदैव से एक ही देते आये हैं। जिस तरह दूसरे कर्तव्य कर्मों में दृढ़ होने के लिये अभ्यास की आवश्यता है उसी तरह वाणी भी तभी ठीक हो सकती है जब कि उसकी पवित्रता के लिये विशेष अभ्यास किया जावे और वह स्वाध्याय से बढ़कर और अभ्यास हो नहीं सकता। नित्य वेदों का अर्थ सहित पाठ करना ही स्वाध्याय कहलाता है। आज वेदार्थ का समझना तो दूर रहा आर्यों में से दस प्रतिशतक भी वेदों का पाठ तक नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था में उनको चाहिये कि ऋषि प्रणीत धर्मग्रन्थों का पाठ नियम से करें। प्रातः काल ब्राह्म मुहूर्त में उठकर शारीरिक व्यायाम और स्नान के पश्चात पहला कार्य ब्रह्मयज्ञ है। परमात्मा के सत्संग से मन को स्थिर करके शारीरिक स्वास्थ्य के लिये देवयज्ञ अर्थात् अग्निहोत्र के पश्चात् स्वाध्याय का समय है। यदि और कोई धर्मग्रन्थ नहीं समझ सकते तो न्यून से न्यून जिस भाषा को समझ सकते हैं उसमें लिखे हुये सत्पुरुषों के उपदेश का पाठ अवश्य किया करें। आर्य समाज के सदस्यों के लिये ऋषि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका बड़ा रास्ता दिखाने का काम दे सकते हैं। जो मनुष्य इससे आगे बढ़ना चाहते हैं वे वेद भाष्य का विचार आरम्भ कर सकते हैं। स्वाध्याय मनुष्य को नीचे गिरते बचा सकता है। इस लिये वाणी को कठोरता रहित करने, उसे प्रिय हितकारी बनाने और सत्य के सीधे सरल मार्ग से न डगमगाने के लिये आवश्यक है कि स्वाध्याय का कभी त्याग न किया जाय। हर देश, प्रत्येक सम्प्रदाय और प्रत्येक समय में महापुरुषों ने स्वाध्याय पर बड़ा भारी बल दिया है। वाणी के तप के बिना शारीरिक तप की सिद्धि नहीं हो सकती इस लिये वाणी को पवित्र करो। उसे सत्य से माँजकर प्रिय और हितकारी बनाओ जिससे संसार के अन्दर सुख और शान्ति का राज्य आवे और हम सब प्रेम पूर्वक एक दूसरे के आत्मिक बल को बढ़ाते हुये मुक्तिधाम में परमानन्द लाभ करने के अधिकारी बन सकें।

❀ ● ❀ ●

सम्पादकीय

आर्य समाज की साख का प्रथम उज्ज्वल दिग्दर्शन

भारत की उत्तरी सीमाओं पर चीन के आक्रमण ने हम देश वासियों को एक बहुत बड़ी परीक्षा में डाल दिया है। इसमें सफल होने के लिए हमें कोई प्रयत्न उठा न रखना होगा और बड़े से बड़े त्याग के लिए सन्नद्ध रहना होगा। इस समय सब से बड़ी आवश्यकता है सुरक्षा के अभियानको और अपनी राष्ट्रीय सरकारके हाथों को दृढ़ करना। मोर्चों पर लड़ने वाले हमारे वीर सैनिकों को सदैव यह अनुभूति रहनी चाहिए कि देश के प्रत्येक नागरिक की सहानुभूति और शुभ कामनाएं उनके साथ हैं इससे उनके उत्साह में वृद्धि होती है। आक्रमण के होते ही देश में देश-प्रेम की तथा त्याग की जो भावना देख पड़ी निश्चय ही वह बड़ी उत्साह वर्द्धक है। ऐसा प्रतीत होता है कि देश का बच्चा २ इस राष्ट्रीय आपत्ति को अपनी आपत्ति समझ कर स्वाधीनता की रक्षा और शत्रु को बाहर खदेड़ देने के लिए कृत संकल्प है और बड़े से बड़े त्याग के लिए समुद्यत है। होना भी ऐसा ही चाहिए। सैनिक मोर्चों की सफलता के लिए जहाँ हमारे सैनिक प्राणों की बाजी लगा रहे हैं वहां हम नागरिकों को भी अपने प्राणों के बलिदान तक पर भी कानून और व्यवस्था की रक्षा करनी है और अराजक तत्वों को किसी भी प्रकार सिर न उठाने देने के लिए सावधान सतर्क एवं पूर्ण अनुशासन और संयम में रहना है। तन,मन,धन के त्याग और ऐसी परिस्थितियों की उत्पत्ति एवं रक्षा से जिससे सैनिक अभियान और नागरिक प्रशासन ठीक गति में चलें, निश्चय ही हम आपत्ति से निकल सकेंगे और अपने देश के सम्मान और स्वातन्त्र्य की रक्षा करने में सफल होंगे।

इस प्रसंग में हम इतिहास की घटनाओं से बल और पाठ ग्रहण कर सकते हैं।

नेपोलियन ने जर्मनी पर आक्रमण किया। वह एक २ टुकड़े को जीतता हुआ आगे बढ़ रहा था परन्तु सिलेसिया पहुंच जाने पर उसकी गति रुक गई क्योंकि उस प्रदेश के निवासियों में मौत के साथ खेलने का साहस था और वे अपनी स्वाधीनता गंवाने की अपेक्षा मर जाना पसन्द करते थे। उन्होंने नेपोलियन का कड़ा मुकाबला किया।

जब सिलेसिया के बच्चे शत्रु को खदेड़ने और अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए खूनी फाग खेल रहे थे, एक छोटी सी लड़की अपने झोंपड़े में बैठी लम्बी आहें भर रही थी। वह सोचती थी कि देश की रक्षा के लिए मैं क्या करूं? वह लड़की थी, फौज में भर्ती न हो सकती थी। निर्धन थी इसलिए उसमें पैसा देने की बिसात न थी। बेचैनी की इस दशा में उसे एक मार्ग सूझ पड़ा। वह ब्रेसला नगर के रास्ते पर चल पड़ी। उस नगर में नाइयों की ऐसी दूकानें थीं, जहाँ सुन्दर बालों का क्रय-विक्रय होता था। वह एक दूकान पर जाकर रुकी और अपनी सुन्दर लटों के लिए मोल भाव करने लगी।

"इतने सुन्दर बाल! कौन सी मुसीबत आई है कि तुम इन्हें बेच रही हो। इन बालों के हटते ही तुम्हारा गुलाब जैसा चेहरा मुर्झा जायगा। क्या तुमने यह बात सोची है?"

दूकानदार की बात सुनकर लड़की मुस्कराई, बोली "हाँ मुसीबत आई है। मुझ पर नहीं देश पर। इस समय देश पर सबसे कीमती वस्तु की

भेंट चढ़ जाय तो इसमें हर्ज ही क्या है? रही चेहरे की बात सो स्वाधीनता के चले जाने पर इसकी सुन्दरता बच न सकेगी। सबके चेहरे एक से हो जायेंगे—कलंक रूप बद शकल। दूकानदार का हृदय भर आया। उसने देश के नाम पर मुफ्त पैसा देना चाहा परन्तु लड़की ने स्पष्ट मना कर दिया और कहा—"मैं भीख के पैसे देश के लिए न दूंगी" अन्त में नाई का थैला लड़की के सुनहरे रेशमी बालो के गुच्छों से चमक गया और लड़की के हाथों पर चाँदी के कुछ सिक्के चमकने लगे। उन सिक्कों को लेकर वह रक्षा समिति के दफ्तर में गई और सिक्के देकर वह खुशी २ अपने घर लौटी।

उसके इस त्याग की कहानी ब्रेसला नगर में फैल गई और वहां की गली २ और कूचे २ में व्याप्त होकर समस्त सिलेसिया के नगरों और कस्बों में फैली। लोगों में एक नया जोश आया जिसने सिलेसिया की रक्षा कर ली।

लोगों के झुण्ड के झुण्ड उस दूकानदार के के पास पहुंचने लगे और अधिक से अधिक मूल्य देकर उसकी लटों को देश-प्रेम की स्मृति मान कर क्रय करने लगे। दूकानदार मालामाल हो गया और उसने वह राशि देश की रक्षा और उन्नति के कामों में खर्च किये जाने के लिए सरकारी खजाने में जमा कर दी।"

इस समय देश को विदेश से युद्ध-सामग्री क्रय करने के लिये धन एवं स्वर्ण की अत्यावश्यकता है जिसकी पूर्ति होनी चाहिए इसके लिए त्याग का अभियान प्रारम्भ हो गया है।

आर्य समाज का बच्चा २ देशभक्त है। उसे देश प्रेम की शिक्षा प्रारम्भ से ही मिलती है। उसकी निष्ठा अविभाजित रहती है। वह न किसी दल में, न प्रान्तीयता में, न क्षेत्रीयता में और न किसी 'वाद' में ही विभाजित रहती है। उसके लिए देश-निष्ठा सर्वोपरि होती है। अतएव इस आड़े समय में उसे देश के गौरव और खतरे में ग्रस्त स्वतन्त्रता की रक्षा के कार्य में बड़े से बड़ा योग देना है। उसे कोई भी भय वा प्रलोभन कर्त्तव्य विमुख नहीं कर सकता। यह उसकी साख है। दिल्ली की आर्य समाजों की विशाल सभा में जो महर्षि निर्वाणोत्सव के प्रसंग में आयोजित की गई थी ५० हजार रुपयों एवं सेकड़ों तोले सोने के समह का आयोजन हुआ वह वस्तुत बड़ा गौरव पूर्ण एवं उत्साह वर्द्धक है। देश की स्वतन्त्रता की ओर उसकी गौरव-गरिमा की रक्षा से बढ कर इस समय और क्या बात प्रिय हो सकती है? आर्य समाज की साख का यह प्रथम उज्ज्वल दिग्दर्शन है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

भारत के लिए एक राष्ट्रभाषा आवश्यक—

श्रीयुत सेठ नानजी भाई कालिदास मेहता द्वारा लिखित एक पुस्तक कुछ समय हुआ प्रकाशित हुई थी जिसका नाम है 'मेरे जीवन की अनुभव कथा।' उस पुस्तक के पृष्ठ १४६ पर १९२६ की एक घटना का वर्णन दिया गया है जो बड़ी मनोरंजक है और इस प्रकार है.—

"मदरास के मुख्य बाजार में होकर ताँगा जा रहा था। इतने में बालबोध लिपि में 'उपाहार गृह' ऐसा एक साइन बोर्ड पढ़ा। मुझे महसूस हुआ कि यह कोई भोजनालय है। तांगे को खड़ा कराया। भाड़ा देकर सामान लेकर मैं उपाहार गृह में गया। वहां कोई हिन्दी भी समझने वाला नहीं था। मैंने संकेत से समझाया कि

मुझे नहाना है और भोजन करना है।

मुझे उसने नहाने की सुविधा करदी। नहाकर भोजन करने आया। उसने मुझे बैठने को एक पीढा डाल दिया। बगल में पानी का लोटा रख दिया। मैं भोजन करने बैठ गया। पहले भात परसा पीछे दाल परसी परन्तु शाक की मैं राह देखता रहा। इतने में एक मोटा काला ऊंचा रसोइया जल्दी से आया और पतीली में से मछली परस दी। मैं चौंक पड़ा और हाथ उठाकर कहा "मैं मछली नहीं खाता" ऐसा करते हुए मेरा हाथ उसकी थाली से लग गया इससे वह चिढ़गया और अपनी भाषा में कुछ 'गुड़ गुड़' बालने लगा। मुझे हुआ कि यह मुझे गाली दे रहा है। इसलिए मैं खड़ा हुआ और चुप रहने को कहा। इसने मुझे छूकर भ्रष्ट किया और तिसपर भी स्वयं भ्रष्ट हो गया हो ऐसा छूगया करके अण्ड-बण्ड बोल रहा था। मुझे क्रोध चढ़ा और पीढा उठाकर मैं उठ खड़ा हुआ। इसने मुझे कल्छी मारी। कल्छी मैंने पाटले से रोकली। हमारी बोल चाल सुनकर दूसरे दो चार आदमी दौड़ आए। एकके हाथ में मोटी लकडी थी। ये लोग मजबूत और तगडे थे। मेरा शरीर भी ऐसा ही था। आवेश बढते २ बात मारा मारी तक पहुच गई। पहले परसने वाले के मत्थे से पाटला लगने से रक्त की धारा निकल पड़ी। दूसरे दो तीन को पाटले का घाव लगा। हमारा कोलाहल चल ही रहा था कि उसी बीच में एक आदमी पुलीस को बुलालाया एक कान्सटेबिल दौड़ कर आ गया। उसने सबको शान्त किया। मुझ से पूछा क्या है?

मैंने सारी बातें कहीं—"मैं मांसाहारी नहीं हूं। मुझे मछली परसने आया तो मैंने हाथ फैलाया। एक दूसरे की भाषा न समझने से यह तूफान हो गया है।

पहले आदमियों ने कहा हमें यह छूगया। मेरी मछली छून से भ्रष्ट हो गई। दो रुपए की मछली हमें फेंक देनी पडेगी।

दोनो की बात सुनकर कान्सटेबिल हंस पड़ा! उसने समझ लिया कि यह सब भाषा का फेर अथवा भ्रम पड़ा है। मुझे कहा "सेठ इसे दो रुपए देदो।"

मैंने २ रुपया दे दिया। कान्सटेबिल के साथ गाड़ी में बैठकर शाहूकारों के मुहल्ले की तरफ गया। वहा काठियावाड़ी ब्राह्मण क होटल में उतरा और वहा पर दवा कराई।

अपने देश में एक ही राष्ट्र भाषा सर्वत्र चलनी चाहिए नहीं तो अन्तर प्रान्तीय व्यवहार में कितनी असुविधा पडेगी उसका यह उदाहरण है।"

प्रसन्नता है भारत की एक राष्ट्र-भाषा हिन्दी मान्य हो चुकी है। अन्तर्प्रांतीय व्यवहार की भाषा का स्थान वस्तुत. हिन्दी ले सकती है। भारत जैसे विशाल और बहुभाषाभाषी देश में एक राष्ट्र-भाषा की कितनी बड़ी आवश्यकता है यह उपर्युक्त घटना से सुस्पष्ट ही है।

अनुत्तरदायित्वपूर्ण

पंजाब गवर्नमेण्ट ने २ अक्टूबर ६२ से पंजाबी और हिन्दी रीजन में जिला स्तर तक सरकारी कार्य गुरुमुखी लिपि मे लिखित पंजाबी और हिन्दी में करने का आदेश दिया है और वह इसे व्यवहृत करने की चेष्टा कर रही है परन्तु दोनों भाषाओं के व्यावहारिक ज्ञान और अभ्यास के बिना कार्यकर्त्ताओं को बड़ी भारी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है जिसके फल स्वरूप सरकारी कार्य या तो हो ही नहीं रहा अथवा उसमें बहुत ढीलापन व्याप्त हो गया है जिससे सार्वजनिक हित को क्षति पहुच रही है। हमारे राजनैतिक प्रशासक एक ओर तो यह कहते नहीं थकते कि भाषा बलात नहीं लादी

जानी चाहिये और दूसरी ओर पंजाब में भाषा को बलात लादा जा रहा है। इस असंगति का उत्तर उनके पास प्रतीत नहीं होता। भावावेश या तुष्टीकरण की नीति पर औचित्य और व्यावहारिकता की बलि चढ़ा देना विवेक या दूरदर्शिता पूर्ण कार्य नहीं कहा जा सकता। प्रशासन की दृष्टि से तो यह बात बड़ी घातक होती है। इस सम्बन्ध में सहयोगी हिन्दुस्तान टाइम्स ने अनुत्तरदायित्वपूर्ण शीर्षकसे अपने १९-१०-६२ के अंक में एक बड़ी अच्छी टिप्पणि लिखी है जो इस प्रकार है —

> पंजाब गवर्नमेन्ट ने जिले के प्रशासन में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रचलन जारी किया है। राजनीतिज्ञ लोक-प्रियता की भ्रांत धारणाओं के वशीभूत हो जिस जल्दबाजी में वास्तविकता का बलिदान किया करते हैं पंजाब सरकार की यह कार्यवाही उसका एक नमूना है। लगभग २ वर्ष पूर्व यह निर्णय किया गया था। पंजाब प्रशासन को २ अक्टूबर के कई दिन बाद अब यह पता लगा है कि कुछ जिलों में कर्मचारियों ने हिन्दी या पंजाबी सीखने मे २ वर्ष के बीच के समय का उप भोग नहीं किया और कुछ जिलों में वे लोग क्षेत्रीय भाषाओं में टाइपराइटरों जैसी सुविधाओं से वंचित रहे। यदि पंजाब सरकार परिवर्तन के लिए वस्तुत उतनी ही उत्सुक थी जितनी उत्सुक उसने अपने को अब प्रकट किया है तो उसे पूर्व से ही, कठिनाइयों का अनुमान लगाकर उनके निराकरण की व्यवस्था कर लेनी चाहिए थी।
>
> ऐसा लगता है कि पंजाब सरकार उन लोगों की चिल्ल पौं पर कान देकर इस परिवर्तन के लिए विवश हो गई जो उच्च उद्देश्य से अत्युच्च उद्देश्य से नहीं, प्रेरित होकर अपनी राष्ट्रियता को उस समय तक अधूरा समझते हैं जब तक कि उनकी निजी क्षेत्रीय भाषा को सरकारी स्तर प्राप्त नहीं हो जाता। उन्हें इस बात की परवाह नहीं कि प्रशासन की जटिल मागों की उससे पूर्ति होती है या नहीं। प्रश्न यह है कि क्या यह आवश्यक है कि पहले से निश्चित तरफदारी को सार्वजनिक हित पर प्राथमिकता देने दी जाय? एक मात्र अंधा जोश रखने वाला व्यक्ति ही यह कह सकता है कि पंजाब सरकार के उस परीक्षण से जो अभी तक आजमाया नहीं गया था उसका अभिप्राय साधारण व्यक्ति को कठिनाई मे डालना नहीं है। जिस फाइल के भुगतान में विलम्ब हो अथवा जिस आवेदन पत्र पर कार्यवाही न हो उससे किसी न किसी की हानि तो होगी ही। कई जिलों में प्रशासन का कार्य रुका हुआ बताया जाता है। कुविचारित निर्णय को धन्यवाद देना चाहिए।

महर्षि की शक्ति का स्रोत

२७ अक्टोबर को हमने महर्षि निर्वाण दिवस मनाया। महर्षि के गुणों और उपकारों का जय-जय कार किया।

हम महर्षि दयानन्द के अनुयायी और आर्य समाज का अंग होने की भावना रखते और यही दावा प्रस्तुत करते हैं। परन्तु यदि हमारे आचरण से विशिष्टता अंकित न होती होतो हम इन दोनों के गौरव को लाछित करने वाले प्रमाणित होते हैं। हम इन दोनों के गौरव और शोभा का कारण बनें और बनें रहें यही हमारा प्रयास रहना चाहिए।

महर्षि दयानन्द का जीवन और मृत्यु दोनों शानदार रहे। एक आर्य का जीवन शानदार और मृत्यु गौरव पूर्ण हो यह बात हमारे लक्ष्य में

रहनी चाहिए।

मराठा ऐम्पायर की हिस्ट्री (मराठा साम्राज्य का इतिहास नामक पुस्तक में जस्टिस महादेव गोविंद रानाडे ने २७१ पृष्ठ पर स्वामी जी की मृत्यु के बाद लिखा था:—

"महर्षि दयानन्द में धार्मिक उत्साह भरा हुआ था। उनमें वीरोचित कर्मण्यता की भावना विद्यमान थी जिसकी उत्पत्ति इस विश्वास से हुई थी कि कोई उच्च सत्ता मेरे कार्य का संरक्षण कर रही है। समय की आवश्यकताओं को देखने की उन्हें जो सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त थी वह अलभ्य थी उनमें लक्ष्य की सिद्धि की दृढ़ता ऐसी अटूट थी कि कोई भी विपत्ति वा प्रतिकूलता उसे झुका न सकती थी। उन जैसी तत्परता और साधन-सम्पन्नता विरलों को ही प्राप्त होती है। उनकी सच्ची देश निष्ठा समय से कहीं आगे बढ़ी हुई थी। दया से द्रवित उनकी न्याय भावना देखते ही बनती थी। यही सब गुण और विशेषताएं उनकी शक्ति का स्रोत था जिन्होंने उन्हें आर्य समाज जैसे महान आन्दोलन को संचालित करने में समर्थ बनाया था।"

ये ही गुण आर्य समाज की शक्ति को बढ़ाने और उसके गौरव की रक्षा करने के लिए अनिवार्य हैं। आर्य समाज सच्चे आर्यों का समाज रहे यह बात हमें एक क्षण के लिए भी आँखों से ओझल न करनी चाहिए। आर्य समाज ने देश और विदेश के लोगों के विचारों में सुधारात्मक क्रान्ति उत्पन्न की है और वह आचरण में भी क्रान्ति लाने में सफल हुआ है परन्तु अभीष्टसीमा तक नहीं। हम पर जहाँ अपने मौखिक और लेख-बद्ध प्रचार से वैदिक विचारों और भावनाओं के प्रसार का दायित्व है वहाँ हम पर अपने आर्योचित आचरण से उन्हें लोगों आचरण का भी अंग बनाने का गुरुतर दायित्व है। आज संसार विचारों में तो धनी है परन्तु आचरण में दिवालिया है। यदि हम स्वयं आर्य (श्रेष्ठ) बन कर दूसरों को आर्य बनने की प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष प्रेरणा दे सकें तो यह उपलब्धि नगण्य न होगी। हमें यह याद रखना चाहिए कि आचरण रहित उपदेश उस फूल के समान होता है जो देखने में सुन्दर होता है परन्तु जिसमें सुगन्ध नहीं होती।

महर्षि दयानन्द की भावना

महर्षि दयानन्द की भावना थी कि संसार में वेद-ज्ञान का प्रसार हो अन्धकार का विनाश हो, कुरीतियों और रूढ़ियों का निवारण हो और संसार आर्य बने। उन्होंने सत्य की खोज में घर-बार छोड़ा और सत्य के प्रचार और प्रसार में ही अपने जीवन की आहुति दे दी। हम आर्यों को सच्चे अर्थ में आर्य बनकर वैदिक धर्म के प्रसार में सन्नद्ध रहना चाहिए और अपने जीवन में सत्य को ओत प्रोत करके सर्वात्मना उसकी रक्षा करनी चाहिए।

श्री स्वामी जी महाराज ने वैदिक धर्म एवं आर्य संस्कृति की रक्षा के लिए आर्य समाज को अपने प्रतिनिधि के रूप में छोड़ा था। आर्य समाज ने इस दायित्व का कहां तक और किस ढंग से पूर्ण किया वा वह इस समय कर रहा है, इस पर भी प्रत्येक आर्य सभा सद् को गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए और यदि हमारे आलस्य प्रमाद वा राग द्वेष के कारण इस दायित्व की सम्यक् पूर्ति में व्यवधान उपस्थित हो तो हमें अपने में अपेक्षित सुधार करके आर्य समाज की गति को वेगवान और उसकी शक्ति को द्विगुणीभूत करने का यत्न करना चाहिए।

प्र चानन्द

हीरक जयन्ती

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की हीरक जयन्ती की तैयारियाँ बडे जोर शोर से हो रही हैं। यह महोत्सव २५ से ३१ दिसंबर तक लखनऊ में डी. ए. वी कालेज के विशाल प्राँगण में मनाया जायगा। उत्सव का उद्घाटन २५-१२-६२ को प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहरलाल जी नेहरू करेंगे। इस अवसर पर अनेक सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया है। सभा अपना ७५ वर्षीय इतिहास भी छाप रही है। उत्तर प्रदेश के आर्य जनो को इसे सफल बनाने में कोई यत्न उठा न रखना चाहिए।

श्रीयुत भवानीलाल शर्मा

श्रीयुत भवानीलाल शर्मा ककुहास (कोकास बिल्डिंग) अमरावती हम सबसे वियुक्त हो गए। उन्हें आर्य समाज से बहुत प्रेम था। उन्होंने अपने व्यवसाय में प्रचुर धन कमाया और आर्यसमाज के कार्यों में उसका दिल खोल कर प्रयोग किया। उन्होंने दस हजार रुपया सार्वदेशिक सभा को प्रदान करके दो स्थिर निधियाँ स्थापित कीं। एक सार्वदेशिकपत्र की सहायतार्थ और दूसरी सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशनार्थ। इसके अतिरिक्त विश्वकर्मा' बच्चों की छात्र वृत्तियों के लिए ७०००) प्रदान करके आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश में एक स्थिर निधि स्थापित की। इसी प्रकार के कई अनुदान अमरावती आर्य समाज और आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश को दिए।

एक बार दिल्ली पधार कर सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में कुछ दिन ठहरे थे। यहाँ उनका साक्षात्कार करके उनसे वार्त्तालाप करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके हृदय में आर्य-समाज के हितार्थ अपना सर्वस्व अर्पण करने तक की तीव्र उत्कण्ठा जाग्रत देखी गई।

आर्यसमाज को उन जैसे दान दाताओं की उदारता से संबल प्राप्त हुआ और प्राप्त रहता है।

परमात्मा दिवगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें यही अभ्यर्थना है।

सतर्कता से काम लो

आर्य समाज के तत्वावधान में प्राय विवाह संस्कार होते रहते हैं। आर्यसमाज के अधिकारी इन विवाहों की नैतिक और कानूनी दोनों प्रकार की मर्यादाओं की रक्षा का ध्यान रखते हैं परन्तु इस पर भी कभी २ उन्हें धोखा हो जाता है। अभी कुछ दिन हुए एक हाई कोर्ट के निर्णय में एक विवाह के प्रसग में जज महोदय ने कुछ भर्त्सना की है। एक अल्प वयस्का अविवाहिता लड़की को एक मनुष्य ने अपहृत किया। वह उसे लेकर भाग गया और बाहर के एक आर्य समाज ने लडकी और पुरुष के संयुक्त आवेदनपत्र पर उन दोनों का विवाह करा दिया। बाद में वह पुरुष अपहरण के अभियोग में गिरफ्तार हुआ। उस पर केस चला। स्त्री ने बयान बदल दिए। उसे ६ माह का सपरिश्रम कारावास का दण्ड मिला। उसने सेशन में अपील की और वह छूट गया। इस पर राज्य ने हाईकोर्ट में अपील की और हाईकोर्ट ने उसकी सजा बहाल रखी। यह ठीक है कि आर्यसमाज द्वारा हुए विवाहों से विवाह की मर्यादा की रक्षा हुई समाज में सदाचार का पलड़ा भारी रहा समाज को सद्गृहस्थ, और श्रेष्ठ नागरिक मिले और असख्य नरनारी विधर्मियोंके जालमें फंसने से बचे और हिन्दूधर्म में पुन वापस आ गए। हमारी जरा सी असावधानी से ये उपलब्धियाँ लांछित न हों इस दिशा में बहुत सतर्कता बर्तने की आवश्यकता है। कानूनी जोखिम तो किसी भी अवस्था में न उठाया जाना चाहिए। संदिग्ध मामलों में पूरी २ जाँच और छानबीन की जानी चाहिए। असंदिग्धता प्रमाणित हो जाने पर ही इस प्रकार के मामलों में विवाह की कार्यवाही सम्पन्न होनी चाहिए।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

अन्त समय की शिक्षा

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी की (डायरी से)

छान्दोग्योपनिषद् प्रपाठक ३ के १७ वे खण्ड मे एक कथा इस प्रकार है कि घोर आङ्गिरस ऋषि ने देवकी पुत्र कृष्ण को शिक्षा दी कि जब मनुष्य का अन्त समय आए और वह इस असार से कूच करने वाला हो तो उसे इन तीन वाक्यो का उच्चारण करना चाहिए

(१) त्व अक्षितमसि

अर्थात् हे ईश्वर ! आप अविनश्वर हैं।

(२) त्व अच्युतमसि।

आप परिवर्तन रहित एक रहने वाले हैं।

(३) त्वं प्राण संशितमसि।

आप सर्व जीवन प्रद और सूक्ष्मतम हैं।

उपनिषत्कार का कहना है कि कृष्ण इस शिक्षा को पाकर अपिपास हो गए अर्थात् उन्हे इस शिक्षा के पश्चात् और किसी शिक्षा की आवश्यकता शेष न रही प्रश्न यह है कि ऋषि ने कृष्ण को अन्त समय के एक कर्त्तव्य का उपदेश किया था। उन्होने क्यो समझ लिया कि अब और किसी शिक्षा की आवश्यकता नही रही। इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमे एक वेद मन्त्र पर दृष्टि डालनी पडती है जो इस प्रकार है —

वायुरनिलममृतमथेद भस्मान्तꣳशरीरम्।
ओ३म् क्रतोस्मर, क्लिबेस्मर, कृतमस्मर
यजु० ४० । १५ ॥

मन्त्रार्थ इस प्रकार है (वायु अनिलम् अमृतम्) शरीरो मे आने जाने वाला जीव अमर है परन्तु (इद शरीर भस्मान्तम्) यह शरीर केवल भस्म पर्यन्त है। जब इन दोनो के वियोग का समय आवे तो ! हे कर्मशील जीव ! ओ३म् का स्मरण कर निर्बलता दूर करने के लिए ओ३म् का स्मरण कर। अपने किये हुए का स्मरण कर।'

इस मन्त्र मे दो बाते अन्त समय मे करने की बतलाई गई हैं —

(१) ओ३म् का स्मरण करना।

(२) अपने किये हुए कर्मों का स्मरण करना

मनुष्य का जीवन दो भागो में विभक्त होता है। पहला भाग वहाँ तक रहता है जहा तक मनुष्य मृत्यु शय्या पर नही आता। जीवन के इस भाग मे मनुष्य को कर्म की स्वतन्त्रता रहती है। वह उल्टा, सीधा जैसा भी चाहे कर्म कर सकता है परन्तु जीवन के दूसरे भाग मे यह स्वतन्त्रता शेष नही रहती। मनुष्य अपने जीवन के पहले भाग मे जिस प्रकार के भी कर्म करता है जीवन का दूसरा भाग उस प्रकार का चित्र खीच कर ससार के सामने रख दिया करता है यदि किसी ने पुत्रैषणा—पुत्र स्त्री बन्धु बाधवो के मोह मे ही अपना जीवन व्यतीत किया है तो अन्त मे उसे इन्ही का स्मरण करते हुए इस दुनिया से जाना पडेगा यदि किसी ने वित्तैषणा अर्थात् धन के लोभ और मोह मे जीवन बिताया है तो अन्त में इसी धन के लिए रोते हुए जाना पडेगा। यदि किसी ने लोकैषणा ससार के मान और प्रतिष्ठा प्राप्त करने की इच्छा मे अपना जीवन लगाया तो फिर अन्त मे इसी की चिन्ता करते हुए मनुष्य को जाना पडेगा।

इस शिक्षा को जान लेने के बाद जो प्रश्न श्री कृष्ण के सम्बन्ध मे उत्पन्न हुआ था उसका उत्तर मिल जाता है। कृष्ण जी ने समझ लिया था कि ऋषि ने यद्यपि अन्त के समय के एक कर्त्तव्य की शिक्षा उन्हे दी थी तथापि अन्त मे वे वाक्य मनुष्य के मुह से कब निकल सकते हैं जब कि उसने जीवन के पहले भाग मे उनका स्मरण और चिन्तन किया हो। इसलिये ऋषि की शिक्षा अन्त के समय की एक शिक्षा नही अपितु सारे जीवन का कार्यक्रम था। जब सारे जीवन का कार्यक्रम विदित हो गया तो फिर और किसी शिक्षा की आवश्यकता ही क्या रही ?

महर्षि जीवन की घटना

आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द का जीवनोद्देश्य वेदो का प्रचार और आस्तिकता का विस्तार करना था। उन्होने अपने जीवन को इसी उद्देश्य की पूर्ति मे लगाया। अब हम उन्हे भी जीवन के अन्तिम भाग मे देखते है। प० गुरुदत्त और अनेक सज्जन उनके अन्तिम दर्शन के लिए विद्यमान थे। उन्होने पलग पर बैठ कर कुछ प्राणायाम किए और प्राणायाम के पश्चात् कुछ वेद मन्त्रो का उच्च स्वर मे उच्चारण किया। वेद मन्त्रो का उच्चारण करने २ उनके चेहरे पर मुस्कराहट आई। गुरुदत्त के सामने यह समस्या उपस्थित हो गई कि यह मुस्कराहट कैसी ? उन्हे फ्रास के विज्ञान वेत्ता लाप्लास का ध्यान आया कि मौत से भयभीत होकर वह बेसुध हो गया और उसी बेहोशी की दशा मे उसके मुह मे ये शब्द निकल पडे —

Love is Greater Than Thousands of my Mathematics ' अर्थात् ईश्वर का प्रेम मेरे सहस्रो गणितो से अच्छा है। वह नास्तिक था। उसे ईश्वर का प्रेम कब याद आया जब मौत ने आकर उसके गले को दबाया। गुरुदत्त भी नास्तिक था परन्तु ऋषि दयानन्द की मुस्कराहट मानो एक विद्युत थी जिसने उनके हृदय मे एकत्र नास्तिकता के कूडे करकट को भस्म करके गुरुदत्त को आस्तिक बना दिया। महर्षि ने उसी मुस्कराहट की अवस्था मे अपने अन्तिम शब्द उच्चारण किये

'प्रभो ! आपने अच्छी लीला की ! आपकी इच्छा पूर्ण हो !!"

इस तथा इस प्रकार की अन्य ऐतिहासिक घटनाओ मे यह बात प्रमाणित हो जाती है कि मनुष्य अपने जीवन के प्रथम भाग मे जो कुछ काम करता है उसके जीवन का दूसरा भाग उसका ही चित्र खीच दिया करता है अथवा यो कहिये कि जीवन का दूसरा भाग पहले भाग के किये कृत्यो का चित्र हुआ करता है। यह नियम है प्रत्येक स्त्री पुरुष को इसमे होकर गुजरना होता है। इस दूसरे भाग को यदि परीक्षा कहे तो अनुचित न होगा। यह परीक्षा सबको देनी होती है। यदि अन्त मे कोई धन सतान अथवा मान मर्यादा के लिए पश्चात्ताप करता और दुखी होता हुआ दुनिया से जायगा तो लोग जान जायेगे यह परीक्षा मे अनुत्तीर्ण होकर जा रहा है। यदि दयानन्द की तरह हसता हुआ विदा होगा तो लोग समझेगे कि यह परीक्षा मे उत्तीर्ण होकर जा रहा है।

हम अन्त मे उन साधनो का कुछ उल्लेख करते हैं जिनके करने से मनुष्य अपने जीवन के पहले भाग को वैसा ही बना सकता है जैसा बनाने को शिक्षा वेद और उपनिषद् में दी गई है।

पहला साधन

शुद्ध अन्न का सेवन है। शुद्ध अन्न ईमानदारी और परिश्रम से कमाये हुए धन को कहते हैं। संस्कृत मे एक कहावत है यथा अन्न तथा मन ' अर्थात् जैसा अन्न होता है वैसा ही मन बना करता है। छल कपट रिश्वत बेईमानी, हिंसा

से प्राप्त, स्वास्थ्य विघातक गन्दगी से बनाए और खाए अन्न का प्रयोग करके कोई भी व्यक्ति अपने मन का अच्छा नही बना सकता।

दूसरा साधन

ईश्वर का प्रेम और ईश्वर विश्वास है कुछ भाई कहा करते हैं और मुझसे भी एक भाई ने जो अनेक डिग्री रखने वाले डाक्टर थे एक बार पेशावर में पूछा था कि हम सब अच्छे काम करे और ईश्वर को न माने तो क्या इसमे कुछ हानि होगी ? मैंने उनसे पूछा कि ईश्वर को न मानकर अच्छे और बुरे की परख कैसे होगी ?

जो आस्तिक हैं वे तो ईश्वर के गुण कर्म और स्वभावानुसार जितने भी काम हैं उनको अच्छे होने की श्रेणी में रखते हैं और जो उनके विपरीत होते हैं उन्हें बुरा ठहराते हैं, उनके साथ में तो ईश्वर एक कसौटी के रूप में है उस पर कस कर वे अच्छे और बुरे की पहचान कर लिया करते है। मैंने डाक्टर से पूछा 'आप किस कसौटी से अच्छे और बुरे की परख करेंगे ?' उन्होंने उत्तर दिया 'हम उपयोगितावाद' का आश्रय लेंगे ? जिस काम की उपयोगिता होगी उसको अच्छा और अनुपयोगिता वाले को बुरा समझेंगे। मैंने उन्हें कहा कि जान स्टुअर्ट मिल ने जो इस बात के प्रवर्तक समझे जाते हैं अपने ग्रन्थो में उपयोगिता की व्याख्या करते हुए एक जगह लिखा है कि एक आदमी भूखा है और दूसरे के पास उसकी आवश्यकता से अधिक अन्न है परन्तु जब पहला व्यक्ति उससे अन्न मांगता है तो वह देता नहीं तो उपयोगिता क्या है ? मिल ने उत्तर दिया 'अब पहले व्यक्ति का कर्तव्य है कि चोरी करके अन्न प्राप्त करले।' मित्र ने एक दूसरा उदाहरण एक ट्राम्वे कम्पनी का दिया है। अमेरिका के नगर में प्रदर्शिनी होने वाली थी। ट्राम्वे कम्पनी के सचालकों ने उस नगर मे ट्राम्वे चलाने की आज्ञा चाही। उन्हें लाइसेंस मिल गया परन्तु ट्राम चलाना प्रारम्भ करने की तिथि उनके अनुकूल न थी। उन्होंने रिश्वत देकर वह अनुकूलता प्राप्त कर ली। यहां मिल ने रिश्वत देने की उपयोगिता स्वीकार की है इन उदाहरणों को देते हुए मैंने डाक्टर से पूछा– यही आपकी कसौटी है जिस पर खोटे माल को परखते हैं और वह उसे खरा बतलाती है ?" डाक्टर ने कुछ लज्जित होते हुए उत्तर दिया "मैं इस पर फिर विचार करूंगा।" इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को समझ लेना चाहिए कि अच्छा बनने के लिये आस्तिकता अनिवार्य है।

तीसरा साधन

सेवा भाव तीसरा साधन है। सेवा से मनुष्य मे नम्रता, निरभिमानता और सामाजिक प्रेम आया करता है जिससे मनुष्य जीवन ऊंचा हुआ करता और उसमें समता आया करती है। सेवा मनुष्य को उच्च और लोकप्रिय बनाने का मुख्य साधन है।

मनुष्य शुद्ध अन्न का सेवन करता, आस्तिकता के ऊंचे भाव रखता और सेवा की वृत्ति बना लेता है तो इससे उसके जीवन का पहला भाग श्रेष्ठ और और ईश्वर परायण बना करता है। ऐसा जीवन बना लेने से उसके जीवन का दूसरा भाग फिर वैसा ही बन जाता है जैसा बनने की शिक्षा आङ्गिरस घोर ने कृष्ण को दी थी और ओ३म् का उच्चारण करते हुए दुनिया से जाता हुआ उसे लोग देखा करते हैं।

तेरी कृपा के विना—श्रीयुत आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज

ईश्वर विश्वास कुछ इस प्रकार से भगवान दयानन्द सरस्वती की रग २ मे भरपूर हो चुका था कि इसी के सहारे उन्होने भयकर उल्टी परिस्थितियो मे असत्य स्वार्थ तथा आडम्बर को परे हटाते हुए अपना सत्य मार्ग निकाल ही लिया। भगवान दयानन्द का सारा जीवन ईश्वरमय था। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पहले ही पन्ने से ईश्वर कृपा का वर्णन महाराज ने प्रारम्भ कर दिया—उनका दृढ विश्वास था कि प्रभु कृपा और प्रभु सहाय के बिना कोई भी कार्य सिद्ध नही हो सकता। वह परमात्मा को परम कृपालु मानते थे और स्वय भी इस बडे गुण को अपने अन्दर धारण किये हुए थे। ससार का उपकार करने के लिए मोक्ष को भी परे धकेल देना इस कलिकाल में उन्ही का काम था, गालिया देने वालो को आशीर्वाद देना, शत्रुओ से भी प्यार करना, विष खिलाने वालो को बार २ बचाते चले जाना क्या साधारण घटनाये हैं ? एक कम अस्सी वर्ष व्यतीत हो गये जब अजमेर नगरी मे प्रभु प्यार के सहारे जीने वाला यह देवता, प्रेम कृपा, अनुग्रह की यह साक्षात मूर्ति अन्तिम लीला कर रही थी। मुण्डन कराने के पश्चात् स्वामी आत्मानन्द को कहा कि मेरे पीछे बैठ जाओ। वह हाथ बाधे बैठ गया। भगवान दयानन्द ने पूछा—'आत्मानन्द तुम इस समय क्या चाहते हो ?" यह शब्द सुन कर स्वामी आत्मानन्द के नेत्र जल पूर्ण हो गये और कहने लगा – "इस सेवक की तो दिन रात यही प्रार्थना है कि प्रभु आपको शीघ्र स्वास्थ्य प्रदान करे" स्वामी जी ने हाथ बढा कर स्वामी आत्मानन्द के माथे पर रखा और कहने लगे कि—

"इस मरण-धर्माक्षण मे समाप्त हो जाने वाले शरीर के स्वास्थ्य की बात अब छोड दो—अपने मानव कर्त्तव्य को पूर्ण करते रहना घबराना नही। ससार मे सयोग वियोग, आना जाना प्रभु के अटल नियम है इनसे कोई बच नही सकता।

इन शब्दो ने तो आत्मानन्द जी को फूट २ कर रोने के लिए मजबूर कर दिया। सायकाल ५॥ बजे भगवान दयानन्द ने आज्ञा दी कि—

'सब द्वार खोल दो और मेरे पीछे खडे हो जाओ फिर दिन, पक्ष, वार तिथि पूछो - प० मोहनलाल जी ने कहा—

'महाराज आज कार्तिक कृष्णपक्ष का अन्त और शुक्ल पक्ष का प्रारम्भ है, अमावस्या है मगलवार है।"

तब भगवान दयानन्द पूरी शान्त मुद्रा से चारो ओर देख कर वेद पाठ करने लगे कितना माधुर्य उनके गले मे उस समय था सुनने वाले मुग्ध हो गये, मन्त्र पाठ के पश्चात् भगवान् दयानन्द ने सस्कृत म प्रभु प्रार्थना की तब हिन्दी भाषा मे प्रार्थना की और फिर गायत्री-मन्त्र का जप करते लगे जप करते २ समाधि अवस्था मे चले गये देर तक परमात्मा मे तल्लीन रहे। उस समय उनके मुख मण्डल पर इतने भयकर रोग होते हुए भी एक दिव्य तेज नजर आ रहा था, तब समाधि को छोड नेत्र खोल दिये और अपनी पवित्र वाणी से अन्तिम शब्द उच्चारण किये —

'हे दयामय, हे सर्व शक्तिमान् ! तेरी यही इच्छा है—सचमुच तेरी यही इच्छा है, परमात्म देव ! तेरी इच्छा पूर्ण हो ! आ हा मेरे परमेश्वर ! तू ने कैसी लीला की "

और एक लम्बा श्वास लेकर ओ३म् के लम्बे

श्रीयुत लाला लाजपतराय
आर्य समाज की विशिष्ट देन

स्वर्गीय पजाब केसरी लाला लाजपतराय के महत्वपूर्ण जीवन का रहस्य फ्रास के प्रसिद्ध विद्वान रोमान्रोलान् ने निम्न लिखित शब्दो मे प्रकट किया है —

I have always thought that if Dayanand Saraswati had lived in our time he would have thrilled with joy at recognising in Lajpat Rai the highest type of the Arya Samaj the warrior the knight without fear and without repr oach ' who devotes his life to the defence of Justice I read again the lines of Dayanand —

To strive to combat to humi liate to destroy the wicked though they be powerful the sovereigns of the whole of earth To strive con t i ly to under mine the power of the unjust and to streng then that of the just though oneself must undergo terrible suffering even death Let no attempt be made to avert it '

—Romain Rolland

मैं समझता हू कि यदि स्वामी दयानन्द सरस्वती आज हमारे बीच मे जीवित होते तो वह लाला लाजपतराय के जीवन मे आर्य समाज के आदर्श जागृत चित्र को देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते। लाला लाजपतराय वीर थे। उन्होने न्याय और सत्य की रक्षा मे अपना जीवन अर्पण किया हुआ था मैं फिर ऋषि दयानन्द का निम्न लिखित वाक्य पढता हू। इसमे आर्य समाज के मनुष्य धर्म का वर्णन किया गया है।

मनुष्य उसी को कहना जो अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे इतना ही नही किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओ की चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुण रहित क्यो न हो उनकी रक्षा उन्नति प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महा बलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहा तक हो सके वहा तक अन्यायकारियो के बल की हानि और न्यायकारियो के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम मे चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो चाहे प्राण भी चले ही जावे परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक कभी न होवे

रोमान्रोलान्

नाद के साथ प्राण छोड दिये। प्रभु कृपा से प्रभु विश्वास पर प्रभु इच्छा पर रहने वालो का जीवन भी सुखद होता है और मृत्यु भी।

ऋषि निर्वाण का पर्व मनाने वालो! आज रात गायत्री मन्त्र द्वारा बुद्धि की मलीनता दूर करके आओ परमात्मा की कृपा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करें हे परम कृपालो! तेरे परम भक्त भगवान् दयानन्द की दिव्य अग्नि की कोई नन्ही सी ही चिनगारी हमे प्रदान कर दे इतनी उदारता तो दे दे कि तेरी पवित्र वाणी वेदका प्रचार करने व ले आपस मे मिल जुल कर रहे और अपनी शक्तियां परस्पर के सघर्ष मे नष्ट न करके भगवान् दयानन्द के दिव्य मिशन को पूरा करने मे लगा दें। प्रभु! तेरी कृपा और सहाय के बिना कोई पुरुषार्थ भी सफल नही हो सकता !!!

लाला लाजपत राय

[श्रीयुत नारायण विष्णु गाडगिल भूतपूर्व राज्यपाल पजाब]

श्रीयुत ला० लाजपत राय का जन्म लुधियाना जिलान्तगत जगराव के निकट वर्ती ग्राम धूडिका के एक निधन परिवार मे और एक कच्चे घर मे जिसकी लम्बाई चौडाई मुश्किल से ४० × ३ फीट होगी २८ जनवरी १८६५ को हुआ था। इस घर को गिरे हुए भी दसियो वर्ष हो गये हैं। यह स्थान वर्षों तक उपेक्षित अवस्था मे पडा रहा। अभी कुछ समय मे ही जनता को इस विषय मे अपनी उत्तरदायिता की अनुभूति हुई है। यद्यपि लालाजी का १७ नवम्बर १९२८ को लाहौर में देहान्त हुआ था तथापि अभी हाल मे ही वहा उपयुक्त स्मारक खडा करने की दिशा मे क्रियात्मक पग उठाया गया है।

यह दुख की बात है कि स्वतत्रता प्राप्ति के दस वर्ष बाद तक भी उस व्यक्ति का सम्मान करने के लिए कुछ न किया गया जो पजाब केसरी कहा जाता था जो माना हुआ लीडर था और जो तिलक विपिनचद्रपाल रासबिहारी गोखले प्रभृति उन अनेक महारथियो का मित्र एव समकालीन था जिन्होने हमको और उस समय की युवक सन्तति को वैयक्तिक पुरस्कार की भावना के बिना भारत की स्वतत्रता के लिये काय करने अपना सिर ऊचा रखने और निर्भय रहकर कष्ट सहन करने की प्रेरणा प्रदान की था

महात्मा गाधी ने उनके निधन की तुलना भारत के गगन मडल से एक महान नक्षत्र के लुप्त जाने के साथ की थी। जो पीढी १५ अगस्त १९४७ को भारत के स्वतत्र होने का आनद लेने के लिये जीवित रह गई थी उसके लिए लज्जा का बात है कि वह अन्य धन्धो मे व्यस्त रही और उसने वाह्य रूप से उस राष्ट्र नायक की ओर ध्यान न दिया जिसने हमारे देश के लिए बहुत कुछ किया था। यह ठीक है कि ब्रिटिश काल मे एक धार्मिक सस्था ने लाहौर मे उनका स्मारक एक प्रस्तर मूर्ति के रूप मे बनवाया था और स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् वह मूर्ति शिमला ले जाई जा कर बडे डाकखाने के सामने अच्छे स्थान पर स्थापित कर दी गई थी जहा माल रोड रिज की तरफ घूमती है।

उल्लेखनीय सेवाए

लालाजी ने अपने जीवन के कई भागो मे जो महान् कार्य किए उनमे से किसी एक पर भी हम गौरव अनुभव कर सकते हैं। उन पर सब प्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती का प्रभाव पडा था और वे लाहौर के डी० ए० वी० कालेज के जन्म दाताओ मे से थे जिसकी शाखाए न केवल पजाब के विविध नगरो मे हा है अपितु अन्य राज्यो मे भी हैं। अन्त्यजो के उद्धार कार्य मे भी उनकी रुचि थी और गत शताब्दी मे भी उन्होने इस कार्य को किया था। राजनीति मे प्रवेश करने से पूर्व उन्होने अकाल पीडितो की सेवा का भ उल्लेखनीय कार्य किया था।

१८८५ ई० मे उन्होने कानून की परीक्षा पास की था। यही वह साल था जब इडियन नेशनल काग्रेस की स्थापना हुई थी।

लालाजी ने कुछ समय तक हिसार मे वकालत की फिर वहा से लाहौर चले गए जहा उन्होने भारत के विभिन्न भागो से आए हुए नवयुवको को अपना कर उन्हें देश प्रेम और समाज सेवा का पाठ पढाया। १९२१ में उन्होने लोक-सेवक-मडल की स्थापना की जो सर्वेन्ट आव पीपिल सोसाइटी' भी कहलाती है। इस मडल के साथ बाबू पुरुषोत्तम दास टडन श्री बलवन्तराय मेहता

और अन्याय प्रसिद्ध सामाजिक एव राजनैतिक कार्यकर्त्ताओ का सम्ब य रहा है। वतमान केद्रीय गृह मत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री उन निस्वाथ नवयुवको मे से एक थे जो लाला जी के चरणो मे बैठकर कुछ सीखने के लिए लाहौर गए थे। लाला जी ने पीपिल यग इडिया और बन्देमातरम् (उर्दू) ये तीन पत्र लहौर स निकाले थे। इन पत्रो के द्वारा उन्होने लोक मत को प्रशिक्षित करने का पूरा २ उद्योग किया। साम्प्रदायिक बन बिना वह सम्प्रदाय निरपेक्ष थे उन्होने तिलक स्कूल आफ पोलिटिक्स की भी स्थापना की थी उन्होने एक बडी लायब्ररी का भी निर्माण किया जिसमे मुख्य रूप से समाज विज्ञान के ग्रन्थ थे और जो राजनीति और अर्थशास्त्र के विद्यार्थियो के लिए बडी उपयोगी थी और जो लाहौर मे द्वारकादास लायब्ररी के नाम से विख्यात थी। विभाजन के पश्चात यह शिमला ले आई गई है।

४ वष की आयु मे लालाजी राजनैतिक क्षेत्र मे बहुत प्रसिद्ध हो चुके थे। देश वासियो के प्रबल विरोध के होते हुए भी १९०५ मे बगभग हुआ। विरोध के अवसर मे भी लार्डकर्जन ने अपनी योजना को मूर्त रूप दे ही दिया था। किसी को क्या पता था कि मि जिन्ना और उनका मुस्लिम लीग द्वारा प्रसारित साम्प्रदायिक पागलपन के फलस्वरूप लगभग ४० वष के उपरान्त भारतीयों का प्रियतम सयुक्त बगाल विभाजित हो जायगा।

देशाभिमान

श्रीयुत गोखले की अध्यक्षता मे १९०५ के अन्त मे इडियन नेशनल काग्रेस का अधिवेशन बनारस मे हुआ। विदेशी माल के बहिष्कार के प्रस्ताव का अनुमोदन स्व० लाला जी ने किया था। इस अवसर पर हुआ उनका भाषण देश-प्रेम युक्ति और ओज से परिपूर्ण था।

इस भाषण मे उन्होने कहा था कि स्वराज्य हमारा स्वत्व है यह हमे अग्रेजो से दान रूप में प्राप्त नही करना है इसके पश्चात् स्वदेशी आन्दोलन चला और इसने देश को सयुक्त करने के लिए एक प्रकार का धार्मिक रूप ले लिया।

कुछ महीनो के पश्चात् लालाजी गोखले के साथ १९०६ ई० मे विलायत गए। उनकी इस यात्रा का उद्देश्य पार्लियामेन्ट के सदस्यो के समक्ष भारत की स्वतत्रता का मामला रखना उन कठिनाइयो को बताना जिनका भारतीय प्रजा को सामना करना पडता था और उस ढग से अवगत कराना जिस ढग से अग्रेज शासन करते और भारतीय जन कुचले जाते थे उन दिनो देश में भारतीय राष्ट्रीयता की लहर दौड रही थी और लाला जी की गणना अत्यन्त प्रसिद्ध राष्ट्रिय नेताओ मे की जाती थी।

भारत के ब्रिटिश शासको ने अपने हाथ दिखाए और उन्हे १८१८के अधिनियम३के अधीन गिरफ्तार करके मुकदमा चलाए बिना सरदार भगतसिंह के चाचा सरदार अजित सिंह के साथ जो भारतीय स्वतत्रता के एक सुप्रसिद्ध पजाबी योद्धा थे देश निकाला दे दिया और माडले (ब्रह्मा) भेज दिया जो उन दिनो अग्रेजो के शासनाधीन था। उनके निर्वासन की अवधि छ मास की थी परन्तु वह कुछ पहले ही मुक्त कर दिए गए। १८ नवम्बर १९०७ को वह एक राष्ट्रनायक के रूप मे लाहौर लौटे। लौटते ही वह इडियन नेशनल काग्रेस के सूरत के अधिवेशन मे भाग लेने चले गए। लोकमान्य तिलक ने उनका नाम अध्यक्ष पद के लिए प्रस्तावित किया जो उग्रवादी थे और राश बिहारी घोष की नम्रनीति के विरोधी थे। लाला जी ने इस पद को स्वीकार करने मे असमर्थता प्रकट की क्योंकि वह अपने कारण काग्रेस मे विघटन उत्पन्न करना नही चाहते थे।

विदेश यात्रा

१९०८ मे वे पुन इगलैड गए और वहा अनेक भाषण दिए। १९०९में पुन भारत लौट कर उन्होने हिन्दू सभा की स्थापना की। वह १९१० मे पुन

इंग्लैंड गए। वहा उनका पुत्र बीमार था। उसको लेकर भारत लौटे। दुर्भाग्य से उनके पुत्र का देहान्त हो गया। १९१४ में उन्होने एक शिक्षा विषयक ट्रस्ट बनाया और अपने पिता की स्मृति मे १९१४ मे जगराव मे राधाकृष्ण नामक हाई स्कूल खोला। १९१४ मे वह एक डेपुटेशन में इंगलेण्ड गए और वहा से जापान। परन्तु प्रथम महायुद्ध छिड जाने के कारण उन्हें भारत लौटने की अनुमति न दी गई क्योंकि अंग्रेजो सरकार की दृष्टि में वह 'खतरनाक व्यक्ति थे।

जापान से युरोप होते हुए वह अमेरिका गये। १९१९ तक उन्हे अमेरिका रुकना पडा। लेनिन ट्राटस्की तथा अन्य बोल्शेविकों ने जिन्हें देश-निकाला दिया गया था, रूस में वापस आकर वहा १९१७ में महान् क्रान्ति आरम्भ की थी। इन लोगों से ब्रिटिश सरकार ने जो पाठ ग्रहण किया था मुख्यतया उसे लक्ष्य में रखते हुए ब्रिटिश सरकार लाला लाजपतराय जैसे व्यक्ति को भारत में वापस लाने वा उन्हे स्वयं आने देने की शीघ्रता में न थी।

फिर भी लाला जी अमेरिका मे हाथ पर हाथ धरे न बैठे रहे। उन्होंने ब्रिटिश शासन की करतूतों और भारतीय प्रजा के कष्टो से वहाँ की जनता को परिचित कराया। अधिकाश अमेरिकनो की भारत के प्रति सहानुभूति थी क्योंकि अंग्रेजो के एक उपनिवेश के रूप मे उन्हे भी ब्रिटिश शासन के अभिशापो को अनुभूति थी और उन्हें भी स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए युद्ध करना पडा था। लाला जी ने अमेरिका के पत्रों में बडी प्रभावशालिनी भाषा में अनेक लेख लिखे और अनेक अवसरों पर 'भारत में ब्रिटिश शासन' विषय पर भाषण दिये। भारत के प्रति लोकमत जाग्रत करने में लाला जी ने अमेरिका में अनथक परिश्रम किया।

जब वह पजाब लौटे तब पंजाब वैसा न रहा था जैसा विदेश गमन से पूर्व उन्होंने छोडा था। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त उसके कई नगरो में मार्शलला जारी था और वह अनेक अन्यायारो एवं क्रूरताओ से आहत था। अघन्य कहानिया सुनते ही वह प्रत्येक परिणाम को भुगतने के लिए तैयार होकर राजनैतिक मैदान में कूद पडे महात्मा गाधी जी के प्रभाव में आये और इण्डियन नेशनल कांग्रेस के कलकत्ता मे हुए विशेष अधिवेशन की अध्यक्षता की। विचार-वैषम्य के कारण यह अनिश्चित था कि लाला जी की वहाँ स्थिति क्या रहेगी परन्तु नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में उन्होने साहस पूर्वक गाधी जी का साथ दिया। इसके अगले वष वह २ बार जेल गए। उन्होंने मोतीलाल जी नेहरू के साथ मिल कर कार्य किया और चौरा चौरी काड के कारण सत्याग्रह आन्दोलन के स्थगित किये जाने का विरोध किया।

निर्भीक और नि स्पृह

लाला जी स्वराजिस्ट के रूप मे केन्द्रीय विधान सभा के एक सदस्य थे और बाद में उन्होने नेशनलिस्ट पार्टी बना ली थी। उन्होने उस सभा मे साइमन कमीशन का बायकाट करने विषयक एक प्रस्ताव रखा क्योकि उसके निर्माण की अन्यान्य त्रुटियो मे से एक त्रुटि यह थी कि उसमे किसी भी भारतीय को सम्मिलित न किया गया था। हिन्दू नेता के रूप में प० मदन मोहन जी मालवीय के साथ उनकी बडी सहानुभूति थी और उन्होने उनके साथ मिल कर काय किया था। इण्डियन नेशनल कांग्रेस मे बहु पक्ष की नीतियो के साथ उनका सदैव मतैक्य न रहता था। वह निर्भीकता से अपनी सम्मति का प्रकाश किया करते थे। जिस बात में उनका विश्वास होता था उसके समर्थन में वह दृढ रहते थे, अकेले पड जाने का उन्हें न भय रहता था और न उन्हें इस बात की चिन्ता रहती थी कि कोई उनके विरुद्ध है या नहीं। उनकी इच्छा शक्ति बड़ी दृढ़ थी और चरित्र उज्ज्वल

था जिसके सम्बन्ध में किसी समझौते की गुंजाइश न रहती थी। लाला जी बड़े प्रभावशाली वक्ता थे। उनकी वक्तृताएं ओज, प्रवाह आवावेश और मन्यताओं के प्रकटीकरण के साहस से ओत-प्रोत रहती थीं। उन्होंने न तो अपने लिए किसी वस्तु की इच्छा की और न कभी वह वस्तु उन्हें प्राप्त हुई। वह अपनी सुविधा के लिये अपने सिद्धान्तो का न हनन करते थे न सन्मार्ग से ही विचलित होते थे और न कीर्ति के पीछे ही दौडते थे। अपने लोगों की अवस्था के सुधारार्थ वह अलग-थलग रह कर भी चुपचाप काम करते रहते थे। वह प्रान्तीयता, जात-पात और भाषावाद के पक्षपात से मुक्त थे। वह देशभक्त और सर्वोपरि भारतीय थे।

लाला जी वीर और क्रियात्मक व्यक्ति थे। ३० अक्तूबर १९२८ को साइमन कमीशन लाहौर गया। उसके बहिष्कार के लिए आयोजित प्रदर्शन का नेतृत्व लाला जी कर रहे थे। जब वह जलूस स्टेशन की ओर जा रहा था तब पुलिस ने लाठी चार्ज किया और लाला जी के भी लाठिया मारी गई। पुलिस के इस अत्याचार का प्रतिवाद करने के लिये ब्राडला हाल में आयोजित एक विराट सभा में लाला जी ने अपने भाषण में यह प्रसिद्ध वाक्य कहा था —

"मेरे ऊपर हुआ लाठी का प्रत्येक प्रहार भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की अर्थी की अन्तिम कील सिद्ध होगा।"

लाठी के प्रहारों से सम्भवत लाला जी के शरीर की अपेक्षा हृदय पर अधिक आघात पहुंचा था जिससे वह पुन ठीक न हो सके और १७ नवम्बर १९२८ को उनका देहावसान हो गया। प्राय यह कहा जाता है कि महाराष्ट्र में जो स्थिति लोकमान्य तिलक की थी पंजाब में वही स्थिति लाला लाजपत राय की थी। यदि पंजाब में उन जैसा दूसरा नेता होता तो यह बड़े सौभाग्य की बात होती। परन्तु इतिहास की यह दुःखजनक शिक्षा है कि महान् पुरुषों का विस्तार तो होता है किन्तु उनका विकल्प नहीं होता। नियमित रूप से दूसरे व्यक्ति उनका स्थान नही ले सकते।

यह सन्तोष की बात है कि उनकी मृत्यु के ३१ वर्ष बाद स्वतन्त्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा राजेन्द्र प्रसाद १७ नवम्बर १९५९ को ढूधिका ग्राम मे गये और उनकी जन्मभूमि में उनके स्मारक की आधारशिला रखी। यह स्मारक उपयुक्त ही होगा। ६० फुट ऊंचा एक स्तम्भ बनाया जायगा जो कई मील दूर से देख पड़ेगा। तरने का एक तालाब होगा और एक विश्राम गृह। आस-पास के लोगों के सांस्कृतिक,सामाजिक और आर्थिक कल्याण के लिए एक सयुक्त ग्राम सघ बनाया जायगा। एक खुले थियेटर, व्यायाम शाला, पोली-टेकनिक, स्वास्थ्य केन्द्र और लघु उद्योग-शिक्षण सस्थान की भी योजना है। स्मारक समिति की पिछली बैठक मे यह भी निश्चय हुआ कि वयस्कों को साक्षर बनाने का कार्य भी किया जाय। इस दिशा में यत्न हो रहा है।

यदि पंजाब और भारत के लोग लाला जी की भावना को अधिकाधिक सख्या में आत्म-सात करे तो निश्चय ही भारत सुखधाम बन जाय।

लाला हरदेव सहाय

श्री सुखदेव सिंह जी
कार्या० मन्त्री, गोहत्या निरोध समिति

गोभक्त लाला हरदेव सहायजी का जन्म हिसार जिले के सातरोद नामक ग्राम में मार्गशीर्ष सुदी ५ सम्वत् १९४९ को एक प्रतिष्ठित अग्रवाल परिवार में हुआ था। उन के पिता लाला मुसद्दीलाल धार्मिक एव प्रतिष्ठित जमींदार थे।

लालाजी की प्रारम्भिक शिक्षा हिन्दी से प्रारम्भ हुई। उन को हिन्दी के साथ साथ संस्कृत के अध्ययन में भी विशेष रुचि थी, अत उन्होंने संस्कृत का भी अध्ययन किया। ऊर्दू भाषा की उन्हे पूरी जानकारी थी।

सातरोद ग्राम में हिन्दी के अध्ययन की कोई व्यवस्था न थी, अत उन्होंने हिन्दी पाठशाला की आवश्यकता को अनुभव कर १७ जुलाई सन् १९१२ को सातरोद विद्यालय की स्थापना कराई। इस विद्यालय का सम्पूर्ण व्यय उनके पिता लाला मुसद्दीलालजी ने दिया। आस पास के ग्रामों के अनेक छात्रोंने इस विद्यालय में प्रविष्ट हो लाभ उठाया। स्कूल की प्रगति को देख कर सन् १९१९ मे शिक्षा विभाग हिसार ने विशेष सहायता प्रदान की तथा मान्यता भी दी। विद्यालय के अन्तर्गत ही लाजपत राय शिल्पशाला की भी उन्होंने स्थापना की, जिस में पढ़ाई के साथ साथ छात्रों की कताई बुनाई इत्यादि शिल्प कार्य सिखलाने का प्रबन्ध किया गया।

इस विद्यालय की एक विशेषता यह भी रही है कि इसने जनता में राष्ट्रीय भावना प्रचलित करने मे पूर्ण सहयोग दिया है। इस के अनेक कार्यकर्ता अध्यापक तथा छात्र स्वतंत्रता आन्दोलन में जेल गये। लुहारु, बीकानेर तथा जीन्द के अनेक राष्ट्रीय आन्दोलनों को इस विद्यालय से ही प्रेरणा प्राप्त हुई। इस का निरीक्षण सुभाषचन्द्र बोस, प० जवाहरलाल जी नेहरू आदि नेताओं ने करके इसकी प्रशसा की है।

इस विद्यालय के साथ साथ १९२५ से हिसार जिले में जिन ग्रामों में दस दस मील तक शिक्षा का कोई प्रबन्ध न था वहा ६५ ग्रामों में प्रायमरी के हिन्दी स्कूल जारी किये। यह सभी स्कूल सन् १९४८ तक सुचारु रूप से चलते रहे। स्वतन्त्रता के बाद यह सभी स्कूल सरकार के सुपुर्द करके लाला जी अपना पूरा समय गो-सेवा कार्य में देने लगे। इन सभी स्कूलों के अध्यापकों के लिये शुद्ध खादी का पहनना अनिवार्य था तम्बाकू आदि पीने की बड़ी मनाही थी।

लाला हरदेव सहाय के हृदय में बालकपन से ही देशभक्ति की भावनाये ओतप्रोत रही हैं सन् १९२१ और १९४२ के स्वतन्त्रता आन्दोलनों में उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया और दोनों आन्दोलनों मे एक एक वर्ष की कैद की सजा काटी। आप को हिन्दी की प्रेरणा सन् १९२१ की जेलयात्रा में पंजाब की मीयावाली जेल मे स्वामी श्रद्धानन्द जी से मिली।

सन् १९३७-३८ में हिसार जिले में जिस समय भयङ्कर अकाल पड़ा और गाये भूख से तड़प तड़प कर मरने लगीं तो उन्होंने स्वर्गीय प० नेकीराम जी शर्मा की प्रधानता में कांग्रेस कहत कमेटी स्थापित करके अपने सहयोगी प० ठाकुरदास जी भार्गव, श्री जे एन मानकरजी और चौधरी सुखदेव सिंह के साथ ७ हजार गायों के लिये चारे दाने का प्रबन्ध दस महीने

तक किया तथा स्त्रियों को चर्खे पर सूत कताई का काम दिया। जच्चा स्त्रियों के लिये विशेष भोजन का प्रबन्ध किया। सर्दी में गरीब लोगों को रजाई तथा कपडे बटवाये। इस अकाल में लालाजी ने चार लाख रुपया जनता से मॉग कर गरीबों और मूक गायों की सेवा के लिये खर्च किया।

गोरक्षा आन्दोलन के साथ साथ आप ने वनस्पति घी का भी कड़ा विरोध किया। लाला जी की राय में वनस्पति घी एक मीठा जहर है। उन्होंने जनता को सावधान करने के लिये "मीठा जहर एव देश के दुश्मन" नामक पुस्तक की रचना की।

भारत के स्वतत्र होने पर भी गोहत्या को जारी देख उन्होंने अपना जीवन ही गोरक्षा के कार्य में लगाने का सकल्प किया। उन्होंने अनेक ग्रन्थों का अध्ययन कर गो महिमा की जानकारी प्राप्त की। "गाय ही क्यों" नामक एक महत्व-पूर्ण पुस्तक की रचना कर.जनता को गाय की महत्ता से अवगत कराया। इस पुस्तक की भूमिका में भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है—

"लाला हरदेव ने गाय के प्रश्न का बहुत विस्तृत और गहरा अध्ययन किया है। इतना ही नहीं उन्होंने जो अपने अध्ययन में पाया है उस का साक्षात अनुभव भी बहुत अंशों में किया है इसलिये वह जो कुछ इस सम्बन्ध मे कहें वह आदरपूर्वक सुनने योग्य है।" राष्ट्रपति के इन शब्दों से यह स्पष्ट हो जाता है कि गाय के सम्बन्ध में लाला हरदेव सहायजी का अध्ययन बहुत गहरा था।

अनेक प्रयत्नों के बावजूद जब सरकार गोहत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाने के लिये तैयार न हुई तो उन्हों ने गोहत्या के विरुद्ध अहिंसात्मक आन्दोलन करने का बीड़ा उठाया। २ फरवरी १९५४ को प्रयाग कुभ मेले के अवसर पर उन्होंने स्वर्गीय श्री पुरुषोत्तमदास जी टडन, प० ठाकुर-दास जी भार्गव, श्री हनुमान प्रसादजी पोद्दार, ब्रह्मचारी प्रभुदत्तजी महाराज, गुरु गोलवलकरजी आदि के सहयोग से एक विशाल सम्मेलन किया। स्वामी करपात्री जी ने भी उन के इस कार्य के लिये अपना आशीर्वाद प्रदान किया। इसी अवसर पर गोहत्या निरोध समिति की स्थापना की गई। कुभ के अवसर पर ही गोस्वामी गणेशदत्तजी के पडाल में भाषण देते हुये अपने सिर की पगड़ी फेंकते हुये घोषणा की—

"कि मैं जबतक समस्त देश से गोहत्या के भयंकर कलक को दूर न करा दू गा तबतक नगे सिर ही रहूग। पलग या चारपाई पर न सोऊ गा और न ही चैन से बैठू गा।"

लाला जी ने गोहत्या बन्दी के लिये अनेक आन्दोलन भी प्रारम्भ किये जिन में कितने ही व्यक्ति जेल गये। उन के नेतृत्व में लखनऊ विधान सभा के सन्मुख भी गोहत्या बन्दी के लिये सत्याग्रह किया जिस में सैकड़ों महिलाओं ने भी भाग लिया। सन् १९५५ में पटना में उन्होंने गोहत्या बन्दी के लिये आन्दोलन किया जिस में ब्रह्मचारी प्रभुदत्त जी के साथ वह गिरफ्तार कर बॉकीपुर जेल में नजरबन्द कर दिये गए।

लालाजी ने अनेकों गोरक्षा सम्बन्धी पुस्तकें भी लिखी हैं। "भारत मा की दुर्दशा क्यों" नामक पुस्तिका लिखने पर सरकार ने उन पर मुकदमा चलाया हुआ है। लाखों की सख्या में गोसाहित्य देश की अनेक भाषाओं में छपवा कर देश के कोने कोने में बटवाया। अन्तिम समय तक कलकत्ता की भयंकर गोहत्या, कलकत्ता में बकरीद के दिन होने वाली गायों की कुर्बानी को बन्द कराने, पंजाब तथा राजस्थान से

द्रविड स्थान का प्रचार

पिछले दिनों (१५ सितम्बर के आस-पास) द्रविड मुन्नेतर कज़घम के समर्थकों ने मदरास जेल में बन्द अपने नेताओं का उच्चस्वर मे जय ? कार किया। इसके साथ ही द्रविडस्थान के नारे लगाए, युवक कांग्रेस और अन्य वाम पक्षी दलों के लोग इस प्रदर्शन का विरोध करने के लिए बाहर सड़कों पर निकल आए। मदरास नगर और ज़िलों के केन्द्रों की पुलीस को प्रति-द्वन्दी राजनैतिक दलों में भिडन्त को रोकने और कानून एव व्यवस्था बनाए रखने के लिए बडा संघर्ष करना पडा।

द्रविड मुन्नेतर कजगम के लिए यह सप्ताह बड़ा महत्त्व पूर्ण है। दल के प्रमुखतम नेता श्रीयुत सी ऐन अन्नादुराई की जो इस समय खाद्य आन्दोलन के प्रसग मे १० सप्ताह की जेल काट रहे हैं १६ सितम्बर को ५४ वीं वर्ष गाठ थी। द्रविड मुन्नेतरम के समर्थकों ने एक सप्ताह तक वर्ष गाठ का समारोह किया।

इसी सप्ताह द्रविड मुन्नेतरम कजगम गत वर्षों के सदृश दल का स्थापना दिवस मना रहा था। दल वालों ने द्रविडस्थान के प्रचारार्थ सभाएं कीं और रैलियॉ आयोजित कीं। उनके

कलकत्ता बम्बई आदि बडे शहरों मे दुधारु गायें ले जा कर जो बर्बाद की जा रही हैं उन पर पाबन्दी लगवाने, जिन राज्यों मे सम्पूर्ण गोवध निवारण कानून अभी तक नहीं बने वहॉ आन्दोलन करके बनवाने, देश मे चार बडे मशीनी कसाई खाने जो खुलने की तजवीज है उन्हे बन्द करने के मुख्य प्रश्न उन के सन्मुख रहे। चारपाई पर पडे पडे भी उपरोक्त बातों से सम्बन्धित अधिकारियों तथा गोभक्त लोगों को चिट्ठिया लिखवाते रहे।

वैसे तो लाला जी दो तीन वर्ष से बीमार ही चले आते थे। बीमारी की हालत मे ही वह दिन रात कार्य और चिन्ता करते रहते थे। पर २६ अगस्त को जो अचानक बीमारी का आक्रमण हुआ उससे वह बहुत कमजोर हो गये और इलाज के लिये उन्हें दीवानचन्द आवल नरसिंग होम नई दिल्ली मे प्रवेश कराया गया जहॉ उन्हे ६ और ११ सितम्बर को फिर बीमारी के दो आक्रमण हुये। उन की प्रबल इच्छा रही कि उन्हे हिसार ले जाया जावे। जलवायु और स्थान तब्दीली के विचार से उन्हे २४ सितम्बर को हिसार के सिविल हस्पताल में प्रवेश कराया गया। २८ सितम्बर तक आप अच्छी तरह से रहे और अपने पुराने साथियों और रिशते-दारों से मिल कर बडी प्रसन्नता अनुभव की। २९ सितम्बर को प्रात दो बजे फिर बीमारी का आक्रमण हुआ और वह २५ घण्टे बेहोशी की हालत में ही "हे भगवान, हे भगवान" शब्द रटते रहे। अन्त में ३० सितम्बर को सवेरे काल देव ने आ घेरा और अपना उपरोक्त अधूरा कार्य छोड़ कर ३ बज कर १० मिन्ट पर स्वर्ग सिधार गये।

लालाजी का अन्तिम संस्कार उनकी जन्म भूमि हिसार से ५ मील दूर सातरोद में दिन के ९ बजे किया गया। इस अवसर पर श्रद्धान्जलि अर्पित करनेवालों में हिसार के सभी सस्थाओं के अनेक प्रतिष्ठित नेताओं के अतिरिक्त दिल्ली से गोहत्या निरोध समिति के प्रधान लाला हसराज जी गुप्त एवं राजस्थान तथा पजाब संघ के प्रमुख सगठक श्री माधोराव मूले भी पधारे।

इस प्रचार से राष्ट्रिय तत्त्व भी गति में आए और विरोधी प्रदर्शनों में उनकी अभिव्यक्ति देख पड़ी।

इस अवसर पर प्रमुख व्यक्तियों द्वारा भेजे हुए बधाई के सन्देशों की कजगम के नेता ने वेलूर सेन्ट्रल जेल से पत्र व्यवहार द्वारा प्राप्ति स्वीकार की। इन समस्त सन्देशों में कजगम नेता ने एक संदेश को बहुत महत्त्व दिया और वह सन्देश था स्वतंत्र दल के संस्थापक राजा जी का।

राजा जी ने बड़े भावपूर्ण शब्दों में शुभकामनाएँ भेजते हुए दोनों की मित्रता के दिन पर दिन प्रगाढ़ बनते जाने की चर्चा की। उन्होंने वर्ष गाँठ के उपहार स्वरूप 'सत्यमेव जयते' नामक अपनी पुस्तक भी भेजी जो एक अंग्रेजी साप्ताहिक में छपे हुए उनके ताजा लेखों का संग्रह है। इससे पूर्व राजा जी ने इस प्रकार का न तो कोई बधाई सन्देश भेजा था और न उपहार ही भेंट किया था। अत राजनैतिक क्षेत्रों की यह मान्यता बन गई है कि राजा जी प्रत्यक्षत अपने मुन्नेतरम साथी के प्रति जो इस समय आपत्ति ग्रस्त है एक सच्चे मित्र का पार्ट अदा करने के लिए समुत्सुक हैं।

एक मानसिक और नैतिक शक्ति के रूप में द्रविड मुन्नेतरम कजगम के हित का राजा जी को कितना अधिक ध्यान है यह बात समाचार पत्रों में छपे उनके उस परामर्श के एक अंश से स्पष्ट हो जाती है जो उन्होंने कजगम नेता को अपनी शुभकामनाओं के साथ प्रेषित किया था। राजा जी ने एक अपील भी भेजी थी जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि द्रविडस्थान के पुरोगम का नितान्त परित्याग न हो सके तो उसे क्रियान्वित करने की दिशा में धीरे २ आगे बढ़ो। राजाजी के मतानुसार 'शत्रु कांग्रेस' सत्तारूढ़ बने रहने के उद्देश्य से भारत की एकता बनाए रखने की आड़ में 'द्रविडस्थान' के विषय का दोहन करती है। राजा जी की इच्छा यह है कि उनके कजगम के नेता द्रविडस्थान पर बल देने के स्थान में भ्रष्ट कांग्रेस राज को हटाने पर बल दें।

राजा जी की बात मानी जाय या न मानी जाय द्रविड मुन्नेतर कजगम के नेता और कार्यकर्त्ता बाह्य रूप में अपने विभाजित राष्ट्र के सिद्धान्त पर अड़े हुए हैं। इसके नेताओं ने घोषणा की है कि वे राजनैतिक पृथकत्व के आधार पर समस्त चुनाव लड़ेंगे। उन्होंने यह भी कहा है कि बड़े चुनाव में और उपचुनाव में कजगम को जो मत मिले थे वह 'द्रविडस्थान' के समर्थन के सूचक थे।

पृथकत्व की योजना को एक ओर रख भी दें तब भी चुनाव में मदरास राज्य में सबसे बड़ा संघठित विरोधी दल द्रविड मुन्नेतरम कजगम सामने आया है। इसके प्रत्यक्षत लड़ाकू प्रवृत्ति रखने वाले लगभग ५ लाख सदस्य हैं। इसकी ४००० शाखाएं हैं जो सुदूर निर्जन झोंपड़ों तक में कार्य रत हैं। सरकारी कार्यालयों और पुलीस में भी इसके समर्थक पाए जाते हैं

द्रविड मुन्नेतरम कजगम प्रारम्भ से ही तामिल के हित सपादन का दम भरता रहा है। परन्तु विश्वविद्यालयों मे शिक्षा के माध्यम के विषय में वह वर्तमान स्थिति से ही सन्तुष्ट प्रतीत होता है। वह जानबूझकर निरपेक्षता की नीति अपनाए हुए है।

द्रविड मुन्नेतरम कजगम पाठ्य-क्रम में अंग्रेजी को बनाए रखने के लिए उत्सुक है, यह बात वह स्वीकार करता है। एक बार दल के नेता श्री अन्ना दुराई ने 'हिन्दी का साम्राज्यवाद' विषय पर भाषण देते हुए जो शब्द कहे थे वे सूत्र रूप मे उस दल की स्थिति के सूचक

द्रविड मुन्नेतरम कजघम के विरुद्ध नया मोर्चा

अधिक प्रभाव शाली ढग से द्रविड मुन्नेतरम कजगम की वाधा से राष्ट्रीय स्तर पर निपटने के लिए मदरास राज्य में एक नई योजना बनाई गई है।

इस योजना के अनुसार एक राष्ट्रीय सैनिक दल बनाया जायगा जिसमें भारत के समस्त भागों के स्वय सेवक भर्ती किए जायेंगे। यह दल राजनैतिक मोर्चे पर द्रविड मुन्नेतरम कजगम के विरुद्ध आन्दोलन करेगा। यत इस दल का स्वरूप राष्ट्रिय एव समन्वात्मक है अत यह समझा जा रहा है कि द्रविडस्थानी पृथक्ता वादियों की कार्य वाहियों को विफल करने के लिए यह दल तामिल नाड की मौलिक देश-निष्ठा को जागृत करेगा।

इस आयोजन को अभी तक कांग्रेस दल के नेता का पूर्ण समर्थन प्राप्त नहीं हुआ है परन्तु यह एक तथ्य है कि सरकारी वर्ग के अधिकाँश कांग्रेस जनों का इस ओर ध्यान आकृष्ट हो चुका है। श्रीयुत टी टी कृष्णाचारी ने इस आयोजन का बड़ा स्वागत किया है। उनकी सम्मति में एक भयानक समस्या का इससे प्रभाव शाली समाधान होने की आशा है। उनका मत है कि 'द्रविड मुन्नेतरम कजगम को मदरास की स्थानीय समस्या मान लेना भी खतरनाक है क्योंकि 'द्रविडस्थान' के इसके विनाश कारी सिद्धान्त को दिन प्रतिदिन समर्थन प्राप्त हो रहा है। जबतक द्रविड मुन्नेतरम कजगम को स्पष्ट रूप में यह न बता दिया जायगा कि यत पृथकत्व के उसके आदर्श से समस्त देश का भविष्य प्रभावित होगा अत समस्त देश वासियों के बल और इच्छा शक्ति से उसका विरोध किया जायगा तबतक दक्षिण में राजनैतिक अव्यवस्था का भय बना रहेगा।"

इस आयोजन के पीछे जो व्यक्ति है वह श्रीयुत पी ऐस राजगोपालन हैं जो प्रसिद्ध कांग्रेसी हैं परन्तु जिनको कांग्रेस दल में कोई

थे। उन्होंने कहा था "हिन्दी कभी नहीं, अंग्रेजी सदैव।"

इसी बीच में मदरास सरकार ने माध्यमिक स्कूलों की पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रिय करण की अपनी योजना को आगे बढ़ाने के निश्चयको क्रियान्वित करना प्रारम्भ कर दिया है।

मदरास सरकार का यह निर्णय उस अकाट्य साक्षी का परि णाम है जो मदरास सरकार को उन सदर्भों के प्रसंगों में प्राप्त हुई है जो पृथकत्व की भावनाओं की महिमा का व्याख्यान करते और द्रविडस्थान के राजनीतिक आन्दोलन को प्रोत्साहित करते हैं। प्रारम्भ मे एक विभागीय जॉच-पड़ताल हुईथी उससे विदित हुआ था कि बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में द्रविडस्थान की पृष्ठ पोषक सामग्री जान बूझकर नहीं रखी गई थी परन्तु जब बाद मे अविभागीय जॉच पड़ताल हुई तो यह बात नितान्त अशुद्ध सिद्ध हुई। जब 'क्षेत्रीयता' के विषय मे रामास्वामी अय्यर कमेटी ने मदरास मे अपनी बैठकें कीं तो कुछ गवाहोंने पाठ्य पुस्तकों मे से कुछ अध्यायों और कविताओं का उल्लेख किया जो राजनीतिक पृथकत्व का समर्थन करने वाली थीं।

अब सरकार इस परिणाम पर पहुंची है कि यदि पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रिय करण न किया जायगा और उन्हें राजनीतिक प्रभाव से पूर्णतया मुक्त न किया जायगा तो स्कूल शिक्षा के केन्द्र न रहकर विवादास्पद राजनीति के गढ़ बन जायेंगे।

ट्रिब्यून २२-९-६२

अधिकार प्राप्त नहीं है। श्रीयुत राजगोपालन को भारत छोड़ो आन्दोलन के समय मृत्यु दंड के अतिरिक्त एक षड्यन्त्र केस में ८४ वर्ष के आजन्म कारावास का दंड मिला था। राजाजी के डेपूटेशन को यह श्रेय प्राप्त है कि उन्होंने तत्कालीन वायसराय लार्ड वेवल से भेंट करके उन्हें फाँसी के तख्ते से बचा लिया था। १९४५ की शिमला कान्फ्रेंस के पश्चात् मदरास मे जो प्रकाशम मत्रीमण्डल बना था उसने राजगोपालन को मुक्त कर दिया था। अपनी मुक्ति के बाद राजगोपालन ने सक्रिय राजनीति का परित्याग कर दिया और अब वह पुन स्वत प्रेरणा से 'द्रविडस्थान' के खतरे से लोहा लेनेके लिए मैदान में उतर आए हैं।

अभी कुछ दिन हुए श्रीयुत राजगोपालन ने अपनी डिफेन्स फ्रीडम फोर्स (स्वातन्त्र्य रक्षक सेना) का निर्माण किया है। उन्होंने ६०० स्वय सेवकों की भरती की है जिन्होंने नेता जी सुभाषचन्द्र बोस के नाम में यह शपथ ली है कि वे प्रत्येक प्रकार के पृथकतावादी प्रदर्शन में प्रभावशाली ढग से हस्तक्षेप करेगे। मध्ययुगीय वीरता की परम्परा के अनुसार स्वय सेवकोंने स्वतन्त्रता के प्रतिज्ञा पत्र पर रक्त से और कुछ ने अश्रुओं से अपने हस्ताक्षर किए। २३ सितम्बर को जब द्रविड मुन्नेतरम कजगम ने द्रविडस्थान की मांग के समर्थन मे प्रदर्शन किए तो स्वातत्र्य रक्षक सेना के स्वय सेवकों का द्रविड मुन्नेतरम के स्वय सेवकों के साथ सघर्ष हो गया। पुलीसने हस्तक्षेप करके द्रविड मुन्नेतरम के जलूस को शान्तिपूर्वक गुजर जाने के उद्देश्य से स्वातन्त्र्य रक्षक सेना के समस्त छसौ स्वय सेवकों को गिरफ्तार कर लिया।

समाचार पत्रों में प्रकाशित विवरणों के विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि स्वातन्त्र्य रक्षक सेना की स्थिति दृढ़ होती जारही है। इस दल से नवयुवकों की देश भक्ति की भावना में नवीन जागृति आरही है। स्वातन्त्र्य रक्षक सेना के नेता के सुन्दर शब्दों में १९६२ में १९४२ की पुनरावृत्ति होती देख पड़रही है। जिस भावनाने उस समय देश के नवयुवकों को अंग्रेजों के विरुद्ध कार्य वाहीकरने के लिए प्रेरित कियाथा वही भावना पृथकतावादी लुटेरों से स्वतन्त्रता के फलोंकी रक्षा करने के लिए नवयुवकों को अब प्रेरित कर रही है।

ऐसे बहुत से व्यक्ति हैं जो यह कहते हैं कि स्वातन्त्र्य रक्षक सेना फासिस्ट आन्दोलन की भद्दी नकल है। इस प्रकार के विचार रखने वाले 'भावना' की अपेक्षा 'विवरण' को अधिक महत्त्व देते देख पड़ते हैं। स्वय सेवकों के रक्त और आवेश के वीरोचित सार्वजनिक प्रदर्शन में 'वे' अनिष्ट की आशका देखते हैं। फिर भी राज्य के अनेक सूक्ष्म दृष्टा यह समझते हैं कि यह आन्दोलन समय का प्रतिबिम्ब है और विवरण से पूर्ण चित्र सामने नहीं आता। वे कहते हैं कि विकास के इस स्टेज पर पहुचने से पहले द्रविड मुन्नेतरम कजगम ने भी इसी प्रकारके अनेक रूप धारण किए थे। अत स्वातन्त्र्य रक्षक सेना भिन्न मार्ग का अवलम्बन नहीं कर सकती।

कांग्रेसी क्षेत्रों में भी इस सेना के विषय में एक मत नहीं है। मुख्य मन्त्री कामराज समझते हैं कि यह सेना एक खतरा उपस्थित करती है और वह यह कि यह सेना अधिक स्वाभाविक स्थिति ग्रहण करके कांग्रेस की प्रतिद्वन्दिता में खड़ी हो सकती है जिससे उनके अधिकार को चुनौती दी जा सकती है। यह स्वाभाविक है कि वह इस सेना की निर्दोष भावना को भी अगीकार करने में बहुत सकोचकरते हैं। प्राप्त समाचारों के अनुसार उन्होंने कांग्रेस जनों पर इसके साथ सहयोग न करने का दबाव डालने का यत्न किया। कांग्रेस जनों का एक वर्ग ऐसा है जो इस सेना का पूर्ण समर्थक

द्रविड मुन्नेतरम के विरुद्ध कड़ी सरकारी कार्यवाही

विदित हुआ है कि भारत सरकार ने द्रविड मुन्नेतरम के विरुद्ध कार्यवाही करने का निर्णय किया है जो पिछले कुछ समय से अराष्ट्रीय कार्यवाहियो मे रत है। कहा जाता है कि इस सम्बन्ध में भयावह रिपोर्टों के मिलने के कारण ही भारत सरकार को यह निर्णय करना पड़ा है। यह भी सूचना मिली है कि द्रविड मुन्नेतरम अपने पृथकत्व के हितो की रक्षार्थ कुछ उच्च पदस्थ कांग्रेस जनो का नैतिक साहाय्य प्राप्त करने मे समर्थ हो गया है। मदरास सरकार को इसकी जाच करने का आदेश दिया गया है और साथ ही इस बात की जाच करने का प्रेरणा की गई है कि इस बात मे कहा तक सत्यता है कि जो पाठ्य पुस्तके वहा के स्कूलो के लिए छप रही हैं उनमें भारत के और अधिक विभाजन की सामग्री विद्यमान है।

इन रिपोर्टों की सम्पुष्टि हो जाने पर भारत सरकार निश्चय करेगी कि कड़ी कार्यवाही किये जाने की आवश्यकता है या नही।

इस बीच मे भारत सरकार द्रविड मुन्नेतरम को अराष्ट्रीय प्रगतियो के निराकरण केलिए व्यापक कार्यवाही करने का विचार रखतीहै। द्रविड मुन्नेतरम के प्रचार के निराकरण के लिए एक शैक्षणिक आन्दोलन करने का भी सरकार का इरादा बताया जाता है।

यह अनुभव किया गयाहै कि द्रविड मुन्नेतरम का सिद्धान्त अकालियो तथा अन्यान्य पृथकतावादी आन्दोलनो की अपेक्षा अधिक भयावह है।

है। इस वर्ग की मान्यता है कि सरकारी नेतृत्व द्रविड मुन्नेतरम कजगम के विरुद्ध कार्य वाही करने में असमर्थ रहा है और स्वातन्त्र्य रक्षक सेना को सक्रिय सहयोग देकर यह वर्ग अब पृथकतावादी तत्वों की रोकथाम मे सहायक हो सकता है। इस वर्ग की यह भी धारणा है कि इस रक्षक सेना मे एक विशाल निर्दलीय राष्ट्रिय मोर्चा बन जाने की समस्त क्षमताए विद्यमान हैं और यह वीर सेना न केवल दक्षिण में ही अपितु देशके अन्य भागों में भी सक्रिय रहेगी।

कम्यूनिस्ट दल के सरकारी नेतृत्व की स्थिति भी श्रीयुत कामराज जैसी स्थिति ही है। कम्यूनिस्ट दल की स्टेट कौंसिल के मन्त्री ने एक वक्तव्य प्रचारित करके कम्यूनिस्टों को रक्षक सेना के साथ किसी भी प्रकार का सम्पर्क न रखने का निर्देश दिया है। साथ ही यह भी ज्ञात हुआ है कि इस दल मे भी एक ऐसा वर्ग है जिसकी रक्षक सेना के साथ सहानुभूति है और इसे अप्रत्यक्ष रूप से सहायता देता है।

तमिल अरासू कजगम और सोशलिस्ट दलोंने रक्षक सेना के साथ कार्य करना स्वीकार कर लिया है।

आगामी दिसम्बर जनवरी मे नगर पालिकाओं के चुनाव होंगे जिनमें लगभग ३०॥ लाख व्यक्ति मत दाता होंगे। इसके लिए पार्टियों के जोड़ तोड़ आरम्भ हो गए हैं। स्वतंत्र द्रविड मुन्नेतरम और मुस्लिमलीग का एक मोर्चा होगा। (ट्रिब्यून ५-१०-६२)

दक्षिण तथा आर्यसमाज

[प्रिंसिपल भगवान दास, दयानन्द कालेज, सोलापुर]

बहुत से भाई कई बार पूछ लेते हैं कि बगाल तथा दक्षिण भारत में आर्य समाज का प्रचार क्यों नही ? मुझे बगाल तथा दक्षिण भारत में आर्य समाज के कार्य को देखने का सुप्रवसर मिला। ब गाल के बारे में जो धारणा बनी थी वही धारणा दक्षिण भारत के बारे में बनी है।

आर्य समाज जनता के सामने कितने ही स्वरूपों में आता रहा है पर इसके दो स्वरूप मुख्य रहे हैं। सब मे सुन्दर तथा मुख्य स्वरूप है धर्म के भावो का प्रसार तथा प्रचार और दूसरा है अत्याचार तथा पाखण्ड नाश का कार्य।

उत्तर भारत में राजनीति की आड में धार्मिक तथा सांस्कृतिक अत्याचार होते रहे। इसलिये आर्य समाज का बहुत भारी समय खण्डन आदि में लगता रहा। इन अत्याचारो के मुकाबले के लिए ही जनता को तैयार करते रहना आर्य समाज का मुख्य कार्य रहा। इसी लिये आर्य समाज का केवल लडाका स्वरूप सामने रहा। बार बार के अत्याचारों से संस्कृत आदि भाषाओं से रुचि हट गई। इसी लिए धर्म ग्रन्थों मे ध्यान जमा नही, लोगों को ममालेदार बातो का चस्का पड गया और आर्य समाज के प्लेट फार्मों से धर्म के गूढ विचार फीके पड गये। इसलिये बडे बडे विद्वान भी चुप होते चले गये। इसी कारण दूसरे धर्मों का अड्डे बनाने का अवसर मिल गया। परिणामत उत्तरी भारत में चेले चाटो के कई मत चल पडे है तथा आर्य समाज के धार्मिक दृष्टिकोण को धक्का दिया जा रहा है। यह एक तथ्य है कि बार २ के अत्याचारों से जाति की तर्क शक्ति हीन हो गई थी। इसी लिये आर्य समाज की ओर से धार्मिक, राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्र में किया गया उग्र कार्य सराहनीय है। पर इस केवल खण्डनात्मक कार्यक्रम का परिणाम यह निकला कि आर्य समाज का लडाका स्वरूप तो जनता के सामने रहा तथा लोगों ने अत्याचारों तथा पाखण्डों से बचने के लिए आर्य समाज की शरण ली पर दूसरा स्वरूप पीछे रह गया यह तो ठीक रहा कि जहां पर भी अत्याचारो तथा पाखण्डी लोगो का बोल बाला था वहा आर्य समाज का प्रचार खूब हुआ तथा लोगो ने आर्य समाज के कार्यक्रम को अपनाया दूसरे स्वरूप के आगे न आने से अन्य क्षेत्रो में प्रचार न बढा। यह भी तथ्य है कि प्रारम्भ काल के शास्त्रीय आदि कार्यों से प्रभावित होकर बडे २ विद्वान आर्य समाज में आये। विद्वान प्रचारको तथा विद्वानो की आर्य समाज के पास कमी नही तथा साधारण ज्ञान का मनुष्य तो क्या अन्य मतों के बडे २ विद्वान भी आर्य समाज के विद्वानों की योग्यता तथा कुशलता को मानते हैं। इस लिए आर्य समाज के प्रचार का यह फल हुआ कि दूसरे मत मतान्तरो ने अपनी शैली तथा विचार बदल लिये तथा जो पाखण्डों पर अपना हलवा माडा उडा रहे थे उन्होने करवट ली और अपने विचारों को टटोला। दयानन्द की गरज ने और आर्य समाज के पहले युग के नेताओ और प्रचारको ने तहलका मचा दिया। पर आर्य समाज का सारा रूप दूसरों के मुकाबले का ही रहा। इसलिए कुछ अपनी गलतियों से तथा विरोधियों की चालो से आर्य समाज परिवारों में न घुस पाया। दक्षिण भारत में धार्मिक विचारों की परम्परा बहुत है। आर्य समाज का लडाका स्वरूप काम न आया। इस लिए न परिवार आर्य समाज में आये तथा न ही आर्य समाज परिवारों में जा सका। थोडे शब्दों मे कहना हो तो यह हुआ कि आर्यसमाज के पास चौदह समुल्लासों वाला सत्यार्थ प्रकाश होते हुए भी जनता ने पहले दस समुल्लासों को समझने का यत्न भी

न किया और हमारे उपदेशकों तथा विद्वानों ने भी कभी यह प्रयत्न न किया कि पहले दस समुल्लासों को आन्दोलन रूप में जनता के सामने रखे। दक्षिण भारत में इस बात की आवश्यकता बहुत थी।

जब १९४३ में बंगाल जाने का अवसर मिला तो जो बंगाली भाषणों को सुनने आते थे वह पूछते थे कि आर्य समाज के पास क्या खण्डन का ही काम है या उसके पास अपना कुछ देने को भी है। मुझे उस समय बहुत हैरानी होती थी कि हमारे विद्वान अपने पास के धन को क्यों नहीं देते। बंगाल के लोग भारतीय संस्कृति से ओत प्रोत है संस्कृत के शुद्ध शब्द अब तक ज्यू के त्यू हैं। यही बात दक्षिण भारत की है सैंकड़ों तथा हजारों की संख्या में लोग धर्म चर्चा में आते हैं सारी २ रात्रि बैठते हैं। पुरानी राग विद्या तथा सुन्दर कलाओं के लिए जनता में अगाध श्रद्धा है। संस्कृत पढ़ना कर्तव्य समझा जाता है और बड़े २ पश्चिम के पढ़े लिखे भी धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हैं। सरकार भी संस्कृत के प्रसार के लिये बहुत यत्न करती है तथा संस्कृत पढ़ना किसी न किसी स्तर पर अनिवार्य है। संस्कृत के धुरन्धर पंडित छोटे छोटे नगरों में भी मिलते हैं। संस्कृत में भाषण देना तथा अपनी मातृ-भाषा में संस्कृत के शब्द के शब्द लेने पर बड़ा बल दिया जाता है। अनेकों विद्वान ऐसे मिलेंगे जिन्होंने जीवन भर धर्म-चर्चा तथा धर्म ग्रन्थों के अध्ययन के सिवा और दूसरा कार्य किया ही नहीं। ईश्वर प्रार्थना तथा धार्मिक उत्सव तथा संस्कार प्रत्येक घर में होते हैं बड़े से बड़े पाश्चात्य प्रणाली के विद्वान भी ईश्वर विश्वासी हैं और कोई न कोई धार्मिक कृत्य प्रति दिन करते हैं। होना तो यह चाहिये था कि ऐसे क्षेत्र में आर्य समाज एक दम घुस जाता और हुआ यह कि लोग यहां आर्य समाज से दूर रहे और अब भी दूर हैं। हैदराबाद के इलाके में भी हजारों लाखों लोग आर्य समाज के जलसे जलूसों में आते तो हैं पर धार्मिक कृत्यों के अर्थ में आर्यसमाज को बहुत कम मानते हैं। इसका कारण यह कि आर्य समाज उनके सामने केवल एक ही रूप में आया तथा उनको हमारा धार्मिक दृष्टिकोण नहीं मिला। मैं उन आर्य समाजियों से सहमत नहीं जो यह कहते हैं कि दक्षिण भारत के लोग रूढ़िवादी हैं।

दक्षिणी क्षेत्र में लोगों का केवल धर्म प्रेम ही नहीं पर धर्म के लिए जिज्ञासा है। मैं जब तक यहां नहीं आया था मेरे दिल में यह विचार था और मैंने बहुत सुन भी रखा था कि दक्षिण भारत के लोग दूसरे से धर्म की बात नहीं सुनते। मगर मुझे प्रसन्नता के साथ कहना है कि यहां पर लोग आर्य समाज के धार्मिक कार्यक्रम को न केवल सुनने को तैयार हैं अपितु अपनाने को भी। यही नहीं प्रत्येक आर्य समाजी को वह आदर की दृष्टि से देखते हैं। पर जब आर्य समाज के प्लेट फार्मों से केवल खण्डनात्मक बातें मिलती हैं तो वह आर्य समाज के बारे में गलत अनुमान लगा लेते हैं और आर्यसमाज की बात सुनने नहीं आते। इसी लिए जब तो वेद के विद्वानों के भाषण होते हैं तो हजारों लोग सुनने को आते हैं पर जब ऐसी वैसी बातें कहीं जावें तो उठ कर चले जाते हैं।

मुझे यहां पर मन्दिरों में जाने का अवसर मिला भाषण देने की भी आज्ञाएं मिलीं। जब मैंने यह बताया कि कोई स्त्री पुरुष आर्य समाजी नहीं हो सकता जब तक ईश्वर को न माने तो लोग बहुत हैरान हुए। बार २ प्रश्न करते हैं कि क्या आर्य समाज ईश्वर को मानता है? इसी लिए जब वेद पर तथा ईश्वर सत्ता पर आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री जी के भाषण हुए तो सैंकड़ों लोग आये और यह जान कर प्रसन्न हुए कि आर्यसमाज का विश्वास ईश्वर में सुदृढ़ भी है तथा ऊंचा भी। यह बात समझ कर उनकी इच्छा आर्य समाज को जानने की बहुत बढ़ी। यहां तक की एक ही वर्ष

में लगभग मराठी, हिन्दी, कनाडी आदि में एक हजार से ऊपर पुस्तकें बिकी हैं। तेलगु, तथा कनाडी क्षेत्रों में भी यह भावना है कि आर्य समाज से कुछ और जानना है। हमारे पास कई बार माग आ जाती है कि तेलगू जानने वाले उपदेशक भेजें। यही नहीं हमने आर्य समाज में ऋषि दयानन्द की संस्कार पद्धति का प्रचार किया तो लोगों के मनों में इसी ढंग से संस्कार करवाने की इच्छा पैदा होती है। पण्डितों के विचार में यह आया है कि ऋषि दयानन्द किसी के विरोधी न थे और उनकी बताई बाते निस्वार्थ तथा वेद अनुकूल हैं। यही नही उनका यह विचार बनता चला जा रहा है कि आर्य समाज के प्रति जो भाव उनके आज तक रहे वह गलत रहे। आर्य समाज आर्य मान-मर्यादाओं का विरोधी नही अपितु प्रचारक है ऐसी बात उनको प्रतीत हो रही है ऋषि दयानन्द का त्याग तथा विद्वत्ता, आर्य समाज का उच्चकोटि का कार्य, आर्य समाज के सन्यासियों तथा साधुओं के ऊचे आदर्श उनके मनो पर छाप लगा रहे हैं। पुरोहित समाज के कई विद्वानो ने मुझे बताया कि उनकी धारणा कि ऋषि दयानन्द के सब ग्रन्थो मे खण्डन ही खण्डन है गलत निकली। इसी लिए अब आर्य समाज के साहित्य का प्रचार बढ़ रहा है। पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज के प्रचार से तो और भी लोग खिच गये। जिन विद्वानों ने आर्य समाज के साहित्य को एक बार भी पढ लिया वह अपने विचारों को किस प्रकार बदल लेते हैं यह पौराणिक गढ़ से निकली हुई एक पत्रिका मे जो पिछले दिनो निकली बहुत ठीक प्रकार मे स्पष्ट होता है। सत्य सनातन की जय' से प्रारम्भ करके लिखते हैं —

(क) वेद ईश्वरीय ज्ञान है। वेद मत को ही निष्पक्ष तथा बुद्धिवादी कहा जा सकता है। परमेश्वर के बनाये होने से वेद पाठ धर्म ही सत्य है।

(ख) संस्कृत संसार की सब भाषाओं की जननी है।

(ग) पुण्य पाप जीव आदि का ज्ञान वेद से ही हो सकता है।

(घ) अनार्य-ग्रन्थ बुद्धिवादी नहीं कहे जा सकते वेद ही सब से बडा प्रमाण है।

(ङ) कई मत मतान्तर ऐसे है जो वेदो का अपमान करते हैं। वह असत्य करते हैं।

(च) स्वाध्याय तप, सुकर्म, दान और यज्ञ यह मुक्ति और सुखदाता हैं। भ्रम जाल में न पड कर एक ईश्वर की आराधना करनी योग्य है।

ऊपर की बातों से स्पष्ट है कि आर्य समाज किस प्रकार विचार शुद्धता ला रहा है। भारतीय संस्कृति को मानने वाले सब एक हैं और आर्य समाजी विचार ही सब को एक रख सकता है। भारत वासियों के लिए यह एक कल्याण का मार्ग है। आर्य समाज के पास एक बडा धन है पर यह धन छुपा के रखने वाला नही बाटने वाला है। आर्य समाज के नेता दक्षिण की ओर ध्यान दें। आर्य समाज के कार्यकर्ता दक्षिण में पधारें। न केवल आर्य समाज को धन मिलेगा अपितु जन भी और देश में राष्ट्रीय तत्वों का बढावा होगा। यह छोटा कार्य नही है।

"J. P." Criticises Nehru's Manner of Intervention

PATNA, Oct 7—Mr Jaya Prakash Narayan the Sarvodaya leader, has issued a statement taking excep tion to the recent speech of the Prime Minister, Mr Nehru, des cribing the agitation to throw out English is "utter stupidity"

'I feel I must raise my voice howsover feeble" Mr Narayan said 'against the manner in which the Prime Minister is carrying on the language controversy since his return from abroad it is a matter to be deeply regretted as happened in the cas of the States reorganisa tion issue that it is the Prime Minister's manner of intervention, that often precipitates unnecessarily heated controversy '

Mr Narayan said 'This h wever, is the less serious aspect - though it is serious enough—of the Prime Minister's pre ent role in this vital national debate The more serious asp ct is the deliberate manner in which the real issue has been confounded and clouded over The Prime Minister seems to be h tting out against a shadow For, barring a few extremists, no one is su gesting that English and other foreign languages should be bani sl ed from the schools The vast majority of people in this country, including those who speak Hindi would unhes tatingly agr e with all that the Prime Minister has said about the importance of learning foreign languages in order to keep abreast with science and modern knowledge They would even have no objec ion to compulsory teaching of English as a language at the appropriate stage'

'But no matter how important learning foreign languages might be Mr Narayan said, no foreign language can become an effective and creative medium of education It must be the language of the child s environ ent Howsoever desirable it might be for us to learn English German or R ssian, the medium of education in this coun try must be the regional a guage Education through a fo eign language can only result in mediocrity'

Real issue

'All that however', Mr Narayan said, is not the real issue The heart of the present controversy is the question whether any period of time should be defined within which English could be given up as an associate, or Inter-State, language and Hindi alone could come to acquire that status The Govern ment of India proposes to fix no time limit, which has aroused strong and widespread suspicion, not only among Hindi-speaking people, but also among others who wish to see Hindi become the national language

The suspicion is that the absence of such a limit would release the

Centre from any pressing, and real, responsibility to take the necessary steps to make it possible for Hindi ever to assume the role of a nation al language Already there is a deep and widespread feeling that the present unpreparedness of Hindi to take on that role is due not so much to obstruction from the South as to the failure of the Central Government to fulfil its obligations in that behalf"

'For instance" Mr Narayan said, "States that had al eady taken steps to make Hindi the medium of instruc ion at the university stage, had to reverse the gear just because competitive examinations for the Central services continued to be held in English It was not expected that those examinations would be held only in Hindi But if Hindi was to be enobled to b come the national language, steps should have been taken to see that the Central examinations were held in both Hindi and English This is only one example of the lapse of the Centre in this atter Many more have been pointed out in the course of the present controversy

Time Limit

"For these reasons, the plea for some sort of a time limit has been strongly, and to my mind quite reasonably put forwards There is no need to be dogmatic about the length of the period of time Vinobaji's suggestion in this regard seems to be the wisest namely that the non Hindi speaking States themselves should be left free to determine the period of time required

"Cool consi leration of this Central question is likely to be far more useful in setting the present national debate than of general opinions on the wisdom of learning foreign languages

❀

जयप्रकाश नारायण द्वारा श्री नेहरू के हस्तक्षेप के ढग की आलोचना

सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने आज एक वक्तव्य जारी करके प्रधान मन्त्री श्री नेहरू द्वारा हाल मे दिल्ली में दिए गये उस भाषण पर आपत्ति प्रकट की जिसमे अगरेजी को हटाने के आन्दोलन को मूर्खतापूर्ण' बताया गया था।

श्री नारायण ने कहा कि मैं अनुभव करता हू कि विदेश यात्रा से लौटने के ब द श्री नेहरू जिस ढग से भाषा विवाद" को बढावा दे रहे हैं मुझे उसके खिलाफ आवाज उठानी चाहिये, चाहे वह आवाज कितनी ही कमजोर क्यो न हो। यह अत्यन्त खेदजनक बात है कि जैसा कि राज्यो के पुनगठन के मामले मे हुआ प्रधान मन्त्री द्वारा हस्तक्षेप करने का ढग ही प्राय, अनावश्यक रूप से कटु विवाद को पैदा कर देता है।

विवाद और बहस लोकतन्त्र के भोजन हैं किन्तु कुछ सीमाए हैं, जिनसे आगे उन्हे नही ले जाना चाहिए। तभी लोकतन्त्री जीवनपद्धति का स्वस्थ ढग से विकास होगा। कोई भी व्यक्ति, चाहे उसके कोई भी विचार हो, अपने को बेवकूफ कहलाना पसद नही करेगा। इसके अलावा यदि प्रधानमन्त्री सार्वजनिक बहस मे ऐसी भाषा का प्रयोग उचित समझते हैं, तो हमारे विधायको को शिष्टतापूर्ण व्यवहार के लिए प्रेरित करने को मार्शल क्यो बुलाये जाते हैं? ये दोनो बाते आपस मे इतनी असम्बद्ध नही हैं, जितनी कि प्रतीत होती हैं।

विश्व में वैदिक धर्म प्रचार

[श्री मोहनलाल मोहित मौरीशस]

विश्व में वैदिक धर्म-प्रचार का उत्तरदायित्व आर्य समाज पर है। हमारे धर्माचार्य महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज को आदेश दिया था "द्वीप-द्वीपान्तर और देश देशान्तर में वेद प्रचार करना" इस पुनीत कर्त्तव्य के परिपालन में क्रियात्मक रूप से आर्य समाज ने कहा तक सफलता पाई है ? यह विचारणीय प्रश्न है। आर्य समाज के कार्यों पर एक ऐतिहासिक झाकी देने पर मालूम होता है कि १९वीं शती का अन्तिम चरण और २०वीं शती के प्रारम्भ में अर्थात् सन् १८७५ से १९२५ तक इन ५० वर्ष का कार्य-काल बडा महत्त्वपूर्ण था।

वह शुभ समय तरुण आर्य समाज का प्रचार युग था। गम्भीर विचार एव निष्पक्ष दृष्टिकोण से देखने पर कहा जा सकता है, वही भारत का नव जागरण-काल का प्रारम्भ युगथा। वह युगान्तरकारी युग था, जब आर्य समाज के कार्य क्षेत्र में कर्मयोगी श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी, श्री महात्मा हसराज जी, श्री लाला लाजपतराय जी, मुनिवर गुरुदत्त जी और प० लेखराम जी आदि नर रत्न सर्वात्मना आर्य समाज की प्रगति में लगे थे।

फलत धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक और शैक्षणिक चहु दिशा में आर्य समाज ने प्रशसनीय सफलता पाई। उसी समय सुदूर उपनिवेशों में आर्य प्रचारक भी गये। आर्य समाज के प्रचार से उपनिवेशीय भारतीयों के जीवन-स्तर में सुधार होकर बडी प्रगति हुई।

श्री नारायण ने कहा कि प्रधान मन्त्री की भूमिका का अधिक गम्भीर पहलू जान बूझ कर अपनाया गया वह रवैया है, जिसमें वास्तविक प्रश्न को उलझन में डाल दिया गया है। प्रधान मन्त्री हवा में प्रहार कर रहे हैं, क्योकि कुछ उग्रपन्थियों को छोड कर कोई नहीं कहता कि अगरेजी या अन्य विदेशी भाषाओं को स्कूल से बहिष्कृत कर दिया जाय। इस देश की अधिकाश जनता, जिसमें हिन्दी भाषी भी शामिल हैं स्वीकार करती है कि विज्ञान आदि के लिए विदेशी भाषाओं का महत्व है। उन्हें इस पर भी आपत्ति नहीं कि अगरेजी का पढ़ना खास स्तर पर अनिवार्य कर दिया जाय।

किन्तु विदेशी भाषा चाहे कितनी महत्वपूर्ण हो, वह कभी भी शिक्षा का प्रभावशाली और रच नात्मक माध्यम नही बन सकती। शिक्षाका माध्यम क्षेत्रीय भाषा ही बन सकती है। विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा से योग्यता का विकास नहीं हो सकता।

श्री नारायण ने कहा कि वर्तमान विवाद में असली प्रश्न यह है कि क्या कोई अवधि निश्चित की जाय, जिसके अन्दर अगरेजी सहभाषा या अन्तर्राज्य भाषा का स्थान छोडे, और उसका स्थान हिन्दी भाषा ले। भारत सरकार चाहती है कि समय की अवधि निश्चित न की जाय, जिससे विवाद उठ खडा हुआ है।

इस प्रकार की अवधि निश्चित न करने से सन्देह उत्पन्न होता है कि केन्द्र हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने के लिए आवश्यक कदम उठाने की जिम्मेदारी अनुभव नही करेगा।

उदाहरण के लिए जिन राज्यों ने विश्व-विद्यालयों में हिन्दी को शिक्षा का माध्यम स्वीकार कर लिया है, वे भी पीछे हटना स्वीकार कर देंगे, क्योंकि केन्द्रीय नौकरियों के लिए प्रतियोगिता परीक्षाए अगरेजी में ही होंगी। यह आशा नहीं कि वे परीक्षाए हिन्दी में होंगी। किन्तु यदि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बना दिया गया, तो केन्द्रीय परीक्षाए हिन्दी और अगरेजी दोनों में लेने के लिए कदम उठाए जायेंगे।

उपनिवेशीय भारतीयों की जो वर्तमान धार्मिक, सास्कृतिक, और सामाजिक प्रगतिशील परिस्थिति है, उसके नव निर्माण में आर्य समाज के सबल हाथों का योग दान है।

परन्तु वर्तमान जनवृद्धि और पश्चिमीय चञ्चल वातावरण में पडकर दूषित मनोवृत्ति असयम एव उद्दण्ड भाव का विकास होने लगा है। अत ऐसी परिस्थिति में एक प्रभावशाली रचनात्मक प्रचार-प्रणाली का उपक्रम होना आवश्यक है।

आर्य समाज को वर्तमान भूमण्डल के मान चित्र के अनुसार सार्वदेशीय दृष्टि-कोण से वेद प्रचारक तैयार करने चाहिये। अब समय आ गया है कि आर्य समाज को सौ काम छोडकर भी वेद प्रचार में सर्वात्मना लग जाना चाहिये।

विदेशों में सफल प्रचार कार्य के लिये बहुभाषी विद्वान्, साथ ही श्रद्धावान्, लगनशील, सुदक्ष और प्रभावशाली व्यक्तित्व सम्पन्न पुरुष की आवश्यकता है।

सुयोग्य उपदेशक की तैयारी के लिये मेरे सुझाव :—

(१) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली गुरुकुलों और दयानन्द महाविद्यालयों में से १०, उन सफल स्नातको का चुनाव करे जो विदेशों में आर्य समाज का प्रचार करने को उत्सुक हों, और योग्यता की दृष्टि से सस्कृत मे आचार्य तथा अंग्रेजी में एम० ए० तक सफल हो।

(२) ऐसे १० सुयोग्य वक्तृत्व कला-कुशल विद्वानों को उपदेशक पद्धति का प्रशिक्षण देने के लिये दो वर्ष के कार्य-क्रम की सुव्यवस्था का उत्तरदायित्व सार्वदेशिक आ० प्र० सभा अपने कन्धे पर लेवें, विश्व से वैदिक धर्म प्रचार के उद्देश्य से।

उपर्युक्त दोनों कार्यों का प्रबन्ध और खर्च दोनों दृष्टि से बडा उत्तरदायित्व पूर्ण है। परन्तु विश्व में वैदिक धर्म प्रचार का जो महान् उद्देश्य सामने है, उसकी पूर्ति के लिये समय की प्रबल पुकार और मानवता की रक्षा के लिये समाज की सविनय माग है। सम्प्रति युरोप, अमेरिका, अफ्रिका द्वीप और एशिया के चीन, जापान रूस आदि देश तथा अनेक उपनिवेशों की जनता वेदामृत पान के लिये लालायित है। क्योंकि इन देशो मे सत् आत्मज्ञान का प्राय अभाव सा ही है। जो कुछ अ श में उन देशो में आत्मज्ञान का प्रचार सुना जाता है, उसमें सम्प्रदाय वालों की आर्थिक लिप्सा और प्रपञ्च की मात्रा ही अधिक है। कथित देशों के आत्मज्ञान के जिज्ञासु, निराश और अशान्त हैं। नास्तिक भोगवादी अर्थ लोलुपो के विनाशकारी यन्त्रों के आविष्कार और उनके दुष्प्रयोग से मानवता कराह रही है।

वेद-विरुद्ध पन्थ-प्रचारको का दुर्व्यवहार, नास्तिक भोगवादी पश्चिमीय सभ्यता का शिष्टता-हीन नग्न-नृत्य और मानवता नाशक विनाशकारी यन्त्रो के निर्माता अर्थ-लोलुप साम्राज्यवादियों के पञ्जे में मानवता अन्तिम सास ले रही है। मानव विनाशकारी ऐसी दु खद परिस्थिति में मानव-समाज के सबल प्रहरी आर्य समाज को बडी सफलता से कर्त्तव्यपालन करना धर्म है। उपर्युक्त सारी विषम समस्याओ का सही-समाधान वैदिक धर्म मानवता की सात्त्विक-सम्पत्ति है। वेद के सुन्दर सिद्धान्त में विश्व-कल्याण निहित है। आर्य समाज ने जितने मानव हितकारी कार्य किये हैं उनमें लोक-मत से सबल-समर्थन मिला है। अब वह स्वर्णीय युग आ गया है कि मानवता की रक्षा के लिये पूर्ण-संघ बल से समरांगण में आर्य समाज वीरता से आगे बढ़े।

शुद्धि समाचार

ग्राम पिपलैंडा जिला मुजफ्फरनगर में २५८ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री डालचन्द आर्य ने दिनांक ६ सितम्बर रविवार १९६२ को पिपलैडा जिला मुजफ्फरनगर मे २५८ ईसाइयो की शुद्धि की। पिपलैडा गूजरो का ग्राम है और इस ग्राम मे खतौली मिशन के प्रयत्न से लगभग ४० वर्ष पूर्व यहा के हरिजन ईसाई बनाए गए थे। गांव मे एक गिरजा भी बना था। यहा के ईसाइयो मे राष्ट्रीय चेतना जागृत होने पर विदेशी मत को त्यागने की भावना प्रबल हो गई। गिरजा घर तो पहले ही समाप्त हो गया था। अब भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के तत्वावधान मे उनको स्वधर्म मे दीक्षित किया गया।

शुद्धि के अवसर पर सभा के मन्त्री श्री प० शिवदयालु जी का ओजस्वी भाषण हुआ और उन्होंने घोषणा की कि हमारी लडाई विदेशी पादरो विदेशी पैमे और विदेशी पन्थ से है। हमे अपने देश के इन हरिजन तथा दलित बन्धुओ को इस त्रिगुपकार से मुक्त करना है।

शुद्धि सस्कार स्वामी हरप्रसाद जी ने विधिवत् कराया। इस शुभ अवसर पर श्री द्वारकानाथ मन्त्री, प० हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष शुद्धिसभा, श्री डालचन्द श्री दीपचन्द श्री रामजीदास कल्याण आदि के अतिरिक्त दिल्ली, खतौली, असाती जानसठ आदि के अनेक कार्यकर्ता आर्य बन्धु पधारे हुए थे। गाव वालो का सहयोग प्रशसनीय था।

ता० २-६-६२ को देहली में १ ईसाई की शुद्धि

श्री हरिदत्त शर्मा ने भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के तत्वावधान में ग्राम धीरपुर ढक्का देहली के एक नवयुवक पाल मोहनलाल की २-९-६२ को आर्यसमाज हनुमानरोड नई देहली मे शुद्धि की। शुद्धि सस्कार श्री प० चन्द्रभानु जी सिद्धान्त भूषण, पुरोहित आर्यसमाज हनुमानरोड ने कराया। इस अवसर पर अनेको आर्य नेता उपस्थित थे जिनमे भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के प्रधान मन्त्री श्री नारायणदास जी कपूर, श्री लाला मेलाराम जी प्रधान आर्य समाज हनुमानरोड के नाम उल्लेखनीय है।

ता० २-६ ६२ को ग्राम अतरपुर (मुजफ्फरनगर) में ११८ ईसाइयों की शुद्धि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के उपदेशक श्री डालचन्द आर्य ने ग्राम अतरपुर जिला मुजफ्फर नगर मे एक शुद्धिसम्मेलन २-९-६२ को किया जिस में ११८ ईसाइयो को वैदिक धर्म की दीक्षा देकर उनको जाटव बिरादरी मे सम्मिलित किया। शुद्धि सस्कार श्री हरिप्रसाद वानप्रस्थी गाजियाबाद ने कराया। श्री निरजनलाल जी गौतम, कार्यालय मन्त्री पिछडे वर्ग सेवा सघ देहली की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमे श्री द्वारकादास जी मन्त्री शुद्धि सभा, श्री बनवारीलाल जी उपमन्त्री आर्य समाज मुजफ्फरनगर, श्री रामजीदास कल्याण प्रधान दलित वर्ग सघ मेरठ श्री हरिदत्त शर्मा कार्यालयाध्यक्ष भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा आदि ने भाषण दिये। सम्मेलन में श्री यशपाल जी, श्री गोकलचन्द जी आर्यसमाज राजेन्द्रनगर, श्री रतनसिंहजी खतौली, श्री प्रभुदास तथा भगवान दास भजनीक दौराला, श्री विशम्भरसहाय मुजफ्फर नगर आदि अनेक महानुभावो ने बाहर से आकर भाग लिया।

नारायणदास कपूर
प्रधान मन्त्री

महर्षि दयानन्द की सामाजिक देन*

[श्री रघुवीरसिंह शास्त्री]

१६ वी शताब्दी में भारत में सामाजिक क्रान्ति करने वालों में महर्षि दयानन्द का स्थान सर्वप्रमुख है। उनके कार्य-क्षेत्र में उतरने के समय हमारे समाज की दशा बहुत शोचनीय थी। उसका ढांचा बिल्कुल लड़खड़ा रहा था। जन्मगत जाति पाति के आधार पर ऊंच-नीच का भेदभाव मिथ्या अहंकार, छूआछूत, अन्ध विश्वास तथा रूढ़ियों ने उसे जर्जर बना रखा था।

कुछ वर्ग तो ऐसे थे जिन्हें केवल जन्म या वंश के आधार पर समाज में ऊंची स्थिति, सम्मान, सुविधायें तथा अधिकार सुलभ थे, जब कि समाज के एक बहुत बड़े समुदाय को पीढ़ियों से लगातार अधिकार हीन, दलित तथा पतित बनाया हुआ था। स्त्री जाति की दशा भी बड़ी दयनीय थी, उन्हें वेदादि शास्त्र पढ़ना तो दूर, सामान्य शिक्षा से भी वंचित करके अज्ञानता के अन्धेरे गर्त में धकेल रखा था। बाल-विवाह वैधव्य तथा पर्दा आदि कुप्रथाओं के कारण स्त्री जाति तो सन्तप्त थी ही, राष्ट्र का स्वास्थ्य, नस्ल तथा आयु आदि भी क्षीण होते जा रहे थे। संकीर्णता की यह पराकाष्ठा थी कि एक जाति के लोग भी आपस में एक दूसरे के हाथ का पकाया या छुआ हुआ भोजन न करते थे। समुद्र यात्रा एक बड़ा भारी पाप माना जाता था और कोई भी आदमी भ्रष्ट होने के डर से देश से बाहर निकलने का साहस न कर पाता था। इससे हम कूप मण्डूक बन गये थे और हमारा व्यापार तथा आर्थिक विकास भी ठप्प हो गये थे। दूसरे देशों से आने वाला ज्ञान-विज्ञान का प्रकाश भी हम तक न पहुँच पाता था। समाज बिल्कुल पंगु तथा ओजहीन हो गया था। उसमें जीवन व स्फूर्ति के लक्षण बहुत कम दिखाई देते थे। ऐसे निश्चेष्ट एवं चेतनाहीन समाज में प्राण प्रतिष्ठा करने का कठोर संकल्प लेकर महर्षि दयानन्द कार्यक्षेत्र में उतरे।

जाति पाति का उन्होंने जोरदार खण्डन किया और कहा कि समाज में प्रतिष्ठा का आधार जन्म, वंश या जाति न होकर केवल योग्यता होनी चाहिए। गुण कर्म के अनुसार प्रत्येक को उन्नति का अवसर मिलना चाहिये। उन्होंने प्राचीन वैदिक वर्णव्यवस्था का शुद्ध रूप प्रस्तुत करते हुए बताया कि गुण कर्म स्वभाव के ही आधार पर कोई ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य या शूद्र कहला सकता है। ब्राह्मण सन्तान भी अयोग्य हो तो शूद्र रह जाय और शूद्र सन्तान भी योग्यता प्राप्त करके ब्राह्मण बन सकता है। उन्होंने तो यहां तक कहा कि ब्राह्मण की सन्तान शूद्र रह जाय तो उसे किसी शूद्र माता-पिता को दे दिया जाय और शूद्र की सन्तान ब्राह्मण बन जाय तो उसे ब्राह्मण माता पिता को सौंप दिया जाय। योग्यता के आधार पर सन्तानों के बदल लेने की बात दयानन्द जैसे क्रान्तिकारी की कलम से ही लिखी जा सकती थी।

उनके इस प्रचार का प्रभाव काफी व्यापक हुआ। उनके कर्मठ अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द जी आदि नेताओं ने जात पात तथा छुआछूत के उन्मूलन के लिए भारी आन्दोलन चलाये। सार्वजनिक रूप में चमार भंगियों आदि के साथ खान पान तथा मेल जोल के समारोह हुए। गुरुकुल आदि संस्थाओं में बहुत जातियों के बालक बिना भेद भाव के शिक्षित किये गये और सैकड़ों की संख्या में विद्वान् तथा प्रचारक बनकर निकले जिन्हें पण्डित ही कहा गया। कोई नहीं जानता था या

---

* २७-१०-६२ को आकाशवाणी दिल्ली से प्रसारित।

पूछना था कि इनकी क्या जाति है? महर्षि की शिक्षाओं से प्रभावित होकर अनेक युवकों ने सब रूढ़ियों के बन्धन तोड़ कर अन्तर्जातीय विवाह किये। विरोधी तूफान भी कम नहीं उठे परन्तु एक दिन आया कि यह आन्दोलन जनता तथा राष्ट्रीयता का आन्दोलन बन गया।

खान पान सम्बन्धी संकीर्णता तथा विदेश यात्रा सम्बन्धी अन्ध विश्वास के विरुद्ध भी महर्षि ने जोरदार आवाज उठाई। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में लिखा—"क्या सब बुद्धिमानों ने यह निश्चय नहीं किया है कि राजपुरुषों में युद्ध के समय में भी चौका लगा कर रसोई बन के खाना, अवश्य पराजय का हेतु है। किन्तु क्षत्रिय लोगों का युद्ध में एक हाथ से रोटी खाते जल पीते जाना और दूसरे हाथ से शत्रुओं को मारते जाना, अपना विजय करना आचार और पराजित होना अनाचार है। इसी मूढ़ता से इन लोगों ने चौका लगाते, विरोध करते कराते सब स्वातन्त्र्य, आनन्द, धन, राज्य विद्या और पुरुषार्थ पर चौका लगा कर हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। जानो सब आर्यावर्त देश भर में चौका लगाके सर्वथा नष्ट कर दिया है। सो प्रथम आर्यावर्तीय लोग व्यापार, राजकार्य और भ्रमण के लिए सब भूगोल में घूमते थे और जो आज कल छूत छात और धर्म नष्ट होने की शंका है वह केवल मूर्खों के बहकाने और अज्ञान बढ़ने से है। क्या बिना देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में राज्य या व्यापार किये स्वदेश की उन्नति हो सकती है?"

"यह भी समझ ले कि धर्म हमारे आत्मा और कर्तव्य के साथ है। जब हम अच्छे काम करते हैं तो हमको देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में जाने में कुछ भी दोष नहीं लग सकता, दोष तो पाप के काम करने में लगता है।"

इससे पता चलता है कि उनके दिल में समाज के सुधार तथा देश की उन्नति के लिए कितनी तड़प थी। एक बार वे एक नाई द्वारा दी मक्का की रोटी खा रहे थे तो किसी पण्डित ने आक्षेप किया कि आप नाई की रोटी खा रहे हैं स्वामी जी ने इसका उत्तर दिया कि रोटी नाई की नहीं मक्का की है।

स्त्री जाति की शिक्षा तथा सम्मान वृद्धि के लिये भी उन्होंने बहुत काम किया बाल विवाह तथा पर्दे का जोरों से खण्डन किया। विवाह के लिए लड़के लड़कियों में स्वयंवर प्रथा अर्थात् अपनी पसन्द और इच्छा से ही पति पत्नी का चुनाव करने का समर्थन किया। इस विषय पर उनकी इन पंक्तियों से अच्छा प्रकाश पड़ता है—'जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो, वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थपरता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है।

भारत वर्ष की स्त्रियों में भूषण रूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ़ के पूर्ण विदुषी हुई थी। आर्यावर्त के राजपुरुषों की स्त्रिया युद्ध विद्या भी अच्छी प्रकार जानती थी, क्योंकि जो न जानती होती तो कैकेयी दशरथ के साथ युद्ध मे क्यों कर जाती?"

विवाह की आयु के सम्बन्ध में भी महर्षि ने लिखा है—"सोलहवें वर्ष से ले के पच्चीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेके अड़तालीसवें वर्ष तक पुरुष का विवाह समय उत्तम है। जिस देश में बाल्यावस्था और अयोग्यों का विवाह होता है, वह देश दु:ख में डूब जाता है। आगे लिखते हैं—"लड़का लड़की की इच्छासे विवाह होना उत्तम है। जो माता पिता विवाह करना कभी विचारें तो भी लड़का लड़की की इच्छा के बिना ऐसा न होना चाहिए। क्योंकि एक-दूसरे की इच्छा से विवाह होने से विरोध बहुत कम होता है और सन्तान उत्तम होती है इसके बिना हुए विवाहों में नित्य क्लेश ही रहता है। विवाह में मुख्य प्रयोजन वर और कन्या का है, माता पिता का नहीं।"

महर्षि दयानन्द सहशिक्षा को भी समाज के सदाचार के लिये बहुत ही घातक समझते थे। उन्होने लिखा है कि स्त्रियो की पाठशाला में पाच वर्ष का लडका और पुरुषो की पाठशाला में पाच वर्ष की लडकी भी न जाने पावे। साथ ही उनका यह भी विचार था कि समाज में सच्ची समानता का बीजारोपण शिक्षा क्षेत्र में ही किया जा सकता है। इसी लिये उन्होने लिखा–'सब को तुल्य वस्त्र, खान पान, आसन दिये जाये, चाहे वह राजकुमार वा राजकुमारी हों, चाहे दरिद्र के सन्तान हो, सब को तपस्वी होना चाहिये।"

इस प्रकार हम देखते है कि महर्षि दयानन्द ने हमारे सभी सामाजिक रोगो तथा दुर्बलताओं का एक कुशल चिकित्सक की भांति यथार्थ निदान किया और उनके दूर करने के लिए ऐसे प्रयोग एवं उपाय सुझाये जो आदर्श होने के साथ २ पूरे व्यावहारिक हैं, शास्त्रीय होने के साथ २ जन-साधारण के लिए बहुत सरल तथा बुद्धि गम्य हैं।

उनके इन विचारो तथा प्रेरणाओं का समाज पर भारी प्रभाव हुआ और व्यापक परिणाम सामने आये। समाज मे ऊंच नीच की भावना जात पात, छुआ छूत आदि की कट्टरता कम हो गई। खान-पान का बखेडा बहुत कुछ मिटा। स्त्रियो मे शिक्षा का प्रचार हुआ और उन्हें सब क्षेत्रो मे उचित सम्मान मिलने लगा। आर्य समाज के प्रयत्न से बाल विवाह के विरोध के लिए शारदा एक्ट आदि कानून बने तथा ... के विचारो मे भी सुधार हुआ। विधवा विवाह को लगभग सभी वर्गों ने अपना लिया।

निस्सन्देह इन सब के लिए समाज उनका सदा ऋणी रहेगा। महात्मा गांधी जी ने कहा था—"जो बहुतसी सुन्दर विरासतें स्वामी दयानन्द हमारे लिए छोड गये हैं, उनमें से निस्सन्देह एक उनकी अस्पृश्यता के विरुद्ध स्पष्ट घोषणा है।"

प्रसिद्ध फ्रांसीसी विद्वान् श्री रोम्यां रोलां ने लिखा है —

"दयानन्द ने भारत के निष्प्राण शरीर में अपना अदम्य उत्साह, अपना दृढ निश्चयात्मक सकल्प और सिंह जैसा रक्त भर कर उसे सजीव किया। उसके शब्द वीरोचित शक्ति के साथ गूंज गये।"

सब से मुख्य बात यह है कि दयानन्द को अस्पृश्यों के साथ होने वाला घृणित अन्याय सर्वथा असह्य था। उनके अधिकारों का जितनी उग्रता से दयानन्द ने समर्थन किया उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नही किया। अस्पृश्य कहे जाने वाले जन पूरी समानता के आधार पर आर्य समाज में प्रविष्ट होते हैं।

सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री रामानन्द चटर्जी ने मोडर्न रिव्यू में लिखा -

'श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की इच्छा थी कि भारत में राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक एकता का आदर्श मूर्त रूप धारण करे। भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए वे विदेशी शासन का अन्त, सामाजिक एकता के लिए वर्ग और जन्मगत जात-पात के भेद भाव का निराकरण और भारत की धार्मिक एकता के लिए समस्त प्रचलित मत-मतान्तरो के स्थान मे वैदिक धर्म का पुनर्स्थान आवश्यक समझते थे। स्वामीजी अपने इन उद्देश्यो में सफल हुए।"

बलिदान जयन्ती समारोह—(७-१० ६२ से १४-१०-६२ तक)

हिन्दी को पंजाब में उचित स्थान दिलाने के लिए बलिदान की तैयारी
आर्यसमाज पूरी शक्ति के साथ संघर्ष के लिए तैयार
हिन्दी रक्षा सम्मेलन की घोषणा

लेखराम नगर (अम्बाला छावनी) १४ अक्तूबर— हिन्दी भाषा को पंजाब मे उसका अधिकार दिलाने के लिए आर्यसमाज पूरी शक्ति से संघर्ष करेगा। हिन्दी रक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए स्वामी रामेश्वरानन्द संसद सदस्य ने करतल ध्वनि के साथ यहां यह घोषणा करते हुए कहा कि हम पूरी शक्ति के साथ लड़ेंगे पर हिन्दी के प्रश्न पर झुकेंगे नहीं।

स्वामी सत्यमुनि ने अपने भाषण मे घोषणा की कि एक एक आर्य संन्यासी हिन्दी की रक्षा के लिए प्राणों की आहुति दे देगा।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने जनता को ललकारते हुए कायरता त्याग जागृत हो अपने अधिकारों की रक्षा के लिए तैयारी करने का आदेश दिया। आपने कहा कि हिन्दी का आन्दोलन गुरु नानकदेवजी ने किया। आर्य समाज तो उसी आन्दोलन को राष्ट्र की एकता के लिए संचालित कर रहा है।

ला॰ जगतनारायण जी ने भाषण देते हुए कहा कि आज जालन्धर क्षेत्र मे गुरुमुखी जबरदस्ती लाद दी गई है और भारत की राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रयोग वहां पूर्णतया वर्जित है आपने कहा कि जिस हिन्दी के लिए महर्षि दयानन्द और शहीद श्रद्धानन्द ने बलिदान दिये उनकी जयन्ती की तयारी करनी होगी। और सरकार के मुकाबिले की तयारी करनी होगी।

प्रो॰ शेरसिंह एम-एल सी ने कहा कि पंजाब के भाग्य निर्णय का अधिकार चन्द व्यक्तियों को नहीं सौंपा जा सकता। आपने कहा कि हम अंग्रेजी का स्थान हिन्दी को दिलाना चाहते हैं। आपने कहा कि हम तयारी करें और अपने लक्ष्य की प्राप्ति तक संघर्ष जारी रखें।

महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने कहा कि हम सभी को हिन्दी के प्रयोग का व्रत लेना चाहिए। स्वामी सत्यमुनि जी ने कहा कि हम आज धमकियों से डरना नहीं जानते। आपने कहा कि कांग्रेस सरकार यह समझ ले कि इतिहास कभी क्षमा न करेगा। श्री भाग्यवती देवी जी ने पुरुषों को ललकारते हुए चूड़ियां पहनने को कहा। पं॰ रघुवीरसिंहजी शास्त्री ने अपने भाषण मे कहा कि सम्पूर्ण आर्य जगत स्वामी रामेश्वरानन्द जी के आदेश पर सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार है। सम्मेलन मे श्री ला॰ रामगोपाल दीवान रामशरणदास आदि ने भी भाषण दिए। स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे यह भी कहा कि हम सभी किसी भी स्थिति मे गुरुमुखी लिपि न लिखने न पढ़ने का प्रण करें।

हिन्दी रक्षा सम्मेलन के प्रस्ताव

अध्यक्ष स्वामी रामेश्वरानन्दजी महाराज एम॰ पी॰

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की बलिदान जयन्ती महोत्सव पर आयोजित हिन्दी रक्षा सम्मेलन इस बात पर अत्यन्त खेद प्रकट करता है कि सरकार ने पंजाब की भाषा समस्या का अभी तक कोई समाधान नहीं किया। विशुद्ध हिन्दी क्षेत्र में शिक्षा मे पंजाबी भाषा तथा गुरुमुखी लिपि की अनिवार्यता यथापूर्व बनी हुई है, और तथाकथित

पञ्जाबी क्षेत्र में तो शिक्षा एवं प्रशासन दोनों में सर्वथा हिन्दी विरोधी आदर्श लागू कर दिए गए हैं। आर्य समाज द्वारा किए गए सत्याग्रह के समय तथा उसके पीछे जो भी आश्वासन सरकार तथा उसके उत्तरदायी नेताओं ने इस सम्बन्ध में दिए थे, उनकी पूर्ण अवज्ञा कर दी गई है—विशेष उल्लेखनीय यह है कि हिन्दी क्षेत्रिय समिति का ४ मई १९६० वाला सर्वसम्मत निर्णय भी ठुकरा दिया गया है।

यह सारी स्थिति बहुत चिंताजनक है और इस कारण हिन्दी प्रेमी जनता में रोष एवं क्षोभ फैलना स्वाभाविक है। पञ्जाब में हिन्दी भाषियों का प्रबल बहुमत है और उसकी उपेक्षा प्रजातन्त्र के सामान्य सिद्धान्तों की भी अवहेलना है। पञ्जाब की समस्त हिन्दी प्रेमी जनता इस अन्याय के निवारण के लिए कृतसंकल्प है और अनुभव करती है कि जब तक पञ्जाब में हिन्दी को समुचित स्थान नहीं मिलता, तब तक यह असन्तोष एवं रोष बढ़ता ही चला जाएगा। अन्त में यह सम्मेलन घोषणा करता है कि हम अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए आवश्यकतानुसार प्रत्येक प्रकार का बलिदान एवं त्याग करने को उद्यत हैं।

प्रस्ताव संख्या २

आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की बलिदान जयन्ती महोत्सव पर आयोजित यह हिन्दी रक्षा सम्मेलन पञ्जाब की समस्त हिन्दी प्रेमी जनता से अनुरोध करता है कि वह हिन्दी की रक्षा तथा प्रचार के लिए अपने कर्तव्य पालन में सचेष्ट रहें। इसके लिए आवश्यक है कि अपने समस्त कार्य-व्यवहार में केवल हिन्दी का ही प्रयोग करें। यह निश्चित है कि यदि जनता ने हिन्दी को अपनाए रखा, तो कोई भी शक्ति पंजाब में हिन्दी के समुचित स्थान प्राप्त करने में बाधक न हो सकेगी।

प्रस्ताव संख्या ३

भारत सरकार सन् १९६५ के पश्चात् भी अंग्रेजी को हिन्दी के साथ साथ केन्द्रीय प्रशासन की भाषा बनाये रखनेके लिए एक विधेयक भारतीय संसद में प्रस्तुत करने जा रही है। यह कार्य हमारे संविधान के विरुद्ध होने के साथ २ राष्ट्रीय भावना तथा स्वाभिमान को भी ठेस पहुंचाने वाला है। हिन्दी के राजभाषा बनने के पश्चात् विदेशी दासता की प्रतीक इस भाषा को थोपे रखना राष्ट्रीय दृष्टि से सचमुच बहुत आपत्तिजनक है।

अंग्रेजी हिन्दी के समान ही अन्य सभी भारतीय भाषाओं के विकास में एक बड़ी बाधा है। हिन्दी तथा राष्ट्र की अन्य भाषाओं में कोई प्रतियोगिता नहीं है। इनका विकास तथा व्यवहार साथ साथ होने में कोई कठिनता भी नहीं है।

अतः देश के सभी नागरिकों का यह कर्त्तव्य है कि वह इस अनुचित विधेयक का विरोध करे। यह सम्मेलन समस्त संसद् सदस्यों से भी अनुरोध करता है कि वे इस विधेयक को अस्वीकृत कराने में पूरी शक्ति लगाएं। मतदाताओं का भी यह कर्त्तव्य है कि वे अपने अपने क्षेत्र के संसद्-सदस्यों को इस विधेयक का बलपूर्वक विरोध करने के लिए प्रेरित करें।

❀

श्री कालीचरण आर्य स्वामी अखिलानन्द बने

लेखराम नगर (डाक से) सार्वदेशिक सभा के मन्त्री श्री कालीचरण आर्य ने आज १३-१०-६२ को स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती से सन्यास की दीक्षा ग्रहण की। उनका नाम स्वामी अखिलानन्द सरस्वती रखा गया। यह एक विशेष महत्वपूर्ण बात है कि इस समय सार्वदेशिक सभा के प्रधान और मन्त्री दोनों सन्यासी हैं।

इसी अवसर पर अमेरिका के प्रसिद्ध अमरीकन वैदिक मिशनरी डा० मार्क्स भी उपस्थित थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि जब तक संसार वैदिक धर्म की शरण में नहीं आएगा तब तक उसे सुख और शान्ति प्राप्त न हो सकेगी।

भारी संख्या में जनता इस अवसर पर उपस्थित थी।

आर्यजन शहीदों से प्रेरणा लें

स्मृति समारोह में बलिदान जयन्ती के अध्यक्ष महात्मा आनन्दभिक्षु जी की घोषणा--

लेखराम नगर (डाक से) यहां आर्यजित बलिदान जयन्ती समारोह में स्मृति समारोह की अध्यक्षता करते हुए महात्मा आनन्दभिक्षु जी ने सभी आर्य जनो से शहीदो के मार्ग पर चलने का निमन्त्रण दिया।

श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए डा० हरिप्रकाश ने कहा —

आर्यसमाज के समस्त हुतात्माओं की पुण्य स्मृति में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा आयोजित यह बलिदान जयन्ती समारोह उन वीर नर पुरुषों के प्रति अन्तर को समस्त पुण्य भावनाओं के साथ श्रद्धानत है जिन्होने सत्य-धर्म की रक्षा के लिए प्राण दिए पर प्रण नही छोड़ा।

इस अवसर पर एकत्र सहस्त्रो आर्य नर-नारियों की ओर से हम बलिदान की ज्वलन्त भावनाके प्रति आदर प्रगट करते हैं, जिससे दीप्त ज्योति के दहकते प्रकाश पुंज से नव युग की स्वर्णिम-आधार शिला रख उत्थान का, निर्माण का और जीवन के उदात्त सिद्धान्तों का पथ प्रशस्त होता है।

गौरव पूर्ण इतिहास के अमर पृष्ठो पर अंकित विजय की प्राण दायिनी स्फूर्ति के सन्देश वाहक धर्म प्राण महान् शहीदों का स्मरण उल्लास चेतना, और धर्म की वह अजस्र शक्ति धारा है, जिससे प्रेरणा, प्राप्त कर हम वैदिक धर्म और महर्षि दयानन्द के अनुयायी आज पुन पाखण्ड खण्डन की प्राण प्रतिष्ठा का व्रत धारण कर सकते हैं।

अत: इस अवसर पर हम सभी अपने धर्म वीरों की स्मृति के साथ व्रत लेते हैं आत्म शोधन का और फिर उस महान् लक्ष्य की पूर्ति का जिसके लिए महर्षि दयानन्द धर्मवीर लेखराम स्वामी श्रद्धानन्द आदि महान् आत्माओं ने प्राणों की आहुति दी।

हमारा विश्वास है कि बलिदान यज्ञ का यह आवाहन् प्रत्येक आर्य को कृण्वन्तो विश्वमार्यम् की राह पर चलने का आमन्त्रण देगा और सभी मिल कर, आज तक के सभी भेदों को भुला कर आगे बढ़े गे--और तब तक हमारा अभियान रुकेगा नहीं जब तक कि धरती के प्रत्येक मानव के हृदय मन्दिर पर सत्य की न्याय और मानवता को प्रतीक ओ३म् की पावन पताका लहराने का दिव्य स्वप्न पूर्ण नही हो जाता।

हिमालय के उत्तुंग शिखरो से गौरव मण्डित वीर शहीदों का पुण्य स्मरण आइए मिल कर करे। भावना-भावना के साथ विजय वरण का व्रत ले उनके प्रति भाव-पूर्ण श्रद्धा सुमन अर्पित करे।

आर्य जन साक्षी हैं, वह दीप्तमान-भुवन भास्कर की आभा मय किरण हमारा संकल्प है धरती तल से अविद्या अन्धकार, पाप ताप अशान्ति ज्वाला समाप्त करने का। हम रुकेंगे नही झुकेंगे नहीं बाधाओं आपदाओं से डरे गे नही शहीदो के मार्ग पर बढ़ते जाएगे पूरी शक्ति के साथ उनका अधूरा कार्य पूरा करे गे। परमपिता परमात्मा हम सभी को बल और धैर्य प्रदान करे। हमारे अन्तर में बलिदान की चाह जागृत हो और हम धर्मवीरों के आदेश-उपदेश-आचरण का अनुसरण कर सच्चे अर्थों में अपने को उनका योग्य अनुयायी बना सके जिसके लिए उन्होने प्राण दिये हम उस कार्य की पूर्ति का व्रत ले। यही बलिदान जयन्ती का एकमात्र उद्देश्य और इसी में उसकी सफलता है।"

प० बुद्धदेव विद्यालंकार, स्वामी सत्यमुनि जी, प० रघुवीरसिंह शास्त्री आदि नेताओं ने सभी आर्य शहीदो को श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए शहीदों के मार्ग पर चल सत्य न्याय की प्रतीक वेद वाणी के प्रसार का व्रत लेने का निमन्त्रण दिया।

बलिदान जयन्ती समारोह में आर्य महा सम्मेलन के प्रधान

श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती का भाषण

१३—१०—१९६२

समानीव आकूति समाना हृदयानि व ।
समानमस्तु वो मनो यथा व सुसहासति ॥ ऋग्वेद ।

देवियो और भद्र पुरुषो !

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने बलिदान जयन्ती का जो यह सफल और सुन्दर आयोजन किया है यह अपने वीर हुतात्माओं के प्रति एक कृतज्ञता पूर्ण सम्मान है और मुझे इस से अत्यन्त हर्ष है। इसी प्रसंग मे जिस आर्य-सम्मेलन की आप लोगों ने योजना की है वह भी एक प्रशस्त प्रसंग है क्योंकि इस समय आर्यसमाज के समक्ष उठती हुई ज्वलन्त समस्याओं पर विचार करना भी आवश्यक है। शान्त मस्तक होकर विचार करे और उनका समाधान सोचें।

आर्यसमाज की प्रगति की दृष्टि से पंजाब एक महत्वपूर्ण प्रान्त रहा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती के इस प्रान्त में पधारने के समय से लेकर हमारा इतिहास साक्षी है कि इस प्रान्त ने आर्यसमाज का महान् कार्य किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व पंजाब प्रान्त में आर्यसमाजों और उन से सम्बद्ध संस्थाओं का जो विपुल विस्तार और सुदृढ संगठन था उस को पाकिस्तान की स्थापना से बहुत धक्का लगा। इन संस्थाओं की प्रभूत चलाचल संपत्ति नष्ट हुई और आर्य भाइयों को धन जन और तन से अत्यधिक हानि भी उठानी पड़ी सारी व्यवस्था छिन्न भिन्न हो गई और नये सिरे से जीवन को स्थापित करना पड़ा। इन सभी कठिनाइयों और बाधाओं का सामना करते हुये भी पंजाब के आर्य बन्धुओं ने अपने उत्साह को बिना भङ्ग किये हुये आर्य-समाज की जो उन्नति की, उसके कार्य को जो प्रगति दी और महर्षि के कार्य को आगे बढ़ाने का जो कार्य किया वह अतीव प्रशंसनीय है। और इस बलिदान जयन्ती के पुनीत अवसर पर मैं उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। यही आप की विशेषता है कि आपने अपने पूर्व आदर्श को स्थिर रखा।

भारत में ही नहीं अपितु देश विदेश में हुई आर्यसमाज की प्रगति से यह सुतरां सिद्ध है कि आर्यसमाज एक महान् संघठन है। इसके अनुयायियों ने अपने आचार्य भगवान् दयानन्द सरस्वती जी और उन के द्वारा प्रदर्शित वेद के सिद्धान्तों पर अपने जीवन की बलि देने वाले वीरों और नेताओं से यह पाठ पढ़ा है कि जब भी किसी प्रकार की आपत्ति देश, वैदिक धर्म और आर्यसमाज के सामने आवे तब प्राण-पण से उसकी रक्षा करें। यह केवल कथन मात्र ही नहीं है अपितु अनेक परीक्षाओं के समय आर्यसमाज खरा उतरा है। हैदराबाद का, सिन्ध प्रान्त (सत्यार्थप्रकाश प्रतिबन्धविषयक) का और पंजाब प्रान्तीय हिन्दी का सत्याग्रह आँखों से ओझल नहीं किया जा सकता है। इन आन्दोलनों ने यह प्रकट कर दिया कि आर्यसमाज की क्या शक्ति है। भौतिक आपत्तियों (भूकम्पादि) के आने पर भी सेवा कार्य में आर्यसमाज पीछे नहीं रहा है।

इस बलिदान जयन्ती के अवसर पर विविध सम्मेलन आपने किये हैं। उनके प्रस्ताव सुझाव रूप में आपके सामने आये होंगे अथवा आने वाले होंगे, परन्तु केवल प्रस्तावमात्र से कार्य नहीं चलता है अपितु उन को कार्य रूप में परिणत करने की आवश्यकता है। प्रस्ताव चाहे अल्प हों किन्तु ऐसे ही प्रस्ताव पास होने चाहिएं जिन्हें

कार्य में परिणत किया जा सके।

हमारी समस्यायें

जहाँ देश की सीमा पर एक भारी आक्रमण की समस्या खड़ी है और उससे आर्यसमाज जैसी संस्था जिस के आचार्य ने सर्व प्रथम स्वराज्य और देश भक्ति का मन्त्र दिया किसी भी प्रकार मुंह नहीं मोड़ सकती है वहाँ अपनी घरेलू भी बहुत सी समस्यायें हैं जिन पर विचार कर समाधान निकालना है।

आर्य भाषा जिस का अपर नामधेय नागरी एव हिन्दी है, आर्य समाज के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है। आचार्य दयानन्द सरस्वती जी ही सर्वप्रथम आचार्य हैं जिन्होंने अपने ग्रन्थ रत्नों को इस भाषा में लिखा और इस के प्रचार का बीजारोपण किया। उनके बताये मार्ग पर चलने वाले आर्यसमाज ने हिन्दी के प्रचार, प्रसार और प्रचलन में बहुत बड़ा भाग अदा किया है। स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने पर विधान परिषद ने इसे राष्ट्र भाषा के स्थान पर प्रतिष्ठित किया और यह तथ्यभूत वस्तु है कि संस्कृत के अनन्तर केवल हिन्दी है कि जो भारत की प्रत्येक प्रान्तीय भाषाओं में ओत प्रोत है। मेरा यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि प्रान्तीय भाषाओं का उत्थान न किया जावे। मैं तो कहता हू कि प्रान्तीय भाषाओं को पूरा विकास दिया जावे, परन्तु हिन्दी को उसका सर्वोच्च स्थान भी दिया जाना चाहिए। विदेशी शासन भारत से गया, परन्तु विदेशी भाषा (अंग्रेजी) का व्यामोह अभी इतना प्रबल है कि हिन्दी पर अभी अन्याय हो रहा है। आप से छिपा नहीं है कि १५ वर्ष की अवधि को समाप्त कर उससे अधिक और अनिश्चित समय तक अंग्रेजी को भारत में राजकीय कार्य भाषा रखने के लिये एक विधेयक हमारी लोक सभा में इस आगामी अधिवेशन में प्रस्तुत किया जाने वाला है। इस से हिन्दी के विकास और उसके भविष्य पर बहुत बड़ा कुप्रभाव पड़ेगा। इस विधेयक का आर्यसमाज को प्रबल विरोध करना पड़ेगा। इस प्रान्त में हिन्दी को लेकर कुछ विचित्र परिस्थिति खड़ी कर दी गई है इस पर भी आर्य समाज को ध्यान देना ही पड़ेगा।

आर्यसमाज के साथ वेद का समवाय संबन्ध रहा है। आर्यसमाज की आधार शिला वेद ही है। इस लिये देश और विदेश में इसके प्रचार की व्यवस्था भी आर्यसमाज को करनी है। यह एक ऐसा कार्य है कि जिस को आर्यसमाज के अतिरिक्त और कोई इतने अच्छे ढंग से नहीं कर सकता है। वेद प्रचार का जो वर्तमान रूप है उस में कुछ परिवर्तन भी करने पड़े गे। प्रचार के मानदण्ड को भी ऊंचा करना पड़ेगा। विश्वविद्यालयों, कालिजों और स्कूल आदि संस्थाओं मे भी योग्य प्रचारकों की व्यवस्था सोचनी है। विदेश में वेद प्रचार तो बड़ा ही महत्व का कार्य है उसकी व्यवस्था करनी पड़ेगी और भारतीय ग्राम्य जनता में भी वेद सन्देश पहुंचाने का मार्ग बनाना पड़ेगा।

हमारी प्रेरणा के स्रोत महर्षि के ग्रंथ हैं। उन पर भाष्य और टीकायें भी उन के दृष्टि कोण को समझाने के लिये करनी आवश्यक हैं। उन का सुन्दर एवं शुद्ध प्रकाशन होना चाहिये। वर्तमान समय में देश, विदेश के विद्वान् और दूसरे मतों के लोग वेद और महर्षि के सिद्धान्तों पर जो आक्षेप कर रहे हैं और जो कुछ लिख रहे हैं उनका उत्तर देने की योजना बनानी है। साहित्य के निर्माण की ओर भी बहुत कार्य करना शेष है।

आर्यजनों में स्वाध्याय करने की प्रवृत्ति को बढ़ाने, गुण-कर्म-स्वभावानुसार वर्ण व्यवस्था के पालन करने और आश्रम मर्यादा को दृढ़ करने के लिये समुचित वायुमण्डल बनाने की भी

साहित्य-समालोचना

प्राप्ति स्वीकार

१—Life and Mission of Mahrishi Dayanand लेखक—श्री ऐम० ऐल० भाटिया ३२५ आदर्श नगर जयपुर मूल्य २)५०

२—अमर धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्द (द्वितीय संस्करण)

लेखक—प० धर्मदेव विद्यावाचस्पति विद्यामार्तण्ड गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय प्रकाशक—राजपाल एण्ड संज पो० बक्स १०६४ दिल्ली मूल्य १)

३—वैशेषिक दर्शनम् ब्रह्ममुनि भाष्योपेतम्

आवश्यकता है। जन्म की जाति-पाँति का बल राजनैतिक पार्टियों और चुनावों ने और भी बढ़ा दिया है इस को दूर करने के लिये आर्य समाज को प्रबल संग्राम करना पड़ेगा। क्योंकि राजनैतिक अधिकारों का जातीयता के आधार पर संरक्षण भी इस कार्य में पर्याप्त बाधक सिद्ध हो रहा है।

वर्तमान समय में भावनात्मक एकता के एक प्रसंग का प्रबल प्रचार हो रहा है। इसके पृष्ठ पीछे क्या भूमिका है यह तो अभी पूर्णरूपेण स्पष्ट नहीं है। परन्तु इतना स्पष्ट है कि सार्वदेशिक सभा के निर्देश पर उसके प्रतिनिधि के रूप में माननीय श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त ने इस सम्बन्धी समिति के समक्ष जो वक्तव्य दिया है वह इस दिशा में सार्वदेशिक सभा की नीति है। आपने समाचार पत्रों में इस विषय को पढ़ा ही होगा। मैं पुनः स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि स्कूल-कालेज आदि मे नैतिक शिक्षण इस कार्य के लिये आवश्यक साधन हैं। साथ ही पाश्चात्य मान्यताओं पर बने हुए हमारे इतिहास आदि को विशुद्ध रूप में लाना पड़ेगा। यह मेरा ही नहीं अपितु विश्व के समस्त विद्वानों का भी मत है कि विश्व के पुस्तकालय में ऋग्वेद ही सब से प्राचीन और सर्वप्रथम ग्रन्थ है। यह पाश्चात्य धारणाओं के आधार पर भी उस समय का ग्रन्थ है जब समाज सम्प्रदायों में विभक्त और मत-मतान्तरों का जन्म भी नहीं हुआ था। अतः उसके संग्रहों के आधार पर नैतिक शिक्षण एकता का एकमात्र साधन है।

'माता भूमि अहं पुत्र पृथिव्या"—सब मनुष्यों के लिये पृथ्वी माता है और मानवमात्र उसका पुत्र है। इस लिये विश्व का मानवमात्र परस्पर भाई-भाई है। वेद की यह शिक्षा ही भावात्मक, राष्ट्रीय अक्षुण्ण एकता का एक मात्र साधन है।

आदरणीय माताओ और भाईयो! मैं इन सब समस्याओं का एक पटक्षेप आप के सामने कर रहा हूं, विचार आप को करना है, और निर्देश भी आप को ही देना है। आपने इस पद का भार जो मेरे ऊपर दिया तदर्थ मैं अत्यन्त आभारी हूं। जगन्नियन्ता परमेश्वर की दया और आपलोगों के सहयोग से प्रत्येक कार्य सफल होगा।

ओ३म् शम्

प्रकाशक-आर्यकुमार महासभा
आत्माराम रोड बड़ौदा
१-मिलने का स्थान—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द भवन (रामलीला मैदान)
नई दिल्ली १
२-आर्य कुमार महासभा बड़ौदा
मूल्य अजिल्द २) सजिल्द २॥)

४—बाल जीवन सोपान

(द्वितीय संस्करण) मूल्य १।)
लेखक और प्रकाशक-स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक
विद्यामार्त्तण्ड
गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार
मिलने का पता –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
नई दिल्ली १

५—आर्य सिद्धान्तदीप

लेखक—पं० मदनमोहन विद्यासागर
प्रकाशक—वैदिक साहित्य सदन
आ० स० मन्दिर
सीताराम बाजार देहली
मूल्य १)

६—सन्ध्या रहस्य

लेखक—श्री पं० चमूपति जी एम० ए०
प्रकाशक—सत्य प्रकाशन
वृन्दावन रोड, मथुरा
मूल्य ४० नए पैसे

७—स्वामी दयानन्द

श्री अरविन्द घोष के 'दयानन्द' तथा 'दयानन्द और वेद' नामक अंग्रेजी लेख का अनुवाद
प्रकाशक—गोविन्दराम हासानन्द
आर्य साहित्य भवन
नई सड़क देहली
मूल्य २५ नए पैसे

गीता समीक्षा

लेखक—श्री चक्खनलाल वेदार्थी, एम० ए०, १०७ स्वदेशी नगर, आगरा। प्रकाशक—स्वयं लेखक। आकार २०×३०/१६, मूल्य १) रु०

प्रस्तुत पुस्तक का विषय इसके नाम से स्पष्ट है, दूसरे आवरण पृष्ठ पर लेखक ने अंकित किया है—"गीता समीक्षा" अर्थात्—गीता अवैदिक है। इससे इस लघु पुस्तिका के प्रतिपाद्य विषय का बोध हो जाता है। लेखक आर्यसमाज के एक कर्मठ कार्यकर्त्ता है। यह रचना आर्यसमाज की—लेखक द्वारा समझी गई—विचारधारा के अनुसार की गई है। लेखक महोदय ने गीता विषयक उन अनेक विचारों का भी अपनी रचना में विरोध किया है, जो समय-समय पर आर्यसमाज के अन्य मूर्द्धन्य विद्वानों ने प्रकट किये हैं।

पुस्तक के ग्यारह अध्यायों में यथाक्रम निम्नलिखित विषयों का विवरण दिया गया है—

१—विषय प्रवेश
२—गीता में वेदों की निन्दा
३—गीता उपनिषदों का सार नहीं
४—श्रीकृष्ण परमात्मा
५—गीता में ईश्वर, जीव और प्रकृति की एकता
६—गीता मे ज्ञान, कर्म, उपासना का स्वरूप
७—गीता और वर्णव्यवस्था
८—मोक्ष, स्वर्ग और नरक
९—गीता और पापों की क्षमा
१०—गीता मनुष्यमात्र के लिये नहीं
११-गीता वैदिक नहीं-महर्षि दयानन्दकी साक्षी

इस समय हम इस विवाद में नहीं पड़ना चाहते, कि गीता की स्वतन्त्र रचना की जाकर उसे महाभारत में सन्निविष्ट किया गया, अथवा महाभारत से उसे अध्ययन की सुविधा के लिये

पृथक् कर लिया गया, पर यह निश्चित है—एक ऐसा समय रहा है, जब गीता को विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों ने अपने विचारों के प्रचार का एक आधारभूत साधन बनाया। शैव और वैष्णव दोनों सम्प्रदायों के आचार्यों ने अपने-अपने विचार के अनुसार गीता पर विस्तृत व्याख्या लिखी है, और गीता के मन्तव्यों को अपने विचारों का पोषक सिद्ध किया है, जब कि दोनों सम्प्रदायों के अनेक सिद्धान्तों में मौलिक मतभेद हैं। आधुनिक काल में भी विभिन्न विचारों को आधार मान कर गीता पर अनेक व्याख्या लिखी गई हैं। ऐसी स्थिति मे गीता का अपना मूलभूत विचार क्या रहा होगा, यह कहना कठिन है।

यह एक निर्विवाद तथ्य है, कि भारतीय संस्कृत साहित्य के अनेक ग्रन्थों में समय-समय पर किन्हीं निमित्तों से प्रक्षेप होते रहे हैं, पर उन प्रक्षेपों की जानकारी की परम्परा भी यथाकथञ्चित् अक्षुण्ण रही है, पर गीता महाभारत में प्रक्षिप्त है, इस बात के कोई उस समय के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। आज हम अपने विचार और परिस्थितियों के अनुसार इस समस्या को उभार कर सामने लाने का प्रयत्न कर रहे हैं, इसकी यथार्थता को जानने के लिये अभी अधिक प्रयत्न की अपेक्षा है।

गीता का प्रवचन भारत युद्धकाल की एक विशिष्ट घटना पर आधारित है, वह घटना है—उस अवसर पर अर्जुनका विषाद, 'गीता समीक्षा' के लेखक का ऐसा विचार है, कि महाभारत ग्रन्थ में गीता का प्रक्षेप करने के लिये यह केवल कल्पना की गई बात है, इसमें वास्तविकता कुछ नहीं। महाभारत में कितना अंश ऐतिहासिक माना जाय, और कितना कल्पनामात्र, यह एक जटिल समस्या है। पर इन सबके बावजूद जहां गीता के विषय में अनेक दृष्टिकोण विभिन्न आचार्यों ने समय समय पर प्रस्तुत किये हैं, वहां यह भी एक दृष्टिकोण विद्वानों के लिये गम्भीरता से विचारणीय है, जो इस लघु पुस्तिका में लेखक ने साहसपूर्वक प्रस्तुत किया है। निस्सन्देह यह रचना विचारणीय एवं समाहृय है।

हमें ऐसा मालूम हुआ, रचना में अनेक स्थलों पर अन्यथाभाव प्रकट कर दिये गये हैं, उदाहरण के तौर पर उनमें से कुछ स्थल इस प्रकार हैं—

१—पृष्ठ १६ पर सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास से एक उद्धरण देकर लेखक महोदय ने लिखा है—'महर्षि की भविष्यवाणी इस ग्रन्थ के विषय में सत्य चरितार्थ हो रही है।' यहां हम यह नहीं समझ सके, कि महर्षि की वह कौनसी भविष्यवाणी है? सत्यार्थ प्रकाश से जो पंक्ति उद्धृत की गई हैं, वे महाराजा भोज का कथन हैं। महाभारत ग्रन्थ के कलेवरवृद्धि के विषय में उक्त लेख, महर्षि की 'भविष्यवाणी' कैसे? यह भी विचारणीय है।

२—पृष्ठ २२ के अन्त और २३ के प्रारम्भ में—गीताधर्म के आदि सृष्टि में कहे जाने पर लेखक ने जो उद्भावना की है, वह कदाचित् इस लिये ठीक नहीं, कि गीता के उस प्रसंग में जो कुछ कहा गया है, वह आदि सृष्टि में गीता पुस्तक के कहे जाने के विषय में नहीं है, प्रत्युत गीता प्रतिपाद्य धर्म के विषय मे है, गीता कासार भूत धर्म वेदमूलक है, इसके लिए प्रमाण मिल सकते हैं।

३—पृष्ठ २४ पर लेखक महोदय ने कहा—गीताकार का यह कथन ठीक नहीं, कि वह ज्ञान समय पाकर नष्ट हो गया। यदि ज्ञान नष्ट होगया होता तो श्रीकृष्ण जी ने उसको कहां से पढ़ा, बिना सीखे उन्होंने अर्जुन को कैसे दिया?" हमारे विचार से लेखक का 'यह तर्क बहुत छिछला

है आर्यसमाज के दृष्टिकोण के अनुसार सहस्रों जैसे वर्षोंसे नष्ट अति प्राचीन वेदपद्धतिको आधुनिक काल मे ऋषि दयानन्द ने योगसमाधि द्वारा जानकर जनता के सन्मुख प्रस्तुत किया है, इसी प्रकार उक्त ज्ञान को श्रीकृष्ण ने किया हो, तो इसमें क्या असामञ्जस्य है ?

४—पष्ठ २६-२७ पर गीता मे 'वाद' पद के प्रयोग के विषय में जो लिखा गया है, वह युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता। न्यायदर्शन के पारिभाषिक 'वाद' पद का गीता के इस 'वाद' से कोई भी ताल मेल नहीं है। गीता उक्त प्रसग से न्यायोक्त 'वाद' कथा का सम्बन्ध जोड़ने में लेखक महोदय ने वस्तुत बड़े साहस का काम किया है ?

५—पृष्ठ २८ पर गीता के १०।३२ श्लोक का जो अर्थ दिया गया है, वह अत्यन्त अशुद्ध है। गीता के श्लोकों के अर्थ तो अनेक स्थलों पर इसी प्रकार मनमाने किये गये हैं।

और भी अनेक बातें हैं, जो आवश्यक रूप से विचारणीय हैं। यह सब लिखने का मेरा इतना ही अभिप्राय है, कि मैं लेखक महोदय से सविनय निवेदन करूं, कि वे इस विषय के अधिक विस्तृत एवं गम्भीर अध्ययन के अनन्तर एक बार पुन इस पर विचार करे, तो सम्भवत यह विषय और अच्छा स्पष्ट हो सकेगा, इसकी बड़ी आवश्यकता है।

—उदयवीर (शास्त्री)

मालवीय श्रद्धा सुमनावली

सम्पादक—सत्यदेव विद्यालङ्कार
फतहचन्द शर्मा आराधक
निरञ्जन देव शर्मा
लीलाधर शर्मा पाडेय

प्रकाशक— मालवीय साहित्य श्रद्धाजलि समारोह समिति
१५-एफ० दिलशाद कालोनी शाहदरा, दिल्ली

$\frac{१८ \times २२}{८}$ मूल्य ३) पृ० स० ११२

महामना श्रीयुत प० मदनमोहन जी मालवीय की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में यह पुस्तक प्रकाशित की गई है। इसमें विविध महानुभावो की श्रद्धाञ्जलयो के अतिरिक्त स्व० महामना के जीवन और उनके कार्य से सम्बद्ध प्रचुर सामग्री पढने को मिलती है। पुस्तक उपादेय है।

ओपन सीक्रेट्स (अंग्रेजी)

लेखक और सम्पादक—
श्री सी० आर० आहूजा परदेशी
एल० एस० जी० डी०, कोविद सिद्धान्त रत्न
प्रकाशक श्री चादमल आर० आहूजा परदेशी
राधा कृष्ण साहित्य मन्दिर, ब्लाक १६५,
उल्हास नगर १ (जि० थाना बम्बई)

इस पुस्तक में 'दादापुरी' सम्प्रदाय का घिनौना स्वरूप प्रस्तुत करने का चेष्टा की गई है और उस सामग्री का आधार बनाया गया है जो इस सम्प्रदाय के अधर्माचरण को देख और सुनकर पीड़ितो एव समाज के हितैषयो के द्वारा प्रकाशित एव प्रचारित हुई है। इस सम्प्रदाय के उन अनुयायियो और सचालको की करतूतो से सर्व सामान्य जनता को परिचित करके सावधान करना जो 'धर्म' के नाम पर लोगो को पथ-भ्रष्ट करके समाज में अनाचार व्याप्त करते हैं, एक विशिष्ट सामाजिक सेवा है। आशा है अभीष्ट की सिद्धि में यह पुस्तक सहायक होगी।

ॐ

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली

दान सूची आर्य समाज स्थापना दिवस

(गताक से आगे)

४१) आर्य समाज नया बाजार लश्कर
४७) ,, जोनपुर
१०) ,, रानी का तालाब फीरोजपुर शहर
१०) , झालावाड (राजस्थान)
५) ,, मेहसी (चम्पारन)
११) , किशनगढ (जयपुर)
२) , बिहारशरीफ पटना)
२५) , नई मडी मुजफ्फरनगर

१,६) योग
४०७ गतजोग

५७६) सर्व योग

दान वेद प्रचार

७२)०५ श्रीमती भाग्यवती जी हरद्वार
२५) श्री बच्चू भाई ईश्वर भाई विखोदरा
१०१) मन्त्री आर्य समाज आणद जि० खेडा (श्री स्वामी ध्रुवानन्दजी सभाप्रधान द्वारा)
६) श्री लक्ष्मीचन्द जी ग्राम बडा किरारा जि गगानगर
५) श्री मकरन्द शर्मा आर्य वैद्य बराठी (शाहाबाद आरा)
११) आर्य समाज रामचूर (श्री रामस्वरूप जी अवस्थी द्वारा)
१२) श्री विश्वनाथ खडो जी आर्य मु० बोर्डा, जि० उस्मानाबाद

१०) आर्य समाज नीमच
१७ २० आर्य समाज हिंगोली परभणी)
११) श्री डा० जगीरा जी द्वारा आर्यसमाज नाना पेठ, पूना
१०) आर्य समाज खेती (बलिया)
५ श्रीराम जो प्रधान आर्य समाज केराकत (जौनपुर)
१२५) श्रीमती लाभ कुवरि जीवन क्लाथ मार्केट दिल्ली
१०००) श्रीयुत सेठ बिहारीलाल सुखदेव बलदेव जी शोलापुर

१४१०)२५ योग

दान ईसाई प्रचार निरोध प्रचार

४००) अ० भा० आर्य धर्म सेवा सघ, दिल्ली सहायता मार्च व अप्रैल ६२
२) श्री कृष्णलाल ज एडवोकेट सहारनपुर
१००) श्री महात्मा आनन्द भिक्षु जी द्वारा (दो बार में सगृहीत)
७५) आर्यसमाज मोराद (उस्मानाबाद)
१०) श्री भागचन्द जी आर्य खानखाना (जालन्धर)
३६) आर्य समाज जेवर (बुलन्दशहर)
१६ ८० आर्य समाज रुडकी
११) श्री ब्रजकिशोर जी आर्य सिकन्दराबाद (बुलन्दशहर)

६७१ ८० योग

दान दाताओ को धन्यवाद।

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

चीनी आक्रमण
आर्य समाज को आवाहन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती ने निम्नलिखित वक्तव्य प्रेस को दिया है :--

"शान्त एवं शान्तिप्रिय भारत के विरुद्ध चीनी आक्रमण का स्वरूप स्पष्ट रूप में भारतीयों के समक्ष आ चुका है। दोनों विशाल देशों के मध्य युगों से जो सद्भावना विद्यमान थी उसे चीन के कम्युनिस्ट शासकों द्वारा बड़ा आघात पहुंचा है। प्रधान मन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत वर्ष अपनी सीमाओं की रक्षा और शत्रु द्वारा बलात् हथियाई गई भूमि का एक २ इंच पुनः प्राप्त करने के लिए कृत-संकल्प है। इस निश्चय में समस्त राष्ट्र का उन्हें समर्थन प्राप्त है।

आर्य समाज का यह राष्ट्रीय पवित्र कर्त्तव्य है कि वह भारत की अखण्डता की रक्षा के लिए प्रत्येक सम्भव उपाय को क्रिया में लाएं और आक्रान्ता चीनियों को अपने देश की सीमाओं से बाहर खदेड़ने में प्रधान मन्त्री के संकल्प की पूर्त्यर्थ उन्हें पूरा २ सहयोग दें। इस समय तात्कालिक आवश्यकता मुख्य रूप से स्वर्ण के रूप में धन की है और हम आर्यों को अपनी शक्ति भर इस आवश्यकता की पूर्ति में योग देना है। विविध आर्य समाजों के अतिरिक्त, आर्य समाज की सैकड़ों संस्थाएं विद्यमान हैं। मैं प्रत्येक सदस्य को प्रेरणा करूंगा कि वह कम से कम एक दिन का वेतन वा आय इस पवित्र कार्य में दे धन संग्रह करने वाली किसी भी प्रामाणिक संस्था वा संगठन को धन दिया जा सकता है वा सीधे सरकार को मनी आर्डर से भेजा जा सकता है जिसके लिए मनी आर्डर की फीस न ली जायगी। परन्तु इस प्रकार के दान की सूचना 'अनिवार्य रूप से' स्थानीय आर्य समाज और प्रान्तीय समाओं के द्वारा सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में पहुंचनी चाहिए।

जब सेना में भरती का समय आयगा तो मैं प्रधान मन्त्री जी को यह विश्वास दिला सकता हूं कि आर्य समाज पीछे न रहेगा।

बलिदान जयन्ती अम्बाला का
डाक्टर मारकस का भाषण

मेरा जन्म न्यूयार्क के एक रूढ़ी वादी ईसाई परिवार में हुआ था। प्रारम्भ में धर्म कर्म की बातों में मेरा विश्वास नहीं था। फिर जब मैंने अपने जीविका को चलाने के लिए खोज कर ली तो मैंने देखा कि यद्यपि मैं बहुत अधिक योग्य नहीं था फिर भी मुझे सफलता बराबर होती रही। मेरे मुकाबले पर अन्य व्यक्ति भी थे जो यद्यपि मुझ से अधिक योग्य थे फिर भी मेरे जितनी सफलता न प्राप्त कर सके। इस बात ने मुझे सोच में डाल दिया। इसी अर्से में मेरे पिता का देहान्त हो गया। अन्तिम समय मैं इनके पास उपस्थित न हो पाया। मैंने उस नर्स व अन्य लोगों से जो अन्तिम समय उनके पास थे, पिता की मृत्यु का वृतान्त सुना। सब लोगों ने यही बताया कि मृत्यु के समय वह बिलकुल शाँत और प्रसन्न थे। और इतने अधिक शान्त थे जितने कि जीवन मे अन्य किसी अवसर पर वह शायद नहीं रहे थे।

इन्हीं दिनों मेरी भेंट एक ज्योतिषी से हुई उसने मेरी जन्म पत्री बनाने की इच्छा प्रगट की यद्यपि मुझे जन्म पत्री आदि में विश्वास न था फिर भी मैंने उसे अपना जन्म स्थान और जन्म तिथि बताई। वह ज्योतिषी इन दो बातों के इलावा मेरे विषय मे और कुछ न जानता था फिर भी जन्म पत्री की ६० प्रतिशत बातें सच थीं। इस बात ने मेरे मन मे यह विचार पैदा कर दिया कि इस लौकिक ससार से ऊपर भी कोई ऐसी अलौकिक सत्ता है सही जो कि दिखाई नहीं देती। इन सब बातों ने मेरा ध्यान धर्म की ओर आकर्षित किया। क्योंकि मेरा जन्म एक ईसाई परिवार मे हुआ था और इसी धर्म की पुस्तकें मुझे आसानी से प्राप्त हुयीं इस लिए मैंने इसी धर्म को अपनाया। मैं एक पक्का ईसाई बन गया। परन्तु मैंने ईसाई होते हुए भी यह अनुभव किया कि ईसाई लोग दूसरों को तो बदलते हैं परन्तु खुद को नहीं बदलते और यही एक कारण है कि ईसाई अपने प्रचार कार्य में बहुत अधिक सफलता नहीं प्राप्त कर सके। एक धर्म जो दूसरे धर्मों के प्रति अनुदार दृष्टि कोण रखता है वह धर्म कभी भी सच्चा धर्म नहीं हो सकता। ईसाई धर्म की इन कमियों ने मुझे इस धर्म से विमुख कर दिया। मेरी आत्मा अब भी अशान्त और व्यग्र थी। तभी मेरी भेंट एक वैदिक धर्म के पण्डित जी से हुई। पण्डित जी न केवल वैदिक धर्म व वैदिक दर्शन के प्रकाण्ड पण्डित ही थे वरन् पुरुषों में भी उत्तम पुरुष थे। उनकी सज्जनता ने मुझे बहुत आकर्षित किया। उन से मिलकर मेरा यह निश्चय और भी दृढ़ हुआ कि वह धर्म उत्तम है जो मनुष्यों के हृदयों को बदल उन्हें सज्जन बनाता है।

तब से लेकर अब तक मैंने अपना समय वैदिक धर्म की दीक्षा लेते हुए ही व्यतीत किया है। मेरा विवाह भी अमेरिका में वैदिक रीति से हुआ। मैं और मेरी पत्नी अब वैदिक धर्म के प्रचार कार्य मे रत हैं। हम दोनों ब्रिटिश गाइना में जार्ज टाउन गए और वहा पर हमने देखा कि बहुत से भारतीय या तो ईसाई बन चुके हैं और या ईसाई बनने पर उद्यत हैं। हमने उन्हें अपने अनुभवों से परिचित करा के उन्हें वैदिक धर्म का त्याग करने से रोक लिया। फिर हम ट्रिनी डाड गए। वहां पर एक भारतीय, जिस की बीमार पत्नी को ईसाई प्रचारक के इलाज ने स्वस्थ कर दिया था, ईसाई धर्म

के प्रचार में जोर शोर से लगा था। हमने उसे अपने अनुभवों के विषय में बताया और उसने ईसाई मत के प्रचार में सक्रिय भाग लेना छोड़ दिया। वह व्यक्ति पिछले साल भी मुझे न्यूयार्क में मिलने के लिए आया और इस वर्ष भी। जब उसे यह पता चला कि मैं भारत जा रहा हूँ तब उस ने अपने लड़के को गुरुकुलीय शिक्षा प्राप्त करवाने के लिए मेरे साथ भारत भेज दिया। मैं प्रतिदिन यज्ञ करता हूं और मुझे वैदिक धर्म से पूर्ण शांति मिली है। मैं चाहता हूं कि सारा संसार वेदों की शरण में आजाए।

*

प्रचार करने योग्य ट्रैक्ट

		मूल्य प्रति सकडा
१	मद्य निषेध की आवश्यकता (ट्रैक्ट)	)८
२	वेद और गोमेध (ट्रैक्ट)	)१२
३	आर्य समाज के मन्तव्य	१२) , १०)
४	शकासमाधान	)०३ ,, २)५०
५	पूजा किसकी	)०३ ,, २)५०
६	आर्यसामाज	)०३ ,, २)५०
७	ऋग्वेद में देवृकामा या देवकामा	)०६ ,, ५)
८	गोकरुणानिधि	)०६ ,, ४)
९	गोहत्या क्यो ?	)१२ , १०)
१०	चमडे के लिए गोवध	)१८ ,, १५)
११	मासाहार घोर पाप	)१५ ,, १२)
१२	दशनियम व्याख्या	)०६ , ७)५
१३	तीर्थ और मोक्ष	)०६ , ७)५०
१४	ग्रहण और दान	)०६ , ७)५०
१५	भारतवर्ष मे जाति भेद	)०६ , ७)५०
१६	वैदिक राष्ट्र धम	)२० ,, १५)
१७	प्रजापालन	)०५ , ४)
१८	नारायण स्वामी जी की सक्षिप्त जीवनी	०६ , ५)
१९	सत्यार्थप्रकाश की रक्षा मे	)०६ , ५)
२०	मुर्दों को क्यो जलाना चाहिए	)०६ ,, ५)
२१	आर्यसमाज के नियमोपनियम	)०६ ,, ७)५०
२२	आदर्श गुरु शिष्य	)२५ ,, २०)
२३	भारत का एक ऋषि	)१२ ,, १०

ENGLISH PUBLICATIONS

(1) Introduction to the Commentary on Vedas	2-50
(2) Kenopanishat (Translate on by Pt Ganga Prasad ji M A)	0-25
(3) Kathopanishat (Pt Ganga Prasad M A Rtd Chief Judge)	1-25
(4) The Universality of the SATYARTH PRAKASH	0 06
(5) PUNISHMENT PRESCRIBED for The unbeliewers in the Quran	0-19
(6) Vedic Trinity	0-12
(7) Arya Samaj & International Aryan League (Pt Ganga Prasad ji Upadhyaya M A)	0-06
(8) Truth Bed Rocks of Arya Culture ʎR(aiSahib Thakur Datt Dhawan)	0-50
(9) A case of Satyarth Prakash in Sind (S Chandra)	1 50
(10) In Defence of Satyarth Prakash (Prof Sudhakar M A)	0-12
(11) Tributes to Rishi Dayanand & Satyarth Prakash (Pt Dharam Deva ji Vidyavachaspati)	0-50
(12) Political Science (Mahrishi Dayanand Saraswati)	0-50
(13) Elementary Teachings of Hinduism (Ganga Prasad Upadhyaya M A)	0-50
(14) Life after Death ,, ,,	1-25
(15) Philosophy of Dayanand	10-00
(16) Agnihotra (Dr Satya Prakash)	2-50
(17) Daily Prayer of an Arya (Shri Narain Swami)	0-50
(18) The Constitution of Arya Samaj	0 20

नोट —(१) आर्डर के साथ २५ प्रतिशत चौथाई धन अगाऊ रूप में भेजे।
(२) अपना पूरा पता डाकखाने तथा स्टेशन के नाम सहित साफ साफ लिखे।
(३) विदेश से यथासम्भव धन पोस्टल आर्डर द्वारा आना चाहिये।

व्यवस्थापक—सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार, दयानन्द भवन, नई दिल्ली-१

यज्ञ पद्धति प्रकाश मूल्य)५०

जिस यज्ञ की पद्धति की आर्य जनता चिरकाल से प्रतीक्षा कर रही थी वह छपकर तैयार होगई। सब आर्यसमाजों का कर्तव्य है कि उसके अनुसार साप्ताहिक अधिवेशनों तथा यज्ञ आदि को करे जिससे देश देशान्तरों में एक रूपता धार्मिक कर्म काण्डों में रहे।

इस ग्रन्थ में पांच पद्धतियां हैं

१—साप्ताहिक अधिवेशन आदि के समय बृहत् यज्ञ की पद्धति।

२—नित्य यज्ञ करने वालो के लिये नित्य यज्ञ पद्धति।

३—आहिताग्नियो के लिये आहिताग्नि नित्य यज्ञ पद्धति।

४—ब्रह्मपारायण यज्ञ पद्धति।

५—साप्ताहिक अधिवेशन सर्वत्र किस प्रकार हो इसके लिये साप्ताहिक अधिवेशन पद्धति।

इन पाच पद्धतियो के अतिरिक्त साप्ताहिक अधिवेशन के **समय विभाग** का एक पृथक् चार्ट छापा गया है जो समाज मन्दिरो में लगना चाहिये इसका मूल्य ५० न पै मात्र है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का यात्रा चित्र

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का यात्रा चित्र तीन रगो में बहुत सुन्दर सार्वदेशिक सभा ने प्रकाशित किया है। यह एक बडा चित्र नक्शे के समान है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति बडी आसानी से एक दृष्टि डालते ही जान सकता है कि महर्षि अपने जीवन में कहा गये और कहा नही। जिस किसी नगर या जगल में स्वामी जी अनेक बार गये वहा सख्या दी हुई है। ऋषि के दो चित्र भी उसमें हैं एक खडाऊ पहने और दूसरा पूर्ण वस्त्रो में कि टकारा से चलकर परमर्षि योगाभ्यास के लिये गगोत्री आदि से भी ऊपर पर्वत के किस शिखर तक पहुंचे वहा एक कुटिया दिखाई गई है। विद्याध्ययन के लिये और प्रचार के लिये किन किन स्थान को पवित्र किया वे सब स्थान दिखाए गए हैं। मूल्य ।।)

यह चित्र के रूप में महर्षि का सारा जीवन एक पृष्ठ पर है सार्वदेशिक सभा ने बडे परिश्रम से इसको तैयार कराकर तीन रगो में छापा केवल इसलिये के प्रत्येक के पास पहुच जावे नाम मात्र मूल्य ।।) रखा है।

सार्वदेशिक सभा ने स्वर्ण जयन्ती और नवम आर्य महासम्मेलन के अवसर पर निम्नलिखित पुस्तके प्रकाशित करके बहुत बडी आवश्यकता और प्रबल माग की पूर्ति की है।

१—सार्वदेशिक सभा का संक्षिप्त इतिहास—

इस इतिहास में सभा के स्थापना काल से अब तक की प्रमुख २ प्रगतियो का वर्णन अंकित है जो आर्य समाज के इतिहास को आधार बनाने वाली है। मूल्य)७५ नए पैसे

२—सार्वदेशिक सभा के निर्णय—

सभा ने स्थापना काल से लेकर अब तक जो नीति सम्बन्धी आवश्यक निर्णय किए हैं वे सब आर्य जगत् के मार्ग प्रदर्शन के लिए इस पुस्तक में सग्रहीत कर दिए गए हैं। मूल्य)४५ नए पैसे

३—आर्य महासम्मेलन के प्रस्ताव।

इस समय तक आर्य महासम्मेलन के नौ अधिवेशन हो चुके हैं। इस पुस्तक में प्रारम्भ से लेकर आठवे महासम्मेलन तक के निश्चय अंकित हैं। सम्मेलन के स्थान, तिथि, तथा प्रधान आदि के उल्लेख के साथ २ प्रत्येक सम्मेलन के होने केकारणो पर भी प्रकाश डाला गया है। मूल्य ६० नए पैसे

४—आर्य महासम्मेलनों के अध्यक्षीय भाषण—

इस सग्रह में समस्त महासम्मेलनों के अध्यक्षो के भाषण दिए गए हैं। प्रत्येक अध्यक्ष का चित्र तथा जीवन परिचय भी दिया गया है। पुस्तक में लगभग २०० पृष्ठ हैं। मूल्य १) रुपया

५—आर्यसमाज का परिचय—

इस पुस्तक में आर्यसमाज तथा उससे सम्बद्ध आवश्यक सामग्री के साथ २ अनेक अलभ्य चित्र भी दिए गए हैं इस पुस्तक को पढने पर आर्य समाज विषयक कोई जानकारी शेष नही रह जाती। यह भेंट करने योग्य अलभ्य प्रकाशन है। समस्त पुस्तक आर्ट पेपर पर छपी है। मूल्य १) रुपया

६-पाथ आव परफेक्शन (अंग्रेजी)—

यह पुस्तक चरित्र निर्माण में परम सहायक हो सकती है। इसके लेखक हैं सभाके भूतपूर्व प्रधान श्री बा० पूर्णचन्द्र जी एडवोकेट। मूल्य)४० न पै

इन सब प्रकाशनों की छपाई,सफाई गेटअप बडे भव्य और चित्ताकर्षक हैं।

मिलने का पता—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

* ओ३म् *

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

सार्वदेशिक



अमर हुतात्मा श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज
जिनकी बलिदान जयन्ती २३ १२ ६२ को मनाई जायगी ।

ार्षिक मूल्य ६) सृष्टिसम्वत दयानन्दाब्द विदेश से वार्षिक ८) या १२ शि०
वर्ष ३८ १९७२९४९०६३ १३८ दिसम्बर १९६२ (मार्गशीर्ष २०१९) अंक २०

-: विषय सूची :-

❀ सम्पादक
अखिलानन्द सरस्वती सभा मन्त्री

❀ सहायक सम्पादक
रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ प्रकाशक व मुद्रक
रघुनाथप्रसाद पाठक

❀ कार्यालय
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द भवन, नई दिल्ली
फोन २२४७७१

❀ मुद्रक
सार्वदेशिक प्रेस, दरियागंज दिल्ली।

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् ये ग्रामा यदरण्यं याः सभाः, अधिभूम्याम् ।
ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते ॥

अन्वय पदार्थ (अधिभूम्याम, तुझ भूमि पर (ये ग्रामा यत अरण्य या सभा ये सग्रामा समितय) जो गाँव हैं जो जंगल है, जो सभाएं होती है संग्राम होते हैं जो समितियाँ होती हैं (तेषु ते चारू वदेम) उन सबमें हे मातृ भूमि हम तुम्हारे लिए सुन्दर बात हितकी बात बोलें ।

नगर ग्राम में अरण्य बनमें सभा और संग्रामों में
माता तेरे ही गुण गावें, रम्य सवन सा रामो में ।

सम्पादकीय

वीर पूजा

२३ दिसम्बर को हम श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की बलिदान जयन्ती मनायेंगे। उनके चरणों में श्रद्धाञ्जलियाँ प्रस्तुत की जायगी और उनकी भूरि २ प्रशसा की जायगी। यह ठीक भी है।

परन्तु इस सबने स्वामी जी महाराज का क्या सवरता है। इन विषय मे वेद भगवान का आदेश बडे मर्म का है —

ओं का तेजस्वि अरङ्कृति सूक्तः
कदा नूनते मघवन दाषेम।

सूक्तियों, और प्रशसाओं से वीर का न अलकार एव श्रृङ्गार अथवा शोभा ही होती है न किसी प्रकार की सिद्धि। बात तो तब है कि अपना जीवन अर्पण कर दिया जाय उस वीर पुरुष के आदेशों के लिए जीवन लगा दिया जाय उन महान् कार्यों की पूर्ति के लिए जो कार्य वह वीर पुरुष जीवन की चण भगुरता के कारण अधूरा छोड़ गए।

हम मे से कितने हैं जो श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का बलिदान दिवस मनाते हुए उस महान् नेता तथा परम वीर के पद-चिह्नों पर चलने और उनके गुणों को आत्मसात करने का सकल्प लेकर आर्य समाज की आभा को निखारदें और दिग् दिगान्तर में व्याप्त करदें।

आओहम उनके बलिदान दिवस पर कुछ बन दिखाने और कर दिखाने का शिव संकल्प लेकर महाराज का ऋण चुकाते हुए देश, जाति समाज एव ईश्वर के सामने उज्ज्वल मुख हो।

वीर-पूजा उन्नत समाज और उन्नत जाति का चिह्न होती है। हम अपनी वीर-पूजा से यह दिखाते रहें कि हम उन्नत समाज के अङ्ग हैं तभी हमारी वीर-पूजा का दूसरों पर कुछ प्रभाव पड़ सकता है।

रघुनाथ प्रसाद पाठक

सम्पादकीय टिप्पणियाँ

राष्ट्ररक्षा कोष

राष्ट्र रक्षा कोष में न केवल भारत के ही आर्य जन आर्य समाजें और आर्य सस्थाए धन और स्वर्णादि देने में उत्साह दिखा रहे हैं अपितु विदेश के आर्य जन भी मातृ भूमि पर आए संकट के निराकरणार्थ अपने कर्त्तव्य को बडे उत्साह से पूरा कर रहे हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मान्य प्रधान श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी की अपील देश और विदेश के आर्य समाजों में प्रचारित की जा चुकी है। आर्य जनों एव आर्य समाजों को प्रेरणा की गई है कि वे मुक्त हस्त से राष्ट्र रक्षा कोष में अपना पूरा २ योग दें। इस अपील से पूर्व धनादि के समह तथा राष्ट्र रक्षा कोष में भेजने का जो यत्न स्वत आरम्भ हो चुका था उसे सघठित एव वृहद् रूप मिला। सभा ने प्रेरणा की हुई है कि जो भी धन एव स्वर्णादि भेजा जाय उसका पूर्ण विवरण सार्वदेशिक सभा मे अनिवार्य रूप से पहुँचना चाहिए जिससे एक ही स्थान पर सम्पूर्ण रिकार्ड रह सकें। प्रसन्नता है कि ये विवरण द्रुत गति से प्राप्त होरहे जो सार्वदेशिक में प्रकाशित किए जायगे।

आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वीय अफ्रीका और उससे सम्बद्ध आर्य समाजें इस दिशा में बडे

उत्साह से कार्य कर रहे हैं। इन पंक्तियों को लिखते समय तक (अर्थात् ३० नवम्बर तक) वे ६० हजार शिलिंग एवं १०० तोले सोना रक्षा कोष में भेज चुके हैं। ६० हजार शिलिंग का अर्थ हुवा लगभग ४० हजार रुपया। वह समय दूर नहीं जब हम इस राशि के लाखों के परिमाण की सूचना देनेमें समर्थ होंगे। ६० हजार शिलिंग का विवरण इस प्रकार है —

१० सहस्र शिलिंग आर्य समाज नैरोबी
१० ,, ,, आर्य स्त्री समाज नैरोबी
१४ ,, ,, ,, समाज दारासलाम
१२ ,, ,, ,, स्त्री समाज नकुरु
५ ,, ,, ,, समाज टांगा
१ सहस्र शिलिंग आर्य प्रति० सभा पूर्वीय अफ्रीका
८ ,, , आर्य समाज नैरोबी के साप्ताहिक सत्संग में श्री आनन्द स्वामी जी महाराज की अपील पर तथा १०० तोले सोना

देश और विदेश की आर्य जनता इस दिशा में जो यत्न कर रही है वह प्रशंसनीय है और देश एवं समाज के धन्यवाद की पात्र है।

विज्ञानवेत्ताओं के विचार के लिए

विज्ञान के विस्मय जनक आविष्कार मानव-बुद्धि की प्रखरता के सूचक माने जाते हैं और इसमें सन्देह भी नहीं है। मानव को लोक लोकान्तरों में ले जाने का यत्न और उसे सुरक्षित वापस ले आने का कार्य चमत्कार ही कहा जा सकता है। इस चमत्कार को देखकर सामान्य मनुष्य अवाक् रह गया और विज्ञान की इस उन्नति से उसका हृदय हर्षातिरेक से परिपूर्ण हो गया। परन्तु समझदार व्यक्तियों की आशंका में वृद्धि हुई। यह भय है कि यह महती शक्ति न जाने संसार को विनाश के कितने गहरे गर्त में ले जायगी क्योंकि इसका प्रत्यक्ष उद्देश्य आतंक व्याप्त करना और आवश्यक होने पर विनाश की विभीषिका उत्पन्न करना है। शक्ति अपने में बुरी वा भली नहीं होती। इसका बुरा वा भला होना इसके दुरुपयोग और सदुपयोग पर अवलम्बित होता है। इसके दुरुपयोग का भय भी मुंह बाए खड़ा है।

जो व्यक्ति उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उच्च साधनों के प्रयोग के पक्षपाती और जीव-दया से अनुप्राणित हैं उनको इस चमत्कार से जो कौतूहल हुआ उससे प्रकाश की प्राप्ति न हुई। प्रकाश तब प्राप्त होता जब कि इस आविष्कार की अमोघता के परीक्षण के लिए सर्व प्रथम कुत्तों और बन्दरों को अन्तरिक्ष में न भेज कर मानव को भेजा जाता। कुत्तों और बन्दरों को भेजने और उन्हें सुरक्षित ले आने के पश्चात ही मानव को भेजने का साहस हुआ। इस दृष्टि से मानवता से प्रेम करने वाले व्यक्ति के लिए इस चमत्कार का महत्त्व जाता रहता है और वह इस साहस को निम्न कोटि का साहस समझने लग जाता है।

सुप्रसिद्ध भारतीय विज्ञान वेत्ता और नोबल पुरस्कार विजेता श्री डा० सी० वी० रमन ने अपनी प्रतिक्रिया इन शब्दों में व्यक्त की थी —

'This has left me entirely cold It made very little difference to me if it was a man or a monkey One should ask oneself what the real motivation of science is The spirit of science really comes to those who realize that we are all children of Nature, products of Nature Man is one of the myriad marvels that nature has produced The real motivation of science comes with the understanding that this instrument

science should be used to understand nature "

"इन परीक्षणों से मै सन्न रह गया हूँ। अन्तरिक्ष यात्रा पर भेजा गया मानव था या बन्दर इससे कोई अन्तर उपस्थित नहीं होता। व्यक्तियों को अपने से प्रश्न करना चाहिये कि विज्ञान का उद्देश्य क्या है? वस्तुत विज्ञान की भावना उन पर अकित होती है जो यह अनुभव करते हैं कि हम सब प्रकृति के बच्चे हैं। मनुष्य प्रकृति-जन्य सहस्रों चमत्कारों में से एक है। विज्ञान की वास्तविक भावना और उसका वास्तविक उद्देश्य प्रकृति की ऊहापोह है।"

भूतकाल में भी बडे २ साहसिक कार्य और चमत्कारिक आविष्कार हुए। ज्ञान के लिए बलिदान करने की भावना रखने वाले लोग गहरे समुद्रों की तलीमें गए। ऊंचे पहाड़ों की चोटियों पर पहुचे। बर्फीले क्षेत्रों को पार किया और बडे २ महाद्वीपों का पता लगाया। इन नरपुगवों ने अनेक कष्ट सहे, जोखिम उठाए, एकान्तवास किया और यहाँ तक कि मृत्यु का भी आलिंगन किया। उन्होंने मूक प्राणियों के जीवन के साथ खिलवाड़ न की। उन्होंने अपना जो भव्य स्वरूप प्रस्तुत किया उसी के कारण उनके नाम की पूजा हुई और वे आने वाली सन्तति के लिए प्रकाश और प्रेरणा के स्रोत बने। यदि वे भी पहले उन साहसिक कार्यों के कष्टों और खतरों की अनुभूति कराने आगे २ जीवित प्राणियों को भी भेज देते तो क्या उन्हें इतिहास में उच्च स्थान प्राप्त हुआ होता। कदापि नहीं। कुत्ते, चूहे, वा बन्दर को राकेट की नोक पर बिठा कर आकाश में उड़ा देना क्या साहसिक कार्य कहा जा सकता है? इन प्राणियों की खाल के नीचे यन्त्र लगाकर उनकी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करना और उनके हृदयों की धड़कन आदि को अकित करना तो वीरता नहीं है। इस पर वही पुराना सड़ा-गला तर्क उपस्थित कर दिया जाता है कि पशुओं को प्रथम शिकार बना देना श्रेयस्कर है। प्रश्न कर दिया जाता है कि क्या मानव का जीवन पशु के जीवन से अधिक मूल्यवान नहीं है? हम पूछते हैं कि किसके लिए? इस जगत में मनुष्य को ही नहीं प्रत्येक प्राणी को— चाहे वह पशु हो या पक्षी, वा अन्य कोई हो जीवित रहने और अपनी नस्ल को बनाए रखने का अधिकार है। इस अधिकार से वचित कर देना मानवता नहीं है।

रक्तदान का महत्त्व

कष्ट निवारिणी एव जीवन प्रदायिनी शक्ति के रूप में रक्त दान की उपयोगिता और वरिष्ठता से इन्कार नहीं किया जा सकता। यदि उचित मात्रा में, उचित ढग से और उचित समय पर पीड़ितों के शरीर में योग्य चिकित्सकों के द्वारा उचित प्रकार के रक्त का संक्रामण कर दिया जाय तो रोगियों एवं आहतों की पीड़ा के उन्मूलन और जीवन के उद्भव की आशा हो जाती है। यह सब कुछ शल्य चिकित्सा की उन्नति से सम्भव हुआ है।

संसार के इतिहास में फ्रॉस में पहली बार रोगी के शरीर में मानव-रक्त चढ़ाने का सफल प्रयास किया गया था। इस दृष्टि से फ्रान्स रक्त चढ़ाने का आदि केन्द्र कहलाता है। रक्तदानी वृत्ति और उसकी महान् परम्परा को फ्रान्स की राष्ट्रीय सरकार ने राष्ट्रीय कानून बना कर उसे सुरक्षित रखा और उच्च स्थान भी दिया। कानून की दृष्टि से मानव-रक्त या उससे बनाई गई किसी भी औषधि पर मुनाफा कमाने या व्यापार करने पर सर्वथा प्रतिबन्ध है। फ्रान्स सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर जगह २ रक्त चढ़ाने

के केन्द्र खोले। ये केन्द्र देश में बसने वाले लाखों करोड़ों की चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यकताओं को प्रभावशाली रीति से पूरा करते हैं। एक ओर तो इन केन्द्रों को ठीक ढंग से चलाने के लिए तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को ही भार सौंपा जाता है जिनकी योग्यता असन्दिग्ध होती है और दूसरी ओर जन-साधारण को रक्तदान करने और स्वास्थ्य सेवाओं को निरन्तर चालू रखने के लिए प्रेरित किया जाता है।

अब तो यह आन्दोलन संसार व्यापी बन चुका है वा बनता जा रहा है। अधिकांश उन्नत देशों मे रक्त बैंक खुले हुए हैं और ये बैंक उन हस्पतालों से सम्बद्ध हैं जिन्हें मानवतावादी ट्रस्टों और स्वेच्छा से रक्तदान करने वाले व्यक्तियों की सहायता प्राप्त होती है।

भारत में भी इस दिशा में बहुत कुछ हो रहा है। इस पुण्य कार्य को आगे बढाने की आवश्यकता है जिससे हमारे हस्पतालों में रक्त के पर्याप्त भण्डार बन जाए। परन्तु यह तभी सम्भव है जब कि यह जन-साधारण का आन्दोलन बने और लोग स्वेच्छया रक्तदान करने के लिये आगे आयें। युद्ध के समय तो इन भण्डारों की बड़ी आवश्यकता और उपयोगिता रहती है।

भारत धर्म प्रधान देश है। यहाँ दान का सदैव ही बड़ा महात्म्य रहा है। जिन साधनाओं से मानव का आध्यात्मिक विकास होता है उनमे दान मुख्य स्थान रखता है। जो व्यक्ति धन, सम्पत्ति आदि २ का दान करते हैं उन्हें रक्तदान के पुण्य दान को भी अपनाना चाहिए और जो धन सम्पत्ति आदि का दान करने में असमर्थ रहते हैं वे तो अपनी सामर्थ्य और स्वास्थ्य के अनुसार रक्तदान करके अमित पुण्य के भागी बन सकते हैं। यदि हमारे रक्तदान से किसी की पीड़ा दूर हो जाय या प्राण बच जाए तो इससे बढ़ कर हर्षदायक और ऊंचा उठाने वाला और क्या कार्य हो सकता है?

ब्लड बैंक एण्ड रिसर्च इन्स्टीट्यूट की संघठन समिति ने 'रक्तदान' नामक एक मासिक पत्रिका प्रकाशित की है जिसके कार्यालय का पता १६३ पी० ब्लाक (सचिवालय) नई दिल्ली-१ है। इस पत्रिका का उद्देश्य देश में स्वेच्छया रक्तदान आन्दोलन को व्यापक बनाना और विषय से सम्बद्ध आवश्यक प्रामाणिक और उपयोगी सामग्री का प्रचार करना है। पत्रिका का प्रकाशन सामयिक और अत्यन्त उपयोगी है। विषय से सम्बद्ध आवश्यक जानकारी प्राप्त करने का यह बहुत अच्छा साधन है। इसको अपना कर इससे लाभ उठाया जाना चाहिये। इस अभिनव प्रयास के लिए पत्रिका की संचालक समिति एवं सम्पादक मण्डल बधाई के पात्र हैं। १ प्रति का मूल्य ५० नया पैसा और वार्षिक चन्दा ५) है। यह पत्रिका ४ भाषाओं में प्रकाशित की जा रही है।

बधाई

'वेदवाणी' (वाराणसी) के यशस्वी सम्पादक श्रीयुत पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु भारत के उन ५ विद्वानों मे है जिन्हें स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर राष्ट्रपति महोदय की ओर से सम्मान पत्र प्रदान किए गए हैं। पं० जी को संस्कृत के विद्वान के रूप में सम्मानित किया गया है। उन्हें प्रमाण पत्र के अतिरिक्त १५००) वार्षिक आजीवन आर्थिक सहायता भी मिलेगी।

इस सम्मान के लिए श्री जिज्ञासु जी समस्त आर्य जगत के बधाई के पात्र हैं। वस्तुत यह सम्मान एकमात्र श्री जिज्ञासु जी का ही नहीं अपितु समस्त आर्य जगत् का है।

बधाई के पात्र

हंसराज कालेज दिल्ली में १६ नवम्बर को लाजपतराय स्मारक अखिल भारतीय हिन्दी-वाद-विवाद प्रतियोगिता हुई थी जिसमें १० कालेजों के

प्रतिनिधियो ने भाग लिया था। प्रसन्नता है कि गुरुकुल वृन्दावन के ब्रह्मचारी रामनारायण और कृष्णदत्त लाला लाजपतराय चल विजयोपहार के विजेता रहे। ब्र० रामनारायण ने सर्वाधिक अङ्क प्राप्त कर ५०) का प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। उनके भाषण से श्रोतागण बहुत प्रभावित हुए। इस सफलता पर गुरुकुल वृन्दावन के सचालक और ये दोनो ब्रह्मचारी बधाई के पात्र हैं।

प्रतिभा की कमी न कालेजो मे है और न गुरुकुलो मे परन्तु इतना अवश्य है कि गुरुकुलो मे उसके निरन्तर विकासकी प्रेरणाअधिकाधिकमिलती और उपलब्ध रहती है।

श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज की मौरीशस यात्रा

श्रीयुत महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज आर्य सभा मौरीशस के निमन्त्रण पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सम्मानित प्रतिनिधि के रूप में १६ नवम्बर को वायुयान द्वारा मौरिशस पहुँच गये हैं। वहा वे प्रचार कार्य के साथ २ आर्य समाज के कार्य के निरीक्षण और उसकी शक्ति के सघठन का महत्त्वपूर्ण कार्य करेगे। उनके वहा पहुच जाने से निश्चय ही कार्यको अमित प्रगति प्राप्तहोगी और श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज आर्य समाज को वहा जो भव्य रूप और आर्य सभा को एक शक्ति का रूप दे आये थे उसकी आभा मे निरन्तर निखार होगा। श्रीस्वामीजी महाराज आर्यसमाज के एक परखे हुए महारथी और उच्चकोटि के प्रचारक एव सन्यासी हैं जिनका व्यक्तित्व ऊचा और आकर्षक है और प्रवचन बडे मधुर और ऊचा उठाने वाले होते हैं। उनकी वाणी में मधुरता तथा व्यवहार मे शालीनता कूट २ कर भरी है। उनके व्यवहार और योग्यता का जो प्रभाव पडता है वह अमिट होता है। वे जहा रहते हैं वहा अपने हसमुख स्वभाव से फूल बखेरते हुए देख पडते हैं। श्री स्वामी आनन्द सरस्वती जी श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी महाराज की विशेष एव आग्रहपूर्ण प्रेरणा को स्वीकार कर मौरीशस गए इसे हम मौरीशस के आय बन्धुओ का सौभाग्य ही कह सकते हैं।

श्री स्वामी जी दिल्ली से वायुयान द्वारा १३ नवम्बर को प्रात १० बजे के लगभग बम्बई गए थे। बम्बई से १५ को नैरोबी (पू० अ०) गए। वहा ३ दिन ठहर कर १६ को प्रात ६ बजे वायुयान से मौरीशस गए और उसी दिन सायकाल ४ बजे के लगभग पहुँच गए। बम्बई नैरोबी और मौरीशस के हवाई अड्डो पर आर्य नर नारियो ने बहुसख्या म पहुच कर उनका भव्य स्वागत किया। नैरोबी म ३ दिन पयन्त उनके आध्यात्मिक प्रवचन होते रहे जिनमे श्रोताओ की बडी भारी भीड लगी रहती थी।

इन शब्दो के साथ हम श्री स्वामी जी की मौरीशस यात्रा का अभिनन्दन करते हुए कामना करते हैं कि श्री स्वामीजी की यह यात्रा मगलकारी सिद्ध हो और स्वामी जी महाराज अपने मिशन में सफल हो।

विदेश के मान्य आर्य अतिथि

इस मास नवम्बर) आर्य समाज केटोमेनर डरबन (दक्षिण अफ्रीका) के उपप्रधान श्रीयुत रवि महाराज और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती निर्मलादेवी जी तथा आर्य प्रति सभा मौरीशस के उपप्रधान श्री ऐन० सुकनाह भारत भ्रमण के लिए पधारे हैं। देहली मे उनका कई दिन पर्यन्त निवास रहा और सार्वदेशिक सभा के कार्यालय मे उनके दर्शन होते रहे। भारत के जिस २ नगर मे वे लोग पधारेंगे उसकी सूचना सभा के कार्यालय से आर्य समाजो को दे दी गई है। आशा है कि ये महानुभाव अपनी इन यात्राओ की सुखद स्मृतिया अपने साथ ले जायगे। साक्षात् परिचय सम्पर्क और अनुभव की दृष्टि से इन यात्राओ का महत्त्व बहुत बढ जाता है। इन महानुभावो की यात्राओ का वर्णन सार्वदेशिक मे प्रकाशित करने की व्यवस्था की जायगी।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

अमर धर्म वीर का दिव्य सन्देश
और आर्य समाज का दिव्य सन्देश

[श्रीयुत प० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड]

अमर धर्मवीर परम श्रद्धेय स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज की बलिदान जयन्ती दिसम्बर मास की २३ तारीख को पड़ती है जो देशविदेश मे सर्वत्र श्रद्धापूर्वक मनाई जाएगी। आज कौन है जो चीनी आक्रमण तथा पाकिस्तान की दुर्भावना के कारण उत्पन्न सकट काल में उन निर्भयता की मूर्ति वीर शिरोमणि सन्यासीका स्मरण न करे। वे यदि आज होते तो मुझे निश्चयहै कि पाकिस्तान तथा चीन के नीचता तथा विश्वास घात पूर्ण आक्रमण का प्रतिकार करने के लिये समस्त देशवासियो का सर्वोत्तम नेतृत्व करते। वस्तुत उनके निम्न लिखित दिव्य सन्देश की ओर आर्य तथा इतर देशवासियो ने यथोचित ध्यान दिया होता तो पाकिस्तान कभी बन न सकता था। ११ मई सन् १९२५ को आर्य समाज मंगलौर (दक्षिण कर्नाटक—वतमान मैसूर प्रदेश) का वार्षिकोत्सव प्रारम्भ होना था। मैं उन दिनो दक्षिण भारत मे वैदिक धर्म प्रचार का कार्य करता था अत मैं ने परम श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज से आर्यों के लिये सन्देश भेजने की प्राथना की जिसे सहर्ष स्वीकार करते हुए उन्होने निम्न लिखित अत्यन्त महत्वपूर्ण स्फूर्तिदायक सन्देश देहली से भेजने की कृपा की।

'तुम यह मत भूलो कि वैदिक धर्म कोई सम्प्रदाय या पन्थ नही है। यह वह सत्य सनातन धर्म है जिसके बिना ससार की सामाजिक व्यवस्था एक पल भर के लिये भी नही रह सकती। प्राचीन काल में अमस्य आध्यात्मिक कोषो को खोलने वाली चाबी तुम्हारे ही हाथों में दी गई थी और अब भी अशान्त ससार को शान्ति देना तुम्हारा ही काम है किन्तु पहले तुम्हें अपनी सब अपवित्रताओं को धोना होगा। आज गम्भीर भाव से यह प्रतिज्ञा करो कि—

(१) तुम दैनिक पञ्च महायज्ञो के अनुष्ठान में प्रमाद न करोगे (२) तुम अस्वाभाविक जातिभेद के बन्धन को तोड़कर वर्णाश्रम-व्यवस्था को अपने जीवन में परिणत करोगे (३) तुम अपनी मातृभूमि में से अस्पृश्यता के कलक का समूल नाश कर दोगे और ४) तुम आर्य समाज के सार्वभौम मन्दिर का द्वार मत सम्प्रदाय, जाति, रंग आदि के भेद भाव का कुछ भी विचार न करके मनुष्य मात्र के लिये खोल दोगे। परम पुरुष परमात्मा इस गम्भीर प्रतिज्ञा के पालन करने में तुम्हारे सहायक हों।

—तुम्हारा 'धर्म बन्धु' श्रद्धानन्द संन्यासी

इस सन्देश का एक २ वाक्य अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इस में वैदिकधर्म के सच्चे असाम्प्रदायिक सार्वभौम स्वरूप का कितनी अच्छी तरह से निरूपण किया गया है और आर्य समाज की वास्तविक उन्नत्यर्थ अत्यावश्यक ही नहीं, मेरी सम्मति में अनिवार्य प्रतिज्ञाओं का कितना उत्तम निर्देश किया गया है जिनकी ओर म जानता हू कि आर्यों की बहुत बड़ी सख्या का बहुत कम ध्यान है। स्वाध्याय शीलता की न्यूनता के कारण बहुत पर्याप्त सख्या ऐसे आर्य सदस्यो और आर्य समाजों के कई अधिकारियो की भी होगी जिन्हें पञ्च महायज्ञो के नाम भी न आते हो उन के प्रतिदिन करने की तो बात ही पृथक् है। सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के गत वर्ष सर्व सम्मति से निर्वाचित प्रधान के रूप में मैं समस्त आर्य नर-नारियों का ध्यान अमर धर्म वीर स्वा० श्रद्धानन्द जी महाराज के इस दिव्य सन्देश की ओर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझता

हूं और चाहता हू कि श्री श्रद्धानन्द बलिदान जयन्ती के अवसर पर सब आर्य समाजों में इसे पढ कर सुनाया जाए और इस में निर्दिष्ट प्रतिज्ञाओं को सब आर्य नर-नारी गम्भीरता के साथ ग्रहण करे ? आत्म निरीक्षण करके अपनी एतद्विषयक त्रुटियो को दूर कर क सच्चे आर्य जीवन को व्यतीत करने का सब दृढ़ निश्चय करे तो आर्य समाज की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति में मुझे अणुमात्र भी सन्देह नही है। जब मैं देखता हूं कि अमरीका से आये हुए एक सज्जन डा० मार्कस गत ५ वर्षों से प्रतिदिन सन्ध्या हवन करते हैं और जैसे कि उन्होने श्रद्धेय महात्मा प्रभुआश्रित जी की उपस्थिति में गत मास में गुरुकुल कागडी के विद्या सभा भवन मे (जहा वे गत ४ मास से हिन्दी सस्कृत वैदिक धर्मादि विषयक शिक्षा मेरे तथा अन्य योग्यशिक्षको द्वारा प्राप्त कर रहेहैं।) बताया कि सिवाय उस एक दिन के जिस दिन वे न्यूयार्क से बम्बई हवाई जहाज में आये उन्होने एक दिन भी हवन का परित्याग नही किया और अमरीका के अधिकतम फैसनेबल होटलों में भी वे हवन सामग्री कुण्ड साथ ले गये और इसके साथ अपने आर्य समाजों के सदस्यो तथा अधिकारियो की बहुसख्या की तुलना करता हू जिनमें प्रतिदिन हवन करने वाले बहुत कम हैं तो मुझे सचमुच दु ख होता है। डा० मार्कस (जिनका नाम मैंने डा० सुकर्मा रखा हुआ है) को भी यह बात ज्ञात हो चुकी है और उन्हें इस बात का खेद भी है कि आर्य लोग क्यो नही ऐसी बातो को क्रियात्मक रूप देते जिन्हें वे ठीक समझते हैं। वे कहते थे कि कुछ काल और अध्ययन के पश्चात् अपनी प्रचार यात्राओं में आर्य जनता का ध्यान इस ओर आकृष्ट करूगा। नाममात्र को दो चार मिनट सन्ध्या करने वाले चाहे पर्याप्त आर्य हो पर सच्चे अर्थों में महर्षि दयानन्द के आदेशानुसार योगाभ्यास की रीति से सन्ध्या का अनुष्ठान करने वाले कितने हैं ? प्रतिदिन नियमित रूप से वेदों का स्वाध्याय करने वाले जिसे महर्षि दयानन्द ने परम धर्म कहा था करने वाले कितने आर्य हैं ? जातिभेद के बन्धनों को तोड कर शास्त्रोक्त वर्ण आश्रम व्यवस्था को क्रियात्मक रूप देने वालों की सख्या अभी कितनी कम है ? अपने नामो के साथ भल्ला, गाबरा, नारग, सक्सेना आदि जाति-सूचक शब्दों का प्रयोग करना और विवाह शादियो के अवसर पर अपनी जात बिरादरी को देखते रहना क्या आर्यों को शोभा देता है ? इस क्रियात्मक रूप से जाति भेद को प्रोत्साहन देना क्या शुद्धि सगठन दलितोद्धारादि कार्यों में बाधक नही है ? केवल जातपात को तोडना ही पर्याप्त नही है, कितने आर्य हैं जो पौत्र के उत्पन्न होने के पश्चात् वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा लेकर आश्रम मर्यादा का पालन करते हैं ? श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अपने दिव्य सन्देश द्वारा आर्य नर नारियो का ध्यान इस ओर सन् १९२५ में आकृष्ट किया था और आज ३७ वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी हमें उसकी ओर ध्यान दिलाना पडता है क्योंकि उस सन्देश को क्रियात्मक रूप देने वाले अब भी अधिक नहीं हैं। मेरा निश्चित विचार है कि आर्य नर नारी जितनी अधिक सख्या में तर्क के साथ श्रद्धा को मिलाते हुए जिसे परम श्रद्धेय स्वा० श्रद्धानन्द जी वेद भगवान तथा महर्षि व्यास के शब्दो में माता कहा करते थे इस सन्ध्या स्वाध्याय हवनादि पञ्चयज्ञों का अनुष्ठान, अस्वाभाविक कृत्रिम जाति भेद तथा अस्पृश्यता के निवारणादि कार्यों में प्रवृत्त होंगे उतना ही आर्य समाज अधिकाधिक उन्नत होता जाएगा तथा श्रद्धा की न्यूनता के कारण उत्पन्न होने वाले ईर्ष्या जन्य कलहो का अन्त हो जायेगा। तब सब आर्य सच्चे अर्थों में श्रद्धा सम्पन्न सत्य निष्ठ स्वाध्यायशील परोपकारी आर्य बन कर अन्यों को भी सच्चा आर्य बनाने मे सफल हो सकेंगे। मैं समस्त आर्य जनो को श्रद्धेय स्वा० श्रद्धानन्द जी के इस सन्देश को क्रियात्मक रूप देने की पुन प्रेरणा करता हू।

*

ओ३म् क्रतो स्मर। क्लिबे स्मर। कृतं स्मर॥

[महात्मा श्री आनन्द स्वामी सरस्वती जी महाराज]

यजुर्वेद के ४० वे अध्याय के १५वें मन्त्र का यह अन्तिम भाग है। जिसका भावार्थ यह है कि हे कर्मशील जीव! तू ओम् का स्मरण कर। बल प्राप्ति, सामर्थ्य प्राप्ति के लिये स्मरण कर। अपने किये का स्मरण कर। इस मन्त्र के पहले भाग मे यह दर्शाया है कि यह मानव-देह तो भस्म हो जाने वाली है और इस मरणधर्मा शरीर के अन्दर से जो शक्ति निकलती है वह अमर है और अमरत्व को ही प्राप्त होती है। इस मन्त्र पर बहुत से भाष्यकारों ने कुछ भेद से टिप्पणियां लिखी है। श्रीशङ्कराचार्य जी ने इसे अद्वैत मे लगाया है। महीधर ने यह लिखा है कि लिंग शरीर अमृत सूत्र-आत्मा को प्राप्त हो। महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने इस का भावार्थ यह लिखा है —

"मनुष्यों को चाहिये कि जैसी मृत्यु-समय मे चित की वृत्ति होती है और शरीर से आत्मा का पृथक् होना होता है वैसे इस समय भी जानें वर्तमान समय म एक परमेश्वर की ही आज्ञा पालन, उपासना और अपने सामर्थ्य को बढ़ाया करे। किया हुआ कर्म निष्फल नहीं होता। ऐसा मान कर धर्म मे प्रीति और अधर्म में अप्रीति किया करे"।

यजुर्वेद के काण्व पाठ में 'क्लिबे स्मर' शब्द नहीं हैं और दो बार 'क्रतो स्मर' आया है। यह मन्त्र बडे महत्त्व का है। और केवल मृत्यु समय के लिये ही नहीं अपितु जीवन के एक एक क्षण के लिये है। इस मन्त्र का देवता आत्मा है। आत्मा का क्या कर्तव्य है इसी का विधान इस मन्त्र में किया गया है। प्रतिदिन मानव का कर्तव्य है कि आत्मनिरीक्षण करे। मैने अपनी बीती हुई घड़ियों में कैसे कर्म किये हैं और आगे के लिये मुझे क्या करना है। अर्थात अपने 'कृत (Past action) और 'क्रतु' (Future action) दोनों का निर्णय करना है और मृत्यु को हर समय याद रखना है। दुनिया मे जो मनमुटाव, ईर्ष्या-द्वेष, लड़ाई झगडे इत्यादि होते हैं, ये मृत्यु को भूलकर ही होते है। यदि मनुष्य के हृदय मे यह निश्चय हो कि इस शरीर ने तो भस्म हो जाना है तो वह दो बातें नहीं करेगा—(१) समय को नष्ट नहीं करेगा और (२) शरीर की रक्षा के लिये किसी प्रकार का कुकर्म अपराध या पाप नहीं करेगा। मृत्यु याद रहने पर दो बाते सदा होती रहेगी। (१) प्रभु के प्यारे नाम 'ओम्' का निरन्तर स्मरण। (२) अपने आप को दूसरों के लिये लाभकारी बनाने का भरसक प्रयत्न। नारायण कवि ने ठीक कहा है—

दो बातन को भूल मत जो चाहे कल्याण।
नारायण इक मौत को दूजे श्री भगवान्॥

मृत्यु को भूल कर ही विद्वान् होते हुए भी खोटे विचारों से प्रेरित हो कर रावण ने मानवता पर दाग लगाया और बीते हुए लाखों वर्षों का इतिहास यह बतलाता है कि मृत्यु को भूलकर इन्सान शैतान बन गया। संसार मे यदि कोई निश्चित बात है तो वह केवल मृत्यु है और आज के मानव ने इसी को भुला रखा है और इसके साथ ही परमात्मा के पवित्र नाम 'ओम्' को भी भुला रखा है। इस वेद मन्त्र ने इन्हीं दो बातों की ओर मानव का ध्यान आकर्षित किया है, और आज की दुनिया की सारी समस्याओं का समाधान इसी आदर्श के अन्दर है। जिस शरीर के अन्दर बैठकर तू अकड़ रहा है यह

शेष पृष्ठ १२ पर

क्या संसार दुःख का घर है ?

[श्री स्वामी गंगागिरि जी महाराज]

एक जिज्ञासु वर्तमान महात्मा के पास जाकर प्रश्न करता है, महाराज कोई सुख-मार्ग बताओ। आजकल के महात्मा कहते हैं—भाई। आप सुखी रहना चाहते हैं तो इस ससार को छोड़ो, यह तो दु ख का घर है। यदि जिज्ञासु एक प्रश्न महात्मा के पास और कर दे, महात्मा जी। आप ऐसा स्थान बता सकते हैं जहाँ मैं ससार को छोड़ कर चला जाऊँ, परन्तु वहाँ संसार न हो। इन महात्माओं की विचार-शक्ति तो समाप्त है। इनके पास इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं है। आप कहोगे जगलों-वनों में चले जाओ। वहाँ भी ससार आपका पीछा नहीं छोडेगा। मनुष्य नहीं मिलेंगे तो पशु-पक्षी तो अवश्य ही मिलेंगे। वह भी तो ससार ही है। आज कल के महात्मा जो संसार को दु ख का घर कह रहे हैं, क्या संसार सच ही दु ख का घर है ? कहना पडेगा बिलकुल नहीं। ससार तो आनन्द का धाम है। सत् चित् आनन्द स्वरूप परमात्मा की रचना दु ख का घर नहीं हो सकती है। यदि ससार दु ख का घर था तो परमात्मा ने अपने अमृत पुत्रों को दु ख की भट्टियों में क्यों झोंक दिया है। "कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवति"। वेद में लिखा है—

त्व हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूथ।

कौन माता पिता हैं जो अपने पुत्रों को दुःख के गड्ढे में धकेल दें। इस से पता चलता है कि संसार आनन्द का घर था। अपने प्रिय पुत्रों के आनन्द भोग के लिये ही भगवान् ने जीवों के कर्मभोग भोगने के लिये ही संसार की रचना की। वह आनन्द का मार्ग संसार के मनुष्य के हाथ से छूट गया है। आपका प्रश्न होगा वह मार्ग कौन सा था, जो संसारी मनुष्यों ने छोड़ दिया ? जिस से ससार दु खी हो रहा है। वह था वेद का मार्ग जो सृष्टि के आरम्भ में ही परमात्मा ने विधान किया था।

आज सब ससार के विद्वान् इस बात को मान रहे हैं कि विश्व के पुस्तक भण्डार में सबसे पुरानी पुस्तक ऋग्वेद है। भगवान् वेद में मानवता का उपदेश देते हैं। ससार में मनुष्यता के आये बिना शान्ति न होगी। आज कल ससार के लोग धनी होते हुये भी अशान्त हैं।

"करतूत पशु की मानस जात' शरीर से मनुष्य हैं, परन्तु कर्मों से पशुओं से भी गिरे हुए हैं। ऋग्वेद के १०। ५३। ६ मे भगवान् मनुष्यता का प्रथम साधन बताते हुए उपदेश करते हैं—

"तन्तु' तन्वन् रजसो भानुमन्विहि"

तुम मनुष्य बनना चाहते हो तो इस मार्ग पर चलो अर्थात् ससार का ताना बाना तनते हुए प्रकाश को हर समय अपने सम्मुख रक्खो। वेद ने इस में दो बातों का उपदेश दिया है। प्रथम तो यह है कि ससार में तुझे लाया हूँ-पुरुषार्थ करता हुआ अपने जीवन को व्यतीत कर। ऋग्वेद घोषणा करता है—

"न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवः।" जितने काल तक पुरुषार्थ करता हुआ मनुष्य थक नहीं जाता भगवान् उसकी सहायता नहीं करता है। उदाहरण से इसे समझें-बालक, माता को दूर खड़ी देखता है घुटनों से चल कर माता के चरणों में हाथ रखता है। माता की छाती, जिसमें दूध-भरा स्तन है बच्चे की शक्ति से बाहिर है, टकटकी बाँध माता की ओर देख रहा है। कौन ऐसी

निर्दयी माता है, जो अपने बालक का परिश्रम देख कर उसको अपनी गोद में न ले। ठीक इसी प्रकार परमात्मा भी संसार में पुरुषार्थ को करने से थके हुए मनुष्य के सहायक होते हैं। आलसी नर जो हाथ पर हाथ रक्खे बैठा रहता है, उस की ओर भगवान् ध्यान नहीं देते। आलस्य के वशीभूत हो कर भारत वासियों ने सारी उन्नति का नाश कर दिया।

अजगर करे ना चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये, सबका दाता राम॥

ऐसी शिक्षाओं ने भारतवासियों का नाश किया है। पाठकगण! मनुष्य जन्म तो मिला ही इसलिये है कि प्रकाश को सम्मुख रखकर न्याय पूर्वक पुरुषार्थ करे। उस प्रकाशरूप परमात्मा को संसार के भोगों में पड़ न भूलना ही वेदोपदेश है। रजसो भानुमन्विहि' आज कल जो संसार में दु:ख अशान्ति फैल रही है, उसका कारण एक ही प्रतीत होता है। मनुष्य परमात्मा को भूल चुके हैं। नास्तिकपन बढ़ गया है। इसी बात को सन्तों ने कहा है-"परमेश्वर से भुलियां व्यापे सबही रोग"। इसका मतलब यह है कि लोग ईश्वर को भूलकर ससार के भोगों में पड़ गये हैं जिससे अनेक प्रकार के रोग प्रजा में फैल रहे हैं।

वेद के अगले उपदेश की ओर भी पाठकों का ध्यान होना चाहिये।

'ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धियः कृतान्"।

अर्थात् परमात्मा रूपी प्रकाश के मार्गों की रक्षा करो जो विद्वानों ने बुद्धि के द्वारा निश्चित किये हुए हैं। अर्थात् वेद और ऋषिकृत शास्त्रों की रक्षा करो। ऋषि दयानन्द जी को दृष्टान्त के रूप में सामने रख सकता हू, जिन्होंने वेद और ऋषिकृत ग्रथों के प्रचार का मार्ग मनुष्यता के लिये संसार के सम्मुख रखा है। यह महाराज का सबसे बड़ा उपकार है, ऋषिकृत पुस्तक ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, सत्यार्थप्रकाश आदि प्रकाश का मार्ग बताने वाले हैं। इनका स्वाध्याय करना, वेदों का पढ़ना पढ़ाना मनुष्यों का कर्त्तव्य होना चाहिये। यह मनुष्यता तथा आस्तिकता लाने का दूसरा साधन है। वेद तीसरा साधन बताता है,— 'अनुल्बणं वयत जोगुवामपः"—ससार में रहते हुये जो कर्म करो, वह उलझन रहित हो। क्या आज कल मनुष्य जो कर्म कर रहे हैं, वह उलझन डालने वाले नहीं हैं? एक एक कर्म में कई कई उलझनें डाली जाती हैं।

जे जन्मे कलि काल कराला।
कर्त्तब वायस भेष मराला॥
चलैं कुपन्थ वेद मग छोड़े।
कपट कलेवर कलिमल मोड़े॥

इसका भाव यह है कि वह समय बहुत बुरा होता है, जिस समय मनुष्य के कर्म तो कौओं जैसे होते हैं, वेष रहन सहन हंसों का होता है। वह समय आज का है। जिधर देखो बोल-चाल-कर्म तो असभ्यों के कर रहे हैं, और रहन सहन सभ्यों का बनाया हुआ है। वेद के बताये हुए सीधे और सरल मार्ग को छोड़ कर कुमार्ग-गामी हो गये हैं छल और कपट से अपने व्यवहार को चला रहे हैं। अगर किसी को कहा जावे, जो मार्ग वेद और शास्त्र ने बताया है उस पर चलो। तो उत्तर मिलता है, यदि हम शास्त्रानुकूल मार्ग पर चलें तो भूमि पर पैर रखने को भी स्थान न मिलेगा। माई मेरे! वेद और शास्त्र का मार्ग ऐसा है, जिससे जमीन पर पैर रखने को स्थान न मिले? वेद मार्ग तो बड़ा ही सीधा था। उपनिषद् का कहना है—

यन्मनसा मनुते तद् वाचा वदति, यद्

(पृष्ठ ६ का शेष)

जल की चन्द बूंदों से बना और अन्त में राख की मुट्ठी होने वाला है। जो थोड़ा समय मिला है इसका सदुपयोग कर ले।

दो दिन की ज़िन्दगी पै
न इतना उछल के चल।
दुनिया है चल चलाव का
रास्ता संभल के चल॥

वैज्ञानिकों का उल्टे मार्ग पर चले जाना, विद्वानों का परस्पर संघर्ष करना, सुनहरी रुपहली ठीकरियों के लिये लड़ना, अपने स्वार्थ के लिये भाई का भाई से जुदा हो जाना, परिवारों में कलह क्लेश का बढ़ जाना, सहानुभूति, प्रेम, प्यार, मुहब्बत का उड़ जाना आज चहु ओर देखा जा रहा है और इसका सबसे बड़ा कारण मृत्यु और भगवान् को भूल जाना है। कबीर जी ने ठीक कहा है कि —

पाव पलक की सुध नहीं
करे काल्ह का साज।
काल अचानक मारसी
ज्यों तीतर को बाज॥

यह मन्त्र पहली बात यही सिखाता है कि इस शरीर मे सदा के लिये नहीं रहना। यह तो केवल एक साधन मिला है प्यारे प्रभु के दर्शन पाने के लिये और पूर्व जन्मों के किये हुए कर्मों का फल भोगने के लिये तथा अपवर्ग के लिये। दूसरे इसका साधन यह बतलाया है कि परमात्मा के पवित्र नाम का स्मरण और उसकी आज्ञाओं का पालन करो। प्रभु आज्ञा का पालन करते हुए जीवन बिताएंगे तो मृत्यु सुखप्रद प्रतीत होगी। इस जीवन में यत्न करते हुए भी यदि सफलता नहीं मिली तो भी मृत्यु बुरी प्रतीत नहीं होगी। बतलाया जाता है कि श्री पंडित गुरुदत्त जी का जब अन्तिम समय आ पहुंचा तो वे बडे प्रसन्नचित्त थे। लोगों ने पूछा कि आप इतने प्रसन्नचित्त क्यों हैं? तब पंडित गुरुदत्त जी ने कहा, 'इस देह में दयानन्द न हो सके थे, इस से उत्तम देह पायेंगे तो दयानन्द बनेंगे।" और वेद ही यह विधि बताता है कि दयानन्द बनने का ढंग क्या है? और उसका निर्देश इसी मन्त्र मे है। अपने पिछले किये हुए कर्मों को याद करो। आगे के लिये कर्म करने का निश्चय करो। शक्ति और सामर्थ्य बढाने का यत्न करो। परमात्मा के पवित्र नाम 'ओ३म्' और उसकी आज्ञाओं का पालन करो।

वाचा वदति तत् कर्मणा करोति, यत् कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते॥

इसका भाव यह है—मनुष्य! जो मन में हो वह ही वाणी में आना चाहिए, जो तेरी वाणी में आये वही तेरे कर्म में आवे, यह कल्याण का मार्ग है। मनुष्यता का सरल और सीधा मार्ग है। चौथा साधन वेद ने यह बताया है—"मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्। मन्त्र का भाव यह है कि—मनुष्य बनो अपने दिव्य भावों से पवित्र आचरण से संसारी मनुष्यों में दिव्य भावों की रचना करो।—

श्री महर्षि के कार्य की पूर्ति

श्रीयुत डा० मुन्शीराम जी शर्मा
एम० ए० डी० लिट्०

आर्य समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द ने कतिपय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की थी। उन्होंने अपनी दिव्य-दृष्टि से वेदों में निहित सनातन सत्य के दर्शन किये थे। वेद में उन्हें ऐसे त्रिकालाबाधित शाश्वत सिद्धान्त दृष्टि गोचर हुए जो मानवता का कल्याण कर सकते हैं। वेद के अतिरिक्त अन्य सभी ग्रन्थ उन्हें परत: प्रमाण जान पड़े। मानव बुद्धि से प्रसूत होने के कारण इन ग्रन्थों में वह व्यापक एव निर्भ्रान्त ज्ञान ही नहीं था, जो सभी देशों और सभी कालों के लिए समान हितकारी होता है। अत महर्षि ने वेदों को सर्वोपरि स्थान दिया और स्वत प्रमाण माना।

वेदों के सम्बन्ध में जो धारणा महर्षि की है, वही प्राचीन ऋषि-महर्षियों की भी है। हमारा प्राचीन वाङ्मय इसी तथ्य की पुष्टि करता है। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदाग, दर्शन सभी वेद को ज्ञान के क्षेत्र में मूर्धन्य स्थान देते हैं और अपने कथन की मान्यता के लिए वेद का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इति श्रुति, इति आम्नायम्, अनन्ता वै वेदा, वेदोऽखिलो धर्ममूलम, सर्वं वेदात् प्रसिद्ध्यति आदि अनेक वाक्य वेदों की प्रामाणिकता का उच्चस्वर से उद्घोष करते हैं। सबका अभिमत वेद के सम्बन्ध में यही है—"अथ वै सर्व विद्या।" वेद सब विद्याओं का स्थान है।

वेद के लिए वेद, मत्र श्रुति, छन्द, आगम, निगम, कई शब्दों का प्रयोग हुआ है जिनसे वेद की विशिष्टता पर प्रकाश पड़ता है। वेद का अर्थ ज्ञान है। वेद उपलब्धि को भी कहते हैं। जो हमें हमारी अन्तिम उपलब्धि बतलाता है और वहाँ तक ले जाता है, वह वेद है। मन्त्र हमारे मनन का त्राण करता है। उससे हमारे ज्ञान की रक्षा होती है। वह हमें सच्ची मन्त्रणा देकर सत्पथ का अनुगामी बनाता है। अग्नि, वायु, आदित्य और अगिरा ने मन्त्रों का दर्शन किया था। उनसे सुनकर अन्य ऋषियों ने वेदों को प्राप्त किया।

अत वेद की सज्ञा श्रुति पड़ गई। जिन ऋषियों ने वेद मन्त्रों के अर्थ को देखा, समझा, वे भी इस दर्शन के कारण ऋषि कहलाये। ऋषि का अर्थ ही है द्रष्टा। छन्द एकान्त आनन्द है। छन्द मन्त्र या ज्ञान को चारों ओर से आच्छादित करके सुरक्षित रखता है। अत गायत्री, त्रिष्टुप, जगती आदि की भी छन्दसज्ञा है। वेद में जब ऋक, यजु, तथा साम के साथ छन्द शब्द आता है, तब उसका अर्थ अथर्व वेद होता है।

ऋक, स्तुति है, वाणी की पवित्रता है, मन की शुद्धि है, साम भाव है, प्राण की पवित्रता है और अथर्व अविचलित अवस्था है, आत्म शक्ति का विकास अथवा आत्म प्राप्ति है—यह क्रम चेतनता के सभी स्तरों से निकल कर चेतनता के केन्द्र आत्म तत्व तक साधक को ले जाता है। आत्म प्राप्ति ही हम सबका गन्तव्य है। यही एकान्त, अखण्ड आनन्द की अवस्था है।

आगम ज्ञानियों की अविच्छिन्न परम्परा से प्राप्त ज्ञान-राशि है। यह ज्ञान-राशि वेद है। वेद के आधार पर लिखे गये दर्शन शास्त्र भी आगम कहे जाते हैं। शैवागम, वैखानसआगम आदि की सज्ञा भी आगम है, पर मूल ज्ञान का भण्डार और स्रोत वेद ही है। निगम नाम वेद के लिए इस हेतु पड़ा कि वह निश्चित ज्ञान है,

सत्य ज्ञान है। अन्य मन्त्र निश्चित ज्ञान नहीं देते, इसके विपरीत वे मानवों को भटका भी देते हैं, भ्रम में डाल देते हैं। अत: निश्चित ज्ञान कराने वाले वेद ही निगम हैं। मानवी उन्नति के तत्वों का, उपदेशों का समुदाय जहां पर है उसे आम्नाय कहते हैं। वेद से बढ़कर ये तत्व उसे आम्नाय कहते हैं। वेद से बढ़कर ये तत्व अन्यत्र कहीं भी नहीं हैं। अत वेद आम्नाय कहलाता है। एफ मैक्समूलर वेदों से बहुत प्रभावित था। वह अपने ग्रन्थ-भारत—यह हमें क्या सिखा सकता है?

(India what can it teach us) के पृष्ठ ११३ पर लिखता है —

'There is no literary relic more full of lessons to the true onthropologist, to the true student of man kind than the Rigveda" ऋग्वेद के अतिरिक्त मानवता के सच्चे विद्यार्थी के लिए उपदेशों से परिपूर्ण अन्य कोई भी साहित्यिक निधि नहीं है। इसके पूर्व पृष्ठ ११२ पर उसके निम्नांकित शब्द भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं.— "I maintain that for a study of man- there is nothing in the world equal in importance with the Veda I maintain that to every body who cares for himself for his ancestors' for his history or for his intellectual development a study of vedic literature is indispensable'

मैं मानता हूं कि मानव-अध्ययन के लिए संसार में वेद के सदृश महत्ववाला कोई भी ग्रन्थ नहीं है। मैं मानता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए जिसे अपनी, अपने पूर्वजों की, अपने इतिहास की अथवा अपने बौद्धिक विकास की चिंता है वैदिक वाङ्मय का अध्ययन अनिवार्य रूप से अपेक्षित है।

चीनी यात्री इत्सिंग ६७३ से ६९५ ई० तक भारतवर्ष में रहा। नालन्दा विश्वविद्यालय में उसने शिक्षा प्राप्त की। उसने अपनी आँखों से ऐसे देवतुल्य पुरुषों को देखा था जिन्हें वेद कंठाग्र थे।

वेद महर्षि दयानन्द की दृष्टिमें निखिल ज्ञान के स्रोत हैं। वेद सृष्टि के प्रारम्भ में प्रभु के निःश्वास रूप में प्राप्त प्रवचन है—ऐसा सायण का अभिमत है। परम तार्किक, उद्भट वेदान्ती तथा अद्वैत वाद के प्रबल प्रचारक आचार्य शंकर वेदांत के शारीरिक भाष्य में अनेक युक्तियों एवं प्रमाणों से वेद की नित्यता सिद्ध करते हैं। वे भी वेद को प्रभु की वाणी ही मानते हैं। क्या धर्म, क्या विधान, क्या संस्कार, क्या नीति सभी क्षेत्रों में वेद भारतीयों के लिए सर्वोच्च प्रमाण है।

इन वेदों के लिए हम क्या कर रहे हैं? महर्षि ने नियम बनाया था वेद का पढ़ना-पढ़ाना सुनना और सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। क्या हम वेदों को पढ़ते हैं ? क्या हम उस पढ़े हुए पर मनन करते हैं? क्या वेदों में हमें वस्तुत वैसी ही श्रद्धा है जैसी महर्षि की थी? क्या हम महर्षि की नाना कार्यदिशाओं में से इस एक दिशा में अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हैं? क्या महर्षि के कार्य की पूर्ति में हमारे तन मन धन का उपयोग हो रहा है? इन प्रश्नों का उत्तर हममें से हर एक को देना है।

प्राणि जगत् और विकासवाद

(आचार्य श्री उदयवीरजी शास्त्री, गाजियाबाद)

[३]

प्राणी के प्रादुर्भाव पर आधुनिक विचार--

आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं का विचार है, कि एक कोश वाले देह के धीरे-धीरे विलक्षण विकास के परिणाम स्वरूप अनेकानेक कोशयुक्त देहों का प्रादुर्भाव आदि काल में होता रहा है। इस प्रकार एक ही मूल से विभिन्न शाखा-प्रशाखा फूट चलीं, जो अब अनेक वर्गों के रूप में पाई जाती हैं।

पहले प्राणी जलीय हुए, अवसर पाकर वे आहार की तलाश में स्थल की ओर छिटकने लगे, इस भावना ने जल स्थल उभय निवासी प्राणियों को जन्म दिया। आवास और आहार की विविधता एवं सुविधा से आकृष्ट प्राणी स्थल निवास की ओर झुका, इस प्रकार हवा में सास लेने वाले फुप्फुस युक्त प्राणियों का प्रादुर्भाव होने लगा, ऊंचे वृक्षों पर लगे फलों की तथा खुले आसमान में विहार व रक्षा की भावना ने परों वाले प्राणियों को जन्म दिया। धीरे २ आहार और रक्षा की खोज में प्राणी स्थल से दूर तक जाने लगा, आवश्यकतानुसार जल की इच्छा उधर पूरी होने लगी, तब नखी शृंगी प्राणियों की श्रेणियाँ प्रादुर्भाव में आई, अब ये देह में अपेक्षाकृत भारी होने लगी थीं, तब वृक्षों पर लटकते फलों ने किन्हीं को आरोही शक्ति से सम्पन्न किया, कोई खुले जंगली मैदानों में अन्य प्राणियों को आहार बना सकने की भावना से शक्ति संचय करने लगे।

इस प्रकार धीरे २ पशुओं की अनेक श्रेणियां प्रादुर्भाव में आई। जो बन चुकी थी, प्रजनन व्यवस्था के अनुसार चलती रहीं, नई और प्रादुर्भूत होती रहीं। इन्हीं में से एक श्रेणी में—जो वृक्ष निवास और फलाहार में रुचि रखती थी—धीरे २ मस्तिष्क का विकास होने लगा, यह मानव के प्रादुर्भाव का प्रथम स्तर था। सम्भवत लाखों वर्षों के विकास क्रम से मानव देह के रूप में प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ। ऐसे सकेत पाये गये हैं, जिनसे यह प्रतीत होता है, कि प्राणी वर्ग की अनेक श्रेणियाँ नष्ट हो चुकी हैं।

प्राणी का प्रादुर्भाव और अवतारवाद

प्राणि जगत् के प्रादुर्भाव की यह कल्पना बड़ी रोचक है। आज का तथाकथित बुद्धिजीवी मानव इस पर मुग्ध है। प्राणि जगत् के प्रादुर्भाव की इस विकास मूलक प्रक्रिया से अभिभूत होकर वर्त्तमान काल के कतिपय विद्वानों ने पौराणिक अवतारवाद की स्थिति को इसके साथ सन्तुलन करने का चमत्कार पूर्ण प्रयास किया है। उनका विचार है कि अवतार वाद की यह स्थिति प्राणि जगत् के क्रमिक विकासकी ओर संकेत करती है।

सर्व प्रथम अवतार मत्स्य है, जो जलीय प्राणी के रूप में हमारे सन्मुख आता है। आधुनिक प्रक्रिया में भी एक कोशयुक्त प्राणी का सर्व प्रथम प्रादुर्भाव जलीय सम्पर्क में स्वीकार किया गया है। इसके अनन्तर कूर्म अवतार है, जिसके जीवन का सम्बन्ध जल और स्थल दोनों के साथ समान है। अनन्तर वराह अवतार आता है, जो जलप्रिय होता हुआ स्थल को अपना अधिक आश्रय बनाता है। यहां तक यह विकास अभी तिर्यक् योनि में सीमित है। इसके अनन्तर नृसिंह अवतार है, जहाँ पशु अर्थात् तिर्यक् शक्ति की अन्तिम सीमा है, तथा मानव

के विकास की पूर्वाशा द्योतित की गई है। तब वामन अवतार के रूप में लघुकाय मानव उभर आता है।

इसके अनन्तर तीन अवतार मानव की क्रमिक पूर्णता की ओर संकेत करते हैं। वे हैं— परशुराम, दाशरथि राम तथा कृष्ण। परशुराम ब्राह्मण होकर हथियार उठाता है अपनी माता का वध करता है, यह स्थिति मानव समाज की प्राथमिक अव्यवस्था पूर्ण दशा का द्योतन करती है, इसके विपरीत अगला दाशरथि राम का अवतार अपने माता-पिता के आदेश को शिरोधार्य कर राज्य सिंहासन को त्याग जंगल चला जाता है। यह क्रमिक सामाजिक विकास के रूप में अधिक व्यवस्थित सामाजिक संघटन को प्रकट करता है। अभी तक यह अवतार मानव की पूर्ण कलाओं से सम्पन्न नहीं है, राम को द्वादश कला सम्पन्न अवतार माना जाता है। इसके अनन्तर पूर्ण षोडश कला सम्पन्न अवतार कृष्ण है। यह पूर्णता मानव की बाह्य रचना को लक्षित करती है। अभी मानसिक अथवा भावात्मक विकास के प्रशस्त मार्ग को तय करना बाकी पड़ा है। उसके लिए नौवाँ अवतार बुद्ध हमारे सामने आता है, जो मानव के त्याग संयम और ज्ञान का प्रतीक है। यहां तक प्राणि जगत् के कायिक और बौद्धिक विकास को उसकी पूर्ण अवस्था तक पहुंचा दिया गया है।

दशवां अवतार

पौराणिक दृष्टि से अभी अन्तिम दसवां अवतार भविष्य में होने को है। भविष्य के विषय में कहना साहस मात्र है। जिन्होंने कहा, वे दूरदर्शी ज्ञाता हो सकते हैं, पर उन्होंने अपनी मनोभावनाओं को कहीं इतने स्पष्ट रूप में प्रकट नहीं किया, जो किसी बुद्धिजीवी की विचार-कोटि में आ सकें। सम्भवत इसी कारण आज अनेक समुदाय अपने आधुनिक नेताओं को बड़ी चमत्कार पूर्ण रीति पर दशवें अवतार बतलाने का प्रयत्न करते देखे सुने जाते हैं, चाहे वे पुराण की अन्य किसी एक बात पर भी विश्वास न करते हों।

यह एक बड़ी अद्भुत बात है कि दशवें अवतार का नाम 'निष्कलंक' है। उसका एक दूसरा रूप 'कल्कि' भी पढ़ने सुनने में आता है, पर अभी इस पद के वास्तविक अर्थ की टोह करना अपेक्षित है। पहले नाम के आधार पर एक कल्पना मस्तिष्क में उभर रही है, आधुनिक योगीराज श्री अरविन्द बाबू ने अपने यौगिक अनुभवों के आधार पर एक 'अतिमानव' स्थिति का उद्गोद्‌बलन किया है। क्या पुराण के दशवें अवतार की स्थिति का उस 'अतिमानव' अवस्था को बतलाने की ओर संकेत माना जा सकता है? सम्भवत वह अवस्था 'निष्कलंक' तो अवश्य होगी। मानव के साथ दोष या कलंक का रहना स्वाभाविक है। इस प्रकार यह अवतारवाद की कल्पना प्राणी की अति प्रारम्भिक अवस्था से लेकर 'अतिमानव' अवस्था तक के विकास को प्रकट करती है।

अवतारवाद प्राणी सर्ग की क्रमिकता का अनिश्चायक

प्राणी के प्रादुर्भाव की विकासमूलक कथा का पौराणिक अवतारवाद के साथ सन्तुलन निस्सन्देह बड़ा रोचक प्रतीत होता है, इसके अनुसार अन्य अनेक प्रकार की कल्पनाओं की उड़ान भरी जा सकती है, पर ये सब हैं कल्पना मानव मस्तिष्क का केवल बालसम क्रीड़ा क्षेत्र। सम्भवत पुराण के विद्वान्—जिन्होंने इस सन्तुलन की रूप रेखा को प्रस्तुत किया है— सन्तुलन की चकाचौंध में अवतारवाद की वास्तविक स्थिति की ओर दृष्टिपात नहीं कर सके। अवतारवाद अभी एक रहस्य है, अनेक दिशाओं से इसके स्पष्टीकरण की अपेक्षा है। कौन सा

अवतार किस निमित्त से हुआ है, इस बात को ठीक समझ कर तात्कालिक स्थितियों से उसका सामंजस्य स्थापित करना अपेक्षित है। प्राणि सर्ग के विकास को अवतारवाद के रूप में प्रस्तुत करने के कारणों को जाचना होगा। इस विषय में पुराणकारों की क्या यही सच्ची भावना रही होगी? इसकी परीक्षा करनी होगी, अन्यथा यह सन्तुलन केवल हमारी कल्पना माना जायगा, पुराण की भावना नहीं।

इसके अतिरिक्त अवतारवाद की उन गहरी जड़ों तक भी हमें पहुँचना होगा, जहाँ से उभार कर इसे वर्त्तमान रूप दिया गया है, और इस वर्त्तमान रूप दिये जाने के काल की तथा उस समय के सामाजिक विचारों की भी जानकारी प्राप्त करनी होगी। अन्य भी अनेक ग्रन्थियाँ हैं जिनका सुलझा लेना अवतारवाद के रहस्य को समझ लेने के लिए आवश्यक है। इसलिए इस बाद की रहस्य पूर्ण स्थिति में प्राणि सर्ग के क्रमिक विकास की दृष्टि से इनके सन्तुलन के प्रति हम अपनी आस्था प्रकट करने में असमर्थ हैं। यह भी कहना अनुपयुक्त न होगा, कि वर्त्तमान रूप में अवतारवाद की कल्पना कल की बात है, जिस काल में प्रथम अवतार के अवतीर्ण होने की कल्पना की गई है, उससे भी लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व से मानव की तथा अन्य प्राणियों की विद्यमानता बराबर चली आ रही है। फलत वर्त्तमान अवतारवाद में प्राणि सृष्टि के क्रमिक विकास की गन्ध सूघने का प्रयास व्यर्थ है।

अवतार विषयक अन्य विवेचनाओं के विस्तार का यह अवसर नहीं है। फिर भी यह ध्यान रखने की बात है कि अतीत अवतारों में नौवाँ नाम भगवान् बुद्ध का है। अवतारों की संख्या में पुराणों द्वारा वृद्धि भी की गई है। सब मिलाकर यह संख्या चौबीस तक पहुची है। यदि इस बात की गवेषणा की जाय कि यह चौबीस संख्या कब तक प्रादुर्भूत होने वाले अवतारों का संकलन करती हैं, तो सम्भवत जैन धर्म के तीर्थङ्करों की चौबीस संख्या के साथ इसकी आश्चर्यजनक समता पर हम कुछ प्रकाश पा सकेंगे और इस बात का पर्याप्त सीमा तक निर्धारण किया जा सकेगा कि अवतारवाद की कल्पना किस काल में प्रसूत हुई, तथा इसके आधार क्या थे। दस अवतारों में भगवान् बुद्ध की गणना किया जाना उस मान्यता पर स्पष्ट प्रकाश डालता है। ऐसी स्थिति में प्राणी के विकास मूलक क्रमिक प्रादुर्भाव के साथ अवतारवाद की तुलना के व्यामोह में पड़ने से पूर्व इस विषय पर पर्याप्त विवेचना करना अपेक्षित है।

आधुनिक विकासवाद की मान्यताएं

कतिपय ऐसी मान्यताए है, जिनपर आधुनिक विकासवाद आधारित है। साधारणरूप में उसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। विशेष विवेचना के लिये उन मान्यताओं को अपने-रूप में प्रस्तुत कर देना उपयुक्त होगा।

(क)—प्रारम्भ में पृथिवी एक गैस [प्रज्वलित वायु] या अग्नि का पुञ्ज थी। धीरे-धीरे वह कठोर और ठण्ढी हुई। फलत उसका ऊपरी भाग ऊचा-नीचा तथा कठोर होगया। किन्हीं प्राकृतिक कारणों से उस पर वायु एव जल का प्रादुर्भाव हुआ। तबतक पृथिवी का ऊपरी भाग परतहीन ठोस चट्टानों के रूप मे अतिकठोर था। ताप तथा वायु आदि के प्रभाव से वे चट्टानें धीरे धीरे तिड़कीं फटी-टूटी, और तब क्रमश कालान्तर में जाकर मिट्टी के रूप में परिणत हुई।

(ख)—प्राणी अथवा जीवन तत्त्व का प्रथम आविर्भाव जलों के रूप में उद्भिज के रूप में हुआ। पहले जल वायु मट्टी आदि के संसर्ग से एक प्रकार की सूक्ष्म काई बनी, उसी से पुनः जल

वायु का विलक्षण प्रभाव प्राप्त कर समस्त जलीय तथा पृथ्वी के तृण, वीरुध, लता, गुल्म, ओषधि, वनस्पति तथा विविध वृक्ष आदि का क्रमश विकास हुआ।

(ग)—कालान्तर में इसी मूल जीव-बीज से सर्वप्रथम जल में ही एक दूसरी जीवनशाखा चली। यह आरम्भ में अमीबा [Ameeba एक सेल का जन्तु] की भाँति के सूक्ष्म जलजन्तु हुए। धीरे-धीरे जलीय कीट मछली, मेंढक, कछुवा, वराह, रीछ, बन्दर, बनमानुष आदि विभिन्न प्राणिस्तरों को पार करता तथा विकसित होता हुआ मनुष्य बना है। उस आदि कालीन एक कोश के प्राणी से मनुष्य तक पहुचने के लिये मध्य में जीवन के सैकड़ों स्तर पार किये गये, सम्भवत लाखों करोड़ों वर्षों में मनुष्य इस रूप में आया।

आधुनिक खोजी अध्यवसायशील व्यक्तियों द्वारा मूल एक-कोशीय प्राणी से मनुष्य तक की शृङ्खला के बहुत से अस्थिपञ्जर अवशेष ढूंढ निकाले गये हैं, जहाँ यह शृङ्खला नहीं मिली, वहाँ मध्यवर्ती ढाचों के प्राणी नष्ट होगये मान लिये गये हैं। उनके कंकाल भी आज तक कोई उपलब्ध नहीं हैं।

जीवन विकास के कारण—

आद्य कालिक प्राणिरचना को क्रमिक विकास सिद्धान्त के आधार पर मानने वाले विद्वानों ने इस बात पर विचार किया है, कि एकमात्र मूल से अनेक शाखा-प्रशाखाओंमें बटकर विभिन्न योनियों के रूप में जीवन कैसे पहुच जाता है। उनका कहना है, कि प्राणी की इच्छा और उसकी आवश्यकता ऐसी स्थितियाँ हैं, जो उसके विकास एवं परिवर्तन का विशेष कारण होती हैं। भोजन के लिये प्रयत्न तथा प्राकृतिक संघर्षों एवं शत्रुओं से रक्षा के लिये प्राणी को अनेक परिवर्तनों में से होकर गुजरना पड़ता है। उनमें जो अपने को प्रकृति के अनुकूल बनाने में सफल होसके, वे बचे रहे, जो उन संघर्षों में अपने को परिवर्त्तित न कर सके, एवं जीवन की रक्षा में असफल रहे वे नष्ट होगये। इन्हीं कारणों से शरीरों में धीरे-धीरे परिवर्त्तन होता रहा, और विभिन्न योनियों के रूप में प्राणी बटगया।

उदाहरण के लिये देखिये-पानी का समुद्र था, नदियां थीं, छोटे छोटे सागर थे, इस जल के तटभागों में भूप्रदेश घने जगलों से घिरे थे। वायु के तीव्र झोंकों से वृक्षों की शाखा टूटतीं और पानी में गिर जातीं, वह इधर उधर बहतीं और तैरतीं। उनके गलने सड़ने पर उनमें कीडे पड जाते। उन्हें खाने के लिये जो मछलियां उछलकर उनपर पहुचने लगीं, वे धीरे-धीरे मेंढक बनगई। इसी प्रकार जो मेंढक तरुओं के तनों पर रेंगते हुए कीड़ों को पकड़ने लगे, वे क्रमश गिलहरी बनगये। ऐसे ही अपनी रक्षा के लिये परिस्थितियों के अनुसार किन्ही प्राणियों के सींग, किन्हीं के नख और किन्हीं के दाँतों की क्रमश ऐसी रचना होगई, जिन्हें संघर्ष के समय प्राणी अपने बचाव के लिये एक हथियार के समान प्रयोग करने लगे। अधिक शीत और उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशों में प्राणियों के अधिक रोम तथा रोम का प्राय अभाव होगया।

अफ्रीका के मरु प्रदेशों में एक लम्बी गर्दन का जानवर जेरा नाम का पाया जाता है। कहते हैं, यह प्रारम्भ में ऐसा न था, जैसा आज देखा जाता है। मरुप्रदेशों में ऊचे वृक्षों पर अपने आहार को प्राप्त करने की इच्छा ने उसके अग्रिम भाग और गर्दन को लाखों वर्षों में इतना लम्बा बना दिया। उन्ही प्रदेशों में जिनको आहार के दूसरे साधन मिल गये, वे वैसे ही रह गये। अभिप्राय यह है,कि आधुनिक विकास-वाद के अनुसार प्राणी के क्रमिक विकास में

इसी आवश्यकता जन्य इच्छा और उसको पूरा करने के चिरकालीन अभ्यास को आकृति परिवर्त्तन का मूल कारण माना जाता है।

विकासवाद की मान्यताओं का विवेचन —

इस विषय के किसी भी विवेचन से पूर्व यह जानलेना अपेक्षित होगा, कि प्राणिरचना में विकास सिद्धान्त की उद्भावना करने वाले विद्वानों ने चेतन आत्मतत्त्व की स्थिति को उस रूप में स्वीकार नहीं किया, जिस रूपमें भारतीय विचारकों व ऋषियों ने माना और उसका प्रतिपादन किया है। विकासवाद के अनुसार चेतना का उद्भव प्राकृत तत्त्वों से माना गया है। जेरा के सर्व प्रथम स्तर के किसी पूर्वज की यह भावना जागृत हुई, कि वह ऊंचे पेड़ के पत्तों को खा सके। प्राकृतिक नियमों व व्यवस्थाओं के अनुसार अपनी सन्तति के लिये प्रजननक्रिया के अनन्तर गर्भाशय मे नवीन शरीर की रचना जिन तत्त्वों से प्रारम्भ होती है, वे प्राकृतिक तत्त्व हैं, और वह चेतना जहाँ ऊंचे पत्तों को खाने की भावना जागृत हुई है, वह भी एक प्राकृत तत्त्व है। इन तत्त्वों के समान जातीय होने के कारण जनक प्राणी की भावनाओं के जन्यप्राणीशरीर में संक्रान्त होने की सभावना होसकती है। जनकप्राणी के देह का अगसूत्र जन्यप्राणी के देह की रचना में मूल-सहयोगी रहता है। अभिप्राय यह, कि इस वाद में देह की आकृति समानता की तरह भावसमानता भी सन्तति में आसकती है, ऐसा माना जाने का उपयुक्त अवकाश है। इसप्रकार जेरा के जिस पूर्वज को ऊंचे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, वह उसकी सन्तति में भी संक्रान्त होती रही, और लाखों वर्षों की इस अनवरत भावना का परिणाम वर्त्तमान जेरा के रूप में प्रकट हुआ।

यदि चेतना की स्थिति को उक्तरूप में स्वीकार कर लिया जाता है, तो भी इस विचार में बहुत आपत्ति है। जेरा के जिस पूर्वज को ऊंचे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, अवश्य वह दस-पन्द्रह-बीस वर्ष जीवित रहा होगा। यह निश्चित है, कि वह अपने जीवन में ऊंचे पत्ते नहीं खासका, फिर भी अवश्य वह इतने वर्ष किसी आहार पर जीवित रहा होगा। यह संभावना सर्वथा हास्यास्पद होगी, कि जैसे ही उसे पत्ते खाने की भावना जागृत हुई, उसने सन्तति में अपनी भावना सक्रान्त कर तत्काल आहार के अभाव में शरीर छोड़ दिया। आगे होने वाली सन्तति का पालन-पोषण पोषकों के जीवन का निर्वाह आदि आहार के विना सम्भव नहीं माना जासकता। ऐसी स्थिति मे यह स्वीकार करना होगा, कि अन्य प्राणियों के समान-जिनको आहार मिलते रहने के कारण गर्दन नहीं बढ़ी जेरा के पूर्वजों को भी बराबर आहार मिलता रहा, इसी रूप में उन्होंने लाखों वर्ष बिताये, और सहस्रों सन्तति-अनुक्रम पूरे किये। ऐसी स्थिति मे गर्दन बढ़ने का विकासवाद प्रतिपादित कारण स्वत जड़ से उखड़ जाता है।

विकासवाद के पोषक विद्वान् सम्भवत यह समझते हों कि जेरा ने जब वृक्षों के नीचे के पत्ते चुग लिए, फिर दुबारा वृक्षों के उन स्थलों में पत्ते नहीं आते होंगे इसी लिए ऊपर के पत्ते खाने की भावना उसमें बराबर उभरती रहती है। पर ऐसा सोचना सृष्टिक्रम के सर्वथा विपरीत है। जिन निचली टहनियों के पत्ते अथवा नीचे उगा आहार एक बार खाये जाते हैं, समय आने पर उनमें फिर नये पत्ते निकल आते हैं, और जेरा का आहार—अन्य स्थानीय प्राणियों के के समान—नई कोमल पत्तियों के रूप में बराबर बना रहता है। आज भी इस स्थिति को स्पष्ट रूप में देखा जा सकता है। पशु प्रतिदिन जंगल में घास पत्तियां चुगते हैं, और न मालूम कब से

चुगते चले आ रहे हैं, पर अन्य विविध बाधाओं व आपत्तियों के रहने पर भी आहार में कोई कमी नहीं है। जेरा के लिये नीचे पत्तियों का आहार के अभाव में ऊपर की पत्तियों के खाने की भावना का उद्भावन किया गया है, वस्तुत विकासवाद के संस्थापकों की यह कल्पना ही निराधार है। हम देखते हैं, बकरी नीचे के घास-पत्ते चुगती है, और पेड़ के तनों व टहनियों पर अगले पैर रख कर जहाँ तक उसका मुँह जाता है, पत्ते चुग लेती है, इसी तरह वह लाखों वर्षों से चुगती चली आ रही है, जहां तक चुग सकती है, उसके ऊपर भी पत्ते रहते हैं, सम्भवत उन्हें भी चुग लेना चाहती हो, पर न उसकी गर्दन बढी, न उसका अगला भाग लम्बा हुआ और न उसके लिए चारे की कमी हुई। फलत ज़ेरा की बनावट के लिए विकासवादियों की कल्पना बालकों की कहानी जैसी है।

चेतन आत्मा को भारतीय विचार के अनुसार प्राकृत तत्वों से अतिरिक्त मानने पर एक चेतन की भावना प्रजनन-व्यवस्थाओं के अनुसार साधारण रूप से किसी अन्य चेतन में संक्रान्त होती नहीं मानी जा सकती। अन्यथा जनक और सन्तति की भावनाओं में अनिवार्य समानता मननी होगी, जिसका कदाचित् कोई विरला ही उदाहरण मिल सके। किसी भी वर्ग में व्यवसाय आदि की समानता एक सामाजिक व्यवस्था है. यह सन्तति अनुक्रम का फल नहीं। इसी कारण मूर्खों की सन्तान विद्वान्, पापियों की धर्मात्मा और इनके विपरीत बराबर होती देखी जाती हैं। नित्य चेतन आत्माओं के अपने कर्मों का सहयोग, आत्माओं की सर्वात्मना भावना-समता मे बाधक रहता है। फलत यह मानना चाहिए कि प्राणि रचना की विविधता के प्रतिपादन में उक्त कारण अत्यन्त दुर्बल है।

अस्थि

विकासवाद में अस्थि को आकृति परिवर्त्तन का आधार माना जाता है। विचारना चाहिये कि ऐसे शरीर अंगों पर इच्छा आदि के प्रभाव की सम्भावना हो सकती है, या नहीं? हम देखते हैं शरीर के अनेक अ गों पर इच्छा का कोई नियन्त्रण नहीं रहता। दाँत, बढ़े नख, रोम, केश आदि पर इच्छा का कोई दबाव नहीं रहता, इच्छा मात्र से हम इनको हिला तक नहीं सकते। शरीर का कोई अ श टूट जाने पर जब अलग हो जाता है, उस अस्थि आदि को छूने या काटने में किसी तरह का कष्ट या अन्य कोई अनुभव नहीं होता। शरीर में सम्बद्ध रहने पर भी अपनी इच्छा मात्र से उसे अनुकूल अवस्था में नहीं लाया जा सकता। इच्छा का जब इन पर कोई नियन्त्रण ही नहीं, तो इच्छा द्वारा अस्थि आदि को रचना तथा इनमें परिवर्त्तन कैसे सम्भव हो सकता है?

अभ्यास

प्राणी की आवश्यकता और उसकी पूर्ति के लिए दीर्घ कालीन अभ्यास को आकृति परिवर्त्तन का कारण बताया गया। पर यह स्थिति भी आकृति परिवर्त्तन में असमर्थ है। कारण यह है कि अभ्यास का दीर्घ काल दस-बीस या पचास-सौ वर्ष में पूरा नहीं हो जाता, यह दीर्घ काल लाखों या करोड़ों वर्ष का स्वीकार किया गया है। इतने काल में भौतिक स्थितियों की बहुत उलट-फेर हो जाती है। जिस प्राणी को किसी समय कोई आवश्यकता प्रतीत हुई, उसके लिए दीर्घ काल के उतने वर्ष अपने जीवन में पूरे करने सर्वथा असम्भव हैं। काल क्रमानुसार जन्म-जन्मान्तर में सन्तति क्रम के साथ इतने दीर्घकाल तक एक मात्र आवश्यकता की पूर्ति के अभ्यास का किसी भी युक्ति या प्रमाण से प्रतिपादन किया जाना अशक्य है। प्राणी की आवश्यकता और उसकी पूर्ति की स्थिति लाखों वर्षों तक लगातार एक जैसी बनी रही हो, यह सिद्ध किया

जाना भी सम्भव नहीं।

आवश्यकता

केवल आहार या निवास आदि की ऐसी आवश्यकता कही जा सकती है। यदि आहार की प्राप्ति में प्राणी सफल नहीं होता, तो उसका नष्ट हो जाना निश्चित है। फिर दीर्घ कालीन अभ्यास कैसा ? यदि प्राणी को आहार प्राप्त होता रहता है, चाहे वह किसी भी तरह का हो, तो उसकी आहार की आवश्यकता पूरी हो जाती है। यह ठीक है कि उसके सुधार की ओर प्राणी का ध्यान आकृष्ट हो सकता है, और उसके लिए अनेक दिशाओं में अथवा विधाओं में प्राणी द्वारा प्रयत्न करते रहना सम्भव है, ऐसा प्रयत्न सन्तति क्रमानुसार दीर्घ काल तक किया जाना सम्भव हो सकता है। पर इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि जेरा की गर्दन ऊंची बढ़े, बन्दर की तरह पेड़ पर चढ़ने की प्रवृत्ति का वहाँ विकास क्यों न हुआ ? फिर इतने दीर्घकाल के अन्तराल में सन्तति क्रम के किसी स्तर पर आहार में किसी भी तरह की सुधार की स्थिति न हुई हो, ऐसा निश्चय कियाजाना अशक्य है। यह माने जाने में कोई आपत्ति नहीं कि एक आवश्यकता पूरी हो जाने पर अन्य दस नई तरह की आवश्यकता सामने आ खड़ी होती हैं, पर यह मानव की स्थिति मे अधिक सम्भव है, प्राणी की तिर्यक् अवस्था मे नहीं, जिसको विकासवाद आदिकाल में स्वीकार करता है। तथापि उन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आकृति परिवर्तन अपेक्षित नहीं है।

इन सब के अतिरिक्त हम देखते हैं कि आवश्यकता या इच्छा का सम्बन्ध आत्मा व मन के साथ रहता है। जब हम आत्मा, मन और शरीर के पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि वह स्थिति ---- से सम्बन्ध आकृति परिवर्तन मे कोई सहायता नहीं पहुंचा सकते। यद्यपि एक दुर्बल किशोर अपने मनोबल आदि तथा शारीरिक अभ्यास व्यायाम आदि से अपने शरीर को सबल बना लेता है, और हम वहाँ ऐसा व्यवहार करते हैं कि आश्चर्य है, छ महीने में नरेन्द्र की तो शक्ल बदल गई। इस व्यवहार में हम नरेन्द्र के शारीरिक सुडौलपन सौन्दर्य एवं पुष्टि आदि को शक्ल बदल जाना कहते हैं। इसमें शरीर की दुर्बलता, ढीलापन तथा रूखापन आदि बदलते हैं, आकृति नहीं। इससे यह निश्चित है, कि लोक में व्यवहार केवल औपचारिक होता है। इसको आकृति परिवर्त्तन के उदाहरण रूप में प्रस्तुत करना सर्वथा हास्यास्पद होगा।

रोम तथा चर्म

शीत प्रदेशों में प्राणी के रोम बढ़ जाना और उष्ण कटिबन्ध में रोम का अभाव, विकासवाद के अनुसार आकृति परिवर्त्तन प्रसंग में प्राणी की आवश्यकता पूर्ति का एक उपोद्बलक प्रमाण उपस्थित किया जाता है। पर हम देखते हैं कि यह कथन सर्वथा निराधार है, किसी एक व्यवस्था का निश्चायक नहीं। न मालूम कितने युगों से मनुष्य उत्तरी ध्रुव और वर्त्तमान ग्रीनलैण्ड के हिम प्रधान प्रदेशों मे बसा हुआ है। उसकी आवश्यकता और अभ्यास अब तक भी उसके शरीर पर रीछ जैसे रोम उत्पन्न करने में अक्षम रहे हैं। वहा के मनुष्य के रोम ऐसे ही हैं, जैसे एक मरुभूमि के मनुष्य के। हिमालय की भेड़ के बाल जैसे लम्बे होते हैं, मरुप्रदेश तथा अन्य उष्ण कटिबन्ध की भेड़ के भी वैसे ही होते हैं। किसी पशु के रोमों का बढ़ा होना, उसका शीत से रक्षा का प्रबन्ध नहीं है, वह उस प्राणी वर्ग की प्राकृतिक रचना का परिणाम है। हिम प्रदेश का निवासी प्राणी शीत से अपनी रक्षा का प्रबन्ध अपनी बुद्धि के द्वारा सोचता व करता है। अफ्रीका के अति उष्ण प्रदेशों में

रोमहीन गैंडा और दीर्घ रोमा रीछ दोनों निवास करते हैं। हम अपने ही प्रदेश में गाय भैंस आदि पशुओं को देखते हैं। भैंस का चर्म पतला चिकना और लघुरोमा होता है, वहीं पर रहने वाली गाय का चर्म कठोर तथा रोम बहुल होता है। इससे यह निश्चित है कि इन प्राणी जातियों की रचना नैसर्गिक रूप में आदि काल से ही ऐसी हुई है। कोई असाधारण परिवर्त्तन शीत आतप तथा अन्य वातावरण से इनमें होता रहा हो, ऐसा नहीं है।

सींग

विकासवाद के अनुसार कहा जाता है कि रक्षा की भावना प्राणी में सींग नख आदि के उद्भव का प्रयोजक रही। पर हम देखते हैं— हरिण, चित्तल, मद्दा, नीलगाय आदि अनेक प्रकार के जंगली पशुओं में नर के सींग होते हैं, मादा के नहीं, जब कि विकास सिद्धान्त के अनुसार उनकी अपनी रक्षा की आवश्यकता सींगों की उत्पत्ति में कारण है। क्या वह आवश्यकता नर में ही होती है, मादा में नहीं? फिर जिन पशुओं के सम्बन्ध में इतिहास के द्वारा हम जानते हैं कि सहस्रों सदियों से वे मनुष्य के सम्पर्क में हैं, प्रत्येक प्रकार की विपत्ति से मनुष्य उनकी रक्षा करता है, उन पशुओं को अपनी रक्षा, आहार या निवास आदि की कभी चिन्ता नहीं रहती, न आवश्यकता। इन गाय, भैंस, बकरी आदि जानवरों के आज भी सींग उसी तरह हैं जैसे अब से सहस्रों लाखों वर्ष पहले थे। आश्चर्य यह है कि इनमें नर और मादा दोनों के सींग होते हैं, जबकि घोड़ा, गधा, ऊंट, हाथी आदि के कभी सींग या नख नहीं हुए। इसप्रकार के सैकड़ों उदाहरण उपस्थित किये जा सकते हैं, जो विकासवाद प्रतिपादित सिद्धान्तों के व्यतिक्रम को स्पष्ट करते हैं। फलत यह स्वीकार किया जाना चाहिये कि जो योनियाँ जिस प्रकार की हैं, उनमें किसी तरह का परिवर्त्तन, आवश्यकता, तन्मूलक इच्छा, अभ्यास एवं वातावरण के कारण नहीं होता। अत्यन्त प्रतिकूल प्राकृतिक स्थितियों में अनेक जातियां नष्ट भले ही हो जायें, पर उनमें किसी प्रकार का असाधारण परिवर्त्तन नहीं आता, जो उनकी नैसर्गिक जाति को बदल डाले।

विकास और भारतीय विचार का आधारभूत भेद—

विकासवाद और प्राणि जगत् के उद्भवविषयक भारतीय परम्परा में माने गये सिद्धान्त का मूलभूत भेद आत्मसम्बन्धी मान्यता है। चेतना अथवा आत्मतत्त्व का उद्भव प्राकृत तत्त्वों से हो जाता है, इस आधिभौतिक विचार धारा का विवेचन यहां अपेक्षित नहीं है, पर इस विषय में इतना जान लेना आवश्यक है, कि भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण के अनुसार यह एक निश्चित सिद्धान्त है, कि आत्मतत्त्व अथवा चेतना प्राकृतपरिणाम नहीं है। उन आधारों पर यह निश्चय किया गया है, कि समस्त विश्व का नियन्त्रण करने वाला एक चेतनतत्त्व है सृष्टि-प्रक्रिया के प्रत्येक पहलू पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के परिणामस्वरूप उस सर्वनियन्ता चेतनतत्त्व की उपेक्षा किया जाना अशक्य है।

यह स्थिति मानने पर एक तर्क सन्मुख आता है, कि आज मानवपर्यन्त विविध प्राणिजगत् की उपस्थिति में एक कोश का प्राणी अमीबा भी विद्यमान है, तो आदि सृष्टि मे एक कोशयुक्त प्राणी की उपस्थिति के समान अनेक कोशयुक्त प्राणी नहीं था, इसमें क्या प्रमाण है? अभिप्राय यह है, कि जैसी आज सृष्टि की स्थिति है, ऐसी ही आदि काल से नहीं थी, इसमें कोई प्रमाण होना चाहिये मानव ने अपनी प्रतिभामूलक रचना द्वारा जो कुछ बनाया या बिगाड़ा है, उसकी तुलना ईश्वरीय

रचना से करना, अथवा उसके आधार पर उसी के अनुरूप ऐश्वरी सृष्टि की कल्पना करना सगत नहीं होगा। अब भी माता के गर्भ में प्राणी-देह की रचना ऐश्वरी -सृष्टि का अद्भुत चमत्कार है।

विज्ञान की सीमा

आज इतना उन्नत भी विज्ञान जो मानव प्रतिभा का महत्त्वपूर्ण चमत्कार है—एक साधारण वृक्ष के पत्ते का निर्माण नही कर सकता। मानव प्रतिभा का सम्पूर्ण चमत्कार भूत-भौतिक तत्त्व पर आधारित है, पर यह भारी अचम्भे की बात है, कि मानव अपनी अतिसाधारण खिलौना जैसी रचना की चकाचौंध में समस्त भूत भौतिक के पीछे बैठे उस महान शिल्पी की ओर दृष्टिपात नही करपाता, जिसकी साधारण रचना समस्त मानव रचना का एक मात्र आधार है विज्ञान कहता है, कि सर्वप्रथम एक कोश का प्राणी हुआ, पर इस समस्या का समाधान विज्ञान आज भी नहीं कर पाया है, कि वह एक कोश का प्राणी भी कैसे हो गया ? अमीबा नामक प्राणी का जो एक कोश का देह है, ठीक वही देह अनेकानेक सख्या में मिलकर अन्य अनेक कोशयुक्त प्राणी-देह की रचना करते हैं, ऐसा नियम विज्ञान के लिये भी सिद्ध करना कठिन है। समस्त विभिन्न प्रकार के कोशों की रचना स्वतन्त्ररूप में होती रहती है, यह नेचर [स्वभाव=ईश्वरीय नियम व व्यवस्था=ऋत] का कार्य है। जैसे एक कोश के देहकी पूर्वरचना पर यहा चेतना के चिह्न प्रकट हो जाते है इसी प्रकार अनेक कोशयुक्त देह की रचना पूर्ण होने पर होता है। नेचर के नियन्त्रण में जैसे एक कोश के देहकी रचना होती है, वैसे ही अनेक कोशयुक्त देहो की रचना भी हो रही होती है। इसप्रकार जैसे ही एककोश के देह की रचना पूर्ण होती है, अनेक कोशयुक्त देह की भी वैसे ही होती है, और चेतन के चिह्न वहां समानरूप से प्रकट हो जाते हैं।

देह की रचना

इस विषय में यह कहा जासकता है, कि अनेक कोश युक्त देह पहले एक कोश की रचना हुए बिना-सम्भव नही। इसलिये पहले एक कोश की रचना होना आवश्यक है। पर सोचना चाहिये आदि सृष्टि में 'नेचर' द्वारा अनेकानेक कोशों की रचना हो रही होती है। एक कोश की रचना भी अतिसमम्यापूर्ण है, अमीबा नामक प्राणी के देह को अतिलघु जानकर या कल्पना कर हमने उसे इकाई मानलिया है, उतनी रचना को हम 'एक कोश कहते हैं परन्तु देह की वह स्थिति रचनाक्रम के अनेक जटिल स्तरों को पारकर यहा तक पहुंचे है। रचना के उस स्तरपर एक विशिष्ट देह पूरा हो जाता है और वहा चेतना उभर आती है। इसीप्रकार अनेक कोश युक्त देहों की रचना भी चालू है, और अन्य कोई विशिष्ट देह जैसे ही रचना की दृष्टि से पूरा होता है, चेतना वहा उभर आती है। अमीबा के एक कोश के देह से इस अनेक कोशयुक्त देह की रचना का कोई ऐसा सम्बन्ध नही है जिससे इनका परस्पर कार्य-कारण भाव स्थापित किया जासके। विशिष्ट देहों की रचना अपनी नियत इकाईयो अर्थात् अपने उपादान कारणों से स्वतन्त्ररूप में होती हैं। प्राकृतिक नियमो व व्यवस्थाओं के अनुसार जैसे ही आत्मा के निवासयोग्य देह रचा जाकर पूरा होता है—चाहे वह एक कोश का है अथवा अनेक कोशों का—वहां आत्मचेतन के बैठ होने के चिह्न प्रकट हो जाते हैं। ऐसी सब प्राणी-सृष्टि अमैथुनी' कही जाती है, जो आदि सर्गकाल में सम्भव है।

चालू सर्गकाल के नर मादा के प्रत्यक्ष सम्पर्क से होने वाला प्रजनन मैथुनी सृष्टि है। एक कोश देह के प्राणी स भी जब आगे वश चलता है, तो वह सजातीय प्रजनन के मैथुन मूलक नियमों के अनुसार चलता है, पर सबसे पहले अमीबा का प्रादुर्भाव अमैथुनी सृष्टि है। ऐसे ही अनेक कोशयुक्त

कल्याण मार्ग का पथिक

महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा को 'सत्य के प्रयोग' कहा है और स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कल्याण मार्ग का पथिक' शीर्षक से अपनी आत्म-कथा लिखनी प्रारम्भ की थी। उसका केवल पहिला भाग लिखा और प्रकाशित किया जा सका। यदि वह पूरे रूप में प्रकाशित होसकती तो हिन्दी साहित्य का एक अनमोल ग्रन्थ सिद्ध होने के साथ साथ साधारण मानव के लिए सचमुच ही पथ-प्रदर्शक बन जाती। फिर भी जितना लिखा जा सका है वह भी पथ प्रदर्शन के लिए पर्याप्त है। मनुष्य का जन्म कीच में पैदा होने वाले कमल दल की तरह होता है। कमिया व कम-जोरिया और लालच व प्रलोभन उसको चारों ओर से घेरे रहते हैं परन्तु महात्मा अथवा महापुरुष वे ही हो पाते हैं, जो कमल की तरह कीच से ऊपर उठ कर स्वय अपना निर्माण करने में लग जाते हैं। स्वामी जी का जीवन इसका सबसे अधिक उत्कृष्ट उदाहरणहै। उन्होने जिस महानता को प्राप्त किया वह उनकी स्वय अर्जित की हुई थी। अपनी कमियों व कमजोरियो पर विजय पाकर उन्होंने उसका सम्पादन किया था। केवल १७ वर्ष की आयु मे सम्वत् १९१० में विद्याध्ययन करने के लिए बनारस में अकेले छोड दिए जाने के कारण जिस सगति में पड गए उसका परिणाम जो होना था वही हुआ। पिता जी के पुलिस की नौकरी में सदा ही ऊचे पद पर रहने से लालन पालन जिस ढग से जिस वातावरण मे हुआ उसका भी कुछ अच्छा परिणाम नही हो सकता था। बचपन में पडे हुए

देहों के प्राणियों की सर्वप्रथम सृष्टि अमैथुनी होती है, उसके आगे सजातीय प्रजनन का नियम चालू होता है। प्राणीप्रजनन के लिये चालू सगकाल में जो कार्य नर-मादा के सम्पर्क से होता है, वह आदि सर्गकाल में प्राकृतिक नियमो व व्यवस्थाओं के अधीन होता है। इसी कारण यह रचना अमैथुनी कही जाती है।

साजात्यप्रजनन--

पुराने से पुराने तथाकथित प्रागैतिहासिक काल से लगाकर आजतक जो ककाल और आकृतियाँ प्राप्त होती रही हैं, उनके आधार पर विकासवाद का वर्णन करने वाले विद्वान् यह मानते हैं, कि अनेक सहस्रों सदियों पूर्व जो प्राणी जिस रूप में थे, उनमें से भले ही कुछ जातियां नष्ट हो गई हों, पर जो उपलब्ध हैं, उसी रूप में चली आरही हैं। इससे प्राणियों में साजात्यप्रजनन की एक व्यवस्था स्पष्ट होती है। इतने लम्बे काल में हम इस सर्व-प्रथमसृष्टिबद्ध साजात्यप्रजनन में किसी प्रकार के व्यतिक्रम का कोई उदाहरण नहीं पाते। विकास का सिद्धान्त जब हमारे सन्मुख एकमात्र मूल से अनेकानेक विभिन्न प्राणी शाखाओं के उद्भव को प्रस्तुत करता है, तो यह साजात्यप्रजनन सिद्धान्त के विपरीत जाता है। परस्पर साम्मुख्य में इन दोनो वादों की रक्षा होना कठिन प्रतीत होता है। इस विचार का विवेचन पूर्व किया जाचुका है, कि कोई प्राणी अपनी इच्छा या आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये लाखों वर्षों में किसप्रकार अपनी जाति या स्वाभाविक वश का व्यतिक्रम नहीं कर सकता ऐसी स्थिति में या तो विकास सिद्धान्त को निराधार मानना होगा, या फिर साजात्यप्रजनन से मुख मोड़ना होगा, पर यह सम्भव नहीं, साजात्यप्रजनन को उपेक्षा नहीं की जासकती, क्योंकि इस स्थिति को हम प्रत्यक्ष से अनुभव करते हैं। फलत इस दृष्टि से विकासवाद की दुर्बलता स्पष्ट हो जाती है।

❀

संस्कार युवावस्था में जिसरूप में विकसित हुए उनका परिणाम नैतिक पतन के सिवाय कुछ और नहीं हो सकता था। उस नैतिक पतन की कहानी उन्होंने स्वयं ही लिखी है और वह भी बता दिया है कि पतन के अन्धकूप में से आत्मोद्धार करने के लिए किस प्रकार हर व्यक्ति कल्याण मार्ग का पथिक हो सकता है। साधारण मनुष्य जीवन भर कमियों और कमजोरियों का शिकार बना रहता है और जो उन पर विजय पाने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है उसकी गणना असाधारण पुरुषों में की जाती है।

बनारस में सं० १९३० में नानकचन्द जी ने अपने पुत्र मुंशीराम को विद्याध्ययन के लिए अकेला छोड़ दिया और वहां के क्वीन्स कालेज में भरती करा दिया। सं० १९३४ के अन्त तक साढ़े चार वर्ष विद्यार्थी अवस्था में बनारस में ही पूरे किए। एक साधारण सी घटना से मनुष्य का जीवन किस प्रकार उलटे रस्ते लग जाता है इसका पता भी मुन्शीराम जी के विद्यार्थी जीवन की एक घटना से लगता है। इट्रेन्स की परीक्षा अभी आरम्भ ही नहीं हुई थी कि पिता जी का पत्र मिला कि परीक्षा के बाद तलवन जाकर सगाई का शगुन ले लिया जाय। परीक्षा बृहस्पतिवार को समाप्त होनी थी। शुक्रवार को तलवन जाने का कार्यक्रम बनाया जा चुका था। परीक्षा के अन्तिम दिन यह सूचना दी गई कि अंगरेजी का प्रश्न पत्र पहले ही प्रगट हो जाने से उसकी परीक्षा सोमवार को दुबारा ली जावगी। मुंशीराम ने परीक्षा की अपेक्षा घर जाने को अधिक महत्व दिया और अंगरेजी का प्रश्न पत्र किए बिना ही घर चल दिए। घर से लौटे तो अंगरेजी में फेल होने के कारण अपने साथियों से पीछे रह गए। संकोचवश कालेज तो न गए किन्तु अगली पढ़ाई की तैयारी करने के विचार से उसके लिए पुस्तकें ढूंढनी शुरू कर दीं, सेकिंड हैन्ड पुस्तकों की दुकान में कचालियों के यहां जाने पर सस्ती कीमत में अंगरेजी के उपन्यास हाथ लग गए। उनको लाकर पढ़ना शुरू किया तो मानसिक विकार पैदा होने स्वाभाविक थे। यही विकार नैतिक पतन के कारण बन गए। इस आवारागर्दी में पूरा साल योंही निकल गया। पिता जी किसी सरकारी काम से जब बनारस आए तो यह जान कर बहुत दुखी हुए कि मुंशीराम स्कूल न जाकर योंही समय काटता रहता है। उन्होंने जबरदस्ती स्कूल में भरती किया तब परीक्षा सिर पर थी और उसकी कुछ भी तैयारी न की गई। परीक्षा में बैठकर फेल होने की अपेक्षा फिर स्कूल छोड़ दिया और पूरा साल ऐसे ही निकल गया।

सं० १९३३ में पौष मास में जयनारायण कालेज में, जो कि पहले रेवड़ी तालाब के स्कूल के नाम से प्रसिद्ध था अपना नाम दर्ज करवाया। पढ़ाई का क्रम कुछ ठीक नहीं चला आवारागर्दी में ही अधिक समय बीतने लगा। इसी बीच माता जी की मृत्यु हो गई और १५ दिन की छुट्टी लेकर पिता जी के पास बलिया चले गए। लौट कर परीक्षा की तैयारी की और सेकंड डिवीजन में सर्वप्रथम रहकर परीक्षा पास की पिता जी की बदली मथुरा हो गई, और मुंशीराम भी कुछ दिनों के लिए मथुरा आ गए, परन्तु बनारस के साढ़े चार वर्ष बहुत महंगे सिद्ध हुए। जीवन का क्रम सभी दृष्टियों से कुछ अच्छा न रहा था। पहला वर्ष कुछ नियमपूर्वक और अच्छी संगति में बिताया गया परन्तु अच्छी संगति की अपेक्षा बुरी संगति का असर जल्दी होता है और उत्थान की अपेक्षा पतन में अधिक समय नहीं लगता मुंशीराम जी के साथ भी ऐसा ही हुआ। सवेरे स्नान, पूजा पाठ और शाम को विश्वनाथ के दर्शन करने का नियम निरन्तर चला जाता था, परन्तु एक दिन शाम को गली पर के मोड़ पर बैठे पुलिस के सिपाही ने आगे जाने से यह कह कर रोक दिया कि रीवा की महारानी के दर्शन के लिए आने के कारण दूसरों के लिए मन्दिर का रास्ता

बन्द है। घटना साधारण थी परन्तु मुंशीराम उस को सहन न कर सके। परिणाम यह हुआ कि मूर्ति पूजा पर से मन उठ गया और आस्तिकता की भावना को भी बड़ी ठेस लगी। ईसाई धर्म की ओर झुकाव हुआ तो कालेज के प्रिंसिपल के पास गए, जो कि पादरी भी थे परन्तु वे युवक हृदय को कुछ सतुष्ट नहीं कर सके। उसके बाद रोमन कैथो० पादरी के यहां गए तो वहा भी मन नही भरा। आस्तिकता का स्थान नास्तिकता ने ले लिया। धर्म कर्म पर से सारी श्रद्धा उठ गई। सगति भी कुछ नहीं थी। हुक्का, भाग और शतरंज में मुशायरा और उपन्यास आदि में दिन कटने लगे, पढाई का तो केवल नाम था, लेकिन, सवेरे घूमने जाने, अखाड़े में जाकर कसरत करने और गगास्नान करने का नियम तब भी बना रहा। एक दिन कुछ ऐसी घटना घटी कि राजघाट को जाते हुए मणि कर्णिका घाट से सेंधिया घाट पहुंचने पर एक गुफा में से एक अबला की चीत्कार सुन पडी, तो वहां जाकर देखा कि एक युवा महिला को कोई पीछे की ओर घसीट रहा था। उससे उसकी रक्षा करके उसको घर पहुंचाया तो पता चला कि वह परिचित घराने की ही एक देवी थी, जिसको उसकी भौजाई सन्तान प्राप्ति की लालसा से वहा ले आई थी। मुंशीराम जी ने इस घटना का वर्णन स्वय इन शब्दों में लिखा है कि "घाट पर लौटा तो उस नगे पिशाच को जूतों की मार पड़ रही थी और पुलिस के जमादार भी आ गए थे। एक भली देवी की इज्जत का सवाल था। मेरे कहने पर उस पिशाच से नाक रगड़वा और यह प्रतिज्ञा लेकर कि वह फिर कभी काशी नहीं लौटेगा, पुलिस वाले उसे राजघाट के पार पहुंचा आए। परन्तु हिन्दू समाज की विचित्र अन्धी श्रद्धा का मुझे उस समय पता लगा, जब सन् १८८१ ई० के अगस्त मास में गाजीपुर जाते हुए मैंने बनारस ठहर उसी दुष्ट पिशाच को घाट के मार्ग में नगे बैठे और पुरुषों को उसकी उपस्थेन्द्रिय पर जल पुष्पादि चढाते देखा। प्रयागदत्त जमादार से जब पूछा तो उत्तर मिला, 'अरे बाबू! धरम का मामिला ठहरा। अगरेज हाकिमों करता आत बाटे।" खेद है कि हिन्दू समाज मे से अब तक भी इस पाप का मुंह काला नहीं हुआ है

इस साहसपूर्ण घटना का असर कुछ उलटा ही पड़ा। मुंशीराम जी के मनमें अगरेजी उपन्यास पढने से जो विकार पैदा हुए थे वे इस घटना के कारण कुछ ऐसे उभरे कि वे अपने को सभाल न सके। उन्होने अपने को अगरेजी उपन्यासों व नाटकों का हीरो मान उस देवी को अपनी प्रेयसी मानना शुरू कर दिया। दूसरी ओर उस मामा की सगति मे मदिरापान का व्यसन भी शुरू हो चुका था, जिसने बनारस आकर दुकान खोल ली थी। एक और घटना भी इसी प्रकार की घटी। उसका भी उल्लेख, उन्ही के शब्दो में करना ठीक होगा। दशहरे पर दशमी के स्नान की भीड थी। एक युवती घबराई हुई उनके सामने से गुजरी, एक बदमाश उसके पीछे लगा था। उसको उन्होंने ऐसा चपत रसीद किया कि वह होश भूल गया। युवती को अपने मकान पर ले आए और थोडी देर में मेले में से उसके पति को भी ढूंढ लाए। दोनों ने उनका बड़ा उपकार माना और उनके ही मकान पर आकर रहना शुरू कर दिया, इसके बाद जो हुआ उसके बारे में वे लिखते हैं कि "मैं अपनी बैठक में चला गया और उन्होने ऊपर आराम किया। दोपहर पीछे मैं बाहर चला गया। ९ बजे के लगभग घर आया। उस समय प्रलोभन में फस गया। हा! बरसों की कमाई एक घटे में डूब गई। उस रात मैंने भोजन नहीं किया। रात को व्याकुल रहा। दूसरे दिन प्रात रामायणका फिर स्मरण आया।" "यदि अपने प्राचीन इतिहास पर श्रद्धा होती तो पीड़ित स्त्री जाति का रक्षाबन्ध भाई बनकर उसकी रक्षा का व्रत लेता। परन्तु मैंने अपनी सभ्यता को जगलीपन और अपने साहित्य को मूर्खता का भडार समझ रखा था, फिर उससे मुझे सहायता कब मिल

सकती थी ?'

इस घटना से जो आत्मग्लानि पैदा हुई कि दूसरे दिन सवेरे ४ मील दूर अपने मित्र पशुपतिशरण सह क गाव चले गए। सब किस्सा उनको कह सुनाया और फिर वैसा न होने का दृढ संकल्प किया इस आत्मग्लानि और प्रायश्चित्त की भावना का इतना परिणाम अवश्य हुआ कि फिर दुबारा वैसा कोई प्रसग नही आया। परन्तु पतन शतमुखी होता है और उसके अनेक रास्ते होते है एक रास्ते से मुह मोड कर भी दूसरे रास्तो से विमुख हुए बिना उत्थान नहीं हो सकता। मुशीराम इस नैतिक पतन से तो बच गए परन्तु अन्य बुराइया पीछे लगी ही रहीं दीवाली पर जुए के भी कुछ हाथ खेले परन्तु जुआरियो से कुछ ऐसी नफरत हुई कि जुआ प्रारम्भ होने के साथ ही छोड दिया गया।

सवत् १६३४ में मुशीराम मथुरा होते हुए तलवन विवाह के लिए चल गए। वहा कुछ समय बिता कर फिर बनारस लौट कर पढाई शुरू करने का विचार था। आश्विन मास मे तलवन से बनारस लौटते हुए बरेली आए पिताजी की बदली बलिया से मथुरा और मथुरा से बरली होचुकी थी। बरेली का वातावरण कुछ अच्छा नही था। पिता शहर कोतवाल थे और कोतवाल उन दिनो मे शहर का राजा समझा जाता था। मुशीराम शहर कोतवाल के लाडले बेटे होने से अपने को राजकुमार से कम नहीं समझते थे इसलिए बरेली के रईसो की कुसगति से बच न सके और जल्दी ही उसमें फस गए। नाच रग और तमाशो में सारा समय बीतने लगा, इलाहाबाद परीक्षा के लिए गए परन्तु सफल न हो सके। इस असफलता के गम को शराब के नशे में भुलाने का प्रयत्न किया जाने लगा और नशा इतना बढ़ा कि रात के १ बजे तक बोतल पूरी हो जाती थी। यह क्रम ऐसा ही चलता रहा। मुंशीराम ने स्वय लिखा है कि 'मैं अपने जीवन में दूसरी बार ऐसा पतित हुआ कि पुरानी गिरावट का सस्कार फिर जाग उठा। घन्टों बेहोश पड़ा रहता परन्तु आत्मा में कोलाहल मचा रहता था। एक दिन प्रात काल दूर निकल गया और एकान्त में बैठ कर अनुताप करता रहा। उस दिन शाम को लौटकर भोजन किया दूसरे दिन से फिर काया पलट गई। नाच तमाशे दावतो मे जाना बन्द हुआ और फिलासफी का स्वध्याय शुरू हो गया। बोतल और गिलास भी कुछ काल के लिए बिदा होगए।'

परीक्षा के लिए इलाहाबाद गए तो अन्तिम दिन परीक्षा भवन में ही ऐसे बीमार पडे कि परचा नही कर सके। अन्य सब विषयो मे ७०-८० प्रति शत नम्बर लेने पर भी इस पर्चे के कारण नापास कर दिये गये और लिखापढी करने पर भी विश्वविद्यालय ने कुछ ध्यान न दिया। इस असफलता के कारण इलाहाबाद से भी मन उचट गया। तब बनारस और इलाहाबाद के बाद अलीगढ़ के मुस्लिम विश्वविद्यालय से परीक्षा देने का निश्चय किया गया, वहा उनके पुराने साथी श्री रमाशकर मिश्र गणित के अध्यापक थे इन्ही के बुलावे पर वे वहा गये थे। वे बडे पियक्कड और रगीले युवक थे। उनकी सगति का इतना बुरा असर हुआ कि पुराने कुसस्कार और विकार फिर जाग उठे। हैजे के कारण एक मास बाद कालेज के बन्द हो जाने से बरेली लौट आना पडा। वहा फिर नाच रग तमाशो में दिन कटने शुरू हो गए।

इस घोर पतन की काली अन्धियारी में भी आशा की जो किरण रह रह कर चमक उठती थी वह यही थी कि मुशीराम जी के हृदय में एक हल चली उसके विरुद्ध मची रहती थी, और वह रहरह कर अपना रग दिखा जाती थी। पतन उत्थान की इस अवस्था में अनुकूलता मिलने पर जो चमत्कार हो सकता था उसी का यह परिणाम था कि मुशीराम ने महात्मा स्वामी और संन्यासी के आदर्श

को पूरा करके शानदार बलिदान के अमर पद को प्राप्त किया। बरेली में आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द के दर्शनों के जो संस्कार हृदय पर पड़े उनसे ऐसी अनुकूलता पैदा होने में जो सहायता मिली उसका वर्णन उन्होंने स्वयं किया है। धार्मिक दृष्टि से मुंशीराम का झुकाव नास्तिकता की ओर हो गया था और किसी भी धर्म कर्म में उनकी आस्था नहीं रही थी। जीवन के व्यवहार और धर्म विश्वास की दोनों ही दृष्टियों से ऋषि दयानन्द के दर्शनों और व्याख्यानों का बड़ा प्रभाव पड़ा। उन्होने स्वयं लिखा है कि "ऋषिवर ! तुम्हें भौतिक शरीर त्यागे इकतालीस वर्ष हो चुके, परन्तु तुम्हारी दिव्य मूर्ति मेरे हृदय-पट पर अबतक, ज्यों की त्यों, अंकित है। मेरे निर्बल हृदय के अतिरिक्त कौन मरणधर्मा मनुष्य जान सकता है कि कितनी बार गिरते गिरते तुम्हारे स्मरणमात्र से मेरी आत्मिक रक्षा हुई है। तुमने कितनी गिरी हुई आत्माओं की काया पलट दी, इसकी गणना कौन मनुष्य कर सकता है ? परमात्मा के बिना, जिनकी पवित्र गोद में तुम विचर रहे हो, कौन कह सकता है कि तुम्हारे उपदेशों से निकली हुई अग्नि ने संसार में प्रचलित कितने पापों को दग्ध कर दिया है ? परन्तु अपने विषय में मैं कह सकता हूं कि तुम्हारे सहवास ने मुझे कैसी गिरी हुई अवस्था से उठाकर सच्चा जीवन लाभ करने के योग्य बनाया है ? उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देख कुछ श्रद्धा उत्पन्न हुई, परन्तु जब पादरी टी० जे० स्काट और दो तीन अन्य यूरोपियनों को उत्सुकता से बैठे देखा, तो श्रद्धा और भी बढ़ी। अभी दस मिनट भी वक्तृता नहीं सुनी थी कि मन में विचार किया—यह विचित्र व्यक्ति है कि केवल संस्कृतज्ञ होते हुए ऐसी युक्तियुक्त बातें करता है कि विद्वान दंग हो जाय। व्याख्यान परमात्मा के निज नाम "ओम्" पर था। वह पहले दिन का आत्मिक आह्लाद कभी भूल नहीं सकता। नास्तिक रहते हुए भी आस्तिक आह्लाद में निमग्न कर देना ऋषि आत्मा का ही काम था।"

यह सत्संग उनको पिताजी के कारण ही प्राप्त हुआ था। व्याख्यान में कोई गड़बड़ पैदा न होने देने के लिए उचित व्यवस्था करने का आदेश मिलने पर पिताजी स्वयं पहले दिन के व्याख्यान में उपस्थित हुए थे। वे इतने प्रभावित होकर लौटे कि दूसरे दिन पुत्र को भी इस आशा से साथ ले गए कि उसकी नास्तिकता शायद कुछ दूर हो जाय। व्याख्यानों का सिलसिला जब अवतारवाद तथा मूर्तिपूजा आदि खंडन पर पहुँचा तब आस्तिक पिता इतने घबरा गए कि उन्होंने व्याख्यान सुनने जाना बन्द कर दिया परन्तु नास्तिक पुत्र महर्षि की ओर खिंचता चला गया। दोपहर को बेगमबाग की कोठी पर ढाई बजे से चार बजे तक शंका समाधान और उसके बाद टाऊन हाल में व्याख्यान होता। दोनों ही स्थानों पर सबसे पहले मुंशीराम पहुंचते और अन्त तक जमे रहते। पादरी स्काट के साथ शास्त्रार्थ होने पर लेखक का काम भी उनको सौंपा गया। इस सत्संग से जीवन में हुए चमत्कार के सम्बन्ध में उन्होंने फिर लिखा है कि "इन दिनों में ऋषि जीवन सम्बन्धी अनेक घटनाएं मैंने देखी, जिनमें से कुछ एक का प्रभाव मुझ पर ऐसा पड़ा कि अबतक वे मेरी आंखों के सामने घूम रही हैं।" यदि कहीं इस दिव्य प्रकाश स्तम्भ के दर्शन न हुए होते तो निश्चय ही मुंशीराम के जीवन का जहाज घोर अन्धकार में मह समुद्र की लहरों पर भटकता रहता और तूफान की थपेड़ खाकर उसमें गोता खा गया होता, इसमें सन्देह नहीं कि इस सत्संग से पैदा हुए संस्कारों को अपना रंग दिखाने में काफी समय लग गया परन्तु वे व्यर्थ नहीं गए। कितनी भी ऊसर भूमि क्यों न हो उसमें डाले गए बीजों को जड़ पकड़ने, उनमें अंकुर फूटने और उन अंकुरों के फलने फूलने में समय लगता ही है। यह सौभाग्य था मुंशीराम का कि उसको पत्नी भी ऐसी मिली जिसने उनके इस उत्थान में बड़े धैर्य से पूरा सहयोग दिया और अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी वह पतिसेवा से

प्रमुख नहीं हुई।

पुत्र को पढ़ाई के प्रयोग्य समझकर पिताजी ने उसको नौकरी में लगाने का विचार किया। सबसे बड़े भाई घर का काम काज सम्भालते थे और दूसरे व तीसरे भाई पुलिस की नौकरी में थे। पिताजी ने चौथे पुत्र को भी पुलिस के महकमें में लगाने का निश्चय किया। एक परिचित अफसर से उनको एक स्थानापन्न नायब तहसीलदार के पद पर नियुक्त करवा दिया। तहसीलदार के छुट्टी जाने पर उसका कार्य भी उन्ही को सौंपा गया। परन्तु इस चाकरी पर दो दिन की कहावत चरितार्थ हुई। सेना के एक कप्तान से अपमानित किए जाने पर उन्होंने इस चाकरी को, भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल होने पर भी तिलाञ्जलि दे दी। पिताजी ने दूसरे महकमो मे भी नौकरी दिलाने का प्रयत्न किया परन्तु मुशीराम का मन उसमे उखड़ चुका था। अन्त में पिताजी ने वकालत की पढ़ाई करवाने के विचार से उनको घर भेज दिया। बड़े भाई ने अपना कारबार अलग शुरू कर दिया था इसलिए भी उनको घर भेजना आवश्यक हो गया था। अन्य व्यसनों के छूट जाने पर भी मास मदिरा का सेवन नहीं छूटा था। कुछ विशेष काम न होने से सारा दिन चौपड़ खेलने में निकल जाता था। पाच छः मास इसी प्रकार बीते।

पिताजी के आदेशानुसार पौष सवत् १९३७ के दूसरे सप्ताह में कानून की परीक्षा की तैयारी करने के लिए मुशीराम लाहौर चले गए। धर्मपत्नी को भी साथ लेते गए। परीक्षा में सफलता प्राप्त करने का सकल्प और वकील बनने की आकाक्षा पूरी न हो सकी। कारण यह था कि घर के काम काज का बहुत सा दायित्व मुशीराम के सिर पर था। उसके कारण परीक्षा के लिए आवश्यक उपस्थिति पूरी न हो सकी। अन्तिम दिनों में प्रोफेसर के बीमार हो जाने से एक मास पढाई नही हुई और उपस्थिति के पूरा करने का अवसर हाथ से निकल गया। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ समय अगरेजी उपन्यासों और आवारागर्दी में भी खराब कर दिया गया। पिताजी ने भाई की पत्नी को उनके पास गाजीपुर पहुँचाने के लिए उनको वहा भेजा तो बनारस, बलिया, बरेली आदि मे पुराने मित्रों से मिलने जुलने में बहुत सा समय खराब कर दिया। इसी प्रकार भाई की लडकी की शादी पर गए तो वहा भी कुछ दिन खराब कर दिये थे। खुर्जा से पिता जी पेंशन लेकर घर आने वाले थे इसलिए गाजीपुर से लौटते हुए बहुत सा सामान उनके साथ घर भेज दिया गया। उसकी साज सभाल करने में भी कुछ समय लग गया। साराश यह है कि आखों के सामने नाचती हुई सफलता हाथ से निकल गई। दूसरे वर्ष फिर कानून की परीक्षा के लिए लगकर तैयारी की गई। ८० प्रतिशत उपस्थितिया पूरी कर लेने के बाद निजी तौर पर तैयारी करने के विचार से मुशीराम घर चले आए परन्तु तलवन में कोई शिक्षित साथी न होने से जालन्धर रहने का विचार किया। यहा कुछ अच्छी संगति नहीं मिली। ससुराल मे ही मास मदिरा का इतना अधिक व्यवहार होता था कि मुशीराम फिर उस प्रवाह मे बह गए। परन्तु यह देखकर सभल गए कि उस ढग से रहते हुए परीक्षा की तैयारी नहीं की जा सकेगी, फिर लाहौर चले आए और परीक्षा की तैयारी मे जुट गए। परन्तु परीक्षा में फिर रह गए। इस असफलता का उनके मन पर बहुत बुरा असर पड़ा और जालन्धर में बड़े उदास व निराश रहने लगे। पिता जी पेंशन लेने जालन्धर आए तब अपने साथ तलवन ले गए। तलवन में फिर आवारागर्दी का जीवन शुरू हो गया और मदिरापान का व्यसन एक बार फिर चरम सीमा पर पहुँच गया। फिर भी एक अन्तर्द्वन्द्व मचा रहा। वह था जीवन-निर्वाह की समस्याको स्वतन्त्र बनाने का। कभी नौकरी की सोचते तो कभी वकालत पास कर स्वतन्त्र जीवन बिताने की। अन्त में फिर कानून की परीक्षा देने का निश्चय किया। तन्मय

होकर लाहौर में परीक्षा की तैयारी की गई। ब्रह्म समाज और आर्यसमाज की ओर भी कुछ झुकाव हुआ। मुख्तारी की परीक्षा में बैठे और बड़ी सफलता के साथ परीक्षा पास की। तलवन में इस सफलता पर बड़ी खुशियां मनाई गई।

जालन्धर आकर मुख्तारी का धंधा शुरु कर दिया। इसी वर्ष १३ कार्तिक संवत् १९४० को महर्षि दयानन्द का स्वर्गवास हुआ। महर्षि के स्वर्गवास पर जालन्धर मे शिवनारायण वकील के यहां शोक सभा मुंशीराम की प्रेरणा से हुई। इससे इतना लाभ अवश्य हुआ कि बरेली में उनके सहवास से पैदा हुए संस्कार कुछ पनप उठे।

मुख्तारी का काम शुरू तो किया था जालन्धर में, किन्तु एक मुकद्दमे के कारण पैर जम गए फिलौर में। वहां के तहसीलदार सय्यद आबिद हुस्सैन के पिता उनके पिता के पुराने मित्र थे। उनके कारण भी वहां ही मुख्तारी की दुकानदारी जमा दी गई। नाम अच्छा चल निकला। परन्तु पांच छः मास बाद ही फिर जालन्धर चले आए और जालन्धर मे ही मुख्तारी का काम प्रारम्भ कर दिया, आमदनी अच्छी होने और मित्रों की कुसंगति के कारण मदिरा पान का व्यसन फिर जोर पकड़ गया। पंजाब विश्वविद्यालय ने वकालत की परीक्षा के लिए बी० ए० पास करने का प्रतिबन्ध लगाने का निश्चय कर लिया था और वह अन्तिम वर्ष था जबकि बिना बी० ए० किए परीक्षा दी जा सकती थी। मुंशीराम उससे लाभ उठाने के लिए पौष संवत् १९४१ में फिर लाहौर आगए और वकालत की परीक्षा की तैयारी में जुट गए, परन्तु लाहौर आनेसे पहले मित्रों के यहां दावतों का जो लम्बा सिलसिला चला उसमें मांस मदिरा का खूब व्यवहार होता रहा। यह अति भी मुंशीराम के लिए लाभदायक ही सिद्ध हुई। एक दिन शाम को एक बड़े वकील के यहां दावत थी। वहां शराब का खुला दौर चला। भोजन के बाद सबने तो अपने घरों की राह ली। एक मुख्तार साथी उनके साथ पीछे रह गए। वे नशे मे चूर थे और बाहर आते ही उन्होंने बुरी तरह लड़खड़ाना और बकना शुरू कर दिया मुंशीराम उसको उसके घर ले चले। वे गली में एक घर मे घुस गए। मुंशीराम ने देखा वह एक वेश्या का घर था। किसी प्रकार उसको वहां से लाकर घर पहुचाया। जब अपने घर पहुंचे तो वहां दूसरे मित्र बोतल खोले बैठे थे। रात के आठ ही बजे थे। फिर दौर चल गया, दो बोतलें खुल गई। मित्र आपे मे बाहर हो गए उनको सोने के लिए कमरे मे भेजा ही था कि एक चीख सुनाई पड़ी। मुंशीराम भीतर घुसे तो देखा कि उनके वे मित्र एक युवती को दबोचे उस पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहे थे और वह बुरी तरह छटपटा रही थी। मित्र के इस कुत्सित व्यवहार से मुंशीराम के ज्ञान नेत्र खुल गए और कुछ समय तक आत्मा में एक आन्दोलन मचा रहा, पुराने जीवन के उत्थान पतन की सारी घटनाएं सिनेमा के चित्रों की तरह आखों के सामने नाच गई। आत्मा मे यह हलचल मची हुई थी कि हाथ फिर बोतल और गिलास पर गये। गिलास भरा ही था कि उठ कर खिड़की में आए और गिलास बोतल सहित सामने के मकान की दीवार पर दे मारा। मन की निर्बलता पर आत्मा की दृढता की विजय हुई। उत्थान की पहली सीढ़ी पर पूरे विश्वास के साथ पैर जमा दिया और दूसरे दिन बड़े सवेरे ही लाहौर जाने के लिए स्टेशन पहुंच गए। गाड़ी के आने मे कई घन्टे बाकी थे। कुछ मित्र वापस लौटाने आए। किसी की एक न सुनी। उनको क्या पता था कि उनके एक मित्र ने जीवन का दूसरा मार्ग पकड़ लिया। लाहौर पहुँच कर जीवन का नया क्रम शुरू हो गया। वकालत की परीक्षाकी तैयारी पूरी लगन व तत्परता के साथ इसलिए की गई कि उनके मन में लाहौर हाईकोर्ट के जज बनने की आकांक्षा जाग चुकी थी।

अध्यापक और विद्यार्थी सब उनकी प्रतिभा योग्यता के कायल थे। परीक्षा मे सर्व प्रथम ठहरने वाले परीक्षार्थी से ४० नम्बर अधिक लेकर भी केवल फौजदारी की मौखिक परीक्षा मे २ नम्बर कम रह जाने से नापास कर दिए गए। कारण यह था कि अपनी योग्यता के अभिमान मे परीक्षक से ही भिड गए और उसने चिढ कर ५० मे से २२ नम्बर देकर एक होनहार युवक के जीवन को धक्का देने में सकोच नही किया। विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार ने पाच पाच सौ रुपया लेकर फेल लडको को भी पासकर दिया। मुन्शीराम के पास भी वैसा प्रस्ताव भेजा गया। उन्होने रुपया न देकर समाचार पत्रो में पोल खोलने की धमकी दी। इस पर उनका बिना कुछ लिए दिये ही पास कर दिया गया यह घटना उनके उस चरित्र पर खासा प्रकाश डालती है जिसका निर्माण करने का वे दृढ सकल्प कर चुके थे।

लाहोर मे नए जीवन का जो सूत्रपात हुआ उसमे ब्राह्म समाज और आर्य समाज की ओर कुछ झुकाव हुआ ब्राह्म समाज का सारा साहित्य पढ गए, परन्तु मन को शान्ति नही मिली अशात मन को शात करने के लिए सहसा ही बरेली मे स्वामी दयानन्द के दर्शनो की घटना याद आगई और "सत्यार्थ प्रकाश" प्राप्त करने के लिए घर से निकल पडे। सारा दिन लगाकर 'सत्यार्थ प्रकाश' लेकर ही लौटे उसका स्वाध्याय किया तो जिज्ञासु को वह सब कुछ मिल गया जिसकी कि उसको खोज थी।

मुन्शीराम के साथी उनको आर्य समाज में प्रविष्ट कराने के लिए पहले से ही प्रयत्नशील थे, सवत्-१९४१ के माघ मास के रविवार के दिन बडे सवेरे भाई सुन्दरदास जी उनके निवास स्थान पर आए और उन्होंने पूछा कि 'आर्यसमाज में प्रवेश करने के सम्बन्ध में क्या निश्चय किया है ?" पुनर्जन्म के सम्बन्ध मे बरेली में स्वामी दयानन्द के साथ ईसाई पादरी स्काट का जो शास्त्रार्थ हुआ था उसकी स्मृति हृदय में बनी हुई थी। सत्यार्थ प्रकाश" के स्वाध्याय से वह स्मृति पुनर्जीवित होकर सब शकाए कुशकाए दूरहोगई मानो भटकते हुए जहाज के कप्तान को प्रकाश स्तम्भ दीख गया हो। मुन्शीराम ने उत्तर दिया कि आज मैंने आर्य समाज मे प्रविष्ट होने का निश्चय कर लिया है।" भाई सुन्दरदास जी की प्रसन्नता का कोई पारावार न रहा। वहा ही स्नानादि नित्यकर्मो से निवृत्त होकर वे मुन्शीराम जी को साथ लेकर आर्य समाज पहुचे। उस दिन मुसलमान रबाबी सारगी व तबले के साथ उतर गया मेरे मन दा समा जद तेरा दर्शन पायो।" गीत गा रहे थे। वह मुन्शीराम की मानसिक स्थिति का ही मानो सजीव चित्र था। लाला साईदास जी उन दिनो मे आर्य समाज के माने हुए नेता थे। सब उनका एक सरीखा सम्मान करते थे। भाई सुन्दरदास जी ने धीरे मे उनको मुन्शीराम के निश्चय की सूचना दी और उन्होने उनको अपने पास बुलाकर उनकी पीठ पर हाथ फेरते हुए अपना शुभ आशीर्वाद दिया। भाई दित्तसिंह आर्यसमाज के मुख्य उपदेशक और व्याख्याता थे। भाई जवाहर-सिंह आर्य समाज के मन्त्री थे। तीन चार वर्ष पहले कायम की गई हितकारिणी सभा के कारण उन दोनो के साथ मुन्शीराम जी का पहले का परिचय था। वे दोनो उनके आर्य समाज में प्रविष्ट होने का समाचार सुन कर फूले न समाए। भाई दित्तसिंह जी ने अपना व्याख्यान समाप्त करते हुए मुन्शीराम जी का आर्यसमाज मे प्रविष्ट होने का स्वागत किया और भाई जवाहर सिंह जी ने उनसे कुछ बोलने का अनुरोध किया। मुन्शीराम जी ने खडे होकर कहा कि 'हम सब के कर्तव्य और मन्तव्य एक होने चाहिए जो वैदिक धर्म के एक एक सिद्धान्त के अनुकूल अपना जीवन नही ढाल लेगा, उसको उपदेशक बनने का साहस नही

कुछ संस्मरण—

—[श्रीयुत प्रो० ताराचन्द जी गाजरा]

मेरी आयु लगभग १० वर्ष की थी जब कराची में पहली बार प्लेग का प्रकोप हुआ। डर के मारे हमारा परिवार कराची से शिकारपुर चला आया। पिता जी ने लम्बी छुट्टी ले ली और हम लोग शिकारपुर मे ही रहने लगे। ताया जी पूज्य भाई चॉडूमल जी शिकारपुर आर्य समाज के प्रधान थे। समाज के सत्सङ्ग के लिए कोई विशेष स्थान नियत नहीं था। ताया जी की बैठक ही आर्य भाइयों के मिलने का स्थान था। ताया जी के साथी वकील आपके मुअक्किल, आपके मुन्शी आपके नौकर, आपके मातहत तथा पड़ोस के भद्र पुरुष बैठक के बाहर शाही सड़क पर नीम के वृक्ष के नीचे घण्टों तक वैदिक धर्म की चर्चा करते रहते थे और परिवार के जितने भी हम बालक थे वे वहाँ ही खेलते और वहाँ पर ही मटर की फलियाँ और मक्ई, बेर जो ताया जी के बाग से आते थे, खूब खाते पीते रहते थे। इस स्थान पर छोटे मोटे शास्त्रार्थ

— — — —

करना चाहिए भाड़े के टट्टुओ से धर्म का प्रचार नही होसकता इस पवित्र कार्य के लिए स्वार्थ-त्यागी पुरुषो की आवश्यकता है '

तब यह किसे मालूम था कि मुशीराम जो प्रकारान्तर से अपने ही भविष्य की घोषणा कर रहे थे। लाला साईदास जो ने इतना अवश्य कहा कि 'आर्य समाज मे यह नई स्पिरिट (स्फूर्ति) आई है। देखे, यह आर्य समाज को तारती है या डुबो देती है।"

जालन्धर में यह समाचार बड़ी प्रसन्नता से सुना गया। लाला देवराज जी ने स्थानीय आयसमाज का अध्यक्ष पद मुशीराम जो को सौंप दिया और स्वय मन्त्रिपद सम्भाल लिया। लाहोर में कुछ मित्रो ने मिलकर सप्ताह मे एक दिन किसी भी मुहल्ले मे आर्य समाज का प्रचार करना शुरू किया। इन दोनो जिम्मेवारियो से दृढ़ आर्य बनने की आकाक्षा उनके हृदय मे और भी प्रबल होगई। 'सत्यार्थ प्रकाश" का नियम से स्वाध्याय किया जाने लगा। दसवे समुल्लास में भक्ष्याभक्ष्य का प्रकरण पढने पर मास भक्षण के सम्बन्ध में दिल में कुछ बेचैनी पैदा हुई दूसरे दिन सवेरे घूमकर लौट रहे थे कि अनारकली के मोड पर मांस का टोकरा लिए एक दुकानदार चला आरहा था। बकरो की टागे बाहर लटकी हुई थी। दृश्य देखा न जासका मास भक्षण के सम्बन्ध मे मन मे पैदा हुई शका को कुछ बल मिला। डेरे पर पहुँच कर एक बार फिर दसवे समुल्लास का पाठ किया। शाम को भोजन के लिए बैठे तो हरराज की तरह रसोइया मास की कटोरी भी थाली मे रख लाया। मुशीराम जी ने कटोरी उठाई और सामने की दीवार पर जोर से दे मारी। साथी कुछ समझ न सके परन्तु मुशीराम का हृदय मदिरापान की तरह मास भक्षण के विरुद्ध भी विद्रोह कर चुका था और उन्होने जैसे शराब के गिलास और बोतल का परित्याग किया था वैसे ही मास की कटोरी का भी कर दिया पूछने पर बोले कि एक आर्य के लिए मास भक्षण महापाप है।

इस प्रकार कल्याण मार्ग पर बढाया गया प्रत्येक कदम दृढता से आगे ही बढ़ता चला गया। मानसिक कमजोरी पर पूरी दृढता के साथ विजय प्राप्त करने का ही यह परिणाम समझना चाहिए कि कल्याण मार्ग के पथिक लालामुंशीराम महात्मा और स्वामी श्रद्धानन्द बनने के बाद भी अपनी मृत्यु से अमर बलिदानी बनकर ऐसा उदाहरण छोड गए जो अनन्तकाल तक देशवासियो को आत्म-कल्याण के लिए प्रेरणा एक स्फूर्ति देता रहेगा।

भी होते रहते थे। दस्त साज डाक्टर गुलाम अली, अर्जी नवीस जुम्माखान और कुछ अन्य सज्जन बडे चाव से ताया जी से प्रश्न करते और वे प्रत्येक प्रश्न का पूरे तर्क और गम्भीरता से उत्तर देते। इस वातावरण में रहते हुए आर्य समाज के साथ गाढ़ प्रेम हो गया था और विद्वानों से मिलने और उनके चरणों में बैठने का पूरा चाव उत्पन्न हो गया था।

इस प्रकार ४-५ साल व्यतीत हुए। एक दिन सुना कि आर्य समाज के सबसे बडे नेता महात्मा मुन्शीराम जी शिकारपुर में पधार रहे हैं। स्वाभाविक रूप से उत्कण्ठा हुई कि महात्मा जी के दर्शन करें। पता लगा कि महात्मा जी ताया जी के भागीदार बैरिस्टर मूलराज के स्थान पर विराजमान हैं। भागता हुआ वहां गया। देखा कि एक दिव्य मूर्ति वहा पर विराजमान है और आपके साथ दो और भी महानुभाव पधारे हुए हैं। उनमें से एक तो मास्टर दुर्गाप्रसाद जी थे। दूसरे का नाम याद नहीं रहा। महात्मा जी और मास्टर जी दोनों ही मन को आकर्षण करने वाली मूर्तियाँ थीं। दोनों की बड़ी सुन्दर दाढ़ियाँ थीं। मैं दूर बैठा था, दोनों ने बडे प्रेम से समीप बुलाया और पीठ पर हाथ फेर कर मुझे आशीर्वाद दिया। थोड़ी देर में मास्टर विशनदास का एक आदमी वहाँ पर पहुचा। मास्टर विशनदास जी मेरे अध्यापक रह चुके थे और वे सुधार सभा के मुख्य संचालक थे। सायंकाल की सन्ध्या उनके सुधार सभा भवन में होने वाली थी और इसी लिये ये आदमी बैरिस्टर मूलराज के स्थान पर पहुंचे हुए थे। इस युवक को नगर में घोषणा करने का काम सौंपा गया था। उसने कागज पर घोषणा के शब्द लिखे और बाहर गया। मैं उसके पीछे गया और घोषणा के शब्दों की अपनी अपनी बुद्धि अनुसार बदल कर सरल कर दिया। सायंकाल की सन्ध्या हो चुकी, सब अपने घरों को चले गये। दूसरे दिन प्रात काल महात्मा जी को और मास्टर जी को शिकारपुर के आर्य समाजी नगर के अति मनोरंजक स्थान सिन्ध बाह शहर ले गये। शिकारपुर के अन्य लोगों की भांति इन महानुभावों ने भी सिन्ध बाह शहर में डुबकी लगाई और तैरने का प्रयास किया। दोनों के बालों और दाढ़ियों में बाह की काली रेत जम गई और उनके रूप को विचित्र बना दिया। फिर बाह में से निकल कर शरीर को मुलतानी मट्टी लगा कर सब लोगों ने कूए के स्वच्छ जल में स्नान किया। वहा के रिवाजानुसार थोड़ा सा नाश्ता करके सब चले गये। यह था महात्मा जी के साथ मिलने का प्रथम अवसर।

महात्मा जी आये थे गुरुकुल के लिए धन-संग्रह करने और वे विशेष कर शिकारपुर के सेशन जज दीवान दयाराम गिदूमल जी से मिले। ठीक तो पता नहीं। हो सकता है कि दीवान जी ने १०००) इस कार्य के लिए दिया हो।

यद्यपि मेरा जन्म आर्य समाज परिवार में हुआ था, और मेरे सुसर भी आर्य समाजी थे तो भी मेरी सगाई बहुत छोटी अवस्था में हुई थी। सगाई के समय से लेकर विवाह के समय तक मैं अपने सुसर से आर्य समाज में खूब मिलता जुलता और उनके उपदेश सुनता रहता। एक रात हम लोग आर्य समाज में बैठे थे। उस समय आर्यसमाज का मन्दिर उस भवन में था जो सेठ रामसिंहजी ने वर्कशाप के सामने आर्यसमाज को बिना किराये दे रखा था। अकस्मात् एक रेल्वे का चपरासी वहाँ पर पहुंचा। रुक स्टेशन के असिस्टेन्ट स्टेशन मास्टर खुशालीराम जी ने उनको भेजा था। इस सन्देशवाहक से पता लगा कि महात्मा मुन्शीराम जी रुक स्टेशन पर शाम को चार बजे पहुंचेंगे और रात्रि के बारह बजे तक वहाँ ही विराजेंगे। यह सन्देश पाकर हम

लोगों ने निश्चय किया कि रुक स्टेशन पर जाकर महात्मा जी के दर्शन करें। दूसरे दिन हम लोग शिकारपुर की कुछ मिठाई लेकर रुक की ओर चल पड़े। पहुंचे तो देखा कि महात्मा जी एक छोटे से कमरे में विराजमान हैं। हम लोग नमस्ते कह कर एक तरफ बैठ गये। महात्मा जी नहा धोकर नित्य कर्म में लग गये। आपने बड़े प्रेम पूर्वक सन्ध्या के पश्चात् यज्ञ किया और यज्ञ करते हुए नित्य कर्म के महत्व को भी जता दिया। कुछ देर के पश्चात् कुछ खालसे वहाँ पर पधारे और महात्मा जी का एक सारगर्भित उपदेश हुआ। लाला खुशालीराम जी ने सिखों को कहा, जो कुछ पूछना है वह महात्मा जी से पूछ लें। उन्होंने उत्तर दिया कि जो कुछ महात्मा जी कहते हैं वह सब सत्य है। कुछ प्रश्न करने की आवश्यकता नहीं। अब महात्मा जी ने भोजन करना आरम्भ किया। इस समय एक अन्य पंजाबी महाशय, जिसका नाम मुझे याद नहीं रहा, जो सम्भवतः वहीं का स्टेशन मास्टर था और कद का काफी लम्बा था, वहाँ पर आया। वह महात्मा जी से आर्य समाज के घरेलू झगड़ों के सम्बन्ध में बातचीत करने लग गये। महात्मा जी ने हरेक प्रश्न का बड़ी गम्भीरता से और प्रेम से उत्तर दिया। अब गाड़ी का समय आ गया। महात्मा जी के गले में फूल माला डाल कर हम लोग चल पड़े।

तीसरी बार मैं महात्मा जी से १९११ के अन्त में मिला। अभी मैं एम० ए० की परीक्षा में बैठ कर आया था और परिणाम नहीं निकला था। मन बहुत व्याकुल था, और उस व्याकुलता को दूर करने के लिए भिन्न २ स्थानों पर जाता और भद्र पुरुषों से मिलता था। मैंने महात्मा जी के दर्शन उनके बंगले में किये और उनके सामने अपने दिल को खोल कर रखा। महात्मा जी ने मुझे सार्वजनिक कार्य करने के लिए उत्साहित किया और मन को शान्त करने के लिए जप करने का उपदेश किया।

इसके पीछे मैं महात्मा जी से पत्र व्यवहार करता रहा। इस प्रकार जो सम्बन्ध बना उसका परिणाम यह हुआ कि मैं १० महीनों तक गुरुकुल काँगड़ी की सेवा में रहा। इन दिनों में मैंने महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित्र लिखा और १९१४ के गुरुकुल उत्सव का विवरण भी वैदिक मैगज़ीन में लिखा। जो १० मास मैंने गुरुकुल में काटे वे बहुत ही सुखद रहे। महात्मा जी कभी २ लोगों से रुष्ट होते थे परन्तु उनका हृदय सदा उदार रहता था और सबसे प्रेम पूर्वक व्यवहार करते थे। आप लम्बे चौड़े नियमों उपनियमों में विश्वास नहीं रखते थे। आप अपने व्यक्तित्व और सद्भावनाओं से शासन करते थे। आप एक Patriarch के परिवार के पितामह थे।

गुरुकुल छोड़ने के पश्चात् महात्मा जी से पत्र व्यवहार भी होता रहा और मिलना जुलना भी। एक बार काशी में हिन्दू महासभा के अधिवेशन पर मैं आपसे मिला। उस मेले में आपका वही स्थान रहा जो गौरी शंकर का हिमालय के अन्य शिखरों में है। कितना भी दूर जाते थे तो आपका मुंह दिखाई देता था। आपके बोलने का ढंग भी बड़ा गम्भीर और प्रभावशाली था। एक मंजिल पर कुछ सनातनी पण्डित शुद्धि और अछूतोद्धार के सम्बन्ध में कुछ पीछे हटने लगे। मुझे पता लगा, मैंने महात्मा जी को यह बात सुनाई। महात्मा जी बड़े शान्त रहे और डा० भगवानदास जी को बुला कर उनसे मन्त्रणा कर बड़े सुन्दर ढंग से स्थिति को सम्भाला।

इसके पश्चात् बम्बई में सेठ शूरजी वल्लभ-

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

चीन के आक्रमण की पृष्ठ भूमि*

आक्सफोर्ड के एक मर्मज्ञ का विश्लेषण

२ वर्ष हुए संसार की कम्युनिस्ट पार्टियों के प्रतिनिधि श्रीयुत क्रूशेव और श्रीयुत माओ तथा उनके समर्थकों के कटु संघर्ष को जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के धराशायी होने का भय उपस्थित हो गया था दूर करने के उद्देश्य से मास्को में एकत्र हो रहे थे। श्रीयुत माओ "क्रान्तिकारी युद्ध" की और क्रूशेव "शान्ति पूर्ण आर्थिक प्रतियोगिता" की नीति का परिपालन चाहते थे।

लम्बे संघर्ष और वाद विवाद के उपरान्त चीनी एक अस्पष्ट वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने के लिए सहमत हो गए थे जिसमें समस्त कम्युनिस्टों के लिए एक समान नीति अंकित की गई थी। चीनियों ने सहमत होते हुए यह शर्त रखी थी कि २ वर्ष के पश्चात् (अर्थात् अब) स्थिति पर पुनर्विचार के लिए इसी प्रकार के एक सम्मेलन की योजना की जायगी। दोनों ही पक्ष अपनी रीति-नीति की भूल में मस्त रहे और दोनों ही अपनी नीतियों के समर्थन में प्रमाण रूप में उस वक्तव्य के अंशों को उद्धृत करते रहे।

श्री माओ ने कहा है कि सोवियत संघ को अपनी सैनिक शक्ति के कारण कम्युनिस्ट क्षेत्रों का नेतृत्व करना चाहिए क्योंकि चीन अभी तक ऐसा करने के योग्य नहीं है। परन्तु उनके (माओ त्सुंग) प्रवक्ताओं ने यह भी कहा है कि जब चीन के पास अपने आणविक आयुध हो जायेंगे तब संसार की परिस्थिति मूलतः बदल जायगी। अब चीन ने यह संकेत किया है कि हमारे पास शीघ्र ही आणविक आयुध हो जायेंगे परन्तु चीन और रूस के सैद्धान्तिक युद्ध पर विचार करने के लिए कम्युनिस्ट दलों का जो सम्मेलन होना तय हुआ था उसके होने का अभी तक कोई संकेत नहीं मिला है।

नया संघर्ष

१९६० का सम्मेलन होने से पूर्व रूस और चीन के मध्य कटु पत्र-व्यवहार हुआ था जिसका संसार के समाचार पत्रों को पता लग गया था। स्पष्ट है कि इसी प्रकार के पत्र-व्यवहार के पश्चात् रूस और चीन में पुनः विवाद उठ खड़ा हुआ है। चीनी इस बार श्री क्रूशेव पर न केवल बदल जाने का ही आरोप लगा रहे हैं अपितु यह भी आरोप लगा रहे हैं कि वह साम्राज्यवादी बन गये और उन्होंने चीनियों के राज्य और उनके दल की स्थिति हेय बना दी है।

श्रीयुत टिटो और क्रूशेव के विरुद्ध चीनी लोग विष उगल रहे हैं। उनकी केन्द्रीय कमेटी के हाल के वक्तव्य उसके १३ वें वार्षिकोत्सव में दिये गये श्री चाऊ एन लाई और श्री चेन यी के भाषणों से सुस्पष्ट हुई आत्म निर्भरता की चुनौती और भारत पर हुए सैनिक आक्रमण इन

* टाइम्स आव इण्डिया (२-११-६२) के सौजन्य से

सब का कारण क्या है? चीनियों को किसी बात ने बहुत व्याकुल किया है। जिन वस्तुओं को वे प्रत्यक्षत बहुत नापसन्द करते हैं उनमें से एक टीटो का मनाया जाना है। क्रुशेव ने टीटो को पुन: मनाना प्रारम्भ किया है परन्तु वे इससे उतने परेशान नहीं देखपड़ते जितने क्रुशेव द्वारा पूर्व और पश्चिम में शान्त आर्थिक प्रतियोगिता पर बल दिये जाने से परेशान हैं। क्रुशेव की विचार धारा की दिशा के द्योतक दो तथ्य सामने आये है। एक तो यह कि उन्होंने जापान के उद्योगपतियों से साठ-गाँठ की है और दूसरा यह है कि उन्होंने वर्ल्ड मारकीट रिव्यू (सितम्बर १६६२) में सकेत किया है कि युरोप के साझा बाजार और सोवियत सघ द्वारा प्रशासित आर्थिक क्षेत्र में प्रतियोगिता की सम्भावना है। आर्थिक कठिनाइयों और पिछड़े पन के कारण इसमें चीन का दर्जा दासवत् रहेगा। साझा बाजार की वास्तविकता सामने आ जाने पर श्रीयुत क्रुशेव को और अधिक परिवर्तन वादी बनना पड़रहा है। मार्क्स और लेनिन ने पूंजीवाद की दुर्बलताओं पर बल दिया था। क्रुशेव के इस आदर्शवाद और आर्थिक उत्थान के व्यावहारिक उपायों में जिससे कम्युनिस्ट राज्यों की आर्थिक अवस्था का ढांचा युरोप के साझा बाजार जैसा बन जाय जो सघर्ष देख पड़ता है उसमें व्यावहारिक उपाय विजयी जान पड़ते है जिसका निश्चित अभिप्राय होगा सोवियत सघ के आर्थिक जीवन में पूंजीवादी सिद्धान्तों का प्रवेश।

व्यापार और सहायता

ये उपाय वे हैं जिससे शान्ति पूर्ण आर्थिक प्रतियोगिता की नीति विकसित हुई है जिसका अनुसरण श्री क्रुशेव सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की २० वीं कान्फ्रेन्स के समय से कर रहे हैं और जिसका उल्लेख उन्होंने अक्टूबर १६६१ में हुए पार्टी के २२ वें अधिवेशन में स्वीकृत प्रोगाम में किया था। उस अधिवेशन के निर्णयों से शेष कम्युनिस्ट आन्दोलन बंधा होगा। यह चीनियों ने कभी भी स्वीकार न किया था। उन्होंने मुख्य रूप से उन आर्थिक उपायों पर जिनकी रूप रेखा इस अधिवेशन में तय हुई थी, बुरा माना था। सोवियत संघ ने कोरिया युद्ध के समय चीन को जो ऋण दिया था उसकी वापसी की माग की, सोवियत विशेषज्ञों को चीन से वापस बुला लिया और चीन को दी जाने वाली सहायता आदि में कमी कर दी। इस पर भी चीनी क्रुद्ध हुए।

वस्तुत सोवियत नीति आंशिक रूप में आर्थिक आवश्यकताओं के कारण बदली जिन्हें क्रुशेव व्यापारिक लेखे जोखे की दृष्टि से लेनिन के सिद्धान्त कह कर तर्क उपस्थित करते हैं कि "हमारे देश में कम्युनिज्म का निर्माण संसार की समस्त क्रान्तिकारिणी शक्तियों के प्रति हमारे अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व की पूर्ति के समकक्ष है।" (प्रवदा ६-३ ६२) उन्हें इस प्रकार की बात इसलिए कहनी पड़ी कि एक ओर तो वह लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा करने का प्रयास करने के लिए बाध्य हुए और दूसरी ओर उन्हें हथियारों और आकाशीय उड़ानों की प्रतियोगिताओं को बनाए रखने में व्यस्त रहना पड़ा। इस प्रकार उन्हें अपने साधनों को अधिक से अधिक फैलाना पड़ा है परन्तु अपेक्षाकृत अधिक भूखे चीनियों को यह अनुभव करने के लिए क्षमा किया जा सकता है कि क्रान्ति के लिये उन्होंने मुख्यत कोरिया में जो बलिदान किया उसके उपलक्ष्य में सोवियत संघ से उन्हें निस्वार्थ सहायता प्राप्त होनी चाहिये भले ही कम्युनिज्म की दिशा में सोवियत संघ की प्रगति कुछ मन्द पड़ जाय।

अभी कुछ समय हुआ "प्रवदा" को एक

अप्रकाशित दस्तावेज प्राप्त हुई है जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह मार्च १९१८ में लेनिन ने लिखाई थी। इस दस्तावेज पर सम्पादकीय स्तम्भों पर विचार करते हुए 'प्रवदा' ने लिखा था कि "आर्थिक कार्यों की तुलना में राजनैतिक कार्य आर्थिक कार्य के अधीन होते हैं।" लेनिन का एक लिखित आदेश उद्धृत किया गया है जिसमें सोवियत संघ की प्रजा को यह प्रेरणा की गई है कि राजनैतिक आन्दोलन कारियों का स्थान अर्थ-व्यवस्था करने वाले एक नये प्रकार के नेता को देने के निमित्त पूंजीवादियों के विशेषज्ञों का प्रयोग करो जिनमें अमेरिकन भी शामिल हैं।

यही कारण है कि रूस के नेताओं को अब उन बुद्धि सगत आर्थिक उपायों का अवलम्बन करना पड़ा जिनका प्रचार बहुत समय पूर्व उनके आलोचकों ने किया था जिनमें चीन के कुछ आयोजक और सैनिक नेता भी सम्मिलित थे। यही कारण है कि श्रीयुत माओ और उनके पुराने गुरिल्ला राजनीतिज्ञों को अपने इस नारे का कि 'राजनीति ही सर्वोपरि' है अधिक जोर से उच्चारण करके, रूस के 'आर्थिक और परिवर्तन वाद' के समर्थकों और चीन की सेना और पार्टी के दक्षिण पन्थी साथियों पर जो साम्राज्य वादियों का साथ देते हैं आक्रमण करके अपनी झेंप मिटानी पड़ रही है। चीन के कम्युनिस्ट दल के मुखपत्र रैड फ्लेग (लाल ध्वजा) ने अभी कुछ दिन हुए एक लेख प्रकाशित किया है जिसमें रूस के प्रारम्भिक क्रान्ति-कारियों के एक वर्ग (अर्थ विशेषज्ञों) की आलोचना की गई जिन्होंने कार्यकर्त्ताओं की आर्थिक मांगों और जीवन के उच्च स्तर के लिए संघर्ष करने की आवश्यकता का समर्थन किया था। यह तो स्पष्ट ही है कि इस आलोचना का लक्ष्य सोवियत रूस की वर्तमान आर्थिक व्यवस्था ही थी और श्रीयुत क्रुश्चेव ने उपर्युक्त लेख में उन लोगों की भर्त्सना करते हुए जो अपने को 'मार्क्सवादी' कहते हैं, इस बात की पुष्टि की थी। अब यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि चीनियों ने प्रत्यक्षत श्री टीटो वा अमेरिकन साम्राज्यवाद पर जो आक्रमण किया था वह अप्रत्यक्ष रूप से श्रीयुत क्रुश्चेव पर आक्रमण था।

चीन के प्रेस और रेडियो के समाचारों के विश्लेषण से जो १९५९ से प्रसारित हो रहे हैं यह स्पष्ट है कि श्रीयुत माओ की पार्टी में उनके जो विरोधी हैं उन्हें सोवियत रूस का समर्थन प्राप्त रहता है और सोवियत संघ के लोग चीन के साथ वे ही चालबाजियाँ करने का यत्न करते हैं जिनके कारण युगोस्लेविया स्टैलिन के कैम्प से बाहर निकल गया था। इस बात का वर्णन श्रीयुत टीटो के सहायक डिजिलास ने अपनी 'स्टैलिन के साथ वार्तालाप' नामक पुस्तकमें किया है जो अभी हालमें छपी है। चीन की 'वर्ल्ड नालेज' (ससार का ज्ञान) मासिक पत्रिका में नवम्बर १९६१ में प्रकाशित एक लेख में श्रीयुत टीटो पर यह आरोप लगाते हुए कि वे अलवानिया में उन्हीं चालबाजियों से काम ले रहे हैं यह कहा था कि 'परिवर्तन वादियों' ने अलवानिया के आर्थिक विकास को कुण्ठित करने के लिए वहा अपने विशेषज्ञ और सहायक भेजे हैं और उन्होंने सैनिक नेतृत्व में अपने लिए एजेन्टों को खरीदने का यत्न किया है।

पहली चिन्ता

यह बात महत्व पूर्ण है कि श्रीयुत माओ की केन्द्रीय कमेटी के सब से ताजा कठोर वक्तव्य में इस बात का उल्लेख है कि उनके दल के भीतर 'वर्ग संघर्ष' चल रहा है और विदेशीय तत्व उच्छेद में रत हैं। इसके साथ ही दूसरे स्वर में

अगस्त १९५९ की केन्द्रीय कमेटी की मीटिंग की चर्चा की गई है जिसके उपरान्त माओ की कम्यूनों की योजना और रक्षा नीति का विरोध करने के कारण रक्षा मन्त्री मार्शल पेंग सेना से हटा दिये गये थे।

इस आन्दोलन की शृंखला हार्बिन शंघाई आदि स्थानों पर स्थित सोवियत राजदूतालयों को उठा देने की हाल की कार्यशाही के साथ जोड़ी जा सकती है। १९२६ की तरह चीन की सुरक्षा पुलिस ने इन दूतालयों को घेर कर इनकी तलाशी ली थी। पार्टी के सदस्यों ने जो भाग कर हांग कांग चले गये हैं संकेत किया है कि श्रीयत माओ ने स्पष्ट रूप से पार्टी की मीटिंगों में और अस्पष्ट रूप में प्रेस में सोवियत की उच्छेद कारिणी कार्यवाहियों की चर्चा की थी (अतिशयोक्ति की थी) इसका उद्देश्य आंशिक रूप में यह दिखाना था कि उनकी आर्थिक नीति की असफलता का कारण ये कार्यवाहियाँ रही हैं। यद्यपि श्रीयुत माओ ने सदैव यह स्पष्ट किया है कि उनकी सर्व प्रथम चिन्ता सशस्त्र सेनाओं का कन्ट्रोल रही है।

इस पृष्ठ भूमि को समक्ष रखते हुए भारतीय सीमा की गड़बड़ और 'वर्ग संघर्ष' में जिसे केन्द्रीय कमेटी के वक्तव्य में स्वीकार किया गया है और जो चीनी कम्युनिस्ट दल के भीतर चल रहा है, तारतम्य देख पड़ता है। १९५८ में फार्मोसा को लेने का जो असफल यत्न हुआ था उससे यह स्पष्ट हो गया था कि श्रीयुत माओ के सिद्धान्तों के रहते हुए भी आधुनिक हथियार निर्णायक होते हैं और रूस की सहायता के बिना चीन शक्ति हीन था।

चीनियों ने १९५९ में भारतीय सीमा पर गड़बड़ की थी परन्तु उसका कोई तात्कालिक परिणाम न हुआ था। इस बार श्रीयुत नेहरू ने चीनियों की घुस पैठ के निराकरण की ठान ली है। श्रीयुत माओ इस संघर्ष को चीनियों की यहाँ तक कि आलोचकों की देश भक्ति को भी जाग्रत करने में प्रयुक्त कर सकते हैं। सेना अधिकाधिक सैनिक प्रशिक्षण एवं आधुनिक हथियारों की उपलब्धि राजनैतिक प्रशासन के निराकरण रूस के साथ चीनी झगडे के शमन तथा, सेना पर पार्टी के प्रशासन की समाप्ति के लिए इस संघर्ष का प्रयोग कर सकती है। हो सकता है कि चीनी सेना के कुछ तत्त्वों ने उपर्युक्त उद्देश्यों को लक्ष्य में रख कर सीमा की घटनाओं को प्रोत्साहित किया हो।

(पृष्ठ ३४ का शेष)

दास जी के घर पर महात्मा जी के दर्शन हुए। शुद्धि का दौर था। महात्मा जी के साथ एक आगा खानी महाशय बातचीत कर रहे थे। दोनों कुर्सियों पर बैठे हुए थे, कमरे में अधिक लोग आने लगे। महात्मा जी कुर्सी को छोड़ कर दरी पर बैठ गये। बैठते हुए कहा भाई अपना पुराना भारतीय ढंग ही ठीक है। बातचीत चलती रही और मैंने चाहा कि कुछ मैं भी प्रश्न कर्ता को समझाऊं। इस मेरी धृष्टता से महात्मा जी तनिक भी नाराज़ न हुए, पर बड़ी प्रसन्नता से अपने विचार प्रकट करने का अवसर दिया।

चीन ने भारत पर आक्रमण क्यों किया?

[श्री वी० आर० भट्ट (लंदन)]

चीनी आक्रमण का उद्देश्य क्या है और इस आक्रमण को विफल करने के लिए भारत को क्या सहायता दी जाय इस विषय पर ब्रिटेन के राजनीतिज्ञों और प्रेक्षकों ने विचार किया है।

यह सिद्ध करने के लिए कि भारत आक्रान्ता है, और चीन ही शान्तिपूर्ण समझौता चाहता है चीनी लोग ब्रिटेन में उग्र कागजी प्रचार कर रहे हैं परन्तु उनके इस प्रचार से सिवा कम्यूनिस्टों के अन्य किसी पर प्रभाव नहीं पड़ा है।

ब्रिटेन के सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्रों की यह सम्मति है कि चीनी आक्रमण पूर्व नियोजित और सुव्यवस्थित था। श्रीयुत एडवर्ड शील(लार्ड प्रीवी सील) ने गत सप्ताह पार्लियामेंट में अपनी यही प्रतिक्रिया व्यक्त की थी।

तिब्बत में विशेषत हिमालय के दर्रों में सड़कों के निर्माण के पुरोगम, हवाई अड्डों एवं छावनियों की संस्थापना और १६ डिवीजनों के एकत्रीकरण से जो श्रीयुत नेहरू जी के विश्वासानुसार तिब्बत में विद्यमान हैं, उपर्युक्त तथ्य की सम्पुष्टि होती है।

ऐसा समझा जाता है कि तिब्बत में हुए १९५९ के आक्रमण से पूर्व ही ये तय्यारियाँ प्रारम्भ होगई थीं। सिक्यांग को तिब्बत और हिमालय की सीमा से जोड़ने वाली अकसाई चिन सड़क आक्रमण से ३ वर्ष पूर्व बन चुकी थी।

ब्रिटिश प्रेक्षकों की धारणा है कि इस सड़क का निर्माण बड़ा सुरक्षित मार्ग होगा और इस सड़क के द्वारा भारत की सीमा पर सुगमता एवं सुरक्षा पूर्वक सेनाएं भेजी जा सकेंगी। चीनी लोग अभी हाल में लद्दाख में जो आगे बढ़े हैं उससे भारत को जाने का उनका मार्ग खुल गया है भले ही यह बात क्षणिक ही क्यों न हो।

यदि चीनी लोग लगभग गत ६ वर्ष से भारत आक्रमण की योजना बना रहे थे तब प्रश्न होता है कि उन्होंने आक्रमण में इतना विलम्ब क्यों किया जबकि भारत पिछले महीने जब आक्रमण हुआ था पूरी तरह तय्यार न था और इससे पूर्व भी उसकी तय्यारियां कम थीं?

इस विषय में ब्रिटिश प्रेक्षकों का विचार यह है कि तिब्बत को हथियाने और उसकी जन शक्ति को सड़कों एवं हवाई अड्डों के निर्माण में मदद करने के निमित्त विवश करने के लिए पूरी तय्यारियों की आवश्यकता थी। इसके अतिरिक्त चीनी सैनिकों को ऊंचे पहाड़ों के युद्ध के लिए प्रशिक्षित करना, लम्बे संघर्ष के लिए सामान एकत्र करना संचार व्यवस्था को सुव्यवस्थित करना एवं बढ़ाना भी आवश्यक था।

ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का उत्पन्न किया जाना वा विद्यमान होना भी आवश्यक था जो आक्रमण के लिए चीनियों के अनुकूल होती। भारत के पड़ोसी देशों ब्रह्मा, नेपाल और पाकिस्तान पर डोरे डालना भी आक्रमण की तय्यारी का एक अंग था। लाओस प्रश्न का सुलझना भी अनिवार्य था। लाओस में शत्रु रूप में उलझने से अमेरिका से टक्कर लेना समझा जाता जिससे चीनी लोग अपनी धमकियों और प्रलापों के बावजूद भी बड़ी सावधानता से बचते रहे हैं जैसा कि क्यूमाओं और मात्सू में भी देखा गया था। लाओस के प्रश्न पर

अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के कारण एक पार्श्व से संभावित खतरा दूर हो गया था।

भारत और पाकिस्तान की निरन्तर कटुता को चीन सम्भवत अपने अनुकूल समझता रहा है। उसकी धारणा थी कि इससे भारत की चीनियों से लोहा लेने की शक्ति में व्यवधान उपस्थित हो जायगा। भारत की अपनी उद्घोषित रक्षा नीति मे भी यह बात स्वीकार की गई थी कि भारत के लिए पाकिस्तान अपेक्षाकृत बहुत बड़ा खतरा है। चीनियों को ऐसा लगता था कि भारत के साथ युद्ध में पाकिस्तान जैसे साथी का कूटनीतिक दृष्टि से साथ हो जाने से साम्राज्यवादियों के एक मित्र को अपने साथ रखने जैसी बात हो जायगी। फलत परिस्थितियों के इस कूटनीतिक ताल-मेल से भारत जैसे तटस्थ देश की स्थिति खराब हो जायगी।

चीन ने यह भी सोचा होगा कि क्यूबा और बर्लिन के प्रश्नों पर अमेरिका और रूसके एक दूसरे से उलझ कर व्यस्त हो जाने से भारत पर आक्रमण की पूर्व से आयोजित योजना को क्रियान्वित करने के लिए अनुकूल अवसर प्राप्त हो जायगा। क्यूबा का संघर्ष और भारत पर आक्रमण एक साथ हुए इससे ब्रिटेन के राज्याधिकारी इस परिणाम पर पहुचे कि इन दोनों घटनाओं में एक रूपता थी चाहे वह पूर्व से नियोजित था वा नहीं। चीनियों का क्यूबा में एक बड़ा कूटनीतिज्ञ मिशन है बहुत संभव है चीनियों को इस बात का ज्ञान हो कि वहां रूस ने अणु आयुधों के अड्डे बनाए हुए थे। चीनियों को यह आशाहोगी कि अमेरिका ऐसे कदम उठा सकता है जिससे कि संघर्ष उग्र हो जाय और रूस एवं अमेरिका उलझ जायें और अन्य किसी मामले पर वे ध्यान न दे सकें। यदि श्रीयुत ख्रुश्चेव पीछे न हटते जिसे चीनी लोग तुष्टीकरण कह कर उनकी आलोचना कर रहे हैं तो वस्तुत चीनियों का अनुमान सत्य सिद्ध हो जाता।

भारत की आन्तरिक अवस्था भी चीनियों को आक्रमण के लिए अनुकूल देख पड़ी होगी। चीन के गत ३ वर्ष के समाचार पत्रों को पलटने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि चीन के लोगों और उनके प्रशासकों के मन में यह बात बैठ गई वा बिठादी गई थी कि भारत का पतन हो रहा है और उसके धराशायी होने का खतरा मुह बाए खड़ा है। भारत में हुई प्रत्येक हड़ताल का (१९६० में राजकर्मचारियों की जो हड़ताल हुई थी उसको चीन ने बड़ी सावधानता से देखा और प्रोत्साहित किया था) भारत सरकार विरोधी प्रत्येक प्रदर्शन का, पजाब और मद्रास के भाषायी और पृथकतावादी आन्दोलनों का ही चीन के समाचार पत्रों ने नोटिस लिया था अन्य किसी रचनात्मक कार्य का नहीं।

अतएव तय्यारी करलेने और ऐसी तारीख चुन लेने पर जो चीनियों को अनुकूल जान पड़ती थी चीन भारत पर टूट पड़ा और यह प्रश्न उपस्थित कर दिया कि इस आक्रमण से चीन क्या प्राप्त करने की आशा रखता था। ब्रिटिश राजनैतिक क्षेत्रों में चीन के उद्देश्यों के सम्बन्ध में विविध प्रकार के अनुमान लगाए गए हैं परन्तु एक बात में प्राय सब सहमत हैं और वह यह कि वर्तमान में चीनियों के उद्देश्य सीमित हैं और भारत पर व्यापक आक्रमण करने का उनका इरादा नहीं है। परन्तु उन के सीमित उद्देश्य इस प्रकार के हैं कि जिनसे भारत राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से इतना जर्जर हो जाय कि अन्त में भारत को विजय करने की आशा बंध जाय।

ब्रिटिश सरकार की दृष्टि में इस समय उनका एक ही उद्देश्य है और वही सबसे बड़ा

है। गत सप्ताह परराष्ट्र मन्त्री श्रीयुत लार्डहोम ने लार्ड सभा में अपने भाषण में इसकी चर्चा भी की थी। यह उद्देश्य है भारत को सीमा सम्बन्धी ऐसे समझौते के लिए विवश करना जिससे कि भारत की नाके बन्दी करने के लिए उन्हें अच्छी जगह मिल जाय। मैकमोहन रेखा के दक्षिणवर्ती कुछ स्थानों में प्रवेश करके और लद्दाख में आगे बढ़ कर इस उद्देश्य की सिद्धि का उन्होंने यत्न भी किया है। समझौते के प्रस्तावों में भी उनका यह उद्देश्य प्रतिलक्षित होता है।

लार्ड होम की दृष्टि में इस प्रकार का समझौता भूटान को और आवश्यक होने पर नैपाल को अलग छोड़ देने का पूर्व सूचक है। इस प्रकार के समझौते से चीनियों को वह स्थान मिल जायगा जहाँ से वे भारत के मैदानों में छा सकते हैं और इस प्रकार भारत की सुरक्षा के लिए एक स्थिर खतरा उत्पन्न हो सकता है। एक और भी खतरा है जिस पर मजदूर दल के नेताओं ने बल दिया है और वह यह है कि भारत वर्ष आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से दुर्बल हो जायगा। यदि भारतवर्ष प्रबलतर सैनिक शक्ति के समक्ष आत्म सात कर देता है तो यह न केवल भारत के लिए ही, न केवल उसके पड़ोसियों के लिए ही अपितु समूचे संसार के लिए भी राजनैतिक आपत्ति सिद्ध हो सकती है। यदि तत्काल ऐसा न भी हो तो चीनियों के विचारानुसार सामना करने का भारत पर बहुत बड़ा बोझ आ पड़ेगा और उसकी पंचवर्षीय योजनाएं खटाई में पड़ कर उसका आर्थिक विकास कुण्ठित हो जायगा।

चीन के लोग जिनकी बड़ी छलांग बुरी तरह असफल हुई है, एशिया के बड़े और शक्तिशाली देश भारत की जिसे वे अपना प्रबल प्रतिद्वन्दी समझते हैं आर्थिक उन्नति पर ईर्ष्या करते हैं।

कुछ ब्रिटिश आलोचकों को चीन की योजना में रूस पर दबाव डालने वा कम से कम उसे परेशान करने के यत्न का भी आभास मिला है।

रूस भारत को सहायता देता रहा है और उस की यह इच्छा रही है कि जबतक भारत कम्युनिस्ट ब्लाक में प्रविष्ट नहीं हो जाता, तब तक वह तटस्थ रहे। भारत के प्रति इस रवैये को चीन ने कभी पसन्द नहीं किया और इस प्रसंग में उसने (चीन ने) अपने क्रोध को भी नहीं छुपाया।

अनुमान किया जाता है कि चीन ने यह सोचा होगा कि आक्रमण का सामना करने के लिए भारत सहायतार्थ पश्चिम की ओर झुकेगा और ज्यों २ यह परवशता बढ़ेगी त्यों २ रूस चीन के निकट आता जायगा।

संकेत ब्रिटेन के सुपरिचित व्यक्तियों के मतानुसार यद्यपि चीन का लक्ष्य बड़े पैमाने पर आक्रमण करना नहीं है तथापि उसका लक्ष्य भारत को अपमानित करना, आर्थिक दृष्टि से उसे दुर्बल बनाना, नीति परिवर्तन के लिए रूस पर दबाव डालना, और अन्त में हिमालय के राज्यों को पृथक् करके, युद्ध के लिए एक अच्छे मौके के स्थान पर कब्जा कर लेना है जहां अन्त में भारत पर विजय प्राप्त करने के लिए उसकी स्थिति सुदृढ़ रहे।

परन्तु जो स्थिति सामने आई है उससे स्पष्ट है कि चीन ने कम से कम एक मौलिक बात में गलत अनुमान लगाया था। मैक मोहन रेखा के इस पार ज्यों ही प्रथम आक्रमण हुआ त्यों ही भारत कमजोर होने के स्थान में शक्तिशाली और और एक हो गया।

"वस्तुत संसार भारत की इस एकता पर विस्मित है और सोचता है कि चीन का

आर्य जगत् को बधाई

सार्वदेशिक आर्य प्रति निधि सभा के प्रधान श्रीयुत स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती ने राष्ट्र रक्षा कोष के लिए आर्य जनता और आर्य समाजों के प्रयत्नों पर हर्ष प्रकट करते हुए निम्नलिखित प्रेस वक्तव्य दिया है —

एक विशेष वक्तव्य और परिपत्र के द्वारा आर्य जनता और आर्य समाजों को प्रेरणा की गई थी कि वे राष्ट्र रक्षा के कार्य में लगकर अपनी राष्ट्रीय सरकार के हाथ दृढ़ करें, सैनिक अभियान को सफल बनाने में बडे से बड़ा त्याग करें और उसके लिए सन्नद्ध रहें। यह भी प्रेरणा की गई थी कि इस समय भारत सरकार को धन मुख्यतया स्वर्ण की अत्यन्त आवश्यकता है। उसकी पूर्त्यर्थ प्रत्येक आर्य कम से कम एक दिन का वेतन या आय राष्ट्र-रक्षा कोष में दें।

मुझे यह देख कर प्रभूत प्रसन्नता हुई कि आर्य जनता, आर्य समाजें और आर्य संस्थायें इस कार्य में सर्वात्मना संलग्न हैं और वे राष्ट्र रक्षा कोष में धन एवं स्वर्णादि भेज रहे हैं। मैं हृदय से उन्हें धन्यवाद देता हूं।

इस कार्य को दृढ़ता और वेग से करने की आवश्यकता है।

जो राशियों स्वर्ण आभूषणादि दिये गये हैं उनकी सूचना सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में निरन्तर द्रुतगति से प्राप्त हो रही है। इस सूचना का यहाँ प्राप्त होते रहना अनिवार्य है।

आक्रमण भारत के लिए प्रकारान्तर से वरदान तो सिद्ध नहीं हुआ। कदाचित् और कोई बात भारत को फौलाद बनाने, प्रमाद और अवास्तविकता पर आश्रित भ्रमों को जिसको स्वयं उसने प्रश्रय दिया था नष्ट करने में सफल न होती।"

पाश्चात्य जगत भारत की सहायता किस प्रकार कर सकता है इस सम्बन्ध में अंग्रेजों की सर्व सम्मति यह है कि एक प्रकार तो यह हो सकता है कि कोई ऐसी बात न की जानी चाहिए जिससे भारत की तटस्थता की नीति पर कोई दबाव पड़ता दिखाई दे। ब्रिटेन निश्चित रूप से आक्रमण का मुकाबला करने में भारत की सहायता करेगा और अस्त्र शस्त्र प्रदान करेगा। यह महत्व पूर्ण तथ्य है कि अमरीका से भारत को जो बड़ी सैनिक सहायता मिल रही है उसके साथ कोई शर्त जुड़ी हुई नहीं है।

इस सब का कारण जैसा कि अनुदार दलीय 'डेली टेलीग्राफ' ने लिखा है, यह है कि पश्चिम के देश अपने को अधिक कठोर प्रतिबन्धों में ग्रसित करना नहीं चाहते परन्तु जैसा कि उनके तात्कालिक व्यवहार से सिद्ध हुआ है, उनकी यह स्थिति आपत्ति काल में भारत की आवश्यकताओं के प्रति सहानुभूति के अभाव की सूचक नहीं है। विपरीत इसके इससे उनके इस विश्वास की सम्पुष्टि होती है कि यदि भारत को उपयुक्त हथियार दे दिये जायें तो वह चीन के आक्रमण का सफलता पूर्वक सामना करेगा।

ब्रिटेन का मजदूर दल इस पक्ष में है कि भारत को हथियार दिये जाने के साथ २ अधिकाधिक आर्थिक सहायता का दिया जाना भी आवश्यक है जिससे वह विकास के अपने कार्य-क्रम को जारी रखने में भी समर्थ रहे। उस दल की यह सम्मति है यदि ऐसा न किया गया तो युद्ध की तैयारी के कारण भारत आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो जायगा और इस प्रकार चीन का एक उद्देश्य आंशिक रूप से पूरा हो जायगा। निस्सन्देह ब्रिटेन की और पश्चिम के अन्य प्रजातन्त्रीय देशों की यह इच्छा है कि संसार के महानतम प्रजातन्त्रीय देश के रूप में भारत बना रहे। (हिन्दुस्तान टाइम्स १०-११-६२)

सार्वदेशिक विद्यार्य सभा

की

श्रावणी २०१९ पर सम्पन्न परीक्षाओं का परिणाम

निम्नलिखित परीक्षार्थी उत्तीर्ण हुए—

आर्य सिद्धान्त-रत्न परीक्षा

केन्द्र गुरुकुल बेरगनियां १ यश्रेणी-१ नरसिंह प्रसाद आर्यवीर, २ शिवजी प्रसाद।

केन्द्र भरथना २यश्रेणी—३ स्वतन्त्रकुमार पोखाल,

केन्द्र धार तृतीय श्रेणी ४ राधेश्याम अग्रवाल।

आर्य-सिद्धान्त-भूषण परीक्षा

केन्द्र लश्कर—१ मश्रेणी—९ रामनरेशसिंह चौहान, २ यश्रेणी—१ अभयानन्द सारस्वत, ११ नरेन्द्र सिंह, १५ लद्धाराम वहोजा, १७ नन्दकिशोर शर्मा, १८ दिलीप कुमार महाणिक, ३ यश्रेणी लोकेन्द्र मोहन वर्मा ३ सुरेन्द्रकुमार त्यागी ६ शिवेन्द्र कपूर, ७ मदन लाल अरोरा, १४ धनञ्जय।

केन्द्र सहारनपुर—२ यश्रेणी—शशिगुप्ता, ३ यश्रेणी १९ कुमारी विनोद खेडा, २० कुमारी पुष्पा नल्ला, २३ कृष्णा देवी, २४ रामदुलारी, २५ राजमलिक, २७ दर्शना गोगिया ३० आशा सुनेजा।

केन्द्र होशगाबाद—२ यश्रेणी—रमेशचन्द्र पालीवाल ३ यश्रेणी सुदामा प्रसाद दीक्षित।

केन्द्र ओंकाराश्रम (गोरखपुर)—१ मश्रेणी ३६ तिलेश्वर प्रसाद, ३ यश्रेणी ३९ सूरजप्रसाद शर्मा।

केन्द्र गुरुकुल बेरगनियां ३ यश्रेणी ४ ब्र० ओमप्रकाश, ४१ ब्र० जयमगल।

केन्द्र भरथना - १म श्रेणी—४६ रघुबरदयाल यादव, २ यश्रेणी—पुत्तूलाल, ४३ राम अवतार गुप्त, ४७ हरिगोविन्द सिंह, ३ यश्रेणी—४४ श्याम जी आर्य।

केन्द्र इन्दौर २ यश्रेणी—४८ जयन्ती शंकर शर्मा।

केन्द्र धार- २ यश्रेणी ४९ गोपाल दास अग्रवाल, ३ यश्रेणी शंकर लाल अग्रवाल।

आर्य सिद्धान्त विशारद परीक्षा

केन्द्र लश्कर—प्रथम श्रेणी—१०९ रमेशकुमार सेवानी, २ यश्रेणी—१८ सुरेश कुमार, ४१ विनोद जैन, ५१ नरेन्द्र कुमार, ५८ कुलदीप, ६३ रामदत्त तिवारी, ७१ अजय शर्मा, ११० क्रान्ति कुमार दुबे, ११६ देवराज, १२१ सतीश कुमार तनेजा, ३ यश्रेणी—३ मोहन दास, ४ अनिल गुप्ता, ७ अशोककुमार, ९ मोहनलाल, २० विजय गन्दोत्रा, २१ वीरेन्द्र मिश्र २५ दिलीप कुमार, ३४ चांद खा, ३७ विमुक्तानन्द, ३९ सोमनाथ, ४० सुरेन्द्रनाथ, ४२ नन्दकिशोर, ४३ घनश्याम ४६ रामेश्वर दयालु, ४७ ज्ञानचन्द्र, ४९ राम बाबू, ५० अरुण मुलक, ५२ ललित मोहन, ५३ जय भगवान योगेन्द्रकुमार, ५५ गोपाल कृष्ण ५७ दिनेश पाठक, ५९ महेश सिहल, ६० अशोककुमार गुप्त, ६९ मनजीत सिंह, ७१ रमेश शर्मा ७५ शिवकुमार माहेश्वरी, ७६ कुलदीप, ७७ प्रमोदकुमार, ७८ अनिल माहेश्वरी ७९ गोपाल दास जयसवाल, ८२ श्री हर्ष रघुनाथ राज, ८३ सुनीत कुमार, ८४ नारायणदास ८५ राधेश्याम, ८९ राधेश्याम, ९४ प्रभातकुमार, ९५ सत्येन्द्रपाल, ९६ अनुराज सिंह, ९९ महेन्द्रनाथ, १०० अरविन्द कुमार, ११४ अशोक गुप्त, १०५ रमेश चन्द्र गुप्त,

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का नव निर्वाचन

सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्रीस्वामी ध्रुवानन्दजी महाराज की प्रतिक्रिया

सार्वदेशिक सभा के प्रधान माननीय श्री स्वामी ध्रुवानन्द जी सरस्वती ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पानीपत में हुए आगामी वर्ष के लिए निर्वाचन पर हर्ष प्रकट करते हुए सभी प्रतिनिधियों तथा आर्य नेताओं को बधाई दी।

आपने कहा कि मुझे यह जान कर अत्यन्त हर्ष हुआ कि पंजाब में बिखरी हुई आर्य शक्ति एक बार फिर संघठित हो गई है। वस्तुतः यह आज की सब से बड़ी आवश्यकता थी। आपने आशा व्यक्त की कि अब सभी मिलकर प्रेम, सहिष्णुता और सौहार्द से आर्य समाज के कार्य को आगे बढाने में सफल होंगे।

आपने कहा कि हमारा देश आज जिस संकट में से होकर गुजर रहा है उसमें आर्य-समाज जैसी जागृत संस्था पर भारी दायित्व आ गया है। अतएव सभी को अब पूरी शक्ति से राष्ट्र को बचाने में लग जाना चाहिये।

आपने कहा कि बीती को भूलें भविष्य के निर्माण में लगें, युग की पुकार सुनें यही इच्छा है। अब इस प्रेम-संघठन को देख कर मैं प्रभूत प्रसन्न हूं और आज अपने को बहुत चिन्ता मुक्त अनुभव कर रहा हूँ।

अन्त में आपने कहा कि कुछ भी हो आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य को कटुता से कोसों दूर रहना चाहिये तभी लक्ष्य की सिद्धि हो सकेगी।

---

११६ देवराज, १२० विनायक खिस्डकर, १२३ राम नाथ माहेश्वरी, १२४ मदनमोहन गुप्त, १२६ चन्द्रभान,

केन्द्र सहारनपुर—३य श्रेणी—१३४ मीरारानी १३५ ममता त्यागी, १३७ सुभाषरानी, १४४ ओम-प्रकाश कोमरे, २य श्रेणी १४७ उषा सक्सेना।

केन्द्र होशंगाबाद —२य श्रेणी— १३९ जी० एस० मोहनलाल, १४० रत्नाकर माधव राव, १४३ केवल कृष्ण, १४५ कु० शशिबाला सक्सेना १८० रमेशचन्द्र चौहान।

केन्द्र ओंकार आश्रम गोरखपुर—३य श्रेणी १४८ सच्चिदानन्द।

केन्द्र गुरुकुल-बैरगनिया २य श्रेणी १५८ अर्जुन देव, ३य श्रेणी १५० आनन्द किशोर, १५१ हरिश्चन्द्र १५३ नरेन्द्र प्रताप, १५५ राजेन्द्र।

केन्द्र भर्थना इटावा) ३य श्रेणी १५६ लक्ष्मी देवी गुप्त

केन्द्र इन्दौर—३य श्रेणी—१५८ हरिदेव शर्मा, १६१ मोहनलाल, १६३ विजय देव मेहता, १६७ सुभद्राकुमारी वदिक, १८१ विमला कौशल,

केन्द्र धार—१म श्रेणी—१६९ कल्याण चन्द्र अग्रवाल, १७० गिरधारी लाल अग्रवाल १७१ गोपाल दास गर्ग, १७३ प्रकाश चन्द्र जैन, १७४ यमुना दास मोदी, २ य श्रेणी १७२ नरेशकुमार अग्रवाल, १७५ राधेश्याम अग्रवाल,

केन्द्र नगरिया सादात— १म श्रेणी १७८ राममूर्ति प्रसाद, २य श्रेणी १७६ ज्वाला प्रसाद, १७७ करन सिंह।

वीरेन्द्र शास्त्री एम. ए.

मन्त्री सार्वदेशिक विद्यार्य सभा रायबरेली

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली की धार्मिक परीक्षाएँ

प्रत्येक आर्यसमाज व तथा प्रत्येक आर्य-विद्यालय को अपने यहा अनिवार्य रूप से इनका केन्द्र स्थापित करना चाहिये और पूरा यत्न करना चाहिये कि समस्त आर्य सदस्य तथा प्रायमरी से ऊपर की कक्षाओं के छात्र और छात्रायें इनमें से किसी न किसी परीक्षा में अवश्य सम्मिलित हो। ये परीक्षायें गत ६ वर्षों से प्रचलित हैं।

इस वर्ष की आगामी परीक्षा बसन्त पचमी के बाद तीन फरवरी १९६३ को होगी जिसके लिए परीक्षार्थी सूची और शुल्क ३१ दिसम्बर ६२तक आ जाना चाहिये। नियमावली को अपने पास समाल कर रखिये और आवश्यक पत्रव्यवहार रायबरेली के पते पर कीजिए और शुल्क भी वही भेजिए।

स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई देहली।

वीरेन्द्र शास्त्री, एम०ए० मन्त्री, सा० विद्यार्य सभा, कार्यालय–रायबरेली (उ प्र)

नियमावली तथा पाठविधि

[सन् १९६२ से पुन परिवर्तन पर्यन्त]

१—किसी भी परीक्षा में कोई भी व्यक्ति बैठ सकता है किन्तु मुख्यतया ये परीक्षाए छात्र-छात्राओं तथा आर्य सदस्यो के लिये हैं।

२—कम से कम पाच परीक्षार्थी होने पर किसी विद्यालय के आचार्य या आर्य समाज के प्रधान की अध्यक्षता में केन्द्र स्थापित किया जा सकता है।

३—परीक्षायें प्रतिवर्ष श्रावणी पूर्णिमा पर (अगस्त में)बसतपचमी पर(फरवरी में)ली जावेगी। आवेदन पत्र शुल्क सहित साधारणत एक मास पूर्व भेजना चाहिये। तत्पश्चात् २५ नये पैसे प्रति छात्र अतिरिक्त शुल्क देना होगा।

४—परीक्षायें आर्य सिद्धात विषय में होगी। परीक्षाओं की उपाधि तथा शुल्क आदि का विवरण

नाम उपाधि	शुल्क	प्रश्नपत्र
(१) आर्य सिद्धान्त विशारद	१रु०	१
(२) आर्य सिद्धान्त भूषण	२रु०	२
(३ आर्य सिद्धान्त रत्न	३रु०	३

उत्तीर्ण छात्रों को उपाधि तथा प्रमाणपत्र सभा की ओर से सार्वदेशिक सभा के प्रधान के हस्ताक्षरों से युक्त प्रदान किये जायेगे। सर्वप्रथम परीक्षार्थी को विशेष पुरस्कार दिया जायेगा।

६—प्रत्येक प्रश्न पत्र के पूर्णाङ्क १००, उत्तीर्णाङ्क तृतीय श्रेणी में ३३ से ४४ तक, द्वितीय श्रेणी में ४५ से ५९ तक, प्रथम श्रेणी में ६० से १०० अङ्क तक प्रतिशत होगे।

७—परीक्षा का माध्यम हिन्दी होगा। आवश्यकतानुसार अन्य भाषाओं के लिये विशेष अनुमति लेनी चाहिए।

पाठविधि

१— आर्य सिद्धान्त विशारद

[१ प्रश्न पत्र, पूर्णाङ्क १००]

[१] पञ्चमहायज्ञ विधि सध्या अर्थ सहित तथा हवन मन्त्र दैनिक) [२] आर्योद्देश्यरत्नमाला [३] व्यवहारभानु [४] महर्षि दयानन्द का स्वकथित जीवन चरित्र।

२— आर्य सिद्धान्त भूषण

[२ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क २००]

प्रथम प्रश्न पत्र—सत्यार्थप्रकाश (पूर्वार्ध १-से १० समुल्लास) द्वितीय,—सस्कारविधि।

[सस्कार विधि की व्यावहारिक परीक्षा भी ऐच्छिक रूप में होगी। जो चाहें वे फार्म में निर्देश करदें।

३— आर्य सिद्धान्त रत्न

[३ प्रश्न पत्र, पूर्णाङ्क ३००]

प्रथम प्रश्न पत्र,—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका
द्वितीय,, ,,—सत्यार्थ प्रकाश (उत्तरार्ध—११ से १४ समुल्लास तक)
तृतीय,, ,,—आर्य सिद्धान्तों पर निबन्ध

—वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०, आचार्य,
मन्त्री, सार्वदेशिक विद्यार्य सभा, रायबरेली (उ०प्र०)

❀

ओ३म्

कार्यालय—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

महर्षि दयानन्द भवन (रामलीला मैदान),

नई दिल्ली-१

* आर्य पर्व सूची *

(सम्वत् २०१९-२०२० सन् १९६३)

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा आर्य समाजों की सूचना के लिए प्रतिवर्ष स्वीकृत आर्य पर्वों की सूची प्रकाशित किया करती है। सन् १९६३ की सूची निम्न प्रकार है —

क्रम स०	नाम पर्व	सौर तिथि	चन्द्र तिथि	अंग्रेजी तिथि	दिन
१	मकर सक्रान्ति	२-१०-२०१९	माघ कृ० ५ सं० २०१९	१५-१-६३	सोमवार
२	बसन्त पचमी	१८-१०-२०१९	माघ शु० ५ स० २०१९	३०-१-६३	बुधवार
३	सीताष्टमी	६-११-२०१९	फा० कृ० ८ स० २०१९	१७-२-६३	रविवार
४	दयानन्द बोधोत्सव (शिवरात्रि)	११-११-२०१९	फा० कृ० १३ स० २०१९	२२-२-६३	शुक्रवार
५	लेखराम तृतीया	१५-११-२०१९	फा० शु० ३ स० २०१९	२६-२-६३	मगलवार
६	बसन्त नवसस्येष्टि (होली)	२६-११-२०१९	फा० शु० १५ स० २०१९	९-३-६३	शनिवार
७	नवसम्वत्सरोत्सव एव आ०स० स्था० दिवस	१३-१२-२०१९	चै० शु० १ स० २०२०	२६-३-६३	मगलवार
८	रामनवमी	२०-१२-२०१९	चै० शु० ९ स० २०२०	२-४-६३	मंगलवार
९	हरितृतीया	८-४-२०२०	श्रा० शु० ३ स० २०२०	२३-७-६३	मगलवार
१०	श्रावणी उपाकर्म सत्या०बलिदान दिवस	२१-४-२०२०	श्रा० शु० १५ स० २०२०	५-८-६३	सोमवार
११	कृष्ण जन्माष्टमी	२८-४-२०२०	भाद्रपदकृ० ८ स०२०२०	१२-८-६३	सोमवार
१२	विजयादशमी	११-७-२०२०	आ० शु० १० सं० २०२०	२७-१०-६३	रविवार
१३	ऋषि निर्वाणोत्सव (दीपावली)	३०-७-२०२०	का० कृ० ३० स० २०२०	१५-११-६३	शुक्रवार
१४	श्रद्धानन्द बलिदान दिवस	९-९-२०२०		२३-१२-६३	सोमवार

इन पर्वों को उत्साह पूर्वक ससमारोह मना कर इन्हें आर्य समाज के प्रसार और वैदिक धर्म के प्रचार का महान् साधन बनाना चाहिए।

दिनाँक २-१२-६२

सभा मन्त्री

चीनी आक्रमण और युद्ध मोर्चा

ब्रिटेन के समाचार पत्रों की प्रतिक्रिया

डेली हेराल्ड

मोर्चे पर एक सिक्ख टुकड़ी ने पराजित होना स्वीकार न किया यद्यपि इनके पास गोली बारूद की कमी हो गई थी। ये वीर जवान अपनी खाइयों में से निकल कर चीनियों पर टूट पड़े। पांचसौ सशस्त्र चीनियों के पैर लड़खड़ा गए, और पीछे बचे हुए सिक्ख जवान भी पुन एकत्र होकर बड़े अच्छे व्यवस्थित रूप से अपने स्थानों पर जाकर डट गए। भारतीय वीरताकी इसी प्रकार की घटनाओं से हिमालय की उपत्यकाए प्रतिध्वनित हो रही हैं।

डेली एक्सप्रेस

पगड़ीधारी सिक्ख शत्रु को अपेक्षा जल्द अग्नि वर्षा करते हैं और ऐसा करते हुए चीनियों की अपेक्षा अधिक दृढ़ एव वीर देख पड़ते हैं। परन्तु उनके विरुद्ध लड़ने वाली चीनियों की २ डिवीजन हैं। कहा जाता है उनमें से एक डिवीजने उन भयानक सैनिकों की है जो कोरिया मे लड़े थे।

डेली टेलीग्राफ

भारतीय सुरक्षा कोष मे भारत की निर्धन जनता अपना सर्वस्वदान करते हुए बलिदान एव त्याग की जो भावना प्रदर्शित कर रही है उसने धनवनो एव शक्तिशाली व्यक्तियो को लज्जित कर रखा है।

प्रत्येक व्यक्ति देश प्रेम की इस लहर को देख कर भय मिश्रित आश्चर्य से चकित है परन्तु कुछ लोगो को भय है कि इसके कारण सीमा विवाद का समाधान अधिक जटिल न हो जाय। युद्ध ज्वर से ग्रस्त प्रत्येक व्यक्ति को एक मात्र विजय ही सूझती है। पंडित नेहरू की अधिक से अधिक आशा यही है कि चीनी पीछे धकेल दिए जाये और समझौते का सम्मान पूर्ण मार्ग निकल आए। उनके पीछे सारे देश वासी 'खून के बदले खून' चाहते है। इससे और भी समस्याए उत्पन्न हो जाती हैं। जो देश अपने उत्साह में सीमा का अतिक्रमण कर जाता है वह स्थिति में किसी आश्चर्यजनक परिवर्तन के हो जाने पर उसका सामना करने में भी किंकर्तव्य विमूढ सा रह जाता है।

स्पैक्टेटर

आसाम के तेल क्षेत्रों और नेपाल सिक्किम और भूटान इन तीन सीमान्त राज्यों पर चीन की आखे हैं। सबसे अधिक सम्भवत चीन सरकार एशिया के अन्य राज्यो को पूर्ण रूप से यह दिखा देना चाहती है कि एशिया में प्रमुख स्थान भारत को नही अपितु चीन को प्राप्त है। चीन की सैनिक शक्ति के द्वारा भारत पर जो अपमान जनक समझौता लागू किए जाने की योजना बनाई गई है उसस चीनी प्रभुत्व के निराकरणार्थ जो अन्यत्र प्रयत्न किए जा रहे हैं उन पर दुष्प्रभाव पड़ेगा। सर्वप्रथम ब्रह्मदेश में, इनके बाद दक्षिण वीयतनाम में और अन्त मे स्याम और मलाया में। भारत और चीन के मध्यवर्ती सीमा क्षेत्रो की घटनाओं से सीमा से लगे देशो और सोवियत रूस के पारस्परिक सम्बन्धो पर भी प्रभाव पड़ेगा।

इस आक्रमण का एक उद्देश्य मित्रों और शत्रुओ के मध्य एक सुस्पष्ट रेखा खींच देना है और श्रीयुत क्रुशेव द्वारा विस्तार वादी नीति का समर्थन करने से इन्कार कर देने की बात को जगजाहिर कर देना प्रतीत होता है। अब माओ महोदय यह देखनेकी प्रतीक्षा में होगे कि भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी ने चीनी आक्रमण का मुकाबले करने का जो समर्थन किया है मास्को उसको भर्त्सना करता है या नही। निस्स देह श्रीयुत क्रुशेव सार्वजनिक रूपेण चीन से सम्बन्ध विच्छेद का निश्चय कर सकते है। उस दशा में वे भारतीय पक्ष का समर्थन करके अपनी स्थिति दृढ़ कर सकते हैं। परन्तु इस प्रकार का निर्णय भारत चीन से संघर्ष की तात्कालिक घटनाओं की अपेक्षा अत्यन्त दूरगामी मौलिक मतभेदो के कारण ही किया जा सकेगा।

ये सब जटिल घटनाए पश्चिम के लिए लाभप्रद सिद्ध हो सकती हैं। अमेरिका और ब्रिटेन को उचित है कि वे आक्रान्ता को खदेड़ने के लिए भारत को

पूरी २ मदद दे परन्तु उनकी कूट नीति का एक उद्देश्य यह भी होना चाहिए कि वह भारत और पाकिस्तान के मध्य समझौता करने का प्रयास भी करे। यदि कभी ऐसा समय आजाय जबकि आसाम के साथ सम्पर्क बनाए रखने के लिए भारत को पूर्वी पाकिस्तान पर निर्भर रहना पड़े तब यह प्रश्न आवश्यक बन जायगा। काश्मीर १५ वर्षसे कटुता-स्थल बना हुआ है। अब उपमहाद्वीप की रक्षा के लिए यह आवश्यक हो गया है कि भारत और पाकिस्तान की कटुता दूर हो जाय।

परन्तु इस पत्र की दृष्टि में इस क्षण पाकिस्तान का रवैया बहुत बुद्धिमत्ता पूर्ण नहीं है पाकिस्तान को यह अनुभूति होनी चाहिए कि पश्चिम की सैनिक शक्ति जितनी भारत के लिये हितकर होगी उतनी ही पाकिस्तान के लिये भी हितकर होगी। यदि चीन उपमहाद्वीप पर छा गया तो उससे भारत के समान ही पाकिस्तान को भी खतरा उत्पन्न हो जायगा। प्रेसीडेन्ट अयूबखा को यह बात बता देनी चाहिये जिन पर यह दबाव पड़ रहा है कि वे भारत के इस सकट काल में अपना काम बना लें।

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार की
पुस्तकों का सूची-पत्र

निम्न प्रकाशन नेट मूल्य पर दिये जायेंगे ।

१	ऋग्वेद संहिता सजिल्द	१०)
२	अथर्ववेद संहिता सजिल्द	८)
३	यजुर्वेद संहिता सजिल्द	४)
४	सामवेद संहिता सजिल्द	३)
५.	सत्यार्थ प्रकाश	२।)
६	ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका	२॥)
७	संस्कार विधि	१।)
८	आर्याभिविनय	।॥)
९	कन्नड सत्यार्थप्रकाश	३।)
१०	मराठी सत्यार्थप्रकाश	१।≈)
११	कर्त्तव्य दर्पण सजिल्द	।।≡)
१२	पंच महायज्ञ-विधि भाष्यम्	५)

निम्न पुस्तकों पर निम्न प्रकार कमीशन दिया जायगा ।

१०) से २५) ०० तक १२½ प्रतिशत
२५) से ऊपर २५०) तक २०) प्रतिशत
२५०) से ऊपर १०००) तक २५ प्रतिशत
१०००) से ऊपर २०००) तक ३०) प्रतिशत
२०००) से ऊपर ३३⅓ प्रतिशत

श्री स्वामी ब्रह्ममुनि कृत

१	यम पितृ परिचय	२)
२.	वैदिक ज्योतिष शास्त्र	१॥)
३	वैदिक राष्ट्रीयता	।)
४	अभ्यास और वैराग्य	१)६५
५	बाल संस्कृति सुधा	)५०
६	वैदिक ईशवन्दना	।≈)॥
७.	वैदिक योगामृत	॥≈)
८	दयानन्द दिग्दर्शन	।॥)
९	वेदों में दो बडी वैज्ञानिक शक्तियां	।।)
१०	निज जीवनवृत्त वनिका अजिल्द	)५०
	,, ,, सजिल्द	)७५
११	बृहत् विमान शास्त्र सजिल्द	१०)
१२	छान्दोग्य उपनिषद् कथा	३)
१३	दार्शनिक अध्यात्म तत्व	१॥)
१४	वेदान्त दर्शनम् (संस्कृत में)	३)
१५	वैदिक वन्दन	५)

ओ३म् ध्वज

ओ३म् ध्वज के लिए आर्य जनता की मांग की पूर्त्यर्थ सभा ने ओ३म् ध्वज का निर्माण का कार्य अपने हाथ में ले लिया है और उसने शुद्ध खादी के निम्न डिजाइनों के ओ३म् ध्वज निर्माण करा लिए हैं। उनको लागत मूल्य पर आर्य जनता को पहुंचाने का सभा ने निश्चय किया है। अतः आर्य जनता को उन्हें तत्काल मंगा कर अपने समाज, मन्दिर और आर्य संस्थाओं पर लगाने चाहिए।

ओ३म् ध्वज २७ इंच × ४०॥ इंच मूल्य २)
ओ३म् ध्वज ३६ इंच × ५४ इंच मूल्य ३)
ओ३म् ध्वज ४५ इंच × ६७। इंच मूल्य ४)
मंगाने की दशा में १) अगाऊ भेज देवें।

आर्यसमाजों को अविलम्ब आर्डर भेज कर प्रतियां सुरक्षित करा लेनी चाहिए जिससे बाद में उन्हें पुस्तकें न मिलने की शिकायत का अवसर न रहे।

श्री बाबू पूर्णचन्द्र एडवोकेट कृत

१६	कर्मव्यवस्था	४)
१७	मन मन्दिर	१)
१८	दयानन्द दीक्षा शताब्दी का सन्देश	।-)
१९	चरित्र निर्माण	)१५
२०	ईश्वर उपासना और चरित्र निर्माण	)२५
२१	वैदिक विधान और चरित्र निर्माण	≈)॥
२२	दौलत की मार	।)
२३	अनुशासन का विधान	।)
२४	धर्म और धन	।)
२५	सत्यार्थप्रकाश (उर्दू) मूल्य	३)५०
२६	उत्तराखण्ड के वन पर्वतों में ऋषि दयानन्द अजिल्द	)६२
	,, ,, सजिल्द	)७५
२७	आर्यसमाज प्रवेश पत्र	मूल्य १) सैंकड़ा

श्री महात्मा नारायण स्वामी कृत

२८	योग रहस्य	१।)
२९.	मृत्यु और परलोक	१)
३०	विद्यार्थी जीवन रहस्य	॥≈)॥
३१	प्राणायाम विधि	≈)

१२ उपनिषदे —
ईश ।=) केन ॥) कठ ।) प्रश्न ।=)
मुण्डक ।≡) माण्डूक्य ।) एतरेय ।)
तैत्तरीय १)
१३ बृहदारण्यकोपनिषद् ३)

श्री प० गंगाप्रसाद उपाध्याय कृत

१४. आर्योदय काव्यम् पूर्वार्द्ध १॥)
१५ ,, उत्तरार्द्ध १॥)
१६ वैदिक संस्कृति १।)
१७ मुक्ति से पुनरावृत्ति ।=)
१८ आर्यसमाज और सनातनधर्म ।=)
१९ आर्यसमाज की नीति ।=)

श्री प० इन्द्रजी द्वारा लिखित

४० आर्यसमाज का इतिहास स० (प्रथम भाग) ४,
४१ ,, ,, (द्वितीय भाग) ५)
४२ आर्यवीर दल बौद्धिक शिक्षण -)

श्री रघुनाथप्रसादजी पाठक कृत

४३ आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ॥=)
४४ कथामाला ।।
४५ सन्तति निग्रह १।
४६ नया संसार ≡)
४७ आदर्श गुरु शिष्य ।-)

श्री पं० धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड कृत

४८ स्त्रियो का वेदाध्ययन अधिकार १।)
४९ भक्ति कुसुमाञ्जली ॥)
५० हमारी राष्ट्र भाषा व लिपि ।-)
५१ महापुरुष कीर्तनम् २)

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द कृत

५२ आर्यसमाज के महाधन २।)
५३ वेद की इयत्ता १॥)

श्री लाला ज्ञानचन्द कृत

५४ धर्म और उसकी आवश्यकता १)
५५ वर्णव्यवस्था का वैदिक रूप १॥)
५६ इजहारे हकीकत (उर्दू में) ॥≈,
५७ सत्य निर्णय १॥)

विविध

५८ शिक्षण तरंगणी ५)
५९ विरजानन्द प्रकाश (भीमसेन शास्त्री) २)

पं० मदनमोहन विद्यासागर कृत

६० जन कल्याण का मूल मन्त्र ॥)
६१ संस्कार महत्त्व ॥।)
६२ वेदो की अन्त साक्षी का महत्व ॥≈)
६३ आर्य घोष (परिवर्द्धित संस्करण))६० न० पै०
६४ आर्य स्तोत्र ।)

अन्य विद्वानों कृत

६५ स्वाध्याय सन्दोह (स्वा० वेदानन्द तीर्थ) ४)
६६ स्वराज्य दर्शन (प० लक्ष्मीदत्त दीक्षित) १)
६७ राजधर्म (महर्षि दयानन्द सरस्वती) ॥)
६८ भूमिका प्रकाश (संस्कृत मे)
(प० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री) १॥)
६९ एशिया का वेनिस (स्वा० सदानन्द) ॥।)
७० दयानन्द सिद्धान्त भास्कर १॥)
(श्री कृष्णचन्द्र विरमानी) १।)
७१ भजन भास्कर
(संग्रहकर्ता प० हरिशंकर शर्मा कविरत्न) १॥।)
७२ सनातन बुद्धिशास्त्र आर्यों का चक्रवर्ती राज्य २)
७३ आर्य डायरेक्टरी (पुरानी १।)
७४ सार्वदेशिक स ा २७ वर्षीय कार्य
विवरण-अजिल्द २)
७५ आर्य पर्व पद्धति (प० भवानीप्रसाद कृत) १।)
७६ आदर्श चरित्र)७५

प० राजेन्द्र (अतरौली) कृत

७७ गीता विमर्श ॥।)

ईसाई प्रचार निरोध साहित्य

७८ ईसाई षड्यन्त्र ।)
७९ ईसाई पादरी उत्तर दें दर २) सैकड़ा
८० ईसाई पादरियो के कुचक्र से देश को बचाओ
दर २) सैकड़ा
८१ वैदिक ज्योति ७)
८२. दयानन्द सिद्धान्त प्रकाश २)५०
८३. वैशेषिक दर्शनम् २) सजिल्द २)५०

सार्वदेशिक सभा पुस्तक भण्डार दयानन्द भवन, नई दिल्ली १

सार्वदेशिक प्रेस पटौदी हाउस दरियागंज दिल्ली ७ में मुद्रित तथा रघुनाथ प्रसाद जी पाठक मुद्रक और प्रकाशक के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दयानन्द भवन (रामलीला मैदान) नई दिल्ली १ से प्रकाशित